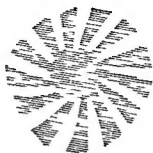


नई कहानी: प्रकृति और पाठ

श्री सुरेन्द्र



बड़ कदानी

प्रकृति
और
पाठ



परिवेश प्रकाशन

ਨਵ ਕਹਾਣੀ ਸਾਧਨਾਂ ਅਤੇ ਪਾਠ
 ਨਵ ਕਹਾਣੀ ਸਾਧਨਾਂ ਅਤੇ ਪਾਠ
 ਨਵ ਕਹਾਣੀ ਸਾਧਨਾਂ ਅਤੇ ਪਾਠ

੦

੦

੦

ਨਵ
 ਕਹਾਣੀ

ਅੰਮ੍ਰਿਤ

ਸ਼੍ਰੀ ਅੰਮ੍ਰਿਤ

८ श्री सुरेन्द्र

- प्रथम सस्करण नवम्बर १९६६
- मूल्य २५ ००
- प्रकाशक परिवेश प्रकाशन
बी० १७७ मंगल माग वापू नगर,
जयपुर
- कला सज्जा प्रमोद
- मुद्रक कण्डस प्रिण्टस एण्ड स्टेशनस
जौहरी बाजार जयपुर-३

ऋषि व्यक्तित्व

आचार्य देवेन्द्रनाथ शर्मा

को

सादर

सविनय





नई कहानी : प्रकृति

यह पुस्तक और इसके बारे में	६
नई कहानी और उसकी प्रकृति	१

नई कहानी • पाठ

शेपहर् का भोजन	१०७
भ्रमरकान्त	
बापसी	११४
उषा प्रियम्बदा	
दत्त बप बाब	१२३
धोमप्रकाश निमल	
छोई हुई दिशाएँ	१३४
कमलेश्वर	
मेरा दुरमन	१४७
कृष्ण बल्देव बंद	
आइस बग	१५६
दूधनाथसिंह	
गुलकी बप्पो	१७४
धमवीर भारती	
सदन की एक रात	१८६
निमल वर्मा	
तीन विदियाँ	२१७
फणीश्वरनाथ रेणु	
छून का रिश्ता	२३०
भीष्म साहनी	
एक और जिंदगी	२४२
मोहन राकेज	

रूप और बया	२७०
माकण्डेय	
तीसरा भागमी	
मन्त्र भंडारी	२७६
टूटना	
राजेन्द्र यादव	३००
सेतर	
रामकुमार	३३०
कुछ बच्चे	
कुछ माएँ	३४१
रमेश बशी	
नौ साल छोटी परनी	
रवीन्द्र यासिया	३४६
बाम्पत्य	
राजवमल चौधरी	३५६
एक बुत सिकन का जन्म	
विजया चौहान	३७४
विदा महराज	
शिवप्रसाद सिंह	३८१
कोसी का घटवार	
शेखर जोशी	३९०
दो दुलों का एक मुल	
शालेश मटियानी	४०२
शिव यात्रा	
धीकान्त वर्मा	४१६
समय	
सुरेन्द्र	४२४
शेष होते हुए	
ज्ञानरजन	४३०
सेब	
रघुवीर सहाय	४४२

परिशिष्ट

शुद्धि-पत्र

यह पुस्तक और इसके बारे में

करीब तीन चार घण्टे पहले की बात है, जो उतने पहले की नहीं भी हो सकती थी लेकिन इसीलिए महत्वपूर्ण भी न होती ? कम-अज कम मेरे तई ?

‘अनुबन्ध कार्यालय में ‘नई कहानी’ पर आयोजित एक गोष्ठी के दौरान मन डा० राम विलास शर्मा से ‘नई कहानी दशा दिशा सम्भावना’ के लिए एक निबन्ध पा सकने का आग्रह किया था डा० राम विलास शर्मा ने कहा था कि कमलेश्वर ने भी उनसे ‘नई कहानी’ पर लिखवाना चाहा था, जिसके उत्तर में उन्होंने उन बीस कहानियाँ, (शायद बीस ही या कि कुछ कम वढ, मुझे पूरे तौर पर इस समय याद नहीं) को जुटा देने के लिये लिखा था (या कहा था) जो अब तक नई समझी जाती रही हैं गो यह उत्तर श्री कमलेश्वर को दिया गया था और प्रकारान्तर से मुझे भी इसी लिये सहार भी लेना पडा और तभी से इस पुस्तक को तयार करते हुए, जबकि आज आपके हाथों सौंप रहा हूँ, तब डा० राम विलास शर्मा का धन्यवाद देना अपना कतव्यगत सक्त्प समझता हूँ और इस सक्त्प निर्वाह पर खुशी महसूस करता हूँ अपनी समूची आत्तरिक्ता में यह खुशी इसलिए भी महसूस करता हूँ क्योंकि दबावा से पकी आज की जिन्दगी में जिस कुछ का निर्वाह नहीं हो पाता वह सक्त्प ही तो हैं वहूँ कि आदतन आस्कर वाइल्ड का यह लिखना—अच्छे सक्त्पों की तरह वायदे भी तोड़ने के लिए (शायद टूट जाने के लिये) ही किये जाते हैं—मुझे अपने ज्यादा करीब लगता रहा है और ज्यादा सुविधापूर्ण भी लेकिन इसका इजहार नहीं और खासतौर पर यहाँ तो और भी नहीं,—

‘नई कहानी’ के समूचे पाठ को एक ही जगह देख पाने की माँग दरअमल— डा० राम विलास शर्मा की ही माँग नहीं है बल्कि यह माँग उन तमाम समीक्षका, दृष्टिमान मित्रा और सजग पाठका की भी हो सकती है और कदाचित् है भी जो अपनी क्या समझ को नई कहानी’ की आज तक की वस्तु-स्थगित विकसित हदा और हलचलो से परिचित विकसित करना तो चाहते ही हैं अपनी गहरी दिलचस्पी

की वजह से उसमें दूर तक सामंती और शायित्व का निर्वाह भी करना चाहते हैं और इस तरह सीधे ही पाठ के माध्यम से 'नई कहानी' के बारे में अपनी कोई राय बनाना चाहते हैं या फिर बनी बनाई राय बदलना चाहते हैं। इस लिहाज से भी और इसके बावजूद भी, यहाँ मेरा प्रयत्न रहा है कि 'नई कहानी' के सम्बन्ध पाठ को अलग अलग उसके बदले और बदलते हुए आयामों में एकत्र किया जाय। इसलिये ऐसा भी हो गया है कि दो एक कथाकारों की प्रतिनिधि समझी जाने वाली कहानियाँ यहाँ नहीं आ सकी हैं, बल्कि उन्हें बुरकर ही छोड़ दिया गया है इसकी वजह थी और वह यह कि मेरी दृष्टि प्रतिनिधि नई कहानियाँ को छुटा देने पर नहीं थी (हालांकि अब यह अलग बात है कि उस दृष्टि से भी यहाँ प्रतिनिधित्व हा सफा है लेकिन वह एक अलग ही बात है और मुझे उसके होने से आखिर मुजायबा क्यों हो ?) 'नई कहानी' के पाठ की प्रतिनिधि दे पाना ही मेरे अभिप्राय में था, इतना कुछ स्पष्ट होने पर भी अगम मतलब यह बठाया जाय कि अने कुछेर कथाकारों की तपाकथित प्रतिनिधि कहानियों की अवमानना की है तो इस मतलब (?) से किसी का क्याकर राका जाय ?

इस तरह यह पुस्तक अब तक की 'नई कहानी' के 'पाठ' की सम्पूर्ण होती हुई प्रतिनिधि पुस्तक है (प्रकृति भाग पर कहने के लिए आगे गुजाइश है, इसलिये उस पर वही) अपने सवत्प में यह कहाँ तक अथवान बन पाई है, इस पर मुझे अलग से कुछ नहीं कहना है और शायद इसका मुझे हक भी नहीं है, अगर हक हो भी तब भी यह काम मैं मित्रों की समीक्षा बुद्धि के ही हवाले करता हूँ, क्योंकि बावजूद तमाम बातों के आखिर यह प्रयत्न है ता उन्हीं के लिए ही

कहानियों का चुनाव करते समय सम्पादक के सामने जो धौसत कठिनाइयाँ होती हैं या हो सकती हैं, मेरे सामने महज उतनी ही नहीं थी, इसलिये कि बिचली पीढ़ी के कथा-समीक्षक-मित्र जिन कहानियाँ को बतौर नई प्रतिनिधि कहानियाँ के पेश करते या उछालते या जहाँ कहीं मौका लगा बहुतायत से उद्धृत करते रहे थे उनमें से काफी कुछ कहानियाँ मेरे यहाँ नई नहीं थी और प्रतिनिधि तो और भी नहीं नई कहानी के पाठ को अलग अलग सन्दर्भों में खोलने व उसे क्रम से तरतीब देने में भी वे पूरे तौर पर अभिप्रायहीन थी। ये प्रतिनिधि कहानियाँ कौन कौन सी थी और इनके प्रतिनिधि न होने में रचनागत कौन-कौन से कारण हैं इस पर बहस के लिए पूरी गुजाइश होने लूँगे और इसने लिए न तो यहाँ मौका ही है और न जरूरत ही। इतना जरूर कि इन उछाली गई या 'नई' के नमूने बतौर पेश की गई कहानियाँ की उनकी रचनाशीलता के चलते या कथा समीक्षा बुद्धि के चुनाव की वजह से या 'नई कहानी' के प्रतिमानों की सही आयाम देने के छयाल से चर्चा-परिचर्चा या बहुसंयुवाहित का उनका विषय नहीं बनाया गया था जितना कि

तत्कालीन सामग्री के रूप में सहज सुलभ होने के कारण, मित्रों को सफाई देने के लिए या फिर प्रच्छन्न तौर पर मित्रों के साथ सम्बन्ध निवाह करने के लिए। इसलिए इन तथ्यांकित नई कहानियों का 'नयेपन' किस स्तर का हो सकता है, यह तथ्य अलग से स्पष्ट की माग करता है और जैसे-जैसे 'नये' के प्रति धतिरिक्त मोह (किसी स्तर पर रोमान की हृद तक पहुँचा हुआ) कटता जा रहा है और कथा-समीक्षा में जमा हुआ धुधलका छूटता जा रहा है, वैसे-वैसे कहानी के नयेपन की रेखाएँ स्पष्टतर होती जा रही हैं और उनके आलोक में इन तथ्यांकित नई कहानियाँ के 'नयेपन' पर शक्यों विश्वास का रूप लेती जा रही हैं, इसलिए इस बात की ज़रूरत अब कथा-समीक्षकों के यहाँ बराबर महसूस की जाने लगी है कि इन कहानियाँ के 'नयेपन' का जायजा सिरों से एक बार फिर ले लिया जाय, जो इस बात का भी नज़रन्दाज नहीं किया जा सकता कि नई कहानी पर हुए पिछले बहुत-मुबाहिसे में जिन कहानियाँ पर जाने अनजाने 'नई' का मोहर लगा दी गई है उनमें से निश्चय ही कुछ नये कथा उमेद में अपनी जगह बरकरार बनाये हुए हैं कोई पुरुषात् के तौर पर तो कोई थोड़ा हटकर लेकिन यह कहानियाँ कुछ ही हैं, जो महज आकस्मिकता के चलते ही हैं, सही समीक्षा-बुद्धि के चुनाव का नतीजा होकर नहीं।

हालाँकि यह एक आसान तरीका हो सकता था कि इस बहुत मुबाहिसे में सामने आई हुई कहानियों को ही यहाँ संकलित कर लिया जाता, क्योंकि सम्पादक के लिए यह काय सुविधापूर्ण तो होता ही, वह खतरा उठाने से भी बच जाता खतरा इस माइन में कि जब इन कहानियाँ के रहते दूसरी कहानियाँ को लिया जाता तो पाठकों को यहाँ अपनी आग्रह-पुष्ट कहानियाँ को न पा सकने का जो सदमा होता वह तो होता ही, विचली पीढ़ी के मित्र समीक्षकों की मन-बुद्धि और आँखों में रखी बसी उनकी स्नेह-पालिता कहानियों के अपदस्थ होने से उनका समीक्षा आलोचन भटक सकता था और यह भटका हुआ आलोचन कितना खतरनाक (लिजलिजा और व्यक्तीगत) हो सकता है (इसके कुछ नमूने मैंने 'प्रकृति' भाग में उद्धृत किये हैं) इसे भुक्तिभोगी भच्छी तरह जानते हैं। समीक्षा प्रचारित लोकप्रिय नई कहानियाँ (लाक प्रिय कहानियाँ वितनी नई और बसालम्ब होती हैं ? इस पर अलग से विचार किया गया है) को अगर यहाँ ले लिया जाता, तो इसमें उनके समीक्षा आग्रह ही पुष्टि पाते, हालाँकि वे इस बात से भी दुखी होते (क्योंकि तब उनसे उनके आलोचन प्रकाशन का एक नामाव मौका छिन जाता) और उन्हें कुछ न वह सपने यानी विरोध न कर सपने की स्थिति में डाल दिया जाता जो उनके लिए कम तबलीफदेह बात न होनी और ये तबलीफ देह बार्गे मामूनी नहीं होती, जिन्दगी के साथ-साथ दुखियारा स्वभाव ही विरासत में छोड़ जाती है "मुझिया सब ससार है दुगिया दास बबोर है" लेकिन पाठकों का अपने (समीक्षा द्वारा ग्रहण किए गए) आग्रहों

को इन कहानियाँ से पुष्ट करने में मदद जरूर मिलती और हमारे उन्हें खुशी भी होती लेकिन इनकी सामान और महज आसानो से मिथी हुई खुशियाँ हमारे कितनी मेहमी साबित होती हैं, यह कोई ऐसा तथ्य नहीं है जिसे समझने के लिए महान श्रम की दरकार हो। फिर ऐसी आसान खुशियाँ लेकर भी क्या किया जाय जो खुद की समाप्ति बुद्धि के लिए तो आप्रह उलझ करती हो हैं, व नयी रचना-गीतना के उभेप की समझ न देकर एवज में आप्रहो गलत रास्ते भी दे जाती हैं। कौन नहीं जानता कि जहाँ ऐसे समीक्षा आप्रह ने अपने निष्पक्ष पर पूरा न पड़न बात या समूचे निष्पक्ष को ही ढाँप लेन वाले नये रचना उभेप को नकारने में मदद की है वहाँ छान पाठ की रचनाओं के प्रगसवा का पाठि में उन्हें सामिल भी कर दिया है, बल्कि इतना और भी कि तमाम नए कथा उभेप के विरोध में अनजान ही ये नए उभेप के हितपी खड़े हो गए हैं और एक साफ पाठ की इनकी हुई कहानियों के बापस हो रहे हैं और इस तरह इन तमाम स्थितियों में दुली कबार पची भिन्न समीक्षका न अपने ही साथ युग-बोध के समानांतर न बन पाने का सनरनाक खेल भी खेला है और जिन तत्त्वार्थों मिथी ने जिन्दगा और संसार को ही गलत समझा हुआ है वे यदि कथा समीक्षा में भी यही गलत समझते हैं तो हमारे समीक्षक बुद्ध भी नहीं है।

कहानियों की चुनाव सम्बन्धी कठिनाइयाँ का ध्यान नहीं था क्योंकि नि तोरप्रियता के आधार पर वही-वही कहानियाँ बिना उनकी पाठ सामान और प्रकृति सम्भावनाओं का ध्यान किए हुए बार-बार सज्जना में ली जाती रही हैं जिनका निष्पक्ष पेशना उनके समीक्षकों को जान की स्थिति में तो सुख ही रहा है छान पाठ की ठहरा हुई कथा-शक्ति का मूल्य भी बनता जा रहा है और ये कहानियाँ लगातार अपने कथारमय विवाह में जिन्गी का पत्र में पड़ चुकी और खुरानी जा रही हैं इतना ही नहीं बल्कि यह कहानियाँ अपने समीक्षकों में एनिहासिक होता जा रही हैं इन तमाम सतरा के बावजूद यहाँ कुछ निष्पक्ष कहानियों को महत्व समितिए ल दिया गया है कि वे अपने मर्म में आठ के समान हुए सामान का समझ-समझ ता प्रतिनिधित्व करती ही हैं निम्न बात-बात के मर्म में आठ का समूचा समझना का भी अनुभव करती हैं यह बाता में मान्य होन के कारण कुछ कहानियाँ बाउ नए निष्पक्ष-पेशना के बावजूद ता सन में मुझ मुझाता महा हुआ और समितिए भा कि इन कहानियों के न निष्पक्ष पर इनके समझ समझा दूंगी कहानियाँ में एक ता पूरे रंग में ता उता ता रहे थे (ता आनुनिष्ठ जिन्गी का कथारमय भाष्य में दगन का उनका समझा मग हसिरो है) और और उनका भा पा रह थे ता एक पुस्तक में दूंगी कहानियाँ के मार दूंगी पाठ का समझना और उन कहानियों का दूरा समझना में व कथा जिन्गी समझना का समझना न ता रहा था बल्कि बावजूद एक समझना के मर्म का भी मान्य समझना है कि यदि निष्पक्ष कहानियों के समानांतर आठ

निक बोध और कलात्मक वजन में इन्हीं लेखकों की दूसरी कहानियाँ हैं और कदाचित् लेखकों के प्रतिनिधित्व में उनीस भी पड़ती हैं, तब भी मने उन्हें बिना सकार के ले लिया है, इसलिए इस पुस्तक की कोई एक कहानी इसी पुस्तक की किसी दूसरी कहानी का 'पाठ प्रकृति' में पिष्ट-मपण नहीं है बल्कि वह 'नई कहानी' की प्रकृति के एक आयाम की कहानी है यानी ये कहानियाँ 'नई कहानी' के प्रति आयामों का प्रतिनिधित्व करती हुई, उसे (पाठ को) अलग अलग इकाइयों में सम्पूति देती हैं। इसके लिए यह जरूरी हो गया था कि केवल उन प्रतिष्ठित लेखकों की ही कहानियाँ यहाँ न ली जायें, जो 'नई कहानी' की पाठ प्रकृति को एक हद तक ही उगान सके हैं, बल्कि उस 'प्रकृति' को आगे और उसके विरोध में आज के जीवन के सही वास्तव को उसी सम्प्रेषण देने वाली कहानियों को भी यहाँ चुना जाना इमीलिए मने प्रतिष्ठित लेखकों के साथ-साथ उन प्रतिष्ठित होते हुए लेखकों की कहानियों को भी यहाँ लिया है जो अपने परिवेश और उस परिवेश में एक व्यक्ति की नियति को अनुभव करने में लगे रहे हैं और इस तरह व्यक्ति और परिवेश की विडम्बना और सकारात्मकता का अपनी कहानियों के माध्यम से सही आकार (गेप) दे कर देग कर रहे हैं।

कथा सफलता की हिन्दी में जो परम्परा रही है यह सफलता उसमें हटकर है यानी हटकर किया गया प्रयत्न सफलता-परम्परा और उनको विस्तारित करने का यहाँ देना, अस्त में परीक्षित और कही गई बात होगी और अपने अर्थ में कदाचित् पुजाइश हीन भी इसीलिए हम चर्चा का अभाव मानते हुए वन इतना भर कि अंत तक के कथा-सफलता में सफलता-वर्तिका का लक्ष्य (सम्यक् काम तोर में) और दृष्टि सब श्रेष्ठ कहानियाँ (सब श्रेष्ठ कहानी होना है कहानियाँ नहीं) की पकड़ में हाँफते हुए यात्राएँ करना था या फिर व्यावसायिकता और पाठ्यक्रम (पाठ्यक्रम वाले सफलता की व्यावसायिकता के नतीजा में सही हैं) सम्बन्धी नीतियों के गिराव में बुद होकर रह जाना था, नतीजा यह होना था कि लक्ष्य पर समूचे अर्थ में केन्द्रित भाव दृष्टिहीन हो जाना था और दृष्टि से कटा हुआ लक्ष्य एक भटकाव मात्र होकर रह जाना था। यह नहीं, तो सफलता-वर्तिका की दुहाई देकर किन्हीं कान-बण्ड की रचिकर कहानियों को सोनिया तोर पर एक अलग दुगुण सता था बहुत हुआ तो उन कहानियों के साथ लेखकों का सख्ति-परिवर्त (नाम-नाम और जन्म तिथि और कृतियाँ की गिनती) और लो गई कहानी पर चलती हुई सख्ति-दृष्टिणी जाड़ दो जानी थी रचनात्मक या समाज-आत्मक दृष्टि जिसे कहते हैं उसका इन सफलता में निम्न-अभाव रहता था। कुछ सफलता-वर्तिका खान मनोरूपन से वर्गीकरण वाले परिणाम-मन्त्र पद्धति के सफलता की आयोजना में विश्वास रखने के और इस तरह पञ्चवीस सख्ति-आयों की पञ्चवीस प्रतिनिधि कहानियाँ उन्नि या नवादिन (अन उन्नि) लेखकों की मय श्रेष्ठ कहानियाँ इस सन् में उस मन् नक का प्रतिनिधि कहानियाँ 'प्रतिनिधि प्रेम

कहानियाँ 'जातीय कहानियाँ' गाँव जीवन की कहानियाँ 'वस्वाती शहराती' कहा
नियाँ आदि में सकलन-दृष्टि का मनचीता साक्षात्कार कर लेते थे, गरज कि व तमाम
आधार इन सकलन की योजनाओं में दृष्टा करते थे जो कम अज कम साहित्यिक जुम्मे
वारी से बिल्कुल घरी होते हैं। वावजूद इन असाहित्यिक प्रयत्नों के इन सकलनों
की साहित्यिक गौरव दिलाने का समोदात्मक अभियान चलाया जाता था

आहिर है कि यह सकलन इन तमाम दृष्टियों (?) में से किसी भी दृष्टि का
हामी नहीं है। और इसमें जो दृष्टि बरती गई है वह इसे अपने लक्ष्य से काटती
नहीं, बल्कि स्वयं लक्ष्य हाकर उसके साथ जुड़ जाती है यानी यहाँ दृष्टि सकलन की
आयोजिका और निर्देशिका ही नहीं है स्वयं उसका लक्ष्य भी है और अगर दुहरा देना
जुम करार न दिया जाय तो इस सकलन की दृष्टि के सहित नई कहानी पाठ प्रक्रिया
और 'नई कहानी' की प्रकृति को समूचे तौर पर यहाँ देख पाना ही विशिष्ट है।

इसलिए इस दृष्टि से ही नाइसिकाकी रखने वाले मित्रों को इस पुस्तक से भी
शिकायत हो, यह स्वाभाविक ही है, बल्कि मेरी ओर से इन मित्रों की शिकायत का
मौका न देना, इनके प्रति सरासर जवाबदारी करना होगा।

शिकायत उन ऐक्केडेमिक मित्रों को भी हो सकती है, जो हर सकलन को
पाठ्य क्रम में ली जाने वाली पुस्तक के रूप में ही स्वीकृत के आदी हैं और कुछ उसी तरह
से बतौर बीस-पच्चीस पृष्ठों की भूमिका—जिसमें आप ग्रन्थों से जानना क्याभी तक
परम्परा पाए कहानी के इतिहास और तत्वा में गिनाई जान वाली सुविधात्मक या सर
लीकृत छात्रायोगी क्या चर्चा—को प्रेषणा रखने हैं ! निराशा उन मित्रों को भी
होगी, जो देशी-विदेशी लेखकों के प्राप्त वाक्य और देशी-विदेशी पुस्तकों से डेर-डेर
उदाहरण देकर अपनी (?) बात कहने के कायल हैं वम तरह व अपनी बात तो सर
क्या कह पाते हैं उन देशी विदेशी लेखकों की बात को भी कुछ का कुछ बना देते हैं
या इन्वर्टेड कामाज हटाकर दूसरों की बात को अपनी बात बना लेते हैं। यह सुखी
असल में वही लेखक (सम्बाधन की विडम्बना में बरा नहा जा सकता) लगाते हैं जा
अपनी बात में छुब गए होते हैं। इन लेखकों की स्थिति आकाश बेन के मानिन्द
है सवाल यह नहीं है कि देशी-विदेशी पुस्तकों में क्या लिखा है (उने पाठ्य पर
छोड़िए वह पढ़ लेगा) बल्कि सवाल तो यह है कि आपका क्या कहना है ? जो
विद्वान समाज हर नए प्रयत्न की ओर आग्रहियों में तनाने की लत पात्र चुने हैं
और उससे बटे हुए या ऐसे उमने विरोध में उमने पाते हुए किसी भी नए प्रयत्न के
अस्तित्व की नकारना अपनी व्यक्तिगत या पादा मन प्रतिष्ठा कामबान बनाए हुए हैं
और किसी भी तथ्य की समझ या समझाने के लिए तनशीलता के नाम पर एक
भावार्थमय उद्गार प्रकट करते हैं कि समझदारों चमत्कृत होकर रह जाती है, यहाँ वे
भी निराश होते हैं।

धर्म-परायण पाठक और नीतिधर्मा समीक्षक को यहां कुछ कहानियों को लेकर आपत्ति हो सकती है और उनके कोण से यह आपत्ति बदाबित् सही भी है लेकिन वे जिन बटखरा से—वे बटखरे गुजरे जमाने के नियमन में तो किसी बदर सहायक हुए थे—नई कहानी की तोल करना चाहते हैं उनकी भेरे यहाँ कोई ग्रहमियत नहीं है, इसलिए कि दलील अदलील के पीछे साहित्येतर हैं साहित्य का सत्य ठीक वही नहीं होता, ज्यादा सही होगा यह कहना कि ठीक उसी तरह नहीं होता जिस तरह वह समाज का सत्य होता है यानी साहित्य और समाज के सत्य में प्रक्रियात्मक अन्तर है।

सम्भावनाएँ लिए हुए नये जीवन बोध के समानान्तर तीन दर्जन से भी अधिक प्रतिष्ठित और प्रतिष्ठित होती हुई प्रतिभाएँ आज कथा-लेखन कर रही हैं। स्वाभाविक है कि कुछ को मुझे प्रस्तुत पुस्तक को और बड़ा आकार न दे पाने की मजबूरी में छोड़ देना पड़ा है—इसमें उनकी अवमानना जसा कुछ भी नहीं है—और उनके लिए मैं एक अलग पुस्तक की बात सोचता हूँ, अलग पुस्तक की मतलब इस पुस्तक की दूसरी जिल्द की।

‘पाठ प्रकृति को खास अभ्यास देने वाली कोई कहानी, हो सकता है कि यहाँ ली जाने से रह गई हो, गो इस कोण से मने पूरी सतर्कता बरतनी चाहिए है फिर मेरी अपनी सीमाएँ तो हैं ही।

पिछले दिनों तक हिन्दी ‘नई कहानी’ पर बहस मुवाहिसे या आयोजित गोष्ठियों में व पत्र-पत्रिकाओं के स्तम्भ और हासियाँ पर चर्चा-परिचर्चा के दौरान एक बात बराबर खयाल को आसती रही कि चर्चा ‘नई कहानी’ पर शुरू तो होती है लेकिन अपनी गुरुभात के तुरंत बाद यह या तो पश्चिमी कहानियाँ के सदम और पश्चिमी समीक्षकों के उद्धरणों या नाम गणना की होड़ में फिगन कर खो जाती है या फिर नए कथाकार की किसी एक कहानी को लेकर उस पर समीक्षक मित्र नितांत विरोधी मत-यो में पटे निकालते रहते हैं और तब हिन्दी ‘नई कथा’ की समीक्षा साहित्य की चीज न रहकर पहलवानों के जोर करने की जगह का मतलब देने लगती है।

पहली स्थिति में समीक्षक की समझ हिन्दी ‘नई कहानी’ की पहचान से उनकी छुड़ी हुई नहीं रही है जितनी कि इस उत्साह से कि अधिक से अधिक विदेशी ग्रन्थों और लेखकों के नाम गिनाकर वह साहित्य के विद्वानों को आतंकित कर सकें और आतंकित करन का यह चस्पा हमारे कथा समीक्षकों के मुजबन को जिन रास्ता पर ले गया है, व रास्ते हिन्दी कहानी की प्रकृति-पहचान की तरफ बहुत कम सौदवर आते हैं विदेशी समीक्षकों और विदेशी कहानियाँ को गिनाने की सत ने यहाँ तक फैशन का रस पखा है कि गिना भारतीय कथा लेखन के परिवेग और जिन्दगी की प्रकृति का खयाल किए विदेशी समीक्षा के मुहावरे को उन पर भरपूर स्तेमाल किया गया है ऐसे कथा समीक्षकों के लिए प्रकगर कथा समीक्षा में मुख्य सदम—हिन्दी नई कहानी—महज

राल्फ थाप्रस, वरेन चापेक, एदिना मारिस अर्नोस्ट सुस्तिग ईवान क्लोमा जोसेफ एकवोरेस्की सुदवीक अक्षेनाजी और स्टीफेन स्पेण्डर वर्जोनिया बुल्फ पर्मील्युवक, ई०एम० फोस्टर, विक्टर फ़िरमुस्की, फिलिप गह्व हेनरी जेम्स रल्फ फॉक्स और विल्युल नए लेखक बालिन विल्सन विचारकों में लोनजाइनस भीतो, कीर्क गाद, शापेन हावर लुकाच और काली गुला' मिय ग्रव सिंसिफस पतन, अजनवी प्लेग, यूलिसिस, थायाकल्प, 'धीन की दीवार, काना पानी, कासिन, लायल, 'इन्टो मेसी (की कहानियाँ) 'नीनिया मुक्ति पथ', 'नोलिटा विटर हुनीमून, 'एम्पटी कनवाम' व दूसरे-दूसरे ग्रन्थों में गुजरने का शौक पूरा कर सकता था लेकिन तब हिंदी कहानी पर दबने के लिए दूसरे मित्रों की तरह ही बक्त बहुत कम होता और हिंदी नई कहानी पर गुरु की गई चर्चा 'नई कहानी' से उसी तरह घबराकर हो जाती, जिस तरह अब तक दूसरों के यहाँ होती रही है

हिन्दी कथा समीक्षा की दूसरी स्थिति में समीक्षका ने निहायत मुगियाना प्रदाज में एक एक कहानी पर टिप्पणियाँ गोदना गुरु किया और कहानी समीक्षा को फिर विद्यापिया की समझने समझाने के स्तर पर न खड़ा करने की कोशिश की गो यह ग्रंथ तब की कथा की अभ्यापबीय आलोचना से कारण बदला होने के कारण प्रकृष्टा भिन्न ज़रूर थी लेकिन पटन वही था मतलब कि कहानी को लेकर समग्रता में और समूचे कथा सदन में विस्तार में जो विचार होना चाहिए था, वह न हो सका।

कुछ बातों की पुनरावृत्ति नई कहानी' की प्रकृति की समझने पहचानने में हुई है गोकि मुझे प्रसंगत उनका औचित्य लगा, इसलिए ज़रूरी भी समझा और कुछ मददों में संयोग भी किया यह इसलिए भी कि रात अधिक खुलासा और साफ हो सके या मित्रों की राय का मैं आनंद करूँगा

आभार और आभार पापित करते समय मुझे समीक्षक डॉ० राजेंद्र शर्मा का उनके 'नई कहानी' विरोधी रस के लिए धन्यवाद इसलिए करता हूँ कि अगर उनकी विरोधी दलीलें मुझे लगातार न उकसाती रहता तो शायद यह पुस्तक काफी कुछ समय अभी और ले लेती न सही आज के प्रजातंत्र में लेकिन साहित्य में तो विरोधी दलीलें अपनी जगह रखती ही हैं विपक्ष पक्ष को ज्यादा मजबूत करता है और ज्यादा उजागर, उसकी नाव नितान्त बानू की नहीं हानी-होने को तो मित्रों के यहाँ बालू की नीवाँ पर हवावा के महल तब होने हैं—यह अलग बात है कि जैसे-जैसे पक्ष चुनता जाता है वह इमारत सहित समूची बालू हो जाती है।

मुख्य नए ब्याकार श्री राजेंद्र यादव के प्रति कृतज्ञता पापित करता हूँ उनकी खासी मदद न मिली होती तो कुछ दिक्कतें सामने आ सकती थीं, सहयोगी ब्याकार मित्रों का बनाउड़ा हूँ।

इस तमाम खुशी में भाई देवी शंकर अवस्थी के न रहने की तकलीफ बराबर घाँसती रही है।

लेखन के समय काफी के प्यालो से सहयोग करते हुए अपनी भली-बुरी टिप्पणियों की एवज थोमती पूजा को स्मरण कर लेना कुछ खास बुरा न रहेगा हार्नाकि इसमें अच्छा क्या है ? इसको समझने की पूजा को तो दरबार है ही नहीं भुक्त तब भी इसका कोई अर्थ स्पष्ट नहीं है।

प्रेस काफ़ी तयार करने के लिए प्रियवर हरिनारायण शर्मा का धन याद कर लेना जरूरी है।

लेखका के प्रकारादि क्रम से ही यहाँ कहानी क्रम दिया गया है हो यह भी सकता था कि उनकी उपलब्धि के लिहाज से, खास तौर पर ली गई कहानियों में निहित उपलब्धि को निश्चित करते हुए ही क्रम दिया जाता, लेकिन यह नहीं हो सका, इस लिए कि सकलनकर्त्ता की हैसियत ठीक वही नहीं होती जो समीक्षक की होती है क्योंकि सकलनकर्त्ता लेखका का सहयोग पाता है और अगर लेखक चाहे तो उस सहयोग में भी करें जबकि समीक्षक लेखको को सहयोग करता है (और खास तौर पर पिछले दिना कुछ समीक्षक कुछ ही लेखका का खास सहयोग करते रहे हैं।) समीक्षक और सकलनकर्त्ता की इसी हैसियत के अनुपात से उनकी निर्भीकता में अन्तर आ जाता है

गा इस क्षेत्र में हमें निर्भीकता का इतज़ार है जरूर

अंतिम कहानी में स काफी की भूल की वजह से अपने क्रम में नहीं जा सकी है उम्मीद है इस भूल को भूल ही समझा जायगा

और अंत में महज इतना भर कि यह पुस्तक अपने प्रकृति और पाठ वाले भाग के माध्यम से उन तमाम नई कहानी की समीक्षा सम्बन्धी रोचक मनोरंजक और विचारोत्तेजक हलचल विवादों नई कहानी में व्यतीत कहानी के मुकाबले आए बदलावों और पाठ में बदलते हुए रिश्तों उनके प्रति अब से पहले न करते गए कलात्मक व्यवहारों सही वास्तव को खुली आँखा देख पान वाले दवावों और नतीजों व आंतरिक संगतियों के समूचे कलात्मक प्रतिनिधित्व का विनम्रता वक्ष चाहे दावा न करे लेकिन हम दिशा में इसका दावा है अरु और न सही दावा यहज एन कोशिश भर कोशिश—यानी

‘आगे के कवि मानिएँ तो कविताई

न तो राधा कृष्ण सुमिरन की बहानों है।’

रामनयमी १९६८

‘अनुवध’ कार्यालय

बी० १७७, मंगल माग, दापू नगर, जयपुर

[१]

नई कहानी : प्रकृति



नई कहानी और उसकी प्रकृति

“शेखजी बज म है यह रिदा की ।

गर बिगड़िएगा तो बन जाइएगा ॥

(पिछले दिनों ‘नई कथा’ की समीक्षा बुद्धि गैरीशायरी के हवालों से गुजरती रही है इसलिए इस तरह गुरुभ्रात के लिए मुझे भी नज़रन्दाज़ किया ही जा सकता है गोकि)

हिन्दी नई कथा-समीक्षा में कुछ मोधे सच्चे मित्रों ने यही सोचकर दाखिला लिया था कि बल्लो बिगड़कर भी देख लेते हैं क्या पता कि बनने का रास्ता यही होकर गुजरता ही और जो लोग पहले से ही ‘बने हुए’ थे उनके बिगड़ने की बात ही क्योंकर की जाय ? बहरहाल कुछ मित्रों के यहाँ बदनाम होकर भी नाम कमाने वाली प्रतिस्पर्द्धा की ताज़ी और उम्दा मिसाल ‘नई कहानी’ की समीक्षा-पतीनी में अलग से इद्दाज की हुई मिलेगी इसलिए कि ऐसे मित्र-समीक्षकों ने जब लिखा था तब भी कुछ ‘कमिट’ नहीं किया था और अब तो खर उड़ोने निम्नने से ही वास्ता तोड़ लिया है । इसलिए भी कि लिखना उनकी नतिक मजबूरी या दायित्व निर्वाह की आंतरिक विवशता का नतीजा होकर नहीं था बल्कि तो पसा कमाने या भौतिक मजबूरी थी—और पसा कमाने के लिए लोग कुछ भी लिखते हैं—और अब मोटी नौकरियों और मोटी बतन राशि के चलते उन्हें लिखने की दरकार भी क्याकर हो ? बल्कि इन मित्रों को न लिखने से सुविधा ही हुई है, इसलिए कि लिखते थे तो कहा न कही पकड़े जाते थे और अब कथा-गोष्ठियों में (न लिखने वाला के लिए क्या गोष्ठियों का आयोजन साहित्यिक सुविधा है) जसी उपस्थिति’ देखी बसी ही बान बह दी, अगर कोई वाग्विहीनता गोष्ठी का अध्ययन हुआ तब गांधी नहरू और मौजूदा प्रधान मंत्री तन के उदाहरण दे दाने, नया पीढ़ी का जमघट हुआ तो उनको खबर लगने जसा वह दिया बुझा हुआ तो परम्परावादी का हवाला दे दिया और अगर किसी ने फिर भी घेरा तो साफ मुँह पर गए—आप जा बह रहें हैं मेरा मतलब वह नहीं है बल्कि आप जो सोचते हैं

मेरा वही मतलब है—अब आप क्या कर लेंगे, बाना के फागे तो हाने नहीं पाविर

नयी क्या समीक्षा में अवसरवादिता के इस माहौल पर अगर रवीन्द्र यादव की तजवीज ¹ राही पाती है तो इस 'सही' की गिलाफन ब्यावर की जा सकती है

नयी कहानी की समीक्षा में जहाँ शायदादी अवसरवादिता का यह दौर दौरा चल रहा था वहाँ दूसरी तरफ बात बिल्कुल अलग थी अलग यानी ठहरी हुई

पौठस्य फ्रॉपि आचार्य चुपाए बैठे हुए थे शायद यह सोचकर कि नई कहानी स्कूली छात्रों का जसा हो कोई आन्दोलन है (गो स्कूली छात्रों के आन्दोलन के बारे में भी वे अब वस्तु स्थिति से सही तौर पर परिचित होने जा रहे हैं) जो न-कुछ समय में ही फिजिल आउट हो जायगा और सब के गरदन उचका उचका कर खास मुद्राओं में कह सकेंगे कि हम न कहते थे कि यह सब अशास्वत-अशास्वत यानी नश्वर-है, उनके चुपाए रहने की शायद एक वजह (वजहें कुछ और भी थीं) 'नई कहानी' के बारे में पलता हुआ उनका अपना अज्ञान भी था [क्याकि कविता के फकत पाँच-दम सम्मलन सपाट में पढ़कर उन पर आलोचना लिख भारना कुछ मुश्किल काम नहीं है लेकिन कहानी को तो न सिर्फ सम्मलन बल्कि प्रतिनिधि पत्रिकाएँ साथ-साथ पढ़ते हुए भी उसमें साभेदारी निभाकर समीक्षा कर पाना काफी कुछ मुश्किल है, जो न सिर्फ आप से स्तरीय समीक्षा विवेक की माँग करती है बल्कि कालक्रम में वहाँ पर्याप्त समय की भी दरकार होती है प्रतिनिधि कहानियाँ पढ़कर क्या समीक्षा में सहयोगी बनना खतरे से खाली नहीं है इसलिए कि निरपेक्ष तौर पर कोई प्रतिनिधि कहानी होती ही नहीं वह प्रतिनिधि होती ऊँच है, लेकिन उन कहानियों की और उन्हीं की वजह से भी जिनकी युग बोध के संदर्भ में अपने-अपने तौर पर निभाई गई भूमिकाएँ काफी महम होती हैं इसलिए कहानी से युग बोध की व्याप्ति समझने के लिए सिर्फ प्रति

¹ अपनी 'साहित्यिक-बौद्धिक' स्वीकृति बनाए रखने वाला समीक्षक राजनीति में चुनाव लड़ता है और साहित्य में सामाजिकता की खिल्ली उड़ता है कला और चिन्तन की महीन से महीन गुत्थी को वह 'उन्हीं' के स्तर और उन्हीं के शब्दों से कितनी गहरी मुद्रा में नया से नया मुहावरा देकर डिस्कस कर सकता है—यह 'रोप ट्रिप' (बाजीगरी) उसे रोख एक नयी शुरुआत करने के लिए बाध्य कर बेती है। राजनीति में जिनके विरोध करता है साहित्य में उनसे दो कदम आगे बढ़कर 'आधुनिकता बोध' के सॉर्टफिकेट और ब्लब लिखता है फिर घर आकर आठ-आठ आसू रोता है कि 'शब्द' और 'अर्थ' के सम्बन्ध टूट गए हैं बौद्धिक बहुसंख्यकों में किसी को दिलचस्पी नहीं है तब बाजिनी द्वारा उद्धृत मुसोलिनी के बारे में कही गई उगो ओजेती की बात याद आती है—'उसे देखकर यह खयाल आए बिना नहीं रहता कि सोते समय इस आदमी का चेहरा कितना दुखने लगता होगा "

निधि कहानिया से ही नहीं बल्कि कहानी की समूची रचनाशीलता से साक्षात्कार करना जरूरी होना प्रतिनिधि कहानियाँ पढ़कर आप उन महीन रेशों को कैसे उकेर पाएंगे जिन्हें कँपाती हुई प्रतिनिधि कहानिया के गिद दूसरी-दूसरी कहानिया बिखरी हुई हैं जिनकी वजह से वे प्रतिनिधि हो सको हैं और उन्हें प्रतिनिधि होने का दजा मिल सका है और यदि आप उन्हें नज़र-दाज़ करके कोई बात कहेंगे तो निश्चय ही वह किसी स्तर पर लगडे तर्कों और अपाहिज मति वाली बात होगी यही वजह है कि प्रतिनिधि कहानिया पढ़कर—अध्यापकीय सहज में जो कथा की पहचान दी जाती है वह कहानी के समीक्षा विवेक को सही पहचान न होकर ऊपरी ऊपरी धार सतही होनी है किसी बंदर बटी हुई भी क्याकि उसमें समूची कथा सजनात्मकता से गुजरने का सबूत नहीं होना और जो सबूत होता है वह यह कि आपने 'प्वाइन्टस म क्रुछ कहा होना है जो पूरे तौर पर प्रामाणिक न होने के बावजूद भी छात्रों को परीक्षा में अंक दिलाने में उनकी भरपूर मदद करता है कथा समीक्षा की सही पहचान देने के लिए जरूरी है कि आप कथा-सृजन के समूचे माहौल से गुजरें, प्रामाणिकता और आन्तरिक विवशता के साथ उससे जुटकर उत्तम हिस्सेदारों निभाते हुए और यह काम चन्द दिनों का नहीं है, चन्द महीना का भी नहीं इसके लिए वक्त की लम्बी पटरिया को नापना पड़ेगा उनके साथ-साथ चलने हुए] और यह भी कि 'नए चीतरफा पढ़ते लिखते हैं, उनका पक्ष भी लें और मान लीजिए कोई बात गलत भी निकल जाय (समीक्षा में गलत बात कहना और बात का गलत हा जाना कम गु जाइय तब नहीं है) तब इसकी ही क्या सनद कि ये नए वक्ता देंगे और फिर भाड में जाय और 'इनके मुँह कौन लगे वाले भ्रदाज में सबको भ्रष्ट मानकर किनाराकशी, गोमुखी में हाथ डालकर अपने सत्य शिव मु'दरम् के मनका पर उँगलिया की दस्तकें या लोक मानस की जुगाली बही यह भी धनमनापन या ही कि 'नयी कविता का विरोध करके देख लिया, उसमें 'नयी कविता को स्वीकृति ही मिली—विरोध भी आखिर स्वीकार करके ही किया जाता है—'मलिए 'नयी कहानी' के लिए विरोधी रवैया भी नहीं

एक वग और भी था जो आलोचक होने से पहले ही चुक गया था, लेकिन बिना समझे वृत्ते उसने नई कहानी को जस का तस स्वीकार कर लिया था इस उम्मीद के साथ कि कुछ और न सही तो कम अजब-कम उसे आलोचक ही मान लिया जायगा इस वग न 'नई कहानी' ही नहीं उसकी समीक्षा के भी उज्ज्वल होने की भविष्यवाणी की है और अपनी उम्र का सयाल घाते ही डरते-डरते यह सीख भी देनी चाहती है कि नयी कहानी पर निरपेक्ष चिन्तन होना चाहिए (निरपेक्ष यानी कहानी से भी और चिन्तन से भी) और नए लोग म ही नई कहानी के बारे में एक मत या समझौता (गोया समीक्षा समझौता होनी है और वह भी प्रजातान्त्रिक पद्धति से) न होने का हवाला देकर उसे कमजोर भी साबित करना चाहिए, इस वग को

किसी भी बात को 'वाद और किसी भी शब्द को वाज़ी' बना देने की लत या 'मोनिया हो गया है और अब तो यह 'मोनिया' 'एबनामे लिटी' की हद तक पहुँच गया है मसलन आप इनके सामने कहे अनुभव की प्रामाणिकता का सवाल ये नौद म भी बेमालूम चीख उठेंगे—अनुभववाद आप एक शब्द रखें 'आयाम ये तुरन्त भर्राई हुई आवाज़ म वज उठेंगे आयाम बाज़ी फिर फटी फटी आँखा से देखते हुए माहौल म कोई प्रतिक्रिया न पाकर विस्तर म दुबक जायेंगे और अपनी लत पर शर्मिन्दा होने हुए अन्त म मुन्न हो जायेंगे

इस ज्योतिषी बग ने दबी जवान स सहमे सहमे यह भी कहना चाहा है कि अगर 'नई कहानी' का परम्परा के साथ जोड़कर (जोड़-तोड़ की इनकी कायवाही की अदा पर गौर किया जाय) आख्यान हो तो बेहतर नए समीक्षक को क्या ऐतराज हो सकता है अगर परम्परा का अर्थ महज उहे आप ग्रंथों म ही तलाशना नहीं है तब लेकिन इन तथा वधित समीक्षक मित्रा के यहाँ परम्परा का मतलब आम तौर पर उसे आप ग्रंथों म ही तलाशने से लिया जाता है—इस बिहाज से भी नई कहानी की कुछ बड़ियाँ तलाशी जा सकती हैं जो परम्पराओं मे आये लिखी हुई भी हो सकती हैं और ठीक उनके विरोध म भी, बेशक उहे आप ग्रंथों म टटोलना नयी समीक्षा बुद्धि की सही पहचान क मातहत नहीं हागा लेकिन यह प्रश्न अभी बाद मे

नई कहानी की समीक्षा को जिनना बड़ा खतरा अवसरवादी समीक्षकों से हो सकता है (नई कहानी की समीक्षा को ही क्या इस जमात से उतना ही बड़ा खतरा समूचे देश का भी क्या नहीं है?) उतना ही बड़ा खतरा नई कहानी को बिना समझे स्वीकार कर लन वाले भविष्य वक्ताओं मे भी है मानस की दोस्ती के खतरे दाना दुश्मन की दुश्मनी से कही ज यादा खतरनाक नतीजे बाल होन हैं

लकिन नई कहानी का समीक्षा पद नूतना अधरा हो बात एकदम ऐसी नहीं है बल्कि ठीक इससे उन्टी भी है, जबकि यह भी सही है कि नयी पीढ़ा यानी उम्र म नए तमाम समीक्षा नई कहानी पर एक मन होकर नहा सोच रहे हैं—विरोधी निगाहों म भी मोच रह है—लकिन उम्र के लिहाज से ही निगा को नया मान लना मतलब नए युग बोध की गमक बाना मान लना और विरोधी निगाहों म सावन की बड़ह से किसी एक का क्या समाप्ता क चिन्तन स हो खतरा कर देना, अन्त म नए के अर्थ का तो चिन्तन हा नहा समझ पाना है विचार क विरोध आयाम का भी गममने मे नकार करना है और इसका नतीजा होकर अपना समाप्ता बुद्धि को पूर अह का निवार बनन देना है कि नही मानूँ कि उम्र की बढ़ि समझारी और आयुनिष्ठता बोध के लिए कई मायन नहीं रगता आयु कम होने पर भी १६ की उमर के चिन्तन म पाठिन हूषा जा सकता है (प्राम्पर आई० ए० एम० पत्रकार और शायर का सत्य चरन कारें शक कर मन्त्रों के सामन मिर भुजाउ, परा म

नई कहानी और उसकी प्रकृति

वाकायदे मंदिर में नए करते और समय में घटियाँ दुनदुनात देखने के लिए मोहन जोदड़ों की खुदाई की दरवार नहीं है। इस बुद्धिजीवी तबके में कम आयु वाले की तादाद भी खासी बड़ी है) और नई पीढ़ी में (महज उम्र के लिहाज से) आयु में दुगुना होन पर भी जिंदगी की बारीक में बारीक हलचल को आग्रह और धारणा मुक्त होकर पहचाना जा सकता है और उसे उतना ही बेतमीह हाकर अभिव्यक्त भी किया जा सकता है। कृष्णा सोवती की मिश्री मरजानी' और यारा के यार' रेणु की 'प्रजा सत्ता' आदि कहानियाँ हम बात का सबूत हैं।

अन में नए का सवाल उम्र के कम ज्यादा होन से जुड़ा हुआ सवाल नहीं है बल्कि यह तो उस दृष्टि बोध का सवाल है जो आधुनिक जिंदगी को उसके तमाम आंतरिक और बाह्य घिरावों में बदले और बल्लते हुए कोणों से बैचौस होकर दख पाता है। इसीलिए 'नयी कहानी' चाहे नाम हो (और वह एक स्तर पर नाम है भी) लेकिन 'नया' अपने अर्थ में प्रक्रियावान है यानी प्रक्रिया है और यह प्रक्रिया जिनकी आज की है उतनी ही आगे की भी। इस बात पर कोई बहस नहीं कि इसके लिए चाहे नाम और-और आजायें या दे दिए जायें।

नए समीक्षकों और नए कथाकार-समीक्षकों ने नयी कहानी को जिन आधारों पर व्यतीत कहानी से अलग किया है और युग बाध के साथ उसके जुड़े हुए रवा रेखों को जिन्गी के हृद और परिवेश के तनावों में उसकी पृथक्ता को दूर तक देख पाया है व आधार कामयाब प्रयत्न ही नहीं हैं बल्कि हिन्दी की कथा समीक्षा में मौलिक उप-सिद्धियों के तौर पर हैं। हममें असमजस कुछ भी नहीं कि कथा की नई समीक्षा ने पुरानी कथा समीक्षा (वह जसी कुछ भी थी) की हदों को ताड़ा तो है लेकिन अपनी हर्षे कायम करने का दकियानूस प्रयत्न नहीं किया है (गोकि नई कथा की समीक्षा हिन्दी कथा समीक्षा में नितान्त नई गुरुमात है, उससे पहले कहानी पर लटका में बँधी टिप्पणियाँ को समीक्षा कहना समीक्षा मात्र का मजाक होगा) मतलब कि उसे ठहराव की बिडम्बना से बचा लिया गया है (यद्यपि यह सतोप कहानी में सृजन स्तर पर लगा तार बदलावा के कारण ही शक्य हुआ है) इस सबसे नई कहानी की समीक्षा-पद्धति की (और कहानी मात्र की समीक्षा पद्धति की भी क्यों नहीं?) महत्वपूर्ण गुरुमात ही हो सकी है और नई कहानी की उम्र को देखते हुए यह गुरुमात कुछ कम विशिष्ट नहीं है।

पुरानी पीढ़ी के कुछ समीक्षकों ने 'नई कहानी' को उसके सही परिवेश के साथ समझने की भरपूर कोशिश की, लेकिन ये समीक्षक सख्या में नितान्त विरल ही रहे (नाम लेना इसलिए उचित नहीं होगा क्योंकि उन पुराने समीक्षकों को इस सद्भ में अपना नाम न देखकर सदमा सगेगा जो खुद को नयी कथा का समीक्षक होने के मुग़ा लते में जिलाए हुए हैं) नयी कहानी की समीक्षा में नए कथाकार समीक्षकों ने साम

कसी भी बात को 'बाद' और किसी भी शब्द को 'वाज़ो' बना देने की लत या मीनिया हो गया है और अब तो यह 'मीनिया' 'एवनामेलिटी' की हूँ तब पहुँच गया है। मसलन आप इनके सामने कहे 'अनुभव की प्रामाणिकता का सवाल ये तोड़ में भी बेसास्ता चीख उठेंगे—अनुभववाद आप एक शब्द रखें 'मामाम ये तुरन्त भर्राई हुई आवाज़ में बज उठेंगे 'आयाम वाज़ो फिर पटी पटी आँखा से देखते हुए माहौल में कोई प्रतिक्रिया न पाकर विस्तर में दुबक जायेंगे और अपनी लत पर शर्मिन्दा होने हुए अन्त में सुन्न हो जायेंगे।

इस ज्योतिषी वगैरे से दबो जवान से सहमे सहमे यह भी कहना चाहता है कि अगर 'नई कहानी' का परम्परा के साथ जोड़कर (जोड़-तोड़ की इनकी कायवाही की अदा पर गौर किया जाय) आख्यान हो तो बेहतर नए समीक्षक को क्या ऐतराज हो सकता है अगर परम्परा का अर्थ महज उहे अर्थ अर्थों में ही तलाशना नहीं है तब लेकिन इन तथा 'रहित समीक्षक' मित्रों के यहाँ परम्परा का मतलब आम तौर पर उसे आप अर्थों में ही तलाशने से लिया जाता है—इस लिहाज़ से भी नई कहानी की कुछ कड़ियाँ तलाशी जा सकती हैं जो परम्परा में आने लिखी हुई भी हो सकती हैं और ठीक उनके विरोध में भी, बेशक उहे आप अर्थों में टटोलना नयी समीक्षा बुद्धि की सही पहचान के मातहत नहीं होगा लेकिन यह प्रश्न अभी बाद में

नई कहानी की समीक्षा को जितना बड़ा खतरा अवसरवादी समीक्षकों से हो सकता है (नई कहानी की समीक्षा को ही क्या इस जमात से उतना ही बड़ा खतरा समूचे देश का भी क्या नहीं है?) उतना ही बड़ा खतरा नई कहानी को बिना समझे स्वीकार कर लेने वाले भविष्य वक्ताओं से भी है। नादान की दोस्ती के खतरे दाना दुश्मन की दुश्मनी से कहीं अधिक खतरनाक नतीजे बाल होने हैं।

लेकिन नई कहानी का समीक्षा पक्ष इतना अंधेरा हो बात एकदम ऐसी नहीं है बल्कि ठीक इससे उल्टी भी है, जबकि यह भी सही है कि नयी पीढ़ी यानी उम्र में नए समान समीक्षक नई कहानी पर एक मत होकर नहीं सोच रहे हैं—विरोधी दिशाओं में भी सोच रहे हैं—लेकिन उम्र के लिहाज़ से ही किसी को नया मान लेना मतलब नए युग बोध की समझ वाला मान लेना और विरोधी दिशाओं में सावधान की बजह से किसी एक को क्या समीक्षा के चिंतन से ही खारिज कर देना, अस्त में नए के अर्थ को तो विलुप्त हो नहीं समझ पाना है। विचार के विरोधी आयाम को भी समझने से इन्कार करना है और इसका नतीजा होकर अपनी समीक्षा बुद्धि को पूरा अंधा का गिनार बनाना देना है। किसे नहीं मालूम कि उम्र की बढ़ित समझपट्टी और प्राधुनिकता बोध के लिए कोई मादन नहीं रखती। आयु कम होने पर भी १६ वीं शताब्दी के चिंतन से पीड़ित हुआ जा सकता है (प्रोफेसर आई०ए०एस० पत्रकारी और डाक्टरों का रास्ते चलते धारों रोक कर मंदिरों के सामने सिर झुकाते, घरा में

नई कहानी और उनकी प्रकृति

बाकायदे मंदिर में नृत्य करते और समय से घंटियाँ टुनटुनाते देखने के लिए मोहन जोड़ों की खुदाई की दरवार नहीं है। इस बुद्धिजीवी तबके में कम आयु वाले की तानाद भी खासी बड़ी है। और नई पीढ़ी से (महज उम्र के लिहाज से) आयु में दुगुना होने पर भी जिंदगी की बारीक से बारीक हलचल को आग्रह और धारणा भुक्त होकर पहचाना जा सकता है और उसे उतना ही बेनीम होकर अभिव्यक्त भी किया जा सकता है। कृष्ण सोवती की मित्रो मरजाणी और यारो के यार 'रेणु की 'प्रजा सत्ता' आदि कहानियाँ इस बात का सबूत हैं।

असल में नए का सवाल उम्र के कम ज्यादा होने में जुड़ा हुआ सवाल नहीं है, बल्कि यह तो उस दृष्टि बोध का सबान है, जो आधुनिक जिंदगी की उसके तमाम आन्तरिक और बाह्य घिरावों में बदलते और बदलते हुए कोणों से बेनीम होकर देख पाता है। इसीलिए 'नयी कहानी' चाहे नाम हो (और वह एक स्तर पर नाम है भी) लेकिन 'नया' अपने अर्थ में प्रक्रियावान है यानी प्रक्रिया है और यह प्रक्रिया जिनकी भाज की है उतनी ही आगे की भी। इस बात पर कोई बहस नहीं कि इसके लिए चाहे नाम और-और आजायें या दे दिए जायें।

नए समीक्षकों और नए कथाकार-समीक्षकों ने नयी कहानी को जिन आधारों पर 'प्यतीत कहानी' से अलगपाया है और युग बोध के साथ उसके जुड़े हुए रखा रैते को जिंदगी के दृढ़ और परिवर्तन के तनावों में उनकी वृत्ति की दूर तक देख पाया है वे आधार कामयाब प्रयत्न ही नहीं है बल्कि हिन्दी की कथा समीक्षा में मौलिक उपलब्धियों के तौर पर है। इसमें असमंजस कुछ भी नहीं कि कथा की नई समीक्षा ने पुराना कथा समीक्षा (वह जसी कुछ भी थी) की हवा को तोड़ा ता है लेकिन अपनी हट्टी कायम करन का दबिमानून प्रयत्न नहीं किया है (गोविं नई कथा की समीक्षा हिन्दी कथा समीक्षा में नितान्त नई शुरुआत है उससे पहले कहानी पर लटकने में बँधी टिप्पणियों की समीक्षा कहना समीक्षा मात्र का मजाक होगा) मतलब कि उसे ठहराव की विन्म्वना से बचा लिया गया है (यद्यपि यह सतोष कहानी में सृजन स्तर पर लगातार बदलाव के कारण ही शक्य हुआ है) इस सबसे नई कहानी की समीक्षा-वृद्धि को (और कहानी मात्र की समीक्षा पद्धति की भी क्यों नहीं?) महत्वपूर्ण शुरुआत ही हो सकी है और नई कहानी की उम्र को देखते हुए यह शुरुआत कुछ कम विशिष्ट नहीं है।

पुरानी पीढ़ी के कुछ समीक्षकों ने 'नई कहानी' को उसके सही परिदृश के साथ समझन की भरपूर कोशिश की, लेकिन ये समीक्षक सभ्यता में नितान्त विरल ही रहे (नाम लेना इसलिए उचित नहीं होगा क्योंकि उन पुराने समीक्षकों को इस सदन में अपना नाम न देखकर सदस्य लगेगा जो खुद को नयी कथा का समीक्षक होने के मुगालते में जिलाए हुए हैं)। नयी कहानी की समीक्षा में नए कथाकार समीक्षकों ने नया

तौर पर घना और रचनात्मक सहयोग दिया है नयी कहानी के अन्तर्गत व रचना प्रक्रियागत संसार का उद्घाटन जितना प्रामाणिक होकर इहोत्र किया है उतने न नयी कथा का प्रबुद्ध समीक्षक भी अभी तक उग्रीस ही रहा है

लेकिन नयी पीढ़ी में ही कुछ ऐसे मित्र समीक्षक हैं, जिन्हें नई कहानी से ही नहीं कहानी मात्र से ही शिकायत है, इनमें से कोई कहानी की मृत्यु घोषणा के साथ अपनी बात शुरू करना चाहता है (ठीक कविता की मृत्यु घोषणा के पटर्न पर) तो कोई कहानी मात्र को ही आधुनिक संवेदना के बहन में अनुपयुक्त पाकर उसे घाउटडेटड घोषित करना चाहता है सब संवाल यह नहीं रह जाता कि इन मित्रों को नई कहानी से शिकायत क्या है, संवाल तो यह है कि उन्हें यह शिकायत क्या न है ? जब किसी को जिंदगी में ही शिकायत हो जाती है तो दुनिया को हर चीज उसके लिए वैसे ही शिकायत का वायस हो जाती है और इस शिकायत तलब जिनगी के चक्र में हर किसी के प्रति शिकायत का हवा भी उसे हासिल हो ही जाता है सब जिंदगी में ऐसा क्या रह जाता है जिसकी वजह से कहानी को ही शिकायत से बरी किया जा सके लेकिन संवाल तो फिर भी जहाँ का तहाँ रह ही जाता है कि आखिर इस शिकायत में शिकायताना जमा कुछ है भी या नहीं ? और अगर है भी तो किस स्तर का ? और कि वह भी कितनी दूरी तक ? जो गहवाई से देखन की जरूरत महसूस न भी की जाय, सब भी बात बिल्कुल साफ है कि ये तमाम शिकायताना तबियत के मित्र समीक्षक इस तरह की कोई चौक बात कहकर लोग की गरदानी में छम पदा करना चाहते हैं या किसी खास मित्र की कहानियाँ के प्रति अपना मोह न काट पान की वजह से या उसके प्रति व्यक्तिगत विरोधी रवैया रखने का वजह से इस तरह की गलत और साहसिक घोषणाएँ करते हैं चाहे इस बात से सबक न भी लिया जाय कि साहित्य में इस तरह की मोहाघता की वजह से कितनी ही सही मसामन समीक्षक आखिरी असमय ही अपनी दृष्टि को चुकी हैं लेकिन जिस बात में सबक लिया जा सकता है वह यह कि क्या इस मोहाघता का नतीजा हुई कथा-समीक्षा दायित्वपूर्ण समीक्षा क नतीजा का मत सब रखती है और अगर नहीं तो क्या इससे समीक्षा में गर जुम्मेदार तत्व नहीं बन रहे हैं और कि स्तरीय समीक्षा की अनुपस्थिति और समीक्षा में अराजकता की जो औरफा शिकायत सुनी जाती है वह इसी मोहाघ और दायित्वहीन समीक्षा का नतीजा नहीं है ? निश्चय ही कृतियाँ की स्तरीयता और स्तरहीनता का जो अंतर समीक्षा में चुप हो गया है और जिसके सबक समूची समीक्षा अप्रामाणिक हो उठी है वह इसी दायित्वहीन समीक्षा का नतीजा होकर ही ला

कहानी के रचना प्रक्रियागत संसार का उद्घाटन व कहानी सत्य को उपलब्ध करन के लिए उस पर जोर पहली बार कहानी की नयी समीक्षा में ही हुआ है हार्नकिन्स सच को मान लेन से पहले ही यह मान लिया जाना चाहिए कि कुल

जमा सही माइन में कहानी की सही समीक्षा की शुरुआत पिछले दशक में ही हुई है, इससे पहले तो क्या समीक्षा के नाम पर महज कथानक का संश्लेषण व तत्त्वा और प्रभावना के खाना में बँटी हुई सरल की गई छानोपयोगी सुविधा हुआ करती थी गो इसरी बजह कहानी के प्रति बरता गया मूल दृष्टिकोण ही था और किसी स्तर पर कविता और उसकी समीक्षा के हिन्दी में उच्च पस्थ होने का नतीजा भी एक दशक से कुछ पहले तक विरासत में मिली कहानी सम्बन्धी समीक्षा के बारे में यह कह दिए जान की पुष्टि है कि कहानी के व्यतीत आचार्य समीक्षकों ने उसे कभी गम्भीरता से लिया ही नहीं था बल्कि कहानी उनकी नजरों में हल्के मनोरंजन के स्तर का उप साहित्य ही माना जानी रहो इसलिए उसकी समीक्षा भी आचार्यों से गम्भीर समीक्षा बुद्धि की माँग न कर सकी उपदेश-संदेश के लिए पद्यतन्त्र हितोपदेश, जातक कथाएँ व रामायण महाभारत की टांगी बड़ी कहानियाँ और दृष्टान्त थे ही इनसे उन्होंने नीति के दशक मुलमाएँ भारतन्दु के बक्त में कहानी से देश भक्ति राष्ट्रीयता व आदर्शों का भुगतान जरूर किया गया, लेकिन कहानी के प्रति मूल रख में अभी भी कोई पक्क नहीं आया था मगर अब उसके लिए मूल दृष्टि मनोरंजन वाली ही थी

प्रस्ताव और प्रसन्न के यहाँ कहानी सृजन में गम्भीर और कलात्मक रख प्रस्ताव के बावजूद समीक्षा स्तर पर यह महसूस नहीं किया गया कि वह साहित्य का कादंब्रियिक कला रूप है और उसका समीक्षा साहित्य की किसी कलात्मक दृष्टि के स्तर पर मानकर का जानी चाहिए यहाँ तक कि यशपाल जनेन्द्र, अग्नेय, इलाचन्द्र आदी तक आज पर भी उसे समाना स्तर पर कोई महत्व नहीं मिला इतना जल्द रहा और यह चाह कि जल्द ही वह ही सही कि मिथान चर्चा करने समय व साहित्य के विविध रूपों पर विचार के दौरान कहानी का आचार्यों को खानी जगह भरन के लिए नाम लेना ही पड़ा अब तरह कहानी का (समीक्षा में) 'नाम लेना और 'पानी देना' तो खर नहीं मिला लेकिन उस एक समूह सम्मानित साहित्यिक रूप में अब से पहले प्रतिष्ठा कभी नहीं मिला यहाँ तक कि १९४७ में देश के पूर्ण स्वतन्त्र हो जान के बावजूद समीक्षा स्तर पर कहानी का अपना स्वतन्त्रता के लिए करीब एक दशक तक इन्तजार करना पड़ा और अपना आवाज के इस वर्ष में उसने जिनकी शक्ति सचित की और फल-फलानों को सम्मान प्रदान किया वह अब से पहले अपना शुरुआत में किसी भी साहित्य रूप को टांगना नहीं हुआ था लेकिन बावजूद इतना सब होने के बावजूद भी समीक्षा में आज यह है कि, जब तक एकान्त कहानी का ही चर्चा न हो, वहाँ समूचे साहित्य का जायदा कविता में ही लिया जाता है, बल्कि प्रवृत्त किमी उपवास को भी याद किया जा सकता है दरम्यान यह कविता में यात्रिक समीक्षकों की मानसिक गुलामी का ही चिह्न है और इस मानसिक गुलामी से मुक्ति की आन तब ही उठे जब कि सन् ४७ से पूरा आकाश हर्मित करतन के आवाज में आज तक मानसिक गुलामी में

१६ बहानी का समीक्षा में हमने पादपात्र कथा-मय, ता-विधि व प्रभाव का एक स्तर तक अपनी तरह से उपयोग किया है। बहानी यह तथ्य स्थापना में मार्ग प्रशस्त नहीं होता चाहिए कि जिस तरह बहानी और बहानी समानता, बहानी गति स्थिर दूगरे-दूगरे रूप भी पादपात्र मार्गस्थ में विद्यो न विद्यो माह्व ॥ प्रभावित है और यह प्रभाव घब परस्पर गतिस्थ-ममक का अनिवार्य समर्थ है। मया है त्रिगुणा मुहावरे के तोर पर कोई बहाना मान्य नहीं होता। रिमा भी गतिस्थ की जागृता की धाज यह पक्षों से है कि यह अपनी जागृता के रूप को मोचित रमो हूँ विन मानविषी धनुष्य व विनी भी रहा रेन का, अपना जमान का गंध द्वार उपयोग कर लये (क्याकि यह उनका प्रत्यक्षिणता के लिए बहाना है) विनता न दुनियां छाड़ी करके अपनी तरह से प्रभाव पाद-प्राप्त ॥ चतुर्विध मार्गस्थ का मद की है। सतिन १६ बहानी की समीक्षा में कुछ मिन प्रभाव की धाज में ताज की बहानी लिखा पत्र कर रहे हैं यह स्थिति कथा-ममोका व विन साज्जारा ता है ही हास्यास्पद भी है। विन्यता तो यह है कि इस बहानी ताज को १६ बहानी की समीक्षा-विधि की मौलिक मुद्राता को धीमे व साथ पत्र किया जाना है और मय निद्रा द होकर पदिसी कथा समीक्षा विधि का उत्तरे मगूरे द्विज्या और मानाभा के साथ द्विज्या बहानी की समीक्षा में दागिता रिता रिता जाता है। धरर यह पदिसी कथा-समक सिध कोण के तोर पर मिना के यहाँ प्रहण की गई हानी ता। कथा-समीक्षा में इसमें मन्द मिन सजती थी और तब यह अपना जमीन की गंध के समानांतर कथा-मय का उपचर करन में बहा म्हायता मानो जाती। सतिन पक्ष लिए कथा-मय को अपना धनुष्य बनान हुए प्रामाणिकता का बड़ी गति निभाना पक्षी है और कोई भी बड़ी शक्त आगिर भासना स बने निभाई जा सजती है ?

इस बड़ी शक्ति के निर्वाह में प्रथमर्थ मिनी न पदिसी कथा-समीक्षा का जस का तस अपने यहाँ स्वीकार कर लिया। और मौनितता के धावे में पक्ष की बहानी 'धना धान दि नैव' पर बगम द्वारा की गई समीक्षा को कथा-समीक्षा के लिए प्रामाणिक मानक मान लिया। 'धना धान दि नैव' का समालोचना करने समय मौनितता के तेज भँवर में बगम न समाम समीक्षका की इस रूप को वि बहान्ये का मूल वक्ष्य इस विडम्बना में वेष्टित है कि जिस जावन साना अफमर ॥ वम उग्र अक्ष से इसलिए शादी की थी कि वह अपना पत्नी को दूसरे अफमर को पलिया की तरह गले में पड़े हुए ढाँच के मानिद नहीं रखना चाहता बल्कि उसकी सुन्दरता का उप योग अपनी प्रतिष्ठा के लिए करना चाहता है परिचय विस्तार में अक्ष अपने पति व ही भोजार को उसी के विरुद्ध स्तेमास कर ले जाती है और पति व परिचिता में से एक धनिव को अपना प्रमी बनाकर उसके साथ हो जाती है। इस तरह जो अक्ष अपने पति की उत्पत्ति का साधन हा सजती थी वह उसकी जिन्दगी की सबसे बड़ी

विडम्बना बन जाती है जो अपना पति को मुक्त करके उसके गले का वोभ नही बनती एक और ग्रंथ में उसने गले का वोभ बन जाती है पति न अपना के रूप में जो दाव अपना खुगहाती के लिए स्तमाल बिया था, वही उल्टा पढ़कर उसके धाव कर जाता है बगम इस मन्तव्य को तरजीह नही देता यह मन्तव्य तो कहानी को निम्नतः साधारण बनाकर छोड़ देता है, एक घिसा-पिटा मतलब रखकर बगम कहानी का मन्तव्य उन दो लड़कों में मानता है जो अन्ना के भाई हैं और कहानी में जिनकी निम्नतः सक्षिप्त भूमिका है एक बार वे तब आते हैं जब पिता शराब पी रहा होता है और वे उसे रोकते हैं दूसरी बार भी वे पिता को रोकते हैं शराब पीने से नही अपने धनिक प्रेमी के साथ जाना हुई अन्ना को पैदा जाता हुआ पिता हैट उतार कर अभिवादा करते हुए जब उसे रोकना चाहना है तब बगम का कहना है कि वे दो लड़के समाज की अन्तर्प्रतिमा और नतिकता की आवाज हैं (गोया अतःप्राप्ता और नतिकता की एक आवाज के लिए प्रतीक रूप में दो लड़का का खाना बेहद जरूरी था) चाहें दूर दराज से वनू लाकर ही लेखक ने इन प्रतीकों को साधकता देने की कोशिश की है, फिर भी क्या के सत्य को उपलब्ध कराने के लिए निश्चय ही एक नए कोण में काम लिया गया है और इस कहानी को अफसर की विडम्बना से ज्यादा बड़का का विडम्बना की कहानी और फिर उनके माध्यम से समाज की विडम्बना की कहानी का एक नया परिप्रेक्ष्य दे दिया गया है, लेकिन इस समीक्षा विधि को पूरे तौर पर प्रामाणिक मानकर और इसके दृष्टांत आलोक में लौटा डोर लेकर क्या मन्तव्य के नाम पर बच्चे वाली कहानियों की खोज यात्रा पर निकल पड़ना कहा का समीक्षा विधक है ? लेकिन मित्र ने क्या समझ की मौलिक री में इस तथ्य की परवाह न करने हुए समीक्षा यात्रा प्रारम्भ करदी यानी क्या-समीक्षा की नयी गुरुप्राप्त और पुद्गल न खास्ता इसे खुग विन्मती ही कहा जायगा कि उन्हें ऐसी कुछ बच्चे वाली कहानियाँ उपलब्ध भी हो गई हम्मिखे की की कहानी 'फ्लिस' में उन्होंने 'निक' नाम का एक बच्चा बरामद कर लिया और लगे हाथों उसमें कहानी का मन्तव्य भी शोध लिया, निम्न वर्मा की कहानियाँ (आयरी का खेल भाया का मम, अंधरे में, कुत्ते की मौल, पहाड़) में उन्हें बच्चे ही नहीं बच्चिया भी मिल गई (शायद इसी वजह से निम्न वर्मा की कहानियाँ उनकी निगाह में 'नयी कहानी' की गुरुप्राप्त और शायद अतः भी हैं) शोध का इससे बड़ा नतीजा और क्या हो सकता था ? लेकिन सतोष मौल के इनो पत्थर पर मजिल पा जाने का क्याकर होता ? और इसमें मौलिकता भा क्या रहती, क्याकि बच्चों में तो वह विदेती क्या समीक्षक ही मन्तव्य शोध चुका था नतीजा यह हुआ कि हमारे समीक्षक न इस यात्रा को और आगे बढ़ाया और द्रोणापन के यहाँ चालान में एक झूठ जा तलाशा और कुछ मानसिक दण्ड बठक लगाकर उसी बगम पद्धति से इस झूठ को एक साधक प्रतीक में बठाने का (गोया

प्रतीक न हूँ पाँपा रोपने के लिए गमना हो गया) अतएव प्रयत्न करते हुए उगम
 कथा का मन्तव्य भी पा लिया बच्चे वाली कहानीयाँ म मन्तव्य जान की इस
 दिना म इससे महत्वपूर्ण और इसी आत्मनिता इससे अलग और इससे अगे और
 मोन सी यात्रा हो सकती थी ? क्योंकि भ्रम से पदत बचर की बरा स्थिति हो सकती
 है उसे बच्चे की सगा भी दी जा सकती है या नहीं, इसे तो बार्ड पात्रमरी महिना
 विविरस्य ही बता सकती है लेकिन तब वही कहानी का मन्तव्य तोत्रन के लिए
 मोदिक शोषागन निरु स्तर का होगा, इसी कलात्मकता का धूम से जाना सापेक्ष तब
 मुद्रित होगा ।

दरमस्त कहानी म बच्चे तलाशता और बच्चे म कथा मन्तव्य की तोत्र गु
 म बचपानपन का एक रूपमूरत प्रमूता हो सकती है ? गनीम यह रही कि बच्चे और
 बच्चे म मन्तव्य तलाशता का यह शीर या बहे कि यह रोग हमारे कथा-समीक्षा म
 नहीं फना, करना हिन्दी की नई कथा-समीक्षा साक्षा बटा जकाराता हो जानी और
 मित्र समीक्षा वही से ऐगे-ऐसे हैरतप्रमेड मन्तव्यगन बच्चे तलाशने जो कहानी पाठक
 के लिए परीलोचन के रहस्यो से कम दिनचर्य न होते ?

विशी भी विचार या देगी विदगी दर्शन की उप्मा को रचना प्रक्रिया से होकर
 कृति में ले लेने म विशी को क्या ऐतराज हो सकता है क्योंकि उप्मा सी नहा जानी
 बल्वि जिन्दगी म होकर उसके होने या सवून देना पडना है ऐतराज का सवान ती तब
 पदा होता है, जब रचनाकार या समीक्षक अपनी क्षमता की असमर्थता म उसकी
 उप्मा को न जोह कर बधित विचार की हृदय-दी की पहन लेता है और वसी हृदय-दी
 को अपनी समीक्षा-भुक्ति या रचना दृष्टि की नियति भी मान सकता है तब यह
 अस्वाभाविक नहीं रह जाता कि 'गर जानिबदारी और वर्ग सधर्प का अस्व जन
 वादी साहित्य के साथ के 'आदमी स्वतन्त्र होने के लिए अभिगन्त है जैसे तल हुए
 पेट-ट' कुरकुरे वाक्य की रटते रटते उसकी समझ ही जवाब दे जाय और अपने
 समूचे लेखन में हर तीसरे वाक्य में इन आजमाए हुए टोटके को दुहरा दुहरा कर
 आजमाता रहे लेकिन मे ऐसे समीक्षकों और रचनाधर्मी मित्रों की हानत कोलह
 के उस बल से क्या कुछ बेहतर है, जो जहाँ अपना पुराना चक्कर रक्कत करता है, नए
 चक्कर को वही से घुरु और वही सत्तम करन के लिए विवग रहता है फर सिफ
 इतना सा कि वह अपने स्वामी के मानहृत है और ये साहित्यिक एक विचार की बाडे
 ब-दी के इस फर के साथ भी कि उसकी विवगता कुछ उपयोग करन के लिए है और
 इनकी साधकता महज शब्दादी करन के लिए

इसी तरह समीक्षा-भुक्ति की सस्मरणात्मक आदायगी का मनोरजक नमूना पिछले
 दिनों 'हिन्दी कहानियाँ और फलन म देखने म आया है उसके बचपान प्रस्तुती
 कारण को अगर नजर-दाज भी कर दिया जाय, तब भी क्या उपलब्धि के विश्लेषण

का जो सपाट वैभव उसमें है उसी की वजह से नितनी ही की उसमें तिलवस्ती हो जायगी उसमें क्या समीक्षा की तब एवदम प्रमाण पत्र देने जसी है—अमुक कहानी उत्तीर्ण हुई और अमुक अनुत्तीर्ण अमुक कहानी उत्तीर्ण की जा सकती थी, लेकिन उसका क्या नाम भविष्यसनीय है या घटना अतिरिक्त है इसलिए पित्रहाल उसे अनुत्तीर्ण घोषित किया जाता है अमुक कहानी मुझे बहुत अच्छी लगी (क्यों ? यह साफ करने की जरूरत नहीं समझी गई) अमुक कहानी नए लिए दुर्लभ कहानी है, कि अमुक कहानी यादगार कहानी है, (यानी कहानी को ताजमहल होना चाहिए) इन जागृकधर्मा गानों का क्या मतलब लिया जायगा ? समीक्षा में इनका क्या बज्रूद होगा ? बिना आवश्यक तर्कों के अपनी पसंदगी-नापसंदगी का इश्वार हो अगर समीक्षा है तब पैनी समीक्षा-दृष्टि के लिए निस्संगता और रवे-बोध-विश्लेषण की माँग ही किजूल है ? गनीमन यही नहीं है लेखक ने अपना शिवायतनामा और खार खाता भी छोन लिया है जिसका जिनका आता है उसका फलतः उतना ही हिताव बेबाक नहीं किया गया है भविष्य की सुरक्षा का ध्यान रखते हुए उन पर कुछ ज्यादा ही खर्च किया गया है जिन मित्रों का जितना दना था, उदारता पूर्वक उससे कुछ अधिक हो दिया गया है 'आवेग और उज्ज्वलान के साथ जहरत मुता बिक गाली-गलीज और भाव भीनी तकहीन स्तुतिपत्रों का-समीक्षा के नाम पर वही उपलब्धि (?) भी हो सकती है, यह इस पुस्तक में प्रमाणित हो जाता है । कौन नहीं जानता कि इस तरह की अनगणता समीक्षा दायरे में तो आती ही नहीं, वह समझने-समझाने के दायरे में भी नहीं आती

लेखक ने जहाँ तहाँ अपनी निष्पक्ष क्या समझ के प्रदर्शन के लोभ में विरोधियों की दो-एक कहानियों को सच्चरित्रता की सनद भी भेंट करदी है तब उनका क्या सत्य की तब के निष्पक्ष पर फलाए हुए नेतृत्व की भूल में नितान्त नए लेखकों को भी सराह दिया गया है (उनकी कहानियों को नहीं) हालाँकि यह अलग बात है कि इन नितान्त नए कथाकारों की कथाओं में उजागर होती हुई क्या क्षमता को यदि पुस्तक बाँट बाँटे भी तब भी नकार नहीं सकता हिन्दी कहानियाँ और फलान कलेखक का जार क्या-समझ से हटकर सिर्फ इस बात पर भी रहा है कि उसने काफी कहा नियो पढे हैं (अकसर यात्राओं में रहने वाले दवाइयों के प्रतिनिधि और 'वक्त कटे तब जि'दगा कटे वाले मुहावरों को जिन्दगी समझने वाले फालतू वक्त लोग देशी-विदेशी कहानियों से लेकर जामूसी अय्यारी और 'बदामामा तक के नए अङ्क तक चाट जाते हैं) लेकिन इससे समीक्षा विवेक में किस स्तर पर अन्ततरी हाती है, जब तक कि समीक्षा-बुद्धि से ही उनका जापजा न लिखा जाय ? जब तक किसी कहानी को समीक्षात्मक नजरिए से उसकी रचना प्रक्रिया सदिलक्ष्यता और आन्तरिक रचाव या लेखकीय टीटमेंट को मद्देनजर रखकर, उसके सत्य की उपलब्धि के लिए नहीं पढा

जाना तब तब उमड़े पड़ सेने से समीक्षा स्तर पर क्या हासिल होगा ?

हिंदी कहानियाँ और पत्र-पत्रिका के संपादक ने समीक्षा-नियम (?) के इस मुद्दे पर भी राय जोर दिया है कि उसमें उद्योग कहानियाँ में जिससे दूसरे देशी विदेशी लेखकों की कहानियाँ के साथ बर्तन किए हैं और यह अप्रसन्न बर्तन बानी तद्विषयान् उसे एक निश्चय तब पढ़ेंचा गई है कि हिंदी के संपादकों की पर्याप्त कहानियाँ दूसरी कहानियाँ की कच्ची तब मात्र है विलुक्त महत्त्वपूर्ण यह सत्यान नही है कि जिस संपादक ने अपनी कहानी या कथानक कहाँ म भ्रष्ट लिया है (हमारे इन समीक्षा की निगाह में घूरा लिया है) या कि कौन कहानी जिस संपादक की कहानी के गिला की कच्ची प्रामाण्य है 'नदी' व द्वीप और अपन अपन अजनबी (इन उदाहरणों की कहानी कर्षा म सम्मिलित पर लेन व कारण मरे अज्ञान या प्रमाण देन के लिए बतौर कहानी के पेश किया हुआ न मान लिया जाय) या क्या बिन्दु कहाँ से लिया हुआ है कि इनके 'गीत' तर के 'गद' वही भा चुके हैं (इस सत्यान का कुछ मतनय हो सक्ता है लेकिन एक अनन्य सदन म और नितात सतही स्तर पर) महत्त्वपूर्ण सत्यान यह है कि संपादकों की कोई अपनी कथात्मक दृष्टि है अथवा नही, रचनात्मक सम्भावना उनके यहाँ किस स्तर तब है और रचनागत लेखकीय रोज अपनी कलात्मकता म किम प्राप्ति तब विनसित है वह वस्तु शिल्प की कौनसी हर्षे सोड रहा है और कि कौन से कोणों में उसने यहाँ सवेत मिस रहे हैं रचना निर्वाह म वह कितना प्रागे है और रचना के प्रति द्रोहमंड म वह कितना अपनी तरह है क्या उसकी रचनाएँ सामूहिक सृजन म अनन्य से कोई अपना रंग दे पा रही हैं ? और कि वे किस सीमा तब आधुनिक हैं और जीवन वास्तव के सम्प्रपण म अपनी कला की कौन सी नोकों की तरांग रही हैं इन उपलब्धियों म वह कितना प्रागे है और कहाँ-कहाँ चुक्ता है ?

रचना प्रक्रिया के निजी नियमों के चतते जिस तरह कवि किसी एक ही विम्ब का अपनी कविताओं में बार बार आता है और महसूस करता है कि इस एक विम्ब की वह जिस तरांग और अर्थ बोध के साथ प्रस्तुत करना चाहता है, वह नहीं हो पा रहा है और जब वह विम्ब के समूहत्व की निचोड़ लेता है तभी वह लेखकीय नतिवता में दायित्व के सही निर्वाह का दण्ड पाल सकता है कथाकार भी रचना-प्रक्रिया म इसी धम के करीब से गुजरता है वह एक ही कथानक पर कई कई कहानियों में तब तक श्रम करता रहता है जब तक कि उसे यह सतोष न हो जाय कि जिस कथा विश्वास की वह कहानी म आकार देना चाहता था उसे अभिव्यक्ति देने म सफलता मिल गई है इसा सतोष की पान के लिए वह कभी कभी दूर तक तिस चुक्न के बाद भी उसी कथा बिन्दु पर फिर लौट आता है या कि उस कहानी की ओर मुड़ जाता है जिसे कि वह घरसा पहल निख चुका था लेकिन उसके लेखकीय नतिव विश्वास म यह भाग भी

उससे लिखाए जाने की माँग कर रही थी यानी लेखकीय नृप्ति में वह उमने आज तक भी नहीं लिखी गई थी यह सृजन प्रक्रिया के नियमों के अनुसार रचना स्तर पर ठहराव नहा है और न ही किसी ग्रास स्थिति या क्या प्रसंग के प्रति मोहाधना बल्कि काफ़ी कुछ आंतरिक रचनाधर्मी नतिक्ता के न निवाह कर पाने की शिवशता का नतीजा है इसलिए जब समीक्षक किसी कथाकार को यह मुहावरा देने की कागिश करना है कि वह अब खुद को दुहरा रहा है और इसी तर्क के आधार पर उसकी सिफारिश है कि सृजनशीलता के उभेप को इस लेखक के यहाँ ठप्प मान लिया जाना चाहिए, तब समीक्षक मित्र की उक्ति में सत्याग (सब सत्य नहीं और नभी-कभी सत्याग भी नहीं) होने के बावजूद क्या यह सवाल पूरी तरह उत्तरित हो चुकता है कि उसने लेखक की वृत्ति के मध्य में रचनाधर्मी नतिक्ता या दायित्व को एकबारगी महीन नज़र में परीक्षित कर लिया है ? आन्तरिक विवगता (रचनागत नतिक्ता) के बनने कभी-कभी लेखक न सिर्फ अपने बल्कि दूसरे लेखकों के कथानकों का भी कथात्मक विश्वास के लई कुछ हज़र अनुभव देने की गरज से चुन लेता है तब क्या उस पर गौर किए जाने की माँग जायज न होगी ? बतौर फँसने के ही सही पिछले दिना एक ही कथानक पर कई-कई लेखक धम कर रहे देखे गए हैं, और न सिर्फ कथानक बल्कि एक ही कहानी को उन्होंने अपनी अपनी तरह प्रस्तुत किया है इसलिए एक ही कहानी में दूसरी या दूसरे की कहानी पढ़ने की लत पालना और इसी तहकीकात में मग्न रहते हुए लेखक और कहानी की रचनात्मक हृदा की अवहलता करना क्या सहिष्णु समीक्षा-बुद्धि का नतीजा माना जा सकता है ? हिन्दी कहानियाँ और फँसने के लेखक न इस समीक्षा-बुद्धि की पूरी तौर पर अवमानना की है, बल्कि की ही समीक्षा-बुद्धि को अगर कहानी समीक्षा के लिए अपनाया जाय तो दुनियाँ के तमाम कहानीकार (गो उसके लिए दुनियाँ की तमाम कहानियों को पढ़ना पड़ेगा और उम्मीद की जा सकती है कि लेखक ने जो तत्परता प्रभाव खोजने और फनने दन में दिखाई है दुनियाँ को तमाम कहानियाँ पढ़ने में भी उसका सबूत पेश करेगा) एक दूसरे के कज दार मारिन होंगे और यह भी साबित होगा कि वे किसी समाज ग्रास, विचारक या दार्शनिक के यहाँ से उठाईगोरी के अपराध का गिरफ्त में हैं इस लेखक ने अपना जिन्दगी के तमाम सम्मरणा को मद् नज़र रखते हुए आवेगपूर्ण व्यक्तिगत प्रतिनिधिया के दोगन एक बात जरूर साफ करदी है कि वह मसखरा भी है (या इस बात को साफ करने की कुछ ग्रास जरूरत तो नहीं थी इसलिए कि इन पूरी पुस्तक का—अगर आप पढ़ सकें तो—पढ़कर यह बात खुद हा साफ हो जाती है) इस सूचना की निरपेक्षता के बावजूद इससे एक बात जरूर साफ हो गई कि निबन्ध के तौर पर लिखे गए इस सम्मरणा को क्या-समीक्षा के तहत गुमार न किया जाय यह सही है कि लेखक मसखरा भी हो सकता है, लेकिन हर मसखरा खुद को लेखक भी समाने लगे तब तो लेखक की दुनिया

की दिनांक बड़ी मुश्किल हो जायगी और समीक्षा की बड़ी गलत स्थिति से गुजरना पड़ेगा यह मानते हुए भी कि कुछ रचनाकार ऐसे भी हैं, जिनमें समीक्षा बुद्धि है और कुछ समीक्षक भी सृजनात्मक रचाव से सम्पन्न हैं, लेकिन इसी वजह से यह कसे मान लिया जा सकता है कि हर रचनाकार समीक्षक भी होगा ही और इसका विलोम भी गड़बड़ कि कुछ लेखक समीक्षात्मक संतुलन के अभाव में, समीक्षा के नाम पर, जो मसखरापन करते हैं उसमें मसखरेपन की भी गरिमा नहीं होती और इसी के चलते उनकी कसी खस्ता हालत होगी है यह काफी साफ यहाँ ही हो चुका है

समीक्षा में इस विडम्बना से नई कथा ही नहीं गुजर रही है नयी कविता भी गुजर रही है, बल्कि दूसरे दूसरे साहित्य रूपों की भी कमोबेश यही हालत है, यहाँ समीक्षा की तटस्थ बुद्धि नहीं होती, बल्कि व्यक्ति को ध्यान में रखकर उसकी कृति समीक्षित की जाती है मतलब कि व्यक्ति से पहले दोस्ती दुश्मनी की जाती है (कुछ लोग अकारण ही दोस्त कम दुश्मन ज यादा होते हैं) फिर वह रिश्ता मतलब दोस्ती दुश्मनी व्यक्ति की कृति के साथ निभाई जाती है इससे गृष्टवादी को जहाँ बड़ावा मिलता है, वहाँ रचना उमेप में अभ्यासक गतिरोध उत्पन्न हो जाता है और समूचा समीक्षा विवेक व्यक्तिगत सम्बन्धों का पर्याय होकर रह जाता है इस शोरशराबे में नतीजा यह होता है कि पाएदार समीक्षक और स्तरीय समीक्षा इन दोनों को ही छतरे में पड़ जाने की गुआइ होतो है और इसके तहत समीक्षक या तो विरोधी होकर सामने आता है या फिर प्रशस्तिया बाचन की उसकी नियति हो जाती है सम्प्रति बढ़ाचित समीक्षक की यही स्थिति देखकर रचनाकारों के यहाँ यह आवाज और पकड़ती जा रही है कि समीक्षक सिर्फ बिचौलिया की गलत भूमिका ही कृति और पाठक के बीच अदा कर रहा है इसलिए उसकी उपेक्षा की जा सकती है और शायद इसीलिए (इसलिए भी) रचनाकारों की कृति का सही मातृम्य पाठका तक पहुँचाने के लिए इस बिचौलिए के अस्तित्व को नकारते हुए खुद ही समीक्षा और सभालन की जरूरत पड़ गई है गोकि यह स्थिति भी कम सनरनाक नहीं है इसलिए कि रचनाकार अपने वक्त में समीक्षक की निस्मय बुद्धि का प्रमाण नहीं हो पाता वह या तो कृति के ममथन विरोध में एक पक्ष हो जाता है या फिर वे बातें कहता है जो उसकी लगाइ में कला की चरम आश हैं और जिहे कृति की उपलब्धि बनाने की सृजन यात्रा में वह संलग्न है और पिन्हाल वह सब कृति में नहीं है जिनके उसमें होने की वह बाव करता है क्योंकि सृजन के विवसितनम आयात्मा की बात तो कही जा सकती है लेकिन सज नात्मकता का साक्षी होने हुए उहे कृतियां में उपलब्ध कराना काफी मुश्किल है यही वजह है कि नए कथाकारों के पर्याप्त वे दावे झूठे पड़ गए हैं नयी कहानी में जिनके होने की उन्हां वमानन की थी निश्चय ही कथा-समीक्षा की यह हान्य स्थिति है लेकिन प्रमप्रना सिक एनी है कि इस बंधे जल में से कथा-समीक्षा खुद को

न गोपिया की तरह ही समाक्षा बुद्धि का अपने 'मतवाद पुरख के हवाले कर दिया है और अब क्या-समीक्षा के नाम पर उसी की नींद सोना और उसी की नींद जगना इनका सतीकम भाग्य रह गया है। साहित्य में ये समीक्षार्थी समीक्षाएँ काल अध पाठका के लिए कुछ उपयोगी हो तो हो, लेकिन दृष्टि देने के नाम पर ये समीक्षाएँ पाठको की दृष्टि धुंधली ही करेंगी।

इस तरह की 'टटोल वाली' 'दस्तावेजी' समीक्षा न राजेन्द्र यादव की छोटी-छोटी ताजमहल कहानी का मुभायना किया है, यानी इस कहानी में समीक्षक न उस सत्य को उपलब्ध नहीं करना चाहता है, जो यह कहानी देती है बल्कि उस भावग्रह को देखना चाहता है, जिसके लिए वह पहले स समर्पित है, जाहिर है कि अपने 'समर्पित' के प्रति कहानी का 'समर्पित' न पाकर उसके बारे में गलत निष्कर्ष दे देना कितना भासान है ? और अपने समीक्षात्मक गलत बिनतन के लिए लेखक तब तक अपनी ओर से भासान बना रहेगा जब तक कि वह छोटी-छोटी ताजमहल से छोटी छोटी बुजिया और गुमटियों की माँग करता रहेगा। क्या-समझ की इस बातचीत को देखते हुए यह सवाल किया जा सकता है कि सृजन के लिए यदि संवेदन की तटस्थ अभिव्यक्ति जरूरी बात है तो समीक्षा के लिए यह सर्त जरूरी क्या नहीं है ?

मतवादा के तहत पलपी और शास्त्रीय खाना में बँदी क्या की समीक्षा-बुद्धि सत्कारों में पिट पिट कर इतनी चपटी और माथरी हो गई है कि उससे तटस्थता की माँग करना परलोक की कहानियाँ को जिन्दगी में हूबहू देखना है।

समीक्षा स्तर पर नई कहानी को इसलिए भी एक मर्ते तक विडम्बना से गुजरना पड़ा है क्योंकि क्या समीक्षा की कुण्वत इम्त ममभने वाली समीक्षार्थी की सुनिश्चिता प्रकृति ने कहानी से भी कुण्वत म्मा का दर्जा पाने की माँग की है यानी उनके लिए कहानी अपने सत्य की प्रतीति तरह पर हा बराए और वह भी पारदर्शी होकर इसलिए अपनी रचनात्मक सृजक में जो कहानी सन्निष्ट मध्य की अभिव्यक्ति हो रही है उसकी निगाह से उनभावपूर्ण और पेचीदा है, वह सजनात्मकता की सम्भावना वाली कृति का दर्जा नहीं स सबकी इसलिए कि चक्रदार गिर्य और पेच पड़ा कहा निर्मा उनक यहाँ क्या की सन्निष्ट कला में मौजूद उन्हरण जो नहीं है।

उनभाव चक्रदार गिर्य क्यातक में पच और मोड़ा का अपनी क्या समोना के लिए नुस्ते बनाने इनकी बुनियाद पर क्यागारा में सखन का बायन राय देना प्रसारणार है। 'नई कहानी' को चक्रदार गिर्य उनभाव और नाग्योय मोड़ा और टहराना है। "लेकिन सवाय यह है कि क्या यह तात्पर्य नई कहानी पर नहीं है ? क्या यह उन सम ना परम्परा का सबूत नहीं है जो क्या की कविता को ममभने के लिए पुरु समोना दोर में बाड़ी गई थी। कवि को जो दन न चाहो किन्हीं सो पूछिए क्या की कविताई। "गर्वे भवभूत के दन को इस समोना परम्परा स बाट कर निन्हाय को

चीज भी मान लिया जाय, लेकिन मिर्जा पर उनके समकालीनों द्वारा लगाई गई तोहमतों से तो इन तोहमना की प्रकृति शायद कुछ भिन्न नहीं हो ठहराई जा सकती “क्लाम मीर समझें और जबाने मीरजा समझें, मगर इनका वहाँ ये आप समझें या खुदा समझें जिसके तहत कृतित्व की असमता का नहीं, समीक्षा की असमता का सबूत मिलता है, क्या इस बात को फिर फिर दुहराने की दरकार होगी कि मरल और सीधी रचनाओं की माँग जबानेह समीक्षक की माँग नहीं है, वह कक्षा में अभ्यास से अपरिपक्व-बुद्धि विद्यार्थी की माँग है और क्या यह माँग उन समीक्षकों की कही जायगी, जो आज भी खुद को कक्षा की आखिरी कुर्सियों पर बैठाने की ज़रूरत महसूस कर रहे हैं ?

कुछ सरल प्राण और सरल बुद्धि लोग जिन्दगी से भी सीधी सरल होने की माँग करते हैं और समीक्षकों में भी इनकी तादाद खासी है, और तब क्या अजब कि ये क्या समीक्षक भी कहानी से ‘प्लाइड वार’ सरल होने की माँग करें लेकिन फकत माँग करने से ही जिन्दगी सपाट हो जायगी और कि कहानी भी ? क्या उनकी अपनी ओर से इसके लिए ज़रूरी हृद की ज़रूरत नहीं है ? और कि यह माँग सीधी सरल जिन्दगी की अपनी उलझनों और दरतारों पर सोचने के बाद की गई है ? इनके इस सपाट भोलेपन पर क्या कहा जाय ? गो मिर्जा ने इस बात कहा था, जिसमें रचनाकार का दृष्टिकोण साफ था और दब भी ‘भासा कहन की करत हैं फरमाइश गोय मुदि कल वगर न गोयम् मुदिकल ऐमे मिन जिन्दगी (और कहानी भी) से तो आसान होने की माँग करते हैं हैं लेकिन अपनी ओर से मतलब अपने समीक्षा विवेक में आसान होना नहीं चाहते, फिर इसका ही क्या सबूत कि आसानी ही उनके लिए मुश्किल और उलझन भरी न हो जायगी, जब अपने ही दीरे में दरार हो ता साबुत अकम देख पाना असम्भव नहीं तो मुश्किल ज़रूर है और आसानी भी किस कदर मुश्किल होती है, इसे मुश्किल समझने के बाद ही जाना जा सकता है गरज कि उहे दस बात को समझने की ज़रूरत ही महसूस नहीं होती कि उही के आसान न होने से जिन्दगी (कहानी) उलझी हुई है कि उलझी हुई लग रही है

यादव की कहानियों में चक्करदार शिल्प और कथानक में मोड़-मेचों की शिकायत खासकर नामवर के यहाँ ज्यादा सुनी गई है नामवर के साथ खास दिक्कत यह है (लेकिन ज़रूरी नहीं कि खास दिक्कतें होने की वजह से ही आदमी खास भी हो जाय) कि उनका मुख्य बोध इमानी है सरल बिम्बों से आपूर कविताएँ वे खासकर पसंद करते हैं और उनके छानुमा ब्यब लिखते हैं (ब्यब वे उन कहानों सप्रहा के भी लिखते हैं जिनमें सरल बिम्बा वाली कविता को गिन न होती है) कहानियाँ में वे जहाँ दृष्टि का रोमान और कविता में सरल बिम्बों वाला ‘टक्सचर’ देखते हैं, वहाँ वे उहे उमग कर लेते हैं इसी खास वजह के चलते वे निमल वर्मा की कहानियों को छुनकर दाद देते

चलते हैं (दाद देने की वजह निमित्त की कहानियाँ का साम्यवाद की घोर झुकाव होना भी है लेकिन यह वजह खास नहीं है इसलिए कि यह बात कुछ दूसरे कथानकों में भी मिलती है, लेकिन वहाँ नामवर दूसरा ही रवया प्रपनाने हैं) और इसी पमान को लेकर जब वे राजेन्द्र यादव के यहाँ पहुँचते हैं तो भाजिजी से शिकायत करते पाए जान है कि यादव चक्करदार कथानक गढ़ते हैं वही कथा म केव डालते हैं तो वही भटका देते हैं हालाँकि वे यह स्वीकार करते हैं (जबकि कोई भी साहित्यिक स्वीकरण कृति की परीक्षा के बाद ही सही समीक्षा बुद्धि का मतलब रखता है यानी कृति की परीक्षा के बाद आपका स्वीकार या अस्वीकार समीक्षा दायरे की चीज होगी, 'मतवाद' के अंधेरे में कृति के सत्य की टोह समीक्षा की सही दिशा नहीं होगी) कि थोड़ा कहानियों के कथानकों में नाटकीय मोड़ (पिच) पड़ना आम है 'यह राण्डगत अतिरिक्त की पकड़ थोड़ा कहानियाँ के कथानकों में नाटकीय मोड़ पड़ा करता है'

अपनी रोमानी दृष्टि की वजह से ही (जिसका सबूत पसद की गई कहानियों के उद्धरण हैं) नामवर की राजेन्द्र यादव के यहाँ उनके इस भाषा रस से शिकायत है कि वे कहानियों में निबन्धात्मक रवैया प्रपनाने हैं लेकिन नास्तिकता की उहे इस सबब भी है कि यादव कथा मध्य में काव्य पंक्तियाँ उद्धृत करते हैं और काव्यात्मक अनुभूतियाँ या अनुभूति चित्रों का उपयोग करते हैं यानी यादव अपने अनुभूति चित्रों से कविता जसा प्रभाव जरूरत मुताबिक कहानी में पड़ा कर ले जाते हैं यह शिकायत तलब है और शिकायत तलब यह भी है कि यादव की कथा भाषा निबन्धात्मक हो उठती है^१ तब मवाल यह रह जाता है कि यादव की कहानियों में ऐसा क्या है जो नामवर की शिकायत की गुंजाइश न दे ? बहरहाल इसका उत्तर देना क्या जरूरी है और कि उत्तर भी चाहे जसा हो, वह शिकायत के लिए गुंजाइश नहीं छोड़ेगा ? जब तबियत ही शिकायताना पाई हो तो चीजों का सही गलत होना कोई माइने नहीं रखना गोकि

परमस्त नामवर के यहाँ कहानी खास तौर से निमित्त बर्मा की कहानी है (जो उनके लिए न सिर्फ 'नई कहानी' की ही शुल्भात है बल्कि हर शुल्भात का नायक अन्त भी है ?) यानी कहानी का मतलब नामवर के लिए है कि कुछ तरल-तरल सा हो

^१ दूसरी ओर राजेन्द्र यादव हैं, जो सम्भवतः कहानी के लिए नियम की ही भाषा को आदर्श मानते हैं शायद इसलिए अति पूर्ति के लिए उन्होंने 'कुलटा' में उद्धृत के शेरों की सहायता की है (और शायद इसीलिए नामवर ने उद्धृत के शेरों की सहायता कहानी की आलोचना में की है ?) वहाँ तो आडेन-जैसे कवि हैं कि इस मास-सता को ज्यों का त्यों समेट लेने के लिए कविता के ढाँचे की दूर तक श्रुति करने की कोशिश करते हैं और कहीं हमारा कहानीकार है कि कहानियों की कविता के तग दायरे की ओर घसीट डालना चाहता है ' (कहानी नयी कहानी पृष्ठ—४६)

प्रेमिया की खामोशी हो कही कच्ची मिट्टी पर तितली का पटकता हुआ नूरा नहा
दिल हो, कवूतरा की गरदना में फुहारें बँधी हों, खिाड पर अँधरे में फूँ-पत्तियाँ उभर
रही हों, स्वर के नरम नगे हाथ उधे पकड़ रहे हों हवा का घाम में हिलता हुआ
घासला हो, जल पर कोमल स्वप्नित उर्मिया भँवरो का झिन्नमिलाता जान बुननी हा
किस्ता कोनाह नामवर चूँकि काव्य के पाठक रहे हैं (वकौन उही के 'मेरा अपनी
सीमा यह है कि मैं अब तक मुख्यतः काव्य का पाठक रहा हूँ कृतियाँ मने कम पढ़ी
हैं) और कहानियाँ इतिहासकन पढ़ने रहे हैं इसलिए उधे वही कहानियाँ पसंद हैं जा
या तो छायावाद का अवसाद लिए हुए हा (परिन्द) या फिर हल्के दबाव वाले
नरम' बिम्बा से भरपूर चूँकि वे कविता के पाठक हैं, इसलिए छोटी कविता की
समीक्षा विधि को उन्होंने कहानी पर भी फिट कर लिया है

नामवर निमल वर्मा की कहानियाँ के पमाने से ही यादव की कहानियाँ का
जायजा लेते हैं—एक ही पमाने से दो लेखका की कला का तो क्या, एक ही लेखक की
दो कला कृतियाँ का मूल्याङ्कन करना पितामा की उसी गलती को दुहराना है जिसके
खिलाफ स्वयं मसीहा होकर इन लेखका ने जिहाद करने की घोषणा की थी—निमल
वर्मा के यहाँ जो है वह उधे राजेन्द्र यादव के यहाँ चूँकि नहीं मिलता (और मिले भी
तो कैसे, क्याकि जो राजेन्द्र यादव के यहाँ है, वह निमल के यहाँ जो नहीं है) इसलिए
यादव की कला, कला नहीं है उनके लिए (सबके लिए नहीं) कला का वहम पदा
करती है निमल वर्मा की कहानियाँ पर इस आरोप का कि उधे भावुकता है
नामवर ने एक मादूल जवाब मोच निकाला है उनका दावा है कि भावुकता कृति में
नहीं पाठक की निगाह में होती है— कुछ लोग का कहना है (निमल वर्मा की कहा
नियाँ पढ़कर) उनके मन में भावुकता उत्पन्न होती है। —अगर यह सच है कि कृति
में नहीं, बल्कि पाठक की दृष्टि में भावुकता होती है तब फिर यह भी सच है कि
कला-कृतियाँ कला का वहम पदा नहीं करता बल्कि वह आलोचक की निगाह ही है
जो आलोचना के नाम पर सिर्फ आलोचना का वहम पदा कर रही है

व्यक्तिगत स्तर से हटकर एक ही कृतिवार की कृतियाँ को अपना समीक्षा मान
न बनाते हुए समग्र दृष्टि से जब तक कोई समीक्षा दृष्टि विकसित नहीं की जानी तब
तक किसी स्तरीय समीक्षा पद्धति की गुरुघात भुविन्न है अतवत्ता नई समीक्षा पद्धति
का वहम जरूर पदा किया जा सकता है जिसे पदा करने के लिए हर कोई स्वतंत्र है
सुरक्षित फिर वह चाहे न भी हो किसी कहानी के सत्य को उपलब्ध करने के लिए
उससे होकर आना ही एक मान रास्ता है हर कहानी के शास्त्र को उसी में म ईजाद
करना होगा एक ही बने बनाए समीक्षा ढाँचे से हर कथाचार या हर कहानी का
जायजा लेना अवधानिक है यह पितामा की ही समीक्षा दृष्टि का इजहार है पवन
इस अन्तर के साथ कि आपन उत्तर बीसवीं सदी के छठवें या सातवें दशक में किसी

सद्यः प्रकाशित कृति के आधार पर अपनी माग्रह मूलक समीक्षा दृष्टि या पद्धति का इजहार किया है उन्होंने पूव बीसवीं सदी या मध्ययुगीन किसी कृतिकार के समूचे कृति त्व का सामने रखत हुए उसे ईजाद किया था ?

दृष्टि बनाकर कृति की समीक्षा माग्रह है दृष्टि कृति में से होकर ही उमके लिए बननी चाहिए और यदि मूल्य परक समीक्षा दृष्टि से गुजरना है तो समूचे परिवेश के सदम स कृति के सत्य को पाना होगा किसी भी कृति की समीक्षा के जिस तिस प्रचलित ढाँचे में बंठा लेना सगत समीक्षा प्रयत्न नहीं है यदि निमाहो में एक ही कृति कार का श्रुत मानकर (जानकर नहीं) दूसरे कृतिकार की समीक्षा की जायगी तो तमाम समीक्षा प्रयत्न बेबुनियाद हो जायेंगे एक लेखक का यह वाक्य जिसे मंस्पर्श कर लूँगा उसे अनुभव भी कर लूँगा और तब उसे साकार तो कर ही लूँगा । (भद्रा गिल्ली और श्रीलो वाली राजकुमारी) आपकी असगत, अकथात्मक और अप्रामाणिक लगना है लेकिन दूसरे लेखक का हूँहू इसी नस्स का वाक्य आपके यहाँ रेखाङ्कित किया जाता है ' (धीरेन की) श्रीलें हैं जिन्हें देखकर लगता है कि जिस वस्तु पर टिक जायेंगी वह अपन आप सँवर निखर जायगी । (मँधेरे में) और आपकी जीवन सत्य का साक्षात्कार कराना है जाहिर है कि इस तरह की सपाट में की गई टिप्पणियाँ सही समीक्षा बुद्धि का नतीजा नहीं होती वे व्यक्तिक राग द्वेष की उपज है और व्यक्तिक राग द्वेष का निर्वाह साहित्य की अपेक्षा जिन्दगी में ज्यादा प्रभाव पूरा डग हैं किया जा सकता है

उस उदू गायर का भोली प्रेमिका के 'गुस्से पर 'प्यार घाया करता था जो प्यार पर गुस्सा करते रहने की आदी हो चुकी थी उत्तर बीसवीं सदी के इस सातवें दशक में न तो उतनी भोली प्रेमिकाएँ ही रह गई हैं कि मिनाबट और तग हस्ती के बावजूद इस जमाने में छुट्ट दुलभ प्यार जसी नियामत पाकर भी सनान या सनान का गुस्सा करती रहे और न ही है वह धयधारी शायर कि 'प्यार की एवज गुस्सा' पाकर भी अपनी ओर से प्यार में किसी तरह की बौताई न भ्रान दे वह तो भारतीय दूता वास पर चीनी घिराव' का जवाब चीनी दूतावास पर भारतीय घिराव से दना चाहता है मतलब यह कि प्यार राजनीति हो गया है और राजनीति बड़े प्यार से की जाती है लेकिन क्या समीक्षा में उन भोले नागरिक समीक्षकों के लिए क्या कहा जाय जो इन हानता में भी, जराबि जिन्दगी ज्यादा जटिल और सखिल्ल और पेचोदगी गुदा हो गई है और पाठकों की क्या सत्य को उपनय करने की दृष्टि बदल चुकी है—बदल रही है—कहानिया की प्रसंगगत परीक्षा किए बिना अपने भोलेपन के चलते उनके चक्करदार गिल्प और कथानक में पेच' (भोड) पड़े देखकर उगास हो जात हैं और इस उदासी की हालत में ही सपाट से इन्हें निएमो से भी गुजर सते हैं हानावि

स्वस्थ समीक्षक हैसियत से जब कभी (अक्सर नहीं) वे विचार करते हैं तब कुछ नियम वे वास्तव के समीपतर भी पा लेते हैं। अब यह बात जुदा है कि ठंडे दिमाग से लिए गए ये नियम, उनके छूट के पूर्ववर्ती नियमों के विरुद्ध पड़ते हैं। कितनों के मुँह नहीं सुना है कि जल्दी का काम शैतान का काम है क्या जल्दी में लिए गए नियम भी शैतानी (मिस्त्रीफ) से लिए गए नियम नहीं होते ? कुछ समीक्षक मित्रों को नियम देने दिलाने की इस बदर जल्दी रहती है कि सामने चाहे कोई विचारणीय मसला न भी हो नियम उनकी जेब में जकड़ होगा और वह नियम भी क्या जो भलग भलग मसला के मुताबिक भलग भलग तरह से लिया जाय, क्या लिया हुआ एक ही नियम जिन्दगी के तमाम मसला के लिए काफ़ी न होगा ? जिन मित्रों को जिन्दगी ही एक भूपाटे में लिए गए नियम से अधिक कुछ भी नहीं लगती। मतलब उन्होंने दुनियाँ में तम लिया यह एक इतिहास की बात है, तब वे कहानी के लिए भी एक इक्करा और सपाट खयाल रखें तो इससे ज्यादा की उम्मीद क्या उनके साथ आया न होगा ?

फिर ग्रहम सवाल यह नहीं है कि प्रमुख लेखक की कथाओं का गल्प चक्करदार है और कि कथानक नाटकीय मोड़ों से भँटा पड़ा है, सवाल ग्रहम तो यह है कि उनका परीक्षित कर ले जाने का आपका दावा तो कहीं बेजा नहीं है ? जिन्दगी इतनी आसान तो नहीं है कि उसके जीने की कोई खास तक़्त आप बता दें और गैर तमाम जीवन विधियों को अवध घोषित कर दें। आप ही उसके सही मिजाज के विशेषज्ञ हैं और आपको सब विद्यार्थी हो और विज्ञार्थी भी क्या ? क्या विलियम सारोयान के दृष्टान्त कमिडी के प्रोगन के इस कथन की कहानी की पहचान में बग़ौर इशारे के बूझ ले जाना कुछ गलत होगा ? "लोगों के सम्बन्ध की यदि कोई बात हो, तो मैं तुमसे कहूँ कि इस बारे में तुम्हें बहुत सावधानी से काम लेना आवश्यक है। यदि तुम कोई ऐसी बात दलो जिसके बारे में तुम्हें पूरा यकीन हो कि वह गलत है, तो अपने इस यकीन पर पूरा भरोसा मत करो। कोई भी व्यक्ति भले ही किसी भी ग़लत का क्या न हो। उसके बारे में किसी प्रकार का नियम दे डालना न सिर्फ़ अनुचित ही है, अपितु मूर्खता की भी बात है। और कहानी के बारे में एक प्रकार का नियम दे डालना ? निश्चय ही सारोयान का यह कथन उन मित्रों के लिए तबज़ीज़ है। हाँ जो हर वस्तु नियम सेने-दिलाने पर तो बमबख़्त बने रहते हैं लेकिन नियम क्या होना है इसकी समझ का सबूत वे अपनी जिन्दगी में, आज तक पेश कर पाने में फ़ियडडो रहें हैं।

जितनी जीने की पद्धतियाँ हो सकती हैं, उतनी कहानी कहने की पद्धतियाँ क्या नहीं हो सकती ? और अगर जिन्दगी के जो और मोड़ों से आपूर है तब कहानी इनमें अछूनों काकर रह सकती है ? क्या यह तथ्य स्पष्ट की दरबार रखना है कि कहानी करीब जिन्दगी की अभिव्यक्ति है ? 'बरीब' शब्द का स्तेमाल बूझकर इसलिए कि जिन्दगी क्या है। इस वह मोल्ता भी नहीं बता सकता, जिसने कि उसे जीया है, निमल वर्मा

यं यहाँ 'तीगरा गवाह' म रोटीगो मादूव की प्रम पर की गई टिप्पणी से यहाँ पढ़े हुए की समान म गृहिया हो सनती है 'हम केवा अनुमान हो लगा गया है, वरत मादूव' मरुतो बाउ सटरी के प्रतावा सायन केई तहाँ जान सनगा और मुभ मनेर है नि क्या यदू गुन भी महा बारण जात पाएगी ?' निमत की पहाना की ताविया क्या प्रता साय पटित की दूबहू तस्वीर पेग कर सवी है ? और तस्वीर भी तय पग की जाय, जबकि उन पूरा समझ निया जाय और भी तहा जानना कि कदमतीद गवाह होन क बावजूद हम पूरे पटित की समूचे तीर पर नहा जात पान अगर यह मय है नि साधी हाउ पर भी हम 'पटा' क पूर दृष्टा नहा होन, तय यह भी मय है नि क्या साथ क प्रता बागा स 'उपसय करने क बावजूद हम उगरे समूचे सदितष्ट मय की पान का दावा तहा कर सवी गोवि दावा ता कर सवी है लतिन प्रता यह मसत ही साजि होना हो मरना है न भी हा, लतिन यह एा वीरनी सम्भावता भर है नम प्रज यम मुभ एगा ही लगना है ।

हम सिती रचना क साथ का प्राप्त कर पान का पूरा दावा न भी कर सवें लतिन उमय समीप-सत्य की यह पान की ता बागिंग कर हो मक्ते हैं और तय यह हमारी बागिंग एम एमा रचना हागी जिमम कृति का साथ सम्भिन होगा इसलिए नि कृति क्या है, एमकी पुनर्कति स्वय कृतिवार भा नही कर सक्ता लतिन जिन लोग के यहाँ मय इतना सनही होना है कि क उस नगी भागा ही देग से जाने हैं तय उनक निए कहानी भी उननी ही सतही और सपाट होनी चाहिए कर चाहिए तो बहुत कुछ वह सब हो यहाँ पाता है मसन है नि गुन गारा मातून नहा देना करना भाग्यहीन पूँ ही लोहूतुहान हा जाता (भाग्यहीन इसलिए कि एक तो या ही गुन न गजा बनाकर उस बिराद्री बाहर निया दूसरा ये कि बीरों मिटान तय की नाधून तय न निए)

लतिन जिस तरह जिन्दगी पर महज आपका ही इजारा नहीं है, उसी तरह कहानी भी आप ही के लिए नहा होनी आप जब अपनी जिन्दगी के लिए दूसरो की जिन्दगी म शरीक होत हैं वय हो अपनी कहानी पान के निए दूसरो की कहानिया म हिस्सेदार होना पडता है अब जब यह तय है कि जिन्दगी म मोड़-पेच भी हाते हैं तब यह भी तय है कि क कहानी म भी हाते हैं-हो सक्ते हैं, पकत देवन के इस अंतर के साथ कि क्या वे कहानी की आंतरिक रचना समति क प्रनिवाय नताजे हैं ? क्या वे स्नायु मन्त्र के आवश्यक सस्कार हैं ? आया कि उहे महन के लिए उदा भर दिया है और पगा बरकरार रखने म वे चन् तजवाजें ही हैं इसलिए भी राजेद्र यादव के लेखन की नकार कर नही इन दृष्टि बिदुषा स प्रस्नाकुल होकर बूझ से जाने की जरूरत है फिर नतीजा चाहे जो हो हिन्ग नयी क्या समीक्षा म ऐसे समीक्षका की तालाफ ताफी है (गो कि न्न सब की गुमार करत हुए भी क्या-समीक्षका की तालाफ

काफी कम ही है स्वात इसलिये भी कि कविता की बनिस्बत क्या-समीक्षा जोखिम का काम है) जिनके यहां हर लेखक के बारे में नतीजे तय हैं, फिर उनकी कहानियाँ चाह जो और जसी हो उस उद्गू शायर ने प्रेमिका का खत छाने से पहले ही जवाब में खत लिख छोड़ा था, लेकिन कम अग्र-कम उमे यह तो मालूम था कि प्रेमिका को प्रतिक्रिया क्या होगी ? नयी क्या का तथा-कथित समीक्षक दस बारे में उस उद्गू शायर से भी नहीं उपादा तजुर्बेकार निकला उनके लिए कहानी का मत्व कुछ भी हो उनके यहाँ जवाब बना बनाया हाजिर है

सपाट जिन्दगी के लोभी सपाट लोग चाहे जिस लेखक के लेखन को उलभा हुआ करार दे सकत हैं क्याकि इसमें उन्हें प्रतिरिक्त कुछ करना नहीं पड़ता जो लेखन आपकी उलभा हुआ लग रहा है क्या खबर कि वह आपकी उलभी हुई समीक्षा-शुद्धि का ही नतीजा हो ? या फिर उसके तनुषो को मुसकाकर कह पाने की सामर्थ्य के अभाव में आप आत्म रक्षा बश ही उमे उलभा हुआ पोषित कर रहे हैं। (या कि बजहे कुछ और भी हो सकती हैं कितने नहीं जानते कि दूसरा को भ्रम दिलाने के लिए भागता हुआ चोर भीड़ के साथ खुद भी पकड़ो-पकड़ो की घावाजें फेंकता चलता है

जिन समीक्षकों को गजेन्द्र यादव का लेखन उलभा हुआ लगता है उनके लिए जरूरी है कि अपनी राय कायम करने से पहले एक बार फिर अपने वक्तव्य पर विचार कर लें और इसके लिए उन्हें सतह से और सपाटे से नहीं बल्कि गहरे उतर कर राजेन्द्र यादव के लेखन को जोहना होगा किसी लेखक का लेखन उलभा हुआ है, महज इतना भर कह देने से, बिना समीक्षा तब की नहीं बुनियाद दिए हुए, क्या समीक्षा शुद्धि का मौजू उदाहरण वह हो सकेगा ? उलभाव, जिसकी बजह से आपकी तबियत शिकायताना हो रही है क्या उसके विद्वेषण की जरूरत नहीं है ? और तब क्या खबर कि उसे विद्वेषित करते हुए आप पाएँ कि वस्तु की खास बनावट की बजह से यह उलभाव-जो वस्तुतः उलभाव नहीं उलभाव का आभास मात्र है—महसूस होता है और कि वस्तु गिल्प की सदिष्ट अभिव्यक्ति के लिए जिसका होता नितान्त जरूरी था और यह सम्भव था कि इससे अभाव में रचना सतही और माधारण होकर रह जाती यह प्रलय ही बात है कि किसी किसी लेखक का स्वभाव ही हो जाता है—जीवनानुभवों का सदिष्टता और समग्रता में टोहने की बजह से—कि अपनी क्या के तई ऐसी स्वभाव वाली वस्तु 'जुने जिसकी सही प्रकृति' और 'पाठ-प्रक्रिया की जानकारी के अभाव में आपकी क्या के सत्य तब जाने में उलझन महसूस हो लेकिन अपनी इस उलझन में चलते भदिष्ट-कृतियाँ का क्या-समीक्षा के रोजनामने में संतुष्टि कर देना क्या जायज हागा ? खुद की कमजोरी के चलते किसी को सामर्थ्यहीन ठहराना एक बात है लेकिन महम हाने हुए किसी (कृति) की कमजोरी का अहसास कराना विल्कुल अलग बात है जरूरत इस बात की है कि युग बोध के समूचे सम्मों में कहानी के मत्व को

बारीक निगाह से उसकी सदिनष्टता में पाया जाय लेकिन बकौल बंद ही कहानी के इस जुमने के कि निगाह की बारीकी हर किसी के वश की बात नहीं यह काम मुश्किल जरूर है बावजूद इसके गर मित्रा की कहानी में चकरदार गिल्फ और क्यागत मोड़ माफिक नहीं आते तब उन्हें बानो में बगना हार की जीत 'ममता मुजान भगत आदि या इही नमूना के जसी और और शाकाहारो, चरित्र निर्माण और राष्ट्रीय चेतना से 'आतप्रोत सेहतमद कहानियों का पाठक होता चाहिए और इनसे भी वही उपादा और नीति उपदेश देन पिलाने वाली कहानिया की दरकार ही, तब नानी दादो की कहानिया से लेकर जातक क्याआ तब में खासा बड़ा जखोरा उन्हें उपलब्ध है म यह जानता हूँ कि यह परामश बजतदार नहीं है क्योंकि इस दुनिया में ऐसे कितने ही हैं जिन्हें यह दुनिया सख्त नापसन्द है फिर भी इसी में रह रहे हैं खूब खान्सी रहे हैं और बावजूद सारे चना के दुनिया के बारे में अपनी नापसंदगी उसी रफ्तार से जाहिर भी कर रहे हैं, हम यह भी जानते हैं कि दुनिया के बारे में अपनी नापसंदगी के आखिर तक जाहिर करते रहेंगे और चाहे जवाब उनसे न भी पूछा गया हो वे अपनी शिकायताना साचारी में उत्तर जरूर देंगे और अगर उत्तर नहीं देंगे तो यह दिखाएँगे गोमा सवाल का जवाब तो उनके पास है, बस कुछ यूँ ही सा है कि मन उदास हो गया है

राजेन्द्र यादव का लेखन उत्तम हुआ है यह शिकायत कुछ मित्रों के यहाँ से जिस अंदा से आई और उसकी तत्क्षीक कुछ समीक्षक मित्रों द्वारा जिस फुर्ती से की गई उसे देखकर यही अहसास हुआ गोया राजेन्द्र यादव के लेखन की समीक्षा का सवाल क्या साहित्य पर विचार के दौरान का सवाल नहीं है, बल्कि वह तो लोकसभा में माननीय विरोधी सदस्य द्वारा पारित किया गया कोई प्रस्ताव है, जिस पर दूसरे माननीय विरोधी विधायकों ने महज इमीलिए समयन दिया है कि इससे विरोधी दल की ताकत बढ़ेगी अब प्रश्न क्या है इससे उन्हें क्या सरोकार ? इस समय तो उनका फज फक्त इतना है कि इस प्रस्ताव पर समयन देकर वे 'जी जान से विरोधिया का मनोदल ऊँचा करें सीधाय से (उनके लिए दुर्भाग्य से भी) साहित्य राजनीति नहीं है गो कुछ मित्रों ने अपने असफज राजनीतिक जीवन की सफज साहित्यिक जीवन में बदलने की हरबद कोशिश की है और उही ओजारो से उहाँन यहाँ भी काम लिया है जिनकी बजह से वे 'राजनीति में असफज रहे थे और जिनकी बजह से व यहाँ भी असफज हुए क्योंकि अगर साहित्य में राजनीतिक 'फामूले सफज हुए होने तो तमाम राजनीतिक मता उही के चलते आज सफज साहित्यिक भी हुए हान

यादव के लेखन में उनभाव की शिकायत करन बान समीक्षक मित्रा न तद् जनित चक्रदार गिल्फ और नाटकीय मोला—सतह से दगने पर ये चीजें बहुत जल्दी एव महसूस होन लगती हैं—तो तो देय निया सविन रचना में सदिनष्ट जीवन सत्य

की गह पाने की रचना प्रक्रिया-गत अतः सत्य में जूझने हुए हर बार नए हाते रहने की गत और हर बार सतत उठाकर वस्तु निम्न की हृदा की तोड़ने वाले प्रयत्न की धार नहीं देखी जिनका सबूत अनेक कहानियाँ—प्रतीक्षा एवं बमजोर लड़की की कहानी विरादरो चाहर, टूटना किनारे में किनारे तक—उनके यहाँ हो रही है इन जीवन्त प्रयत्न के मुनाबले उस कथा लेखन की गत दना वहाँ तक समीक्षा दायरे की चोज होगी जिसमें लेखक ने जो और जिस तरह गुरु में लिखा था, उसका उसी तरह अभ्यास करते हुए आज तक दुहरा रहा है यात्रा की कहानियों में वही उत्तमभाव नहीं है गो उत्तमभाव भी पदा होता है, लेकिन तब जब समीक्षक अपनी उत्तमता में सन्नस्त हुआ गलत स्तर पर कहानी को पकड़ कर कथा की गलत समीक्षा पहचान देता है।

कहानी में रचना प्रक्रिया के गुरु सिरे की पहचान कहानी की सही पहचान से जुड़ी हुई है इसलिए मित्रों का यह दावा कि वे कहानी की वही से भी गुरु करके उसका सत्य उपनयन कर सकते हैं मासूमियत भरा दावा ही है कथा सत्य को पाने के लिए जरूरी है कि रचना प्रक्रिया के गुरु सिरे की पहचाना जाय और तब पाठ प्रक्रिया के माध्यम से रचना की ओह में सोढो-र-नीढी उतरते हुए उनके रवे रेशे की पहचान से गुजरते बलिए वही भी आपकी स्वना नहीं पड़ेगा और आप तब तक नहीं ठहरोगे जब तक कि कथा स्वयं आपको ठहरने के लिए हिदायत नहीं करती, रचना-प्रक्रिया अपने सास ग्रथ में दरअसल पाठ प्रक्रिया ही है जो लेखक और पाठक के प्रक्रियागत शक्तिक की स्पष्ट करती है लेखक इस रास्ते अपने सज्जतात्मक क्षणा में गुजर चुका होता है और पाठक उसके सत्य की टोह लेता हुआ सखक के बाद उसके रास्ते गुजरता है एक निश्चित समय की लेखनीय यात्रा का ग्रथ देती है दूसरी पढ़ने समय पाठक की पठन विधि की साक्षी है एक इतना ही है कि लेखक लिखकर रचना से गुजरता है और पाठक पढ़कर पाठ की प्रकृति की समझने के लिए कथा से किस तरह गुजरा जाय इस ग्रथ में लेखक की रचना प्रक्रिया ही पाठक की मदद करती है और वही एक मात्र मदद भी है इसलिए एक सदभ में जो कहानी की रचना प्रक्रिया है दूसरे सदभ में वही पाठ की प्रक्रिया भी है

वाचक इसी यह कहने की गु जाइस रखनी ही होगी कि पाठक की कथा पाठ की प्रक्रिया वही नहा हागी जा लेखक की कथा 'सृजन की प्रक्रिया है गो कि पाठ प्रक्रिया के माध्यम से वह उसका समीपतम जानकार हो सकेगा लेकिन सृजन प्रक्रिया के क्षणा में रचना के लिए लेखक जिस दुःख तनाव से गुजरा है, पाठक को उससे—उतना वास्ता नहा मतभव लेखक जिस तरह भेलता है—जीवन में भेलना और उसे फिर दोबारा कहाना लिखन समय रचनात्मक-तनाव और आवेग में भेलना—पाठक को उसा तरह उतना नहीं भेलना होता सखक सृजन प्रक्रिया में बोध देगा स वने जिस जाल पर कथा के नियम कादना में सँभलकर गुजरा है और हर गाँठ

को और अधिक मजबूत करता चला गया है नौकी पर नगी उँगलिया रख कर उसके पनपन को बिना किसी बचब के महसूस करता गया है और उसकी बोध को अनुभव की समूची सिकुड़न और विस्तार में भेजता हुआ कथा के अंत के समीप और अंत तक पहुँचा है पाठक का इस सोसत से उनका वास्ता नहीं मतलब सृजन प्रक्रिया और पाठ प्रक्रिया में भेजने और देखने का अन्तर है, 'सृजन प्रक्रिया' भोक्ता का सत्य है और 'पाठ-प्रक्रिया' द्रष्टा का भोक्ता 'पाठ-प्रक्रिया' के माध्यम से कथा सत्य को उपन्यास करने में कथा से गुजरना होता है और कथा से गुजरना लेखक का अनुभव को गुजरते हुए भेजना भी होता है इसलिए कथा से गुजरना पाठक का नितांत द्रष्टा होकर ही गुजरना नहीं होता, वह भाक्ता के प्राप्त का भी प्रतिनिधि होना है लेकिन उसी अन्तर के साथ जो लेखक और पाठक का अभिधा में अन्तर है बावजूद इसके कि कथा-पाठ के दौरान कथा के अनुभव को वह अपना अनुभव बनाकर याचित होता है रचना प्रक्रिया में और 'पाठ प्रक्रिया' में गुणात्मक भेद वहाँ बना रहता है।

कथा की पाठ प्रक्रिया की बात, दरमस्त पाठक के दायित्व की बात से ही जुड़ी हुई है इसलिए जब लीविस अपने अन्वेषणीय सहज में यह कहते हुए पाए जाते हैं कि पाठक दो तरह के होते हैं एक तरह के ज्यादा दूसरी तरह के कम, तब यह बात प्रकारान्तर से 'पाठ-प्रक्रिया' का ही मतलब पेश करती है और दूसरी तरह के पाठक से मतलब साहित्यिक पाठक से होता है जो रचना की 'पाठ प्रकृति' के लिए स्वयं का पूरे तौर पर उत्तरदायी पाता है इसलिए यह सबाल उठ सकता है कि कथा पाठक का दायित्व रचनाकार के दायित्व जितना ही बड़ा और महत्वपूर्ण नहीं है ? चाहे वह रचनात्मक कम न भी हो लेकिन उसकी जवाबदेही रचनाकार के दायित्व जितनी ही महत्वपूर्ण है, इसलिए लीविस जो कम तानाब बाल पाठक की बात कहते हैं उसकी वजह यह कि जिल्गी में ऐसे लोगो की संख्या ज्यादा नहीं होती जो खतरों से गुजरते हुए अपने दायित्व का सही निर्वाह कर पाएँ और इनमें से भी कथा पाठ में ऐसे कितने होंगे जो पाठ की प्रकृति को पूरी अहमियत देते हुए, उसकी सही पहचान में अपने दायित्व का निर्वाह कर पाएँगे बावजूद इसके अगर साथ गम में मुक्तिता हैं और उनके साथ दूसरे भी कि 'पाठक' तो बहुत हैं लेकिन पढ़िक नहीं तब उनके गम में क्योंकि शरीर हुआ जाय ? और कथा 'परी' होना खुद को गत कुतूहल का अंग बनाना न होगा ?

दरमस्त कहानी की पाठ-प्रकृति को समझने के लिए (और कहानी को भी) पाठ प्रक्रिया से गुजरना केन के गाम व छिनक उतारन जाना है, इस अन्तर के साथ भी कि वहाँ अन्त तक छिनके उतारन जान की यात्रा हा मनस्य भा बननी है, हाथ मृदु नहीं लगता लेकिन यहाँ हम स्तर-स्तर कहानी के माध्यम से कहानी के लिए ही अथ समृद्ध होन चनन हैं और उन ही कहानी माय के कराब भी होने चनन हैं।

हिन्दी में डेढ़ दशक पहले तक जिस दुर्भाग्य से कहानी (और कहानी समीक्षा भी) को गुजरना पड़ा है, उसी दुर्भाग्य से हिन्दी कहानी लेखिका को भी गुजरना पड़ा है बल्कि कहानी लेखिका का दुर्भाग्य हिन्दी कहानी से बड़ी बढ़कर ही रहा है और आज भी वे इस दुर्भाग्य को बर्दाश्त कर ही रही हैं। इसी दुर्भाग्य के चलते हिन्दी में आज तक भी पहल दमने में गुमार की जा सकने योग्य कथा लेखिकाएँ नहीं हुईं जबकि विदशा में स्थिति मिल्तुन बदली हुई है। गोविं सुधार हिन्दी में भी हुआ है, लेकिन वह महज सुधार ही है। समूचा परिवर्तन नहीं।

जिस तरह अब से पहले कहानी मनोरंजन के लिए पढ़ी जाती थी—या आज भी खासी बड़ी संख्या उससे यही अर्थ ग्रहण करती है—और साहित्य के रूप के तौर पर समीक्षित होती थी उसी तरह कथा लेखिका के यहाँ लिखो तो वह पूरे कृतिकार के दायित्व आस्था और हैसियत में जाती है लेकिन जब उसकी समीक्षा की जाती है तब वह समीक्षक की नज़रों में सामान्य तौर पर कृतिकार की कृति न होकर लेखिका की 'कहानी' होती है। भारतीय पुरुष प्रधान समाज में सत्कारवश समीक्षक की निगाह लेखिका की कहानी को जिस कारण से छूनी है समीक्षकों को लगता है कि वह कहानी को नहीं, बल्कि खुद लेखिका को छू रहा है जिसका मतलब होता है कि लेखिका के व्यक्तिगत रहस्य और मनोरंजन क्षणों के बारे में वह दिलचस्पी ले रहा है और इसी के चलते या तो वह लेखिकाओं को प्रशस्तियों को सनदें भेंट करता है या फिर उनके खिलाफ मुकदमा दायर करने से पहले ही पुर्का ल आता है। साहित्य समीक्षा में यह कितनी भयावह स्थिति है इसका अंदाज़ लगा पाना कुछ मुश्किल नहीं है। जाहिर है पुरुष समीक्षकों ने (और स्त्री समीक्षक हिन्दी में या भी कम ही थी और सत्कारवश उनकी भी हालत मोहे न नारि-नारि के रूपा जैसी थी) लेखिकाओं की कृतियाँ को निस्संग होकर कृतियों के तौर पर ही नहीं देख पाया है। लेखकों की कृतियों का समीक्षित करते हुए समीक्षक जहाँ नीति अनीति और सामाजिक ढाँचे को साहित्यिक मानकर सिर्फ कृति के तौर पर उनका जायजा लेता है, और लेखक के व्यक्तिगत जीवन को उनमें खोजने की बाँधा को अभिप्रेत नहीं बनाता यानी लेखक के व्यक्तिगत जीवन से निरपेक्ष रहते हुए उसकी कृति के सत्य को उपन्यास करता है। उसी तरह वह लेखिकाओं की कृतियों का सहज होकर नहीं ले पाता और लेखिका की जमान में तो लेखिकाओं को और भी नहीं मनायास ही वह उन्हें नतिकता और समाज के चालू दायरे में रख कर सोचने लगता है गोया स्त्री के लिए पुरुष की दृष्टि से समाज के होने का एक अलग अर्थ है। फिर यह तो रहा ही कि समाज के व्यतीत और सम्भार अन्य सत्राम ने लेखिकाओं को रचना स्तर पर एक भरम तब ईमानदारी भी नहीं बरतते दो

मिथुने निना कृष्णा मात्रा की लम्बी वहानियाँ मिथो मरजानी व 'यारा के यार पर जो समीक्षका और पाठका की प्रतिक्रियाएँ हुईं उनमें ऊपर बड़े हुए की ही

पुष्टि होती है, गोवि मित्रो मरजाती म जो सामी—कहानी के अन्त पर मर जाय
 यात्रा भाग्य हावी हो जाता है, बिना अपनी सगति की यात्रा का सवून लिए हुए—या,
 यह यारो के यार म रहा है लेकिन मित्रा को प्रतिक्रियाएँ इन कहानियाँ के परिवेग
 जनित यथार्थ को खपर नहीं था भाषा प्रयोग को खपर दाल घोर अन्तोल के
 मादण्डा की सातिर थी, खासकर इसलिए कि जारी होने हुए सोवती जी ने ऐग भाषा
 प्रयोग कर डाल, जिहे प्रयोग करन म पुरण सेगव तब हिवरते हैं तबिन ये प्रनि-
 क्रियाएँ इन कहानियाँ की भाषा पर बिना इस बात की परीक्षा किए हुए की गई कि इस
 तरह के 'भाषा प्रयोग' इन कहानियाँ के यथार्थ को गहरा कर कि परने ॥ जायज है
 और कृति के अन्तर्गत विस्थापन का अंग है या कि उनको गिला म पून उभारन के
 लिए सजायट के तौर पर तो कम अङ्ग-अम स्तेमात्त नहा ही किया गया है ? मित्रा न
 'यारा के' यार के जिन स्थला पर आपत्तियाँ बा हैं वे 'यूमन बाँव रोम म चिनित
 किही स्थला से कुछ अपि हैं ? और क्या भारतवर्ष म भी इन रास सदमों म रोम
 निवासियो जसा घम नहा रह रहा है ? व्यापारी, सरकारी आहदमन्द अफमरा और
 मतामा के बीच 'व्यापार' क्या ब्लू फिल्म जसे नजारे पैग नहीं कर रहा है ? गरर
 के 'चौरगी के' अन्तर्गत इस तथ्य की गवाही म पेश किए जा सकते हैं 'लेकिन ये या
 इनमे मिलती-जुलती आपत्तियाँ अन्त के यहाँ 'मरना और मरना (जो कहानी के नाम
 पर सिफ कच्चा मान है और वह किधर से कहानी है इसे परीलोक का राजकुमार ही
 जान पाएगा लेकिन वह भी कहानी को जानना चाहेगा, इसे क्या ? इसलिए कि यह
 अपन मुहावरे और संस्थितियाँ म 'आजाद सोच' और 'फुट-पाथ पर चोरी छिपे बिजने
 वाले अनाड़ी हाथा की सस्ती और गई गुजरी चीज है) भगवती बापू के यहाँ रेखा
 (जिसका सारा नाम काम बाद सस्त उपयोग लेखन के नुस्खा पर ठहरा हुआ है और
 जिसमें उपयोग म बन्द करके सस्त बेचा गया है सस्त' स उत्पन्न समस्याओं का संकेत
 और लेखनीय निदान नहीं ताकि पाठस्रोतों को 'टानिक मिल सके) महेन्द्र भटना के यहाँ
 एक पति के मोटस (जो अपनी सारी ऊँच, यवान और एकरसता की अन्तर्गत अपि
 व्यक्ति के बावजूद एक नुस्खेनुमा अन्त पर ठहरकर अन्त होती है) और खुशीर सहाय के
 यहाँ तीन मिनट में (जो किसी न किसी भाइने में तो नाटक घर से सम्बन्धित है ही,
 खुद भी रंग सज्जा के साथ नाटक का मतलब देती है, लेकिन इससे ज्यादा नाटक अर्थ
 म है, उनके नाटकों में चाहें मुहावरों हम न भी तलाशें लेकिन उनकी कथाकृतियाँ की
 हर मुहावर रात में एक नाटक जहर होता है) समीक्षा ने नहा उठाई हैं 'गोवि' मेरा
 मतलब यह कहने नहीं है कि इस तरह का आपत्तियाँ का उठाना इन लेखकों के यहाँ
 साहित्यिक दृष्टि से जायज है मेरा मतलब तो सिफ इतना है कि कृति की लेखक या
 लेखिका की सृष्टि मानकर उस पर अलग अलग मानकों से सोचना कृति को कृति के
 तौर पर तो लेना है ही नहीं वह समीक्षा विचार का अंतत उदाहरण भी नहीं है

लेखिकाओं की कथाकृतियों को समूचे कथा प्रयत्न में रखकर विचार की तटस्थ पहल हुई तो है लेकिन वह भी चिन्तनी सी ? पर जो हो सका है वह यह कि लेखिकाओं ने इसके लिए जायज और समय भूमिका खसट पेग की है मननव लेखिकाओं के सृजन में प्रामाणिक जीवनानुभवों की अनुगूँज और अनुभवों के अलग अलग स्तरों का वैविध्य उन्हें अप्रिमि दस्तों के कथाकारों से जोड़ता है सस्थितियों और विचार विन्दुओं को बदले हुए कोण से छूने में उन्होंने न सिर्फ परहेजों को तोड़कर और कथा कहने के चालू मुहावरों का अतिरिक्त बर अपनी प्रबुद्धता की मिसाल कायम की है, बल्कि कथागत उपलब्धियों में इन्होंने अपनी कथात्मक क्षमता का भी ग्रहण कर लिया है कृष्णा सोबती तिन पहाड़ और बादलों के घेरे का भावुर और भीमा हुआ दायरा तोड़कर अपने कथाकारों को 'मित्रों मरजादों और यारों के यार तक' ले आती हैं तो मुझ जैसे समीक्षक को मुक्तद अममजस में समो दिया जाता है और उनके कथा प्रयत्न पर कुछ धरक याक्य कहने की हौस हो जाती है मन्नू भट्टारी अपने सहज शिल्प और नारी-पुरुष के द्वन्द्व सम्बन्धों को कह पाने में जिस कथा क्षमता का गहरा ग्रहण करती हैं उनके 'तीसरा आदमी', 'यही सब है' ऊँचाई आदि में डूना जा सकता है लेकिन उनके यहाँ कथा प्रसंग में जीवनानुभवों के वैविध्य का अभाव, किसी स्तर पर उनके वास्तव को 'स्टील कर रहा है और वहाँ सब वही नकली हीरा का ग्रहण होना लगा है, महसूस होता है कि उनकी कहानियाँ में इतर वही हुई बात को ही कह पाने की विवशता ललित है जिस तरह रचनाकार हर कृति में खुद को अतिरिक्त करने की नियति से जुड़ा हुआ है महसूस होता है यह नियति मन्नू भट्टारी के यहाँ दृढ़ रही है और न सिर्फ मन्नू भट्टारी ही बल्कि कुछ औरों के यहाँ भी उपा प्रियम्बदा ने जिंदगी में गुलाब के फूलों की फूल बोने की जो बाँछा की थी उसे देखकर यह जोड़ बठाना मुश्किल हो गया था कि जिंदगी और गुलाब के फूल में गुलाब के फूलों की सत्ता ज्यादा है या 'छोट छोटे ताज महल में 'ताज महल की बहरहान प्रतीक के तौर पर फूलों को स्तेमाल करने का मोह उनमें अभी भी है उपा प्रियम्बदा ने देशी विदेशी परिवेश में मानवीय रिस्ते-छास कर स्त्री पुरुष के सम्बन्धों को हिन्दी कहानी में प्रस्तुत किया है, व (रिस्ते) चाहे हिन्दी कहानी के लिए मौलिक चीज न भी हो लेकिन उनका अदायगी में शिष्टता भाव की विचार जसी गरिमा, भावुकता की जगह बौद्धिक अनुशासन और सब कहीं एक शिथिल सन्तुलित दृष्टि वहाँ है, उपा ने कृतिकार की ईमानदारी के साथ जीवनानुभव की प्रामाणिकता को कथा में उतारते हुए 'वर्जित सत्य', को भी जिम साहम लेकिन सहजता के साथ प्रस्तुत किया है, उसका सबूत 'चाँदनी में बर्फ पर, मछलियाँ', 'विघलती हुई बर्फ' 'सागर पार का समीप' जसी कहानियाँ में तो है ही उनके सद्य प्रकाशित उपन्यास स्वामी नहीं राधिका में भी है, वे बिना किसी दावपेच के (कभी कभी पन्ध्र बक् की मदद से) कहानी को बड़ी अलौनी सचाई से सामने रख

देनी है, उम्र बनना जगा कुछ नहीं है विवेकपूर्ण व्यवहार के साथ गहरी करुणा से मानवीय निर्पति को ये रेखांकित करती चमकी हैं। उनसे यहाँ एक ध्यान जरूर है कि हर बेहरा गोमा सहने धीरे धीरे पठ जान का स्थिति में स्थानों हो उठना है धीरे धीरे व वायूक अपन सजग धोष के उहे गह देनी हुई सगती हैं उपा प्रियम्बदा व यहाँ सारा बात यह है कि कथा की प्रचलित मामिया व जानी हुई कमजोरियों में अपनी कथाकृतियों की कथाकार की भावुकता को विवेक से जाह्न हूँ उबार ल जानी है उपाहरण के लिए एक बोर्ड दूसरा धीरे भगवतीचरण वर्मा के उपन्यास 'रेखा की बस्तु मोट तौर पर एक जमी है भगवती बाबू सम्पत्तीय भावुकता मानो कुछ धोष यासिब गुस्ता के अम्याम-बाग इस उपन्यास को स्तरहीनता तक पहुँचा देते हैं धीरे वह अपनी समूची सृष्टि में बनाया हुआ हो जाना है सविन उपा प्रियम्बदा यहाँ सामिया की मदती हुई उस नए सदर्भ में प्रनिष्ठित करती हैं जहाँ कहानी का धन एक मानवीय रिश्ते की नयी गुरुत्वात् करता है जो भीगपन इस कहानी में भी है, लेकिन समझकर उसका उपयोग किया गया है समझकर मतलब वह आरोपित नहीं है, उसमें रचना के लिए उत्तरदायित्व का सहो निर्वाह है ममता कालिया (प्रसवाल) व यहाँ स्त्री-पुरुष के रिश्ता को जिस नए कोण धीरे बेनाय अभिव्यक्ति में प्रस्तुत किया जा रहा है उसमें कहानी लेखिकाओं के रचनाकार की दायित्व मत ईमानदारी पर आस्था जमती है स्त्री की लवर आरोपित सामाजिक ढाँचे को साइबर इस नयी लेखिका ने समीक्षण का ध्यान आवर्धित किया है जिसमें सिफ बेकिम्बक यथार्थ को प्रस्तुत कर देन का ही विशेषता नहीं है, बल्कि विपत्ता है उसे खिंदगी की राह होकर पेश करने के विश्वास को अर्जित करने की

नारी की बदली हुई नयी सामाजिकता धीरे पुरुष का सत्य, कथा लेखिकाओं ने इन दोनों को ही प्रस्तुत करने में आधुनिक कोण से काम लिया है स्त्री पुरुष के बदल हुए सम्बन्ध (मनिषा पत्नी—ममता कालिया) धीरे बदले हुए परिवेश में स्त्री का बदली हुई हैसियत (कौनसा पथ—गाता सिंह) धीरे उनसे जन्मे नए प्रश्नों (खिंदगी धीरे गुलाब के फूल—उपा प्रियम्बदा) को लेखिकाओं के यहाँ सिफ रचनाकार का ही हैसियत से जाहने का प्रयत्न है निश्चय ही इधर कथाकार पुरुषों में भी यह कोण बिफ सित हुआ है क्योंकि स्त्री या पुरुष होने की वजह से जब—जब स्त्री या पुरुष के सत्य की प्रतिरिक्त संवेदनशील होकर रचना स्तर पर जोड़ा जायगा तब तब उसमें एकान्ती हान को अधिक गुंजाइश होगी धीरे उतना ही रचना घम के निर्वाह में वह ओछा पड़ेगा

रचनाधर्मी नतिकता के निर्वाह की भरपूर कोशिश के बावजूद मूलतः हिन्दी नयी कहानी लेखिकाओं की एक बद्धमूल धारणा में अभी तक पूरा बदलाव नहीं आया है (जो आधुनिक कथा लेखन के लिए निरान्त अनिवार्य है) कि स्त्री सक्त धीरे

सामाजिक ढाँचे में विद्रोह करने और अपने अस्तित्व की स्वतंत्र स्थिति प्रमाणित करने के बावजूद 'समर्पिता' की 'मुद्रा' से नहीं उबर पाई है। सारे आधुनिक आयोजन और पूरी-पूरी बोद्धि श्रुति के होते हुए भी, वह आज भी ममपण परामण भारतीय नारी की परम्परा को अपने रक्त में ढोए जा रही है। गोया स्त्री को सिर्फ पुरुष ही 'पाता' है, पुरुष को स्त्री नहीं पाती। यानी इन लेखिकाओं में स्त्री सत्य की रचनाकार की दृष्टि से उतना नहीं देखा जा रहा है जितना कि पुरुष की दृष्टि से या फिर बहुत कम नारी की दृष्टि से और उधर पुरुष क्याकार हैं कि पुरुष के नजरिए से ही स्त्री सत्य को घाँक रहे हैं और नई क्या लेखिकाएँ अक्सर अपने अस्तित्व के लिए दूर तक आक्रान्ति करने के बाद 'स्त्री सत्य' को परोक्षित करने में पुरुष सत्कार से ही आक्रान्त हैं।

इस आक्रान्त स्थिति और बढ़त घारणा से मुक्ति की धान तब न उठ जबकि नई कहानी में पति और प्रेमी के होने हुए दूसरे प्रेमी को क्षीर देने के बाद (ऊँचाई 'यही सब है'—मन्नू भट्टारी) स्त्री के अपनी नतिकता में किसी तरह का 'मिन' न महसूस करने की बात पर ही पूरी बहस हो चुकी हो। लगता है कहानी लेखिकाओं के यहाँ अभी भी यह फारमूला बगोवरण का मतलब रखना है कि स्त्री समर्पित होकर ही पुरुष पर अधिकार पा सकती है और उधर पुरुष है कि स्त्री पर हावी होकर और अधिक निद्रा द होता जा रहा है। जबकि 'नई कहानी' के लिए मसला एन-डूअरे पर अधिकार पाने या हावी होने का उतना नहीं है जितना कि इस सवाल के उत्तर का कि बदले हुए परिवेश और नयी सामाजिकता में स्त्री-पुरुष अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व अलग अलग इकाइयों में किस तरह प्रमाणित कर रहे हैं। माते गिता से उठकर उनकी अपनी और सिर्फ अपनी जीन की अनिवाय शत क्या है? प्रजा-सत्ता (रेणु) और विवर (समरंश वसु) में इस कोण से प्रयत्न देखे जा सकते हैं।

स्त्री-पुरुष के सम्बन्ध का लेकर पहली किस्त नई कहानी में जो दी गई है वह सक्स की है। पुरानी-कहानी में स्त्री-पुरुष के सम्बन्धों पर बहस के दौरान सक्स को बचा दिया जाता था और आरोपित-नतिकता और पवित्रता की छाया में प्रेम की चर्चा बड़े ही आध्यात्मिक लहजे में की जाती थी जो यथाय से उलझकर 'प्लेटानिक' और एकदम हवाई होकर रह जाती थी। भावुकता और भीगी करणा के साथ हल्के उल्लुक्ता घाने रहस्य के रंग में डुबो कर उसे इन्द्रधनुषी बना दिया जाता था। किस्सागोई के फ्रेम पर चढ़ाकर नाटकीयता की विनारी के घेरे में आसुआ और आहा की उसने फुनकारी (आकाशदीप - जयशंकर प्रसाद) की जाती रहती थी और इस इन्द्रजाल में समाकर कहानी एक खूबसूरत कालीन होकर रह जानी थी। कालीन भी ऐसी जो चाँद-मितारी और आकाश गंगा का ससार खुद में समेटती है और आदमियों की दुनियाँ से उतनी ही दूर हो जाती है। प्रेमिकाएँ तो वहाँ अक्सर मानाया जसा व्यवहार करती रहती हैं या फिर दासी के दर्जे से ऊपर नहीं उठ पाती।

जहर कि कहानी में यह अमेरिकन रंग 'नई कहानी' को कहो गलत रास्ता पर न छोड़ जाय

नई कहानी लेखिकाओं ने कथा-लेखन में रचनाकार के नैतिक दायित्व से जुड़कर केवल उही-उन्ही जीवनानुभवों की अभिव्यक्ति में निजात पाली है जो बीत वक्त में कहानी लेखिकाओं के हिस्से पड़े थे मतलब कहानी में सिर्फ आदर्शों और नैतिकता पर दया-ममता से बहम करना और प्रचलित सामाजिक ढाँचे से आतंकित रहते हुए झेने हुए जीवनानुभवों की अभिव्यक्ति से बचकराना एक तो स्त्री की कोणबद्ध सामाजिकता के चलते या ही नए-नए जीवनानुभवों के लिए गुजाइश कम, फिर कुल बंधु का लज्जा डोते हुए उनके प्रति भी ईमानदारी में कौनाई 'नतीज' के तौर पर जो कथा-लेखन सामने आया, वह आमुष्मा और आह्ला से लदा-फेंग रहा, उसमें जीवन की प्रामाणिक अनुभूतियों के बजाय जीवन में पलायन था या फिर काल्पनिक और रोमांटिक रोगित अनुभूतियों के साथ (तिन पहाड़ और बादलों के घेरे) में खुद को सीमित कर लेना था निश्चय ही इस समूची मानसिकता से हिंदी कहानी लेखिकाएँ उबरने की कोशिश में हैं जिसका सबूत 'तासरा आदमी' चरमे 'मन्नू भंडारी' मछलियाँ सागर पार का संगीत (उषा प्रियम्बदा) बस्ती अनिलय (ममता कालिया) आदि कहानियों में उपलब्ध है, लेकिन उषा प्रियम्बदा की कहानियाँ को छोड़कर अनुभव-बहिष्कृत नई कथा-लेखिकाओं की कहानियाँ में कम है गो पिछले छेबे की कथा-लेखिकाओं से बेहद अधिक और चाहे सीमित दायरे में ही सही लेकिन आधुनिक जीवन को धारकी से देख पान की कथा गत कलात्मक दृष्टि इन लेखिकाओं के यहाँ रेखाङ्कित की जा सकती है इसीलिए 'नई कहानी' पर विचार के दौरान नई कथा लेखिकाओं की कथात्मक-क्षमता और समीक्षा गत विडम्बना पर अलग से चर्चा कर लेना जरूरी था और यह जरूरत इसलिए भी बनी हुई थी, कि जिस महोदय कथात्मक क्षमता से रोजमर्रा की परिचित जिंदगी में अपरिचित छूटते हुए पारिवारिक दूद को जीवन की सादय के साथ कथा में इन्हन प्रस्तुत किया उसका इनकी उपलब्धियों के अभाव में पूरा प्रतिनिधित्व नहीं हो पा रहा था जिसमें कि रचना-प्रक्रिया-गत तटस्थता के साथ आत्मीयता बनाए रखते हुए सहजता का निर्वाह मुख्य बात है

समीक्षात्मक विडम्बना और कथा-गत उपलब्धियों के बावजूद कथा-लेखिकाओं में स्त्री-पुरुषों के सम्बन्धों को नए आयामों में अभिव्यक्ति देना अभी बाकी है (इस अभिव्यक्ति की दरवार दूसरे कथाकारों के यहाँ भी है) मतलब कि कथा में शरीर गत नैतिकता और अपना अस्तित्व प्रमाणित करने के लिए कथा के मुहावरे में, विद्रोह करने के बाद भी वे किसी स्तर पर सत्कारों से पूरी तरह मुक्त नहीं हैं और इसीलिए इस विषय के निर्वाह में पूर्ण सहज भी नहीं है नतीजा यह होता है कि उनका कथा के मुहावरे में विद्रोह कथा का पहचान बनते-बनते किसी स्तर पर उद्धत हो

उत्था है घोर तब वही आरोपित युग का सामास मित्रो सगता है जो जीवितानु-
भवा की सत्य-प्रतिष्ठाति म स्तर गता करता हुआ सगता है घोर नीतिगत घनामा
लिख भी हो। सगता है लेकिन यह गुामी मित्र कहानी लेखिकाया म ही नहीं है
एक बड़ी साधारण कहानी सगता की भी इगरी गिरार है गो इस लेखिकायो की घनेता
बायीं मुक्त बग

युग के नान गथो को बन्तो हूँ सगता के परिदृश्या ॥ जिन घात घोर से
गद्य के बम उस घोर घोर बधा म् नई कहानी म सम्प्रपात गिया है, यह चाहते हैंरन
घनेज उतना न हो, जितना यह कि हिन्नी गद्य की टट म्जावत ब तराग वही उतल्ल
हुई है घोर यह भी कि रचनागीनता म उसे बविता को समानास्तर हूँ म वही पाया
जा सगता है उननी ही मजबूती घोर उननी ही तपासत के साथ करीब-करीब सनन
ही सपेस लिए हुए महान से महीन प्रतिक्रिया को उतनी ही ममी पपड से पहीरने
हुए सपनी सामर्थ्य हूँ म अब तब के सपन पूरे घोजारा से सग हार यद्यपि यह
जानत हूँ कि बविता घोर उसके बंद घोर प्रवृत्ति भिन्न-भिन्न है यद्यपि विरोधो न
होकर बल्कि एव-दूगरे के सहयोगी होकर

भाज का नया उप-यास (गो तपा घात उप-यास के साथ टेट उस माइने म
युग-प्रनुभव की उस प्रवृत्ति की प्रतीति को रेखाङ्कित नहीं करता जिसे गन एव-डेक
दाय ॥ यह बविता घोर कहानी के सदभ म करता रहा है) युग-सत्य घोर उसकी
विडम्बनाभा को टिक करते हुए जिस स्तर पर बधा हुआ सा सगता है, घोर भादमी
के चहरे की लपरी उजागर होते होने जहाँ घुँघसान लगती है 'नई कहानी वही सिरे
स इन लपरी की अधिप गहराने हुए बदल हुए भादमी की नियति को रेखाङ्कित करती
है घोर बिना मोछी पडे परिदृश्या म उसे आकार देती हुई, सम्भावनाभा तब की उँग-
लियो की सल्ल पपड स किगलने नहीं देती यद्यपि मेरा इरादा भाज के उप-यास
की उपलक्षियो का नजर-दाज करना जसा बिल्कुल नहीं है घोर सास तीर पर उसकी
सम्भावनाभो को तो घोर भी नहीं (घोर इस लिहाज से कुछ छोट उप-यास-प्रनदेखे
अनजान पुल मत्र विद्ध, बसासियो वाली इमारत खोगी नहीं राधिका के दिन, दो
एकान (यद्यपि ह्मानियत का रग लेवर) समुद्र म खोया हुआ भादमी, एक बटा हुआ
कागज एक बटी हुई जिन्दगी, लोग नीली रोजनी की बाँहे उसका बचपन-सामने
भाए भी है लेकिन यह एक बड़ा सत्य है कि हिन्दी का भाज का उप-यास, उस स्तर
तक आधुनिक घोर बदलते हुए सत्य के समानास्तर नहीं है, जिस स्तर तब कि कहानी ।
बल्कि ज यादा सही यह कहना भी होगा कि आधुनिक जीवन की यात्रा के विसंगतियों

के जिस मोड़ पर आकर उप-यास लड़खड़ा जाता है कहानी ने वही से अपनी यात्रा नई होकर प्रमाणित करना शुरू की है शायद इसकी एक वजह यह भी हो सकती है कि आधुनिकता हमारे जीवन में अभी प्रवाह नहीं बन पाई है वह महज छीटा में है इसलिए हिन्दी उप-यास खुद में एक प्रवाह की आद्यन्त सृष्टि होने की वजह से आधुनिकता का वायस नहीं हो पाया है और कहानी चूँकि किसी नाक से नोक तक की हो यात्रा हाती है, इसीलिए वह इन छीटा में बिखरी आधुनिकता को समेट पाने में प्रमाण हो रही है।

हिन्दी उप-यासकार चूँकि अपने संस्कारों में सन् ४७ से पहले और थोड़े बाद का ही सजक है इसलिए उप-यास में 'आधुनिकता' समग्र सन्निष्ट रूप में उसका बोध नहीं हो पाई है या कि 'कम-अज-कम' उप-यास में उसने अभी 'सका' सवृत पेश नहीं किया है और तब अगर 'अधूरे साक्षात्कार' की सजा उसे दी जाती है तो इसमें गलत कुछ भी नहीं है लेकिन गलत है इस ध्येय में कि एक घसें तक की जिन्दगी के 'पूरे साक्षात्कार' वहाँ हैं लेकिन आज की न्वाबों में उचड़ती, ठहरी और विघटित होनी हुई जिन्दगी को वह ठीक 'नई कहानी' की तरह कह पाए ऐसा मुहावरा अभी तक उसमें नहीं मिला है क्या यह मुहावरा उसे मिलेगा भी नहीं? मैं इस तथ्य से इसलिए इन्कार नहीं करता क्योंकि यह सम्भावनाएँ उप-यास में साफ तौर पर उभर रही हैं किन्सागोई वहाँ छुक रही है, लेकिन सही जिन्दगी की अभिव्यक्ति के लिए वहाँ अभी सघप की जरूरत है इससे भी इन्कार नहीं किया जा सकता, इसलिए जीवन की साक्षी के साथ मतलब जिन्दगी से गुजरने की गवाही देने हुए 'आधुनिक' भस्तिष्क की पूरी बनावट में समरेश बसु के विवर जेबे उप-यास हिन्दी उप-यास के एक अंग की जरूरत की ओर साफ-साफ संकेत हो सक्त हैं जिसमें 'आधुनिक' भस्तिष्क की समूची सग-तिया और विसगतिया के बीच सही वास्तव का प्रामाणिक नतीजा होने हुए व्यक्ति को उसके नाते रिश्तों के बीच सफ व्यक्ति के तौर पर ही प्रस्तुत किया गया है और जहाँ स्त्री मैं बहिन, पत्नी, प्रेमिका और वेदया के रिश्ता में उबर कर फक्त स्त्री है और जहाँ समाज और परिवार के आरोपित ढाँचे के अतिक्रमण की कोशिश के साथ पुरुष का पुरुष और स्त्री को स्त्री समझने की कोशिश है - यह कोशिश अपनी बोनी बानों वाली मुद्रा के साथ फणीश्वर के यहाँ 'प्रजासत्ता' कहानी में भी है लेकिन इस अन्तर के साथ कि रिश्ता की रुढ़ि का धुँधलका पारदर्शी होने पर भी किसी स्तर पर अभी वहाँ ठहरा हुआ है गो वह जिन्दगी में भी अभी है इसमें इन्कार नहीं किया जा सकता इसलिए फिन्हाय इस कहानी को 'अधूरे साक्षात्कार' वाले दर्जे में घुँसेलने से बचा ही जा सकता है

आम तौर पर 'नई कहानी' के साथ उप-यास की बात करना जरूरी नहीं समझा जाता इसकी वजह भी रही है देगी स्वतंत्रता के बाद समीक्षा-बुद्धि ने छोटी

कहानी की साधनता युगीन बोध के समानांतर स्वीकार कर एक बड़ी गलती (जो अब तय होती रही थी) को सही कर लिया था लेकिन यही उससे एक और बड़ी गलती हो गई थी (जो आज तक भी हो रही है) कि उपन्यास की रचनागीलता में उसकी लिचस्पी घटने लगी थी और उपन्यास समीक्षा पसंद-द्विपासठ तक आते आते परीक्षाओं रोध ग्रन्थ और ऐकेडेमिक भाषणों तक ही सीमित रह गई थी व्यवहारतः सद्यः प्रकाशित उपन्यासों की ही पत्रिकाओं में चलताऊ तौर पर समीक्षाएँ की जाती रही और दो-एक पत्रिकाओं में उपन्यास समीक्षा-ग्रन्थ निवासने के छुट-पुट प्रयत्न भी किए, लेकिन कहानी के चलते उपन्यास को तबज्जो देना कम ही रहा हर पत्रिका कहानी के बारे में किसी न किसी स्तर पर बहुसंयुक्तता के बड़े होते हुए सृजन आलोचन में उसके लिए सोचमस बनती रही और ज्यादातर पत्रिकाएँ सिर्फ कहानी सृजन और आलोचन को ही एकांत पनपाती और विवसित करती रही क्या-नाष्ठियों और समारोहों के आयोजन कविता गाष्ठियाँ और सम्मेलनों को भी पीछे छोड़ गए इसकी वजह इनका थी लेकिन इसका जो नतीजा हुआ वह यह कि बड़े पत्रकों पर हिंदी की सजक प्रतिभा (सजनात्मक और आलोचनात्मक) कहानी की ओर मुड़ गई और उपन्यास की सृजन स्तर पर यह दशा हुई कि कुछ नए लोगो को छोड़कर ज्यादातर स्वतंत्रता पहले की ही प्रतिष्ठित प्रतिभाएँ मोट-पतले उपन्यास लिखती रही (उन्होंने कहानी लेखन को किसलिए तलाक दिया इसका कारण इनका युग बोध से पिछड़ा जाना और मुहावरे में फामूला हो जाना ही था, जो फामूला व उपन्यास लेखन में भी हो गए थे जनार्दन आदि कुछ लेखक ऐसे जरूर थे, जो युग के 'समान पर्व' होने की हॉस में जब तक कहानी लेखन से भी गुजर सके थे) इन लेखकों के उपन्यास पुस्तकालयों में खरीदे जाते रहे और गोध-ग्रन्थों के लिए या विचार के लिए कुछ न पढ़ने में दिलचस्पी रावन काला द्वारा पढ़े जाने रहे इस तरह उपन्यास की रचनागीलता के प्रति उपेक्षा नए मजबूत गद्य रूप को युग और से पिछड़ा जाने में मदद की इसी पहले प्रगतिवादियों ने समीक्षा स्तर पर, जिस दनियानूस तरीके से सतही होकर क्रांति लाने के लिए भीषार के तौर पर उपन्यास का स्तेमास किया था, उसने भी उपन्यास की समीक्षा में गम्भीर चिंतन से बाटने में मदद की और वह किसी न किसी माइन में आज भी अपनी भूमिका निभा ही रहा है

इधर कहानी चर्चा में सतुलन आ रहा है और आधुनिक मन मस्तिष्क की उसके प्रामाणिक परिवेग के साथ कुछ नए बोध के लेखक उपन्यास में प्रतीति बनाने की कोशिश में हैं इसलिए जरूरी हो गया है कि समीक्षा में उपन्यास के माध्यम से युग सत्य को विदलेपित और उपसर्ग किए जाने की कोशिश हो लेकिन एकांत उपन्यास की समीक्षा को रेखांकित करने का सक्त्प हो सक्ता है छोटी कहानी के अस्तित्व की रानी विडम्बित स्थिति में पें दे हालांकि इसकी सम्भावना कहानी में पूरे तौर पर

अपने परो खड़ी होकर लगभग ममाप्त हो कर दी है फिर भी समीक्षा विवेक में साहित्य के दूसरे-दूसरे रूपों के लिए अनुपात का माग किसी भी युग की अपनी मांग होनी है

कहानी के साथ उपन्यास की चर्चा इसलिए तो जरूरी है ही कि उपन्यास की सृजन क्षीलता के प्रति समीक्षा विश्वास उसे युग बोध के समानान्तर उद्धाटित करने में मदद कर सक और उसे युग बोध की प्रामाणिक प्रतीति देने के लिए उबसा सके, वह जरूरी इसलिए भी है ताकि कहानी की चर्चा को सीमित दायरे से निकाल कर कथा के बृहद परिप्रेक्ष्य में जोड़ा जा सके, मतलब कहानी को सिर्फ कहानी के सदर्भ में ही न विचार कर उसको समूचे कथा-साहित्य के सदर्भ में रखकर पहचान को जाय यह उपन्यास विचार इसलिए भी आवश्यक है क्योंकि किसी एक कहानी को लेकर उसके नुक्तों पर बात बहस करना और इस बहस में अपनी बातों के नुक्ते साफ करते रहना किसी बंदर मुफीद तो हो सकता है लेकिन इसी वजह से उपन्यास की रचना-क्षीलता पर चुप्पी साध लेना किसी स्तर पर अपनी समीक्षा क्षमता को छिपाना भी तो होता है ? इस दायरे में समीक्षा क्षमता इसलिए कि उपन्यास के आंतरिक रचाव की प्रकट करन के लिए जिस स्तरीय समीक्षात्मक बुद्धि अनुशासन और बिलंबे हुए सदर्भों को समग्रता में वृक्ष पान के लिए जिस गाढ़ी कथा पहचान की जरूरत होती है वह अलग अलग कहानियों के नुक्तों पर समीक्षात्मक नुक्ते बठान जाने में नहीं होती पिछले दिनों एक एक कहानी को लेकर समीक्षा करने की जो चान चली गई थी (इशारा चाल चलना मुहावरे की तरफ बतई नहीं है) वह अपने दायरे में काम-याव होने के बावजूद इन कोणों से देखने पर बहुत आवश्यक नहीं लगेगी एक एक कहानी पर लिखी गई समीक्षा दृष्टि मिश्र होन के बावजूद कक्षाया में कराए जाने वाली समीक्षा विधि से प्रकृत्या कुछ खास भिन्न नहीं है इसलिए आवश्यकता इस बात की है कि 'नई कहानी' की पहचान उपन्यास से युक्त समूचे कथा प्रयत्ना व कथा उपलब्धिया के सदर्भ में होनी चाहिए, ताकि गद्य को पूरी प्रकृति के साथ अपनी रचना क्षीलता में समोच्च चलन वाला कथा रूप उपन्यास युग अनुभव को भावुनिक हानर वह पान में ओछा न पड़ जाय और नई कहानी पर छोटे दायरे से हटकर विस्तार में विचार हो सके' क्योंकि सिर्फ कहानी की चर्चा किसी स्तर पर समूचे युग सदर्भ के बीच वही पटी हुई भी है, इसलिए कि उसका सब उपन्यास के सब से युक्त होकर ही सम्पूर्ण हो सकता है और तभी उसे युग गद्य का प्रामाणिक कथात्मक व्याकरण भी कहा जा सकता है उस गद्य का जिसके करोब आने के लिए कहानी से प्रकृत्या भिन्न कविता भी अपने ढाँचे को दूर तन ऋजु किए हुए है और वह गद्य का परिवेग को प्रामाणिकता में व्यक्ति व अवयव का सवन्तम एगान्त युगान्त अभिव्यक्ति का विविध माध्यम सिद्ध हो रहा है

प्रगतिवादी समीक्षकों के यहाँ एक बार लगा था कि पूरी सम्भावनाओं में उनके एकांगी और प्रतिवादी कोण के बावजूद कथा रूपा को कथाचित् साहित्य में उनकी सही हैसियत मिल सके और उप-यासों में उनकी मूल्य परक निगाह न यह कोसिश की भी थी इसलिए कि उनके यहाँ समाज को बदलने का एक मात्र औजार साहित्य में उप-यास ही बारगर तोर पर साबित हो सकता था, इन्होंने अपने आशय की सिद्धि के लिए कथा-रूपों को इसलिए भी चुना क्योंकि कविता में यह बग अपनी प्रवारात्मकता और नारों की असम्यता से परिचित हो चुका था इसलिए कि ये नारे और यह प्रचार जिस भद्दे और असहित्यिक ढंग से किए गए थे उससे पाठक में कलात्मक विश्वास और कलात्मक रचि इस सदभ में और इनके मतलब के लिए पदा नहीं हो सकती थी, कथा रूपों में जबकि थोड़ी सतकता बरतने पर इसकी पूरी गुंजाइश हो सकती थी, इसलिए डा० रामविलास शर्मा प्रेमचन्द से लेकर राजेन्द्र यादव तक के उलझे हुए लोगों को बराबर दाद देते रहे (लेकिन राजेन्द्र यादव न जब अपने रोमान पर काबू पाकर बग सघष की तकनीकी चौपट को छोड़कर अधिक बयस्क विचार होकर जिन्दगी के रुब-रू खड़े होकर-उसके सही वास्तव को रेखाङ्कित किया और इस तरह उप-यासों और कहानियों में अपने रचना धर्म की दायित्वपूर्ण गवाही पेश करनी चाही तो मित्रों के दाद वाले स्वर को उनका याद चर गया) और अमृतलाल नागर में प्रगतिवाद के पमाने पर फलाकर उनकी औप-यासिक उपलब्धियों को (औप-यासिक रचनागीलता से जोड़कर नहीं) स्वीकारते रहे (यों अमृतलाल नागर की औप-यासिक उपलब्धियों को रचनाबध और भीतरी सृजन रचाव के तहत रेखाङ्कित किए जान की जरूरत थी और विस्तृत जीवन और संस्कृतियों में उनकी सृजन क्षमता को यूँका जाना चाहिए था जिनके कारण उनके उप-यास अपनी विनिष्ठा की प्रतीति देते हैं) और कणीश्वरनाथ रेणु के यहाँ अपनी मूल्य भूतता के कारण औप-यासिक उपलब्धियों को नकारन में बराबर अणुघा बनाते रहे उप-यासों के आन्तरिक रचाव और कला-संगठन की, उनकी सश्लिष्टता में यहाँ भी नहीं परखा गया और जब इनके समीक्षा चिन्तन के विशिष्ट केन्द्र कथा रूप उप-यास की ही यह हालत थी तो कहानी की समीक्षा स्थिति इससे भी उथला बदतर होती यह स्वाभाविक हो था

कथाचित इनके यहाँ यह पुरानी धारणा ही जड़ पकड़े हुए थी कि या तो कविता लिखकर ही (कविता की समीक्षा करके ही) साहित्य में स्तरार पाया जा सकता है या फिर अधिव सं अधिव उप-यास लिखकर (और पढ़कर भी) चूँकि रूस में उप-यास लिखकर ही साहित्यकार मूक्य हा गए है (इन्होंने यह भुला लिया कि चख्र आदि अपनी कहानियों के चलते ही विनिष्ठ हुए हैं) इसलिए हिन्दी में भी वे ही लखक मूक्य माने जान चाहिए जिन्होंने उप-यास लिखे हैं या उन्हें मूक्य मानने के लिए ज़रूरी है कि उनके उप-यासों का पहले मूक्य माना जाय यानी इन लखकों को महान मानने के लिए

बहरी है कि उनकी महानता के कारण उनके उपयोग लेखन में तलाग जायें इसलिए इन मित्रों की समीक्षा में यह निष्कर्ष रहे कि हिन्दी में उपयोगसकार महान हैं खासकर वे उपयोगसकार जो वर्ग सघन के चिन्ते हैं और समीक्षक तो महान होता ही है, इसलिए कि ये लेखन स्वयं समीक्षक हैं नतीजा यह हुआ कि अपने निश्चित मापदण्ड के चलते ये समीक्षक उपयोग की साहित्य में उसकी सही जगह नहीं देना सके चूँकि इनकी निगाह में छोटी कहानी उपयोग के सामने नितात छोटी थी, इसलिए उसकी रचना शालता को परखने और उसे प्रतिष्ठा दिलाने का सवाल ही नहीं उठता था यही वजह है कि डा० रामविलास शर्मा जैसे समीक्षक ने प्रेमचन्द की महान घोषित करने के लिए उनके उपयोगों की तो महानता से तफ्तीश की, लेकिन उनकी कहानियाँ की विगिष्टता को वे बराबर नकारते रहे और तब सगा कि कवि ही 'स्वभाव से उच्छ्वान नहीं होता है कवि कम मजबूत 'राई' को 'राई' तो बना रहने देना है, इन समीक्षकों ने तो 'राई' (कहानी) के अस्तित्व में ही अनभिज्ञता प्रकट की

समूचे देश में बढ़ती हुई जनसंख्या के साथ बढ़ती हुई बेकारी, हर सही पद पर कुछ सम्पन्न लोग और परिवारों के गहन अधिकार गरज कि आय के तमाम समृद्ध साधना से वंचित सही लोग की भीड़ काम के न मिलने पर झकेली होती जा रही है काम होता है तो आदमी को काम का ही साथ होता है काम के चलने झकेला होने के बावजूद झकेलापन काटता नहीं लेकिन स्थिति यह है कि सही प्रतिभा के उपयुक्त काम न मिलने पर आदमी काम होने हुए भी झकेला हो गया है, वह जहाँ होना चाहिए वहाँ तक पहुँचने में गलत हाथा की एक छोटी मगर मजबूत कतार है और यह कतार हर पक्ष इस आदमी को काँचती कुदेनी और कुठित करती रहती है, नतीजे के तौर पर वह असंतुष्ट, पराजित और क्रुद्ध होता रहता है स्वतंत्रता से पहले स्वातंत्र्योत्तर देश की ली गई तस्वीर के बारे में वह अब स्वप्न भग की स्थिति में गुजर रहा है

चीनी आक्रमण और पाकिस्तान के साथ युद्ध इससे पहले देश का विभाजन और शरणार्थी होकर बड़ा संख्या में लोग का विस्थापन और इससे भी पहले द्वितीय विश्व युद्ध के बाद के प्रभाव (जिनसे किसी मानने में आज भी निजात नहीं मिली है), नतीजे के तौर पर सारे देश की मानसिकता और परिस्थितियाँ में बदलाव जन संख्या बढ़न से परिवार नियोजन का प्रचार और संसद जैसे 'ट्यूब का टूटना और बड़ी बड़ी योजनाएँ और बड़े-बड़े निर्माण पुराने मूल्यों का विघटन और भ्रष्टाचार चोर बाजारी, रिश्वत और बेईमानी का सारे देश में माहौल इस सबकी मानसिकता से जुड़ी हुई हताश पराजित कमर झुकी नहीं पीढ़ी आनक सनाव और विस्वासहीनता की

यात्रा में साँस लेता हुआ समूचा देश विघटन और ह्रास से गुजरती हुई आदमी की नतिवृत्ता और ससृष्टि औद्योगिक निर्माण के कारण। बड़े-बड़े शहर और इन महानगरों में भरेले आदमियों का बैधा हुआ समुद्र। अपने पास-पास से कटा हुआ और विवशता में जुड़ा हुआ भरेला आदमी सारे रिश्ता और सारी सस्थाओं पर अनास्था और फिर भी अपना धींचित्य और अस्तित्व प्रमाणित करने के लिए किसी स्तर पर झुनसी हुई आकाशा व्यक्तियों के लिए व्यक्तियों ॥ केन्द्रित राजनीति और जिसकी सवपासी छाया में कृपिता और मुक्ति के लिए छटपटाता अपने को बसहारा महसूस करता हुआ मानव समूह आक्रोश और भुँभनाहट में खुद को ही मोचती हुई पामल भीड़ विश्व विद्यालयों पर राजनीति का अधिकार और रचनात्मकता स कटी हुई गिद्या-अवस्था निरक्षरता के भँवर में ऊभ-खूब करती हुई विध्वंसक युवक-शक्ति जीने के साधनों का केद्रीकरण और दूसरों के रक्त पर चलता हुआ सुख-मुविधाओं पर जन्म सिद्ध अधिकार के लिए हुए एक बग रोज होती हुई हत्याएँ और दुष्टनाएँ और उनका सनास 'नई कहानी का यही ससार है और उसमें अभिव्यक्ति पाती हुई इसी आनसिक्ता से गुजरने वाली भीड़ है

और नई कहानी में भांड में से छँटा हुआ जिस आदमी का चेहरा उभर रहा है वह सही मायने में किसी व्यक्ति का नहीं बल्कि खुद भीड़ का ही चेहरा है, जो नेताओं के खोजले आदमियों और अदूरदर्शिता भरी योजनाओं पर क्षुब्ध है, उसके सामने देश का चमकीला प्रभाव, देश की उन रंगों को छक नहीं पाता जिनमें मरदा दुगध मरदा खून बह रहा है और जिसकी असलियत न जानने देन के लिए उन्हें ऊपर से सतमा सतारों में मड दिया गया है और यह मसमा सितारे भी निज के गहों हैं उधार लिए हुए हैं जिनकी कीमत चुकाने के लिए उसकी धमनिया का प्रवाह दाताओं की तरफ मोड़ दिया गया है, अब ये धमनियाँ उनका गरीर नहीं सींचती इस तरह मिटती हुई उसकी हस्ती जाने अनजाने दूसरों की हस्ती बनाने में बतौर उपकरण के स्तेमाल की जा रही है अब उसके निगम उसके लिए हुए निगम नहीं हैं यद्यपि लेता वही है लेकिन दूसरों के बतान पर और दूसरों द्वारा बाध्य विण जान पर कमलेदवर न इस मर्यादा का एक मध्य वित्त परिवार ॥ प्रतीक के तौर पर पहचाना है— घर का नितात अपना निगम ही कोई नहीं होना जरा-जरा सी बात में उन दूसरों का दखल रहता है, जो घर के नहीं हैं वित्तना घुँघला सा दखल है दूसरों का परवित्तना सम्पूर्ण (दूसरे पास का दगिया) न सिर्फ यहाँ के परिवारों में बल्कि इस देश में ही दूसरे-दूसरे देश घुम रहे हैं और इस देश के हर-छोर बड़े निगम में उनका दखल अब घुँघला नहीं है, बल्कि ताक-साफ है सचालक हाथ अपनी स्थिति बनाए रखने के लिए उन्हें दखल देन के बराबर मोके द रहे हैं और उनके लिए बराबर जमीन छोड़ रहे हैं यह देश चन्द लोग के स्वार्थों के लिए बराबर मुहताज होना जा रहा है और नतीजे के तौर पर

यहाँ का आदमी रोजी के बिना बेकार है और भूखा है वह इस देश की शक्ति है और देश का उससे कोई वास्ता नहीं है वह देश के लिए मरना सामीदार होना चाहता है और उसे साथ नहीं लिया जाता स्थूल स्थिति से वहाँ बेजार उसकी आन्तरिक स्थिति है वहाँ वह बराबर चारों तरफ उपजाए गए दवावा और भीतरी विकृति का शिकार हो रहा है वह जानता है कि यह दरगुजर बदतर स्थिति सचालक के अयोग्य हाथों में पड़ा की है प्राथमिकता से हल माँगने वाले जिन्दगी के सबाल इन अयोग्य हाथों द्वारा पीछे धकेल लिए जाते हैं उसे अपने चारों तरफ जवानों में कमर भुकी खोलती उदासी दिखाई देती है और यह जितनी बाहर है उससे कहीं अधिक उसके भीतर है तब वह असंतोष से भरकर विद्रोह कर उठता है विद्रोह ! हर प्रतिष्ठित सम्प्रदाय और हर पाखण्ड के प्रति हर मान्यता और हर स्थिति के प्रति समाज के प्रति और यहाँ तक कि अपने प्रति भी ! वह एक बारगो सब कुछ बदल कर सिरे स मान स्थापित करना चाहता है और विद्रोह की रीति में वह 'माना' से ही नफरत करने लगा है क्योंकि उसे लगता है उसके चारों तरफ धोखा है हर शब्द खोलता हो चुका है और हर सत्तम अयश्रीमता में बदलता जा रहा है लेकिन वह इन्हें बदल पाने में स्वयं को असमर्थ पा रहा है और लगातार टूटते जाने से उठन होकर वह जिन्दगी की बहुसिमाने उग स जीने के उपाय में पड़ गया है इस टूटने में उसका व्यक्तित्व ही नहीं जिन्दगी के तमाम सत्य हैं तमाम सत्तों से जनित तमाम रिश्ते हैं और रिश्ता का दूर तक पड़ता हुआ समूचा प्रभाव है ! हर रिश्ते में अराजकता है ! व्यवस्था के नाम पर समाज व्यक्ति को पूरा का पूरा निचोड़ लेना चाहता है व्यक्ति जीने की अनिवार्य शक्त के लिए उसके आखिरी कँपूरे तक तोड़ देने के प्रयत्न में है सब कहा आपाधापी है और सब कहीं अव्यवस्था है इस सबसे मजबूत बोलताया हुआ हैगन-पस्त यह आदमी स्त्री-पुरुष के धिनीन रूप की उनके धिनीन रिश्तों की धिनीनी तरह उछालता है, अचोखिया जमा व्यवहार करता है ऊब और संकट की नियति मान लेता है इस अराजकता में वह दुहरी जिन्दगी की जीने के लिए विवश है योकि वह जानता है कि बेहरे पर जिननी ही कीमती श्रीम और पाठशर की पतें लगाकर समाज खूबसूरत दिखाई देना चाहता है भीतर से उनका ही उसका पीलापन और क्लृप्त लिए हुए चेहरा भाँक उठता है हर मूल्य बच्चों द्वारा उठाए गए साबुन के पानी वाले सतरों बुलबुलों की तरह है, जो हवा में जिन्दा रहने की कोशिश करने से पहले ही टूट जाता है

इस तरह नयी कहानी में जो आदमी उमर रहा है, उसका और उसके आसपास का वास्तव दो स्तरों पर है—एक स्तर वह है, जहाँ देशी-विदेशी शोषा में विनाशित चमकीले आँखों में लवटव चित्र है जो महज फरेव है और झूठ है दूसरा स्तर वह जहाँ उसकी बाहरी भीतरी स्थिति नितांत स्याह है—माने वाली और विडम्बनापूर्ण स्याह इस बदर स्याह दिखाई देने का कारण एक समृद्धि भरा कोमल स्वप्न भी लेना

रहा हो लेकिन जो भ्रष्ट चुका है

बहरहाल आज की स्थिति इस आदमी के स्वप्न भग या भ्रम भग की स्थिति है और यदि उस स्थिति की अभिव्यक्ति में तत्त्वता या बड़वाहट है तो अजब क्या है ? बल्कि जब तो तब होता, जब अभिव्यक्ति की टोन में वह सब रेखाङ्कित न हुआ होता इस तत्त्वता और बड़वाहट, तल्ली और व्यंग्य की अहमियत का मतलब तब और साफ हो जाता है जबकि दिन प्रति दिन जीवन के प्रश्नों को तय करने के लिए व्यवस्था द्वारा प्रयत्न किए जाते हैं और इन प्रयत्नों से प्रश्नों को पहले से भी अधिक उलझा लिया जाता है इस आदमी के माह भग को और जिंदगी की शिल्पहीनता की स्थिति को नयी कहानी में समूचे मोह भग (कृति और कृतिकार गत) के साथ अपने प्रति पूरी निमग्नता बरतते हुए कथाकार अभिव्यक्ति दे रहा है गो इस बात पर एक राय हुआ जा सकता है कि कथा में समाज की अराजकता की हिमायत करना प्रश्न को सही कोण से उठाना नहीं है लेकिन इसीलिए इस अव्यवस्था को क्या अनिचित छोड़ दिया जाय ? मुख्य नए कथाकार राजेंद्र यादव ने इस अव्यवस्था इसी माडे स्याह चित्र को—नए या बदले हुए आदमी की समूची ज्यामिति मान लिया है (जो समूची चाहे न भी हो लेकिन इतना सही है कि वह दूरी तक उसके चेहरे को ढाँप रही है) इस आदमी के चेहरे को 'एक दुनिया समानांतर' में अपने चारों तरफ के घटित में समूचे विषय के बीच जिस पनी दृष्टि से देखा गया है वह चेहरा भी और उससे भी कहीं अधिक चेहरा देखा जाने की दृष्टि अत्यन्त महत्वपूर्ण है, लेकिन दृष्टि को यही तक सीमित कर लेना या इस महत्व के चलते दृष्टि का यहाँ सीमित हो जाना उसका सम्भावनाप्राप्त से कट जाना तो है ही

द्विचली पाढ़ी के ममल समीक्षका द्वारा पिछले दिना कहानी की पाठ प्रक्रिया की जबरदस्त सफाई की जाती रही है, जिससे किसी स्तर पर पाठक आतंकित भी हुआ है, आतंकित इस माइन में कि पाठ प्रक्रिया को लेकर मित्र ने कुछ ऐसी गोल मटोल बातें कही हैं, गूढ़ रखते हुए उसे कुछ ऐसा अतक्य बनाया है कि उनकी इस नियुक्तिया समीक्षा में सन्नस्त होकर पाठ-प्रक्रिया से तो क्या पाठक कहानी मात्र से पनाह माँगने की हालत में पहुँच जाय तो कुछ ताज्जुब में होगा जबकि खररत इस बात की था कि पाठ की प्रक्रिया को 'रहस्यवाद' न बनाकर कथा की रचना प्रक्रिया से जुड़ने हुए उस कथानिक तीर पर बिश्लेषित किए जान की कोशिश होनी लेकिन हुआ यह कि मित्रों ने कहानी की पाठ प्रक्रिया के नाम पर या तो कविता करना शुरू कर दिया— शिक्ति का एक चयन हुआ दायरा है जो हर क्षण मया होता चयन है और उस दायरे में

होकर हम भुज्जने हैं एक दुहरी प्रतीक्षा है, जिसमें अनागत शब्द पाठक का इंतजार करते हैं तो पाठक अनागत शब्द का एक भविष्य है जो शब्दों से भरा है और हजारों शब्दों के द्वारा पाठक को एक अंत से अलग हुए है एक फासला है जो दृष्टि के हर बंदम के साथ घटता जाता है हर शब्द से दिखाएँ गुरु होती हैं बिजली की एक कोप सी होती है, आलोक की एक रेखा में अचानक सब कुछ जुड़ जाता है । ' (कहानी के सृजन में घने और सीखे संवेदना खण्डों में तो बयाकार बवि होने लगता है लेकिन कथा समीक्षा में कविता की यह मिसाल काफी मौजू है) या फिर लीविस की तरह गितान्त प्रध्यापकीय लहजे में कि 'पाठक दो तरह के होते हैं, एक तरह के अधिक दूसरी तरह के बहुत कम बात को इतना सनहो और परीक्षार्थियों के मतलब का बना दिया कि उसका वधारिक गरिमा से ही नहीं गभीर विचार मात्र से सम्पर्क टूट गया और कहानी की पाठ प्रक्रिया के नाम पर एक भाटी और जड़ रूप रेखा मात्र रह गई जिससे कहानी के सत्य को उपलब्ध करने में किसी भी स्तर पर मदद नहीं मिलती कहानी की पाठ प्रक्रिया' या पठन-विधि की ज़रूरत इन मिन समीक्षकों ने इसलिए महसूस नहीं की कि मौलिक होकर उनके मस्तिष्क में यह विचार था, मतलब कथा सत्य को उपलब्ध करने के लिए वे इसकी ज़रूरत महसूस करते थे, बल्कि इसका आवश्यकता इस तक पर बताई गई क्योंकि बर्जीनिया वुल्फ (द कामन रीडर) सान पर्सील्युबक (ज़ापट आव फिक्शन) व दूसरे-दूसरे विदेशी लेखक इसकी सिकारिया कर चुके थे दरअसल कहानी की पाठ-विधि इसलिए महत्वपूर्ण नहीं है कि वह किसी विदेशी लेखक का सुझाया हुआ रास्ता है बल्कि वह महत्वपूर्ण इसलिए है, क्योंकि उससे कहानी के प्रति बदला हुआ कोण जुड़ा हुआ है यानी जो उसे मनोरंजन के स्तर से उठाकर गम्भीर साहित्य रूप में प्रतिष्ठा देता है और कि वह प्रामाणिक कथा समीक्षा के लिए एक अनिवार्य आयाम है और उसका अंग भी जिसके चलते कथा समीक्षा में उस पाठक का और कि उस समीक्षक का कोई वजूद नहीं होता जो कथा सत्य को उपलब्ध करने के नाम पर महज कथा सक्षेप और कथानक-समझ के घटिया नाटक में ही सलग्न हो पाता है और जिसे समझने या उपलब्ध करने के लिए कहानी के हर अंगारे, हर प्रतीक और व्यंजक स्थितियाँ स बाकिफ होना मिल्कुल ज़रूरी नहीं होना बल्कि सिर्फ सरसरे तौर पर पढ़ने के सक्ल में उस कहानी पर से बीज-बीज में पल्ले छोड़ते हुए स्पष्ट लेना ही काफी होता है यानी जिसका मतलब होता है कहानी के सस्ते रहस्य को समझने की ठुन्वी उत्सुकता और उसका धामन जाहिर है कि इसका कथा-समीक्षा के वयम्ब विचार से कोई वास्ता नहीं

दरअसल पाठ प्रक्रिया अपनी प्रारम्भिक सतह पर कुछ-कुछ 'प्रूफरीडिंग' जसी ही है वहाँ महज हर शब्द का ही महत्व नहीं होता, बरिज हर मात्रा भी महत्वपूर्ण होती है, यहाँ तक कि विराम चिह्न भी अपना जना ही महत्व रखते हैं उनका मही

और अपनी सही जगह पर होना निता त धनिषाय जाना है, जग-जस और जिननी बार और जितन ध्यान स 'प्रपूर्वीय' की जातो है, वह मु'ण में मूल के उतने हो करीब होती चलती है कहानी से भी हम जने और जितन ध्यान म धीरने होकर पढ़ने हुए गुजरते हैं उसी अनुपान स कहानी सत्य व गिद भी होने चलते हैं हम कहानी की जितने धर्म से और जितन भ'ग म ठहरते हुए पढ़न है उन हो भ'ग म न सिप कहानी के उमडने हुए, आवार सने सत्य स बन्वि उगनी ससन प्रक्रिया स भी उल्लत भपते हैं और तब चाहे कहानी म लगव की मूल रचना प्रविधि से हूबहू हम साक्षात्कार न भी कर पाएँ लेकिन उगवे बाप्री करीब हम जरूर होने हैं, कहानी की दायित्वपूर्ण पाठ-विधि हम क्या के उम सत्य की उपलब्ध करन के लिए बराबर विवग करती रहती है, जिसे लेखक न अपन समूचे कलात्मक दाव पेचा और जान भनजाने सिलगन लटका का सहारा लेकर चुपके स किसी पक्ति म दबा दिया है योकि यह क्या सत्य समूची क्या म भी सृष्टि के तीर पर अनुस्यून हा सक्ता है

कहानी की पाठ प्रक्रिया की बात बहुत कुछ कहानी की रचना-प्रक्रिया की बात भी है, कहानी पाठ से गुजरते हुए हम तिहरी भूमिका निभाते हैं एक स्तर पर तो मजग पाठक की हैमियन स हम मूल क्या सत्य की उसकी तमाम रूपगत बायोविया के साथ उपलब्ध करन के प्रयत्न म होते हैं इस भूमिका की निभाते हुए एक दूसरे स्तर पर क्या की अपना अनुभव बनाते हुए लेखक धर्मा होकर उसके घटित होने के साक्षी होने रहते हैं और इन दोनों स्तरों व साथ ही एक तीसरा स्तर भी है जहाँ हम पाठक कम और रचना कम की समुक्त भूमिका निभाते हैं, और इन दोनों के नतीजा हुए क्या सत्य की रेखांकित कर पात है इसलिए कहानी की पाठ-प्रक्रिया सिफ पाठ की प्रक्रिया ही नहा है वह उलट दूसरे सिरे से रचना की प्रक्रिया भी है और इसीलिए प्रबुद्ध कहानी पाठक कहानी की सिफ पढता ही नहीं है वह किसी स्तर पर उसका दुबारा सृजन भी करता है यह अलग बात है कि दुबारा किया गया यह सृजन मूल सृजन का प्रामाणिक अनुकृति नहीं भी हो लेकिन वह मूल कृति के करीब करीब जरूर होता है और यही वजह है कि एक विशिष्ट ग्रंथ म पाठक कम सर्जक-कम से वही अधिक जटिल भी है इसलिए कि वह सिफ पाठक ही नहा है कि'हा अर्थों म सर्जक भी है

कहानी अपनी प्रकृति के अनुसार ही अपन लिए अलग पाठ की मांग करती है पाठ प्रक्रिया जिस कि पाठ ग्रन्थास भी कहा जा सकता है हर कहानी के लिए एक जसा नही होगा अनन्य अनन्य मिजाज की कहानिया स अलग अलग पाठ विधि से गुजरना पड़ेगा सत्यो की अपन परिचय म सही अ'विति और सही इजहार देन वाली कहानी पाठ-विधि की स्वय ही एक अनन्य दिशा म मोड़ देगी और उसी तरह आप से बार बार प'त हुए ठहरन और साचन के लिए तवाजा करयो, जस गमसर और मुक्ति

बोध की कविताएँ, सिर्फ इस अन्तर के साथ कि कविताया में आप बिम्ब विचार की स्वतंत्र अन्वितियों को जोड़ते हुए भी समूची कविता से एक अलग स्तर पर भी सत्य का सवेत को उपलब्ध कर सकते हैं लेकिन कहानी एक ही अनुभव-सत्य की अन्विनि आपको अनेक सस्थितियों से पुष्ट कराकर उपलब्ध कराएंगी गो इशारे कहानी में भी हो सकते हैं, लेकिन सिर्फ इशारे होकर समूची कविता से हट कर उसके बिम्ब-विचारा और बिम्ब स्थितियों से किसी समानांतर सत्य को रेखांकित करने की तरह नहीं यानी एक ही कविता में कई और समानांतर सम्पूर्ण स्वतंत्र कविताएँ हो सकती हैं लेकिन कहानी में एक और या एकाधिक और कहानी के लिए अवकाश नहीं होता, इसलिए छोटी कविताओं की समीक्षा-विधि का उपयोग कहानी के लिए भी उपयोग में लाया जाय, यह समीक्षा विचार की सही दिशा नहीं होगी लेकिन इस पर बहस अभी बाद में

जिस तरह गम्भीर विचार और तीखे दृढ़ दृढ़ता, अपनी सृष्टि में सहिष्णु कहानी सजग पाठक की दायित्व पूरा पाठ विधि के लिए विवश करती हुई उन्मानी है उनी तरह अपनी सजनात्मकता में घटिया और जीवन के किसी गम्भीर सत्य में उलटी हुई, मात्र उसकी भर्त्ता का मतलब रखने वाली कहानी पाठ विधि में पाठक को गर जुम्मेदार भी बनाती है लेकिन इसका यह मतलब मतई नहीं हाना कि नव पाठ प्रक्रिया पर जोर देने की जरूरत क्यों हो जबकि हर कहानी अपने स्तर के अनुसार पाठ विधि में पाठक को गम्भीर या हल्का बना देती है इसके लिए यह समझ लेना जरूरी है कि जो कहानी पाठ प्रक्रिया के जिन आयामों में बढ़ने के लिए पाठक को उकसाती है, वह उसके लिए महज सवेत ही लिए हुए होती है और उनको समझने के लिए कहानी से कहीं ज्यादा सहयोग और सतकता पाठक से अपेक्षित है और इस दृष्टि से पाठ-प्रक्रिया का अभ्यास ही उसकी क्या समझ को विकसित करता है यह कहानी और कहानी पाठ विधि के बीच एक ऐसी आंतरिक उगी हुई समझ है, जिसे हर सजग पाठक समझ से जाता है और उसका पाठ विधि का अभ्यास इस समझ को मौजता रहता है यह समझ अपनी गुरुआती (और विकसित होकर भी) हदों में ही परम्परा पालित कथा-समीक्षा के साक्षात् को तोड़ने लगता है, जो कथा की मौसत समझ के स्तर से भी गए गुजर है

असल में कथा की पाठ प्रक्रिया की माँग का यह सवाल, कथा-समीक्षा में सवया बदल हुए कोण का सवाल है जो अपनी गुरुआत में ही कथा के प्रति समीक्षा मिजाज को सवया नयी दिशा दे देता है और इससे गुरुआत पाकर जहाँ कहानी मनोरजन स्तर से हटकर विचार चिन्तन का वयस्क माध्यम बनती है वही कहानी के हर नुक्त और हर चिह्न के दूर तक अर्थ प्रभावों के दृष्टि से छूट जाने के खतरे से भी वह स्वयं को बचा ल जाता है विल्कि यह कहना ज्यादा सही हावा कि इस कहानी पाठ क चलते

धर्म प्रभावा के दृष्टि से छूट जान की सम्भावना करीब-करीब खत्म हो जाती है

पुरानी कथा समीक्षा कुछ बन-बूझे सतही तौर-तरीकों से कथा का ग्रथ टगे लनी बीरती रही थी (बल्कि लगातार ग्रथ बाँचन जसा गम्भीर भाव वहाँ था ही नहीं) और इस तरह कथा सत्य के नाम पर उसके हाथ नितांत बाह्य और सतही मतनब ही लग पाया था, जबकि कथा-समीक्षा में कथा की पाठ प्रक्रिया का महिमित्य देने के पारंगत बदला हुआ यह समीक्षा कोण, कथा में लेखक की रचना प्रक्रिया के करीब पहुँच कर कथा के हर अंग, हर पंक्ति और उसको समूची प्रकृति को उचित दाय सौंपता हुआ कथा वस्तुत्व के आलोचक में उसे रेखाङ्कित करता है, यह समीक्षा यात्रा उसकी उठा बिंदु तक की यात्रा है जहाँ कहानी अपना नगा-सरप लिए हुए है और जिसे उपलब्ध करके और जिसके अरिष्ट वह कहानी के उन तमाम संकेत पाए हुए और संकेत पाते हुए तत्पुत्रों को कथा के महोन समीक्षा बोध से विलसित करता है उन संकेतों की जो कथा-वस्तुत्व को उसके विभिन्न सदभों में सम्पुष्टि दे रहे हैं व कहानी की समूची सदिनष्टता में जहाँ वह बन रही है या आकार पा रही है रंग देते हुए उसी वस्तुत्व को उमादा गाढा बना रहे हैं

कथा की इस पाठ प्रक्रिया के सबब नयी कथा-समीक्षा कहानी को उसकी सदि सष्ट सृष्टि में उपलब्ध करती है और इस सदिनष्टता की समग्रता में उपलब्धि के लिए समीक्षक की दायित्व पूर्ण भूमिका के साथ साथ उसे (समीक्षा को) रचनाशील रूप भी अस्तित्व करना पड़ता है इतना ही नहीं बल्कि इतना और भी कि वह स्वयं भी किसी स्तर पर सदिनष्ट होने की प्रक्रिया से गुजरती है इसीलिए युग के बड़े आलोचक डा० नगेन्द्र भी जब समीक्षा कर्म को सज्जनात्मक मानते हैं (न सही मूल के बराबर) और समीक्षक को सजब कवि बिम्ब का निमण करता है और आलोचक बिम्ब के प्रतिबिम्ब का तब समीक्षा की इसी रचनाशीलता की बात कहते हैं और प्रकारांतर से रचनाधर्मी समीक्षा को अनायास ही समीक्षा क्षेत्र में ऊँचा ओहदा दिये जाने की सिफारिश करते हैं इस रचनात्मक सदिनष्ट समीक्षा की टोन के निर्धारण में कहानी की पाठ प्रक्रिया जिस स्तर पर कथा समीक्षा की मही पहचान को रेखाङ्कित करती है यही एक दो तीन चार के क्रम में विषयताएँ गिनाने वाली सत्त्व परक कथा समीक्षा से स्वयं को अलग और आधुनिक बोध के समानांतर कर लेती है इसके नतीजे यह भी होने हैं कि नयी कहानी से पहले की कहानियों की रचनाशीलता को नए कोण से समझने की सम्भावना छुल जाती है

इस पाठ प्रक्रिया की आवश्यकता महज कहानी के सदभ में ही नहीं है, बल्कि इसकी जरूरत उन तमाम साहित्य रूपा के लिए भी है जिन्हें या तो मनोरंजन का माध्यम मानकर उनके लिए गम्भीर समीक्षा रुख और पठन विधि अब तक अपनाई नहीं गई थी या फिर उन साहित्य रूपा के लिए जिनको हल्के स्तर का समझ कर उनकी

उपेक्षा कर दी गई थी, भोकि कविता के लिए भी इस पाठ प्रक्रिया की जरूरत है पास कर उन समीक्षक-मित्रों के लिए जो आज भी कविता में अलग अलग व्यक्तित्वों को पहचानने में गड़बड़ा रहे हैं और जिनको सपाटे से काव्य संग्रह और कविताएँ पढ़ने की सत के नतीज के तौर पर यह सिकायत करनी पड़ती है कि 'तमाम नई कविताएँ एक ही कवि की लिखी हुई लगती हैं'

दरअसल मनोरजन और हल्केपन की मार जिन साहित्य रूपा को झेलनी पड़ी उनमें खाम तौर पर (और ग्राम तौर पर भी) कहानी हो रही और कमोवेश उपन्यास का भी इस विडम्बना से गुजरना पड़ा इसलिए कहानी के साथ-साथ उपन्यास के सदम में भी पाठ प्रक्रिया के अभ्यास को गम्भीरता से लेने की जरूरत बनो हुई है, और यह पाठ प्रक्रिया का अभ्यास छोटी कविताओं और महाकाव्यों की पाठ-प्रक्रिया के समानांतर ही कमोवेश अपना विधा के मुताबिक किसी स्तर पर होगा, जो यह बात जानी हुई है कि कुछ कविता परस्त भावुक समीक्षकों को इस सुभाव से गहरा सदमा पहुँचेगा कि कहानी, उपन्यास कविता की तरह पठन विधि की भी दरकार रखते हैं और कि समझने धूमन के लिए कविता जसी ग्रहमियत उन्हें भी देनी होगी उनकी दृष्टि में तो कहानी सुनने-सुनाने या अवकाश के क्षणों में (उपन्यास भी) पढ़ने की चीज है, ये कथा-रूप अब समझ की भी मांग करने लगे ? कुछ आचार्य और पीठस्थ ऋषि समीक्षक कहानी का सस्ता और मनोरजन का साहित्य समझ कर उसकी उपेक्षा कर देते हैं और उसे मनोरजन के लिए भी पढ़ना पसंद नहीं करते, क्योंकि मनोरजन के लिए उनके पास दूसरे जोते-जागते साधन मौजूद हैं जो खुद अपने में कई-कई दिग्दर्शक कहानियों का विषय हो सकते हैं इसलिए जोती-जागती कहानियों के सामने कविता की लिखी पढ़ी कहानियाँ की क्या कीमत और कि क्या बिसात ? ऐसे भावुक और मनोरजक समीक्षकों के लिए जो समीक्षा में अपनी भावुकता और मनोरजन के कारण ही बने हुए आग्रहों को समीक्षा माना के बतौर स्तेमाल करते हैं क्या कहा जाय ? ये मित्र भावुकता के चलते ही समीक्षक हुए हैं और 'भीगना इनकी समीक्षा का खास मिजाज है, इसलिए आज की कहानी, जो विचारों की वयस्कता और जिन्दगी की कठारता को रेखांकित कर रही है इन्हें ब्यावर भिगो सकती है और वैसे इन्हें अपनी ग्रहमियत से परिचित करा सकती है ?

बहरहाल यह कहानी को पाठ प्रक्रिया का ही जोम है कि जिसके चलते समीक्षा विवेक में कहानी सत्य के साक्षात्कार में हम अधिक सक्षम होते हैं, कहानी से हम इतने सतक गुजरते हैं कि उसके किसी अंश या किमी पंक्ति में अन्वय का चमकीला तार बौंध जाता है या खण्ड-खण्ड में बँटी निरर्थक विस्तृतियाँ से भरी जसी दिखती और अपने रचना-वध में बिखरी हुई लगती कहानी को साफ सिलसिला दे देता है और उसे एक समूची रचना इकाई में प्रतिष्ठित कर देता है सब इस चमकीले तार की बोध में

कहानी की सही प्रवृत्ति और उसके रचनावध को जान पाना स्पष्टतम हो जाता है।

समीक्षा स्तर पर छोटी कहानी का यह दुर्भाग्य रहा है कि उस पढ़ा तो गया है मनोरंजन और मन स्थितियाँ को हल्का बनाने की गरज से लेकिन उसकी समीक्षा उसको साहित्य रूप मानकर इस तरह की जाती रही है गोया उसे इतना ही गम्भीर होकर ज़ुम्मेदारी के साथ पढ़ा भी गया हो लेकिन समीक्षा में यह कहानी के दुर्भाग्य की प्रतिम हद नहीं है, इससे भी बड़े दुर्भाग्य से उसे गुजरना पड़ा है और किसी हद तक उसमें वह भाज भी जुड़ी हुई है वह यह कि उसकी समीक्षा के लिए कविता जैसी सत-कता और ज़ुम्मेदारी महसूस नहीं की जाती रही है, मतलब समीक्षा करते समय उस बात का कतई ध्यान नहीं रखा जाता रहा है कि वह कब पढ़ी गई है, और कि किस मन स्थिति में और जिस बात का ख्याल रखा जाता रहा है, वह सिर्फ इतना कि जैसे-तैसे कहानी की समीक्षा के नाम पर (और क्योंकि समीक्षा पढ़कर ही की जा सकती है इसलिए पढ़ने के नाम पर भी) जो कुछ याददाश्त में बच रहा है उसी को समीक्षा विचार के लिए धुरी बनाया जाय और कुछ गोन मटोल तर्कों के साथ समीक्षा का नाटक कर पतवार के लिए गुंजाइश ढूँढी जाय और इस तरह दायित्वपूर्ण चिन्तन से उसे भलग रखा जाय, इसलिए कि कहानी को भी तब दायित्वपूर्ण होकर पढ़ना पड़ेगा, जिस तरह कविता के सत्य को उपलब्ध करने के लिए उसे एकाधिक बार पढ़ना जरूरी होता है और ज़रूरत महसूस करके अपने विकल्प और मत को सम्पुष्टि देने के लिए उसे पुनः पढ़ा जाता है कहानी सत्य को भी उपलब्ध करने के लिए उसी तरह का अध्ययन या पाठ विधि नहीं अपनाई जाती रही है। अपनी समीक्षा-बुद्धि पर यकीन करने वाला की तादाद इतनी ज्यादा है कि एक बार कहानी को पढ़कर उसको आद्यतन समझ लेने का विद्वान उद्देश्य बनाया ही प्राप्त हो जाता है और जिन्दगी में अपनी याज्ञानिक खतरनाक सद्गत पाकर भी सबकुछ लेकर वे कहानी को पुनः पढ़ना जरूरी नहीं समझते। कथा-समीक्षा में यह वर्ग जनता के उस वर्ग से भी गया गुजरा है जो अपने मनोरंजन की खातिर बल बिना को एकाधिक बार देख लेता है लेकिन हमारा यह समीक्षक वर्ग कहानी को गम्भीर मनोरंजन तक का स्तर देने को भी तयार नहीं हो पाएँ वह जरूर कहानी को गम्भीरता से लेने जैसी करता है, लेकिन जो मित्र 'तब ही सोमिन होती हैं' नहीं बल्कि यह होता है कि तमाम समासा-गत निष्कर्ष सही प्रतिक्रिया प्रभाव और गुलत जानकारी के भुरभुरा होकर रह जाते हैं और बनाबित होना पर भी कथा की समीक्षा-बुद्धि इस तरह अग्रगण्य होकर रह जाती है इसलिए कथा की समीक्षा को इस सस्ती लेकिन घातक विह्वलना में मुक्ति ज्ञान के लिए जरूरी है कि पाठ-प्रक्रिया की अहमियत का समझा जाय और कथा-ममासार या पाठ्य बनने की हौम में बीच-बीच में पृष्ठ छोड़ छोड़ कर कहानी-उपयोग पढ़ने की बटिया और असाहित्यिक सत से मुक्ति पाई जाय

पाठ प्रक्रिया को ग्रहणियत न मिलने के कारण कथा-समीक्षा को जिस विडम्बना से गुजरना पड़ा और जो खतरा उसके सामन आया—जिसका कि मञ्जोरी प्रणिभा के समीक्षकों ने अपने हक में उपयोग भी किया—वह यह कि सिर्फ समीक्षाएँ पढ़कर ही कहानी की समीक्षाएँ की जाती रही और आज भी ऐसे मित्रों की तादाद कम नहीं है, जो बड़ी गम्भीरता से इस सत्य के अपने यहाँ उपयोग में ला रहे हैं, अब यह बात अलग ही है कि गम्भीर कथा विचार में उनकी समीक्षाएँ चाहे शामिल नहीं हो की जायें

बीते दशक और बीसते हुए दशक में 'नई कहानी' का समीक्षा स्तर पर काफी जोर रहा (फिर सृजन में तो वह रहा ही) यद्यपि पुस्तकाकार (नई कहानी सदन और प्रकृति एक दुनिया ममानातर, नई कहानी दशा दिशा सम्भावना नयी कहानी की भूमिका) रूप में उतना नहीं, जितना कि फुल्लर निबन्धा, चर्चा-परिचर्चा व कथा समारोहों के तौर पर कुछ मित्रों ने फुल्लर निबन्धा को पुस्तक-आकार भी दिया ही (कहानी नयी कहानी) लेकिन कुछ पुस्तकों (नयी कहानी की मूल संवेदना हिन्दी कहानियाँ और कथन) और काफी कुछ फुल्लर निबन्धा को पढ़कर ऐसा भी महसूस हुआ कि इनके लेखकों को नयी कहानी का जितना कुछ समझने की जरूरत थी, उससे कहीं ज्यादा होने अपना वक्त समझने में गँवाया। यह तो निश्चय ही रहा कि अच्छा पका ने काफी कुछ लेखकों और अनुभवहीन समीक्षकों के साथ इसमें अगुवाई की, सास कर नया की अपेक्षा पुराना ने इसमें या तो नयों के साथ-साथ लपेटाई करके अपनी हैसियत बनाए रखने का भाव रहा या फिर वे अन्तर से ज्यादा भोले थे बहरहाल यह महसूस टिप जाने से अब तब बराबर बचा जाता रहा कि 'नयी कहानी' को न सिर्फ उमम से गुजरकर उसे 'उपलब्ध' करने की जरूरत है बल्कि उसमें स्थित होकर कहानी को अपने में से गुजरने देते हुए महसूस करने की भी जरूरत है कथा समीक्षा की इस पद्धति का निर्वाह करने के लिए मसले समीक्षा लक्षित कहानी में से ही उठाने की जरूरत थी, लेकिन जो किया गया वह खूब यह कि मित्र अपने 'मतवादों' के कारण ले आए और उन्हीं के 'स्टेन्सिल' को 'साइक्लोस्टाइल' करा-करा कर पेश करते रहे, नतीजा यह हुआ कि काफी कुछ ऐसे मित्र जिनके किसी एक मुद्दे पर भी मत एक होने तक की सम्भावना नहीं थी, इस बात पर एक मत जरूर दिखाई दिए कि 'नयी कहानी' के अस्तित्व को मानने हुए भी, वे हर स्तर पर एक दूसरे से सिर्फ भिन्न हैं, यानी चिंतन के किसी भी स्तर पर वे नई कहानी के स्वरूप और प्रकृति को लेकर सिर्फ अलग अलग पहचान दे रहे हैं मतलब कि उनके अलग अलग पैमाने हैं, जिनकी समग्रता में कोई एक साथी लकीर नहीं खींची जा सकती, एक औसत 'पहचान' भी वहाँ रखा दिखान नहीं की जा सकती—वे सिर्फ एक-दूसरे को परस्पर काटते हैं और सिर्फ इसी माइने में परस्पर चुटने हैं

प्रसाद आदि के यहाँ कहानी नाट्य से गुरु होती थी और नाटकीय मोड़ के साथ उसका अन्त भी बड़ ही नाटकीय ढंग से भटके के साथ होता था, गो कहानी में यह नाटक एक दशक पहले के कथाकारों के यहाँ भी रहा है और काफी कुछ कथाकारों के यहाँ आज भी बरकरार है, लेकिन आज का पाठ कहानियों में नाटक देखने-नेयन और भटके बर्दाश्त करते-करते उनका आदी हो चुका है उस भटकेदार अन्त वाली कहानियाँ में अब न तो कोई वीथुक रह गया है और न कहानियाँ में नाटक देखने के लिए किसी तरह की उत्सुकता गो कि मतलब इसका यह कतई नहीं है कि कहानी मात्र में पाठक की उत्सुकता खुब गई है या कि कहानी के सक्षिप्त सत्य को जिन कथा विधियाँ से प्रेरित किया जा रहा है उनमें उनका औत्सुक्य खत्म हो गया है मतलब सिर्फ इतना जरूर है कि वह अब सक्षिप्त सत्य की प्रतीति के लिए परीक्षित कथा सटका से चौकता नहीं और इस तरह के कथा कहने के बचकाने अन्दाजा में उस कथाकार की नीयत साफ नहीं लगती इसलिए उस ऐसी कहानियाँ में सल्लकीय फ्रामूला दृष्टि के प्रति लिप्यन्ता ही उपजती है इसलिए भी कि वह नाटकीयता की असलियत से परिचित हो चुका है क्योंकि जिन्दगी में वह उसी तरह होती ही नहीं जिन तरह कि उसका उपयोग इन कथाकारों ने बहुतायत से कहानियाँ में किया है और उसे हज़ीम चुकमान के पट्टे नुस्खे की तरह अपनी सुविधा के लिए कथा कहन में बनौर मत के पाल लिया है और यह सत अब उनकी कथात्मक क्षमता की हानि हो चुकी है जिसका प्रतिफल अब उनके धूने से बाहर की चीज है

नाटकीयता से गुरु होन वाली हर कहानी को पाठन आड से गुरु होने वाली कहानी मानता है नाटकीय भाव विकास चालियन घोग के पाठन को कोई गहरा और बीध जान वाला आगव बोध नहीं देने इसलिए नाटकीयता में अन्त पान वाली कहानी उसके लिए घोड़े में भन्न होन वाली कहानी है क्योंकि वह कहानी में त्रिगुणी का 'सच' चाहता है 'सच' के नाम पर घोषा नहीं चाहता या कथा स्तर पर सच का अभिव्यक्ति इस तरह नहीं चाहता कि वह उस घोष की प्रशानि कराए गाकि वह कथा में उस घोष के सांगात्तार स भा बनराना नहीं है, त्रिम वह त्रिगुणी में भन्न रहा है लेकिन चाहता इतना जरूर है कि वह उस उमा वेध में कहानी में मिल त्रिग वग में उससे उमका सावका त्रिगुणी में पडना है --

इसलिए वे तमाम कहानियाँ जो नाटकीयता में गुरु ही नहो हानी नाटकीय मोड़ और अन्त में पाठन की भीचका ही नहो बनाना बल्कि नाटकीयता में अन्त भी पाती हैं पाठन में यहाँ कहानी के रूप में महत्व पाता है क्योंकि वह कहानी में इन पाठन का बरिमा-नपानन का थड उडा दन उस अघर में सत्का देन उमय त्रिगुणीमा उगुगडा भर हन या अम्याय का वातावरण निर्माण कर उमम अगुन-मिथोना गवन के दूनर में बानी देन चुका है यहा बजह है कि कथाकार का गिर रिगुणीमा के

आजमाया हुआ जादू अब उसके गिर चढ़कर नहा खोलना वह उस बच्चा को बहलाने के स्तर का एक घटिया शगल और मामूली झडावाये लगता है क्योंकि अब वह अपनी व्यस्कता का नतीजा होकर क्या स वहीं गहरे और कहा गहरे उतर जान जाने सत्य की उम्मीद करता है उसने पाठक की जगती व्यस्कता कहानी से धोखे और साया मनोरजन की माँग नहीं करता इसलिए कि वह हल्के मनोरजन की भ्रूणभुनयों में अब तक कहानी से स्वयं को बराबर धोखा देता रहा था और अब वह समझ गया है कि कहानियों से क्या गया मनोरजन अपनी ही वीर्य पर स्वयं से किया गया मनोरजन है और कि खुद से खुद को हो कर तक छुना जा सकता है आखिर और वह इस विडम्बना से अब तक गुजरता रहेगा ? मत कविया द्वारा बनाया गया सनोप वाला रास्ता 'आप ठी सुख होय उस काफ़ी महेगा पडा है वह जानने लगा है कि चार आदमियों की जगह पत्ते बाँटकर खुद ही चारों को चान चलने में सिवाय अपने को लगातार मारने के प्रतिरिक्त और कुछ नहीं है, इसलिए 'नाटक' करने वाली और पाठक के साथ 'चान चलने वाली' तमाम कहानियाँ साजिश करके उसे अब तक मारती ही रही हैं और इस साजिश में लेखक महज अपने कहाना फामूली की सुरक्षा के लिए यानी क्यात्मक सज ना के अभाव में अपने व्यवसाय को बचाए रखने के लिए (क्या की समीक्षात्मक प्रतिभा के अभाव में आलोचक भी यही भूमिका निभाता रहा है) इसमें बड़े वीरान स शामिल रहा है जबकि उससे उम्मीद की जाती थी कि सजनात्मकता में आछा पढ़ने के कारण वह किसी या किन्हीं जीवन-सत्यो के तीख सँकेत नहीं दे सकता तो कम अब कम अपनी इन कमजोरी के लिए पाठक के क्या विवेक से तो भाडा नहीं बनाएगा।

आज के पाठक की माँग है कि कहानी में जीवन का दश गहरा अब या उसकी हैसियत रेखाङ्कित करन वाला कोई बेलाग सवाल हा, मतलब उस कहानी सत्य जमी दिल्ली नहा चाहिए बल्कि कहानी का सत्य पाठक का अपना सत्य होना चाहिए इसलिए फामूला जीवी क्याकार अब उसे बचकानी हरकत वाले उन योगा जैसे लगते हैं जो बच्चा की तरह समझदारों को मिठाई देकर फुसलाने की बात सोचने हैं लेकिन वे अपने हम दाव में आज के पाठक के सामने सफल नहीं हो पा रहे हैं और अपनी ही चान से स्वयं ही मात खा रहे हैं

दरअसल फामूला लेखक वही होता है जो नए नए जीवनानुभवों में चुकते हुए कहीं ठहर जाता है जो जीवन के सत्य की प्रामाणिक अभिव्यक्ति नहीं दे पाता और उसके लिए नए मुहावरे की तलाश में पीछे छूट जाता है कहानियों में उसकी हालत उस अशेष महिला की तरह होनी है, जो बढती हुई उम्र में थकड़ा कर युवती दिखने के लिए श्रृ गारिक प्रसाधना में एक अरसे के बाद हास्यास्पद होने लगती है (जनेद्र को उनकी नाम विज्ञान कहानियों के सदम में इस हादसे से गुजरते हुए देखा जा सकता है और भगवती चरण वर्मा की इस लिहाज से एक्दम खस्ता हालत उनके उपन्यास

रेखा' में है) स्वयं को नया के समानान्तर देखे जाने की होस ॥ ठहरे हुए जीव नानुभव के ये लेखक अपनी फामूला दृष्टि के चलते स्त्रा पुरुषों के सम्बन्ध की अभिव्यक्ति अपने 'चरित्रा' में कितने जुगुप्सात्मक हो उठे हैं इसकी सहज प्रतीति इनके 'घर' के लेखन से हो सकती है

नयी कहानी में काम सम्बन्धों के सदम से स्त्री पुरुषों के बदलत हुए रिश्तों को आज के परिवेश का नतीजा होकर जिन स्तरों पर अवेपित करने की कागिणी थी, उसके साथ प्रामाणिक अनुभव को गति भी जुड़ी हुई थी पिछले खेदों के क्या कारो में सिर्फ काम-सम्बन्धों की अभिव्यक्ति से ही नए कथाकारों के साथ हो सन का मतलब निकाला और अनुभव की प्रामाणिकता की बातें अपनी लिखने की शौकी पर बैठकर कल्पना और फामूला दृष्टि की प्रसूति में निभाते रह गयीं नतीजा यह हुआ कि इन लेखकों का घर का अखन फामूला दृष्टि के कारण जहाँ सतही होकर रह गया वहाँ सही वास्तव से कट जाने के कारण जिन्दगी की प्रामाणिक तस्वीरों से भी वह निःशय हो गया गो कि वह प्रामाणिक अपने सर्वांग ॥ अब से पहले भी नहीं था और चाहे भूरे साक्षात्कारों का पूरा मतलब वह न भी रखता हो लेकिन फिर भी उसे जीवन के सही मदलों की अभिव्यक्ति में मोछा जरूर मटसूम किया गया और काफी कुछ सजग होकर गैर ईमानदार भी यही बड़ह है कि 'गणपति ने पूने का दुर्ता' और 'तुमने यो कहा था कि मैं सुन्दर हूँ' में समाज के सब और स्त्रियों के सब को रेखांकित करने की कोशिश करते हुए भी पूरी तरह अपने समाज की उपढी हुई विडम्बना को गहरे न टोहकर उसकी सतही तफ्ती ही दो जो उसके बाद की चीट्टी में छाती थी और उसके 'वा' के आलोक में लेखनीय बतव्य के लिए काफी थी 'तुमने क्या कहा था कि मैं सुन्दर हूँ' में लेखक अपने की तुम कहाँ हो नारि वाली ऊर्जा से नारी मध्या की ओहने की कागिणी करता तो है लेकिन जाने किस प्रज्ञान प्रेरणा से कहानी के अन्त तक पहुँचते ही अपनी पूरी शोखी और मांसलता के बावजूद अपने के 'बाहु मेरे घेर कर तुमको रवे रहे' वाले निष्कर्ष पर ठहर कर हाँफने लगता है नतीजा यह होता है कि 'तुमने क्या कहा था कि मैं सुन्दर हूँ' कहानी एक महत्वपूर्ण वृत्ति होते हो सही नाटक में बनस कर रह जाती है गोकि वह अपनी परम्परा में एक महत्वपूर्ण वृत्ति जरूर है 'अनन्द, गणपति और अनेय' तीनों ही लेखक अपने अलग-अलग और निही स्तरों पर विरोधी रास्ते से गुजरत हुए निष्कर्ष रूप में मिलने एवं ही बिंदु पर हैं एक हरि प्रमन के रूप में यथाय से पलायन करता है, तो दूसरा डाक बैगल में डनान की आर दोह पहता है और तीसरे के बाहु घेर कर रवे रह जाते हैं 'ताना ही संगका के पात्र (त्याग पात्र की ब्रूषा की छोटकर जो जीवन से जुड़ी हुई प्रामाणिक हातर आखिर तक मधन में टिकी रहनी है) जिन्गी में कट कर (भाग कर या ठहर कर) महज उपजीवी होकर रह जाते हैं 'न्हीं सोमाप्रा के अपने

के 'अपने अपने अजनबी का यथाथ मित्र बच' क अघेरे म हो कद होकर नहीं रह जाता, वह यथाथ से कटकर अप्रामाणिक भी हो जाता है और अन्ततोगत्वा अपनी अपोल में मृत्यु पर सोचे गये सिद्धांत की टिप्पणी या वर्णित भर होकर रह जाता है यंगपाल के "बारह घंटे चौबीस घण्टा घासू बहाने में ही गुजरते हैं और 'मुक्तिगोष्ठी' में जनेन्द्र फिर हरि प्रमत्त हो जाते हैं' कहना यह है कि ये तमाम लेखक जिन्दगी में दूर रह कर जिन्दगी के जिस यथाथ का अपन कया साहित्य में प्रस्तुत कर रहे हैं वह आज के जीवन्त सदस्यों में प्रामाणिक नहीं है लेकिन मैं यह नहीं कहता कि वह इसी तरह प्रामाणिक अब से पहले भी था

कहानी में फारमूला का उपयोग बूढ़े बच्चा में विचित्र लगाना जसा है इसमें उनमें बनावटी स्याही तो आ सकती है और सतह से देखन पर वे जीवन्त भी लग सकते हैं लेकिन वे जीवन्त होने नहीं बूढ़ी दबासा को आखिर टॉनिको के सहारे कब तक उलटने से बचाया जा सकता है

अतीत कथा-लेखक कुछ ऐसा लिखना चाहता था, जो पाठक को कुछ दूर बहलाए-कुमलाए रख सके यदि वह इसमें सफल होता था तो अपनी कहानी को साधक मान लता था, वही क्या इस तरह उसकी कहानी को साधक कहने में मनोरंजन धर्मिया की एक पूरी भीड़ उसके साथ होती थी

कहानी में दिनबस्ती रखने वाले अपने वक्त के (और उनकी निगाह में आगे के भी) तमाम लेखक-पाठकों की राय जाहिर करते हुए "यह तो सभी मानते हैं कि आख्यायिका का प्रधान धर्म मनोरंजन है पर साहित्यिक मनोरंजन" कहानी को 'ध्रुव की तान' का रूपक देने वाले प्रेमचन्द भी यह साफ-साफ मान ही चुके थे कि कहानी की खास जमीन और पहली शन-फिर आखिरी चाहे वह न भी हो उसका मनोरंजन धर्म होना ही है 'हम चाहते हैं कि थोड़े से थोड़े समय में अधिक मनोरंजन हो जाय कहानी के लिए पत्र-हू बीस मिनट ही काफी हैं' हम कहानी ऐसी चाहते हैं कि वह थोड़े से शब्दों में बही जाय 'उसका पहला ही वाक्य मन को आकर्षित कर ले और अन्त तक उसे मुख्य किए रहे और उसमें कुछ चटपटापन हो, कुछ ताजगी हो और इसके साथ ही कुछ तत्त्व भी हो वही कहानी सफल होती है, जिसमें इन दोनों में स—मनोरंजन और मानसिक तृप्ति में से—एक अवश्य उपलब्ध हो।' गो कि तत्त्व की बात भी प्रेमचन्द ने कहानी में उठाई, लेकिन मुख्य सवाल के तौर पर नहीं मुख्य सवाल के तहत दोषम दर्जे पर ही और बिना तत्त्व के-अकृत मनोरंजन के निषेध पर—भी कहानी की सफलता को उनके यहाँ स्वीकृति दी गई लेकिन सिर्फ तत्त्व को बिना मनोरंजन के कहानी में पग करने की बात नहीं बही गई अतवत्ता इस

बात का गद्यान जरूर गया गया कि बहानी का मनोरंजन 'साहित्यिक' मनोरंजन है, 'चूंकि' ध्रुपद की तात् (बहानी) सभी सोचने धुन धीर 'हरमोनियम गायनी' में ऊँचे दर्जे की चीज है इसलिए बहानी बहने में, मतलब बहानी के 'गल्प' गिल्प के स्नेहात में नफासत की परबी की गई धीर जो प्रमथन 'वस्तु' के कारण अपनी बहानी में बिगिष्ट रहा। वहीं अपने मतलबों में बड़े ही बेमालूम ढंग से रूपधर्मा हो गया, रचनाधर्म धीर मर्यादीय विचारों में यह परस्पर निम्नस्व विरोध 'मोट' करने लायक चीज है। प्रमथन के यहाँ एक काम जरूर हुआ कि दाँती नानी के बठ ब लोच धुनि में जोधित समाम कथा धीर हृष्टता को निम्न-पक्ष में ले आया गया। १९०७ (धनमोच रत्न) से प्रारम्भ प्रमथन की यह कथा यात्रा १९३६ (कपन) से पहले तब हिन्दी बहानी को 'मनोरंजन' धीर तरब (स्थापित नैतिकता धीर धायो जिम आदरा) के धीर में लेकर गुजरती रही जिसमें प्रेमचन्द की नया 'नतरज' के निपाढी पूम की रात धीर कपन (नाम तोर से पूस की रात धीर 'कफर') की इस कथा-धुग की रविग में अपवाद रूप में हटा हुआ माना जा सकता है।

प्रमथन न बहानी में 'गल्प' गिल्प की नफासत की परबी की (गो अपनी समाम २२६ बहानिया में इस 'नफासत' में नफीस हो जाने का ब सधूत पेग न कर सके) मतलब 'गिल्प' प्रयोग के पीछे से प्रेमचन्द अपने मुहावरों का अतिप्रमग न कर सके) तो तरब की ग्रहमियत को भी रैताद्धित किया। 'तरब' का सँट ढाँचा या परिभाषा उनके यहाँ अतद्ध का विषय नहीं रहा वह साफ था अपने पूरे 'गान' धीर पूरे पटन में धीर फामूस के तीर धीर कोण ब तीर पर बहानी में क्या चीज दी जाय धीर वह 'चीज' यानी तत्व बहानी में जिस तरह पेग किया जाय यह भी प्रेमचन्द के यहाँ साफ साफ लिखा जा चुका था 'आदरावाद कहता है, यथार्थ का यथार्थ रूप लिखान में फायदा ही क्या वह तो हम अपनी भाँखों से देखने ही हैं कुछ देर के लिए तो हम 'न कृत्तित व्यवहारों से प्रलग रहना चाहिए। भारत का प्राचीन साहित्य आदराबा' ही का समर्थक है हमें भी आदर्श ही की मर्यादा का पालन करना चाहिए। हाँ यथार्थ का उसमें ऐसा सम्मिश्रण होना चाहिए कि सत्य में दूर न जान पड़े। 'चूंकि' बहानी में प्रेमचन्द का समूचा युग भारतीय साहित्य समर्थित आत्मा यानी तरब का मना रजन के दस्त में बाँधकर पाठकों तक बिना नागा पहुँचाता रहा धीर यथाय से उसका वास्ता सिफ इस बिना पर ही आँका गया कि वह उससे जुड़ा हुआ सा प्रतीत हो चाहें फिर जुड़ा हुआ न भी हो। यह 'तत्व' मनोविज्ञान की मद में भी बहानी में चला—

सबसे उत्तम बहानी वह होती है जिसका आधार किसी मनोवैज्ञानिक सत्य पर हो साधु पिता का अपने कुव्यसनी पुत्र की दशा से दुखी होना मनोवैज्ञानिक सत्य है। (क्याल रहे कि यह यथाय भी आदर्शवाद के लिए ही खड़ा किया गया है) और समाज सच के नाम पर भी

इस लपेट में हम श्री जयशंकर प्रसाद से लेकर यशपाल तक को देख जाते हैं यशपाल ने तो छंद निष्कालिस तत्व चिंतन को कहानी में ऊँचा करते हुए 'मनोरजन' की भी परवाह नहीं की और साहित्य में कलात्मकता को एक बारगी नकारते हुए कथा को विचार यानी 'तत्व चिंतन' के प्रचार का माध्यम मान लिया 'मेरी दृष्टि में विचार शून्यता और प्रचार शून्यता एक ही बात है।' अब यह अलग ही बात है कि यशपाल का 'विचार-प्रचार' वह नहीं था, जिसे शुरू के दौर में प्रेमचंद ने प्राचीन भारतीय साहित्य द्वारा समर्थित आदर्श कहा था जो आगे चलकर प्रेमचंद भी 'पूस की रात', 'कफन', 'गोदान' और इस में निने गए अपने निबंध महाजनी सम्मिता व अछूते 'मंगल सूत्र' में इस आयोजित व्यापार से निजात पा लेते हैं 'प्रसाद' का रोमान कहानियों की कथिना के दायरे में खींच लाता है, बाबजूद इसके उनकी कथन-विधि और झटकेदार अन्त कलात्मकता में प्रेमचंद के कथा मुहावरे का प्रतिस्मरण करते प्रतीत होते हैं, लेकिन वे खुद फासू से की एक ही मुद्रा में बंद होकर रह जाते हैं अपवादों की दान में नहीं करता क्योंकि वह स्वयं प्रसाद (मधुमा) में लेकर प्रेमचंद ('पूस की रात', 'कफन' 'शतरंज के खिलाड़ी') चंद्रधर शर्मा शुक्लेरी ('उसने कहा था') और यशपाल (मन्त्री 'तुमने क्यों कहा था कि मैं सुंदर हूँ') तक में उपलब्ध हैं

मनोविज्ञान का आसरा लेकर कुछ मन बदल की कहानियाँ ('साई' विश्वम्भर नाथ शर्मा 'कौशिक') जरूर देखने में आती रही और इस रबिग पर ५० ज्वालादत्त गर्मा सुदान, बतुरसेन शास्त्री आदि लेखक उत्साह से काम करते रहे फ्राइड के मनोविश्लेषण की सुनिश्चित दशन के तौर पर अंगीकृत करते हुए इलाचंद जोशी ने कथा में कलात्मकता का परिचय दिया लेकिन व्यक्ति के मनोविज्ञान की महीन नज़र से कलात्मक सम्भावनाओं में कथा माध्यम से देव पाने की भरपूर कोशिश जैनद्र-अनेय में ही हुई जो अपनी कहानियों (राज 'हीलीबोन की बत्तलें अक्षय, पत्नी पाजेव जनेद्र) में बदले हुए ससार और बदले हुए मिजाज से पाठकों की कथा-रुचि को चुनौती दे रहे थे लेकिन यह चुनौती कलाकार की शक्ति के साथ अनेय के यहाँ नेपथ्य में चली गई और जनेद्र के यहाँ नान विज्ञान के साथ सजनात्मकता या रचनात्मक प्रामाणिकता से बटकर महज कहानी की तकनीक होकर रह गई इस बीच कुछ सशक्त मजहबी गर मजहबी कलमें-भगवती चरण वर्मा अमृत सागर नागर, नागाजु ज उपेन्द्रनाथ अश्व, रंगिय राधव, अमृत राय—भी हिन्दी कथा साहित्य को अपने-अपने रंग से समृद्ध करती रही, लेकिन बाबजूद गदल (रंगिय राधव) और पलग (उपेन्द्र नाथ अश्व) के नागर और अमृतराय को छोड़कर ये तमाम लेखक सम्भावनाओं भरा कोई फनक कथा-साहित्य को न दे सके नागाजु के यहाँ कुछ कोशिश जरूर हुई और निराशा ने विल्हेमुर ववरिहा व कुल्लीभाट में अनुभव की प्रामाणिकता को रेखांकित करते हुए कथा में बदने हुए मिजाज का उसी तरह इजहार किया जिस तरह

का पाठ्येय क्षेत्र 'गर्मा' 'उग्र' न घबराते 'धानी' गुजर ॥ लिया है 'नई कहानी' की परम्परा को 'हिन्दी कहानी' में लाने हुए 'गुम की रात' और 'बकून' (प्रमच-)
'मधुमा' (प्रसाद) 'मन्त्रोक्त' और 'तुमने क्या कहा था' में गुंजर रहे ('पूना का कुर्ता' का कोण) (महात्मा) 'पानेज' और 'पत्नी' (जनक) 'रोज' (धन्य) पत्रग (उग्र नाथ धन्य) जगो पटिया को जाह तोर के बाबजूद 'नई कहानी' के लिए बाह्य पूर्ण जमीन हम निराशा की दृष्टि बुन्नी भाट में ही उपनाथ होता है बाबजूद धन्य दुर्गम रोमानी धान्य व्यक्तित्व के निराशा ही एक ऐसा समर्थ सत्य बलि है जिसके यहाँ अपने युग के समर्थ प्रतिनिधित्व के बाद भी नए साहित्य का महत्वपूर्ण सुम्पान का माहा है १

इस समूचे युग में प्रमच- और प्रसाद के बा-ग-ग तमाम क्या सत्य के घ-ग-ग को भी स्वीकारत हुए आ समर्थ बचपार के व्यक्तित्व धारणा के धार बचिवा-प्रसाद पत्र, निराशा और महादयी-तों तरह महत्वपूर्ण होकर आए व इनाब-जोना और जनक, महात्मा और धन्य हो ये और ये धारा ही सत्य का उत्तराध में अनुभव सवेदना की जगह कहानी में उगाह गए विचारों का ही निराने सगे

जनेत्र की 'गान' 'विमान' या दूर-दूर-लेखकों को कुछ और कहानियों का प्रकाशन तिथि को प्रगर यहाँ तय की चर्चा में नजरदार लिया जा सके तो हिन्दी कहानी का यह विस्तार मुलतः तोर पर हम इस सदी के पाँच दशक तक ला छोड़ना है और यही स व हलचलें शुरू होती हैं, जो नई कहानी के रचना उमेय और समीक्षा आचार से जुड़ी हैं

इस बीच प्रमच- अपनी निहायत सा-ग-ग वस्तु को सादा तरीके से कहने रहे और मन-बदल की कहानियों में भावुकता और धरणा के गहरे रंगों से काम लिया जाता रहा मानवीय रिश्तों को बिल्कुल एंग्रेज बनाकर ही पेश किया जाता रहा । जिस तरह कहानी का आदि, मध्य और धन निश्चिन्त था उसी तरह मानवीय सम्बन्धों में भी निश्चितता बूझी गयी और 'कुम्हसनी पुन व साधु पिता' या इसी तरह के सम्बन्ध विरोधों को खटा करके उनसे बराबर एक ही तरह के निष्पक्ष निकाले जाते रहे आयो जित नतिवृत्ता और रामधरित मानस में स्थापित सम्बन्धों को आय समाजो उत्साह के साथ पेश किया जाता रहा और कहानी के माध्यम से 'विदा देन के लिए' 'मनो रजन विधि को स्वीकार किया जाता रहा उसने कहा था' में 'अनुभव-सवेदन' का हल्की चमक जरूर देखने को मिली, लेकिन निष्पक्ष उसमें भी बल बनाए ही दिए गए प्रसाद न प्रसाधारणत्व के चमत्कार में अपनी मुद्रा तय कर ही रखी थी

कहानी के इस समूचे दौर में पहली बार सम्बन्ध और धारणाओं को लेकर

१ 'निराशा साहित्य नए साहित्य की एक महत्वपूर्ण सुम्पान में उसका चतमान समीक्षा-स्तर'-श्री सुरेन्द्र

मानवीय तौर पर सदेह और शकाएँ इनाच'द जोगी, जनेद्र और अनेय के यहाँ देखने में आईं इस सदम में यशपाल की कहानियाँ म नकार जरूर उभरा लेकिन वह एग खास 'मजहब' के तहत होने की वजह से बेहद सपाट होकर ही सामने आया तय की गई आदमी-स्त्री की नियति और प्रतिष्ठित सामाजिक व्यवस्था पर उ होने बड़े ही निमम ढंग में खण्डनात्मक रवैया अपनाते हुए आक्रमण तो किया, लेकिन उसे वे कहानी के आंतरिक रचाव से रमा बसा कर नहीं दे पाए, नतीजा यह हुआ कि उनके यहाँ कहा निया में से विचार सत्य को उपलब्ध न किया जाकर 'उपलब्ध किए गए' विचार-सत्य के लिए घटना चरित्र का आयोजन किया गया इसलिये कहानी की कलात्मक दृष्टि इनाच'द जोगी जनेद्र और अनेय के मुकाबले यशपाल के यहाँ बेहद कम मिल पाई और कहानी जोती जागती सृष्टि की अपेक्षा फारमूले में बंद होकर रह गई यानी कविता में समस्या पूर्ति की तरह इनके यहाँ किसी भी चुने गए विषय पर कहानी लिखने का मंजा हुआ खास तरह का अभ्यास कहानी के तथा कथित ढांचे में चलता रहा फिर भी प्रेमचन्द की अपेक्षा यशपाल में कलात्मकता कुछ अधिक ही रही कलात्मक दृष्टि प्रसाद में भी थी, लेकिन वह गद्य की अपनी आंतरिक बनाबट और भाग और कथात्मक सत्य की प्रकृति में मौलिक नहीं ले पाती थी वे कहानी में या तो प्रचुर ड्रामा क्लबट करने लगते थे या फिर कविता के चित्र उरेटने लगते थे उनके रोमांटिक बोध से समीक्षक को उतना एतराज नहीं है क्योंकि रोमान्टिक अनुभव की भी कहानियाँ बाहिर होती ही हैं और दुनियाँ में बहुत लोग ऐसे होते हैं जिनकी जिद बुझाये तक रोमान्टिक बनी रहती है

इस लिहाज से इनाच'द, जनेद्र अनेय ने कहानी के लिए अनुभव की जमीन को नये सिरे से गोड़ा और तोड़ा था अवधारणात्मक प्रतिष्ठित सत्य चिन्तन से बटकर आदमी को आदमी के रिश्ते में ही पा सकने की मनोबिज्ञान के तहत कोशिश इनके यहाँ हुई थी और इनकी कहानियों का ससार पाठका से बदले हुए मिजाज और बदली हुई रसगता की माँग कर रहा था। समीक्षा स्तर पर इसका नोटिस भी लिया गया था जिससे कहानी के बारे में बदलते हुए समीक्षा रख का अन्दाज होने लगता है और प्रेम-च'द द्वारा 'सभी मानते हैं' के साथ अपनी भी सहमति प्रकट करते हुए कहानी का स्थापित मान मनोरंजन अब हिचकोल लेने लगता है। यह तथ्य १९३५ के विशाल भारत के जनवरी अंक में अज्ञेय द्वारा जन'द के कहानी संग्रह दो चिट्ठियाँ पर की गई समीक्षात्मक टिप्पणी से अन्दाज लिया जा सकता है "जो लोग कहानी सिर्फ वक्त बिताने के लिए ही नहीं पढ़ते, उन्हें यह मग़ह अवश्य पढ़ना चाहिए। लेकिन इस टिप्पणी से यह अनुमान कर से जाना कि कहानी को लेकर पाठक और आलोचक के नज़रिए में एक बारभी क्रान्तिकारी बदलाव आया होगा खुद की गलत नज़रिए के हवाले कर देना होगा, क्योंकि इस टिप्पणी से कहानी के लिए जिम्मेदारों की माँग की

गई थी वह बेलाग नहीं थी, इसलिए कि इस टिप्पणी में जो लोग कहानी सिर्फ वक्त बिताने के लिए ही नहीं पढ़ते, म 'हो शब्द' अभी भी मनोरजन धर्मियों को अहमियत देकर उबमाता चलता है। गो बड़े ही नम्र उग से यह गुजारिश जरूर की गई था कि कहानी पढ़ने में पाठक मनोरजन पाते हुए भी कुछ गम्भीर रख आस तयार कर सकें तो बेहतर हो यानी कहानी के बारे में इतना बदलाव जरूर आ रहा था कि वह अब महज मनोरजन की ही चीज नहीं है उसे गम्भीरता से लेने की भी प्रपक्षा है। चूंकि बावजूद बदलें हुए अपने कथात्मक कोण के लेकर कहानी में 'मनोरजन की पूरी तरह छुनीली दान' में आश्चर्य नहीं हो पाया था इसलिए उसके यहाँ मनोरजन के चलते समीक्षक और पाठक ही उसे क्याकर गम्भीरता से ले पाते होंगे कि जन-द्र घाय की कहानियाँ प्रचलित कहानी ढांच का अतिश्रमण कर चुकी थी और खास तौर पर जन-द्र की कहानियाँ तो उस समय की कहानी परिभाषा में नहीं आतीं और यह कम आश्चर्य की बात नहीं है कि तत्कालीन कहानी के शास्त्रीय स्वरूप से एकत्रित हटा हुई जन-द्र का कहानियाँ की कहानी मानकर ही पढ़ा जाता रहा क्योंकि प्रभाव-प्रवाद ने हिन्दी पाठक की कथा का जो स्टूकचर दिया था जन-द्र की कहानियाँ उससे एकदम भिन्न थीं।

सन् ५० के आस-पास से रचना स्तर पर कहानी का सरगमियाँ शुरू होनी है जिसका सबूत १९५४ में नितांत कहानी की पत्रिका 'कहानी' के पुनर्प्रकाशन में मिलता है और 'कहानी' के सम्पादक श्रीपत राय का यह कथन युद्धोत्तर हिन्दी कहानी में जो गतिराय उत्पन्न हो गया था वह अब जैसे टूट चला है और स्वस्थ प्रवृत्तियाँ बलशाली हो चली हैं। 'भी इस विचार की पुष्टि करता है और यह ५४-५५ का समय ही नई कहानी' के स्वरूप ग्रहण करने की शुरुआत का समय है जिसने सृजन स्तर पर पुरानी कहानी से बदलाव के कारण, समीक्षा स्तर पर अपने अस्तित्व की पहचान के लिए माँग करता गुरु कर दिया था और १९५६ के 'कहानी' में नववर्षाङ्क में श्रीपत को एक दूसरे ही आवाज में इस सत्य की पुष्टि करनी पड़ी थी—'बीच-बीच में मुझे सदेह होन लगता है कि कहाँ मैं समय की गति से पीछे तो नहीं हूँ और इस कारण मुझे हिन्दी कहानी में यह उन्नति परिलक्षित नहीं हो रही है जिसकी आशा करनी चाहिए, यह स्वीकार करने में मुझे आपत्ति नहीं कि कहानी का स्वरूप बन रहा है और मैं शायद अपने पुराने सस्कारों के कारण कहानी में यह माँग कर रहा हूँ जो आज उसका सत्य नहीं है।' कहानी में आया हवा बलाव ५७-५८ तक समाप्ति स्तर पर पहचान जाने लगा था—कम अब कम उसकी पहचान के लिए समीक्षक उभर रहे थे लेकिन ६० से लेकर ६२ तक 'नयी कहानियाँ' के हाथिए पर नई कहानी की पहचान में जा निबन्ध लिखे गए और उनमें जा समस्याएँ उठाई गईं उनमें मनोरजन पक्ष के बावजूद कहानी समीक्षा में गुरुघानी तौर पर एक महत्वपूर्ण पृष्ठ जुड़ा और नवीजों के तौर पर ६२ से लेकर ६६ तक उत्तेजनापूर्वक कहानी पर विचार होना रहा,

जिन्दगी के 'पूखे और दबावा' को कलात्मकता के साथ क्या-स्तर पर अभिव्यक्ति दे रहे हैं और हैं अनेक लेखक—गंगाप्रसाद विमल, महोष सिंह, कामता नाथ गोपाल उपाध्याय, हृषीकेश—जो आधुनिक जिन्दगी और उनके नतीजा को कथात्मक अभिव्यक्ति बनाकर पेश कर रहे हैं

विद्वत्-विद्यालया में कहानी-समीक्षा की हालत यह रही कि उसके लिए किसी स्वतंत्र समीक्षा तंत्र की जरूरत तक महसूस नहीं की गई बल्कि इसकी एवज में नाट्य शास्त्र की पाठ्यपुस्तिका को ही कहानी के लिए भी स्वीकार कर लिया गया—कथानक के उतार-चढ़ाव, प्रयत्न सघन चरम सीमा, अन्त या फागम को खोज कर ही उनसे समीक्षा स्तर पर कहानी सत्य को पाने का संतोष कर लिया गया कहानी और नाटक के प्रकृति भेद को खलाशित न करते हुए उनमें परस्पर समानता विभिन्नता को महज इस लिए पूछ लिया जाता रहा कि इतिफात्तन के दोना ही क्या रूप हैं कहानी समीक्षा का अन्तः परीक्षाभा में पूछ जान वाले प्रश्नों की इस विदग्धता से ही लगा लिया जा सकता है कि अमुक कहानी किस तरह नाटक बनाई जा सकती है और अमुक नाटक किस तरह कहानी इस समीक्षा पद्धति के नाटक की कहानी का यह मामूली सा मनो रजक पहलू है। जिस तरह अन्ध से इनके यहाँ सृष्टि उत्पन्न होती है, उसी तरह तमाम समीक्षा पद्धतियाँ (कुल मिलाकर एक ही) एक ही समीक्षा पद्धति यानी अरुण भुवि के नाट्य शास्त्र का नतीजा हैं

कहानी समीक्षा का यही बीजदिया विवेक घटना प्रधान चरित्र प्रधान या प्रभाव प्रधान की जरीबा से कहानी का भूगोल पढ़ता-पढ़ाता रहा और इस तरह निरन्तर विद्यार्थियोंचित सहजों में कहानी का समझना-समझाना चलता रहा

कहानी सुनने सुनाने से लेकर पढ़ने पढ़ाने तक तो जीवन से जुड़ी होना के कारण किसी तरह महत्व पा गई लेकिन कक्षाभा में उस पढ़ने-पढ़ाने और विद्यार्थियोंचित उसकी समीक्षा स्थिति को देखकर तो यही अन्दाज होता है कि उसमें गम्भीर विवेक का चुनाव के तहत, पाठ्यक्रम में अपना स्थान नहीं बनाया उसे तो बंदाचित यही सोचकर पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया जाता रहा, ताकि छोटा कक्षाभा में विद्यार्थियों का देना भविष्य और चरित्र निर्माण की निहा दी जा सके और ऊँचा कक्षाभा में कविता भाषा विज्ञान या समीक्षा के मूल प्रकार टटोलने-टटोलते विद्यार्थियों को पक्की हारो ऊँची तद्विषय को कुछ मनोरंजक सामग्री मिल सके हालाँकि बिहारो पदमाकर के रति प्रसंग गत दोहा और कविता से भी उनका कुछ कम मनोरंजन नहीं होता बहरहाल विद्वत् विद्यालय कक्षाभा में समूचे पाठ्यक्रम में से जिस पाठ्यक्रम को सर्वाधिक अग्रगणीरता से

जमाना तादाद वाले पाठनों के भाजन के हैं, चाहे उनके बारे में यह तथ्य कविता की वास्तव उतना सही न भी हो लेकिन उपयोग और मासिकर छोटी कहानी के बारे में जमाना तादाद वाले पाठना की ही भूमिका ग्रन्थ करने हैं कविता की समीक्षा करते समय इष्ट कविताओं को चाहे इन्हें तौर पर एक बार और देखा सेना के पास करते हैं, लेकिन कहानी की समीक्षा के लिए वे इसे समीक्षा के नित्य दायित्व का हिस्सा नहीं मानते और मानने भी नहीं तो क्या समीक्षा में इसका स्थान पैदा नहीं करते नतीजा होता है कि स्मृति के नाखून टोहने हुए कलम-पत्रक पढे हुई कहानियाँ के पुष्पाने से क्या-समीक्षा के दायित्व का निर्वाह करने रहने हैं इस तरह उनकी समीक्षा जो वे पाती है वह कहानियाँ का मक्षेप और सनही खाना ही होता है

कहानी, समीक्षक के दायित्व में अपने लिए जिस पाठ प्रक्रिया या पाठ-विधि की माँग करती है, यह पाठ-विधि जमाना तादाद वाले पाठकों की 'पाठ-विधि' से भिन्न प्रकृति की होगी, हालाँकि इस युवाइयों को महसूस करते हुए कि 'क्या-समीक्षा' की 'पाठ-विधि' उसकी दृष्टि सामर्थ्य का ही नतीजा होगी इसलिए उसके प्रत्यक्ष प्रत्यक्ष स्तर होंगे ही, लेकिन इस स्थान के माध्यम भी कि क्या की सही पाठ-विधि न केवल समीक्षक की दृष्टि सामर्थ्य का इजहार और नतीजा ही होगी, यत्कि उसकी दृष्टि सामर्थ्य का वह इजाजत भी होगी

इसीलिए मैंने क्या की पाठ प्रकृति की पहचान व उसके माध्यम से क्या-सत्य की 'उपस्थापन' करने पर जोर दिया है, यह इसलिए भी कि एक तो इस समीक्षा विधि के चलते हम क्या-सत्य और सत्य की बारीकी से परख पाते हैं और उसकी सख्तीय भनक के कटीब-कटीब समझने की युवाइयों में रहते हैं दूसरे यह कि इस समीक्षा-विधि के अभाव में हम कहानी सत्य की कथानिक छत्र से परीक्षित कर पाने में लगभग असफल रहते हैं और तब हमारे भटक जाने व फतव देने प्रत्यक्ष क्या-सत्य की सर हदों पर ही जूमते रहने की ज्यादा आशंका बनी रहती है तब हम अक्सर क्या विचार की सही निगा से दृष्टिकरण अपने अस्तित्व को प्रमाणित करने की कुछ ऐसी हठ-कम्प स्थिति में पड़ जाते हैं जमी कि वह पहलवान जिसका रियल में अपने प्रति हारों पर बग नहीं चलता और विचार-धूम्रता की स्थिति में वह 'रकी' ॥ ही उभर जाता है एक मौजूदा उदाहरण इस सम्बन्ध में मैं प्रस्तुत करता हूँ जो क्या-विचार से हटकर निरन्तर व्यक्तिगत छोटी-बड़ी का मतलब पैदा करता है और जो साहित्य-विचार की चीज कम व्यक्तिगत दोस्ती दुश्मनी की चीज जमाना है "फिर भी अद्भुत जो की यह पढ़कर कम संतोष न होगा कि जो चौहान जो उनके सभी प्रभाव नहीं रहे, उनके अनुसार भी वह अपने आप में एक सुव्यक्त कहानी है उनकी आलोचना भी अपने आप में सुव्यक्त रहती है—किसी भी प्रश्न के लिए एवम् अन्त आज़ किसी के लिए भी 'अपने आप में एक सुव्यक्त कहानी लिखना आसान हो गया है बिना पत्र

‘साधारणतया अच्छे कहानी’ कहने में किसी को भी बठिनाई न होगी और चौहान जी जैसे अच्छे प्रयत्न साधारणतया अच्छे आलोचना को सतोष भी हो सकता है। इस उदाहरण में गौर करने लायक एक बात यह भी है कि कथा की बनावट समीक्षा, कथा की पहचान से तो भटक कर रह ही जाती है उसका उद्देश्य भी या तो प्रशंसा करना रह जाता है, या फिर दुश्मनों निभाना। इस दोस्ती-दुश्मनी का दोस्ती-दुश्मनी को उतना धामियाजा नहीं भुगतना पड़ता, जितना कि स्वयं समीक्षा को और तब विवेक सम्मत प्रामाणिक आलोचना की अनुपस्थिति में प्रति साधारण रचना को श्रेष्ठतम होने का प्रमाण-पत्र दे दिया जाता है और थोड़ा रचना को प्रति साधारण होने का। काव्य-समीक्षा में भी पिछले दिना यह नाटक देखने में आया था, जब सतोष कानौदिया की ‘प्रो आकाशी’ को उत्कृष्ट रचना ठहराया गया था और ‘उबशी’ को उसके मुकाबले स्तरहीन नतीजे के तौर पर आलोचक प्रशंसा और निन्दनों की कोटिया और खेमी में बँट गया है उससे विवेकशील समीक्षक होने की प्रशंसा करना बेमानी होता जा रहा है। नई कहानी में अनुभव की प्रामाणिकता और रचना प्रक्रिया में निस्संगता की पैरवी जो समीक्षक करते हैं, क्या वे खुद भी अपने समीक्षा विवेक में प्रामाणिक और निस्संग हैं ? हिन्दी की नई कथा समीक्षा में इस प्रश्न के प्रति यदि विवेक पूर्ण रूप नहीं अपनाया गया तो कथा की समीक्षा की बदतर स्थिति से गुजरना पड़ सकता है।

लेकिन इसका मतलब यह नहीं लिया जाना चाहिए कि सम्प्रति इस सदन में स्थिति विशेष स्वस्थ ही है। नई कहानी की समीक्षा ने कथा-विवेक की नई गुरुप्राप्त करके, जहाँ तत्त्व परक कथा समीक्षा से स्वयं को मुक्त कर कथा-विचार के लिए नयी सम्भावनाओं और नए आयामों में उपलब्धता के सकेत दिए थे वहीं से व्यक्तिगत सम्बन्धों के निर्वाह के खतरे में भी वह पड़ गई है और कौन कह सकता है कि यह नया खतरा पुरानी तत्त्व परक कथा-समीक्षा के खतरे के मुकाबले ज्यादा खतरनाक साबित न होगा। कुछ समीक्षकों ने तो राजनैतिक दल-बदल वाला रविया अपनाकर नई कथा की समीक्षा को खासा प्रजातन्त्र (?) बना दिया है, मतलब वे बल तक प्रशंसा के जिस खे में से ‘रमद पा रहे थे आज उनसे तोड़ा-टूटन कर सी है और पूरी सम्भावना है कि आने वाले बल में वे अपने पुराने खे में भी लौट जायें और आज जिनकी प्रशस्तियाँ लिख रह हैं कल उन्हीं के खिलाफ बलप का जे ह्राद भी छोड़ दें।

कविता की समीक्षा के मुकाबल कथा-समीक्षा कम काफी कुछ सुस्थित है, इसलिए कि छोटी कविता के अर्थ-सम्भार और संवेदन विस्फार को समीक्षा बुद्धि की जित लघु ढंग से विश्लेषण स्तर पर पाया जा सकता है उससे कथा को नहीं। यानी छोटी कविता अपनी ध्य प्रकृति और विविष्ट रूप विश्लेषण के लिए जिस समीक्षा विवेक की माँग करती है, उसमें वह विस्तार और समग्रता चुकती है, जो कथा समीक्षा के लिए जरूरी है। एक सीमित दूरी तक नजर मड़ा कर छोटी कविता के रचना संगठन को

महोन रेशा के साथ भी बूझा जा सकता है, लेकिन क्या-समीक्षा में उस कौशल की दरकार है, जो हवा में उड़ती पौच-सात गेंग को त्रम से अंधर में ही रोते रगता है और माहोन में उनके समग्र प्रभाव को रेखांकित करता उनता है, छोटी कविता और छोटी कहानी प्रवृत्ति एक दूसरे से अपने रचना-मिजाज में भिन्न हैं उन् दोना का अन्तर अपने-अपने माध्यमों का अन्तर है दोना ही साहित्य रूपों के अपने-अपने माध्यमों के अनुकूल अलग-अलग समीक्षा बुद्धि के अनुशासन को दरकार है

परम्परा से पती आ रही वाक्य-समीक्षा के चर-मुष्ट छोटी कविता को समझने में किसी स्तर पर कारगर हो सकने हैं होने भी हैं—किसी हद तक कविानुमा कहानियों के लिए भी—इसलिए कि कविता में अभी तक भी अपनी आदिम प्रवृत्ति में आमूल परिवर्तन नहीं किया है—नो कि कहानी ने किया है, ऐसा मेरा कहना नहीं है—लेकिन क्या-समीक्षा में इन फामूला का कोई बज्रूद नहीं रह गया है वह इसलिए भी कि बावजूद अपने परम्परागत कहानी नाम के उसने पाठक से आन्तरिक अपेक्षाएँ कर स्वयं को बिल्कुल अलग और नए संदर्भ में प्रतिष्ठित कर लिया है इस की बात में निश्चय भी चुका है इसलिए कविता की समीक्षा के पमान से (और चली जाती हुई कहानी समीक्षा के पमान से भी) कहानी समीक्षा का भी काम लन वाले मित्र एक औसत समीक्षा-पमान का गलत जगह स्तेमाल कर रहे हैं अनेक बजहों में से एक बजह यह भी थी कि ऐसे समीक्षकों के यहाँ कविता समीक्षा-पद्धति से क्या-विश्लेषण का काम लिए जाने पर फतवों और भविष्य वाणिया के लिए काफी गुंजाइश रही और इस बजह से यह भी रहा कि इहे क्या समीक्षा के तहत अतिविरोधी वक्तव्यों के लिए भी पर्याप्त मौका मिला बावजूद इसने कि मित्रों ने कविता समीक्षा-पद्धति को कहानी पर लागू करने के समर्थन में बाद विदेशी लेखकों के उदाहरण भी एकत्र कर लिए, लेकिन इससे भी उनकी समीक्षा पद्धति गर जुम्मेदार ही रही

कविता की समीक्षा-पद्धति को बतौर क्या-समीक्षा पद्धति के स्तेमाल करने का साफ मतलब यह है कि आप क्या की सृष्टि को मौनिक होकर उपलब्ध कर पाने में वही मोछे पड रहे हैं कविता की अविति और काय को यह पाने के लिए समीक्षा बुद्धि के जिस छल-स्फुरण से काम चलाया जा सकता है, क्या सत्य को बूझने में वह नितांत नाकाफी है

अगर किसी विदेशी समीक्षक ने किसी विदेशी कहानी पर छोटी कविता की समीक्षा-पद्धति की आजमाइश की है तो इसीलिए वह आपके यहाँ भी क्या की अन्तिम सही समीक्षा-पद्धति मान ली जाय ? मेरी निगाह में यह क्या-विचार की सही 'पहचान नहीं होगी और हो सकता है कि मैं गलत हूँ' छोटी कविता को विश्लेषण-पद्धति को छोटी कहानी के सत्य को पान में स्तेमाल करना एक प्रयोग तो हो सकता

है और प्रयोग के लिए साहित्य में पर्याप्त छूट भी है लेकिन यह वहाँ जरूरी है कि हर प्रयोग सफल ही होता है लेकिन जो जरूरी है वह यह कि अमूल्य प्रयोग से सबक तो लिया ही जा सकता है और छोटी कहानी की 'पहचान' के लिए मित्रा ने जो सबक लिया है वह यह कि एक के यहाँ के असफल प्रयोग को अपने यहाँ न सिर्फ सफल साधन प्रयोग ही मान लिया है बल्कि हिमायन करते हुए उस समूची कथा-समीक्षा के लिए ही 'आदर्श' मान लेने के लिये कहा गया है

अगर कथा की समीक्षा-पद्धति की नयी धुरूपान होनी ही चाहिए और कि उसमें आपसी विचार-क्षमता भी वहाँ रेखांकित हो, तब यह जरूरी है कि कविता की समीक्षा-पद्धति जिसकी कि दोष और सशक्त परम्परा है और जिससे किसी स्तर पर कहानी सत्य को 'टोहन' में पितामो ने भी काम लिया है मुख्य तौर पर कथा विचार में उनसे निजात पा ली जाय, गो मदद उमने ली जा सकती है और मदद संगीत और स्थापत्य कला से भी ली जा सकती है लेकिन वह मदद ही होगी और उस उतना ही मानना भी चाहिए प्रतीका विम्या, सयकारी, भाषा की कविसमयता और रामानी अनुभूतियाँ पर रोझना और उहे अपने कथा विचार के लिए खास 'प्रायुष' बनाना, कहानी से कविता की माँग करना है और ऐसे समीक्षकों की तादाद काफी है जो न सिर्फ कहानी से बल्कि हर साहित्यिक-विधा से कवितानुमा हो जाने की माँग करते हैं, उपमास का महाकाव्य कहते हैं और कहानी की गीत से तुलना करते हैं गो पितामो के मुकाबले उहोने थोड़ा संस्कृत होने का सबूत जरूर दिया है, इसलिए कि पितामो ने तो उपमास को बल और कहानी का भेदक बताया था

दरअसल, इस नस्ल के समीक्षक कविता की समीक्षा-बुद्धि से इस कदर आक्रान्त हैं कि साहित्य के किसी भी दूसरे 'रूप' को मौलिक होकर पहचान ही नहीं पाते कथा के भाव-विचार को जोहने के लिए प्रतीक विम्व, सयकारी और भाषा की कवि-समयता से जा समीक्षक मुख्य काम लेते हैं, उनके हाथ कथा-सत्य के नाम पर कथा का बाहरी चौखटा ही लगता है मनोरंजन तो तब होता है जब खासे वस्तुवादी समीक्षकों को इही रूपवादी नुस्ता से कथा-सत्य को टोहन हुए देखा जाता है और साथ ही रूपवादी खतरा से आगाह करते हुए भी पाया जाता है

जो समीक्षक कविता और कहानी में दूर तक प्रभेद नहीं कर पाते, वे ही कविता की समीक्षा-पद्धति को कहानी के लिए भी स्टेमाल करने की सिफारिश करते हैं जबकि सत्य यह है कि बावजूद अपने पूरक सत्या के कविता और कहानी के माध्यमों की अपनी अलग-अलग मार्गें हैं और समीक्षा-विचार में पृथक्-पृथक् कोणों से बूझने जाने की उहे जरूरत है यहाँ तक कि उनकी समीक्षा की शब्दावली और मुहावरे भी दो छोरों की चीज हों ? इसलिए कि कहानी के भाव विचार को मतलब उसकी सदृशप्टता को विश्लेषित करने के लिए चली आती हुई कविता की समीक्षा शब्दावली

नावाफी है और वह नावाफी सब तो खुद कविता को विश्लेषित करने में भी होती जा रही है

नयी कथा की समीक्षा शुरूआत में कविता के समीक्षा मुहावरे से मदद ली जा सकती है, लेकिन यह मदद एक दरम्यानी इन्तजाम ही है वह भी तब तक, जब तक कि कहानी की प्रभाव पूर्ण समीक्षा-विधि विवक्षित नहीं हा जाती या उन ऐक्सेलर-वादियों को इस समीक्षा विचार से कोई फल नहीं पड़ता जिनके यहाँ समूचा ग्रहण एक ही घट में निवास करता है तब अगर साहित्य की समान विधाएँ कविता में ही प्राप्त हैं तो हो और कविता का ही समीक्षा-विचार कहानी को भी ब्रूक ले जाय तो वह क्यों न ब्रूक ले जाय ?

और जो मित्र पाश्चात्य समीक्षका की कहानी-विचार में दुहाई देते हैं उस सदर्थ में इतना ही समझ लेना काफी होगा कि हिंदी नई कहानी के पृथक् समीक्षा-विचार की तरह छोटी कहानी के लिए वहाँ कोई पृथक् समीक्षा-विचार ईजाद नहीं किया गया है, और न तो कहानी पर ही हिंदी नई कहानी की तरह समीक्षा चर्चा जोश-खरोश के साथ हुई है वहाँ तो सिर्फ उपन्यास की समीक्षा-बुद्धि से ही मुख्यतः कहानी को समझने की कोशिश की गई है जो यह भ्रम फैलाता है कि गद्य रूप उपन्यास और कहानी को प्रवृत्त्या एक दूसरे के जातीय होने की वजह से एक दूरी के बाद या कि एक दूरी के पहले दूर तक भ्रमगाया नहीं जा सकता, इसलिए यह आपत्ति उठाना तक संगत नहीं होगी कि ई०एम० फारस्टर ने जो विधि उपन्यास-विचार के तई प्रपनाई है उसको कथा की समीक्षा-बुद्धि के लिए उपयोग में नहीं लाया जा सकता लेकिन इतना तो जरूर कि उपन्यास के अन्तगठन पर विचार करने की अपेक्षा कहानी के अन्तर-संगठन को विश्लेषित करने के लिए कुछ ज्यादा महीन हान की जरूरत तो है ही क्या फल पड़ता है, अगर जिस विधि से आपने छोटी कहानी को विश्लेषित किया है उसी विधि से किसी दूसरे विदेशी समीक्षक ने भी लेकिन फल इससे जरूर पड़ता है कि एक विदेशी समीक्षक को अपनी राह चलता देख (या उन्नी की राह खुल चलते हुए) उसके नाम का समझन पाकर आत्म विश्वास में आप इतन गहरे उतर जायें कि कथा के मौलिक समीक्षा-विचार को ही नकार उठें शायद यह बातें कम ही लोगों के जानने की नहीं है कि अपने समझन में बावजूद किसी विदेशी नाम के अगर आपको 'बान' मही बोलती तो फिर वह नहा ही बोलती आप चाहे बराबर बोलते रहे और कभी-कभी तो समझारी चुप हो जान में ही होती है (लेकिन समझारा से चुप होना भी कितना मुश्किल है ?)

कथरीन मन्सफिल्ड की कहानी 'भक्ती' की समीक्षा में यदि एफ० डल्लू० बेट्सन व बी० साहेविच ने छोटी कविता को विश्लेषण-विधि से काम लिया है तो उसकी प्रयोगात्मकता की सराहना की जानी चाहिए । लेकिन समूचे कथा साहित्य का विश्लेषित

हर पाने में उस पर इतमीनान नहीं हो किया जा सकता प्रतीक विम्ब, लयकारी, रूपक, अ-योक्ति और भाषा की कवितमयता कथा-समीक्षा में मानक नहीं हो सकते और अगर हो सकते हैं तो सिर्फ उसी तरह जिस तरह कथानक, चरित्र चित्रण, कथोपकथन आतावरण आदि और इसीलिए कथा की गाड़ी पहचान देने में भी वे सक्षम नहीं होंगे। यों ये नुकते ही क्या, सिर्फ भाषा के जगिए ही कहानी की अन्त सरचना से वाकिफ होने की कोशिश की जा सकती है लेकिन कोई भी एक नुकता या कि कुछ नुक ने समस्त कहानी सत्य की पाने में कारगर साबित नहीं हो सकते इसलिए जरूरी है कि कहानी की 'पाठ प्रक्रिया' के सहारे लेखकीय रचना प्रक्रिया से जुड़ते हुए समूचे सदन को परीक्षित करके, कथा को समझने में जा समीक्षा 'पहचान' दी जायगी वही सही 'पहचान' होगी।

प्रतीक, विम्ब, रूपक, लयकारी और अ-योक्तियों से कथा-सत्य को जोड़ना रचना के केन्द्रक भँवर में न उतरकर सरहदों पर ही ठिठक जाना है चाहे उस आइरिश लेखक की इस बात से आप नाइतिफाकी भले हो रहें कि कहानी सरहदों पर लड़ी जाने वाली गुरिल्ला लड़ाई है लेकिन इस बात से नाइतिफाकी कैसे रख सकते हैं कि प्रतीक विम्ब, अ-योक्तियों में कसी-बैधी समीक्षा बुद्धि कथा सत्य के केन्द्र में न पठकर सरहदों पर ही गुरिल्ला युद्ध करती रहती है ये नुकते छोटी कविता के सत्य को पाने में ता मदद कर जाने हैं वह इसलिए कि कथाकार की अपेक्षा की अपने सत्य पर सीधा आक्रमण नहीं करता, वह बड़ी शिष्टता और औपचारिक आडम्बर के साथ उसे अभि-व्यक्ति देता है और कभी-कभी तो वह प्रतीक-विम्बों की ही पहलिया बुझाता रहता है, सत्य को स्पष्ट ही नहीं करता कहानी में इसके लिए गुंजाइश ही कहाँ है ?

दरअसल, प्रतीक-विम्बा और लयकारी के सहारे रचना सत्य को झूझने वाली समीक्षा विधि सरल पड़ती है और जोखिम से कतराने वाले समीक्षक इस राह चल निरुन्ते हैं, खासकर वे समीक्षक जो प्रेमचंद के इस जुमले "मनुष्य जीवन की सबसे बड़ी खालसा यही है कि वह कहानी बन जाय और उसकी कति हर एक खजान पर हो से प्रेरणा पाकर कथा समीक्षा में बहुत जल्दी कहानी हो जाना चाहते हैं और कहानी समीक्षा की बेहद छोटी उम्र में वे अभी से ही कहानी हो भी गए हैं उनके परस्पर विरोधी वक्तव्यों और अवसरवादी समीक्षाओं ने कथा पाठक के पहाँ उद्धू आपस को ये पक्षियाँ ताजी करदी हैं— कर रही है इस कदर मशहूर बदनामी मुझे 'जिहे वह इन समीक्षकों की समीक्षाओं का खयाल आने ही गुनगुनाने लगता है

इन नुकता से कहानी पर सोचने में आप एक आध 'मक्खी' तो मार सकते हैं लेकिन कथा के सश्लिष्ट और समग्र सत्य को उपलब्ध नहीं कर सकते जिसे उपलब्ध करने के लिए बेहतर रास्ता पाठ-प्रक्रिया ही है अमरवान्त की कहानी दोपहर का भोजन' एक साधारण मध्य बित्त परिवार की गरीबी, बेकारी और भुखमरी से गुजरने

की कहानी है, शुरू में यह कहानी गरीबी और भ्रष्टाचार की उतनी नहीं लगती जितनी कि सिद्धेश्वरी के दुर्भाग्य की पाठ प्रक्रिया के सहारे कहानी से जुड़ते हुए यही लगता है कि सत्यक पूरे परिवार जनों के इलावा कुछ अनिश्चित संवेदना सिद्धेश्वरी के प्रति पाठक में सुरक्षित करना चाहता है। उसका खाली पेट पानी पी लेना फिर बेहोश हो जाना, एक दूसरे से सारे परिवार को जोड़े रखना और झूठ बोलकर एक-दूसरे में दिल धरपी जगाना और खुद का घात में बांधो रोटी खाकर ही भयभूखे बच्चों के लिए भोजन बहाना। लेकिन यह कहानी का ऊपरी ढाँचा ही है, सत्यक पाठ-प्रक्रिया से जुड़ते हुए जिस बिन्दु पर आप रुकते हैं वह मुन्नी चट्टिका प्रसाद का पूरा कहानी से कटा हुआ बड़ा भावमय सा वाक्य है—“गंगाधर का बच्चा की लड़की की माँ तो हो गई। लड़का एम० ए० पास है।” और लेखक की इस टिप्पणी के साथ कि ‘सिद्धेश्वरी हठात् चुप हो गई। आप भी चुप हो जाते हैं और सोचने लगते हैं और हठात् कहानी से कटा हुआ मुन्नीजी का वह वाक्य क्या का भय-वैश्व हो जाता है और समूची कहानी को एक सूत्र में पिरोता हुआ उसे सबका भलग सम्मेलन में प्रतिष्ठित कर देता है और तब यह कहानी गरीबी, बेकारी और भ्रष्टाचार की कहानी न रहकर, जिसके लिए यह सब सहन करने भी आवश्यक रहा जा रहा है, उस बाहरी प्रतीक्षा की कहानी हो जाती है उसी बाहरी प्रतीक्षा की जो प्रेमचंद के यहाँ ‘प्रोदान’ में हारी की मरजादा है “और तब न मानूँ कहाँ से उसकी (सिद्धेश्वरी की) आँखा से टप टप आँसू धूँ लगे का अर्थ ही बदल जाता है। बेकारी, भ्रष्टाचार, गरीबी और प्रमोद की बीमारी सिद्धेश्वरी की महा रुला पायी, लेकिन गंगाधर की लड़की की माँ की किसी दूसरी जगह तो हो जाने की सूचना उसे दिला देती है। वह अपने बड़े लड़के रमेश के लिए जो एक झूठ छपन मन में सँजोए रहती है— कि भैया की सहर में बड़ी इज्जत होती है पढ़ा लिखने वाला मैं बड़ा आदर होता है। गंगाधर का लड़की की किसी एम० ए० लड़के के साथ गान्धी तो हो जान के कारणे आपात से दूट जाता है और मुन्नी चट्टिका प्रसाद समस्त वह गरीबी, बेकारी और भ्रष्टाचार से जिस विश्वास की आधार बनारर मोर्चा से रही थी वह आधार ही छिन जाता है। और तब यह कहानी केवल मुन्नी चट्टिका प्रसाद के परिवार की कहानी न रहकर समूचे मध्य वित्त-परिवारों की उस विराट् निपटि से जुड़ जाती है जो अपनी सोखनी सामाजिक प्रतिष्ठा के लिए ही सारे दुःख-मर्हता का सहारा करते चले रहे हैं और इसी की सुरक्षा का अपने जीवन का ध्येय बनाए हुए हैं।

इसी के चलते जीवन की तमाम विचित्रताओं में दूबन का प्रहमान निर बग़र जुड़ते सते हैं और इसी कारण अपनी नजरों में सम्मानित होने का बहम बनाए रहते हैं और जिस दिन यह बहम टूटता है उस दिन वे दूसरों की नजरों में बाढ़े न भी गिरते हैं। लेकिन अपनी नजरों में बेहम गिर जाते हैं जीवन के सारे मोर्चों पर उठे हुए। और पराजय का अनुभव होता है। उसी सामान्य सामाजिक प्रतिष्ठा का दूब जाता

या तो उन्हें मुझी चंद्रिका प्रसाद की तरह 'घाने मुँह होकर निश्चिन्ता के साथ सने रहने का और ले जाना 'उद्यम से बेफिक्र कर देना है, या फिर सिद्धेश्वरी की तरह धाँसू बहाने के लिए विवश लेकिन व परिवार में इस खोखली सामाजिक प्रतिष्ठा के शव को महसूस जरूर करने हैं जिस पर भविष्यी भिन्नभिन्न होती हैं यह आश्चर्य नहीं है कि गंगागण बाबू की लड़की की शादी की मूचना देने से पहले मुझी चंद्रिका प्रसाद बड़े आत्मिक ढंग से जिना किमी प्रयोग के निर्विकार स्वर में 'भविष्यी बहुत हो गई हैं का गिनायत करते हैं और कहानी के अंत में भी—'सारा घर भविष्यी से भन भन कर रहा था की लेखनीय टिप्पणी के साथ परिवार में इसी सामाजिक प्रतिष्ठा के शव की उपस्थिति का अहसास दिया जाता है यानी जो मध्य वित्त परिवार जिन्दगी के तमाम तूफानों को झेलते हुए टूटने और हताश होने का अहसास नहीं होने देना, बल्कि किसी स्तर पर सिद्धेश्वरी के यहाँ वहाँ कुछ हुआ क्या ? की आशावादिता से जुड़ा रहता है, टूट-निकल जाता है

इसी तरह निमन वर्मा की 'पिक्चर पोस्टकार्ड कहानी है, जिसमें बात-चीत में एक प्रसंग बड़े ही आत्मिक ढंग से आता है और उनमें ही आत्मिक ढंग से समाप्त भी हो जाता है निजी परेश से उसके कम्प्युनिस्ट होने के बारे में पूछना है और परेश उससे उनकी उम्र की बात पूछने लगता है—' निजी अगर तुम्हारी बीती हुई उम्र के पिछले पाँच साल तुम्हें कोई लौटा दे तो तुम क्या करोगे ?

'म आमी में चला जाता' निजी कुछ देर विस्मित सा एक टक मुझे निहारता रहा 'परेश मुझे एक बात का हमेशा दुख रहेगा पिछली लड़ाई में मैं बहुत छोटा था वर्मा में जरूर जाता । और बात समाप्त हो जाती है 'कहानी फिर भी चलती रहती है लेकिन कहानी में युवका की बेकारी भटकाव और अकेलेपन को दूर करने के लिए साथ पढ़ी लड़कियाँ का साथ एकदम पृष्ठ भूमि में चले जाते हैं और युग के बड़े सत्य फासिज में और कम्प्युनिज्म से जुटकर एकदम नए सद्य में अग्र्य खोलने लगते हैं । कहानी का समूचा बिजरा हुआ सा कथ्य जो किसी स्तर पर अब तक सतही और रोमांटिक प्रतीति दे रहा था एक दारणी अपनी हल्की कच्ची और अफेयर जती जानकारी देने से ऊपर उठकर, युग के बड़े सवाल को समझने और हल करने का अंग बन जाता है और कहानी की तमाम विस्तृतियाँ गम्भीर और सायब दिशा ले लेती हैं इसी तरह 'कोसी का घटवार में शेरर जाशी का रिटायड नायक गुसाई सिंह नछमा से बातचीत के दौरान पतली सोव स आग कुरेदने लगता है तो कहानी गुसाई के अकेलेपन और निरुद्देश्यता से हटकर जिन्दगी को यादा में जीने से जुड़ जाती है ये तमाम प्रसंग कहानियाँ में नितात आत्मिक ढंग से और सतह से दखने पर मूल क्या से विच्छिन्न और महत्वहीन होकर आए हुए लगते हैं लेकिन क्या की 'पाठ प्रकृति का गम्भीरता से परीक्षित करते हुए जब इन प्रयोगों, उड़ती हुई और भूलें स आजात वाली बात चीत

पर टकराकर सम्झौता में मोहता रहता है तो मनुष्यी कहानी का परिणाम ही क्या जाता है और मेमोरीय काल के शासन उद्योगों का क्या फल आता है इसका उत्तर है कि मनुष्य में म मानव कहानी की 'पाठ प्रवृत्ति' की मही पहचान को गहरा जाय और उसके माध्यम से कहानी के केन्द्रीय स्तर में कुछ जाय विमर्श भगवत् होय है कहानी के समस्त भाव को पाने की कोशिश

नई कहानी में कहानी की समस्तता और कथा के संदर्भ सामान्य को पहचानना मानी सम्झौता की पद्धति का स्वरूप है कि वह समीक्षा प्रकाश-मौ कर्ष के दृष्टि से क्या है कि मेमोरीय में कहानी के 'काल' में किसी भी 'काल' परिवर्तन की म तो सम्झौता जाता है और म साधारण-कथा ही - (काल) भी 'काल' परिवर्तन की समस्त सम्झौता ही भी मही ओ उमारी साधारण-कथा क्या मही ही है ?) और कथने केता है मही एक स्तर में परिणाम के क्या एक विचार पर भी प्रकाश है कि 'काल' मेमोरीय म प्रयोग करने की प्रवृत्ति साधन के कथना की मही कहानी-कारों में भी है और कथना की तरह क्या कहानी-कारों भी केवल प्रयोग के लिए किसी भी है इसका प्रयोग-मानी कहानी-कारों में मही विचार का साधारण विचार है 'कहानी के साधारण-कथा में भी काली परिवर्तन हुआ है कहानी में ओ भीतर पर म मानव नाम से जानी जानी की समस्त कथनों में कही कहीं 'मौलिक परिवर्तन हुआ है' 'समाज-वृद्धि की एक साधारण-कथा सपाट पढ़ने में 'नई कहानी' को समझना म विचार समस्त पर मही विचार है ? क्या इस मही कथा-मौलिक की कुछ साधन मही का मही है ? क्या कि मेमोरीय का साधन मही है पर इसका ही माना ही जा सकता है कि इस तरह की कथा-मौलिक के नाम पर की नई विचार-मही म कथन और समस्त के लिए काली कुछ सुझाव होनी है

इसी स्वर में कुछ विचारों का एक साधन समीक्षा की तरह यह है कि विचार-मही मही कहानी-कारों में मेमोरीय उमाएँ गुप्तों कथने है और उन्हें गुप्त विचार समीक्षा की है विचार म मानव है और इस मही म साधारण-कथा के लिए गुप्त विचार को उमारी नेत्र मही है कि कहीं उमाएँ गुप्तों का कहानी ही म के गुप्त मही मोल कहानी मही हुई मही उमा हो गई, और उमाया की भी मही मौलिक है कि इस दिन साधारण उमा गुप्ति कि विचार-मही मही की कहानी भी गुप्ति ? एक तो कहानी की पहचान उमाया की विचारों के देना और मही म उमाया की ही कहानी मान लना, क्या समीक्षा का कथा तो विचार-मही मही है ? कहीं तो विचारों के साधन को प्रयोग की प्रमाण-मही के साथ विचार-मही देना माना क्या रूप छोटी कहानी और कहीं कथन के लिए की मही पहचान नेत्र मही परमपरा प्राप्त कथन साधन का मही साधारण उमाया लेकिन जिहान सम ही कर लिया है कि ये छोटी कथना के समीक्षा विचार से ही कहानी का मुद्रा-मही मही के ही कथा समीक्षा म कहानी गुप्ति जसे विचारों पर म मही के तो मही मही के ? 'पाठ प्रवृत्ति' की 'पहचान' और फिर उसी के माध्यम

से पाठ प्रश्रित से न गुजरकर, काव्य शास्त्र के मानका से जो समीक्षक कथा की पहचान देने का हीसला करेंगे, उनकी कथा-समीक्षा की यहो दुर्गति होगी और उनकी यह चिन्ता कि उपमाएँ छुटाने-छुटाते कही कहानी ही न छुट जाय चाहे व्यर्थ साबित हो, लेकिन दूसरो की यह चिन्ता कि कथा में रूपवादी प्रवृत्तियाँ की सम्भावनाहीन बनाने हुए रूपवादी काव्य समीक्षा से कथा-सत्य को धूमने में कही उनकी समीक्षा-बुद्धि ही जवाब न दे जाय जरूर सही साबित होगी और ये समीक्षक बात तो कथा-सत्य को धूमने में छांटो कविता की समीक्षा विधि की जरूरत हैं, लखिन काम परम्परा प्राप्त मोड काव्य शास्त्रीय मानका से ही लेते हैं

कहना न होगा कि कविता और कहानी दो अलग अलग माध्यम हैं और दोनों के समीक्षा-नान उनके भ्रान्तरिक सगठनों के अनुसार ही अपना-अपना स्वरूप निर्मित करेंगे कथा की नितात कथा समीक्षा के रूप ग्रहण न करन तक जरूर कविता की निरूपण पद्धति से मदद ली जा सकती लेकिन यह विश्लेषण विधि भी रूपवादी न होगी क्योंकि उससे तो पूरे तौर पर कविता के सत्य को भी नहीं बूझा जा सकता

इसी तरह भावुकता अतिरजना और अविश्वसनीयता के इच्छेप से कहानी का नाप लेना बड़ा गुजरता हुआ समीक्षा-विश्वास है कथा अतिरजित और अविश्वसनीय लगने वाली कहानियाँ किसी गहरे अर्थ बोध से हमार साक्षात्कार नहीं करा सकती ? क्या हम जिन्दगी में बहुत कुछ अतिरजित होकर नहीं कहते सुनते ? और कभी-कभी जिन जोखिम के क्षण से हम गुजर चुके होते हैं, वे ही हम पुन विचार करने और अनुभव में पुन जीने पर अविश्वसनीय नहीं लगते ? इसी तरह भावुकता से कहानी कहना और भावुक क्षण की कहानी कहना दो अलग बातें हैं । भावुकता की मद में और भावुकता की री में जिन्दगी में उपस्थित 'भावुक क्षण' की स्थिति को ही नकारना कथा के समीक्षा विचार का जीवन-सत्य के उपादा करीब होना न होना । दरप्रस्त इस स्थिति से वे ही समीक्षक गुजरते हैं जो 'भावुकता से कही गई कहानी' और 'भावुक क्षण की कहानी' में विवेक नहीं कर पाते

कथा-विचार में भावुकता अतिरजना और अविश्वसनीयता के नुकते भी रूपवादी और सत्य परक कथा समीक्षा के नस्ती नुकता की तरह ही हैं कथा विचार में इन नुकतों की बसाखियाँ लगाकर चलना खुद को अनजाने में ही समीक्षा-विश्वास में पगु घोषित कर देना है कहीं तो हैं शीघ्र जसे सम्पादन जो इ० एम० पोस्टर की तरह यह स्वीकार कर लेते हैं कि उनके सस्कार पुराने हैं और इन्हीं के चलने के कहानी से जो आगा करते हैं, यह गलत है और कहीं है हमारा विवेकशोल समीक्षक (?) कि अपने पुराने सस्कारों के चलते कविता की रूपवादी पहचान और अविश्वसनीयता-अतिरजना जसी फामूला दृष्टि को जित धूँव कथा-समीक्षा की नई पहचान बताना चाहता है शीघ्र कथा के स्वरूप में बदलाव की बात कह कर भाव-बोध और

रूपगत समग्र कथारमन सदिनष्टता का ग्रहसात कराते हैं और हमारा समीक्षा है कि पुरानी समीक्षा की विभाजित बुद्धि का शिखार होकर वस्तु-शिल्प को न सिर्फ अलग अलग खाना में खातिरयाता ही है, बल्कि रूप परव फारमूला-दृष्टि से वस्तु को जोहन के उमाद में पहनर उसकी हिमायत भी करता है, या फिर इन्ही समाधान में एक दूसरा यह वग है, जो खुद के सरल प्राण होने के कारण जिन्गी को दो और दो बार के गुणा की तरह एग्जेंट मानता है और कहानी से भी मधिलीकरण गुप्त की कविता हा जाने को माँग करता है और क्या में व्यवहृत चक्करदार गिल्प और क्या नव में पड़े मोड़ पेचों से अपनी समीक्षा-बुद्धि को घातरित कर बैठता है लेकिन इनके लिए उस दीपी क्या कर ठहराया जा सकता है क्योंकि यह उसकी सरलता और सज्ज नता का दखते हुए एक्कम उपयुक्त ही है

‘नई कहानी’ के रूपवध पर अलग से चर्चा करना दरअसल परम्परागत आलोचना के उसी अदाज में बात करना है, जिसमें बारायदा कव्य और शिल्प को पूरे तौर पर सिद्धान्तत विभाजित माना जाकर उनका जायजा लेना होता है।

जबकि इस सत्य को यहाँ रखने की गुजाइश नहीं कि यह विभाजन आयोजन ही नहीं है बल्कि अग्रहीन भी है और समीक्षा बुद्धि का खासा मनोरजक उदाहरण भी शिल्प और कव्य को अलग अलग खतिवान का अर्थ दूध और पानी को अलग अलग करके (इस पुरान दृष्टांत के लिए क्षमा किया जाऊँ) उनका जायजा लेना है हालाँकि उन हसा की उपस्थिति और उनकी सूक्ष्मपाही चोर्चों के बारे में मुझ पूरा पूरा शक है, जिनके लिये कहा जाता रहा है कि वे ऐसा कर पाने से सज्जिन यह एक अलग बात है और इस पर यहाँ क्या बहस ?

रूपवध को लेकर इसलिए भी अलग से बात नहीं थनाई जा सकती क्योंकि वह वस्तु बोध के आन्तरिक रचाव का अनिवाय प्रतिफल ही नहीं है, उसका पृक्त आकार भी है, जब अपने आंतरिक रचाव का तनाव भेनती हुई क्या (या कोई भी रचना) एक खास मिजाज पकड़ लेती है या पकड़ती होती है तब यह मिजाज उसकी नितात अपनी अनिवाय माँग होता है लेकिन उससे (क्या अनुभव केन्द्र से) पूरे तौर पर एक नहीं होता और अलग इसलिए नहीं होता क्योंकि वह वही नहीं है यानी उसका महज शिल्प होन स अर्थ नहीं बूझा जा सकता । चित्र का केन्द्रस्थ एकांकित से चुत आकलन चित्र को काटून न बत ही पन कर सकता है (काटून को काटून के तौर पर नहीं क्योंकि वह सब कला हाथी) लेकिन उसमें निहित या सम्भावित पहलुआ को नहीं उभार सकता इसलिए केन्द्रस्थ अनुभव के वास्तव से हटकर शिल्प स्तर पर चर्चा उठाना

गलत बात को और गलत तरह प्रस्तुत करना है इसीलिए, हो सकता है कि यह चर्चा आपके लिए बेमानी हो (और मेरे लिए भी) लेकिन मैं अपने उन मित्रों के प्रति प्रतिबद्ध हूँ (गोकि यह हर एक के लिए जरूरी नहीं है) जो अपनी कथा-भ्रमर के लिए सुविधा चाहते हैं, हालाँकि सुविधा बाने रास्ते के अपने खतरे होते हैं जिन्हें जानते हुए भी लोग आखिर खतरे उठाने तो हैं ही। बहरहाल, शुरू शुरू में छायावाद को शिल्पगन आन्दोलन या उपलब्धि मानने वाले ऋषि आचार्यों की तरह ही कुछ कथा-समीक्षकों के महा नई कहानी के लिए भी यही नियम पड़कर सुनाया गया था। ऐसे समीक्षक शिल्प के लिहाज से तो इसे नया मानते ही हैं, लेकिन जब इसकी वस्तु पर अलग से विचार करते हैं तो उसे भी जहाँ-तहाँ नया बताते हैं और जब दोनों पर एक साथ विचार करते हैं (गोकि ऐसा वे मजबूरी में ही करते हैं) तब बहुमत से वही ऋषि आचार्यों वाला नियम पुहरा देने है। 'नई कहानी' के सद्यः में परम्परागत समीक्षा बुद्धि की यह रोचक मिसाल है साथ ही शिल्प और वस्तु को अलग अलग मानकर उन पर विचार करने में जो खतरे हैं उन्हें यहाँ समझा जा सकता है।

पिछले कथाकारों के महा विस्सामोई शिल्प का विकसिततम कथा-मान था उनकी कहानी इसी से शुरू हानी थी और खत्म भी यही होती थी लेकिन कहानी यहाँ खत्म होती नहीं है—क्योंकि तब वह आगे लिखी ही नहीं जाती खत्म होते हैं कहने के आस-आस डग और उनकी जगह कहने के और या और और डग आ जाते हैं यह कहने के डग की यात्रा प्रेमचन्द के यहाँ शुरू हुई थी और तब से अब तक लगातार बदलती रही है (गोकि शुरू इसे दादी नानी की कहानियाँ या आदिम जमाने में कहने की इच्छा से माना जा सकता है, लेकिन तब इसकी क्रमिक इतिहास के तौर पर विविक्षा करनी होगी और उसके लिए न तो यहाँ गुंजाइश है और न तो आवश्यकता है। इस दिशा का बदलाव कथा के शिल्प इतिहास की अनिवार्य बात है, लेकिन इसमें काल कण्ड के लिहाज से कोई अनुपात हो यह जरूरी नहीं।

व्यतीत कहानी में वस्तु और शिल्प दोनों में रोचकता और उत्सुकता बनाए रखना जरूरी था गोकि यह जरूरत आज भी बनी हुई है लेकिन एक अनग माइने में व्यतीत कथा में या तो विस्सामोई होती थी या अतिरिक्त नाटकीयता नई कहानी में गायद अब विस्सामोई के विरोध में भी आवाज उठे क्योंकि यह अवधारणा पारम्परिक वस्तु के समानांतर तो उपयोगी हो सकती थी लेकिन नए वस्तु बोध के लिए इसका धर्म गुजर चुका है। पिछले कथाकार भ्रमरदार अक्षर देखर भौंचाल पाठकों को देखते थे और मुस्करा कर फिर एक भ्रमरदार अक्षर लिखने में जुट जाते थे शिल्प बोध का यह डग आज के पाठकों की एकदम बचकाना लगता है वह कहानी से गहरे और अन्दर तक टोहन वाले बोध की माँग करता है। हालाँकि अब भी कुछ कथाकारों की चमत्कार वाली दृष्टि पाठकों को चौंकाने और आश्चर्य देने में तृप्ति पाती है लेकिन समझदार

कथाकारों के यहाँ यह चीज खत्म हो रहा है वे कहानी में कुछ ही स्टोक्स में अपनी बात कह जाने हैं शिल्प स्तर पर वे इस तरह के अतिरिक्त आयोजन को आवश्यकता महसूस ही नहीं करते।

व्यतीत कहानी की 'गुम्फात' बतौर संज्ञावट के प्रवृत्ति चित्रण से होनी थी या विवरण वणन से या फिर सामान्य परिचयात्मक ढंग से 'नई कहानी' में शिल्प की इन 'गुम्फातों' को छोड़ दिया गया है वह अपनी 'गुम्फात' में स्थितियों विम्बों प्रतीकों या संकेतों से करती है वहीं वही भाषा की ध्वनि और चित्रा के प्रयोगों से उसे सार्थक किया जाता है लेकिन इन या इन जैसे और शिल्प रूपों का प्रयोग किसी विडम्बना या परिवर्णन गत विरोध को सामने लाने के लिये ही होता है अपहोत होकर या परिभाषा के अनुसार होकर नहीं और न ही अलंकरण के तौर पर।

कहानी की सही जमीन उसका 'कहानीपन' ही है शिल्प की साधकता इसी कहानीपन को उभारने में है हालाँकि यह नामुमकिन है कि सही शिल्प के प्रभाव में 'कहानीपन' सार्थक हो पाए और वह भी नई कहानी में यदि शिल्प कथा को कोई आयाम नहीं दे पाता तब निश्चय ही वह कहानी को कमजोर बनाता है।

शिल्प गत कथा समीक्षा में पिछले दिनों तक कथानक का गठन, नाटकीयता वातावरण का सुष्ठु संयोजन संवादों की संक्षिप्तता व 'ही' जसी और और सतही बातों का चलन या जिनसे कथा के औपत शिल्प को समझ पाना भी कठिन था वह समीक्षा विभाजन बुद्धि से जुड़ी होने के कारण अपने प्रारम्भ में ही खण्टित थी।

नई कहानी में नए शिल्प का प्रयोग चेषित होकर उतना नहीं है, जितना वस्तु की आंतरिक विवशता का परिणाम होकर नए शिल्प में कथानक की वस्तु दृष्टि का लगातार योग रहता है तो वस्तु चयन में सतक का शिल्प कोण बराबर काम करता रहता है।

शिल्पगत सपाटपा (प्लेटनस) कोई खास बात नहीं है लेकिन इसे कहानी में खास बना पाना या कहानी को इसके माध्यम से खास बनाना जरूर बड़ी कथानकशक्ति का सबूत है। इस शिल्प बोध के अंतर्गत वस्तु बोध होकर शिल्प स्तर पर जिनकी सपाट होती है रूप भी वसा ही अनुकूल पकड़ती है, यहाँ जीवन का कोई मुकता, अश या कोई स्थिति, बोध स्तर पर कथा में उभरती है अत्यंत साधारण होकर कहानी गुरु होती है (और अतः भा साधारण तौर पर ही होता है) वहाँ कि बाता का एक सिलसिला होता है जिसमें हर मोड़ और हर कोण पर आदमी की विम्बना आकार पाती चलती है और अतः में कहानी किसी विम्बना को पूरे परिदृश्य में आकार देकर लौट जाती है इस रंग की सबसे अधिक कहानियाँ भीष्म साहनी के यहाँ हैं प्रमचंद की परम्परा का जब सवान उठाया जाता है तो इस परम्परा में आये किसी गई कहा नियाँ भीष्म साहनी की ही ठहरती हैं कमोवेश ऐसी ही सहजता घुम प्रकाश निमन

के यहाँ भी है लेकिन इसीलिए यह स्वीकार कर लिये जाने का कोई कारण नहीं जिससे सपाट शिल्प-वस्तु वाली कहानी ही जोरदार होती है। दरअसल हर लेखक की कहानी का अपना मिजाज होता है और यही मिजाज जितना उभरता है कहानी उतनी ही मजबूत है और लेखक की अपनी स्थिति भी।

विचली पीढ़ी के कथा समीक्षका न वातावरण के आधार पर भी नई कहानी की समीक्षा की है जबकि उनकी आस्थापकीय कथा समीक्षा की आलोचना का केन्द्र दूसरे तत्वों के साथ वातावरण भी रहा है। मार्मिक और सजीव वातावरण के लिहाज से निमल वर्मा की कहानियाँ को याद किया गया है और उन्हीं इस कारण से सर्वाधिक प्रभावशाली भी माना गया है। मार्मिक और सजीव वातावरण चित्रण के नाम पर निमल वर्मा की कहानियों का सजीव ठहराना 'नई कथा' के समीक्षालय में महज रोमान की वकालत करना ही नहीं है। अपनी रोमैण्टिक रुचि का इजहार करना भी है। विचली वातावरण चित्रण की बात तो समझने लायक है, लेकिन हर देशी वातावरण की विदेशीयता का आलिर क्या अर्थ है? निमल वर्मा के यहाँ यह सब उपरान्त है।

'रूपबोध' के सदस्य में सहो वास्तव का सवाल स्पष्ट विभाजक समीक्षा बुद्धि को पमद न हो (भो कि उनकी कोई पसंद भी है ? इस पर पूरी बहस के लिए अलग से गुंजाइश है) लेकिन इस पूरे सवाल का नई कहानी के शिल्प बोध से गहरा सम्बन्ध है, क्योंकि सही वास्तव का सवाल उस यथाथ वा सवाल नहीं है जो शिल्प स्तर पर 'फोटोग्राफी' और वस्तु बोध के नाम पर मात्र 'विवरण' होता है। सही यथाथ का सवाल इस बात से एकमएक है कि हमारे जल-तल में (कुछ कहानीकारों ने मान उसे ही चित्र दिया है) हालाँकि इसे चित्र देना कोई लाजबाव बात नहीं है, इस चित्रण का कारण सतही यथाबोध और यथाथ को गलत समझना भी है) जो कुछ अनदेखा रह गया है या जिसके अनदेखा रह जाने की सम्भावना है (क्योंकि इनके बिना यथाथ की तस्वीर पूरी नहीं होती हो सकती है कि हम फिर भी पूरे अनदेखे को चित्र न दे सकें लेकिन जितना भर दे सकें वही फोटोग्राफी वाले शिल्प और विवरण वाले वस्तु बोध से महत्तर होगा) उसे कथा में तस्वीर दें क्योंकि हमारे यथाथ की पूरी तस्वीर व तस्वीर को पूरे के करीब करीब प्रत्यक्ष कराने के लिए इसकी महत्वपूर्ण भूमिका है और चूँकि इसे रूपाकार करने में मुहावरों हुई भाषा और प्रेषण के प्रचलित प्रकार अपर्याप्त होते इसीलिए यही से उमे महीन वस्तुबोध के साथ प्रेषण के लिए नए शिल्प और आयामों में खुलती भाषा की नई तलाश-प्राप्ति भी करनी होगी। इसीलिए 'नई कहानी' अपने सही अर्थ में वस्तुबोध के नए के साथ-साथ भाषा बोध व प्रेषण के लिए लगातार शिल्प के नव-नूतन की तलाश भी है और इस अर्थ में वह एक समूची प्रक्रिया भी है जो आगे चलकर चाहे एक अलग नाम की भीग करे, लेकिन अपने प्रति-याथ में यही से गुंथ मानी जायगी 'हर 'नई कहानी' (यदि वह वास्तव नई है तब)

कथाकार के वस्तुबोध व निष्पद्योष व लिए हर बार एक नई चुनौती होती है और हर चुनौती (धरम उमरी कथा शमता उसे स्वीकार कर पाती है ?) कथाकार से नए वा योग कराती है यह धनग बात है कि नई कहानी में चाहे न सही लेकिन नए कथा कार ने धनगर इन धर्म को पूरा निभाया नहीं है, पर उसने नियति इमी को निभाने से जुड़ी हुई है यह बात जुदा नहीं है इसे यह चाहकर भी नकार नहीं सकता प्राधु निरता को कथा-स्तर पर प्रत्यक्ष कराने का सवाल भी यथाथ की इसी शक्ति से जुड़ा हुआ है। महानगर म बहनी या ठहरती प्रत्यक्ष प्राधुनिकता को रूपायित करना बड़ी कलात्मक कोणिग नहीं है बड़ी कलात्मक कोणिग है इससे इतर प्राधुनिकता गुनते हुए असलक्ष्य क्रम-गुण को सक्षिप्त अभिव्यक्ति दे पाना स्पष्ट है कि असलक्ष्य क्रम सूत्रा को प्रत्यक्ष करने वाला रूप प्रत्यक्ष को प्रत्यक्ष कराने वाले रूपासमो से भिन्न कथा दृष्टि के मोलित रचाय का धारित विवक्षित प्रतिफलन होया किसी भी तरह छोड़ा हुआ नहीं, और इसी कारण अधिन प्रत्यक्ष पूर्ण भी।

‘नई कहानी’ की सापेक्षिकता का स्पष्ट अंतर व्यतीत कथा की सापेक्षिकता से है, इस माझे में कि व्यतीत कथा म सकेत का उपयोग कथा के प्रसाधन म हुआ करता था नई कहानी में वह उसको—सक्षिप्त परिवेन और व्यस्त सकुल जीवन के कारण नितान्त स्वाभाविक और अनिवार्य स्वीकृति है बल्कि किसी स्तर पर वह सकेत का उपयोग न कर स्वयं सकेत होती है “नई कहानी” में सकेत का सविशेष होना इन कारण से भी चालित है कि नए कथाकार को ‘आवेग’ देन, लेखक की हैसियत से सीधे बात करने, कथा म अतिरिक्त नाटकीयता का आयोजन करन आदि जसी सुविधाएँ प्राप्त नहीं हैं पुराने कथाकार को यह सुविधाएँ प्राप्त थी अस्त म इन सुविधायो का उपयोग ‘नया कहानीकार कथा में करना भी नहीं चाहता, इसलिए कि इहे वह नए कथा निष्पद्योष के समानान्तर नहीं पाता और इसलिए भी कि प्राधुनिक वस्तुबोध के सम्प्रेषण माध्यम के रूप में यह अपना अर्थ खो चुकी है ‘नई कहानी पूरे तीर पर तो सकेत होती ही है, अलग अलग स्तरों पर भी वह सकेत होती है हाथीनि ये सकेत स्वयं म अलग से महत्वपूर्ण होने और स्वतन्त्र स्थिति रखन पर भी, होते कहानी के प्रभाव की पूरी भविष्य वाले बहतर सकेत के लिए हो हैं।

नई कहानी म सकेत प्रतीक सयोजन जहाँ कहानी के रूपवध की एक हृद वाचक करते हैं, वह। इनके अपने प्रयोग मत जबरदस्त खतरे भी हैं और ये खतरे महज हवाई न होकर कहानीकारो के यहाँ देखे भी जा सकते हैं सिद्धहस्त और समयो कथा कारो के यहाँ भी ये जरा सी चूक से आकार लेने लगन हैं दरअसल सकेत प्रतीको का प्रयोग तब अग्रहीन हो जाता है, जब इहे स्वयं में सक्ष्य मान लिया जाता है यह जानते हुए भी कि प्रतीक की अलग से अपनी कोई स्वतन्त्र नियति और हैसियत नहा होनी, स्वतन्त्र होते हुए भी अन्ततः वह कथा की भविष्य के साथ जुड़ी हुई होती है

सी को समारा जाय वस प्रतीक की इतनी सी हो साधकता है हाने को तो युग की अदनीतम औप-यासिक कृति 'लेडी चटरलोज सबसे युग की महानतम प्रतीक कृति हो सकनी है लेकिन सवाल यह है कि क्या ये प्रतीक कथा-स्तर पर 'रिवोल' हो सके हैं ? प्रतीक की वस्तु बोध की अनकथ आन्तरिक रचना से सगति न बँटने के कारण कहानी एकदम हवाई भी हो सकती है यहाँ तक कि समीक्षक-समझ से तो वह ऊपर हो ही जाय लेखक को समझ भी उसे कोई अर्थ न दे सके, इसीलिए यह बात हमें याद रखने की जरूरत है कि प्रतीक संयोजन कहानी के लिए है, कहानी रचना प्रतीक के लिए नहीं कहानी स्वयं प्रतीक हो सकती है होनी भी है (म कह चुका हूँ) लेकिन एक ऐसा प्रतीक, जो कहानी के लिए उपन्यास बनाया हो और तब कहानी के होने हुए यह प्रतीक या प्रतीक के होते हुए यह कहानी हमारे जीवन की किसी क्रूर विडम्बना या किसी छोटी घटना को अर्थ देती हुई जीवन का अनदेखा सदम खोजता है या उसके निहालाजी संकेत देती है या फिर इसके द्वारा एक ही प्रतीक जीवन को (जीवन खण्ड को) उसकी अनुकूलता और प्रतिफलता में अर्थकोणों से बेधकर (आपरेट कर) स्तर स्तर उसे उजालना है।

'नई कविता' में विम्ब आयोजन को शिल्प स्तर पर जितना बढपन मिला है उसना नई कहानी के शिल्प में नहीं, बल्कि कविता में ही विम्ब का सम्प्रेषण माध्यम की विरहित तम हृद भी मान लिया गया है यदि विम्ब प्रयोगों को 'नई कविता' तक ही सीमित न मान लिया जाय (योंकि कुछ समीक्षकों को निजी तौर पर कथा के शिल्प स्तर पर विम्ब प्रयोगों से खासा परहेज है) तो 'नई कहानी' में हम इसके उपयोग से गम्भीर मदद मिल सकती है और कुछ प्रबुद्ध कथाकारों ने वस्तु अर्थ का बारीकी से खोलने के लिए, इससे मदद ली भी है विम्ब प्रयोग 'नई कहानी' में प्रेषण क्षमता की नई सक्ति देने तो हैं लेकिन इनके धपन खनने भी हैं (इसीलिए रूपवध की किमी भी हृद का आग्राम देन के लिए धार पर चलन वाली पनी सजक नजर जरूरी है) क्योंकि कहानी के विम्ब वही नहीं होंगे जो कविता के होंगे कविता के विम्ब कहानी के गद्य की ठेठ सामग्र्य के प्रति पाठक का विश्वास गिराते हैं इससे कहानी में धपाय की पकड़ जहाँ कमजोर पड़ती है (आपा में धनिरिकत छंद बढ़ता या अविलम्बता के कारण) वहाँ लेखक का बौद्धिक निस्संगता भी टूटती है ठेठ कहानी के सदर्म में यह खतरा अपने समस्त नएन के बावजूद निमल वर्मा के यहाँ ज्यादा है 'परिन्द' में पास के जोड़े सोपी हुई भूरी मिट्टी पर नितली का नहा सा दिन भरकता है 'मिट्टी और पास के बीच हवा का घासला काँपता है काँपता है।' घाए हुए ये विम्ब या इन्हो जैसे दूसरी कहानियाँ में प्रयाग पाए हुए विम्ब कविता के विम्ब हैं गिल्पवादी प्रवृत्ति के विरोधी गिल्प चमत्कार के कारण ही 'परिन्द' का नई कहानी (धायद पहली भी) मान बैठे हैं जब कि वह बाने हुए के माह और धापावादी वेदना

की विवृत्ति (प्रवसाद का फनाव) से जुड़ी हुई क्या है और रोमान के विरोध में उसी रोमान को कहे जाने की विवशता से सम्पन्न है यह अलग बात है कि इन स्थितियों से उबरने के उसमें बराबर सकेत मिलते हैं।

पता नहीं क्या समीक्षकों का नई कहानी में कविता पश्चिमा के स्तेमाल से घुरेज क्यों पड़ा हो गया है (लगता है इसका कारण कविता कहानी को एक दूसरे के विरोध में खड़ा करना का विद्वेष है और एक से दूसरी विद्या की श्रेष्ठ समझने का भ्रम) कविता पश्चितियों से सहायता ले लेना निवार्यता की बात नहीं है निवार्यता की बात तो कहानी की भाषा को कविता की भाषा बना देने से है क्योंकि इससे नई कहानी की भाषा ने जो गद्य को रूप और अर्थगत मँजवाब दी है उसकी शक्ति और गति मरती है कहानी की भाषा मात्र शिल्प स्तर पर सम्प्रेषण का एक माध्यम ही नहीं है, उसका वस्तु बोध से गहरा और मोतरा सम्बन्ध है भाषा का बदलाव युग बोध बदलाव को सूचित करता है (मात्र भाषा से ही किसी भी कृतिकार के वस्तुगत सत्सार और दृष्टि बोध को विस्तरेपित करने की कोशिश की जा सकती है) इसीलिए कवित्त कोमल भाषा 'प्रसाद के युग बोध की भाषा तो हो सकती है सम्प्रति युग बोध का सवहन उससे न होगा और इसीलिए उपायान्त्र प्रच्छा है कि कहानी की भाषा से काव्य प्रभाव उत्पन्न कराने की अपेक्षा कविता पश्चितियों का ही उपयोग कर लिया जाय और जबकि काव्य भाषा गद्य भाषा के समीप आ रही है तब कहानी की भाषा को काव्य भाषा के समीप ले जाना, सही प्रश्न को गलत दिशा देना है जीवन समीप भाषा ही समीप जीवन बोध को सही प्रेषण दे सकती है 'नई कहानी की भाषा इसी दिशा की यात्रा है।

नई कहानी में भाषा प्रयोग वस्तु के समानान्तर ही हुए हैं भाषा में मानवीय सहजों सहित निष्ठ रूपों अधिक से अधिक विशेषणवत्ता वाक्यों का युग पीछे छूट गया है वस्तु के समानान्तर गाँव कस्बा व शहरी भाषा का स्वभाव ध्वनितान सहजों के साथ उसमें बेहिचक और प्रभूत प्रयोग पा रहा है इस स्वभाव में भारी पित कमनीयता कृत्रिमता और कलासिक् भाषा का अहिष्कार है यह वस्तु के युग बोध गत स्वभाव का नतीजा है जिन कथाकारों के यहाँ ऐसा नहीं है वहाँ कहानी वस्तु और भाषा दोनों से पिछने लगी है नई कहानी में भाषा का सजाव नहीं है, यहाँ सपाट और बिगोणहीन सहज भाषा ही अभिप्रेत है इसी के चलते नई कहानी में भर्त्ता की बातों का कम होने जाना वस्तु और भाषा के बँटने हुए धावामा का सकेत है 'नई कहानी में कम से कम गाना में अभिप्राय का वह कानन में गद्य रूप का सत्कार तो होता ही है सत्कीय सामर्थ्य का आस्वादन भी उसे माना जा सकता है निमित्त धर्मा की भाषा की तारुण्य काफ़ी की गई है बोध की सूक्ष्म प्रक्रिया और प्रति क्रियाओं को गह पाने में उनकी तारीफ़ की भी जानी चाहिए, सक्ति विवर्णहीन

सनाए और 'उपमा रहित पदों' को उनकी भाषा की तारोफ का आधार बनाना या तो तथ्य को न समझ पाना है या फिर बूझ कर वहाँ विवशताओं के चलते उड़े झुठलाना है "फॉक के भीतर से ऊपर उठती हुई कच्ची सी गोलाइयाँ में मीठी मीठी सी चुभती हुई सुइयाँ ।" (मं नहीं जानता कि 'कच्ची सी गोलाइयों की यह मीठी-मीठी सी चुभन किस इन्द्रिय बोध में चखकर अलगवाई गई है ?) यह भाषा या इसी जसी उनकी कहानियाँ मध्यम बरती गई भाषा 'नई कहानी' की भाषा की किसी विस्तृत हद को नहीं छूती, बल्कि छायावादी भाषाबोध जगाती है भाषा के नए-नए हला और रंगों को गद्य की मँजावट में राजेंद्र यादव, मोक्ष साहनी कमलेश्वर, अमर-कान्त शिवप्रसाद सिंह और इधर श्रीकांत वर्मा, रवीन्द्र कालिया, ज्ञानरजन, ब्रूनाथ-सिंह आदि के यहाँ देखा जा सकता है

निबन्ध स्वभाव की कहानियाँ इधर कुछ नए कथाकारों के यहाँ लिखी जा रही हैं, उनकी चाहे आन्तरिक प्रकृति निबन्धा जसी नहीं भी हो, लेकिन प्रावयव सगतता और भाषाबोध निबन्धों जैसा ही होता है अमृत का प्रयोग भी, इधर कथा में हुषा है श्रीकांत वर्मा आदि के यहाँ इसने रूपाकारों को समझा जा सकता है ये अमृत प्रयोग प्रतीक और संविता का माध्यम तो पाते ही हैं किसी किसी स्तर पर अमृत चित्रों का समीप भी इनमें होता है और इसी वजह से वस्तु प्रायोजन में पेश भी पाते हैं और विस्तरे घासगो में जिया गया कान, विरोधों में बँटा हुषा भी लग सकता है लेकिन सतही तौर पर, गहरे स्तरों पर नहीं

नये कथाकारों ने बावजूद अपनी कमियाँ के शिल्प के सतुलन और समय का प्रावयजनक सवृत्त दिया है घलकृति और गुनावट कुछेक कथाकारों की शिल्प स्तर पर अभी भी पकड़े हुए हैं लेकिन बढ़ना के यहाँ इनकी रगारग पखें बिखर चुकी हैं

कहानी में शिल्पहीन शिल्प का रचाव उतना ही दुष्पर है जितना कि 'सपा-टपा' की कहानी में साम बना पाना, लेकिन इधर शिल्पहीन शिल्प वाली कुछ कहा-नियाँ लिखी गई हैं, कमलेश्वर की 'माँस का दरिया' ऐसे ही शिल्प की कहानी है ।

कथाकारों ने पुराने अप्रवर्धित गिराव प्रयोगों— सिंहासन बत्तीसी विस्तार ताना बना—की भी नयी कथा में अपनाने की कोशिश की है इन रूपबधा के सहित गुनावट पाई हुई कहानियाँ या तो महत्वहीन होकर रह गई हैं या फिर साधारण सा व्यंग्य होकर इसका कारण चाह तो युग बोध रहा हो, चाह फिर लेखकों की अपनी निबन्ध की कथा-असमता दुहरे कथानक और ताक कथा के रूपबधा का नए वस्तु गिराव-बोध के समानान्तर उपयोग 'नई कहानी' में हुषा है लेकिन इस मिजाज की धर्चा करने योग्य कहानी अपने पूरे महत्व में कमलेश्वर ही दे पाए हैं 'राजा निरबसिया' उनकी ऐसी ही कहानी है

नई कहानी में वस्तु सत्य में जहाँ एक स्तर पर एकरसता आई है, वहाँ

शिल्प इससे बचा हुआ है हर लेखक के यहाँ प्रेषण के भलग भलग ढंग हैं, चा-
 फिर वे काफी हाउस सकम, सिनीमा, होटल कफे, यात्राएँ जैसे एक रसता पदा कर-
 वाले (करीब करीब हर लेखक के यहाँ यही कुछ है) वस्तु सत्या को ही क्यों न लें
 एकरस स्थितियों के चित्रण में, भाज के जीवन का वादा इनसे उड़ा हुआ होना भी
 एक कारण है

नए कथाकारों के यहाँ असामान्य (एवंनामक) व्यक्तित्वों और असामान्य स्थि-
 तियों का चित्रण हो रहा है लेकिन यह असामान्य व्यक्तित्व प्रसाद भाँति के यहाँ का
 प्रसाधारण व्यक्तित्व नहीं है जिसके कारण पुराने कथाकारों की वस्तु का सीमित हो
 जाना अनिवार्य था, बल्कि ये घटना और ये व्यक्तित्व जीवन की मात्रिकता और मात्रिक
 कथानिक युग के आदमी को बोना बना देने वाली भयानक स्थितियों, छाया भयों अग्रहीन
 होते हुए रिश्तों भीत और अकेलेपन का जय है जाहिर है कि ऐसी वस्तु वाली कहा-
 नियों की शिल्प स्रचना भिन्न और असंग स्तर की या सतह से देखने पर असम्बद्ध और
 विरोधी सूत्रा वाली होगी इनके समानांतर ठंड (श्रीकान्त वर्मा) जसी कहानियाँ—
 जिनमें प्रति परिचित वस्तु और व्यापार में अक्सर झूल की पकड़ से अनदेखे ही छूट
 जान वाले जीवन के विडम्बना चित्र होते हैं—का सादा और सहज शिल्प अपनी हर
 स्थिति और हर मोड़ में सामान्य होने हुए भी सहज सख्त और प्रतीक हो उठता है

‘नई कहानी’ को कहानी के अब तक के प्रचलित ध्य और परिभाषा की
 धारणा में साफ-साफ कहानी नहीं कहा जा सकता, यह अन्तर वस्तु की सश्लिष्टता
 में साथ शिल्प और दृष्टि के बदलन के कारण आया है, इन्हीं के चलते ‘नई कहानी’
 एक स्तर पर वैचारिक निबंध जसा होता है या एक और स्तर पर महज बातों का
 एक दितवस्व सिलसिला या फिर वह कुछ सवेता और प्रतीका में ही धुरु और घालीर
 हो सकती है । वही वह पलक बक के जरिए अपना निविड और लाहा हुआ अर्थ
 उजागर करती है तो वही वह फटेसी होकर कहानी हाती है वही वह पत्रा का
 छोटा और सम्बा सिलसिला हो सकती है तो वही डायरी के लम्बे-लम्बे पृष्ठ उसने
 लिए होते हैं गोकि इनमें से कुछ शिल्प कायदा की परीक्षा पुराने कथाकार भी कर
 चुके हैं और नयी कहानी में भी ये शिल्प कायदे कोई महत्वपूर्ण उपनिधि नहीं दे
 सके हैं

कामूलावद्ध शिल्प नई कहानी में समादृत नहीं हुआ, इसलिए निश्चिन् भाँति
 अत परम सीमा व इन्हीं जैसे दूसरे नुकता का प्रयोग नए कथाकारों ने अपने यहाँ
 नहीं किया, जब कि इन नुकता न व्यतीत कहानी के गिल्प का दूर तक निष्पत्ति
 ये युग की विडम्बना को सम्प्रेषण देने के लिए तत्त्वों और व्यंग्य का नई कहानी में
 इनका सफन और प्रभूत प्रयोग हुआ है कि जिसने चलते उद्यम व्यंग्य भाषा का रूप
 एक सात कोण से उभर सका है।

शिल्प-गत सारी जागरूकता खास किम्म का मनरिजम इधर 'नई कहानी' के शिल्प में विकसित हुआ है। इस खतरे से नए कहानीकारों का परिचित होना जरूरी है, गांकि कुछेक इससे परिचित भी हैं, क्योंकि कुछ नए उम्र कथाकारों ने इस दायरे को तोड़ने की कोशिश की है। लेकिन इसे दुभाग्य पूर्ण हो कहा जायगा कि हिंदी का नया कथाकार चन्द कहानियों के बाद ही टाइप होना शुरू हो जाता है। उसकी वस्तु के पाश्च-परिदृश्या का सीमित होना उसके शिल्प को भी कुछ आजमाई हुई रेखाएँ तक ही सीमित कर देता है। इसका कारण उसका चुकता हुआ जीवनानुभव जहाँ है वही दायरी में जीता और अतिरिक्त खतरा मोल न लेने की साहमहीनता भी है। उसकी खुली आँख की दाद दी जा सकती है, लेकिन एक ही जगह या हर जगह में एक ही नुस्ते को तलाशने वाली उसकी खुली आँख कब तक प्रशंसा पाती रहेगी? खतरा उसकी आँख के खुलेपन से नहीं है (क्योंकि वह तो 'नई कहानी' की पहली शत है या दार्जी में कोई भी क्रम उसे आप दें) खुलेपन में बँध जाने से है। जबकि नई-कहानी के लेखकों के लिए जरूरी है कि वह लगातार वस्तु और शिल्प के बने बनाए दायरा और आयामों को तोड़ता हुआ उनमें भागे लिखे, क्योंकि नई कहानी किसी सन् विशेष का सिक्का नहीं है वह लगातार प्रक्रिया में चलता हुआ सिक्का है। मनरिजम के चक्कर में कुछ ऐसा होता है कि एक स्तर पर वस्तु से शिल्प का ताल-मेल टूट जाता है। वस्तु की विकसित नोकें मर जाती हैं और वह जीवन को पकड़ में पीछे छूट जाती है। तब कहानी महज सतही हावर रह जाती है या फिर कहने का ढब मान हावर और यह ढब भी पहले ही कहा जा चुका होता है। इस ढब की चुनौती का जय तक नया कथाकार खुली आँख स्वीकार नहीं करता, तब तब उसकी नियति-अपने पितामह से किसी तरह बेन्तर नहीं हो सकती।

शिल्प-ढब की इस चुनौती को उसके तमाम खतरा में और-और नामों के साथ राजेंद्र यादव और रमेश बक्षी ने स्वीकारा है। राजेंद्र यादव क्या शिल्प प्रयोगों को लेकर प्रसिद्ध हैं तो इसलिए बदनाम भी हैं (कभी-कभी हम किसी की आलोचना इमी-लिए करते हैं कि वह प्रसिद्ध क्या है? और जिन बातों के लिए हम उसकी प्रशंसा कर सकते हैं उन्हीं बातों को उसके विराघ में स्तेमात कर लेते हैं। उपलब्धि को आराप के तौर पर प्रस्तुत करने की इस समीक्षा बुद्धि के पीछे बितने व्यक्तिगत कारणों और ठहरी हुई रूचि का होना है। इस पर असम से बहम करने की जरूरत नहीं)। बस इतना ही कहना है कि राजेंद्र यादव ने अभी तक वस्तु बोध की मज्ज से अपनी उँगनी फिसलने नहीं दी है और यह भी कि शिल्प को नए-नए आयामों में खोलने का खतरा भरा उल्हाह अभी उनमें चुका नहीं है।

विचली पीढ़ी के कथा समीक्षक उलझे शिल्प और फिर उलझे हुई वस्तु (शिल्प यत क्रम काविते गौर है) की शिवायत करने हुए पाए गए हैं। लेकिन असल बात की

गिनायत वे नहीं करते (या तो वहाँ तक उतरी पहुँच नहीं है या फिर जानकर वहाँ वे 'भनपहुँचा' रहता चाहते हैं) यानी मात्र व व्यस्त सतुल जीवन में गिनायत की बात उनको हुई जिन्दगी से हो जाती है जिसका आवश्यक परिणाम उनको हुई वस्तु और इसी के चलते उलझा हुआ शिल्प है वे इन आवश्यक परिणामों से बतराने हुए, इन तथ्यों को उनको वस्तु शिल्प के नाम पर नकारत हैं और सपाटपा (प्लैटनस) की ग्रहणियत को बहानी में बे-द्र' देना चाहते हैं वहाँ ऐसा तो नहीं है कि चक्करदार वस्तु-शिल्प से भयभीत उनको 'सपाट समीक्षा बुद्धि, अपने तर्क 'सपाटपा की सुविधा चाहती हो ? जो भी हो, (या जो न भी हो) ऐसा जरूर हो सकता है कि चक्करदार वस्तु-शिल्प आयोजन में लेखक से बूझ हो जाय पर उनके खतरे उठाने वाले साहस और उपलब्धियों के प्रति अनजान बनते हुए महज उसकी 'बूझ' की भालोचना करना या तो सतुलित समीक्षा-बुद्धि के अभाव का वायस हो सकता है या तो फिर कुछ निजी और सतही बारणा का नतीजा और इसीलिए इसे समीक्षा स्तर पर गम्भीरता से नहीं लिया जा सकता।

दुनियाँ के साहित्य में महत्वपूर्ण कृतियाँ केवल सपाट वस्तु-शिल्प का परिणाम ही नहीं हैं और फिर आज जिस वस्तु शिल्प को चक्करदार समझा जा रहा है वह जाने वाली पीढ़ियों के यहाँ भी ऐसा ही समझा जायगा, इसके लिए साहित्य इतिहास से हम कोई विश्वसनीय नियम प्राप्त नहीं है चक्करदार वस्तु-शिल्प की भालोचना तो की जा सकती है लेकिन उसकी साहित्यिकता को सदिग्ध नहीं ठहराया जा सकता, बल्कि क्या के बड़े वस्तु-शिल्प आयामों के लिए किसी स्तर पर चक्करदार वस्तु शिल्प आयोजन महत्वपूर्ण भी हो सकता है बहरहाल।

किसी भी साहित्य-रूप की प्रचलित जमीन को नया शिल्प नहीं तोड़ता ताड़न की हौंस में वह आरोपित जरूर होने लगता है, उस जमीन को तोड़ती है नयी वस्तु वस्तु को कहे जाने की विवशता से गुजरना ही रचनाकार का शिल्प दायरे में चले जाना है और वस्तु को जिस कोण से वह उठाता है, वही उसका शिल्प कोण भी होता है यो यह ख्याल कर लेना जरूरी है कि वस्तु की नवीनता दरअसल लेखक की कथात्मक दृष्टि की नवीनता है करना अपने सही माइने में कोई भी वस्तु नवीन नहीं होती अलबत्ता वह अजीबोगरीब तो हो ही सकती है और अजीबोगरीब हाना नवीनता का पर्याय तो नहीं हो होता।

यह कथात्मक दृष्टि की नवीनता ही लेखक का शिल्प की नवीनता से जोड़ती है यानी वस्तु के प्रति नया दृष्टिकोण शिल्प के प्रति भी नया कोण होता है और जिस रचनाकार के यहाँ वस्तु के प्रति नया कोण नहीं होता वहाँ शिल्प भी पुराना ही

होता है इसलिए एक ही कहानी में वस्तु का पुरानापन बताते हुए जो समक्ष शिल्प की नवीनता का पता बताते हैं और उसे 'उपलब्ध कर लिए जान के दावे से भी गुजर लेते हैं दरअसल वे शिल्प की गलत 'पहचान' से जुड़े हुए होते हैं और रूप और वस्तु की सापुण्य सन्निध्यता का मतलब उनके लिए कठिन होता है यानी यही मतलब वस्तु शिल्प का धमेद प्रकट करता है कि वे (वस्तु और शिल्प) अपनी अन सरचना में एक दूसरे का अनिवाय भग हो नहीं हैं बल्कि अनिवाय नतीजा भी हैं

विश्व प्रतीक पलक तक जस कविता और नाटक की समीक्षा गम्दावली के मुकता में क्या-शिल्प की पहचान देना कहानी-शिल्प की समझने के सतही और विद्यार्थियोचित विवेक से गुजरना है और इनसे सुविधा उगाहने का मतलब कहानी शिल्प की समझने के तहत इही की परिक्रमा करते रहने का मतलब बन है ? फिर इहे भी क्या वस्तु की अन्त सरचना के प्रनिपचन के तौर पर दूभा जाता है ? दरकार इस बात की कहन की है कि क्या-सरचना का सन्निध्य मुहावरा ही शिल्प की पहचान में सही समीक्षा-प्रोजार का मतलब रखता है और जो समीक्षक इस रविश से हटकर कविता-समीक्षा के मुहावरे में शिल्प की पहचान पाने का दावा करते हैं वे कहानी की कविता करके ही पहचानते हैं और उनकी क्या समीक्षाएँ भी बेहद कवितानुमा होती हैं मसलन क्या की पाठ प्रक्रिया की बाबत उनका यह कथन कि 'सितिज का एक चलता हुआ दायरा है ' गोया सितिज न हुआ बादल का टुकड़ा हो गया और वह बादल का टुकड़ा भी क्या जो सितिज पर ही चल, कमाल तो तब है जब वह कहानी में चले कहानी की पाठ प्रक्रिया के नाम पर चलता हुआ, यानी एक-दम अस्थिर अप्रतिबद्ध क्या आप बता सकते हैं कि सितिज का दायरा-अगर वह होता भी है—तब कैसे चलता है और कि उसका अनुमान भी कि कैसे चलता होगा ? क्या समीक्षा में इन जागनधर्मा दादा का क्या मतलब है ? और बावजूद अपने इस जागन के मामूमियत से यह भी पूछ लिया जाता है कि 'मुक्म्मल कहानी' क्या होती है ? और उसके रूप-वस्तु की सन्निध्य सापुण्यता की नजरन्दाज कर-जा कि प्रीति तौर पर एक मुक्म्मल कहानी का उसकी सरचना में मतलब होता है—उसी सास में उसके—मुक्म्मल शब्द के—जागन होने का नियम भी सुना दिया जाता है इन नियम-व्याकुल मित्रों की बाबत जो खुद पर नियम दिए जाने के भय से डरे हुए हैं और जल्दी में निराय दे बैठे हैं—और यह जल्दी मसले पर विचार करने की अपेक्षा नियम दे देन में खास होती है, कामू ने बेहतर निखा है— हम नियम करने के लिए अपने ही तत्पर रहते हैं जितना कि व्यभिचार करने के लिए अगर आपको कोई सदेह हो तो आज के नर पुगवों के लेखन का पाठ कर सीजिए लोग नियम देने के लिए उठावले इसीलिए रहते हैं कि वही उन्हें स्वयं ही नियम न सुनना पड जाय

बहरहाल, कहानी में 'सितिज का चलता हुआ दायरा पहचानन और नापने

वाणी क्या भी यह मान्य धर्मा समीक्षा-बुद्धि वांछनी की ही तरह घुँघती धोती, डोंग और टुपड़ों में विभाजित है, जो जरूरत न होने पर तो निराला कवितात्मक अन्तर्गत मरस जाती है और जरूरत होने पर अनावृत्ति में चल जाती है यह क्या का समीक्षा-बुद्धि का चेतना हुआ भादन धर्मा दायरा क्या समीक्षा में कितने दिन ठहर पाएगा, इसको यद्यन महादेवी के यहाँ खूब कहा गया है गो यह बात अलग है कि महादेवी न उमे फिर किसी दूसरे ही सम्भ में चाहे कहा हो—“परिचय इना इतिहाम यही, बल उमड़ी की मिट भाज चली”

किसी भी कहानी में गिल्स की पहचान कहानी की वस्तु की भी पहचान है, लेकिन जब हम उसकी वस्तु में नवीनता की हिमायत करते हुए शिल्प की नवीनता पर प्रश्न बिह लगाते हैं तब हम अपनी ही समीक्षा बुद्धि के अन्तर विरोध से गुजरते हैं जिन समीक्षकों ने ‘नई कहानी’ के गिल्स को नया बताया है और वस्तु को पुराना वे भी अपनी समीक्षा-बुद्धि में सावधान नहीं हैं और इसी अन्तर विरोध के गिकार हो रहे हैं

क्या का मुहावरा लेखकीय दृष्टि का मुहावरा है, यही गिल्स की नवीनता को निश्चित करता है और वस्तु की नवीनता को रेखांकित भी, मलबता इस बात को भी परीक्षित कर लिए जान को जरूरत तो होती ही है कि खिदमी में बन बन कर बोलने की तरह ही कहानी में भी बहने का डग बही आयोजित तो नहीं है और अगर ऐसा है तब न केवल शिल्प बल्कि वस्तु भी आयोजित ही होता है मतलब वह लेखकीय रचना प्रक्रिया का भाग नहीं होती यानी उसमें अनुभव से गुजरने का सबूत नहीं होता, मलबता उसके चौखट पर कहानी गढ़ने की मशकत बही जरूर होती है और तब यह समझ लेजाना कुछ मुश्किल नहीं होता कि लेखक का कथात्मक डग वस्तु शिल्प की सायुज्य अन्विति का नतीजा है या कि उठामा हुआ और कि छोटा हुआ भी एक ही लक्ष्य में वस्तु की नवीनता उसके शिल्प की नवीनता का भी आफ बनाती है रावेश के यहाँ ‘मलबे का मालिक’ और ‘जानवर और जानवर’ की वस्तु अपने स्वभाव में एक जसी ही है और वह ‘फौलाद का आकाश’ से कुछ भिन्न है इसीलिए दोना का शिल्प भी अलग है मुहागिर्ने और ‘मिस गाल’ की वस्तु को रावेश किसी स्तर और किसी सदम में पीछे छोड़कर जर्म में आगे बढ़ता है तो उसी अनुपात में उसने गिल्स में भी नवीनता और आधुनिकता बना अन्तर आ जाता है, गो रावेश अपने कथात्मक मुहावरे में एक रास बनी बनाई रविग पर हो चलत हैं जो उनके वस्तु शिल्प के स्वभाव को भी प्रायः तय कर देती है

वस्तु की बजह से गिल्स के स्वभाव बदलाव को समझने में इस तरह आसानी होगी कि निमल धर्मा की वस्तु नित्र प्रसाद सिंह की क्या-वस्तु से भिन्न प्रवृत्ति की है और इसी अनुपात में दोना का गिल्स भी अपनी कथात्मक दृष्टि के अनुरूप ही निमल

वर्मा लन्दन की एक रात और 'डेड इच ऊपर' में गिल्प की समानान्तर हुआ भी हो रहते हैं क्योंकि दोनों कहानियों का स्वभाव एक ही है, जबकि यही स्वभाव 'परिन्द' के वस्तु-गिल्प के मुहावरे से नितान्त नहीं तो पर्याप्त भिन्न तो है ही इसी तरह उपा प्रियम्बदा की कहानियों की वस्तु मन्नू भट्टारी की कहानियाँ की वस्तु से भिन्न स्तर का है, यानी दोनों के कथात्मक बोध और कोण में दूर तक अन्तर है और इन्हीं के चलते दोनों के गिल्प के मुहावरे भी एक-दूसरे से भिन्न भिन्न हैं, जबकि अपनी वस्तु के एक जैसे मिजाज की वजह से शिव प्रसाद सिंह और माकण्डेय और शैलेन्द्र मटियानी और रेणु काकी करीब हैं इसी तरह अमरकान्त और भीष्म साहनी भी, लेकिन बावजूद क्या मैं नए शिल्प प्रयोगों में दिलचस्पी लेने के राजेन्द्र यादव और रमेश बहो अपनी भिन्न भिन्न स्वभाव वाली वस्तु के चलते ही शिल्प स्तर पर एक दूसरे से समानता नहीं रखते, यहाँ तक कि कुछ अघोरी कथाकार भी शिल्प स्तर पर दूसरे तमाम कथाकारों से इस लिए साफ-साफ भिन्न पहचाने जा सकते हैं क्योंकि उनकी कहानियाँ की वस्तु बदले हुए गिल्प की गितावन देती है और कहानी में जहाँ भिन्न महज गिल्प की नवीनता की ही, वस्तु को पुरानी बताने हुए चीह पाने है वहाँ ऐसा महसूस होता है गोपा शिल्प कहानी और कहानी की वस्तु से कोई नितान्त अलहदा विस्मय की चीज है जिसे समझने के लिए और पढ़ाया समझने के लिए कहानी का होना कोई जरूरी शर्त नहीं है भिन्न की समीक्षा-बुद्धि का जब यह आत्म है तो उसकी बाबत क्या कहा जा सकता है

'नई कहानी' की बाबत यह कहना कि शिल्प-भात प्रयोग उसमें नहीं हुए है और न ही उनके लिए कहा हुआ है प्रकारान्तर से 'नई कहानी' की वस्तु की नवीनता की नकारना है, जबकि प्रमाण इस बात के हैं कि कहानी ने न सिर्फ सस्मरण, रक्षा चित्र रिपोर्टाज से ही अपने माध्यम के अनुकूल मदद ली है, जिसका सबूत नई कहानी से पहले हिन्दी कथा में बेहद कम मिलता है—बल्कि स्थापत्य संगीत व चित्रकला से भी स्वयं की जरूरत भर समृद्ध किया है और यही तब भी कि मनोविज्ञान की अनेक मरणियों को कथात्मक बोध में पहचानते हुए उनके जरिए शिल्प में नवीनता पदा की है टैट कविता के पटन पर कुछेक लेखकों ने कहानियाँ कहने की काशिष की है और ड्रामा तो कहानियाँ में भरसा हुआ तमो से किया जाता रहा है कुछ अघोरी कथा-कारों ने इस तरह कहानियाँ लिखी हैं कि वे कविता के बेहद करीब हैं और मुक्तिबोध जैसे कुछ कवियों ने चाहे अपनी कविताओं पर भिन्न भिन्न कहानियाँ न भी लिखी हों लेकिन उनकी कविताओं में एक एक कहानी जरूर मिल जायगी इधर का कुछेक कहानियाँ की वानगी को देखते हुए कथा-शिल्प के स्तर पर ऐसा महसूस होता है कि सम्भव है अरसे तक प्रतीक्षा करने से पहले ही शिल्प स्तर पर कहानी और कविता के माध्यमों का अन्तर दुबला जाय, जिसका सबूत कुछ नवयुवक कवि कविताएँ कहानी माध्यम के समीप लिखकर पद्य कर रहे हैं और कवि शमशेर तो अरसा पहले ही यह

धुंके है कि कविता में आज जो तत्व हम खोजते हैं वह भवसर कहानी, स्वेच और उप-याम के भावों और गहरे स्थलों में सहज ही मिल जाता है यानी इसने यह बात बम सिद्ध होती है कि कथा गिरा कविता के करीब पहुँच रहा है, बल्कि जो सिद्ध होता है वह यह कि कविता का ढाँचा—जो वाक्य-वस्तु को भान्तरिक संरचना का प्रतिपादक है—अपनी छोटी बड़ी पक्तियों के वाक्य-वस्तु के वेहद करीब आता जा रहा है और यह भी कि दोनों माध्यमों की वस्तु भी परस्पर करीबी रिश्ता बनाम कर रही है यो गुण-बोध को जोहते हुए पहले भी वह एक दूसरे से दूर कम ही थी

नई कहानी का शिल्प शास्त्रीय तयारियों से एकत्र हट गया है, यानी कथा वस्तु के स्वभाव में आंतरिक परिवर्तन आने के कारण उसका आदि अन्त और मध्य उस तरह निश्चित नहीं होता, जिस तरह प्रेमचंद प्रसाद सुशान और उग्र के यहाँ वह होता था बल्कि यशपाल और जनेन्द्र के यहाँ भी उसने अपना कामूला इजाद कर लिया था और यशपाल की कहानियों का ढाँचा तो वेहद वेहद शास्त्रीय है जो जनेन्द्र ने उसे नया मुहावरा जरूर दिया था

वस्तु का बदलाव कथा शिल्प में भी बदलाव लाता है दूसरे माइने में वस्तु का बदलाव कथा शिल्प का बदलाव भी है इस सत्य की पुष्टि बड़े ही अप्रतिबद्ध ढंग से एक कवि-कथाकार मित्र के यहाँ भी होती है—“यह कहना कि आज की कहानी पहले की भाँति कामूला पर नहीं चलती ठीक है पहले की भाँति आज हमारे जीवन-मूल्य या उसकी पद्धतियाँ वसी नहीं रह गई हैं फलतः वसे कामूले भी नहीं रह गए हैं, आज मूल्यों एवं पद्धतियों का बहुत कुछ आवश्यक एवं अनावश्यक मिश्रण हो रहा है ऐसी स्थिति में फारमूले ही ही बस सकते हैं । लेकिन जब यही मित्र यह मानते हुए भी कि आज की कहानी कही से भी आरम्भ होकर कही भी समाप्त हो सकती है क्योंकि वह कला के नियमों से निर्देशित न होकर, जीवन की अवापता से प्रवाहित होती है पहले की कहानी एक विशेष ढंग से आरम्भ होकर विकसित होती थी और उसमें बा-निष्पत्ति होती हुई समाप्त होती थी अतएव उसमें कला का अनावटीपन अधिक लगता था ।’ आजिजी से यह कहते हुए पाये जाने हैं कि इतना तो सत्य है कि आज की कहानी भी जब आरम्भ होती है तब उसे समाप्त भी होना ही पड़ता है (इस फिजसो फिक्ल अन्दाज पर गौर किया जाय गोया कोई घम मुह शास्ता-मुद्रा में जीवन-अगत की नजरता बसान कर रहा है (जीवन आरम्भ होता है तब उसे समाप्त होना ही पड़ता है आदमी जन्म लेता है तो उसे मरना भी पड़ता है)) लेकिन क्या आज की कहानी के आदि और अन्त का भी अपना एक प्रकार नहीं बन गया है ? माना कि बड़ा ही लचीला प्रकार है पर है तो तब उनका कथन ‘अनुप्य एवं सामाजिक प्राणी है । की बिरोदरी का लगता है, अगर इतने ही मोट तौर पर दो चीजों में समानता ढूँढने की सत पानी बाएगी तब तो महज निचे जान के आधार पर ही

कविता और कहानी को एक मान लिया जा सकता है 'कहाँ तो जिन्दगी के प्रवाह का नतीजा होती हुई 'नई कहानी' और उसका शिल्प और वहाँ कला के अविकसित नियमों की ममी में बन्द पुरानी कहानी' लेकिन जिन मित्रों ने साहित्य में जिन्दगी की परवाह करना छोड़ दिया है, वे कला के नियमों की मृत दुनियाँ में प्रेत बनकर घूमने के लिए इसी तरह विवश हैं जिन्दगी से उपजी कला और कला से उपजी जिन्दगी का अन्तर ग्रहण नहीं है ? 'नई कहानी' है कि जिन्दगी के ठेठ प्रवाह को बलात्कृत डग में अभिव्यक्त करने में अपनी सायबता समझ रही है और उसका शिल्प भी इसी का परिणाम है और हमारे समीक्षक भ्रम हैं कि कला के भरे-भराए नियमों से बनी हुई पुरानी कहानी के समान ही 'नई कहानी' के शिल्प को घोषित करने में जुटे हुए हैं "जिस तरह लक्षण ग्रन्थों के आधार पर लिखी गई नायिका भेदी कविता में काव्य का अभाव होता है क्या उसी तरह कहानी के लिए निर्दिष्ट किए गए कथा-नियमों के चौकटे में कथा-शिल्प की सम्भावना और जिन्दगी की पकड़ नहीं चुकती ? एक तरफ हैं पुरानी कहानी के रीतिकालीन नायिका भेदी शिल्प जैसे तब किए गए कथा नियम और दूसरी तरफ हैं आधुनिक जीवन की समितियों-विसंगतियों के साथ ठेठ जीवन के प्रवाह को शिल्प में उतारने की कोशिश से खूबता हुआ नयी कहानी का ससार इन दोनों में 'फारमूला' की समानता खोजना क्या आधुनिकता में रीतिकाल की खोजना नहीं है ? क्या है तब किए गए नियमों के निर्देशन में लिखी जाती हुई पुरानी कहानी बनावटी हो जाती थी, यह इसलिए भी कि उसकी वस्तु बनावटी यानी आयोजित आदर्श की वस्तु होती थी, जबकि नयी कहानी जीवन प्रवाह से परिचालित होती हुई जिन्दगी की बनावट को प्रस्तुत करती है इन दोनों कहानियों का बनावटी जीवन और 'जीवन की बनावट' का अन्तर दो घुम बोधों का अन्तर है और यह अन्तर ऐसा मामूली नहीं है कि जिसकी उपेक्षा करके दोनों में 'फारमूला' की समानता तलाश जाय लेकिन जिन मित्रों की दृष्टि ही 'फारमूला' बढ़ हो गई है, उनसे इसके अलावा और क्या आशा की जा सकती है ?

लेकिन क्या-विचार में यह स्थिति क्या कम सतोषजनक है कि कम-अज्ञ-कम कथा शिल्प पर विचार के दौरान यहाँ कहानी के सदस्यों से और कहानी समीक्षा की तथा कथित परम्परा के हवाला से तो गुजर गया है, वरना हमारे क्या समीक्षक हैं कि बिना कविता की बगलगीर किए क्या विचार में डग दो डग बढ़ना भी अवैधानिक समझते हैं कविता की 'भाव-बोध' जैसे समीक्षा शब्दावली को क्या-विचार की भाषा का मुकम्मल मुहावरा मानने वाले इन समीक्षकों के प्रयत्न से तो यही ग्रहण होता है कि अगर कहानी कविता नहीं है तो उनको बला से उनका समीक्षा विवेक उसे कविता करके ही लेगा और कविता करके ही समझाएगा 'कहानी अगर कविता नहीं हो पाई है तो वे उसे कविता बनाकर छोड़ेंगे कविता के सहारे कहानी में कविता के

विधि पेटने की तलाश ही उनके यहाँ कथा विचार के नए आयामों की तलाश होगी, यानी यहाँ तब भी कि कहानी में उसका शिल्प-विकास कविता की तरह ही और कविता के समानांतर ही होना चाहिए अगर यह प्रगति बसी नहीं है तो कहानी में न तो इसके लिए गुंजाइश है और इसीलिए न तो वह कविता के समान विवक्षित है, मतलब कि कहानी की धारत जो कुछ सोचा जाय वह कविता के साथ और कविता के साथ-मे—‘एक और शिल्प की नवीनता (गोया रूप, शिल्प से कुछ असह्यदा चीज होती है ?) सामान्यतः उसका (पाठक का) ध्यान सबसे पहले आकृष्ट करती है और कहानी में कविता की तरह रूप और शिल्प की नवीनता बहुत कम आई है कहानी के क्षेत्र में कविता की प्रेरणा रूपवाणी प्रवृत्ति बहुत कम दिखाई पड़ती है, सामान्यतः इसलिए कि कहानी में शिल्प प्रयोग की गुंजाइश कम है इस कथन की ‘बलिडिटी कि कहानी में शिल्प-प्रयोग का गुंजाइश कम है—पर प्रश्न चिह्न के बावजूद (क्योंकि तब उसमें वस्तु की नवीनता के लिए भी गुंजाइश कम माननी पड़ेगी और वस्तु की नवीनता यानी कथात्मक चीज की नवीनता के चलते शिल्प की नवीनता की गुंजाइश बसे कम हो सकती है ?) यह तो माना ही जा सकता है कि कविता के पटन पर प्रगति यहाँ नहीं है, (कविता के शिप जितना कहानी का शिल्प विवक्षित नहीं है—गद्य की हृदा की जोहते हुए—यह मैं नहीं कहता इसलिए कि सब इन्हीं समीक्षकों के दावे—कि आज की हिंदी कहानी विद्व-कहानी की उपलब्धियों की दृष्टि में रखी जा सकती है—जोहते साबित हो जायेंगे और विद्व के कुछ प्रसिद्ध कथाकारों की रचनाओं को पढ़कर कम प्रश-कम में इस नतीजे पर नहीं पहुँच सका हू कि कहानी युग बोध को प्रेषित कर पाने में आज भी किसी माइने में पिछड़ी हुई है गो मैं इस विवाद में नहीं पड़ना चाहूँगा कि यह युग गद्य का युग है और कविता का मुहावरा उसके लिए छोड़ा पड़ता जा रहा है) यह इसलिए कि कथा शिल्प का विकास गद्य स्वभाव के अनुकूल है इसलिए उस कविता के सद्भ में रखकर या कि कविता के शिल्प की हृदा में रखकर सोचना गलत होगा इस मतलब की समीक्षा जब पाठक को बीच में लाकर सबसे पहले रूप के लिए उसके आकर्षण की बात कहते हैं, तब सही माइने में वह अपने ही समीक्षा विवेक की बावत कहते हैं जिसका मतलब होता है कि, इन्हीं पहले-महल शिल्प की नवीनता ही आकर्षित करती है वस्तु का नहीं और चूँकि इस विमर्श (शिल्प और वस्तु में बँटो हुई) समीक्षा बुद्धि के कारण वस्तु में आई नवीनता को यह समीक्षक पहले नहीं पहचान पाते, इसलिए शिल्प में आई हुई महीन नवीनता इनकी दृष्टि से फिसल जाती है और तब इन्हीं आत्म विश्वास के साथ यह कहने में कोई संकोच नहीं होना कि कहानी में शिल्प प्रयोग के लिए गुंजाइश बहुत कम है । जेम्स ज्वाइस के यूनिक्सिस के शिल्प प्रयोग को जब कहानी में उतारा जा रहा हो और चित्रकला का एम्प्ट्रेशन (अमूर्तता) जब उसकी प्रवृत्ति बन रहा हो, ‘ऑपियोन का प्रयोग और संगीत की स्यात्मकता कहानी

माध्यम में गद्य का स्वभाव खोज रहे हो (और अब तो कथा के शिल्प-मुहावरे 'प्रॉप-सीन' का स्तेमाल कुछ अधोरो कविषा के यहाँ ज़िन्दगी की विमर्शितियों और निरर्थकता का अभिव्यक्त करने के लिए किया जाने लगा है) तब उसमें गिल्प प्रयोग के लिए गु जा-इंग कम होने की बात करना काफी दिनचर्या और मनोरंजक लगता है। अलबत्ता कविता के रूपगत मोटे त्रुटों को, 'वस्तु' की दुहाई देने वाले इन रूपवादी क्या समीक्षा को, कहानी में न पाकर कहानी शिल्प को परीक्षित कर पाने में दिक्कत जरूर पैदा आती है और गद्य का स्वभाव इसके लिए उनकी कोई मदद नहीं कर सकता। लेकिन यह बात कितनी दिनचर्या है कि जब इन्हें कहानी में काव्य-शिल्प के प्रयोग—उपमाएँ आदि—दिखाई पड़ते हैं तो इन्हें कहानी के छुट जाने का खतरा सताने लगता है। दरअसल कथा-शिल्प न आँक पाने का यह सारा सबूत कविता के समानांतर कहानी को रखकर देखने की वजह से है और इस वजह से भी कि काव्य शास्त्र की उपलब्ध सहूलियतों को छोड़ देने से कहानी शिल्प को समझने में ज्यादा जटिलता पड़ती है और मूल में काव्य-समीक्षा सकारो के कारण यह ज़िद भी कि काव्य-समीक्षा को ही कुछ भाग्यहीन रहोबदल के बाद कहानी पर उठा दिया जाय और इस तरह कहानी समीक्षा के लिए छोटी कविता की समीक्षा विधि को आरोपित कर ले जाने का यह भी बसूल लिया जाय ।

पुरानी कहानी से 'नयी कहानी' की प्रकृति इस अर्थ में भी भिन्न है कि यह वास्तव की—उस वास्तव की जो प्रामाणिक है और जिसे प्रामाणिकता के साथ भेला जा रहा है—सम्प्रेषण देने के भाव से जुड़ी हुई है। प्रामाणिक वास्तव को कहने की बात इसलिए कहानी में उठी क्योंकि उसे वास्तव के जगल में से खोजना भी था, यानी प्रामाणिक वास्तव का सवाल, सिर्फ वास्तव का ही सवाल नहीं था, बल्कि वास्तव में से उन वास्तव की खोज या चुनाव का सवाल भी था जो आदमी की अंधेरी नियति से जुड़ा हुआ है। मतलब जहाँ आदमी की आधुनिक ज़िन्दगी के और आधुनिक ज़िन्दगी के कारण उठे हुए मसले मसूखे युग सदन में उसकी विह्वल स्थिति का रेखाङ्कित करते हैं और जिनकी पहचान उन्हें भेनकर याना प्रामाणिक होकर रचना स्तर पर कहे जाने से ही सम्भव है इतना और भी कि जिनके मध्य मसूखे विघटन और अपने सकट की पहचानने वाला आधुनिक आदमी का बदला हुआ कोण भी केन्द्र में है। फिर मानवीय नियति का यह सबूत और यह विघटन पानरजन के यहाँ निरन्तर अदेले पड़ते जाते और अनुपस्थित होने जाने के असनदश अर्थ की जोहते हुए काटती हुई ठडक में 'शेष' होते हुए और सम्बन्ध में चाहे हो, चाहे दूषनाय सिंह के यहाँ आइस बग में अपनी

शिनाख दे रहा हो वह फिर स्त्री पुरुष के बनते हुए सम्बन्धों की साक्ष्य में राजेन्द्र यादव के यहाँ 'दूटना रावेश के यह एक और जिन्दगी सुहागिनें कृष्ण बल्देव वद के यहाँ मेरा दुश्मन, भारती के यहाँ सावित्री न० २, कमलेश्वर के यहाँ 'दुसा के रास्ते, मन्त्र भडारी के यहाँ 'यही सच है और 'ऊँचाई, ममता कालिया के यहाँ 'अनिर्णय' और 'पत्नी, उषा प्रियम्बदा के यहाँ मछलियाँ, रवीन्द्र कालिया के यहाँ 'नौ साल छोटी पत्नी, महेन्द्र भस्मा के यहाँ एक पति के नोट्स', निमल वर्मा के यहाँ 'झेंपेरे में हो या फिर वह आदमी की विडम्बना को रेखांकित करते हुए 'दवा और दूध (माकण्डेय) बिन्दा महराज (शिव प्रसाद सिंह) 'खून का रिश्ता (भीष्म साहनी) 'घर (धोक्कान्त वर्मा) मिस पाल (रावेश) बदलू (शेखर जोशी) 'दो दुश्मा का एक सुख (शलेख मटियानी) में सामने आता हो या अलग अलग स्तरों पर लदन की एक रात (निर्मल वर्मा) ठंड (धोक्कान्त वर्मा) 'सेव (रघुवीर सहाय) केंस के इधर और उधर' (गान रजन) किसका बेटा (नरेग मेहता) 'भोताराम की आत्मा (हरिश्चकर पारसाई) 'प्रका सत्ता (रेणु) 'कुछ बच्चे कुछ माँए (रमेश बली) कहानियों में वह चाहे साफ हो रहा हो, फिर एक बात सब वही सही है कि वास्तव के इन तमाम स्तरों पर देश के साथ (चाहे उसे ठंडा बनाकर कहा जा रहा हो या काटते हुए तीखेपन में) टकराने की प्रवृत्ति इन तमाम कहानियों में है इससे बचन और बचकर निकल जाने का रास्ता अब क्या के लिए नहीं रहा है उसका सबूत प्रयाग शुक्ल हृषीकेश अवध नारायण, गिरिराज किनोर, कामता नाथ गोपाल उपाध्याय सुरेंद्र विजय मोहन सिंह, गंगा प्रसाद किमल ओम प्रकाश निमल आदि की कहानियाँ में भी स्पष्ट है

इस तरह नयी कहानी के माध्यम से हमारे नए कथाकार ने जिस सत्य को कहना चाहा है वह ठेठ है यानी वह धारणा बद्ध चिन्तन से मुक्त है और उसमें असाधारण कथा गित्य के वाक्य स्रुत की बचाए जान की आगम्य कोशिश है क्योंकि 'असाधारण को कहने के फेर में और असाधारण होकर कहने के फेर में पुरानी कहानी सिर्फ 'ढमी होकर रह गई थी वह अपने वास्तव जनित युग बोध का मतीजा न होकर सिद्धान्तों की मुद्राएँ पैदा करती थी इसलिए 'नयी कहानी' सभी प्रकार के बौद्धिक बाधों (नयी बौद्धिकता से नहीं जिसका मतलब अपने युग की जिन्दगी को भेलने से विसंगतियों को जीने भोगने के अनुभव से उपजी बौद्धिक सजगता से होता है) से स्वयं को मुक्त रखती हुई अवधारणात्मक सत्य के विरुद्ध जहाँ खड़ी हुई तो हम बात को भी प्रमुख करती हुई कि वह किताबी सत्य से— मतवादा से— हटकर जीव नानुभवा जनित बौद्धिकता की कहानी है जो किताबी सत्य से मत तो खा सकती है लेकिन जहाँ मेल नहीं खानी वहाँ किताबी सत्य अप्रामाणिक होने हैं और कि अब उस बनाया (मनूकेकर) नहीं लिया जायगा, वह पण्डित होगी और उसके पण्डित को साम्य होकर कहा जायगा । इसी के सहित नए कथाकार न उन तमाम जीवनानुभवा को

कहने की भी जरूरत महसूस की, निह्ने कहने के लिए किसी बदर साहम की जरूरत थी उहे भी जिहे पुराने कहानीकार कहानी बनाने के पतरो के चलते देख नहीं पाए थे या कयात्मक दृष्टि में आने पर भी आरोपित समाज सुधारक जिद और वाय वीय नैतिकता से इन सत्यो के सदभ में कहानी का संसर किए रहते थे नए कथा-कार ने, खासकर सातवें दसक में आकर उही-उन्ही को भी कहा, गांकि यह नई कविता में भी हुमा और इस तरह दोनो साहित्य-रूप उत्तर सदी के इस सातवें दशक में अनेक आलोचो पर समानान्तर होकर रचे गए

नयी कहानी ने मानवीय सत्तास को जिन आलोचो पर देखा है, वह हिन्वी कहानी के विकास-क्रम में परिवर्तन का मतलब नहीं रखता, वह क्रान्ति का मतलब रखता है, जिसमें जीवन-सत्यो को विकास में नहीं नए सिरे से जोड़ा जाना है पुरानी कहानी आदर्शों आकांक्षामो और स्वप्ना की कहानी थी गोकि विदेशी दासता से मुक्त होने के लिए किसी इतर पर वह अपने युग-बोध के दबाव का मतलब भी दे रही थी लेकिन यह मतलब केन्द्र में न घँसकर सरहदो पर से ही बटोर लिया गया था पुरानी कहानी के लिए असाधारण और अतिरंजन को 'सचाई जसा प्रस्तुत करने का अपने माध्यम में प्रयान था वह मानवीय संकट और साम्प्रतिक बतमान से मुक्ति के लिए साथ में नहीं थी बल्कि कुछ वक्त के लिए—कहानी पढते वक्त और उसके प्रभाव की मदहोशी में—मानवीय संकट को भूलकर 'सुखी हो लेने का नुस्खा भर आयोजित करती थी। वहयथाय को 'अंधेरी कोठरी से निजात पाने के लिए आदर्श के फूलो भरे उद्यान में कुछ समय को टहल पाने के लिए सामान जुटा देती थी और अक्सर वह 'अंधेरी कोठरी और 'उद्यान—आदर्शोन्मुख यथायवाद—दोना का एक ही रचना में आयोजन भी कर लेती थी—बहरहाल 'अंधेरी कोठरी में आलोक की उस रेखा को खोजने की दरकार तो वहाँ नहीं ही हुई जो 'कोठरी के अंधेरे को उसी में से होकर उजाले के रास्तो से जोड़ सके बल्कि उसकी भी नहीं, जिसको पहचान के जरिए कम-अज-कम न सही उजाले के रास्ते को कोठरी के अंधेरे को ही पहचाना जा सके नयी कहानी ने सजता के लिए इस विचार मात्र से ही निजात पानी उसने गहराने मानवीय संकट को उसके समूचे आस और स्फोटक रूप के साथ अंगीकृत किया और उपदेशक समाज सुधारक और गुम गलत की एकबारगी रुत छोड़कर इस संकट से कतराकर नहीं, बल्कि इसे भेलन हुए स्थी की पहचान के माध्यम से मुक्ति के लिए आदर्श की सामध्य को वुसा इसलिए कि इस अंधेरे में मानवीय संकट की जानकारी के साथ ही उसके जोते जाने के रास्तो की तलाश का सवाल भी जुड़ा हुमा है नयी कहानी में ये स्वप्न नहीं लिए गए—इसलिए भा कि स्वातंत्र्योत्तर उनके सारे नटख रण एवं वारगी उसड गए थे और इसलिए भी कि व स्वप्न मानवीय संकट से जुड हुए होकर नहीं लिए गए थे, बल्कि उससे बेसवर होन के लिए गए थे—जो आदर्शों के

कोई एक तीसा संवेदन कहानी की सृष्टि करा से जाता है और तब क्यानक का हवाला देकर कहानी सत्य को तलाशने वाला क्या का पुराना ऋषि समीक्षक करीब करीब बदहवास हो जाता है और बीसलाहट में 'नयी क्या' पर ऐसी-ऐसी तोहमतें लगाता है—मसलन नयी कहानी घिना सिर पर की कहानी है और कि जो समझ में न आए वही नई कहानी है या कि नयी कहानी, कहानीकार पाठक के लिए नहीं सिर्फ एक दूसरे के लिए लिखते हैं—कि खासे समझदार लोग की तबियत फस्त हो जाती है ।

व्यतीत क्या में घटना को खास महत्व देना, वातावरण की या चरित्र को खास महत्व देना ही क्याकारो का वह कोस रहा है, जिसने व्यतीत क्या समीक्षक को तत्वपरक भ्रालोचना के लिए उबसाया और उत्साहित किया था जिससे यह समीक्षा बुद्धि चरित्र प्रधान घटना प्रधान आदि शिदावली की कणुमाना म बँट गई थी और जिसके चलते क्या समीक्षा महज औपचारिकता का निर्वाह हो गई थी इसीलिए यह सवाल उत्तर की यह दिशा भी निर्धारित करता है कि क्या दृष्टि समीक्षा-बुद्धि को दूर तक प्रभावित भी करती है और कभी-कभी उसकी 'टोन' को भी निर्धारित करती है

बावजूद इन तमाम बातों के यह भी सही है कि व्यतीत क्या-समीक्षा बुद्धि से क्या की सजक दृष्टि बहुत आगे थी और इस क्या-सजक दृष्टि के साथ क्या समीक्षा बुद्धि के दूर तक सहयोगी न होने की वजह कविता और काव्यता समीक्षा की विगिष्ट स्थिति थी तत्कालीन समीक्षा-बुद्धि कविता के सूजन और भ्रालोचन के घातक से गुजर रही थी इसलिए वह न तो कहानी को सही दर्जा ही दिला सकती थी और न ही उसके मौलिक रचाव को विदलेपित करने का साहस ही कर सकती थी क्योंकि तब उस समय उन तमाम आसमों का सिर से उत्खनन करना पड़ता जो बने-बनाए भ्रालोचना तंत्र पर आघात कर सकते थे

छोटी घटनाओं की या घटनाओं को छोटा करके ही नहीं बल्कि नई कहानी में घटनाओं के जम-तम को ही उनके सही वास्तव में दे पाने की समझ पनपी है घटना के साथ अतिरिक्त जोड़ देना और उन्हें अतिरिक्त उच्छ्वास के साथ कहानी में लाना लेखकीय भावुकता है और रचना-कर्म में पूव आग्रहा से सयुक्त होना भी है साथ-साथ इष्ट को खोजने के लिए या वहाँ तक पहुँचने के लिए घटना को रचना-त्मक दृष्टि का भ्रग बनाकर उठाने हुए उसके लिए अतिरिक्त तयारी की जरूरत नहीं है और न ही इष्ट को यानी किसी द्रव्य-रंग को विटम्बना को किसी सन्नान्ति को उठा लेने के बाद भी अतिरिक्त तौर पर प्रस्तुत करने की जरूरत है, उसे तो रचना प्रक्रिया के अन्तरंग रास्ते से गुजरने हुए पाना है और उस सब में रचना प्रक्रिया से गुजरते हुए निस्संग और सहज भी रहना है, कतना सहज कि थुँघले लगते रंगे तब नगो घाँसों के सामने साफ़-साफ़ गुजरें और घटना ही बोन तसल आयाजन हीन होकर उसे बोनने

दे घटना में कुछ जोड़ना नहीं है और घटना इसलिए नहीं है कि उसने घटना को जहाँ म लिया है वह उतनी ही है कि उसमें घटाने की गुजाइश ही नहीं है वह अपनी जिज्ञासा में वनानिब है कथाकार के समूचे दायित्व के साथ

व्यतीत कहानी में जिन घटनाओं को कहा जाता था वे अक्सर जीवन से कटी हुई आरोपित सत्या और वस्तुवा स लस होकर वायवोय हाती थीं सुखी होने की ओर सुखी हो लेने की आकांक्षा से जुड़ी हुई—इसमें सुखान्त और दुःखान्त दोनों ही कोणा को सराय मिलती थी या फिर उन्हें सबेना के स्तर पर गहरे नहीं जिया जाता था और यदि फिल के चतुर दाव-पेच (प्रसाद और जनेद्र के यहाँ जिनकी मधुआ और 'पत्नी' कहानियाँ को अपवाद माना जा सकता है) में उनके जिए जाने की प्रामाणिक सतही प्रतीति बर्राई भी जाती थी तो गहरे जोहने पर वह सबदना ही झूठी पड जाता थी

व्यतीत कथाकार के सामने कहानी लिखने की विवशता कम थी उसे बनाने का ध्येय ही मुख्य था कुछ कहे गए मत्वो को ही उसकी कहानी बहती थी जो जिन्दगी में से होकर नहीं थे, आयोजित होकर ही थे इतना जम्पर था कि उसमें भारतीय दशन भारतीय सस्वृति और राष्ट्रीय धर्म की सुभाषिता और बचन-मुद्राओं के तौर पर ता रक्षा हो जाती थी, लेकिन आदमी और कहानी वहाँ बराबर छोट हुई रहती थी

नई कहानी' रचना होकर भी खास तौर से पुरानी कहानी से भिन्न है नया कथाकार पहले उसे 'रचना' की समूची हैसियत देता है बल्कि इस तरह कहा जाय कि वह पहले रचना की हैसियत पा लेती है, फिर वह कहानी होती है जबकि व्यतीत कथाकार कहानियाँ बुनता बनाता ता रहा—जिसका आधार अक्सर कोई नीति वाक्य होता था कोई सद्गर्भ या कोई आयोजित सत्य—लेकिन रचना होने से पहले ही वह उसे घट दे देता था या इस तरह कहना सत्य के ज्यादा करीब होगा कि कहानी में जो रचना निर्मित का कोण होता है व्यतीत कथाकार के यहाँ वह नहीं था इसलिए रचना होने से पहले ही पुरानी कहानी घट नहीं होती थी, वह रचना हान के लिए शुरू भी नहीं हाती थी । अज में 'रचना' शब्द का स्तेमाल करता हूँ तब उसमें मेरा मतलब सृजन की उस समूची इकाई से हाना है जो अपनी आन्तरिक सरचना में सम्पुष्ट है और रचना प्रक्रिया के भीतरी दख व वृत्तिकार के आत्म सधष को प्रामाणिक होकर भेलती है साहित्य की एक ऐसा इकाई जो अपने अर्थ में नितान्त 'साहित्य' शब्द है जिसमें दवाआ के श्रुणा से लेकर वाच सामग्री की सूची तक का साहित्य के नाम पर अर्थ नहीं डोया जाता प्रेम आदि पर निखी गई पुरानी कहानियाँ अक्सर साधू-सता पर लिखी गई कहानियाँ लगती हैं जिनका जिन्दगी और उसके वास्तव से वास्ता बेहद कम होता है और बेहद वास्ता उनका किससे होता है, यह अभी तक तय नहीं हो पाया

है प्रेमियों की हासत यह है कि वे सर कसम कराने के लिए मुजाहिदों में शामिल हो गए हैं और प्रेमियाएँ सिवाय प्रेम के याती सब कुछ कर सकती हैं हार' में ही वहाँ 'जीत' महसूस की जाती है और रास्ता बनने राती के सम्बन्ध हो जाते हैं विधवा के सामने सिवाय 'ममता' और सदा के दूसरा रास्ता नहीं होना और गुण्ड सत्वर्ग के लिए उत्तम हो जाते हैं, नाम बदल-बदल कर साम-ब्रह्मा के एन ही किन्मे हैं और स्त्री का सतीत्व परिवेण म अवेपित न किया जाकर हवा में लगाई गई कनम है तमाम पंडित पण्डित हैं, दुष्ट दुष्ट है और सज्जन सज्जन है गर्ज' में सब कुछ निरि चत है, अन्ति अन्त और मध्य वहाँ कुछ भी सोचन समझन की जरूरत नहीं मानवीय सम्बन्ध के नाम समूचा क्या साहित्य 'रामचरित मानस' में भावत है वरपावृत्ति स सेवर हिन्दू मुस्लिम एवता धर्म पागण्ड के भण्टा कीडव जामूनी अभियान से लेकर नारी शील की कच्चे पाँच की घुरिया समझन की परिरक्षण तब सब की गल के एन ही राग में रियाज किया गया अष्टा-पुरा नतिक घननिक के नीति शास्त्रीय मानवों की चरित्रा में घटना और वातावरण के माध्यम से कहानी बनाकर क्या 'नी' की भद्रा से सदा किया गया और मनोरंजन कमिया स बाहवाही पाकर सखन कम पर प्रसन्न भी हो लिया गया इस धान की वहाँ दरकार ही नहीं हुई कि अन्धे-युरे, नतिक घन तिय' की भी गर्ब बूझना है ता मानवीय सबूट के परिप्रेक्ष्य में उसे बूझने जाने की कोशिश हो, जो कोशिश की गई वह यह कि इन गोल मगोल वाता की उनके अन्त सूत्रा की बनगत और उनके दबावों की बिना बूझ अपरोक्षित होकर ही क्या माध्यम में प्रस्तुत किया जाता रहा समाज सुधारक जिद और नीति परिभाषा की 'गादवत सत्य मानकर कहानी में कहा गया और आदमी स उनके रिश्ते की जिदगी की साक्ष्य देकर प्रस्तुत नहीं किया गया नतीजा यह हुआ कि न तो मानवीय जीवना सुभवों की परिवेश में अवेपित किया गया और न तो आदमा का हा उसके सही चहरे के साथ अहमियत दिलाई जा सकी और जब आदमी की ही प्रतिष्ठा नहीं हो सकी तो उसकी अनुपस्थिति में कहानी की ही प्रतिष्ठा किस बिना पर होती ?

व्यतीत क्या म क्याकार म जिदगी से नहीं कृतिया से जिदगी की निमित करना चाहा था, जबकि नए क्याकार न जिदगी से कृतिया को रचा है उसने अब धारणात्मक सत्य की बाटकर हर अनुभव को परीक्षित करके ही कहानिया म दिया है यही वजह है कि रेणु रावेण यादव स लेकर जान रचन विजय मोहन सिंह-सुरेन्द्र तक कहानिया की एन बड़ी सख्या हैं जो अपनी प्रामाणिकता म युग सत्य की साम्य दे रही हैं

कुछ समासका के यहाँ नए साहित्य स जुड़ने की हॉम म सादगी स यह मान लिया गया कि नयी कहानी वह जो नए-यानी उम्र म नए—लिख रहे हैं और पुरानी कहानी ? जो कि अब से पहले तब लिखा गइ है और इही समीक्षा म एक वग वट

भी जो नया या पुराना जसा भेद मानने के लिए तयार ही नहीं था मतलब साहित्य गान्धित है, उसमें नया-पुराना क्या ? क्योंकि नए-पुराने के भेद को या तो मानने में ही माफ़ इन्कार कर दिया गया या फिर उसे उम्र के खाना में बांट दिया गया ज्यादा से ज्यादा यह हुआ कि कहानियाँ में बढ़ते हुए दृश्य बघा को ही नया मानकर उहे नयी कहानी घोषित कर दिया गया और इस तरह ग्रामाचल्यो पर लिखी गई तमाम कहानियो को नयी कहानी के विश्व विद्यालय में दाखिला दिला दिया गया

नए पुराने का विवेक दो युग बोधा को दो दृष्टियाँ का विवेक है एक म जिन्दगी से ऊपर होकर सब कुछ सोचा ममम्मा ही कहा गया है और दूसरे में जो कुछ सोचना समझना है वह जिन्दगी की राह गुजर कर है और इन दोनों ही का भेद-विवेक नई-पुरानी कहानी के दरम्यान लिया गया समीक्षा-विवेक है खाले पापूलर समीक्षका तब न इस विवेक को नजरान्दाज कर मान बदले हुए दृश्यबघो के फल में जड़ी हुई पुरानी कथारमक दृष्टि को ही नई कहानी का दर्जा दे डाला और इस तरह नए और पुराने का विश्लेषण बाफ़ी हद तक नहीं किया जा सका क्या की इस 'पहचान' में एक ओर तो नई कहानी में नया क्या है ? सब कुछ पुनः प्रस्तुतीकरण है प्रेमचन्द का कहा हुआ है—जैसे प्रश्न उठाए गए और दूसरी ओर जा कुछ पुनः प्रस्तुत था उसे ही नया कहा गया मतलब, ग्रामाचल्य की क्या-वस्तु वाली तमाम कहानियों का प्रेमचन्द से जोड़ना—उनकी परम्परा में आगे लिखी हुई मानकर—'नई कहानी' या 'भाज की कहानी' का मतलब लगाया गया प्रेमचन्द को और उनकी परम्परा को स्वयं सिद्ध स्तर पर नया मान लिया गया जबकि प्रेमचन्द किस्सागोई के जरिए दागी नानी की कहानियाँ वाली वस्तु को मनोरंजक बजाकर प्रस्तुत करते रहे और अतन आरोपित सत्या को लेकर अपने किस्सागो का ही अधिमिश्रित देते रहे—गो मेरा मतलब यह कतई नहीं है कि—किस्सा गो हाकर नई दृष्टि नहीं दी जा सकती—आधुनिक जिन्दगी के तनावों द्वारा अन्तर्विरोधों व बदलावों से जा दृष्टि उपजो है, वह प्रेमचन्द की बहुत कम—पूरा की रात और कपून—कहानियों में साफ़ हो सकी मतलब यह कि प्रेमचन्द की ग्राम्य क्या की नई कहानी के लिए परम्परा मानकर 'नए' के जो हिज्जे किए गए वह गलत हुआ और इसीलिए तमाम ग्राम्य क्याका की नई कहानी के तहत धुमार कर लेना और भी गलत हुआ ग्राम्य क्या नई कहानी की परम्परा नहीं है और न तो प्रेमचन्द से जुड़ रहने का माह्र ही अलवत्ता ग्राम्य क्या के माध्यम से भी नयी जीवन दृष्टि और नए जीवन को, आधुनिक जीवन के एव खाम पहनू को कहा जा सकता है और इस लिहाज से निब प्रसाद सिंह—नहो, बिन्दा महाराज रेणु—रस प्रिया, तीमरा नमम पान की देगम—मार्कडेय—गुनरा क बाबा—गलर जोगी—बासी का घटवार—गलेग मटियाती आदि सामग्र्य के साथ क्या-क्या उप संधिया के माध्यम बन रहे हैं यद्यपि तब के इस पटन का जानते और नगरते हुए

कि भारत कृषि प्रधान देश है इसलिए समस्त ग्राम्य कथा लेखन भा 'नयी कथा' का प्रतिनिधि लेखन है

दरअस्त 'वस्तु' के विहाज से कथा लेखन वा जायजा लेना या नयी-पुरानी कहानी के परस्पर घातर को समझना, नयी कथा समीक्षा का गलत कोण है और किसी स्तर पर तत्वपरक कथा-समीक्षा के संस्कार में खुद को मुक्त न कर पाना भी जिस तरह नये लेखकों द्वारा शहरी जीवन पर लिखी जाने वाली तमाम कहानियाँ नयी नहीं हैं उसी तरह तमाम ग्राम्य कथा लेखन भी नयी कहानी का मतलब नहीं रखता

माधुनिक जीवन का विसर्गति और विडम्बना को टोह पाव को गुंजाइश शहरी जीवन

अगर कहा जाय तो उसके सङ्क्रमण की गुंजाइश ग्राम्य जीवन में क्या कुछ कम है ? और फिर सवाल ग्राम्य जीवन और शहरी जीवन में जीवन के विभाजन का क्या है ? सवाल तो उस नयी कथात्मक दृष्टि समता का है जो जीवन के बलावा और उसके सबक की पहचान को पेश कर पाती है 'ग्राम्य कथा और शहरी कथा का विचार' उस समीक्षा-बुद्धि का नतीजा था जिसके पास इसक प्रतिरिक्त कथा सत्य को उगाहन के और कुछ बचा ही नहीं था और यह गुंम हुआ कि इस विचार की श्रमनियत से जल्दी ही परिचित हो लिया गया किसी खास कहानाकार के नाम से अपनी कथा समीक्षा की इतिहास करना हो कुछ समीक्षकों की गुजारिश की इतिहास रही है, अब इसके लिए क्या किया जाय कि वे लेखन अपनी कथा-उपलब्धियों में 'नए नहीं हैं' कथा-समीक्षा में 'शहरी कथा और 'ग्राम्य कथा' का खान बहुत कुछ इसी हस्ती के समीक्षकों ने उठाया था और अब हम कुछ इस तरह बदला है कि 'गुजारिश की इतिहास इसी में मानी जा रही है कि कुछ लेखकों का नाम बतई न लिया जाय 'समीक्षकों की इस विरादरी पर तरस खान के बलावा और क्या किया जा सकता है ?

नई कहानी और 'पुरानी कहानी' का अन्तर उनमें उपमाय लिए गए तनाव और संश्लेष से भी समझा जा सकता है 'पुरानी कहानी' में कथाकार 'संश्लेष' का स्तेमास बतौर फारमूला के करता था और अक्षर करता था जिसका मतलब होता था कि पाठक को जीवन के गहरे और जटिल अनुभवों से परे रखने हुए उसे दुर्बल उत्सुकता के दापरे में घसीट लाया जाय और कथा लेखन के महज एक धार्मिक फारमूला की सातिर उसकी रुचि भ्रष्ट करदी जाय पुराने कथाकारों की इसी लत ने कथा का पाठ-प्रक्रिया का सम्बन्ध असें तक गलत दिशा में लगाए रखा और इसी के चलते हिंदो-भाटक कथा को मनोरंजन का पर्याय समझना रहा 'कथा-माध्यम से जीवन का समझन और जीवन मूल्य का उपलब्ध करन में कहानी में करता गया संश्लेष और उसकी चरम सीमा न पाठक को उसे (कथा माध्यम) को गम्भीर विचार की श्रमनियत हो नहीं देन दो और इस तरह 'संश्लेष' के चमने टिप्पण कहानी जायगी स्तर पर हा पाठक को लगी और पहचानी रही और उसमें रहस्य और उत्सुकता के तबन का था

को सराय दतो रही नतीने के तौर पर पुरानी कहानी ने मानवीय सफट को कभी भी पारिभाषित नहीं किया बल्कि इतना और भी कि इस सफट को बूमन में पाठक की पहल को भी उसने हतोत्साहित किया

नई कहानी में दर्शित होता हुआ 'तनाव', पुरानी कहानी के 'सस्पेन्स' की तरह शिल्प का एक अपराधित प्रकार नहीं है, बल्कि 'आधुनिक' जिन्दगी के चलने की खोज की रचना-प्रक्रिया का अनिवार्य अंग है जो कहानी को जामूसी और मनोरंजन के स्तर से हटाकर उसे मानवीय सफट का केन्द्र सौंपता है और पाठक को उसका ग्रह सास कराता है। चूँकि कथा-गत यह तनाव आधुनिक जीवन की अग्रहीनता और विसंगतियों की उपज है, इसलिए वस्तु स्तर पर तो यह मानवीय सफट को रेखाङ्कित करता है और शिल्प स्तर पर आधुनिक जीवन के दबावों के प्रवाह का अनुसरण करता है और इसीलिए वस्तु शिल्प की साधुज्य सस्तिष्टि का नतीजा बनता है इस सन्दर्भ में इस नई कहानी की एक कथात्मक दृष्टि और वस्तु-शिल्प का नया आयाम भी माना जा सकता है।

कथा में व्यवहृत सस्पेन्स और 'तनाव' कथा के आदिम और अधुनातन मुहावरों का पाथक्य स्पष्ट करता है और वह दो युगों की कथा-गत लेखकीय दृष्टि का भी पाथक्य प्रवर्त्ता है इस पक्ष के साथ कि पुरानी कहानी में 'सस्पेन्स' कहानी को 'बनाना' और दिलचस्प बनाए रखने में एक अजीब-सा माध्यम था और करीब-करीब उसने कथा में कथोपकथन और चरित्र चित्रण जैसे कथा-तत्त्वा की तरह अपने लिए भी एक हैमियत प्राप्त करली थी लेकिन बोव-स्तर पर कथा के आंतरिक सपठन से उमका कोई वास्तव नहीं था, नई कहानी में 'तनाव' कथा के लिए अलग से किसी उपकरण का मतलब नहीं रखता, वह कथा में आघात अनुभूत रहता है उसकी अनुपस्थिति को किसी भी कोण से कथा के किसी भी स्तर पर साबित नहीं किया जा सकता अगर वस्तु शिल्प के अलग अलग खानों में भी कथा को बूमन की कोशिश से बाज न आया जाय तब भी यह स्वीकार करते बनेगा कि वह जितना वस्तु स्तर पर है, उतना ही शिल्प स्तर भी कहना न होगा कि वस्तु-शिल्प की इस अपाथक्य स्थिति ने नयी कहानी को एक 'जीवित' इकाई सरचना की हैमियत दिला दी है करीब-करीब जिन्दगी के समानान्तर और जिन्दगी के पूरे तौर पर समानान्तर होना उसकी कलात्मक कोशिश और लक्ष्य है तनाव के जरिए वह मानवीय नियति के सफट को बूमने में मदद कर रही है जबकि पुरानी कहानी कुतूहल के माध्यम से, मानवीय सफट से बेखबर होने में आदमी की मदद करती थी एक जिन्दगी के वास्तव से कतराती थी दूसरी उसने केन्द्र में धँस कर उसे भँजते हुए उससे मुक्ति के लिए किसी बेहतर सूरत की कोशिश में है।

'सस्पेन्स' की तरह ही पुरानी कहानी में भावुकता एक आयाम थी जिसका उपयोग कथा लेखक निहायत सजगता से करता था, मतलब पाठक को दया कराना

और प्राप्ति के लिए वही तब विवश करता है और वित्त तरह बचा के जान ॥ बुद्धि-हीन ब्यापार बांध लेना है नई कहानी न इस हिप्नोटिज्म से निजात पाई है और पाठकों को बात-बात पर रोज बातों स्त्रिया के दर्जे से उठाकर अधिव्यवस्था विचार होने की हैतियत हो है जिन्दगी के दबावा की समझन और महसूस करने में उनके बोझिल स्तर पर विन्यास किया है और उसके विवसित होने में मदद की है यानी कहानी में भावुकता को बनौर 'फारमूला' के उपयोग किए जान के वह विरुद्ध है और वह विरुद्ध ब्यापार-गन हर फारमूल के है, हालांकि उसने 'फारमूला' के बारे में भ्रम कुछ लेगया के वही गुणात्मक होने लगी है सचिन् यह गुणात्मक व्यतीत कहानी के फारमूला जसी तो नहीं ही है भावुकता के विरुद्ध 'नई कहानी' में 'व्यवस्था और तत्त्वों' उभर कर आई है जो ब्यापार के व्यवस्था का सबूत है और पाठकों को 'गलत' स्थिति से उठाकर सीधा बनाने के क्षेत्र में खाली इमदा है

नयी ब्यापार में 'परिवेश' की नवीनता को नया मानकर धूमन से सवान को गलत उत्तर में नहीं बचाया जा सकता ब्यापार नवीन जीवन दृष्टि ही नई कहानी की पहचान का आधार है

प्रारोपित सत्य और विरोधा के आधार पर व्यतीत कहानी में चरित्रों के निर्माण का जो ध्येय था, नई कहानी में उसे महत्व नहीं मिला मानवम सफट की रेखांकित करन बात चरित्र ही नई कहानी के ससार में आए हैं और वे व्यतीत कहानी के चरित्रों की तरह महान और तुच्छ होकर नहीं, बल्कि मानवीय सदमों को उजागर करने हुए परिवेश में प्रारोपित होकर दूसरे भ्रम में चरित्र की जगह वस्तु विचार की ब्यापारमक दृष्टि होकर

लम्बी कविताओं की तरह लम्बी कहानियों (तीसरी कसम दूटना, मिस बात एक और जिन्दगी एक पति के नास मछलियाँ मित्रो मरजानी, यारी के पार राजा निरवसिया आदि) का सखन इस बात का सबूत है कि आधुनिक जिन्दगी की पकड़ में हमारा ब्यापार लेखन युग बोध के समानान्तर है बावजूद अन्तर्विरोधा के जीवन का जो बिडम्बनापूर्ण प्रवाह है, उसे इन लम्बी कहानियाँ में प्रामाणिक अनुभव की पुष्ट भूमि में बूमने की कोशिश है हालांकि ईसप के फुल जसो कहानियाँ नई कहानियों की अपनी एक खास प्रकृति है—

नई कहानी ने मध्य की दूसरी विधाओं को इस बदल धातुसात दिया है कि रेखाचित्र रिपोर्टजि सम्मरण यात्रा विवरण यहाँ तब कि विवश भी उसको परिभाषा से इतना कम दूर रह गया है कि कहानी की प्रचलित समूची परिभाषा ही गलत गई है नई कहानी न अपने माध्यम में विवसित होकर, अनेक साहित्यिक विधाओं को कलात्मक विनियमाओं की रचना प्रक्रिया का भ्रम बनाते हुए इस तरह खुद में समो लिया है कि वह बदल हुए जीवनानुभवा को व्यतीत कहानी के मुकाबले, वह पान में बेह

सक्षम साबित हो रही है

व्यतीत कहानी हम अनेक स्तरों पर वर्तमान से तोड़ती थी और एवज में अतीत और भविष्य से जोड़ती थी नविष्य का मुठठी में कसने के यत्न में समूचा व्यतीत क्या लेखन वर्तमान को फिसल जाने देता था और उन चिरागों की रोशनी की जड़ों में पलते हुए अंधरे पर हमारी दृष्टि नहीं जा पाती थी मतलब, हम वर्तमान से पूरे तौर पर कट हुए होते थे और यह कहानी का चिराग अतीत और भविष्य के धन्दीला में ही रगारग आलोक उनीचता रहना था जब कि कहानी पढ़ने समय (और लिखते समय भी) हम या तो अतीत में होने थे या भविष्य में या फिर एक सग अतीत और भविष्य दोनों में अगर वहीं नहीं हो होते थे तो वह सिर्फ वर्तमान ही था और अब यह सोच सोच कर मनोरंजन के अलावा उनकी बेचारगी पर तरस भी आता है कि क्या में व्यतीत और भविष्य को गुनगुनाने के लिए अपने वर्तमान से चलातू कटने में कौसी तो याता में उन्हें गुजरना पड़ा होगा और बिना वर्तमान को धुँके कस तो वे अतीत और भविष्य को भ्रंदाज पाए होंगे ? दरअसल अपने वर्तमान पर सचते हुए का लहजा सा प्रस्तुत कर तात्कालिक विषय और मानवीय सफट को भेलन से क़तरा जाने का छासा प्रच्छा नमूना व्यतीत कहानियाँ में उपलब्ध है इन कहानीकारों के यहाँ अपने बान्धव से जुझत हुए आदमी को कहानी में एक हवादार नखलिस्तान तो उपलब्ध करा दिया जाता था ताकि वह छुनकर सास ले सके लेकिन कहानी पढ़ने के बाद उस फिर अपने दमपाट बान्धव में ही लौट आने की नियति मिली थी और इस नियति का सामना करने में न तो क्याकार की कोई हिस्सेदारी होती थी और न तो किसी तरह की कोई जवाबदेही ही इस नियति को नज़रअंज़ा कर यदि कहानी नखलिस्तानों के निर्माण में कुछ हवाई 'अतीत और भविष्य' की अनिश्चित रोमानी अंग से मलदधु 'पहचान' देती रही तो इससे वास्तव को बलने और बदसते हुए वास्तव को समझने वाला कोण तो विकसित हुआ ही नहीं, हुआ यह कि कहानी की इस तज ने उसे मभीर साहित्य रूप न देकर वास्तव की जवाबदेही से परे मनोरंजन का सुख वाला 'गल्प रूप दे दिया इसलिए कहानी गम गलत करने और पालतू बत काटने के लिए सुनने-पढ़ने को बीज तो हागई लेकिन समझदारी का तपाजा उससे नहीं किया गया ।

निम्न वर्ग की कहानियाँ में वर्तमान बहुत कम होता है इस हद तक कि वह व्यतीत का हा प्रसार हो उठता है, यहाँ तक भी कि वह अक्सर वर्तमान को अतीत बनाकर हा पेश करने का आदी है यानी जो घट रहा है साक्ष्य उसमें ही वह देता है लेकिन घट हुए की नहीं बल्कि घट गए हुए के तौर पर इतना और भी कि भविष्य भी उसके यहाँ व्यतीत के लम्बे में ही पेश किया जाता है करत हुए पत्ते उसने नहीं देखे हैं वह देखता तो है उन्हें लेकिन दूगरे लिन—सबरे जब वे उठकर रात का साँडिया पर ठहर गए हैं 'उब' यह साचना अच्छा लगता है कि बत रात में पत्ते पुष्पाय स उड

पर सोनिया पर घा ठहरे हंगे । उमकी कहानियाँ धक्कर यात्र की कहानियाँ हैं मतलब कहानियाँ न जो कुछ भी उभरता है और जो कुछ भी महत्वपूर्ण है वह यात्र में जो स्वप्न में भी हातो है और भीने हुए समय के माध्यम से भी यदि वर्तमान उसके यहाँ व्यतीत में प्रसंग नहीं होता, तो वह धूम्रर उमे प्रसंग पर ले जाता है एक धुँधना सा याद का, मोन का, स्वप्न का संगीत का यात्रि दूसरी चल्ता का धावरण देकर

मने निमल का कहानियाँ में वर्तमान से कटन का जो सवाल उठाया है वह इस माइन में नहीं कि निमल के यहाँ वर्तमान सपन की धुरी नहीं है जब प्रसाद जैसे लेखक व्यतीत कथाओं में मौजूदा जिंदगी के मसला से साधात्वार कर सकते थे तब निमल तो जिन्गी के वर्तमान अन्तर्बिरोधा से परिचित होता हुआ एक निश्चित मजहबी भविष्य के तई प्रतिबद्ध है दरअसल वर्तमान से कटने का अम पदा कर वर्तमान पर सोचते हुए उसकी कहानियाँ का अपना एक पास मुहावरा है और इस मुहावरे की गिरफ्त में हर लेखन अपनी अपनी दृष्टि के अनुकूल है ही

लकिन इधर 'नई कहानी' को व्यतीत जीवी कहानी करार देन में जो अथक श्रम हो रहा है वह कुछ में काफी दिलचस्प है— नई कहानी का नायक अतीत में जीता है नई कहानी अपने वर्तमान के ही चलते व्यतीत कहानी और व्यतीत युगीन मूल्यों व परम्पराओं के खिनाफ जो एक धारणी उठ खड़ी हुई है उसकी कत्ती आत्मक व्याख्या है कि वह अतीत जीवी है नई कहानी के गुरु दीर में बाबा, दादी माँ व पिता के जिन रिश्ता की पारिभाषित किया गया वह नई पीढ़ी से उनके रिश्ता में बदलाव की वजह से अतीत की आँखों और अतीत की तुलना से वर्तमान आकने की दृष्टि से इन रिश्ता के मूल्यकन को अतीत जीवी होन की सपना देना 'साहमपूर्ण' निष्कर्ष होगा वर्तमान जीवन में क्या व्यतीत रिश्ता और पीढ़ियाँ नहीं हैं ? और अगर हैं तो क्या नए सदमों से उनकी बाबत सोचना अतीत जीवी हो जाना है क्या अतीत वर्तमान की पृष्ठभूमि बनकर नहीं आता और तब क्या वह वर्तमान के निमित्त प्रयुक्त नहीं होता ? फिर यह मतलब कैसे निकाला जा सकता है कि वर्तमान यदि नई कहानी में आता है तो अतीत का जगाने का निमित्त बनकर ? नई कहानी का नायक जो अतीत में जीता है वह उसका लहजा है, लहजे और वस्तु में जा अंतर है उसे समझन की दरकार है वस्तु और लहजे मध्य होता है नाकि वस्तु का अपना लहजा होता है लकिन लहजा वस्तु जा नहीं होता, क्या यह कहे जाने की गुंजाइश अब भी रखनी होगी कि लहजा कथन की महज मुद्रा है कथ्य जा वह नहीं है फिर नयी कहानी का नायक जो अतीत में जीता है वह क्या अतीत होकर जीता है ? अतीत में जीना और अतीत होकर जीना दो असंग बातें हैं—वस्तु और लहजे के मानिन्द अगर दोना के अंतर को नहीं समझा जाता तब नई कहानी को 'व्यतीत जीवी कहानी' कहना और उसका वर्तमान से कट होना जब निष्कर्ष निकालना बेहद आसान है आसान, लेकिन अहम नहीं बहरहाल ।

[२]

नई कहानी : पाठ



दोपहर का भोजन

सिद्धेश्वरी न खाना बनाने के बाद चूहे को दुस्सा दिया और दोना घुटनो के बीच सिर रखकर सायद पर की उँगलिया या जमीन पर चलते चींटे चींटियों को देखने लगी। अचानक उसे मालूम हुआ कि बहुत देर से उसे प्यास लगी है। वह मतवाले की तरह उठी और गगरे से लोटा भर पानी लेकर गट गट चढ़ा गई। खाली पानी उसके कलेजे में लग गया और वह 'हाय राम।' कहकर वहीं जमीन पर लेट गई।

लगभग आधे घंटे तक वही उसी तरह पड़ी रहने के बाद उसके जी में जी आया। वह बैठ गई, आँखों की मल-मलकर इधर उधर देखा और फिर उसकी दृष्टि ओमारे में जघ टूटे छटोले पर सोये अपने छ वर्षीय लड़के प्रमोद पर पड़ गई। लड़का नग घड़ग पड़ा था। उसके गले तथा छाती की हड्डिया साफ दिखायी देती थी। उसके हाथ पर बासी कचड़ियों की तरह सूखे तथा बेजान पड़े थे और उसका पेट हड्डिया की तरह फूला हुआ था। उसका मुँह खुला हुआ था और उस पर अनगिनत मक्खियाँ उड़ रही थी।

वह उठी, कच्चे के मुँह पर अपना एक फटा गन्दा ग्लाउज डाल दिया और एक-आध मिनट सुन्न खड़ी रहने के बाद बाहर दरवाजे पर जाकर किचाड की आड से गली निहारने लगी। बारह बज चुके थे। धूप अत्यन्त तेज थी और कभी कभी एक-दो व्यक्ति सिर पर तोलिया या गमछा रखे हुए या मजदूरी से छाटा साने हुए फुर्ती के साथ लपकते हुए सामने से गुजर जाते।

दस पंद्रह मिनट तक वह उसी तरह खड़ी रही, फिर उसके चेहरे पर व्यग्रता फैल गई और उसने आसमान तथा कड़ी धूप की ओर चिंता से देखा। एक-दो क्षण बाद जब उसने सिर को किचाड में बांधी आग बढ़ाकर गली के छोर की तरफ निहारा तो उसका बड़ा लड़का रामचंद्र धीरे धीरे घर की ओर सरकता नजर आया।

उसने फुर्ती से एक लोटा पानी ओसार की चौकी के पास नीचे रख दिया और चौके में जाकर खाने के स्थान को जल्दी-जल्दी पानी से लीपने-मोतन लगी। वहाँ पीड़ा रखकर उसने सिर को दरवाजे की ओर घुमाया ही था कि रामचंद्र न अंदर कदम रखा।

रामचन्द्र आकर घम-सा चौकी पर बैठ गया और फिर वही बेजान-सा रुट गया। उसका मुँह लाल तथा चढ़ा हुआ था। उसने बाल अस्त-व्यस्त थे और उगम पड़े पुराने जूता पर गर्जनी हुई थी।

सिद्धेश्वरी की पहले हिम्मत नहीं हुई कि उसने पास जाय और वह वही स भयभीत हिरनी की भाँति सिर उचका घुमाकर बेंटे का व्यग्रता स निहारती रही। किन्तु, लगभग दस मिनट बीतने के पश्चात् भी जब रामचन्द्र नहीं उठा तो वह धवरा गई। पाग जाकर पुकारा— 'बड़बू, बड़बू।' लेकिन उसने कुछ उत्तर न देने पर डर गई और लड़के की नाक के पास हाथ रख दिया। सास ठीक स चल रही थी। फिर गिर पर हाथ रखकर देखा, बुरात नहीं था। हाथ के स्पन्द से रामचन्द्र ने आँखें खोली। पहले उसने माँ की आर मुस्त नज़रा स देखा, फिर झट से उठ बैठा। जूत निचालने और नीचे रख लोटे के जल से हाथ-पर धोने के बाद वह यत्र की तरह चौकी पर आकर बैठ गया।

सिद्धेश्वरी ने डरते डरते पूछा, 'पाना तयार हूँ यही लाऊँ क्या ?'

रामचन्द्र ने उठते हुए प्रश्न किया, "बाबूजी या कुत्ते ?"

सिद्धेश्वरी ने चौंके की ओर भागते हुए उत्तर दिया, "आते ही होंगे।"

रामचन्द्र पीड़ पर बैठ गया। उसकी उम्र लगभग इक्कीस वर्ष थी। लंबा, दुबला-पतला, गोरा रंग, बड़ी-बड़ी आँखें तथा होठा पर झुर्रियाँ। वह एक स्थानीय दैनिक समाचार-पत्र के दफ्तर में अपनी तबीयत से प्रूफ रीडरी का काम सीखता था। पिछले साल ही उसने इण्टर पास किया था।

सिद्धेश्वरी ने खाने की थाली लाकर सामने रख दी और पास ही बैठकर पखा करन लगी। रामचन्द्र ने खाने की ओर दाशनिक की भाँति देखा। कुल दो रोटियाँ, भर कटोरा पनियाई दाल और चने की तली तरकारी।

रामचन्द्र ने रोटी के प्रथम टुकड़े की निगलते हुए पूछा— मोहन कहाँ है ? बड़ी बड़ी घूप हो रही है।

मोहन सिद्धेश्वरी का मजाला लड़का था। उसकी उम्र अठारह वर्ष थी और वह इस साल हाई स्कूल का प्राइवेट इम्तहान देने की तयारी कर रहा था। वह स मालूम कब से घर से गायब था और सिद्धेश्वरी का स्वयं पता नहीं था कि वह कहाँ गया है।

किन्तु सच बोलने की उसकी तबीयत नहीं हुई और उसने झूठ-मूठ कहा— "किसी लड़के के महाँ पढ़ने गया है आता ही होगा। दिमाग उसका बड़ा तेज है और उसकी तबीयत चौबीसो घंटे पढ़ने में ही लगी रहती है। हमेशा उसी की बात करता रहता है।"

रामचन्द्र ने कुछ नहीं कहा। एक टुकड़ा मुँह में रखकर मरा गिलास पानी पी

गया, फिर खाने में लग गया। वह काफी छोटे छोटे टुकड़े तोड़कर उन्हें धीरे धीरे चबा रहा था।

सिद्धेश्वरी भय तथा आतंक से अपने बेटे को एकटक निहार रही थी। कुछ क्षण बीतने के बाद डरते डरते उसने पूछा—“वहाँ कुछ हुआ क्या ?”

रामचंद्र ने अपनी बड़ी बड़ी भावहीन आँखा से अपनी माँ को देखा, फिर नीचा सिर करके कुछ स्खाई से बोला—“समय आने पर सब ठीक हो जायेगा।”

सिद्धेश्वरी चुप रही। धूप और तेज हो गई थी। छोटे आँगन के ऊपर आसमान में बादल के एक दो टुकड़े पाल की नावों की तरह तैर रहे थे। बाहर की गली से गुजरते हुए खड़खड़िया हवके की आवाज आ रही थी और खटोले पर सोये बालक की सास का खर-खर शब्द सुनायी दे रहा था।

रामचंद्र ने अचानक चुप्पी को भंग करते हुए पूछा—“प्रमोद खा चुका ?”

सिद्धेश्वरी ने प्रमोद की ओर देखते हुए उदास स्वर में उत्तर दिया—“हाँ, खा चुका।”

“रोया तो नहीं था ?”

सिद्धेश्वरी फिर झूठ बोल गई—“आज तो सचमुच नहीं रोया। वह बड़ा ही होशियार हो गया है। कहता था, बड़का भया के यहाँ जाऊँगा। ऐसा लड़का ”

पर वह आगे कुछ न बोल सकी, जैसे उसके गले में कुछ अटक गया। कल प्रमोद ने रेवड़ी खाने की जिद पकड़ ली थी और उसके लिए डेढ़ घंटे तक रोने के बाद सोया था।

रामचंद्र ने कुछ आश्चर्य के साथ अपनी माँ की आँखें देखा और फिर सिर नीचा करके कुछ तेजी से खाने लगा।

थाली में जब रोटी का केवल एक टुकड़ा बच रहा गया, तो सिद्धेश्वरी ने उठने का उपक्रम करते हुए प्रश्न किया—“एक रोटी और लाती हूँ ?”

रामचंद्र हाथ से मना करते हुए हड़बड़ाकर बोल पड़ा, “नहीं-नहीं, जरा भी नहीं। मेरा पेट पहले ही भर चुका है। मैं तो यह भी छोड़ने वाला हूँ। बस अब नहीं।”

सिद्धेश्वरी ने जिद की—“अच्छा, आधी ही सही।”

रामचंद्र बिगड़ उठा—“अधिक खिलाकर बीमार ढालने की तबीयत है क्या ? तुम लोग जरा भी नहीं सोचते हो। बस, अपनी जिद ! भूख रहती तो क्या ले नहीं लेता ?”

सिद्धेश्वरी जहाँ-की-तहाँ बठी हो रह गई। रामचंद्र ने थाली में बचे टुकड़े से हाथ खींच लिया और रोटी की ओर दखते हुए कहा—“माँ, पानी लाओ।”

सिद्धेश्वरी छोटा लेकर पानी लेन चली गई। रामचंद्र ने बटोरे को उँगलियों

से बजाया, फिर हाथ को थाल में रस दिया। एक-दो क्षण बाद रोटी के टुकड़े को घीरे से हाथ से उठाकर आँस से निहारा और अन्त में इधर उधर देखने के बाद टुकड़े का मुँह में इस सरलता से रस लिया, जैसे वह भोजन का प्राप्त न होकर पान का बीड़ा हो।

मँसला लडका मोहन आते ही हाथ-पर धोकर पीठ पर बठ गया। वह कुछ साँवला था और उसकी आँखें छोटी थीं। उसने चेहरे पर चेचक के दाग थे। वह अपने भाई की तरह दुबला-मल्ला था, किंतु उतना लम्बा न था। वह उस की अपेक्षा वही अधिक गम्भीर और उदास दिसायी पड़ रहा था।

सिद्धेश्वरी ने उससे सामन वाली रखते हुए प्रश्न किया—“वहाँ रह गये थे बेटा? भया पूछ रहा था।”

मोहन ने रोटी के एक बड़े प्राप्त का निगलने की कोशिश करते हुए अस्वाभाविक मोटे स्वर में जवाब दिया—“वही तो नहीं गया था। यही पर था।”

सिद्धेश्वरी वही बठकर पत्ता झुलाती हुई इस तरह बोली, जैसे स्वप्न में बड़ बड़ा रही हो—“बड़का तुम्हारी बड़ी सारीफ कर रहा था। वह रहा था, मोहन बड़ा दिमागी होगा, उसकी तबीयत चौबीसो घंटे पढ़ने में ही लगी रहती है।—यह कहकर उसने अपने मँसले लडके की ओर इस तरह देखा, जैसे उसने कोई चोरी की हो।

मोहन अपनी माँ की ओर देखकर फीकी हसी हँस पड़ा और फिर खान में जुट गया। वह परोसी गई दो रोटियों में से एक रोटी, कटोर की तीन चौमाई थाल तथा अधिकांश तरकारी साफ कर चुका था।

सिद्धेश्वरी की समझ में नहीं आया कि वह क्या करे। इन दोनों लडका से उसे बहुत डर लगता था। अचानक उसकी आँखें मर आईं। वह दूसरी ओर देखने लगी।

घोड़ी देर बाद उसने मोहन की ओर मुँह फेरा, तो लडका लगभग खाना समाप्त कर चुका था।

सिद्धेश्वरी ने चौबत्ते हुए पूछा—“एक रोटी देती हूँ?”

मोहन ने रसोई की ओर रहस्यमय नेत्रों से देखा फिर मुस्त स्वर में बोला—“नहीं।”

सिद्धेश्वरी ने निडरिजाते हुए कहा—“नहीं बेटा मेरी कसम योड़ी ही ले लो। तुम्हारे भया ने एक रोटी ली थी।”

मोहन ने अपनी माँ को गौर से देखा, फिर धीरे धीरे इस तरह उत्तर दिया जैसे कोई गिरफ्तार अपन गिरफ्तारी को समझाता है—“नहीं रे बस। अब्बल तो अब भूल नहीं। फिर रोटियाँ तूने ऐसी बनायी हैं कि खायी नहीं जाती। न मालूम कसी लग

रही हैं। खर, अगर तू चाहती ही है, तो बटोरे में थोड़ी दाल दे दे। दाल बड़ी अच्छी बनी है।”

सिद्धेश्वरी से कुछ कहते न बना और उसने कटारे का दाल से भर दिया।

मोहन बटोरे को मुँह से लगाकर सुढ़-सुढ़ पी रहा था कि मुंशी चन्द्रिका प्रसाद जूता की खस-खस घसीटते हुए आये और राम का नाम लेकर चौकी पर बैठ गये। सिद्धेश्वरी ने माथे पर साड़ी को कुछ नीचे खिसका लिया और मोहन दाल को एक सास में पीकर तथा पानी के लोठे को हाथ में लेकर तभी से बाहर चला गया।

दो राटियाँ, बटोरा भर दाल तथा चने की तली तरकारी। मुंशी चन्द्रिका प्रसाद पीछे पर पालखी मारकर बैठे रोटी के एक-एक ग्रास को इस तरह घुमला चबा रहे थे, जैसे बूढ़ी गाय जुमाली करती है। उनकी उम्र पतालीस वर्ष के लगभग थी, किन्तु पचास-पचपन के लगते थे। शरीर का चमड़ा झूलने लगा था, गंजी खोपड़ी आईने की भाँति चमक रही थी। गंजी घोसी के ऊपर अपेक्षाकृत कुछ साफ वनियान तार-तार लटक रही थी।

मुंशीजी ने बटोरे को हाथ में लेकर दाल को थोड़ा सुढ़कते हुए पूछा—
“बढका दिखायी नहीं दे रहा।”

सिद्धेश्वरी की समझ में नहीं आ रहा था कि उसके दिल में क्या हो गया है—जैसे कुछ काट रहा हो। पक्ष को जरा और जोर से घुमाती हुई बोली—“अभी अभी खाकर काम पर गया है। कह रहा था, कुछ दिनों में नौकरी लग जायेगी। हमेंसा ‘बावूजी-बावूजा’ किये रहता है। बोला—‘बावूजी देवता के समान हैं।’”

मुंशीजी के चेहरे पर कुछ चमक आयी। गरमाते हुए पूछा—“ऐं क्या कहता था कि बावूजी देवता के समान हैं? बड़ा पागल है।”

सिद्धेश्वरी पर जैसे नशा चढ़ गया था। उन्माद की रोगिणी की भाँति बड़बड़ाने लगी—“पागल नहीं है बड़ा होशियार है। उस जमाने का कोई महात्मा है। मोहन तो उसकी बड़ा इज्जत करता है। आज कह रहा था कि नया नौ शहर में बड़ी इज्जत होती है, पत्ने लिखने वालों में बड़ा आदर होता है और बढका तो छोटे भाव्यों पर जान देता है। दुनियाँ में वह सब-कुछ सह सकता है, पर यह नहीं देव्य सकता कि उसके प्रमोद को कुछ हो जाए।”

मुंशीजी दाल-लगे हाथ को चाट रहे थे। उन्होंने सामने की ताक की ओर देखते हुए कुछ हँसकर कहा—“बढका का दिमाग तो खर काफी तेज है वस लडकपन में बड़ा मटलट भी था। हमेंसा खेले-कूद में लगा रहता था, लेकिन यह भी बात थी कि जो सबक में उसे याद करने को देता था, उसे बराक रखता था। असल तो यह है कि तीनों लडके काफी हाशियार हैं। प्रमोद को कम समझती हो?”
—यह कहकर वह अचानक जोर से हँस पड़े।

मु शीजी डेड रोटी खा चुकने के बाद एक ग्रास से मुद्ध कर रहे थे। कुछ बठिनाई होने पर एक गिलास पानी चढ़ा गए। फिर खर-खर खांसकर खाने लगे।

फिर चुप्पी छा गई। दूर से किसी आटे की चक्की की पुक-पुक आवाज सुनायी दे रही थी और पास के नीम के पेड़ पर बठा कोई पड़क लगातार बोल रहा था।

सिद्धेश्वरी की समझ में नहीं आ रहा था कि क्या कहे। वह चाहती थी कि सभी चीजें ठीक से पूछ ले। सभी चीजें ठीक से जान ले और दुनिया की हर चीज पर पहले की तरह धड़ले से बात करे। पर उसकी हिम्मत नहीं होती थी। उसके दिल में न जाने कसा भय समाया हुआ था।

अब मु शीजी इस तरह चुपचाप दुबके हुए खा रहे थे, जैसे पिछले दो दिनों से मौन-व्रत धारण कर रखा हो और उसको कही जाकर आज शाम को तोड़ने वाले हो।

सिद्धेश्वरी से जैसे नहीं रहा गया। बोली—“मालूम होता है, अब बारिश नहीं होगी।”

मु शीजी ने एक क्षण के लिए इधर-उधर देखा, फिर निर्विकार स्वर में राय दी—“भक्तियाँ बहुत हो गई हैं।”

सिद्धेश्वरी ने उत्सुकता प्रकट की—“कूफाजी बीमार हैं, कोई समाचार नहीं आया।”

मु शीजी ने चने के दानों की ओर इस दिलचस्पी से दृष्टिपात किया, जैसे उनसे बातचीत करने वाले हो। फिर सूचना दी—“गंगासरण बाबू की लडकी की शादी तय हो गई। लडका एम० ए० पास है।”

सिद्धेश्वरी हठात् चुप हो गई। मु शीजी भी आगे कुछ नहीं बोले। उनका खाना समाप्त हो गया था और वे थाली में बचे-खुचे दानों को बदर की तरह बीन रहे थे।

सिद्धेश्वरी ने पूछा—“बडका की कसम एक रोटी देती हूँ। अभी बहुत-सी हैं।”

मु शीजी ने पत्नी की ओर अपराधी के समान तथा रसोई की ओर कनखी से देखा, तत्पश्चात् किसी गुटे उस्ताद की भाँति बोले—“रोटी रहने दो, पेड़ काफ़ी भर चुका है। अन और नमकीन चीजाँ से तबीयत ठब भी गई है। तुमने व्यथ में कसम घरा दी। खर, कसम रखने के लिए ले रहा हूँ। गुठ होगा क्या ?”

सिद्धेश्वरी ने बताया कि हँडिया में थोड़ा-सा गुठ है।

मु शीजी ने उत्साह के साथ कहा—“तो थोड़े गुठ का ठंडा रस बनाओ, पीऊँगा। तुम्हारी कसम भी रह जाणगी, जायका भी बदल जायगा, साथ-ही-साथ हाजमा भी दुस्त होगा। हाँ, रोटी खाते-खाते नाक में दम आ गया है।”—यह कहकर व ठहाका मारकर हँस पड़े।

मुंशीजी के निबटने के पश्चान् सिद्धेश्वरी उनकी जूठी थाली लेकर चौके की जमीन पर बठ गई । बटलोई की दाल को कटोरे में उँडेल दिया, पर वह पूरा भरा नहीं । छिपुली में थोड़ी-सी चने की तरकारी बची थी, उसे पास खींच लिया । रोटियों की थाली को भी उसने पास खींच लिया, उसमें केवल एक रोटी बची थी । मोटी, मही और जली उस रोटी को वह जूठी थाली में रखने जा रही थी कि अचानक उसका ध्यान ओसारे में सोये प्रमोद की ओर आकर्षित हो गया । उसने लडके को कुछ देर तक एकटक देखा, फिर रोटी को दो बराबर टुकड़ा में विभाजित कर दिया । एक टुकड़े को तो अलग रख दिया और दूसरे टुकड़े को अपनी जूठी थाली में रख लिया । तदुपरान्त एक लोटा पानी लेकर खाने बठ गई । उसने पहला घास मुँह में रखा और तब न मालूम कहाँ से उसकी आँखों से टपटप आँसू चूने लगे ।

सारा घर मन्त्रियों से मनमन कर रहा था । आँगन की अलगनी पर एक गन्दी साड़ी टँगी थी, जिसमें कई पवद लगे हुए थे । दोनों बड़े लडकों का कहीं पता नहीं था । बाहर की कोठरी में मुंशीजी आँखें मुँह होकर निश्चितता के साथ सो रहे थे, जैसे डेढ़ महीने पूर्व मकान किराया नियंत्रण विभाग की बल्की से उनकी छँटनी न हुई हो और शाम को उनको काम की तलाश में कहीं जाना न हो ।

वापसी

गजाघर बाबू ने कमरे में जमा सामान पर एक मजर पौड़ाई—दा बक्स डोलची, बालटी—“यह डिब्बा क्या है गनेशी ?” उन्होंने पूछा । गनेशी विस्तर बांधता हुआ, कुछ गब, कुछ दुख, कुछ लज्जा-से बोला, ‘घरवाली ने साथ की कुछ बेसन के लड्डू रख दिये हैं । कहा बाबूजी की पसंद थे, अब कहीं हम गरीब लोग आपकी कुछ खातिर कर पाएँगे ।’ घर जाने की खुशी में भी गजाघर बाबू ने एक विषाद का अनुभव किया, जैसे एक परिचित, स्नेह, आदरमय, सहज सत्कार से उनका नाता टूट रहा था ।

‘कभी-कभी हम लोगो की भी खबर लेते रहिएगा ।’ गनेशी विस्तर में रस्ती बांधता हुआ बोला ।

“कभी कुछ जरूरत हो तो लिखना गनेशी । इस अगहन तक बिठिया की शादी कर दो ।

गनेशी ने अँगोछे के छोर से आँखें पोछी ‘अब आप लोग सहारा न देंगे तो कौन देगा । आप यहाँ रहते तो गादी में कुछ होसला रहता ।’

गजाघर बाबू चलने की तयार बठ थे । रेलवे क्वाटर का वह कमरा जिसमें उन्होंने कितन वष बिताये थे उनका सामान हट जाने से कुरूप और नग्न लग रहा था । आँगन में रोपे पीप भी जान-बहुवान के लाग ले गये थे, और जगह-जगह मिट्टी बिलरी हुई थी । घर पत्नी बाल-बच्चा के साथ रहने की कल्पना में यह बिछोह एक दुबल शहर की तरह उठकर विलीन हो गया ।

गजाघर बाबू खूना थे, बहुत खूना । पतीस साल की नौकरी के बाद वह रिटायर होकर जा रहे थे । इन वर्षों में अधिकांश समय उन्होंने अकेले रह कर काटा था । उन अकेले क्षणों में उन्होंने इसी समय की कल्पना की थी जब वह अपने परिवार के साथ रह सकेंगे । इसी आशा के सहार वह अपने अभाव का बास ला रहे थे । सत्कार की दृष्टि में उनका जीवन सफल कहा जा सकता था । उन्होंने शहर में एक मकान बनवा लिया था बड़े लडके अमर और लडकी कान्ति की गानियाँ कर दी थी दो बच्चे ऊँची कक्षाओं में पढ़ रहे थे । गजाघर बाबू नौकरी के कारण प्रायः छोटे स्टेशन पर रह और उनके बच्चे और पत्नी शहर में जिससे पढ़ाई में बाधा न हो । गजाघर

बाबू स्वभाव से बहुत स्नही व्यक्ति थे और स्नह के आकांक्षी भी। जब परिवार साथ था, ड्यूटी से लौटकर बच्चों से हँसते-बोलते, पत्नी से कुछ मनोविनोद वरत—उन सबके चले जाने से उनके जीवन में गहन सूनापन मर उठा। खाली क्षणों में उनसे घर में टिका न जाता। दृष्टि प्रकृति के न होने पर भी, उहे पत्नी की स्नेहपूर्ण बात याद आती रहती। दोपहर में, गर्मी होने पर भी, दो बजे तक आग जलाये रहती और उनके स्टेशन से वापस आने पर गम गम रोटियाँ सफ़ती—उनके खा चुकने और मना करने पर भी थोड़ा-सा कुछ और चाली में परोस देती और बड़े प्यार से आग्रह करती। जब वह धके हार बाहर से आते, तो उनकी आइट पा वह रसोई के द्वार पर निकल आती, और उनकी सलज्ज आखें मुस्करा उठती। गजाधर बाबू को तब, हर छोटी बात भी याद आती और वह उदास हो उठते। अब कितने वर्षों बाद यह अवसर आया था जब वह फिर उसी स्नह और आदर के मध्य रहने जा रहे थे।

टोपी उतार कर गजाधर बाबू ने चारपाई पर रख दी, जूते खोलकर नीचे किसका दिये, अदर से रह रह कर कहकहा की आवाज आ रही थी, इतवार का दिन था और उनके सब बच्चे दकठे होकर नात्ता कर रहे थे। गजाधर बाबू के मूख चेहरे पर स्निग्ध मुस्मान आ गई। उसी तरह मुस्कराते हुए, वह बिना खाँसि अदर चले आये। उन्होंने देखा कि नरेद्र कमर पर हाथ रखे धायद गत रानि की फिल्म में देखे गये किमी नृत्य की नकल कर रहा था, और बसन्ती हँस हँसकर दुहरी हो रही थी। अमर की बहू को अपने तन-बदन, आँचल या घूँघट का कोई होश न था और वह उन्मुक्त रूप से हँस रही थी। गजाधर बाबू को देखते ही नरेद्र धप से बठ गया और चाय का प्याला उठाकर मुँह से लगा लिया। बहू को होश आया और उसने झट से माथा ठक लिया। केवल बसन्ती का गरीर रह रहकर हँसी बवाने के प्रयत्न में हिलता रहा।

गजाधर बाबू ने मुस्कराते हुए उन लोगों को देखा। फिर कहा, 'क्यों नरेद्र, क्या नकल हो रही थी?' 'कुछ नहीं, बाबूजी।' नरेद्र ने सिटपिटाकर कहा। गजाधर बाबू ने चाहा था कि वह भी इस मनोविनोद में भाग लें, पर उनके आत ही जैसे सब ही कुण्ठित हो चुप हो गये, उससे उनके मन में थोड़ी-सी खिन्नता उपज आई। बठते हुए बोल, 'बसन्ती चाय मुझे भी देना। तुम्हारी अम्मा की पूजा अभी चल रही है क्या?'

बसन्ती ने माँ की बोठरी की ओर देखा, 'अभी आती ही होगी', और प्याले में उनके लिये चाय छानने लगी। बहू चुपचाप पहले ही चली गई थी, अब नरेद्र भी चाय का आखिरी घूँट पीकर उठ खड़ा हुआ, केवल बसन्ती, पिता के लिहाज में, चौके में बैठी माँ की राह देखने लगी। गजाधर बाबू ने एक घूँट चाय पी, फिर कहा, 'त्रिटी-चाय तो फीकी है।'

“लाइये, चीनी और डाल दूँ।” बसन्ती बागी।

“रहने दो, तुम्हारी अम्मी अब आण्गी, तभी पी लूँगा।”

थोड़ी देर में उनकी पत्नी हाथ में अर्घ्य का लोटा लिये निरली और अगुड़ स्तुति करते हुए गुम्हारी में डाल दिया। उन्हें देगने ही बसन्ती भी उठ गई। पत्नी ने आकर गजाधर बाबू को देगा और कहा, “अरे, आप अकेले बठ हैं—यह सब कहाँ गये?” गजाधर बाबू ने मन में पीस-पीस बसब उठी, “अपन-अपन काम में लग गये हैं—आतिर बच्चे ही हैं।”

पत्नी आकर चौंके में बठ गई—उन्होंने नाब भौं बड़ाकर घाटा और जूठे बरतना को देखा। फिर कहा, “सारे में जूठे बरतन पड़े हैं। इस घर में घरम-बरम कुछ नहीं। पूजा घर के सोप चौंके में धुसो।” फिर उन्होंने भीवर को पुकारा, जब उतर में मिला तो एक बार और उच्च स्वर में, फिर पति की ओर देकर बोला, ‘बहू न भेजा होगा बाजार।’ और एक लम्बी साँस लेकर चुप हो रही।

गजाधर बाबू बठकर चाय और नास्ते का इन्तजाम करते रहे। उन्हें अचानक ही गनेगी की याद आ गई। रोज़ सुबह, पसँजर आने से पहले वह गम-गम पूरियाँ और जलेबी बनाता था। गजाधर बाबू जब तक उठकर तयार होते, उनके लिए जलेबियाँ और चाय लाकर रख देता था। चाय भी कितनी बढ़िया, चाँच के ग्लास में ऊपर तक मरी, ल्यालब, पूरे छाई चम्मच चीनी, और गाढ़ी मलाई। पसँजर भले ही रानीपुर लेट पहुँचे, गनेगी ने चाय पहुँचान में कभी देर नहीं की। क्या मजाल कि कभी उससे कुछ कहना पड़े।

पत्नी का शिकायत भरा स्वर सुन उनके विचारों में व्याघात पहुँचा। वह कह रही थी, सारा दिन इसी खिच-खिच में निकल जाता है। इसी गृहस्थी का घंघा पीटते-पीटते उमर बीत गई। कोई जरा हाथ भी नहीं बँटाता।

‘बहू क्या किया करती हैं?’ गजाधर बाबू न पूछा।

‘पढ़ी रहती हैं। बसन्ती को तो, फिर कहो कि कालेज जाना होता है।’

गजाधर बाबू ने जोश में आकर बसन्ती को आवाज दी। बसन्ती मामी के कमरे से निकली तो गजाधर बाबू ने कहा, “बसन्ती, आज से शाम का खाना बनाने की जिम्मेवारी तुम पर है। सुबह का भोजन तुम्हारी मामी बनायेंगी।

बसन्ती मुँह लटकाकर बोली “बाबूजी, पढ़ना भी तो होता है।”

गजाधर बाबू ने धड़े प्यार से समझाया, ‘तुम सुबह पढ़ लिया करो। तुम्हारी माँ बूढ़ी हुईं उनके शरीर में अब वह शक्ति नहीं बची है। तुम हो, तुम्हारी मामी हैं, दोनों को मिलकर काम में हाथ बँटाना चाहिए।’

बसन्ती चुप रह गई। उसके जाने के बाद उसकी माँ ने धीरे से कहा, “पढ़ने का तो बहाना है। कभी जी ही नहीं लगता, लगे कैसे? शीला से ही फुरसत नहीं

बड़े-बड़े लडके हैं उस घर में, हर वक़्त वहाँ घुसा रहना मुझे नहीं सुहाना । मना वहाँ तो मुनती नहीं ।”

नास्ता कर, गज़ाघर बाबू बठक में चले गये । घर छोटा था और ऐसी ब्यवस्था हो चुकी थी कि उसमें गज़ाघर बाबू के रहने के लिए कोई स्थान न बचा था । जैसे किसी मेहमान के लिए कुछ अस्थायी प्रबंध कर दिया जाता है, उसी प्रकार बठक में कुर्सियाँ को दीवार से सटाकर बीच में गज़ाघर बाबू के लिए पन्नी-सी चारपाई डाल दी गई थी—गज़ाघर बाबू उस कमरे में पढ़-पढ़े, कभी कभी अनायास ही, इस अस्थायित्व का अनुभव करने लगते । उन्हें याद हो आती उन रत्नाडियाँ की, जो जाती और थोड़ी देर रुककर किसी और लम्ह की ओर चली जाती ।

उन्होंने, घर छोटा होने के कारण बठक में ही अब अपना प्रबंध किया था । उनकी पत्नी के पास अंदर एक छोटा-सा कमरा अवश्य था, पर उगम एक ओर अचारी के मतदान, ढाल, चावल के कन्स्टार और चीज़ें डब्बा से घिरा था—दूसरी ओर पुरानी रज़ायी, दरिया में लिपटी और रस्ती से बँधी रखी थी, उसके पास एक बड़े-से टीन के बरतन में घर भर के गरम कपड़े थे । बीच में एक अलगनी बँधी हुई थी, जिस पर प्रायः बसन्ती के कपड़े ढापरवाही से पड़े रहते थे । वह भरमक उस कमरे में नहीं जाते थे । घर का दूसरा कमरा अमर और उनकी बहू के पास था, तीसरा कमरा, जो सामन की ओर था बठक था । गज़ाघर बाबू के आने से पहले उसमें अमर की ससुराल से आया बँत की तीन कुर्सियों का सेट पड़ा था, कुर्सियों पर नीली गहिराई और बहू के हाथों के बड़े कुशन थे ।

जब कभी उनकी पत्नी को कोई लम्बी शिकायत करनी होती तो अपनी चटाई बठक में डाल पड़ जाती थी, तो वह एक दिन चटाई लेकर आ गई । गज़ाघर बाबू ने घर-गृहस्थी की बातें छोड़ी, वह घर का रकबा देख रहे थे । बहुत हल्के से उन्होंने कहा कि अब हाथ में पंसा कम रहेगा कुछ खर्च कम होना चाहिए ।

“सभी खर्च तो बाज़िब बाज़िब हैं किसका पट काटें ? यही जोड़ गाँठ करते करते बूढ़ी हो गई मैं मनका पहना, न ओढ़ा ।”

गज़ाघर बाबू ने आहत, विस्मित दृष्टि से पत्नी को देखा । उनसे अपनी हैसियत छिपी न थी । उनकी पत्नी तभी का अनुभव कर उसका उल्लेख करती, यह स्वाभाविक था, लेकिन उनमें सहानुभूति का पूर्ण अभाव गज़ाघर बाबू का बहुत खटकता । उनसे यदि राय-चात की जाती कि प्रबंध कैसे हो तो उन्हें चिन्ता कम सन्तोष अधिक होता । लेकिन उनसे तो केवल शिकायत की जाती थी जैसे परिवार की सब परेशानियों के लिए वही जिम्मेदार थे ।

“तुम्हें किस बात की कमी है अमर की माँ—घर में बहू है लडके-बच्चे हैं सिर्फ रुपये से ही आदमी अमीर नहीं होता ।” गज़ाघर बाबू ने कहा और कहने के साथ ही अनुभव किया । वह उनकी आंतरिक अभिव्यक्ति थी ऐसी कि उनकी पत्नी नहीं

कुछ देर अनिश्चित खड़े रहकर बसती अंदर चली गई। गजाधर बाबू शाम को रोज टहलन चले जाते थे, लौटकर आये तो पत्नी ने कहा, “क्या कह दिया बसती से। शाम से मुँह लपेटे पड़ी है। खाना भी नहीं खाया।”

गजाधर बाबू खिन्न हो आये। पत्नी की बात का उन्होंने कुछ उत्तर नहीं दिया। उन्होंने मन में निश्चय कर लिया कि बसती की शादी जल्दी ही कर देनी है। उस दिन के बाद बसती पिता से बची बची रहने लगी। जाना होता तो पिछवाड़े से जाती। गजाधर बाबू ने दो एक बार पत्नी से पूछा तो उत्तर मिला, “रूठी हुई है।” गजाधर बाबू को और रोष हुआ। लड़की के इतने मिजाज, जाने को रोक दिया तो पिता से बोलेंगी नहीं। फिर उनकी पत्नी ने सूचना दी कि अमर अलग रहने की सोच रहा है।

क्यों?’ गजाधर बाबू ने चकित होकर पूछा।

पत्नी ने साफ-साफ उत्तर नहीं दिया। अमर और उसकी बहू की शिनायतें बहुत थी। उनका कहना था कि गजाधर बाबू हमेशा बठक में ही पड़े रहते हैं कोई आन-जान वाला हो तो वही बठाने की जगह नहीं। अमर को अब भी वह छोटा-सा समझते थे, और मौके-बेमौके टोक देते थे। बहू को काम करना पड़ता था और सास जब-तब फूहड़पन पर ताने देती रहती थी। ‘हमारे आने के पहले भी कभी ऐसी बात हुई थी?’ गजाधर बाबू ने पूछा। पत्नी ने सिर हिलाकर जताया कि नहीं। पहले अमर घर का मालिक बनकर रहता था—बहू का कोई रोक-टोक न थी, अमर के दोस्तों का प्रायः यही अड्डा जमा रहता था और अंदर से नाश्ता चाय तयार होकर जाता रहता था। बसती को वही अच्छा लगता था।

गजाधर बाबू ने बहुत धीरे से कहा ‘अमर से कहो, जल्दबाजी की कोई जरूरत नहीं है।’

अगले दिन वह सुबह धूमकर लौटे तो उन्होंने पाया कि बठक में उनकी चारपाई नहीं है। अंदर आकर पूछन वाले ही थे कि उनकी दृष्टि रसोई के अंदर बठी पत्नी पर पड़ी। उन्होंने यह कहने को मुँह खोला कि बहू कहाँ है, पर कुछ याद कर चुप हो गये। पत्नी की कोठरी में चाँका तो अचार, रजाइयो और कनस्टर के मध्य अपनी चारपाई लगी पायी। गजाधर बाबू ने कोट उतारा और वही टाँगने को दीवार पर नजर दौटाई। फिर उसे मोड़कर अलगनी के कुछ कपड़े खिसकाकर, एक किनारे टाँग दिया। कुछ साये बिना ही अपनी चारपाई पर लेट गये। कुछ भी हो तब आखिरकार बूढ़ा ही था। सुबह गाम कुछ दूर टहलन अवश्य चले जाते, पर आते-आते थक उठते थे। गजाधर बाबू को अपना बड़ा-सा, खुला हुआ क्वाटर याद आ गया। निश्चिन्त जीवन, सुबह पसजर ट्रेन आन पर स्टेशन की चहल-पहल चिरस्परिचित चेहरे और पटरी पर रेल के पहियों की खट-खट जो उनके लिए मधुर संगीत की तरह था। तूफान और डाक गाड़ी के इञ्जनों की चिंघाड़ उनकी अकेली रातों की साथी थी। सेठ रामजीमल के

मिल के कुछ लोग बमी-बमी पास आ बैठते वही उनका दापरा था, वही उनके साथी यह जीवन अब उन्हें एक खोई निधिता प्रतीत हुआ। उन्हें लगा कि वह जिन्दगी द्वारा ठगे गए हैं। उन्होंने जो कुछ चाहा, उसमें से उन्हें एक बूद भी न मिली।

लेटे हुए वह घर के अन्दर से आते विविध स्वरों की सुनते रह। धूँ और सास की छोटी सी शरप, बाल्टी पर खुले नल की आवाज, रसोई के बरतना की छटपट और उसी में दो गोरया का बार्तालाप—और अचानक ही उन्होंने निश्चय कर लिया कि अब घर की किसी बात में दखल न देंगे। यदि गृहस्वामी के लिए पूरे घर में एक चारपाई की जगह बहा है, तो यही पड़े रहेंगे अगर कहा और डाल दी गई, तो वहाँ चले जायेंगे। यदि बच्चा के जीवन में उनके लिए वही स्थान नहीं, तो अपने ही घर में परासी की तरह पड़े रहेंगे।

और उस दिन के बाद सचमुच गजाघर बाबू कुछ नहीं बोले। नरेन्द्र माँगने आया तो बिना कारण पूछे उसे रुपये दे दिये—बसती बाफी अघरा हो जाने के बाद भी पड़ोस में रही तो भी उन्होंने कुछ नहीं कहा—पर उन्हें सबसे बड़ा गम यह था कि उनकी पत्नी ने भी उनमें कुछ परिवर्तन लक्ष्य नहीं किया। वह मन-ही-मन कितना मार खी रहे हैं इससे वह अनजान हो बनी रही। बल्कि उन्हें पति के घर के मामले में हस्तक्षेप न करने के कारण क्षाति ही थी। बमी-बमी कह भी उठती, 'ठीक ही है, आप बीच में न पड़ा बीजान, बच्चा बड़े हो गए हैं हमारा जो बतव्य था, कर रहे हैं। पढ़ा रहे हैं शादी कर देंगे।'।

गजाघर बाबू ने आहत दृष्टि से पत्नी को देखा। उन्होंने अनुभव किया कि वह पत्नी व बच्चों के लिए बेचल धनोपाजन के निमित्त मान हैं। जिस व्यक्ति के अस्तित्व से पत्नी माँग में सिद्धर डालने की अधिकारी है, समाज में उसकी प्रतिष्ठा है। उसके सामने वह दो वक्त भोजन की थाली रख देने से सारे कर्तव्यों से छुट्टी पा जाती हैं। वह थी और चीनी क डिब्बा में इतनी रमी हुई हैं कि अब वही उनकी सम्पूर्ण दुनिया बन गई है। गजाघर बाबू उनके जीवन के केन्द्र नहीं हो सकते उन्हें तो अब उसकी शादी के लिए भी उत्साह बूझ गया। किसी बात में हस्तक्षेप न करने के निश्चय के बाद भी उनका अस्तित्व उस वातावरण का एक भाग न बन सका। उनकी उपस्थिति उस घर में ऐसी असंगत लगने लगी थी, जैसे सजी हुई बठक में उनकी चारपाई थी। उनकी सारी खुशी एक गहरी उदासीनता में डूब गई।

X

X

X

इतने सब निश्चय के बावजूद भी गजाघर बाबू एक दिन बीच में दखल दे बैठे। पत्नी स्वभावानुसार नौकर की शिकायत कर रही थी 'कितना कामचोर है बाजार की हर चीज में पसा बनाता है, खाने बैठता है, तो खाता ही चला जाता है।' गजाघर बाबू को बराबर यह महसूस होता रहता था कि उनके घर का रहन-सहन और खर्च उनकी हैसियत से वही ज्यादा है। पत्नी की बात सुनकर लगा कि नौकर का खर्च

बिल्कुल बेकार है। छाटा मोटा काम है, घर में तीन मद है, कोई-न-कोई कर ही देगा। उन्होंने उसी दिन नाकर का हिसाब कर दिया। जमर दफ्तर से आया तो नौकर को पुकारने लगा। जमर की बहू बोली, “बाबूजी ने नौकर छुड़ा दिया ?”

“क्या ?”

“बहते हैं खच बहुत है।”

यह वार्तालाप बहुत सीधा-सा था, पर जिस टोन में बहू बोली, गजाधर बाबू को खटक गया। उस दिन जी भागी ज्ञान के कारण गजाधर बाबू टहलने नहीं गये थे। आलस्य में उठकर बत्ती भी नहीं जलाई—इस बात से बेखबर नरेंद्र माँ से कहने लगा, “अम्मा, तुम बाबूजी से कहती क्या नहीं ? बठे बिठाये कुछ नहीं तो नौकर ही छुड़ा दिया। अगर बाबू जी यह समझें कि मैं माइकिल पर गेहूँ रखकर आटा पिसाने जाऊँगा तो मुझसे यह नहीं होगा।” “हा अम्मा” —बसती का स्वर था, ‘म कालेज भी जाऊँ और लौटकर घर में झाड़ू भी लगाऊँ, यह मेरे बस की बात नहीं है।’

“बूढ़ आदमी है” जमर मुनमुनाया ‘चुपचाप पड़े रह। हर चीज में दखल नये देते हैं।’ पत्नी न बड़े व्यग्र से कहा, और कुछ नहीं सूझा तो तुम्हारी बहू को ही चीन्हे में भेज दिया। वह गई ता पन्द्रह दिन का राशन पाच दिन में बनाकर रख दिया।” बहू कुछ बहे, इससे पहले वह चीन्हे में घूम गई। कुछ देर में अपनी काठरी में आई और बिजली जलायी तो गजाधर बाबू को लेट देख बड़ी सिटपिटाई। गजाधर बाबू की मुखमुद्रा से वह उनके भावों का अनुमान न लगा सकी। वह चुप आखें बंद किये लेटे रह।

×

×

×

गजाधर बाबू चिट्ठी हाथ में लिये जदर आये और पत्नी को पुकारा। वह भीने हाथ लिये निकली और आँचल से पाछती हुई पास आ खड़ी हुई। गजाधर बाबू ने बिना किसी भूमिका के कहा ‘मुझे सेठ रामजीमल की चीनी मिल में नौकरी मिल गई है। खाली बठे रहने से तो चार पैसे घर में आयें वही अच्छा है। उन्होंने तो पहन ही कहा था, मन ही मना कर दिया था।’ फिर कुछ रुककर, जैसे दुस्ती हुई भाग में एक चिनगारी चमक उठी। उन्होंने धीमे स्वर में कहा, ‘मने भीचा था कि बरसा तुम सबसे अलग रहने के बाद अवकाश पाकर परिवार के साथ रहूँगा। खर, परमो जाना है। तुम भी चलोगी ?’ म ?” पत्नी ने सवपका कर कहा ‘म चलूँगी तो यहाँ का क्या हागा ? इतनी बड़ी गहस्थी फिर सयाती लड़की—’

बात बीच में काट गजाधर बाबू ने थके, हताश स्वर में कहा, ठीक है तुम यही रहो। मने तो ऐसे ही कहा था” और गहरे मोन में डब गये।

×

×

×

नरेंद्र ने बड़ी मत्परता से विस्तर बाँधा और रक्शा बुला लाया। गजाधर बाबू का दिन का वकस और पतला-सा विस्तर उस पर रख दिया गया। नाश्त के लिए लड्डू

ओर मठरी की डलिया हाथ में लिये गजाधर बाबू खिन्ने पर बैठ गये। एक दृष्टि उहान अपने परिवार पर डाली और फिर दूसरी ओर देखने लगे और खिन्ना चल पड़ा। उनके जाने के बाद सब अदर लौट आये, बहू ने अमर से पूछा, "सिनेमा ले चलिएगा न?" बसन्ती ने उछलकर कहा "मइया हम भी।"

गजाधर बाबू की पत्नी सीधे चौने में चली गई। बची हुई मठरियों को बटोरदान में रखकर अपने कमरे में लार्ड और वनस्ट्रो के पास रख दिया, फिर बाहर आकर कहा, "अरे नरेन्द्र, बाबूजी की चारपाई कमरे से निवाले दे। उसमें चलने तक की जगह नहीं है।"

दस वष बाद

पूरे गाँव का एक चक्कर लगा आया हूँ। सब कुछ बदल गया है। जो भी मिले, सबसे मिल कर बातें करके आया हूँ। कई चेहरे नये दिखाई दिये। लेकिन वह दस साल पहले की आत्मीयता कहीं दिखाई न दी। लोगो ने अजीब-अजीब नजरों से देखा।

मन में रह रह कर एक प्रश्न घुमड़ता रहा, गाँव बदल गया। लोग बदल गये। पुराने साथी भी मिले, पर लगा, इन दस वर्षों में एक बड़ा व्यवधान आ गया है—सबसे बीच। कुछ मास्टर हो गये हैं। कुछ अपनी कदीमी दुकानों पर बैठते हैं, कुछ इधर उधर चले जाते, आ जाते हैं, बल्कत्ता, बम्बई। एक ठो पान देना चौबमल जी। काई रे बाबू, कद आयो, क्या गेलो भूल गो ? कठे हो ? काई करी हो ?' आदि प्रश्न बड़ी बेवखी के साथ पूछे गये। पता चला, यह साथी कलकत्ता से अभी थोड़े दिन हुए, लौट कर आया है। दो-तीन हजार रुपये जोड़ लिये हैं। एक-दो बड़े नेता बन गये हैं, तहसील पंचायत के सरपंच, जिला परिषद् के सदस्य। मिलने पर मेरी ओर ऐसे देखन लगे जैसे कह रहे हो—हमारी महानता की ऊँचाई की तुलना में तुम कितने बौने हो। अपने पुराने साथियों की उनके तलुवे चाटते देखा, उनके पीछे-पीछे चक्कर काटते देखा। मन घणा से भर उठा। क्या यही है मेरा गाँव मेरे दस वष के प्रवास में कभी स्मृतिपट से ओझल न होने वाली जन्म भूमि।

मामा ने सुना तो भागे आये। बुआ ने सुना तो मम बाल-बच्चों के चली आयी। भूँ खवास आया। बोला—बाबू परदेश से आये हो, इस बार तो नया घाती-कुरता लूँगा।' बड़ी देर तक समझा-बुझा कर फिर देन का वचन दे, विदा किया।

दो दिन और निकल गये। मामा पीछे पड़े हैं कि छोटे ने मट्रिक पास कर लिया है, यहाँ नौकरी मिलती नहीं सो इस बार उसे अपने साथ ले जाओ किसी भी तरह यह काम तो करना ही पड़ेगा। यहाँ तो राजनीतिक गुटबन्दी है। तुम्हारे गाँव का मोहन व्यास पंचायत का सरपंच है, अपने ही लोगो को नौकरी दिलवाता है। एम० एल० ए० उसी का खास बना हुआ है। उसने सिवा किसी की भी नहीं सुनता। बड़े घम-सकट में पड़ गया हूँ। मामा को कैसे समझाऊँ कि ये दस वष मने कैसे काटे हैं।

नौकरी की तलाश में वहाँ-वहाँ भटकता हूँ। क्या क्या सहा है। दस बप तक घर में दूर बच्चा से दूर क्या पड़ा रहा हूँ !

कई बातें सुनने को मिली। किस तरह दो गुटों में लड़ाई चली। कौन किस तरह जीता। कौन कैसे हारा। उसको नौकरी कैसे मिली। उसके चोरी किसने करवायी। आदि-आदि।

म और मामा घटा आपस में बातें करते रहते हैं। पत्नी मुँह फुलाये रहती है। दो दिनों में माँ चार बार दुहरा चुकी है—दस बरस परदेन में रह कर लोग न जान क्या-क्या चीजें लाते हैं। यहाँ तो डग ही यारे हैं। न जाने कौन रात पीछे पड़ी है बेटे के। सबसे माह डूट गया है। इसे तो कोई भी अच्छा नहीं लगता, न बेटा बेटा न बहू। हँसी हँसी में यह कह कर कि ला कुछ रुपये तो दे, जो चना नाने की आवश्यकता नहीं रही होगी, मोठे गेहूँ ही भेगा लूँ।

म खामोश रह जाता हूँ और फिर उसकी हिम्मत आगे कुछ कहने की नहीं होती। सरकी नजरें मेरे सूटकेस पर हैं जिस में अभी तक नहीं खाला है। लगता है जैसे कई बार उठा-उठा कर हिला हुला कर उससे अब दाज लगा लिया गया है। बुआ जी दो बार कह चुकी है—ले अब क्या कहेगा। अब तो दस बरस कमा कर आया है। सब को भूल गया रे। जानकी के विवाह पर कितने तार चिट्ठियाँ दिये। पर तू क्यों आने लगा। आता तो कुछ खर्च करना पड़ता। पर अब मैं पीछा छाड़ने वाली नहीं हूँ, जब नन्ही तो अब सही। अबके तो सारी बसर निकाल कर जाऊँगी।

म जब गया तो बच्ची तीन साल की थी और बच्चा छह महीने का। लगता है जैसे मुझे ये नहीं जानते। कई बार पास बुला चुका हूँ पर गरमा कर भाग जाते हैं। सोचता हूँ क्या ये मुझ कमी याद नहीं करते होंगे, कमी अपनी माँ से मेरे लिए नहीं पछते होंगे। लड़की बड़ी हो गयी है। गायद अगले बप ही विवाह करना पड़े। और लड़का पता नहीं पता भी है या नहीं। माँ धोल तो रही थी छुट्टियाँ चल रही हैं। अब तक पत्नी से बात तक नहीं हुई है। यही हाजिर रही तो गायद हांगी भी नहीं। मो ही लौट जाऊँगा। वह तो समझौता करन के लिए तयार नहीं दिखाई देती। गायद माँ की तरह वह भी समझ चुकी है कि म अब उसका नहीं रहा। यह तो नहीं कि पूछे, कैसे रहे वहाँ-वहाँ रहे, दुबले हो गये हो इतने दिन क्यों नहीं आये। उलटें मरो बठी है, जसे मने कोई बुरा काम किया हो, धोता लिया हो।

नहीं, अब यह गाँव पहुँचे-सा नहीं रहा। सब कुछ बदल गया है।

बपा मिलने आयी है। बहुत बदल गयी है। एवदम चुप शांत। पन्द्रह बप पीछे लौट गया हूँ—बपा चुटकियाँ काट रही है मने उसका चाटा पत्रड लिया है। वह चौख रही है अरे छोड अरे मरो रे, ओ माँ। विचित्र स्थिति में हूँ उतरा रहा हूँ। वह मिलने आयी है और म अररायी-सा मौन बठा हूँ। क्या सोचेंगी यह।

यही कि म बदल गया हूँ, यही कि म सबको भूल गया हूँ यही कि म किसी और का हो गया हूँ ।

—कसी हो चपा ।

—अच्छी हूँ, देख तो रहे हो । चलो, बोले तो सही । मैं तो समझी थी कि तुम्हारा मौन टूटेगा ही नहीं । गूँगे होकर आये हो ।

म हँस मर देता हूँ । क्या उत्तर दूँ । चपा बचपन से ही बड़ी चुलबुली है, बड़ी बातूनी है । सभी तो एक बार पत्नी को भी हम दाना पर दक हो गया था और ये दोनों आपस में झगड भी पड़ी थी । गाव के लोग तो अब तक भी यही समझते होंगे और, शायद पत्नी भी ।

—क्या सोच रहे हो । तुम्हारी सास मिलने आयी है । जरा घर तक तो चलो ।

—कैसे जाऊँ । सास से तो मेरा झगडा हो गया था । भूली घटना याद आ जाती है । शादी वाले साल ही, जब म पहली बार ससुराल गया था, और पहले ही दिन भोजन की थाली फेंक कर घर भाग आया था । गाँव से आधी मील पर ही तो है मेरी ससुराल । और तब से अब तक एक घर भी ससुराल नहीं गया हूँ । सास रोया, गिडगिडायी, पर म नहीं गया । वे और भी नाराज हो गयी । जब भी वे मिलने आती पत्नीसियों के घर या फिर चपा के यहाँ । मने पत्नी का मिलने से मना कर दिया था । पर इस चपा को क्या कहूँ । यह ज़िद करके ले जाती थी और इसकी हठ के सामने सदा ही झुकना पड़ता था । आज भी यह आयी है । और म नाही नहीं कर सकता । क्या है हम चपा में ऐसा जो । सोचता हूँ चलो ठीक ही है । पत्नी के खिचाव की रस्सी इस पुरानी गाँठ के खुलन से थोड़ी तो ढीली होगी ।

—क्या नहीं चलोगे ।—चपा तुनक कर पूछ रही है ।

म सचेत हो जाता हूँ । चपा की ओर मुसकुरा कर देखता हूँ । चम्पा अभी भी बसी ही है हठी नटखट, वाचाल । दुर्भाग्य है यही कि अभी तक मा नहीं बन पायी है । दोनों का विवाह दो-दो दिन के अन्तर से ही तो हुआ था । म यदि दस वर्ष बाहर न रहता, तो कम से कम चार तो और भी हो जाते ।

—तू बाहे को हेठी करवा रही है । जा, वह दे नहीं मिलते । तू इतनी देर से बक-बक किये जा रही है । यहाँ कानो में तेल डाल रखा है ।—पत्नी का मौन टूटा ।

म चतुराई से काम लेता हूँ । इस समय चुप रहना ही श्रेयस्कर है । प्रतीक्षा में हूँ, कि चपा पर इसकी क्या प्रतिक्रिया होती है । बात ठीक सभाबना के अनुसार ही होती है । चपा तुनक कर कहती है—म तेरी तरह गूँगी नहीं हूँ । मुझे खा नहीं जाएगा । इसको ठीक करने की रण मेरे हाथ में है । म तेरी तरह अंदर ही अंदर राने वालियों में नहीं हूँ । देख, अभी बताती हूँ, जाता है कि नहीं ।

कितना आत्मविश्वास है चपा में ! कितना अधिकार समझती है यह अपना मुँह पर कि मरी पत्नी तब को भी चुनौती दे सकती है ! बचपन में एक बार चुम्मी माँगने पर इसने कितनी दयनीयता से कहा था—नहीं, ऐसा नहीं करत ! कहते हैं कुँवारी लड़की ऐसा करती है तो ब्याह देर से होता है ! गुलाब बहती थी ऐसा करने से मगवान् गुस्सा होत है !—और मैं डर गया था ! उसने बाद में कभी उससे चुम्मी नहीं माँगी थी, हालाँकि सपन्नदार होन पर एक बार वह पूर्ण समपण को भी तयार हो गयी थी ! पर अब क्या रगा है उन बीती बातों में ! अब तो सब कुछ बदल गया है !

वह लड़कन का सत्पर है ! उसने मेरा हाथ पकड़ लिया है ! मैं हँस कर उसकी ओर देखता हूँ और साथ ही अनुनय मंदे स्वर में उसे मनाने के ढंग में कहता हूँ—उनको यही बुलाल तो बसा रहे ! हमारे घर न जाने की उनकी बसमें भी टूट जाएगी और जी भर कर दाँतें भी कर लेंगी ! क्यों ठीक है न ?

वह पूर्ण आश्चस्त हो जाती है ! विजयान्नास के भाव उसका चेहरा पर बिगड़ जाते हैं ! पत्नी की ओर देख कर वह व्यंग्यपूर्ण ढंग से मुसकुराती है और फिर बिना कुछ कहे यह गयी वह गयी ! थोड़ी ही देर में वह सास को साथ लिए आ गयी ! मैंने उठ कर चरण छुए ! सारा विपाद, सारी कटुता वह गयी ! हृदय की अतल गहराई से मुँह से आगी-ग निचली और आँखों से स्नह जल ! क्षण भर को मैं अपने दुर्भाग्य और सौभाग्य के बीच ठगा-सा रह गया !

—माँ जी कहाँ गयी ?—उठोने चपा की ओर देख कर पूछा ! चपा ने मरी ओर ओर मैंने पत्नी की ओर इंगारा किया !

वह धीरे से फुसफुसायी—मामाजी ने साथ गयी हैं ! दो-तीन दिन में लौट आएगी !

मैंने प्रश्न उठा मैं तो घर में ही था फिर मुझसे कह कर क्यों नहीं गयी ! मामा जी तो कई-कई कामों दिवा कर गये हैं ! पर तभी समाधान भी मिल गया ! शायद सोचा होगा, हम दोनों उनकी उपस्थिति से खुल नहीं रहे हैं अतः दो-तीन दिन के अरसे में शायद खुल जाएँ ! मैंने भीमी-सी आवाज उठी, चलो जल्द ही हुआ ! दो कोस पर हाँ ताँ मामा का घर है ! है ही कितनी दूर !

ता आज भोजन वही करना है ! पास-पड़ोस की सब जनी दखना चाहती हैं तुम्हें ! रोज तान मारती थी ! जबाई एक चिट्ठी तब भी नहीं देता है ! बड़ा नखराला है !—और मैं अपने छाट-से घू घट में मुसकुराने लगी ! दखता हूँ उनके आगे के दाँत गिर गये हैं !

चपा खिलखिला कर हँस पड़ी—साँता है ही ! इसमें झूठ क्या कहती हैं ! मैं अममजस में पड़ गया ! माँ तो यहाँ हैं नहीं ! इसे अवस्था छोड़ कर उसे

रात भर बाहर रहूँ। पत्नी ने जैसे भाप लिया। धीरे से बोली—कह दो चपा घर पर तो भूआजी हैं। गुडडी और विजय भी हैं। घर की फिक्र न करें।—मने सुन लिया और हा भर दी।

चपा बोली—घर की फिक्र तो तुम कोई भी मत करो। घर में तो मैं अकेली ही सो जाऊँगी।—और इतना कह कर वह हँस पड़ी।

तीसरे पहर ही मने दाढ़ी बनायी। 'सूटकेस' खोल कर धुला हुआ कुरता पाजामा निकाला और पलंग पर रख दिया। नाडा एक ही था, इसलिए सोचा चलते समय इस पजामे का नाडा निकाल कर उसमें डाल लूँगा। मन में कसा-कसा हो रहा था। कमी ससुराल जाने का मौका नहीं मिला था। सज बटा अजीब-अजीब-सा लग रहा था। 'प्रथम प्राप्ति' मक्षिका पात वाली दुपटना घट ही चुकी थी।

विजय को लेकर पत्नी न जाने कब चली गयी। देर तक मैं प्रतीक्षा करता रहा। गुडडी पोली की खिड़की में से बार-बार झाँक कर देख लेती थी और मुझे उसी तरह विचार मग्न देख कर न जाने क्या सोच कर फिर लौट जाती। बुआजी आयी और बोली—अब जा देर क्यों कर रहा है। गुडडी को भी साथ ले जाना। मेरे पास तो रात में चपा रह जाएगी। क्या रे, तू इतना बदल गया है। बच्चों से भी बात नहीं करता?—उन्होंने सिकायत की। क्या उत्तर दूँ।

मैं उठ गया। उठ कर हाथ-मुँह धोया और पहने हुए पाजामे का नाडा निकालने लगा। गुडडी ने देखा तो बोली—आपके पाजामे में नाडा है माँ डाल गयी है।

कपड़े बदल कर मने गुडडी से कहा—आ गुडडी, चल। तू जानती है नाना का घर?—उसने सिर हिला कर स्वीकार किया।

दिन छिपने को हो रहा था। दोनों गाँवों के बीच एक टीला है, एक बड़ा सा खेत है। धीरे धीरे चलें तो तीस मिनट और तेजी से चलें तो बीस मिनट। कितनी कम दूरी पर है। पर इस गाँव में दो ही बार गया हूँ। एक बार शादी के वक़्त और दूसरी बार का जिक्र तो कर ही चुका हूँ। गुडडी साथ दे रही है। उसके कदमों में मुझसे भी तेजी है जो उसने युवा होने के लक्षण प्रकट करती है। मैंने तो कभी नहीं सोचा था कि मैं इतना शीघ्र समुद्र बनने वाला हूँ।

गुडडी कुछ देर तो प्रतीक्षा करती है कि मैं कुछ बोलूँगा पर मुझे बोलता न देख वह बात इस तरह शुरू करती है—माँ मुझे इसीलिए छोड़ गयी कि आप नाना का नया घर नहीं जानते। आप तो पुराने घर पर ही गये हुए हैं। नाना ने अब नया घर बनवा लिया है।

—तुम नाना के यहाँ जाती रहनी हो?—मने पूछा।

—पहले तो माँ और हम कोई नहीं जाते थे माँ कहती थी, आपका उनसे

झगडा हो गया है। आप मुझे तो नाराज हाने। लेकिन दो-तीन बरस से नानी के बहने पर दादी मिजवान नम गयी। हम ही जाते थे। माँ तो दो-तीन बार ही गयी है। एक बार मामा ने ब्याह पर और दूसरी बार छागी मौसी के ब्याह पर।

—तुम मुझे जाननी हो। —अनायास मन गुडडी से पूछ हो लिया।

दर दरमा गयी। धीरे से बोली—हाँ, कोई अपन बाप को भी भूलता है। मैं तो रोज आपकी याद बरके रोती थी और माँ भी। पर विजय बड़ा गतान है। वह कहता था, हम नहीं रोते। क्या पिताजी भी हम याद बरके रोते हाने।

मेरा रोम रोम मिहर उठा। आह ! मैं क्या इतना निष्ठुर हूँ। क्या इतना स्वार्थी। मैं सदा अपने व्यक्तिगत सुख का ही प्रमुखता दी। पत्नी, पुत्री पुत्र माँ वैसे मैं दस बप इनसे दूर रह सका। मेरी आँखें छलक आयी। गुडडी ने जो देखा तो बोली—अरे आप रो रहे हैं। जब रोते हैं तो छोड़ कर क्या गये थे ? अब फिर बर्मी मत जाना।

मैं उससे सिर पर हाथ रख देता हूँ। थोड़ी दूर इसी तरह चलता रहता हूँ।

—वह दिल गया नाना का घर !—वह एक नये बने मकान की ओर खुशी में भर कर सवेत बरती है।

दूर से देख रहा हूँ। काफी लोग जमा हैं। शायद देर से प्रतीक्षा कर रहे हाने। धक्का हुई, मैं जाने ये लोग क्या क्या प्रश्न पूछेंगे। उस दिन गाडी में गांव के एक खानी से साल भर पहले पता चला था कि लोग उससे बारे में यहाँ कई बातें बरते हैं। कोई कहता है बगालिन रख ली है, कोई कहता है पजाबिन। दा लडक हैं, एक लडकी है। मैं जाने और क्या क्या।

ससुराल आ गयी है। कई बच्चे, गायद पाम-बडोस के, विजय को घेरे हैं। शायद पूछ रहे हाने यही है मेरा बाप, यही है ना ! वह स्वीकृति सूचक सिर हिला रहा है।

ससुर साहब के पाव छुए। वे बहुत रुष्ट दिखाई दे रहे हैं। बड भी लगने लगे हैं। सब ही वे सोचते रहे हाने कि कैसे नालायक दामाद से पाला पडा है। किसी काम का नहीं। दस-दस बरस तक घर से बाल बच्चा स बेखबर। बबूतर पर चारपाई पडी हुई है जिस पर सफेद चदर बिछी है। दो नयी सोलिया के तकिये रख हैं। सब तयारी मेरे स्वागत में हुई है। मुझे उसी पर बठने को कहा गया।

एक आदमी हाथ में थाली ले कर मेरे पास आ कर घरती पर बठ गया। यह क्या ! यह तो मेरे पाँव पकड रहा है। मैं घबरा कर पाँव चारपाई पर रख लेता हूँ। मेरी इस हरकत पर सब बुरी तरह हस रहे हैं, दरवाजे में खडी औरतें भी, और बच्चे भी। बहुत रोकने पर भी मुझे बाध आ जाता है। एक झटके के साथ मैं पाँव नीचे रख देता हूँ। वह मेरे पाँव की ऊँगलिया का हरी घास की पत्तिया स पानी में डुबो कर धा रहा है। यही समय मैं आया कि यह कोई रिवाज होना। पाँव धुल गये पर

वह बठा ही है और मुह की जोर देव रहा है। म सोच म पड जाता हूँ, कौन है यह। और मुझे क्या करना चाहिए। पाम खडी गुडडी की ओर विवशता से देखता हूँ। वह कहती है—प से दो इसे।

—कितन हूँ ?

—यह तो मालूम नहीं—वह हँसती हुई भाग जाती है।

समुर उठ कर आते हैं और सवा रपवा अपन पाम मे थाली में डाल देते हैं। बलो, अच्छा ही हुआ। मेरे पास तो एक ही रुपय का नोट है।

मुझे विलकुल अच्छा नहीं लग रहा है। लग जब तब मेरी जोर देख लेते हैं, जसे किसी दूसरे लोक का प्राणी हूँ। कोई कुछ बोल नहीं रहा है। कोई कुछ पूछ नहीं रहा है। गुमसुम बठा म मन ही मन घुट रहा हूँ। गुडडी आकर खटी हो गयी है।

—क्यो, क्या बात है।—म उससे पूछता हूँ।

—बलो, खाना खा लो।

म उसके साथ खाना खाने चल पडता हूँ। मूँगो पर चावल छितरे हुए हैं। ऊपर खूब बूरा है, बूरे पर घी है जो चावल और मूँगा में से रिस कर थाली के खाली हिस्से में इकट्ठा हो गया है, असली देशी घी। सारे भोजन म दही घी की खुशबू व्याप्त है। इतना कौन खाएगा। म ता चार दिन मे भी नहीं खा सकता। जा कर थाली के पास बिछे आसन पर बैठ गया हूँ। छोटी साली कहती है—हाय भी नहीं धोएँगे जीजाजी।

—अर हाँ, हाय घाना तो मूल ही गया, लाओ धुला दो।—मोरी पर जा कर हाय धाता हूँ। बापम जाकर थाली के पास ठिठक कर खड़ा रह जाता हूँ। फिर साली की आर देख कर प्रश्न करता हूँ—इतना कौन खाएगा ?

—आपस जितना धाया जाए, खा लें। बाकी बच्चे खा लगे।—वह रास्ता सुझाती है।

पर क्या न बच्चे मेर ही साथ खाने बठ जाएँ। मेरी जूठन क्या खाएँ। म बच्चा को बुला लेता हूँ। वे नि सकोच आ कर बठ जात है। उनके चेहरे पर एक अवएणीय आभा है। जीवन मे शायद पहली बार अपन पिता के साथ एक ही थाली म भोजन कर रहे हैं। वस सौभाग्यगाली हूँ व लोग जिनके बच्चे भोजन करने के लिए पिता की प्रतीक्षा करते हैं। मुझे एक अमीम सुख की प्रतीति हो रही है, एक अवएणीय सुख।

सास आ कर खडी हैं—फू कीजिए।—म 'हा' कह कर एक कोर उठाता हूँ। लगता है, जसे वे कुछ पूछना चाह रही हैं। म समझ गया हूँ कि वे क्या पूछेंगी।

यह वही स्थल है जहाँ एक बार दुघटना घट चुकी है। उस बार भी म भोजन करने बठा था। आधा ही खा पाया था कि दामाद के आने पर गीत गाने वाली

माते रिस्ते की स्त्रिया म से विसी ने गाया था

कुतरी ए रायाँ व मूत

XXX के मुह पर मूत

औपण मत सवारे मूत

दोपहराँ दो बारी मूत ।

बौन रातन परेगा ऐसी गाली । और वह भी भोजन करते समय । और म गूस्ते म भर पर झनझन-मनन से घाली फेंक कर चला गया था । और सब देखते रह गये थे । म सीधा घर चला आया था ।

शायद आज भी सास गीता के लिए पूछने वाली हैं । औरतें इकट्ठी हो गयी हैं । एक-दो एक दो बरबे और भी आती जा रही हैं । म आज अपने आप म बहुत उदार हो गया हूँ, अपने सिद्धान्तों को भूल गया हूँ ।

—आप कुछ कहना चाहती हैं ।—मने उनसे पूछा ।

—आप नाराज न हो तो औरतें गीत गाने की कहती हैं । वैसे गीत नहीं गायेंगी । भोजन के बाद आपको यही बठना पड़ेगा । अच्छे-अच्छे गीत गायेंगी ।

मुझे कोई एतराज नहीं । लेकिन कुतिया मुँह पर मत मुतवाइए । बाकी खूब गाइए ।—मेरे उत्तर से वे खुदा हो गयी ।

भोजन करके म वहीं बठ गया । बाहर की खाली चारपाई अंदर डाल दी गयी । गुड्डी और विजय दोनों मरे पास ही बठ गये । औरतें गीत गाने लगी ।

—आप लेट जाइए । ये तो यो ही रात भर गाती रहनी । गुड्डी ने रास्ता सुझाया । मने गुड्डी की ओर देखा । बच्चा के सामने उस तरह गीत सुनना अच्छा नहीं लगा ।

—तुम दोनों कहाँ सोओगे । जाओ जहाँ सोना है जाकर सो जाओ । रात में इतनी देर तक नहीं जागते ।

दोनों बच्चे उठ कर कमरे में चले गये । शायद अपनी माँ के पास । वे फिर नहीं आये । गीत गुरु हो गये । गीत की शुरूआत छोटी साली ने की

लुल जा रे हरिया पोदीना

भुव जा रे बाल्या पोदीना

जीजी ने भावे गीहूँ-चणा

जीजाजी ने भावे पोदीना लुल जा रे

इसी तरह की अन्य पक्तियाँ थीं पर रस इतना था कि जी चाह रहा था घटो बठा सुनता रहूँ । थोड़ी देर बाद गीत समाप्त हो गया । औरतें बीच में बठी एक नवयौवना को ढकेल कर आगे बरन की कोठिंगा कर रही थी । मेरी समझ में कुछ नहीं आया । अखिर बड़ी गरमा गरमी के बाद वह बठी-बठी ही आगे की ओर

खिसकी । बीच में बचठी खासी जगह हो गई । वह बठी बठी ही गान लगी ।

ऐसी मारूँ लपट की

तू म्हारे बानी याक म्हारा छोरा बानी याक

ऐसी मारूँ लपट की ।

उसके एक पाव में वैसे घुँघरू बड़ी धेतुकी आवाज कर रहे थे । और गीत के साथ उठ कर पड़ते पाव से घमाघम्म घम्म की आवाज वही बुरी लग रही थी । उस पर तुक यह कि यह बीच-बीच में एक घुटने पर खड़ी होकर मेरी आर धप्पड मारने के अभिनय में इतनी जोर से हाथ फेंकती था कि मुझे नोच भी आ रहा था और हँसी भी । कभी कभी यह भी भ्रम हो जाता था कि वही सबमुच ही धप्पड न लग जाए । मैं सोन का बहाना करने लगा । किसी ने कहा अब यह तो सो गये ।

—नहीं साया तो नहीं पर ऊब जरूर गया । मने तो सोचा था आप को सुंदर-सा नाच दिखाएँगी कोई सुंदर-सा गीत गाएँगी ।

—नाच ही तो हो रहा है । यह और क्या है ? —किसी ने कहा ।

—यह तो पसंद नहीं आया । हाँ, यदि खड़ी होकर सबमुच कोई नाच दिखाये फिर तो कोई बात भी बने । मने नाचने वाली औरत पर क्या गुजरी होगी दसक खयाल किये बिना ही इतना सब कुछ कह दिया । एक सप्ताह-सा व्याप्त हो गया वातावरण में । सब सुन । सब गाते । कुछ देर की प्रतीक्षा के बाद उनमें बानाफूसी शुरू हुई । नयी पीढ़ी की औरतें मेरे प्रस्ताव से सहमत थी और पुरानी विरोध कर रही थी—ऐसा तो आज तक नहीं हुआ । इतनी उमर गुजर गयी न कभी पीढ़ी में ऐसा देखा न सासरे में ।

नयी कह रही थी—नहीं देखा तो अब देख लो । कोई अनहोनी बात तो नहीं । बठे-बठे न सही खड़े होकर सही ।

एक बड़ा कह रही थी—तेरी जवान बहुत चल गयी है । आज तू करके देख किन्ने घर में घुसेगी ?

बड़ा विवाद खड़ा हो गया । पर सभी सास की आवाज सुनाई दी—तुम को मत गाओ । हमारी राधा नाचेंगी । उठ राधा नाच बेटी । मैं गाऊँगा तेरे नाच के साथ गीत । देखूँगी इनके यहाँ कभी दामाद नहीं आएँगे क्या ?

राधा माँ की आज्ञा मिलते ही खड़ी हो गयी । सब गान्त, सब चुप । पत्नी बौठरी का आधा विवाह खाले बठी थी । छिपी छिपी नजरों से कभी कभी जब उधर देखता था तो दोना की आँखें मिल जाती थी । गाँठें ढीली हो रही थी । पत्नी में घूँघट डाल कर आयी और अपनी मामियों के पास बठ गयी । राधा ने घूँघट निकाल और गीत शुरू किया । राजस्थान का मगहर गीत । जिस पर घूमर नृत्य बिन साज वाज के चलने लगा ।

नना रा लामा क्यूँ कर जाऊँ सा
 मोली बाई सा रा जीरा क्यूँ कर आऊँ सा
 हाँ हाँ जी म्हारी महल चढन्ता पायल बाज सा

नना रा लामा

सोत झराये बठी याँवे सा

माया रा लामा, क्यूँ कर आऊँ सा

पूरे वातावरण में श्रुति गार रस की लहरें व्याप्त हो गयीं। इस राधा की एक एक बिरकन पर हजारों परिनिर्वाण बारी जा सकती हैं। एक सर्मा बध गया। राधा का मन पहले भी दया था।

सासू भी सा गया म्हारी सुसरा भी सो गया

ननद बीजली या जागे सा

नना रा लोमी

लेकिन इस राधा की म कल्पना भी नहान कर सकता था—

ननद बीजली या जागे सा

नना रा लोमी जोहो जी

मोली बाई सा रा बीरा ओहो जी

माया रा लामा क्यूँ कर जाऊँ सा।

उसकी भगिमा उसके हाव भाव जैसे कृष्ण की राधा उसमें आ बठी हो।

किस तरह वह सोते हुए ससुर को देख रही थी, किस तरह सासू का और फिर किस तरह जागती हुई ननद का। और फिर किस तरह ननो के लोमी की अपनी विवशता बता रही थी, सब यह सब बहुत मनमोहक था।

संगीत और नृत्य श्रोतों समाप्त हो गये। बड़ी-बूढ़ियाँ भी राधा की प्रशंसा कर रही थी।

एक महीने रह कर आज जा रहा हूँ। दस साल पहले भी गया था लेकिन आज जजीब सिचाव में हूँ। न आगे लीचता है न पीछे छूटता है। बूढ़ी माँ की निराशा पत्नी की बेवसी और गुडडी पर चढता पानी। अब दस साल भटकने की हिम्मत नहीं है। गुडडी के हाथ पील करने होंगे। गाडी में बठा हूँ, गाडी लिये जा रही है। किस्मत आजमाऊँगा। नायद इस बार गुडडी का किस्मत नाम कर जाए। मोह बहुत है। बठन का जगह नहीं मिल रही लेकिन मैं इससे निस्सह हूँ—चपा आती है, उसकी याद चिकोटी काटती है। राधा जान क्यों इस बार चपा के धातु आ कर सडी हो गयी। मैं दाना जस गुडडी की माँ को पीछ धकेल दे रही हूँ। लेकिन वह अपनी जगह पर अडी है। वह मेरी गुडडी की माँ है वह मेरे विजय की माँ है।

चलते चलते उमन कहा था—गुडडी का देख कर जा रहे हो। जल्दी करनी

चाहिए।—और फिर हम जसे खान्गी लोग। म सोचता हूँ इस बार बहुत दिन बाहर नहीं रह सकूँगा। गुड्डी की किस्मत जरूर काम आएगी और म सब कुछ वही से सहेज कर ले आऊँगा।

खोई हुई दिशाएँ

सड़क के मोड़ पर लगी रेलिंग के सहारे घबरा खड़ा था। सामने, दायें-बायें आदमियों का सलाब था। शाम हो रही थी और बनावट्स की बत्तियाँ जगमगाने लगी थी। यकान से उसने पर जवाब दे रहे थे। वही दूर आया गया भी नहीं फिर भी यकान सार शरीर में मरी हुई थी। दिल और निमाग इतना घबरा हुआ था कि, लगता था, वही यकान धीरे धीरे उतरकर तन में फलती जा रही है।

पूरा दिन बरबाद हो गया। यही खड़ा सोच रहा था। घर लौटने को भी मन नहीं कर रहा था। जाती-जाती एक सो ओरता को देखकर मन और भी उठने लगता था।

भूल पता नहीं, लगी है या नहीं। उसने दिमाग पर जार डाला—मुबह् आठ बजे घर से निकला था। एक प्याली काफी के अलावा तो कुछ पैट में गया नहीं। और तब उसे जहसास हुआ कि घाड़ी-घोड़ी भूल लग रही है। दिमाग और पैट का साथ ऐसा हो गया है कि भूल भी सोचने से लगती है।

निगाह दूर आसमान पर अटक गयी। चीलें उड़ रही हैं और मोड़ की गल में बड़ा हुआ आसमान दिखाई दे रहा है। उसके मांजे कुछ गप्ते हा रहे हैं और आसमान भी मांजे की तली की तरह गदगा पड़ता जा रहा है। हल्की धनू-सी उसे लगी और मन भारी हो गया। उस गदगे आसमान के नीचे जामा मस्जिद का घुम्बद और मीनार दिखाई पड़ रही है। उनकी नाकें बड़ी अजीब सी लग रही हैं।

पीछेवाली दुकान के बाहर चालिया का विज्ञापन है। रीगल बम-स्नॉप के नीम के पत्रा स घीरे घीरे बत्तियाँ भड़क रही हैं। बसें जूँ-जूँ करती आती हैं। एक हाथ ठिठकती है। एक भार से सवारियाँ को उगलती हैं और दूसरी आर। निगाहें आगे बढ़ जाती हैं। पीछे पर बत्तियाँ लगी हैं।

बत्तियाँ की भाँसे लाल-पीली हो रही हैं।

आस-मास में सबकुछ शायद गूजरने हैं पर कोई उम नहीं पहचानता। हर आत्मा या ओरत लापरवाही से दूसरा को नकारता या झूठे दप में दबा हुआ गूजर जाता है।

और तब उस अपना वह पहरे मान आया जहाँ में तान मान परत वह धन आया था। गंगा के मुहाना किनारे पर भी अगर काफी अनजान मिल जाता तो उगड़ी नहरा में पहचान की एक झलक तर आती थी।

और यह राजधानी ! यहाँ सब अपना है, अपन देग का है पर जसे कुछ भी अपना नहीं है, अपने देस का नहीं है ?

तमाम सड़कें हैं जिनपर वह जा सकता है लेकिन वे सड़कें वहीं नहीं पहुँचाती । इन सड़क के किनारे घर हैं, बस्तियाँ हैं, पर किसी भी घर में वह नहीं जा सकता । उन घरों के बाहर पाटक हैं, जिनपर नुत्ता से सावधान रहने की चेतावनी है फूल तोड़ने की मनाही है और घण्टी बजाकर इन्तजार करने की मजबूरी है ।

घर पर निमला दन्तजार कर रही होगी वहाँ पहुँचकर भी पहले मेहमान की तरह कुर्सी पर बैठना होगा, क्योंकि विस्तर पर कमरे का पूरा सामान रखा होगा और वह हीटर पर खाना पका रही होगी । उम्मुक्त हवा के झोंके की तरह वह कमरे में घुस भी नहीं सकता और न उसे बाँहा में लेकर ध्यान हो कर सकता है क्योंकि गुप्ताजी अभी मिल से लौटे नहीं होंगे और मिसेज गुप्ता बेकारी में बँधी गप्प लड़ा रही होगी या किसी स्वेटर की बुनाई सीख रही होंगी । अगर वह चला भी गया तो कमरे में बहुत अदब से घुसेगा, फिर मिसेज गुप्ता से इधर-उधर की दो चार बातें करेगा । तब बीबी खाना खान की बात कहेगी । और खाने की बात सुनकर मिसेज गुप्ता अपने घर जाने के लिए उठेगी ।

और फिर उसके बाद बड़ी खिडकी का पर्दा खिसकाया पड़ेगा किसी बहाने खुराना की तरफवाली खिडकी का बंद करना पड़ेगा । धूमकर भेज के पास पहुँचना होगा और तब पानी का एक गिलास माँगने के बहाने वह पत्नी का बुलाएगा और तब उसे बाँहा में लेकर ध्यान से यह कह सकने का मौका आएगा—बहुत थक गया हूँ ।

लेकिन ऐसा होगा नहीं । इतनी लम्बी प्रक्रिया से गुजरने के पहले ही उसका मन झुँसला उठेगा और वह यह कहने पर मजबूर हो जाएगा—अरे, भई, खाने में कितनी देर है ? सारा ध्यान और समूची पहचान न जाने वहाँ छुप चुकी होगी अजीब-सा बेगानापन होगा । बेकरीवाला के यहाँ मरीछ आवाज में रेडियो गा रहा होगा और गुलाटी व थक कदमा की सायली आवाज जीन पर सुनाई पड़ेगी ।

गली में कोई स्कूटर आकर खड़ेगा और उसमें से कोई अपरिचित आदमी निकलगा किसी और के घर में चला जाएगा ।

माटरा की मरम्मत करनेवाले गराज का मालिक सरदार चाबिया लेकर घर जान के इन्तजार में आधी रात तक बठा रहेगा क्योंकि उसे पन्द्रह सोलह साल पुराने मेकनिक पर भी शायद विश्वास नहीं है ।

और सामने रहनेवाले बिशन कपूर के आन की आहट भर मिलेगी—पिछले दो साल में उसने सिर्फ उसके नाम की प्लेट देखी है—बिशन कपूर जनरलिस्ट । और उसकी गल्ल के बारे में वह सिर्फ यह जानता है कि सामनेवाली खिडकी से जब

बिजली की रोगानी छनने लगती है और सिगरेट का धुआँ सलाखों से लिपट लिपटकर बाहर के अँधेरे में झूट जाता है तो बिगन कपूर नाम का एक आदमी भीतर होता है और सुबह जब उसकी निछवी के नीचे अण्डे का छिलका डबल रोटी का रपर और जली हुई सिगरेटें तीलियाँ और राख मिसरी हुई होती हैं तो बिगन कपूर नाम का आदमी जा चुका होता है।

सोचते-सोचते उसे लगा कि मोर्जे की बदबू और भी तेज हानी जा रही है और अब रेलिंग के पास खड़ा रहना मुश्किल है। जेब से डायरी निकाल कर उसने अगले दिन की मुलाकात के बारे में जान लेना चाहा।

अग्रेजी दनिश में पहले फोन करना है फिर समय तय करके मिलना है। रेडियो में एक घक्कर लगाना है। पिछला घब रोज़ घब से कस कराना है और घर पर एक मनीआडर भेजना है। कल का पूरा घक्का भी इसी में निकल जाएगा। अगले बार का सम्पादक परिचित नहीं है जो फौरन बुला ले और खुलकर बात करले और कोई बात तय हो जाए। रेडियो में भी कोई बात दस मिनट में तय नहीं हो सकती और रिजर्व घक्के काउण्टर पर इलाहाबाद वाला अमरनाथ नहीं है जो फौरन बेक लेकर रफ़ा ला दे। डाकखाने पर व्यापारियों के चपरासियों की भीड़ होगी जो दस-दस मनीआडर के फाम लिये लाइन में खड़े होंगे और एक कागज पर पूरी रकम और मनीआडर-कमीशन का मीजान लगाने में मशगूल होंगे। उनमें से कोई भी उसे नहीं पहचानता होगा।

एक क्षण की जान-बूझकर का सिलसिला सिर्फ फाउण्डेशन होगा, जो कोई-न कोई हल्फ लिखन के लिए माँगेगा और लिख चुकने के बाद अपना खत पढ़ते हुए वह बायें हाथ से उसे कलम लौटाकर शायद धीरे से थकू कहेंगा और टिकट वाले काउण्टर की ओर बढ़ जाएगा।

और तब उसे भुँसलाहट-सी हुई डायरी हाथ में ली और उसकी निगाहें फिर दूर की ऊँची इमारतों, पर अटक गयी थी जिन पर बिजली के मुकुट जगमगा रहे थे। और उन नामों में से वह किसी को नहीं जानता था। इलाहाबाद में सबसे बड़े कपड़े वाले के बारे में इतना तो मालूम था कि पहले वह बहुत गरीब था और कपड़े पर कपड़ा रख कर फरी लगाता था और अब उसका लडका विदेश पढ़ गया हुआ है और वह खुद बहुत धार्मिक आदमी है जो अब माघे पर छाप्रा तिलक लगाकर मनमाना मुनाफा कमा रहा है और कारपोरेशन का चुनाव लड़ने की तयारियाँ कर रहा है। लेकिन यहाँ कुछ भी पता नहीं चलता किसी के बारे में कुछ भी मालूम नहीं पड़ता।

कनाटप्लेस में खड़े हुए लान हैं। तनहा पड़ हैं और उन दूर दूर खड़े तनहा पेड़ों के नीचे नगर निगम की बच हैं, जिन पर थके हुए लोग बंठे हैं और लान

मे एकाग्र बच्चे दौड़ रहे हैं। बच्चा की शक्ल और ग़रारतें तो बहुत पहचानी-सी लगती हैं पर गोलगप्पे खाती हुई उनकी मम्मी अजनबी है क्योंकि उसकी आँखों में मासूमियत और गरिमा से भरा प्यार नहीं है उसके शरीर में मातृत्व का सौन्दर्य और दप भी नहीं है—उसमें सिर्फ एक ख़ुमार है और एक बहुत बेमानी और पिटी हुई ललकार है, जिसे न तो नकारा जा सकता है और न स्वीकार किया जा सकता है—वह ललकार सब बाना में गुँजती है और सब बहरों की तरह गुँजर जाते हैं।

लॉन पर कुछ क्षण बैठने को मन हुआ पर उसे लगा कि वहाँ भी कोई ठिकाना नहीं अभी बल ही तो चोर की तरह दबे पाँव घास में बहता हुआ पानी आँया था और उसके कपड़े भीग गये थे।

तनहा खड़े पेड़ों और उनके नीचे सिमटते अँपेरे में अजीब-सा खालीपन है तनहाई ही सही, पर उसमें अपनापन तो हो। वह तनहाई भी किसी की नहीं है क्योंकि हर दस मिनट बाद पुलिस का आदमी उधर से घूमता हुआ निकल जाता है। हाडिया की सूखी टहनियों में आइसक्रीम के खाली कागज और चने की खाली पुडियाँ उलझी हुई हैं या कोई बेघर-बार का आदमी शराब की खाली बोतल फेंक कर चला गया है।

बायरी पर फिर उसकी नज़र जम गयी और शोर शराबों से भरे उस सलाब में वह बहुत अकेला-सा महसूस करन लगा और उसे लगा कि इन तीन सालों में ऐसा कुछ भी नहीं हुआ जो उसका अपना हो जिसकी कबूट अभी तक हो, लुशी या दद अब भी मौजूद हो। यहाँ रेगिस्तान की तरह फली हुई तनहाई है अनजान सागर-सटों की खामोशी और सूनापन है पछाड़ खाती हुई लहरों का शोर है जिससे वह खामोशी और भी गहरी होती है।

मोझे की ग़ल में बड़ा हुआ आकाश है और जामा मस्जिद के गुम्बद के ऊपर चक्कर काटती हुई चीलें हैं। औरतों का पीछा करते हुए फूल बेचने वाले हैं और यतीम बच्चा के हाथ में शाम की खबरा के अखबार हैं।

और तभी चंदर को लगा कि एक अरसा हो गया, एक जमाना गुज़र गया, वह खुद अपने से नहीं मिल पाया। अपने से बातें करने का वक्त ही नहीं मिला। यह भी नहीं पूछा कि आखिर उसका अपना हाल-चाल क्या है और उसे क्या चाहिए? हल्की-सी मुस्कराहट उनके होठों पर आयी और उसने आगे हर शुक्रवार के आगे नोट किया—खुद से मिलना है, शाम ७ बजे से ९ बजे तक। और आज शुक्रवार ही है। यह मुलाकात आज ही होनी चाहिए। घड़ी पर नज़र जाती है—सात बजे हैं। पर मन का चोर हावी हो जाता है। क्या न टी-हाउस में एक प्याला चाय पी ली जाए? न जाने क्या, मन अपने से मिलने से घबराता है, रह रहकर

कतराता है ।

तभी उस पार से आता हुआ आनन्द दिखाई दिया । वह उससे भी नहीं मिलना चाहता । बड़ा बुरा मज है आनन्द को । वह उस छूत से बचा रहना चाहता है । आनन्द दुनिया में दोस्त खोजता है—एसे दास्त, जो जिन्दगी में महरे न उत्तरों पर उसके साथ कुछ देर रह सकें और बात कर सकें । उसकी बातों में गाइडों की तरह खोललापन है

और उसे लगा कि वही खोललापन खुद उसमें भी वही-न-वही है

उसने भी उन खण्डहरों में समय बरबाद किया है जिनकी कथाएँ अधपले गाइडों की जवान पर रहती हैं और जो हर बार, उन मरी हुई कहानियों को हर दशक के सामने दुहराते जाते हैं—यह दीवाने खास है जरा नक्कली देखिए ! यहाँ हीरे-जवाहरात से जड़ा सिंहासन था यह जनाना हमाम है और यह वह जगह है जहाँ से बादशाह अपनी रिआया को दशन देते थे और यह महल सदाया का है यह बरसात का और यह हवादार महल गर्मिया का है और डयर आइए सभल के यह वह जगह है जहाँ फाँसी की आँखी थी ।

चन्दर का लगा, जिन्दगी के पच्चीस साल वह उन गाइडों के साथ खण्डहरों में बिताकर आया है, जिनकी जीवत कथाओं को वह कभी नहीं जान पाया—सिर्फ दीवाने खान उस दिखाया गया, नक्कली दिखाई गयी और जनाने हमाम में घुमाकर गाइड ने उसे फाँसीवाले अँधेरे और बदबूदार कमरे में छोड़ दिया, जहाँ कमगादड़ लटके हुए बिलबिला रहे हैं और एक बूढ़ा पुरानी ऐतिहासिक रस्सी लटक रही है, जिसका फाँदा गरदन में बस जाता है और आदमी झूल जाता है ।

और उसके बाद अबे कुएँ में फँकी गयी वे लाशें समाज को दे दी जाती हैं उनमें और उनमें कोई फरक नहीं है ।

और आनन्द भी उनसे अलग नहीं । चन्दर कतरा जाना चाहता था, क्याकि आनन्द आते ही गाइडों की तरह से कहेगा—यार, तुम्हारे बाल बहुत खूबसूरत हैं ! ब्रिल्लीम लगाते हो ? लडकियाँ तो तबाह हो जाती हंगी !

और तभी चन्दर को सामने पाकर आनन्द रुक गया, "हलो ! यहाँ * से ? क्यों लडकियों पर जुल्म डा रहे हो ?"

सुनकर उस हँसी आ गयी ।

'किपर से आ रहे हो ?' डायरी जेब में रखते हुए उसने पूछा ।

आज तो यूँ ही फँस गये । आओ, एक प्याला काफी हो जाए । 'आनन्द ने कहा और फिर एक क्षण रुककर उसने दूसरी बात सुझायी, "या और कुछ ?"

चन्दर ने उसका मनलव समझकर ना कर दी । उसने जोर दिया, 'चलो फिर आज तो हा ही जाए क्या रखा है इस जिन्दगी में ?' कहते हुए वह झूठी

हँसी हँसा और घीरे से हाथ दबाकर पूछा, "इफ यू डाट माइड कुछ पसे हैं ? उसके कहन मे कोई हिचक नहीं थी और न उसे गरम ही लगी । बड़ी सीधी-सी बात है—पसे कम हैं ।

"अच्छा, पाटनर, मैं अभी इन्तज़ाम करके आया ।" उसने विश्वास को गहराते हुए कहा, "यही रक्ना चले मत जाना ।"

और वह जाता है तो फिर नहीं आता, चंदर यह अच्छी तरह से जानता है ।

कुछ देर बाद वह टी-हाउस मे घुम गया और मेजों के पास चक्कर काटता हुआ कोने वाले पण्डितजी के काउंटर से सिगरेट का पकेट लेकर एक मेज पर जम गया ।

हलो !" कोई एक अनजाना चेहरा वाला, 'बहुत दिनों बाद इधर आना हुआ ।' और वह भी वहीं बठ गया ।

दोनों के पास बात करन के लिए कुछ भी नहीं है ।

टी-हाउस मे बेपनाह शोर है । खोखली हँसी के ठहाके हैं और दीवार पर एक घड़ी है जो हमेशा व क्त से आगे चलती है । तीन रास्ते अंदर आन और बाहर जाने के लिए हैं और चौथा रास्ता वायरूम म जाता है । वायरूम के पाटन मे फिनाइल की गालिया पड़ी रहती हैं और गँलरी म एक गीशा लगा हुआ है । हर वह आन्मी जा वायरूम जाता है, उस गीशे मे अपना मुह देखकर लौटता है ।

गैलाड मे डिनर-डास की तयारी हो रही है । कुर्सियों की तीन कतारें बाहर निकालकर रख दी गयी हैं । उधर बोल्गा पर विदगियों की भीड बढ रही होगी ।

और सभी एक जोडा नीतर आया ।

महिला सजी-वजी है और उसके जूडे म फूल भी हैं । आदमी के चेहरे पर अजीब-सा गरूर है और वे दोनों कैमिलीवाली सीट पर आमने-सामने बठ जाते हैं । बठने से पहले उनमे जैसे कोई ताल्लुक नजर नहीं आ रहा था । लेकिन जब महिला बठने के लिए मुड़ी तो साथ वाले आदमी ने उसकी कमर पर हाथ रखकर सहारा दिया ।

उनके पास भी बात करने के लिए शायद कुछ नहीं है ।

महिला अपना जूडा ठीक करते हुए ओरो को देख रही है और साथ वाला आदमी पानी के गिलास को देख रहा है । किसी के दखने मे कोई मतलब नहीं है । आँखें हैं इसलिए देखना पडता है । अगर न होती तो सवाल ही नहीं था । एक जगह देखते-देखते आँखा मे पानी आ जाता है इसलिए जरूरी है कि इधर-उधर भी देखा जाए ।

बरा उनकी मेज पर सामान रख जाता है और दोनों खाने म मशगूल हो जाते हैं । कोई बात नहीं करता । आदमी खाना खाकर दाँत कुरेदने लगता है और वह महिला रुमाल निकालकर अदाज से लिपस्टिक ठीक करती है ।

अन्त में बैरा आवर पसे लीगता है ता आदमी कुछ त्रिप छोड़ता है जिस महिला गौर से देखती है और दाना स्नानवाही से उठ खड़े होते हैं। आदमी जरा ठिठककर साधवाली महिला को आगे निबलने का इशारा करता है और उसके पीछे-पीछ चला जाता है।

चन्दर का मन और मारी हो गया। अवेलेपन का नागपात्र जमे और भी बस गया। अपने साथ बैठे हुए अनजान दोस्त की तरफ उसने गहरी नजरा में देखा और सोचा कि अजनबी ही सही पर इसने उसे पहचाना तो, अपनी पहचान भी बड़ा महारा देती है।

अपनी ओर चन्दर को देखते हुए पावर साधवाला दास्त कुछ कहने को हुआ पर उस उसे कुछ याद नहीं आया। फिर अपन का सँभालकर उसने चन्दर से पूछा 'आप आप तो गायद कामस मिनिस्ट्री में हैं। मुझ याद पड़ता है कि "कहते हुए वह दब गया।

चन्दर का पूरा शरीर झनझना उठा। एक घूंट में बची हुई काफी पीकर उसने बड़े सयत स्वर में जवाब दिया, 'नहीं मैं कामस मिनिस्ट्री में कभी नहीं था।'

उस आदमी ने आगे अटवले मिडान की कोशिश नहीं की। सीधे-सादे उस अनजान सम्बन्ध का मजबूत बनाते हुए कहा, "आल राइन्, पाटनर फिर कभी मुलाकात होगी। और काफी के पमे देवर मिगरेट मुलगाना हुआ उठ गया।

चन्दर बाहर निबल कर बस-स्टॉप की ओर बढ़ा। मद्रास होटल के पीछे बस स्टॉप पर चार पाँच लोग खड़े थे और पुलिसवाला स्टॉप की छतरी के नीचे बड़ा सिगरेट पी रहा था।

चन्दर वहीं जाकर खड़ा हो गया। पड़ के अँधेरे में वह चुपचाप खड़ा था। नीचे पीले पत्ते पड़े थे, जो उसके परो से दबकर चुरमुराने लगते थे और पीले पत्तों की वह आवाज उसे सर्पों पीछ खींच ले गयी। इस आवाज में एक बहुत गहरी पहचान थी 'उसे बड़ी राहत-सी मिली।

ऐसे ही पीले पत्ते पड़े हुए थे। उस रात पर बहुत साल पहले इन्द्रा के साथ एक दिन वह चला जा रहा था तब कुछ भी नहीं था उसके सामने वह सप्टडहरो में अपनी जिन्दगी खराब कर रहा था और तब इन्द्रा ने ही उससे कहा था, "चन्दर! तुम क्या नहीं कर सकते?"

और इन्द्रा की उन प्यार मरी आँखों में झलकते हुए उसने कहा था, 'मेरे पास है ही क्या? समझ में नहीं आता कि जिन्दगी कहाँ ले जाएँगी इन्द्रा। इसीलिए मैं यह नहीं चाहता कि तुम अपनी जिन्दगी मेरी खातिर बिगाड़ लो। पता नहीं, मैं किस किनारे लूँ, सूखा मरूँ या पागल हो जाऊँ" "

इन्द्रा की आँखों में प्यार के बादल और गहरे हो आये थे और उसने कहा था

‘ऐसी बातें क्यों करते हो, चन्दर ? म तुम्हारे साथ हर हाल में मुखी रहूँगी।’

चन्दर ने उसे बहुत गौर से देखा था। इन्द्रा की आँखों में नमी आ गयी थी। उसकी कंटीली बरौनियों से विश्वासभरी मासूमियत छलक रही थी। माथे पर आयी हुई लट छूने को उसका मन हो आया था पर वह झिझककर रह गया था। इन्द्रा के बाना में पड़े हुए कुण्डल पानी में तरती मछलियाँ की तरह झलक जाते थे। उसने कहा था, “आओ, उधर पेड़ के नीचे बैठेंगे।”

सरस के पेड़ के नीचे एक सीमेंट की बेंच बनी थी। जमीन पर पीली पतियाँ बिखरी हुई थी। उसके कुचलने से कसी प्यारी आवाज आ रही थी।

दोनों बेंच पर बैठ गये थे और चन्दर धीरे से उसकी कलाई पर अँगुली से लकीरें खींचने लगा था। दोनों खामोश बैठे थे। बातें बहुत-सी थी जो वे कह नहीं पा रहे थे। कुछ क्षणों बाद इन्द्रा ने आँखें चुराते हुए उसे देखा था और शरमा गयी थी और फिर उसी बात पर आ गयी थी, जसे उसी एक बात में सारी बातें छिपी हो ‘तुम ऐसा क्या सोचते हो चन्दर ? मुझ पर भरोसा नहीं ?’

तब चन्दर ने कहा था, “भरोसा तो बहुत है इन्द्रा। पर मैं खानाबदोश की तरह जिदगी भर मटकता रहूँगा। उन परेशानियों में तुम्हें खींचने की बात सोचता हूँ तो बरदाश्त नहीं कर पाता। तुम बहुत अच्छी और सुविधाओं से भरी जिदगी जी सकती हो। मैंने तो सिर पर कपन बाधा है मेरा क्या ठिकाना ?

“तुम चाह जो-कुछ बनो, चन्दर, अच्छे या बुरे, मेरे लिए एक-से रहोगे। कितना इतजार करती हूँ तुम्हारा, पर तुम्हें कभी वक्त ही नहीं मिलता।” फिर कुछ देर मौन रहकर उसने पूछा था, “इधर कुछ लिखा ?”

‘हाँ’ धीरे से चन्दर ने कहा था।

‘दिखाओ’ इन्द्रा ने मांगा था।

और तब चन्दर ने पसीजे हुए हाथों से डायरी बढा दी थी। इन्द्रा ने फौरन डायरी अपनी किताबों में रख ली थी और बोली थी, “अब यह कल मिलेगी इस बहाने तो आओगे।”

“नहीं-नहीं ! मैं डायरी अपने साथ ले आऊँगा मुझे वापस दो।” चन्दर ने कहा था तो इन्द्रा शनानी से मुस्कराती रही थी और उसकी आँखों में प्यार की गहराइयाँ जोर बढ गयी थी।

हारकर चन्दर वापस चला आया था और दूसरे दिन अपनी डायरी लेने पहुँचा था ता इन्द्रा ने कहा था, “इसमें कुछ मैंने भी लिखा है, पढ़कर फाड़ देना जरूर से ?”

‘मैं नहीं फाड़ूँगा !’

‘तो छुट्टी हो जाएगी !’ इन्द्रा ने बच्चों की तरह बड़ी मासूमियत से कहा

था और उस वक्त उमर मुह से वह बेहद बचपने की बात भी बड़ी प्यारी लगी और एक दिन

एक दिन इद्रा पर आयी थी। इधर-उधर से घूम घामकर वह चंदर व कमर में पहने गयी थी और तब चंदर नपहली बार उस मिलकुर अपन पास महसूस किया था और उसके गोरे माथे पर रंग से बिंदी बना दी थी और कई क्षणा तक मुग्ध-सा देसता रह गया था और अनजाने ही उसने अपन होठ इद्रा के माथे पर रखा दिये थे। इद्रा की पलक झपक गयी थी और रोम रोम से एक मुग्ध फूट उठी थी। उसकी अंगुलियाँ चंदर की बांह पर परखराने लगी थी और माथे पर आया पसीना उसपे हाठा ने सोख लिया था। रैगमी रोम पसीने से बिपक गये थे और उन उमाद के क्षणों में दोनों ने ही प्रतिज्ञा की थी—वह प्रतिज्ञा जिसमें शपथ नहीं थी जो हाठा तक भी नहीं आयी थी।

तब से उसे बे गम हमेशा याद रहते हैं—तुम क्या नहा कर सकते ?

एक बस आयी और ठिठककर चली गयी। तब चंदर को अहसास हुआ कि वह बस-स्टॉप पर खड़ा है।

वह गहरी पहचान नहीं कोई तो है और वह बहुत दूर भी तो नहीं।

इद्रा भी यही है दिल्ली में

दा महीन पहले ही तो वह मिला था। तब भी इद्रा की आंखों में चार बरस पहले की पहचान थी और उसने अपने पति से किसी बात पर कहा था, 'अरे चंदर की आदतों में खूब जानती हूँ।'।

और इद्रा के पति ने बड़े खुले दिल से कहा था, तो फिर, नई इनकी खातिर-बातिर करो।'

और इद्रा ने मुस्कराने हुए चार बरस पहले की ही तरह चिढ़ाने के अंगूठे में बयान किया था।

चंदर को दूध से चिढ़ है और काफी इह धुआँ पीन की तरह लगती है चाय में अगर दो चम्मच चीनी डाल दी गयी तो इनका गला खराब हो जाएगा कहकर वह खिलखिलाकर हँस दी थी और इस बात से उसने पिछली बातों की याद ताजी कर दी थी सचमुच चंदर दो चम्मच चीनी नहीं पी सकता।

बस आने का नाम नहीं ले रही।

खड़े-खड़े चंदर को लगा कि इस अनजानी और अपरिचित नगरी में एक इद्रा है जो उस इतन सालों के बाद भी पहचानती है अब तक जानती है। उसका मन अपने-आप इद्रा से मिलने के लिए छटपटाने लगा। यह अजनबीयत किसी तरह दूरे तो कुछ क्षणा के लिए भी।

तभी एक फटफटवाला आवाज लगाता हुआ आ गया— गुरदारा रोड।

त्रोल बाग गुच्छारा रोड ।

चन्दर एक बंदम आगे बढ़ा और वह सरदार उसे देखते ही जैसे एकदम पहचान गया, “आदए, बाबूजी, त्रोलबाग, गुच्छारा रोड ।”

उसकी आँखों में पहचान की झलक देख चंदर का मन हलका हो गया ।
आखिर एक ने तो पहचाना । चंदर सरदार को पहचानता था, बहुत बार वह इसी सरदार के फटफट में घंठघर कनाट प्लेस आया था ।

आँखों में पहचान देखते ही चंदर लपककर फटफट पर बैठ गया । तीन सवारियाँ और आ गयीं और दस मिनट बाद ही गुच्छारा रोड के चौराहे पर फटफट रक गया । चन्दर ने एक खवती निकालकर सरदार की हथेली पर रख दी और एक पहचान भरी नजर में उसे देख आगे बढ़ गया ।

पीछे में आवाज आमी, “ए बाबूजी ! कितना पसा लिया है ?” चंदर ने मुड़कर देखा, तो सरदार उसकी तरफ आता हुआ कह रहा था, “दो आने और दीजिए साहब ।”

“हमेशा चार ही आने तो लगते हैं, सरदारजी ” चंदर पहचान जताता हुआ बोला, पर सरदारजी की आँखों में पहचान की परछाई तक नहीं थी । वह फिर बोला, “सरदारजी, आपके फटफट पर ही बीसो बार चार आन देकर आया हूँ ।”

“किन्ने होर ने लये होणगे चार आने । असी ते छ आन तो घट नहीं लेंदे, बादशाहो ।” सरदार बोला और उसकी हथेली फली हुई थी ।

बात दो आने की नहीं थी । चंदर ने बाकी पैसे उसकी हथेली पर रख दिये और इन्द्रा के घर की तरफ मुड़ गया ।

और इन्द्रा उसे वैसे ही मिली । वह अपने पति का इन्तजार कर रही थी । बड़ी अच्छी तरह उसने चंदर को बठाया और बोली, “इधर कसे भूल पड़े आज ?” उसकी आँखों में वही पहचान की परछाई तैर रही थी । कुछ क्षणों बाद इन्द्रा ने कहा था, “अब ता नौ बज गये । आठ ही बजे फक्कटी बंद करके लौट आते हैं पता नहीं आज क्यों देर हो गयी । अच्छा चाय ता पिओगे ?”

चाय तो नकार नहीं की जा सकती ।” चन्दर न बड़े उत्साह से कहा था और कुर्सी पर आराम से टाँगें फलाकर बैठ गया था । उसकी सारी शक्त जैसे उतर गयी थी और मन का अकेलापन वहीं झूब गया था ।

नौकरानी आकर चाय रख गयी । इन्द्रा प्याले सोधे करके चाय बनाने लगी । वह उसकी बाँहों, चेहरे और हाथों को देखता रहा सब-कुछ वही था वैसे ही था चिर परिचित

तभी इन्द्रा ने पूछा, “चीनी कितनी दू ?”

और एक झटके से जैसे सब-कुछ बिखर गया । चंदर का गला सूखने-सा लगा

और गरीर फिर थकान से भारी हो गया। माथे पर पसीना आ गया। फिर भी उसने पहचान का रिश्ता जोड़ने की एक कोशिश की और बोला, 'दो चम्मच।' और उसे लगा कि अभी इद्रा को सब-कुछ याद आ जाएगा और वह पूछेगी कि क्या दो चम्मच चीनी से अब गला खराब नहीं होगा ?

पर इद्रा न दो चम्मच चीनी डाल दी और प्याला उसकी ओर बढ़ा दिया। जहर के घूटा की तरह वह चाय पीता रहा। इद्रा इधर-उधर की बातें करती रही जिनसे मेहमाननवाजी की बू आ रही थी और चंदर का मन कर रहा था कि वह चीखता हुआ यहाँ से भाग जाए और किसी दोवार से अपना मिर टकरा दे।

जस-से उसने चाय पी और पसीना पाछता हुआ बाहर निकल आया। इद्रा न क्या-क्या बातें की थी उसे बिल्कुल याद नहीं रही।

सड़क पर निकलकर उसने एक गहरी साँस ली और कुछ क्षणों के लिए खड़ा रह गया। उसका गला बुरी तरह सूख रहा था और मुँह का स्वाद बेहद बिगड़ा हुआ था।

चौराहे पर कुछ टक्सी डाइवर नए-नए गालियाँ बक रहे थे और एक कुत्ता दूर सड़क पर भागा चला जा रहा था। मछलियाँ तलने की राख यहाँ तक आ रही थी और पानवाले की दूकान पर कुछ जवान लोग कोकाकोला की बोतलें मुँह में लगाय खड़े थे। स्कूटरों में कुछ लोग भागे जा रहे थे। और शहर से दूर जानेवाले लोग बस-स्टॉप पर खड़े प्रतीक्षा कर रहे थे।

कारें, टक्सीयाँ, बसें और स्कूटर आ-जा रहे थे।

चौराहे पर लगी बत्तियाँ की आँखें अब भी लाल-पीली हो रही थी।

चंदर घका-सा अपने घर की ओर लौट रहा था। अँगुलियों पर जूता काट रहा था और मोर्चे की बदनू और भी तेज हो गयी थी।

आखिर वह पका-हारा घर पहुँचा और एक मेहमान की तरह कुर्सी पर बैठ गया। यह कोई नई बात नहीं थी। निमला उस देखकर मुस्करायी और धीरे से बाँहा पर हाथ रखकर पूछा, 'बहुत थक गये ?'

'हां,' चंदर ने कहा और उसे बहुत ध्यान से देखा। उसका मन भीतर में उमड़ आया था। उस विराये के मकान में भी उस क्षण उसे राहत मिली और उस लगा कि वह उसी का है।

निमला खाना लगाते हुए बोली, 'हाथ मुँह धो लो।'

'अभी खाने का मन नहीं है,' चंदर ने कहा।

बहुत ध्यान से देखते हुए निमला ने पूछा, 'क्यों क्या बात है ?' 'सुबह भी तो साँके नहीं गये थे। दोपहर में कुछ खाया था ?'

'हां,' उसने कहा और निमला को देखने लगा।

निमला कुछ अचकचायी और चक्की-भी उसने पास बैठ गयी।

चंदर कुछ देर साई-साई नजरो से कमरे की हर चीज देखता रहा। बीच-बीच में बड़ी गहरी नजरा से निमला को ताक लेता। निमला कोई किताब खोल कर पढ़ने लगी थी।

पीछे से पड़ती हुई रोशनी में निमला के बाल रेझम की तरह चमक रहे थे। उसकी बरोनिया मुलायम काटा की तरह लम रही थी और कनपटों के पास रेशमी बालों के सिरे अपने-आप धूम मये थे। पलका के नीचे पड़ती हुई परछाई बहुत पह चानी-सी लग रही थी। उसने कड़ा आधी कलाई तक सरका लिया था।

चंदर की निगाह उसमें पुरानी पहचानें खोज रही थी—उसके नाखून अँगुलियों 'कानो की गुदारी' लुके

फिर उठकर उसन पदें खींच लिये और आराम से लेट गया। उसे लगा कि वह अकेला नहीं है, अजनबी और तनहा नहीं है। सामनेवाला मुल्दस्ता उसका अपा है। पड़े हुए कपड़े उसके अपन हैं। उनकी गंध वह पहचानता है। इन सभी चीजों में एक गहरी पहचान है। घोर अँधेरी रात में भी वह उह टटोलकर पहचान सकता है। किसी भी दरवाजे से त्रिना टकराय हुए निकल सकता है।

तभी ज़ीन पर गुलाटी के घबे बंदमा की खोखली आइट मुनाई पड़ी और उसे धबराहट-सी हो आयी। उसन घीरे से निमला का अपने पास बुला लिया और उसे लिटाकर उसकी छाती पर अपना हाथ रख दिया।

कई क्षणों तक वह अपन हाथ से उसकी उठनी-बठती छाता को महसूस करता रहा। फिर अचानक उसकी इच्छा हुई कि निमला का शरीर और मन उसे पहचान की साक्षी दे, आत्मीयता और निबन्ध एकता का अहसास दे।

अँधेरे ही में उसन उसके नाखनों को टटोला, उसके पलकों को छुआ, उसकी गदन में मुँह ठुपाकर लो जाना चाहा। धुने हुए बालों की चिर-परिचित मुगंध उसके रध रध में रिसने लगी और उसके हाथ पहचान के लिए पोर-पोर पर धरधराते हुए सरकने लगे। निमला की साँस भारी होती आ रही थी।

उसने उसकी मांसल बाँहों का सहलाया और गोल गुदारे कंधों को दप धपाया। निमला का शरीर एक अनूठे अनुराग से पास आता जा रहा था।

उसका रोम रोम उस पहचान रहा था जोड़-जोड़ कसाव से पूरित था तन के भीतर गरम रक्त के ज्वार उठ रहे थे और हर साँस पास खींचती जा रही थी। अग प्रत्यग में, पोर-पोर में एक गहरी पहचान

उसका मन उस परिचित गंध परिचित सौम्य और पहचाने स्पर्शों में डूबता गया। उसे और कुछ भी नहीं चाहिए परिचय की एक माँग उस अँधेरे में वह साँसों से, गंध से, तन के टुकड़े टुकड़े से पहचान चाहता है प्रतीति चाहता है।

चारा तरफ सभोटा छा गया।

और उस गामांगी में वह आदरस्त हो गया ।

निमला ने बरबट बत्ती और एक गहरी साँस सेनर बीली-सी पड़ गयी । और जरा देर में ही वह गहरा नींद में डूब गयी ।

और अलसत्ता हुआ चंदर फिर अपने को बहुत अव्यक्त महसूस करने लगा । उसने निमला के कंधे पर हाथ रखा और चाहा कि उसे अपनी ओर कर ले, पर उसकी अँधुलियों में जैसे जान ही न हो । आँखें उसने हठाएँ होकर आँखें मूँद ली और पता नहीं कब उसकी पलकें झपक गयी ।

पाने का पड्डियाल ने दो के घण्टे बजाये, तो चंदर की नींद उखल गयी । नींद के सुमार में ही वह चौक-सा पड़ा जैसे कमरे की गामांगी और मूनपन से वह डर गया हो । अँधेरे में ही उसने निमला का टटोला । तबिये पर बिलेरे उसके गालों पर उसका हाथ पड़ा और उन बालों की बिबनाई उसने भटसूस की और सिर झुकाकर वह उन्हें सूँघने लगा ।

निमला अब भी बरबट लिये पड़ी थी । वह धीरे से नींद में कुनमुनायी । चंदर का दिल अचानक धक् से रह गया—वही निमला जाग न जाए, अनजाने ही इस स्पष्ट से अजनबिया की तरह चौक न जाए ।

निमला नींद में ही कुछ घटबडायी और फिर जैसे डरकर रोने लगी । चंदर चौक-सा गया—क्या वह उसके स्पष्ट को नहीं पहचानती ?

उसने निमला को क्षमस्त्रोरकर उठाया, ' निमला ! निमला ! वह भदहवासी में पुकारता गया ।

निमला चौककर उठी और आँखें मलते हुए प्रकृतिस्थ होने की कोशिश करने लगी ।

विजली जलाकर निमला को दोनों कंधों से पकड़कर उसने अपना मुँह उसके सामने करके डरी हुई आवाज में पूछा ' मुझे पहचानती हो ? मुझे पहचानती हो न निमला ? '

निमला आँखें फाड़कर देखने लगी और आश्चर्य भरे स्वर में बोली, ' क्या हुआ ? '

वह निमला का ताकता रहा । उसकी आँखें उसने बेहतर पर कुछ छाजती रही उसका मुँह से कोई बात न निकली ।

मेरा दुश्मन

वह इस समय हमारे कमरे में बेहोश पड़ा है। आज मैं उसकी शराब में कोई चीज मिला दी थी कि खाली शराब वह शरबत की तरह गट-गट पी जाता है और उस पर कोई खास असर नहीं होता। आखा में लाल डोरे-से झूलने लगते हैं, माथे की गिकनें पसीन में भीगकर दमक उठती हैं, हाठों का जहर और उजागर हो जाता है, और बस—होशोहवास बदस्तूर कायम रहत हैं।

हैरान हूँ कि यह तरीक़ीब मुझे पहले क्यों क्या नहीं सूझी। गायद सूझी भी हो, और मैंने कुछ सोचकर इसे दबा दिया हो। मैं हमेशा कुछ-न-कुछ सोचकर कई बातों को दबा जाता हूँ। आज भी मुझे अब देना तो था कि वह पहल ही धूँट में जायका पहचान कर मेरी चोरी पकड़ लेगा। लेकिन गिलास खत्म होन-होने उसकी आँखें बुझने लगी थी और मेरा हाँसला बढ गया था। जी में आया था कि उसी क्षण उसकी गरदन मराड दूँ, लेकिन फिर नतीजों की कल्पना से दिल दहलकर रह गया था। मैं समझता हूँ कि हर दुजदिल आदमी की कल्पना बहुत तेज होती है हमेशा उसे हर खतरे से बचा ले जाती है। फिर भी हिम्मत बाधकर मैंने एक बार सीधे उसकी ओर देखा ज़रूर था। इतना भी क्या कम है कि साधारण हालत में मेरी निगाहें सहमी हुई-सी उसके सामने इधर-उधर फटपटाती रहती हैं। साधारण हालात में मेरी स्थिति उसके सामने बहुत असाधारण रहती है।

अब उसकी आँखें बन्द हो चुकी थी और सिर झूल रहा था। एक ओर सुढ़क-कर गिर जान से पहले उसकी बाँहें दो लदी हुई डीली टहनियाँ की सुम्त-सी उठान के साथ मेरी ओर उठ आई थी। उसे इस तरह लाचार देखकर भय हुआ था कि वह दम तोड रहा है।

लेकिन मैं जानता हूँ कि वह मूजी किसी भी क्षण उछलकर खड़ा हो सकता है। होश संभालन पर वह कुछ कहगा नहीं। उसकी ताकत उसकी खामोशी में है। बाते वह उस जमाने में भी बहुत कम किया करता था, लेकिन अब तो उसे बिल्कुल शूँगा हो गया है।

उसकी शूँगी अवहलना की कल्पना-मात्र से मुझे दहशत हा रही है। कहा न कि मैं एक दुजदिल इन्सान हूँ।

मैं न जाने कसे गमझ बठा था कि इतने असें की अल्हदगी के बाद अब मैं उससे आतक से पूरी तरह आजाद हो चुका हूँ। इसी खुशफहमी में शायद उस रोज उसे मैं अपने साथ ले आया था। शायद मन में कहीं उस पर रीढ़ गौंठन, उसे नीचा दिखाने की दुराणा भी रही हो। हो सकता है कि मैंने सोचा हो कि वह मेरी जीती-जागती भूबसूरत बीबी, बहुतते मटकते तटुरस्त बच्चो, और आरास्ता परास्ता आलीगान कोठी को दगकर खुद ही भदान छाडकर भाग जायेगा और हमें के लिए मुझे उससे नजात मिल जायगी। शायद मैं उस पर यह साबित कर दिखाना चाहता था कि उसने पीछा छोड़ा लेने के बाद किस तदुगवार हद तक मैंने अपनी जिन्दगी को संभाल-संभाल लिया है।

लेकिन ये सब लगेड़े बहाने हैं। हकीकत शायद यह है कि उस रोज मैं उसे अपने साथ नहीं लाया था, बल्कि वह खुद ही मेरे साथ चला आया था, जसे मैं उसे नहीं बल्कि वह मुझे नीचा दिखाना चाहता हो। जाहिर है कि उस समय यह बारीक बात मेरी समझ में नहीं आयी होगी। मौके पर ठीक बात मैं कभी नहीं सोच पाता। यही तो मुसीबत है। वैसे मुसीबतें और भी बहुत हैं लेकिन उन सबका जिक्र यहाँ बेकार होगा।

माला के सामने उस रोज मैंने इसी किस्म की कोई लेंगड़ी सफाई पेश करने की कोशिश की थी और उस पर कोई असर नहीं हुआ था। वह उसे देखते ही बिफर उठी थी। सबसे पहले अपनी बैक्कूफी और सारी स्थिति का अहसास शायद मुझे उसी क्षण हुआ था। मुझे उस कमबख्त से वही घर से दूर, उस सबक के किनारे किसी-न किसी तरह निबट लेना चाहिए था। अगर अपनी उस सहमी हुई खामोशी को तोड़कर मैंने अपनी समस्त मजबूरियाँ उसके सामने रख दी होती, माला का एक लाका-सा लीच दिया होता, साफ-साफ उससे कह दिया होता—देखो पुरु मुझ पर क्या करा और मेरा पीछा छोड़ दो—तो शायद वही हम किसी समझौते पर पहुँच जाते। और नहीं तो वह मुझे कुछ मोहलत तो दे ही देता। छुटते ही दो मोर्चों को एक साथ समालाने की दिक्कत तो पेश न आती। कुछ भी हाँ, मुझे उसे अपने घर नहीं लाना चाहिए था। लेकिन अब यह सारी समझदारी बेकार थी। माला और वह एक दूसरे को यूँ घूर रहे थे जसे दो पुराने और जानी दुश्मन हो। एक क्षण के लिए मैं यह सोचकर आश्चस्त हुआ था कि माला सारी स्थिति खुद समाल लेगी और फिर दूसरे ही क्षण मैं माला की लानत मलामत की कल्पना कर सहम गया था। बात को मजाक में घाल देन की कोशिश मैंने एक खास गिलगिले लहजे में—जो मेरे पास ऐसे नाजुक मौका के लिए सुरक्षित रहता है—कहा था डालियाँ। जरा रास्ता तो छोड़ो कि हम बहुत लम्बी सर से लौटे ॥ जरा बठ जायें तो जो सजा जी में आये, दे देना।

वह रास्ते से तो हट गई थी, लेकिन उसके तनाव में कोई कमी नहीं हुई थी, और न ही उसने मुझे बठने दिया था। साथ ही उस मुरदार ने मेरी तरफ यूँ देखा था जैसे वह रहा हो—तो तुम वाकई उस औरत के गुलाम बनकर रह गए हो। और खुद मैं उन दोनों की तरफ यूँ देख रहा था जैसे एक ही नजर बचाकर दूसरे से कोई साजिशों सम्बन्ध पदा कर लेने की स्वाहिरा हो।

फिर माला ने मौका पाते ही मुझे अलग ले जाकर डाटना-उपटना शुरू कर दिया था—म पूछती हूँ कि यह तुम किस आचारागद को पकड़कर साथ ले आए हो? जरूर कोई तुम्हारा पुराना दोस्त होगा? है न? इतने बरस गादी को हो चले, लेकिन तुम अभी तक बसे-ने-बसे हो रहे। मेरे बच्चे उसे देखकर क्या कहेंगे? पडोसी क्या सोचेंगे? अब कुछ बोलोगे भी?

म हैरान था कि क्या बोलूँ। माला के सामने मैं बोलता कम हूँ, ज्यादा समय सोलन में ही बीत जाता है, और उसका मिजाज और बिगड़ जाता है। उसे उसका गुम्मा बजा था। उसका गुस्सा हमेशा बजा होता है। हमारी कामयाब शादी की बुनियाद भी इसी पर कायम है—उसकी हर बात हमेशा सही होती है और मैं अपनी हर गलती को चुपचाप और फौरन कबूल कर लेता हूँ। ऊपर से वह कुछ भी क्यों न कह उसे मेरी फरमावरणारी पर पूरा भरोसा है। बीच-बीच में महज मुझे चुप कर देने के खयाल से वह इस किस्म की गिकायतें जरूर कर दिया करती है—तुम्हें न जाने हर मामूली से-मामूली बात पर मेरे खिलाफ डट जाने में क्या मजा आता है? मानती हूँ कि तुम मुझसे कहीं ज्यादा समझदार हो, लेकिन कभी-कभी मेरी बात रखने के लिए ही सही बग रा-बग रा।

मुझे उसके ये मूठे उलाहने बहुत पसंद हैं गो मैं उनसे ज्यादा खुश नहीं हो पाता। फिर भी वह समझती है कि इनसे मेरा भ्रम बना रहता है, और मैं जानता हूँ कि बागडोर उसी के हाथ में रहती है। और यह ठीक ही है।

तो माला दाँत पीसकर कह रही थी—अब कुछ बोलोगे भी? मेरे बच्चे पाक से लौटकर इस मनहूँम आदमी को बठक में बठा देखेंगे, तो क्या कहेंगे? उन पर क्या असर होगा? उफ, इतना गंदा आदमी। मेरा घर महक रहा है। बताया न, मैं अपने बच्चा से क्या कहूँगी?

अब जाहिर है कि मैं माला को कुछ भी नहीं बता सकता था। सो, मैं सिर झुकाये खड़ा रहा, और वह मुँह उठाये बहुत देर तक चरमती रही।

बसे यहाँ यह साफ़ कर दूँ कि वे बच्चे माला अपने साथ नहीं लायी थी। वे मेरे भी उतने ही हैं जितने कि उसके लेकिन ऐसे मौकों पर वह हमेशा मेरे बच्चे कहकर मुझसे उहे यूँ अलग कर लिया करती है, जैसे कोई बीचड़ से लाल निकाल रहा हो। कभी-कभी मुझे इस बात पर बहुत दुःख भी होता है, लेकिन फिर ठंडे दिल

से सोचने पर महसूस होता है कि शारीरिक सचाई कुछ भी हो, दहानी तौर पर हमारे सभी बच्चों माला के ही हैं। उनके रंग-रस में मेरा हिस्सा बहुत कम है। और यह ठीक ही है, क्योंकि अगर वे मुझ पर जात ता उन्हें भी मेरी तरह सीधा होना में न जाने कितनी दूर लग जाती। मैं खुश हूँ कि उनका भविष्य खूब रोशन है और उस रोशनी में मेरा हाथ बस इतना ही है कि मैं उनका बान्धनी, और शायद किसीकी बाप हूँ, उनके लिए पस बमाता हूँ, और तिलोजान से उनकी माँ की सेवा में दिन रात जुटा रहता हूँ।

छतर ! कुछ देर यूँ ही सिर नीचा बिये सड़ रहने के बाद आखिर मैं निहायत आजिजाना आवाज में कहना शुरू किया था—अरे भई, मैं तो उस कमबख्त को ठीक तरह से पहचानता भी नहीं उससे गैस्ती का तो सवाल ही पड़ा नहीं होता। अब अगर राम्ते में कोई आदमी मिल जाए तो ।

न जान मेरे पिकरे का अन्त क्याकर होता ! शायद होता भी कि नहीं, लेकिन माला न बीच में ही पाय पटवकर कह दिया—भूठ, सरासर भूठ !

यह कहकर वह अंदर चली गई, और मैं कुछ देर तक और वही सिर नीचा बिये खड़ा रहने के बाद वापस उस कमरे में लौट आया, जहाँ बठा वह बीड़ी पी रहा था और भुमकता रहा था, जैसे सब जानता हो कि मैं किस मरहले से गुजर कर आ रहा हूँ।

अब हुआ दरअसल यह था कि उस घाम भागा से कुछ दूर अकेला घूम आने की इजाजत माँगकर मैं पहुँची—बिना मतलब घर से बाहर निकल गया था। आम तौर पर वह ऐसी इजाजतें आसानी से नहीं देती और न ही मैं माँगने की हिम्मत कर पाता हूँ। बिना मतलब घूमना उसे बहुत बुरा लगता है। वही भी जाना हो किसी से भी मिलना हो कुछ भी करना या न करना हा, मतलब का साफ और सही फँसला वह पहले से ही कर लेती है। ठीक ही करती है। मैं उसकी ममतादारी की दाद दता हूँ। बसे घर से दूर अकेला मैं किसी मतलब से भी नहीं जा पाता। माला की साहबत की कुछ ऐसी आँख-सी पड़ गई है कि उसक बगल सबसूना सूना-सा लगता है। जब वह साथ रहती है तो किसी किसी का कोई ऊँच-जलूट विचार मन में उठ ही नहीं पाता, हर चीज ठोस और ब्यक्तियुक्त दिवाई दती है। अंदर की हालत ऐसी रहती है जैसे माला के हाथों सजाया हुआ कोई कमरा हो। जिसमें हर चीज करीन से पड़ी हो बेकामदगी की बाईं धु जायग न हा। और अब वह साथ नहीं होती तो वही होता है जो उस घाम हुआ या फिर उमी किसी का कोई और हादसा क्योंकि उससे पहले बगी बात कभी नहीं हुई थी।

तो उस घाम न जान किस धुन में मैं घर से बहुत दूर निकल गया था। आम तौर पर घर से दूर रहने पर भी मैं घर ही के बार में सोचता रहता हूँ।

इसलिए नहीं कि घर में किसी किम्ब की कोई परेशानी है। भाड़ी न सिर्फ चल रही है, बल्कि खूब चल रही है। बागडोर जब माला जसी औरत के हाथ हो तो चलेगी नहीं तो और बरेगी भी क्या? नहीं, घर में कोई परेशानी नहीं—अच्छी तनखाह, अच्छी बीबी, अच्छे बच्चे, अच्छे बा रसूख दोस्त, उनकी बीबीयाँ भी खूब हटटी-कटटी और अच्छी अच्छा सरकारी मजान, अच्छा पुत्रानुमा लॉन, पास-पड़ोस भी अच्छा, महँगाई के बावजूद दोनों बक्त अच्छा चाना, अच्छा बिस्तर, और अच्छी बिस्तरी जिनगी। मैं पूछता हूँ, इन सबके अलावा और चाहिए भी क्या एक अच्छे इंसान को? फिर भी अकेला होने पर घरेलू मामला का बार-बार उलट-पलट कर देखने से बसा ही इत्मीनान मिलता है, जसा किसी भी सेहतमद आदमी को बार-बार आईने में अपनी भूरत देखकर मिलता होगा। मेरा मतलब है कि बक्त अच्छी तरह से कट जाता है ऊब नहीं होती। यह भी माला के ही मुप्रभाव का फल है, नहीं तो एक जमाना था कि मैं हरदम ऊब का शिकार रहा करता था।

हो सकता है कि उस शाम दिमाग कुछ देर के लिए उमी गुजरे हुए जमाने की ओर भटक गया हो। कुछ भी हो, मैं घर से बहुत दूर निकल गया था और फिर अचानक वह मेरे सामने आ खड़ा हुआ था।

महसूस हुआ था जस मुझे अकेला देखकर घात में बैठे हुये किसी खतरनाक अजनबी ने ही रास्ता रोक लेना चाहा हो। मैं ठिठककर रुक गया था। उसकी सुती हुई आला स फिमलकर मेरी निगाह उनकी मुमकराहट पर जा टिकी थी, जहाँ अब मुझे उसके साथ जिताये हुए उस सारे गदआबूद जमान की एक टिमटिमाती हुई सी झलक दिखाई दे रही थी। महसूस हो रहा था कि बरसों तक रूपाश रहने के बाद फिर मुझे पकड़ कर किसी के सामन पग कर दिया गया हो। मेरा सिर इस पगी के खयाल से झककर झुक गया था।

कुछ, या शायद कितनी ही, देर हम सबके उस नये और आवारा अंधेरे में एक-दूसरे के स्वरूप खड़े रहे थे। अगर कोई तीसरा उस समय देख रहा होता, तो शायद समझता कि हम किसी लाश के सिरहाने खड़े कोई प्राथना कर रहे हैं या एक-दूसरे पर क्षपट पढ़ने से पहले किसी मंत्र का आप।

यसे यह सच है कि उसे पहचानते ही मैं माला को याद करना शुरू कर दिया था कि हर सवट में मैं हमेशा उसी का नाम लेता हूँ। साथ ही वहाँ से दम दबाकर माग उठन की स्वादिष्ट भी मन में उठती रही थी। एक उड़ती हुई-सी तमना यह भी हुई थी कि वापस घर लौटन के बजाय चुपचाप उस कमबस्त के साथ हो नूँ जहाँ वह ले जाना चाहे चला जाऊँ, और माला को खबर तक न हो। इस विचार पर तब भी बहुत चौंका था, और अभी तक हैरान हूँ, क्याकि आखिर उसी से पीछा छुड़ाने के लिए ही तो मैं माला की गोद में पनाह ली थी। अगर

भाज ॥ कुछ बगल परम मैंने उमने गिताय बगावत न की होती ता । मरिग उग मागने का बगावत का नाम दवर म भागो भागको धागा द रहा है, मने गाथा था, और मरा मुह धम न मारे जल उठा था । मरा मुह मभगर इस भाग म जलता रहता है ।

उग हुरामजा ने जकर मरी गारी परेगानी को भाप लिया हुआ । उगम मरी काई कमदोरी टिगी रही और उगम भाग बर माला की गोम म पनाह लेन की एक बटी बजह यही था । उगका हमी म मुझे गुण पता की हैबतनाब राइराइहाट गुनायी द रही थी, और उस राइराइहाट म उगव साये म गुजार हुए जमान की बगुमार या आगत म टकरा रहा थी । बड़ी मुश्किल से भाग उठाकर उसकी ओर दगा था । उगका हाथ मरी तरफ बढ़ा हुआ था । म बिगबकर ता काम पीछे हट गया था, और उसकी हमी ओर ऊँचा हा गई थी । बस हुए दोता स मने उसकी आंगा का गामना रिमा था । अपना हाथ उसका गुरदरे हाथ म दूत हुए और उगकी सांगा की बदबूदार हुरारत अपन पेहरे पर भेलत हुए महसूस किया था जस इतनी मुहन आजाद रह लेने के बाद फिर अपने-आपको उससे हवाल कर दिया हो । अजीब बात है, इस अहसास से जितनी तकलीफ मुझे होनी चाहिए थी, उतनी हुई नहीं थी । सायद हर भगाहा मुजरिम निल स यही चाहता है कि कोई उसे पकड़ ले ।

पर पहुँचने तक कोई बात नहीं हुई थी । अपनी अपनी सामोनी म लिपटे हुए हम धीमे धीमे चल रहे थे, जमे कथा पर काई लग उठाये हुए हा ।

जब माला की डाँट गन सुन लेने के बाद, मुँह बनाये मैं वापस बैठक म लौटा ता वह बदजात मजे म बठा बीबी पी रहा था । एक क्षण के लिए भ्रम हुआ, जस वह कमरा, उसी का हो । फिर कुछ समलकर, उससे नजर मिलाये बगर मैं कमरे की सारी सिद्धियाँ खोल दी, पले को ओर तेज कर दिया एक मुँसलाई हुई ठोकर स उससे जूतो को साँके न नीचे घबेल दिया रदिया चलाना ही चाहता था कि पटी हुई हमी गुनायी दी, और मैं बेबस हो, उससे दूर हटकर चुपचाप बठ गया ।

जी मे आया कि हाथ बाँधकर उसके सामने खड़ा हो जाऊँ सारी हकीकत सुनावर वह दूँ—देखो दोस्त, अब मरे हाल पर रहम कर और माला के आन स पहने चुपचाप यहाँ से चने जाओ करना नतीजा बहुत बुरा होगा ।

सजिन मैंने कुछ कहा नहा । कहा भी हाता तो सिवाय एक ओर जहरीली हमी के उसने मेरी अपील का कोई जवाब न दिया होता । वह बहुत जालिम है हर बात की तह तक पहुँचने का कामल, और भावुकता से उसे सक्त नफरत है ।

उस कमरे का जायजा लेते दस मने दबी निगाह से उसकी ओर देखना शुरू कर दिया । टाँगें समटे वह सोफे पर बठा हुआ एक जानवर-सा दिखायी दिया ।

उमकी हालत बहुत खस्ता दिखायी दी, लेकिन उसकी शक्ल अब भी मुझसे कुछ-कुछ मिलती थी। इस विचार से मुझे कोप भी हुई, और एक अजीब विस्मय की छुत्ती भी महसूस हुई। एक जमाना था जब वही एकमात्र मेरा आदम हुआ करता था जब हम दोनों घटा एक साथ घूमा करते थे, जब हमने बार-बार कई नौकरियां से एक साथ इस्तीफा दिये थे, कुछ एक से एक साथ निकाले गए थे, जब हम अपने-आपको उन तमाम लोगों से बेहतर और ऊँचा समझते थे जो पिटी पिटाई लकीरा पर चलते हुए अपनी जिन्दगी एक बदनुमा और रियायती घरोड़े की तामोर में बरबाद कर देते हैं जिनके दिमाग हमारा उस घरोड़े की चहारदीवारी में कद रहते हैं जिनके दिल सिर्फ अपने बच्चा की किल्कारिया पर झूमते हैं, जिनकी बक्कूफ बीबियाँ दिन रात उह तिगनी का नाच नचाती हैं, और जिन्हें अपनी सफद पाखी के अलावा और किसी बात का कोई गम नहीं होता। कुछ देर में उस जमान की याद में डूबा रहा। महसूस हुआ, जैसे वह फिर उसी दुनिया से एक पगाम लाया हो, फिर मुझे उसी रोमानी बोराना में भटका देने की कोशिश करना चाहता हो जिनसे मागकर मैंने अपने लिए एक फूल की मज मेंवार ली है जिस पर माला करीब हर रात मुझसे मेरी फरमावरदारी का सबत तलब किया करती है और जहाँ मैं बहुत सुखी हूँ।

वह मुस्करा रहा था जैसे उसने मेरे अन्दर झाँक लिया हो। उसे इस तरह आसानी से अपने ऊपर काबिज होते देख, मैंने बात के लिए कहा—कितने रोज यहाँ ठहरोगे ?

उसकी हँसी से एक बार फिर हमारे घर की मजी-सेवरी फिजा दहल गई और मुझे खतरा हुआ कि माला उसी दम वहाँ पहुँचकर उसका मुँह तोच गेगी। लेकिन यह खतरा इस बात का गवाह है कि इतने बरसों की दासता के बावजूद मैं अभी तक माला को पहचान नहीं पाया। थोड़ी ही देर में वह एक बहुत खूबसूरत साड़ी पहने, मुसकराती इटलाती हमारे सामने आ खड़ी हुई। हाथ जोड़कर बड़े दिलफरेब अंदाज में नमस्कार करती हुई बोली—आप बहुत थके हुए दिखाई देते हैं, मैंने गरम पानी रखवा दिया है आप बात कर लें तो कुछ पीकर ताज़ा-दम हो जायें, खाना तो हम लोग देर से ही खायेंगे।

मैं बहुत खुश हुआ। अब मामला माला ने अपने हाथ में ले लिया था और मैं था ही परेशान हो रहा था। मन हुआ कि उठकर माला को चूम लूँ। मैंने कनखिया से उन हरामजादे की तरफ देखा। वह वाकई महमा हुआ-सा दिखायी दिया। मैंने सोचा, अब अगर वह खुद-ब-खुद ही न भाग उठा तो मैं समझूँगा कि माँ की सारी समझ-बुझ और रूप रंग बेकार है। कितना सुख आये अगर वह कमबख्त भी भाग खड़ा होन के बजाय माला के दाँव में पक जाये, और फिर मैं उसने पूछे—

अब बता साले, अब बात समाप्त म आयी ? मन आँखें बंद कर ला और उम माला के इर्द गिर्द नाचते हुए, उम पर पिंदा हाते हुए, उमके साथ लेटे हुए देता । एव अजीब राहत का अहसास हुआ । आँखें सोली ला बट गुमल्लान म जा चुका था, और माला झुकी सोपे को छीन कर रही थी । मने उसकी आँखा म आँखें डालकर मुस्कराने की कोशिश की, लेकिन फिर उमकी तनी हुई मूरत स पयरा कर नजरें मुका ला । जाहिर था नि उसने अभी मुझे माप नहीं किया था ।

नहावर वह बाहर निकला, तो मेरे बपड़े पहने हुए था । इस बीच माला ने बीयर निचाल ली थी और उमका गिल्ला भरते हुए पूछ रही थी—आप साने म मिष कम लेते हैं या ज्यादा ? मैंने बहुत मुश्किल से हँसी पर काबू किया—उस साले की खाना ही कम मिश्रता होगा मैं माफ रहा था, और माला की होशियारी पर खुश हो रहा था ।

कुछ देर हम बठ पीते रहे, माला उससे धुल-मिलकर बातें करती रही, उससे छोट-छोट सवाल पूछती रही—आपका यह दाहर क्या लगा ? बीयर ठीकी तो है न ? आप अपना सामान वहाँ छोड़ आये ?—और वह बगलें झाँकता रहा । हमारे बच्चों न आकर अपने 'अ बल' को पीट लिया, बारी-बारी उसके घुटना पर बठकर अपना नाम बग रा बताया, एव दो गान गाये और फिर 'गुड नाइट' कहकर अपने कमरे म चले गये । माला की भीठी बाता से थो लग रहा था जैसे हमारे अपने ही हल्के का कोई बेतबल्लुफ दोस्त कुछ दिना के लिए हमारे पास आ ठहरा हो, और उसकी बड़ी-सी गाड़ी हमारे दरवाजे के सामने खड़ी हो ।

मैं बहुत खुश था और जब माला खाना लगवाने के लिए बाहर गयी तो उस शाम पहली बार मैंने बेघडक उस कमीने की तरफ देखा । वह तीन बार गिलास बीयर के पी चुका था और चेहरे की जर्दी कुछ कम हो चुकी थी, लेकिन मुस्कराहट से माला के बाहर जान ही फिर जहर और बेलेज आ गया था और मुझे महसूस हुआ जैसे वह कह रहा हो—बीवी तुम्हारी मुझे पसंद है, लेकिन बेटे । उसे खबरदार कर दो मैं इतना पिलपिला नहीं जितना वह समझती है ।

एक क्षण के लिए फिर मेरा जोन कुछ ढीला पड़ गया । लगा जैसे बात इतनी आसानी से सुलझने वाली नहीं । याद आया कि जबमुरत और धीरे औरन उस जमान म भी उस बहुत पसंद थी लेकिन उनका बाद ज्यादा देर तक नहीं चलता था । फिर भी मैंने सोचा, बात अब मेरे हाथ से निकल गई है, और सिवा इन्तजार के मैं और कुछ नहीं कर सकता था ।

खाना उम रोज बहुत उम्दा बना था और खाने के बाद माला खुद उसे उसके कमरे तक छोड़ने गयी थी । लेकिन उस रात मेरे साथ माला ने कोई बात नहीं की । मैंने, कई मजाक किये कहा—जहा धोकर वह काफी अच्छा लग रहा था, क्यों ? बहुत

छेड़ छाड़ की, कई कोणियों की कि सुलहनामा हो जाए, लेकिन उसने मुझे अपन पास फटकने नहीं दिया। नींद उस रात मुझे नहीं आयी, फिर भी अदर से मुझे इत्मीनान था कि किसी-न किसी तरह माला दूसरे रोज उसे भगा सक्ने में ज़रूर कामयाब हो जायगी।

लेकिन मेरा अंदाजा गलत निकला। माना कि माला बहुत चालाक है, बहुत समझदार है बहुत मनमोहिनी है, लेकिन उस हरामजादे की ढिठाई का भी कोई मुकाबला नहीं। तीन दिन तक माला उसकी खातिर-तबाज़ह करती रही। मेरे कपड़ा में वह अब बिल्कुल मूस जसा हो गया था, और नज़र यो आता था जैसे माला के दो पति हो। मैं तो खुद-सवेरे गाड़ी लेकर दफ्तर को निकल जाता था, पीछे उन दोनों में न जाने क्या बातें होती थी। लेकिन जब कभी उसे मौका मिलता, वह मुझे अदर से जाकर डाँटने लगती—अब वह मुरदार यहाँ से निकलेगा भी कि नहीं? जब तक यह घर में है, हम किसी का न तो बुला सकते हैं, न किसी के यहाँ जा सकने हैं। मेरे बच्चे कहते हैं कि इसे बात करने तक की तमोज नहीं। आखिर यह चाहता क्या है?

मैं उसे क्या बताता कि वह क्या चाहता है! कभी कहना—थोड़ा सब्र और करो अब जाने की साब ही रहा होगा। कभी कहता क्या बताऊँ, मैं तो खुद गमिन्दा हूँ। कभी कहता—तुमने खुद ही तो उसे मिर पर बड़ा लिया है। अगर तुम्हारा बरताव अच्छा होता तो ।

माला न अपना बरताव तो नहीं बदला, लेकिन चौथ रोज अपने बच्चा सहित घर छोड़कर अपने भाई के यहाँ चली गई। मैंने बहुत-रा रोका, लेकिन वह नहीं मानी। उस रोज वह कमबस्त बहुत हँसा था जोर-जोर से, बार-बार।

आज माला को ग्य पाँच रोज हो गये हैं। मैंने दफ्तर जाना छोड़ दिया है। वह फिर अपने असली रंग में आ गया है। मेरे कपड़े उतारकर उसने फिर अपना वह मला-भा कुर्ता-वामजामा पहन लिया है। कहता कुछ नहीं, लेकिन मैं जानता हूँ कि वह क्या चाहता है—यह मौका फिर हाथ नहीं आयेगा। वह चली गई है बेहतर यही है कि उसके लौटने से पहले तुम भी यहाँ से भाग चलो। उसकी चिन्ता मत करो वह अपना इन्तजाम खुद कर लेगी।

और आज आखिर मैं उस थोड़ी देर के लिए बेहोश कर देने में कामयाब हो गया हूँ। अब मेरे सामने दो ही रास्त हैं। एक यह कि होश आन से पहले मैं उसे जान से मार डालूँ। और दूसरा यह कि अपना ज़रूरी सामान बाँधकर तयार हो जाऊँ और ज़्या ही उसे होग आये, हम दोनों फिर उसी रास्ते पर चल दें, जिससे माफ़कर कुछ बरस पहले मैंने माला की गोद में पनाह ली थी। अगर माला इस समय यहाँ होती तो वह कोई तीसरा रास्ता भी निकाल लेती। लेकिन वह नहीं है, और मैं नहीं जानता कि मैं क्या करूँ!

आइसबर्ग

मीन गुप्त ही विषय की मजदूर बाहर चली गई। गुप्त का वहीं नामोनिगान तक नहीं था। सामने का भगान कोठे से दुम था। उसने टांगनीय पर तजर डाली। गाढ़े माट बज रहे थे। तो जबर बगली है। तभी कोठरा छे नहीं रहा। मोर में जब दग (गिगाम) को लाने श्देशन गया था तब तो बही कुछ पना नहीं था बल्कि कोहरे से मुने आगमाय क सफेद मीनियन म गिगारे निगर आय थे और मवाय मूगुय रोड की बगिया का बय दूर-दूर तक मगाये म आगे सिपसिया रहा था। फिर चम पण्टो म ही पटाणोय। उगवा मन बजीब तरह मे उदाग हो आया। अगर वहीं बारिग गुप्त हो गई तो? सारा मजा बिरबिरा हा आयगा।

एक तरह म का पिछनी सारी रात जागता रहा था। जगत (बघाजान बडा भाई) और मुबाय (मगा छोटा भाई) बालका से आय थे। गिल्मी-स्टेनन पर ही दोना की भेंट हो गई थी। बडी (बडी बहन) 'अपर इण्डिया से और म्हा मूफान' म। जब भी हावकी आती, का उठ बटना। इस डर से कि वही किसी की गाडी म मिस कर जाए। मयम पहल जगत और मुबाय आय थे। एक बार तो वह मचत हा गया था। मारी गाडी देर डाली वे लोग नही मिले। निराग होकर उसने सोचा कि पाटव क पाम जाकर नडा हो जाए और मारे मुताफिरा को देस जाए। इसी दृष्टबडी में वह दौडता हुआ पाटव की ओर जा रहा था कि जगत ने उसे धोर से मुबारा, "बिन्नु!"

माम गुप्तकर उम मवाणक विश्वास नही हो सका था। जगत की आवाज किसी फनी-फटी-सी लग रही थी।

'तुम उपर कहीं जा रह थे ?

'पाटव के पाम। मैंन मोचा मिस न कर जाऊँ।' उसने मुबोय पर तजर डाली। वह कुलियों को सामान सहेजवा रहा था। बच्चे सभी मोद की खुमारी मे थे। उसने एक बार उनकी तरफ देखा और मुग्गराया। फिर कोई कुछ नही बोला। वह एक रिक्का झलम तय करके बठ गया और आगे-आगे चलने को कह दिया।

बैंगले पर आकर सभी डादग कम म बठ गये—कुछ इस भाव से कि अब आगे का प्रोग्राम क्या है। नीवर से उमने सभी क बिस्तर लगाने को कह दिया और खुद भी आकर वही बठ गया। जैसे कोई किसी से बात न करना चाहता हो। बच्चे फिर

ऊँधने लगे थे। जगत उठकर बाथरूम पूछता हुआ बाहर निकल गया। थोड़ी देर चुप रहकर जैसे उसने साहस बटोरकर छाटे भाई से खाने के बारे में पूछा।

“खाना तयार है ?” सुबोध ने पूछा।

“अमी तो सायद न हुआ होगा। मैंने सोचा था, तुम लोगो से पूछ लूँगा।”

“पूछना क्या था ?”

‘विचिन में तो एक् नपाली छोकरी बठी है।’ यह सुबोध की बीबी थी। उसके कहन का ढग कुछ अजीब-सा था। विनय ने उसकी ओर देखा तो वह बाहर दखती हुई मुस्कराने लगी।

“नौकरानी है।” उसने या कहा जैसे किसी अपराध के प्रायश्चित्तस्वरूप ‘कपेस’ कर रहा हो।

। — इस पर कोई कुछ नहीं बोला। सुबोध ने कहा कि उन लोगो (उसका मतलब अपने बीबी वक्का से था) को भूल लगी है। अतः वह कही होटल से पका हुआ खाना खाना बेहतर समझता है। विनय की हिचकिचाहट पर उसने कहा कि “इसमें तक्लुफ की क्या बात है। बल्कि इसी में ज़न्दी हो जायेगी।” फिर वह मना करने के बावजूद खाना खाने चला गया था।

जगत अपने कमरे में टाग-मर-टॉग चढाये बठा छत ताक रहा था। उसकी बीबी अपने छोटे भाई को सुला रही थी। उनके चेहर से लगता था, जैसे वे अभी किसी बात पर लड चुके हैं। क्या इसीलिए उसने खत डाल-डालकर सभी को बुलाया था ? विनय के मन में फिर वसी ही निराशा ने घर कर लिया। उसे लगा कि सभी अपने आने का अहसान जता रहे हैं और असुविधा महसूस कर रहे हैं। यह विचार मन में आते ही उसका दिल का अंदर-ही-अंदर कही बहुत गहरी ठेस लगी। क्या सच में अब वह सब-कुछ लौट नहीं सकता ? उसे क्षमा नहीं किया जा सकता ? क्या सच में उसने अपराध किया है ? क्या मात्र उसका अकेला मन ही उसका अपना है ?

“तुम्हारे लिए तो खाना बाहर से मँगवाने की ज़रूरत नहीं भाई साहब ?” उसने जगत से पूछा।

क्यों ?”

‘हाँ-हाँ, मँगवा लीजिये न ?’ उसकी बीबी बीच ही में बोल पड़ी।

“नौकर ने खाना तयार नहीं किया था। सुबोध को भूल लगी थी। वह नौकर को लॉकर स्टेशन से खाना खाने चला गया है।”

गुड गॉड ? भूल तो हम भी लगी है। हमारे लिए भी मँगवा लेते ?” जगत ने कहा।

अच्छा, कहकर वह बाहर जाने लगा।

मुनो विन्नु ।’

“हाँ।”

‘यही नजदीक कोई बार’ होगा?’

“सिविल लाइंस की तरफ है?”

‘तो ऐसा करते हैं कि हम बाहर जाकर खा आते हैं। अब यह खाने लिवाने की झझट कौन करे? क्या डियर?’ उसने अपनी बीवी की तरफ देखत हुए कहा “तब तक तुम हमारे नहे शहजादे साहब को समालो। जगत मुसकराया तो उसकी बीबी भी मुसकरायी।

बिनाय के चेहरे पर एक वृत्तज्ञता भरी मुसकान खेल गई। उसने कहा, “लाआ भामी। और हाथ बढ़ाकर बच्चे को ले लिया। बच्चा एक क्षण की कुनसुनाया, फिर उसका मुँह देखने लगा।

“तग करे तो नौकर को घमा देना। कहता हुआ जगत बाहर निकल गया।

इस बीच नौकरानी आकर खाने को पूछ गई थी। उसने कह दिया— साहब लोगो को भूख लगी थी। इतनी देर इस्तजार करना मुश्किल था। बाहर खाना खान गये हैं हमारे लिए अभी बाद में। फिर उसने बच्चे को नौकरानी के हाथों में धमा दिया और साहब लोग लौट आय तो उनका समाल रखना यह कह कह स्टेशन खाना हो गया।

डिब्बे से उतरते ही बबी (बड़ी बहन) मुसकरायी थी। दोनों बच्चे सो गये थे। गाड़ी लेट होने की वजह से साढ़े ग्यारह बजे आयी थी। सुवेश को जगाया गया तो उसने अलसाये हुए भामी को नमस्ते की थी और फिर उसकी पलकें नीचे झपकने लगी थी। बँगले पर उतरे तो नौकर न बताया, ‘ए शास्त्र खाना खाकर सो गया है। दूसरा वाला अभी तक नहीं लौटा। उसका छोटा बाबा रो रहा है। मानता ही नहीं है। अभी लाता हूँ’।

“यह क्या बक रहा है? बबी को हँसी आ गई।

“जगत और उसकी बीबी बाहर खाना खान गये हैं, अभी न लौटे होंगे।’

तभी नौकर बच्चे को ले आया—“अब चुप है शास्त्र। अब खा जायेगा।’ उसने बच्चे को इस तरह देखा जस वह कोई बेजान—सी चीज था।

‘तुम्हारे लिए उधर का कमरा है बेबी।’ उसने कहा और नौकर से होठहाठ उधर ले जाने को कह दिया।

‘वमा मेम शास्त्र भी खाना बाहर लायेगा शास्त्र?’

बेबी को नौकर की इस बात पर हसी आ गई, लेकिन फिर तुरन्त जस उमन मारी स्थिति भाँप ला। वाली, ‘तुमन खा लिया बिन्नु?’

उसने सिर हिला दिया, नहीं।”

‘अच्छा, तुम सुवेश-पप्पू को ले जाकर सुला दो। मैं देखती हूँ।’

विश्व में बँट रहे बाग-बाग बाहर जात-जात से रहे थे। बँट-बँट म बेबी की बातों के जवाब में 'हन्ट' कर देता। किसी भी बात का निमित्त खाने हाथ पर वह कहता—'अच्छा तो बेबी उनके इस अमानादिक जीवन पर ऐसे एक-एक दमती रह जाती। बात क्या कहने की थी? बर्न की आँखों में एक निम्न-नरे दुःख का भाव घुल जाता—'अने' का भाव के लिए। वह मुँह फरक प्रकिया निम्न सगरी या नौकरानी की आवाज देता। छाकरी जब जाती तो निम्न की ओर देखकर आवस्य हो लेती कि बेबी की ओर देखना जाती और मुनकराती जाती।

"अच्छा, बच्चों का जोग पाठ रखा है।" बेबी ने हँसते हुए कहा।

नौकर बचत बदतमीत्र है। इसे बचत पीटन है।

'अच्छा! छात्रा तो नहीं।

"तुम लग नये जाय हा न।"

"तुम उसे हँट क्यों नहीं देते? यह बेचारी तो अच्छी-नली है।

"दरअसल वह नये म इस पर हाथ रखा है।

"ठा निहाल क्यों नहीं देते? उसे बदतमीत्र को रवान से क्या फायदा।

"कई बार वह लुका भी नहीं जाती। आकर बरानद में बठी रह जाती है सारी रात।"

"अच्छा।"

इस पर विश्व टपका आकाश हमने लगा। बहिन को एक पलकाना लगा। वह फिर उनके चेहरे का लक्ष्य लेने लगी। क्यों कोई बात तबदीली नहीं आनी थी। अपने छुपाने बात नहीं लगती एक आर ललाट पर मुँह हुए थे। बेहतर उठना ही बिकना और गोरु था। अब उनका एक नौ घन्टा उन पर नहीं लगा था। हाँ अपने मुँह के बहर बठी-बठी लग गी थीं। पहले वह 'गैव' बताया था। फरक बस इतना ही आया था। वह पर मौसम नहीं बना था। यों जाता था जैसे उन सारे बीते हुए सालों में वह नये गैव-गैव रह रही है, उठा रहा है और फिर एकाएक मानने प्रकट हो गया है कि "ये दया, पन्थाना मुझ।" बेबी का लगा कि वह कोई भी बात करना नग साहस। या ही बँटा है। तो क्या उसे इस आदत में इतना लगाव हो गया है? निष्ठगी बार—जगीव बार मान पहने—जब वह बनारस आया हुआ था तब और अब के विश्व में क्या बारीक फरक आया है? तब भी कुछ नौ प्रश्न पर वही जवाब आया। क्या आशा विश्व? —कुछ भी सा लगे। 'कहाँ क्यों निम्न?' —'कहाँ भी चला।' 'कौन-सी निम्न दमी जाय निम्न?' —'कोई-नौ भी देतो।' —मुझ के पास इस पर अब हँसत। एक घील जमात हुआ बहव 'बार' तुम्ही अच्छे हैं। एक मुझाती बर्न नाहिदा है। इनके भी नकल ही नये निम्न।

'मा ता है ही। बहुर बार हँसने लगता और फिर लफ-लफ बाद उनी लख

अपना म हो रहता। बहिन को रलाई आन लगती और यह हाठ काटती दूसरी ओर दगन लगती। फिर बानावरण उसी तरह मारी मारी-सा हो जाता।

तो इन सबको बुलाने का अर्थ ? बहिन के मन में जरा कुछ बोध गया। क्या यह भी या ही है ? इन सम्बन्ध में उस भेजी गई चिट्ठी का एक वाक्य रह रहकर उसके दिमाग में घूँजा लगा—'बबी, मैं चाहता हूँ कि मुझे भी लगे कि मैं आदमिया के बीच हूँ। मेरे भी चारा तरप लोग हैं, जो मुझे पहचानते हैं। मैं भी किसी से सम्बन्धित हूँ। मैं तुम सब के बीच में अपने को महसूस करना चाहता हूँ। बबी मुझे बार-बार लगता है कि जीवन मेरी मुट्ठि में सपानी की तरह फिसल गया है।

तो क्या सच में ऐसा ही है। उसे वह पत्र भी याद आया, जो विनय ने अपनी पत्नी चित्रा को छोड़ते हुए लिखा था। जगत पर का सबसे बड़ा लड़का था, लेकिन वह शादी के लिए तैयार नहीं हो रहा था। विनय से पूछा गया तो उसने हामी भर ली। दहा न उसी के द्वारा तो पुछाया था। इन हामी भरने का भी जगत और उसके साथिया न कम मजाब नहीं बनाया था। लेकिन उन सारी बातों का तब भी उसके चहरे पर कोई आस असर नहीं दिखा था। बबी को अब समझता है, विनय ने स्वीकृति इसलिए दे दी थी कि उससे स्वीकृति माँगी गई थी। लेकिन यही हम कहाँ मालूम था, कि इस तरह हमें के लिए हम नरक में धकेल दिया जायगा, उसने लिखा था 'बबी' यह अकारण नहीं है कि मैं इस तरह के जीवन से मैं सदा के लिए विदा ले रहा हूँ। इस सम्बन्ध में थोड़ी भी बहस बेकार है। यही सपना लो कि यदि हमारे भीतर आत्मा-जसी कोई वस्तु है (शरीर की ता बात ही क्या) और यदि हमारे सम्बन्ध या हमारे अनाचार उस आत्मा पर भी खराब लगा सकते हैं तो मेरी उस आत्मा में धाव हो गया है। बबी, मुझे लगता है कि मैं लगातार एक खेतार और भयावने चेहरे से बची छुटकारा नहीं पा सकूँगा।

बाहर पोटिको में बच्चों की मिली जुली आवाजें आ रही थी। 'वी विल्ली बिकी रस यू द टाउन' उसने उठकर दरवाजा खोल दिया। रंग बिरंगे सूट में बच्चों के सफेद मखन-जैसे चेहरे पर बड़ी-बड़ी काली आँखें तस्वीर की तरह चमक रही थी। उसने देखा बच्चों के दो दल बन गये हैं। सुबोध के तीनो बच्चे एक कतार में खड़े हैं और जगत के तीनो बच्चे दूसरी कतार में। सुबोध और पप्पू उनमें नहीं थे। स्लीपिंग गाउन बसता हुआ वह बाहर निकल आया। वी विल्ली बिकी रस यू द टाउन। अप-स्टेयस एण्ड डाउन-स्टेयस इन हर नाइट गाउन। पीपिंग यू द बिण्डो नाइ ग यू द लाक। आर आल द चिल्ड्रेन इन देयर बेलइस ? इट्स पास्ट नाइन ओ क्लॉक।

यह सुबोध की छोटी बच्ची गुड़िया थी। 'वी विल्ली बिकी' उसने फिर वही 'राम्म दुहरानी चाही तो उसने बड़े भाई साहब ने छटका वालर पकड़ कर उसे

चुप करा दिया। वह हाँफती हुई-सी माई का मुँह ताकने लगी।

“यस, बिगिन,” माई साहब ने दूसरी पार्टी को चुनौती दी।

अब जगत के बच्चा की बारी थी। उसने बड़े लडके पिंकू ने एक बार अपनी छोटी बहिन को डंगारा किया तो वह रुआँसी हो आई। इस पर पिंकू साहब न गुस्से में अपनी मुट्ठियाँ नसी, होठ काटे और शुरू कर दिया—

“ दिस पिग वेण्ट द द मार्केट

दिस पिग स्टेड पैट होम,

दिस पिग हैड ए बिट आफ मोट

एण्ड दिस पिग हैड नन।

दिम पिग सेड बी बी बी।

आइ वाट फाइड माई वे होम। ”

“यू आर एम्पूजिंग अस,” सुबोध के लडके ने कहा।

इस पर अँधूठा दिखलाते हुए पिंकू ने फिर वही ‘राइम’ दुहरानी शुरू कर दी—
‘ दिस पिग वेण्ट द द मार्केट ’ ”

बिनय को हँसी आ गई। पिंकू उसी तरह सुबोध के बच्चा को हमारे से “दिस पिग दिस पिग” गिनाता जा रहा था। उसने पास जाकर पिंकू को गोदी में उठा लिया और अपनी ओर हमारा करत हुए पूछा ‘हाँ-हाँ, बताओ दिस पिग ? क्यूँर डिड ही गो ?’

एकाएक सभी बच्चे जैसे सकते में आ गये। पिंकू गोदी से उतरने के लिए छटपटाने लगा। उसे हँसता हुआ देखकर सभी बच्चे सदाक नन्नों में देखते हुए प्रतियोगिता से भागन की तयारी करने लगे। उसने गुड़िया के गालों पर एक टुकड़ी जमाई और उसे भी उठाना चाहा, तो वह रोने लगी। ड्राइंग रूम के दरवाजे पर उसकी ममी खड़ी-खड़ी इधर ही देख रही थी। देखते ही तीनों बच्चे भागकर माँ के पाम धले गये। पिंकू जिद में आकर उसे मोचन लगा, तो उसन गोदी से उतार दिया। उसकी छोटी बहिन भी रोने लगी थी। पिंकू गुस्से में आकर उसे घसीटने लगा। उसने नीकर को आवाज दी कि वह बच्ची को उठा ले जाये।

बाहर फिर तनाटा छा गया। ठण्डी हवा का सरसराता दम्राव जैसे और अधिक बढ़ गया हो। उसे अजीब-सी ग्लॉन महगूस हुईं। फिर जैसे सारी देह झनझना उठी। सारे बदन पर रागटे सजे हो गये। सामने किचिन से कुछ सटर-मटर की आवाज आरही थी। बेबी धावद सभी के लिए नास्ता तयार करने में लगी हो। बम्मी-बम्मी पूरे बातावरण में नीकरों की आवाजें झूँकती हुईं उठतीं और दूर-दूर लगने लगतीं। वह अपने कमरे में लौट आया। बाहर बोहरा धीरे धीरे छँट रहा था लेकिन आसमान गाढ़े-गाढ़े बादलों से जम-जा गया था। हवा का एक तेज सरसराता हुआ झोंका आया तो

सिडकी सटाक से बंद हो गई। दूर बादलों की गभीर गड़गड़ाहट सुन पड़ रही थी।

बादलों की बात सोचकर मन फिर उदास हो गया। जगत बोर होगा। सुबोध भी। शायद बेबी भी धूमने फिरने की बात मन में लेकर आयी हो। 'तुम जिन होता तो जित्ता अच्छा होता। न भी हाता, य बादलों ही होती, अगर वह अकेला होता अगर इतने सारे लोगों का दुलारा न होता। जित्ता इन्तजार था। जिस तरह उमंग की एक लहर आयी थी और अब उसे उस लहर के पीछे जान वाली सारी लहरें कहीं फिर शान्त हो गई थी। जितनी कल्पनाएँ सँजो रहीं थी उसमें। उन सबका आगमन की। जितने प्रोग्राम मन-ही-मन बना रखे थे सगम रामबाग, जितना जमुना में बोटिंग प्रोपदी घाट सब फटा।' लेकिन क्या यह सब है कि अकेला आदमी हमेशा अतिरिक्त आगमन का अतिरिक्त निराशा से काम करता है?" और जगत? तब के बाहमियन और आज के जगत में कोई साम्य है? अब उसके तीन बच्चे बा-बैट में पढ़ रहे हैं। इससे साथ ही जितनी तस्वीरें एक साथ उमर जाती हैं। जगत की सुबोध की, बेबी की और उनके तरह सारे बच्चों की। जगत के बाल कॉलेज के जमाने में ही सफेद होने लगे थे। और सुबोध? उसके बाल बहुत टूटते। सुबोध जब नीकर कमरे में झाड़ू देता आता तो बाल ही-बाल। पिछले आठ सालों में उसने केवल एक बार ही मॅट हुई थी। जब उसने मिलिट्री कप उतारी थी, तो वह देखता रह गया था। जित्ता बुजुर्ग लगता था वह गंजा हो जाने की वजह से। जिस साल जगत ने घर से अलग होकर गादी कर ली थी उसी साल सुबाध की भी शादी कर दी गई थी। उस अवसर पर भी वह बहुत नहीं सका था। बघाई का तार दहा के हाथों में पड़ा था। बेबी ने लिखा था 'दहा ने तार चाबकर फेंक दिया। और फेंक न दत्त तो क्या करते। एक ही वजह से सभी पराये थोड़े हो जाते हैं। एक तुम हो, जिसे कुछ भी समझाया नहीं जा सकता। दहा कभी-कभी पागल से हो उठत है तुम्हारे लिए। इतना परामर्श क्या दिखाना हो बिनू ?

आज भी बेबी का खत उस याद है। जवाब उसने नहीं दिया था। लेकिन बेबी लिखती रही। इन सारे वर्षों में वही एक लगातार लिखती रहो। उसके पत्र जिस किसी हम उम्र दुनिया की सड़न मरी धोभी आवाजें थी। जो कुछ उसके बाहर घट रहा था, होता चल रहा था उसकी सूचना देते में बबी का पत्र। उन सूचनाओं के बारे में उसे एकाएक पहले विश्वास नहीं आता था। अरे यह हो गया। अब यह भी हो गया। जित्ना मायबे वालों में भी झगड़कर चली गई। उसका इस्तीफा दे दिया। वह कलकत्ते में नौकरी कर रही है जगत के उड़ने की सालगिरह है।' लेकिन कुछ दिनों के बाद वह हर नई सूचना से आश्चर्य हो आता ठीक है, यह भी हो गया। चला भी चल बसी। दादी का गठिया से छुटकारा तो मिला। इसी तरह जब बेबी ने जीजाजी के एकमीडेंट वाली बात लिगी तो भी वह सत रसकर गुमल के लिए चला

गया था। बनारस पहुँचने पर भी उसके मुँह से शात्तना का एक शब्द नहीं निकला था। रात को केवल उसने इतना ही कहा था, "बेबी, तुम्हें 'रामकृष्ण-वचनामृत' से कुछ सुनाऊँ ? लेता आया हूँ।" बटन इस रामकृष्ण-वचनामृत के लेते आने पर आश्चर्य से उसका मुँह ताकती रह गई थी।

सभी विचार घड़े थे। पूरी उनकी एक दुनिया थी, जो न जान कहा छिटकर खो गई थी। केवल उन सबको घटोरकर रख देते थे बेबी के खत। धीरे-धीरे उसे यह भी महसूस होने लगा कि बेबी के खत न आने पर वह अपने की बेचन और असुरक्षित-भा पाता है। तो क्या उस खोयी हुई दुनिया के प्रति मन में कहीं इतना गहरा लगाव था। इस बात से उसे हल्की-सी राहत भी महसूस होती। उसके एक कुलीग के बारे में आफिस में यह मशहूर था कि दुनिया में उसका अपना-पराया (उसमें यह शब्द भी जोड़ दिया जाता) कोई नहीं है। उसका वह 'कुलीग' इस बात से जरा भी दुखी न होता। वह अपने को कमयोगी कहता और बच्चा की तरह हँसने लगता। दूसरों का यह भी खयाल था कि वह पागलवान जाने की समझी में है और वही अपने कमयोग का जादू दिखावायेगा। आफिस के इस मजाक पर वह चुपचाप नीचे उतर आता। पोस्टकार्ड लेता और बड़े-बड़े लिखकर बेबी को डाल देता। फिर वह अदाज लगाता कि कितने दिनों में उसका जवाब आ जायेगा। जैसे इस मयावन अवधार में उसके चारों तरफ एक घटाटोप था, जगत का, सुबोध का, बेबी का दहा का। न महसूस करते हुए भी इस घटाटोप के छिन्न भिन्न हो जान और तीखी, वीरान रोगी में अपने को चौंधियाते हुए पाने की कल्पना से ही वह सिहर उठता।

लेकिन क्या इस आंतरिक वधन को कोई भी समझता है? दूसरे तो दूसरे, खुद बेबी ने एक बार उसे स्वार्थी, निंदयी, आत्मरत आदि पदवी दे डाली थी। लेकिन उसके बावजूद भी क्या यह सम्भव था कि वह जो नहीं था उस तरह अमिनय करना? वह दूसरा पर नासमझी थोपने के बजाय चुप रह जाना। 'कालेज के जमान में भी वह इसी तरह चुप्पा प्रसिद्ध था। सुबोध उससे साल भर छोटा होने हुए भी बड़ा लगता। दोना एक-दूसरे का नाम लेकर पुकारते थे। उसकी छाती, परा और बाह्य पर घने काले बाल बी० ए० में ही उग आये थे। दाढ़ी-मूँछें भी आने लगी थी, जिनके लिए अक्सर वह कभी इस्तेमाल करता था। सुबोध डडी पर पड़ा था। डडी की पुँधली-सी याद उसके चेहर में इतनी साफ झलकती कि 'वही बड़ा है' यह अहसास और भी घर कर जाता। और सुबोध इस तरह 'एकट' भी करता था। डाइनिंग हॉल की टेबल पर हमें आस्तीनें चढाकर खाना खान बठता और बड़े भाई को रोब से घूरकर देखता। हमें टिपटाप रूखा और उसे जबसब तक के लिए पसा देता। यह सब उसे कभी भी बुरा नहीं लगा था। और तो और क्या जगत का व्यवहार उसे कभी मलता था? बेबी घूमने जाते वक्त, बहुधा जगत के व्यवहार से रास्ते भर चिड़नी

रहती। जब असह्य हो जाता तो आसिर वोल् ही पड़ती 'जगत, प्लीज हैव डीनेन्सी। क्या वहोग लोग रास्ते में 'च्चा च्चा चा चा' और राक रॉक' देखकर।'।

जगत इस पर जोर का ठहाका लगाकर हँस पड़ता, "डोण्ट यू नो बेबी! आई रियली इन्हेरिट द डिसेन्सी आफ योर ग्रेट ग्रांडफादर ड काड श्री राय बहादुर "

बिनय को जगत क इस जवाब देने और हसने की मुद्रा से बहुत डर लगता। वही ये सब झगड़ न पड़े। जगत ऐसे मौकों पर खूँसार लगता। वह धीरे से बहिन से कहता, "लेट हिम टाक लाइव दट बेबी, लेट अम एन्जाय।'

'यू यू यू पुजर ओल्ड थप यू बन एन्जाय? एमेजिंग हा हा हा' जगत उसकी ओर घूरकर देखता तो वह सिटपिटाकर कातर आँखों से बहिन को देखने लगता।

बेबी को इस पर गुस्सा आ जाता। वह सुबोध से कहती, "म और बिल्कुल जा रहे हैं।"

लेकिन जगत पर इसका कोई भी असर न होता। उन्हें दूसरी ओर जाते देख कर वह कहता, "टा टा भाई डिपर, ओल्ड सिस्टर। यू नो भाई हाट नेवर एक्स' आई नेवर 'फील डाउजी नो तम्बनेस। हा हा'" वह बिनय की ओर उँगली उठाकर कहता "टा टा यू बेजिटेरियन सटन।"

पिछले पाँच दिना से लगातार झड़ी लगी हुई थी। कभी हल्की पृष्ठार कभी रिमझिम और कभी तज धाराधार वर्षांनी बारिश। पिछले पाँच दिना में आसमान नहीं दिखा था। ऐड और मदान और आसपास के सभी बँगले जैसे ठिठुरकर सुन पड़ गये थे। रह रह कर तूफानी हवा का दौर शुरू हो जाता। ऐसी तेज हवा में बारिश सफेद धुएँ की तरह उड़ती हुई लगती। फिर रात में धनपोर में धकार में झाला की घुमड़न और अचानक तड़पती हुई बिजली के चौंधियाते आलाक में वर्षा का स्वर 'झाम-झाम झम्म-झम्म झाम-झाम' एक लगातार बदलती हुई खोपनी हुई धर धराती हुई रम्य कभी टूट-टूट जाती फिर तेज-तज गिरने लगती।

सभी चुप थे। बच्चे ठिठुरते हुए कभी इस कमरे से उस कमरे की ओर दौड़ते हुए नजर आते। नीकर सिनुडा हुआ माहब लोगों की आवाज पर इधर उधर भागा फिर रहा था। तबरीबन सभी कमरों की सीलिंग के कपड़े में पानी के बड़े दाग उमर जाये थे। हाट ग रूम में दो-तीन जगह बरतन रस स्थि गये थे जिफस टपकता हुआ पानी फँसे नदी। बेबी स्नि में तीन-तीन बार बार सभी कमरों में घूँप बतियाँ जलाती। फिर भी सीलिंग और टण्ड की अजीब-सी बूँद हर जगह बना हुई थी। डाइ ग रूम में एक दहकती हुई अमीठी हर समय रमो रहती। गुवाय, जगत और ददा माना साने के बाग बहा बठ-बठ बातें करत रहन। बेबी भी सामिल हो जाती। बहुधा जगत की ही आवाज सुनाई देती। वह ददा की पेंशन से लहर मगना बन

विभाग की नौकरी और तत्कालीन राजनीति तक के बारे में समान रूप से बातें करता। नेताओं को निष्कर्ष करार देता और जनता को कायर। 'इस देश में कमी कोई श्रान्ति नहीं हो सकती। धर्म को उखाड़ फेंको, सबको बेकार कर दो, लोगों के मुँह से उनकी रोटियाँ छीन लो, उन्हें कोड़े लगाओ, इज्जत लूट लो चाहे कुछ भी करो, यहाँ के लोग इतने ठण्डे और स्वार्थी हैं कि ईश्वर और भाग्य की दुहाई देकर फिर भी सताप कर लेंगे। यहाँ किसी को किसी से मतलब नहीं है। न यह देश समूह में विश्वास करता है न व्यक्ति में इसीलिए यहाँ सब कुछ आसान है। दहा जी इस मुल्क में कोई भी आदमी जो थोड़ा जानू हो, अपने को दूसरों से भिन्न समझता हो और दून की हाकने में माहिर हो—नेता बन सकता है। फिर सुबाष और जगत में बहस का यह दौर घटा चलता। और चलते चलते एकाएक रक जाता। फिर पता नहीं, कसे और क्यों, धीमे धीमे बातें होने लगती। दहा के हुक्के की गुड़गुड़ाहट में कमी-कमी कुछ सदा तरते हुए सुनायी पड़ते। 'बिन्नु ना आज तक एक पत्ता भी नहीं' यह दहा होते। 'बेचारा?' क्या आप लोग 'यह बेबी होती। 'महात्मा विनयकुमार' और फिर हँसी का एक ठहाका। यह जगत होता। बहस के दौरान जब कभी भी वह डाइंग रूम में प्रवेश करता, सभी सकते में आ जाते। जगत सिगार मुँह में दबाये बैठ जाता। सुबोध आराम कुर्सी में ढीला हो रहता। बेबी अँगोठी देखने लगती और दहा तेजी से अपनी गुड़गुड़ी खींचने लगते। सभी बात का कोई सिलसिला खोजते हुए उस ओर से विमुख हो जाते।

इसी तरह साँझ आ जाती। बेबी किचन में रहती। सुबोध और दहा आग के पास बड़े घर-परिवार के बारे में बातें करते। बच्चे कभी कभी उसके कमरे की खिड़की से झाँकते और फिर हँसते। वह उठकर बैठ जाता और पुकारते हुए उन्हें बुलाने लगता। उसकी चुपकार सुनते ही बच्चे भाग खड़े होते। ऐसे ही में एक दिन सुबोध के लड़के ने पूछा था, "ममी क्या बड़े चाचाजी डाकू हैं?"

"क्यों?"

"उनकी कितनी बड़ी-बड़ी झूँछें हैं।

इस पर उसकी ममी हँसने लगी थी। लेकिन सुबोध ने लड़के को एक तमाचा जड़ दिया था। इस घटना के बाद बच्चों ने एक तरह से उसकी खिड़की पर जाना भी छोड़ दिया था।

जगत ओवरकोट के ऊपर बरसाती चप्पता। छाता लेकर और साँझ होते ही बाहर निकल जाता। फिर वह दस के बाद नन्हे में घुस लौटता। रिक्शा से उतरकर बहुधा वह कोई हल्की-सी फिल्मी टयून श्रुतश्रुताता या पश्चिमी रिकार्डों की सकल पर सीटी बजाता हुआ पोर्टफो की सीढ़ियाँ चढ़ता। फिर उसकी आवाज सुनायी देती मरी जान, दरवाजा खोलो!" और दरवाजा खुलते ही फिर एक बार वही वाक्य—

मेरी जासन लेबिन बिल्कुल दूसरे ही रहजे में । उसकी बीबी चीख कर दो कदम पीछे हट जाती और फिर दरवाजा बंद होने की तेज आवाज सुन पड़ती—
खटाक् !

सिवा बंदी के इन पिछले पाँच दिना में कोई भी उसके कमरे में नहीं जाया था । सुबह दहा और सुबोध बरामदे में चहलकदमी करते, ताँ उसे लगता कि उनमें से कोई न कोई जरूर दरवाजा राटसटायेगा । ऐसे में उससे कुछ भी पढ़ा नहीं जाता । किताब खाल वह घड़घटे दिल से कदमों की आहट मापता रहता । बेबी कभी कमर दोपहर में, या नहीं तो रात को दूध पहुँचाने आती तो चन्द मिनटों के लिए पलग की पाटी पर बैठ जाती 'कुछ'स तरह जस उस अभी किसी जहरी काम से उठकर चले जाना हो । वह कुर्सी की ओर इंगारा करता तो वह मुस्करा देती—'ठीक है ।'

'क्या कर रही थी ?' वह पूछता ।

किंवदन्ती में थी ।

सब लोगों ने ठीक से छापी लिमा ?'

'हाँ ।'

ठीक से बैठो न ।'

'पप्पू को सुलाना है ।'

तो यही ले आओ उसे ।'

इस पर वह भाई का मुँह सावती । फिर नौकर की आवाज देती ।

पप्पू सा जाता तो वह कहता 'यही लिटा दो, हल्क दुल् रहे होवे ।'

'विस्तर खराब कर देगा ।'

'तो क्या हुआ । लाओ । फिर वह ज़िद करने बच्चे की विस्तर पर लिटा लेता और उसे देनकर भुसकराता रहता । बहिन चुपचाप उसे देखती रहती । फिर एक सप्ताह छया रहता ।

बेबी सुबोध कसा है ? वह उसी तरह बच्चे की ओर रगता हुआ पूछता ।
क्या तुमसे बात नहीं हुई, वह पूछना चाहती, लबिन फिर चुप रह जाती ।
ठीक है, अगले साल तक मज़र हो जान की उम्मीद करता है ।

उसे दम के पापा की याद आती है । वह सिर झुकाये हुए कहता 'आनी न ?

बहिन हाठ काटती चुप रहती ।

बेबी मुँह भर लगता है कि

बहिन उसका बहर पर आँखें मचा देती ।

पापा की तरह कहाँ उसके साथ भी कोई दुष्टता

बहिन उठकर चली जाती ।

और यह छठा दिन था। बाहर बारिश का स्वर सुनायी पड़ रहा था। लम्प पोस्ट पर बूंदों की शालर-सी बून रही थी। जगत अभी लौटा नहीं था। लिहाफ में पड़ा हुआ वह बेबी के आन का इन्तजार कर रहा था। दरवाजा खटका तो उसने वह दिया, "आ जाओ।"

"दूध ले लीजिये।" यह सुवाच की बेबी थी।

वह उठकर बैठ गया। आप? आपन क्यों तकलीफ की? बेबी कहा है?"

"पप्पू को सुला रही हैं।"

"अच्छा, वहाँ तिरपाई पर रख दीजिये।"

फिर वह लौट गया। एकाएक उसे चिन्ता की याद हो आयी। इधर सालों से किसी ने उसका जिक्र तक नहीं चलाया था। सब लोग उसकी जिन्दगी से परिचित हो गये थे। पहले कोई पूछता, 'पत्नी कहाँ है?' तो वह एकदम ठण्डा पड़ जाता। पत्नी कौन चिन्ता? वह चुपचाप टाल जाता। बात बदल देता। लेकिन इस तरह बहुधा मनीन की तरह उसका दिमाग काम करने लगता। फिर अक्सर उसकी याद आ जाती। इस याद से उसके अन्दर एक अजीब-सी गर्मी का संचार होने लगता। उसके अ-ग-अ ग फड़कन लगते और वेह बरबस कुछ मागने लगती। उसे लगता कि वह की यह माँग पूरी हो जाये तो उसके सुरत बाद ही उसे चिन्ता की इस याद से भी ग्लानि और नफरत हो जायेगी। लेकिन फिर भी उसकी याद की यह गर-माहट उसके मन में एक सूफान की तरह उठकर उसे बेचन कर लेती। कहाँ हागी चिन्ता? उसके दिमाग को एक झटका-सा लगा। क्या इनमें से किसी को भी नहीं मालूम? क्या बेबी को भी नहीं मालूम? क्या वह पूछे? उसे क्या हक है? क्या इन नौ-दस वर्षों में उसकी खबर ली थी? अदाजा-मा रहा कि वह पटने या कलकत्ते में कहीं है। क्या वह इतना भी जानने से कतराता नहीं था? फिर? उसने स्मृति में चिन्ता की एक छाना लाने की कोशिश की तो उसका दिमाग में सड़क पर लचककर चलती हुई एक काल्पनिक स्त्री की तस्वीर-सी आयी। वह स्त्री कोई भी हो सकती थी। चिन्ता का चेहरा उसकी याददास्त में इतना घुँघला पड़ गया था। उस चेहरे की कल्पना भी अमम्भव-सी लगी। लेकिन उसके अंगों की सुहोल रेखाओं की परछाई का हू-ब-हू आभास तुरन्त हो जाता। क्या तो क्या उस आकृति का आभास भी मुन्वोत्र की बेबी से मिला था।

उसने उठकर अल्मारी से 'रामकृष्ण-वचनानामृत' निकाल लिया और उलटन पुलटन लगा। शायद बेबी आये। उमन दरवाजा खोल दिया। बारिश कुछ घम-मी चली थी और तीखी, बदन चीरती हुई हवा में ताड़ के पत्ते खटखटा रहे थे।

"बहिये योगिराज, कौन-सी साधना चल रही है?" जगन न कमरे में एकाएक प्रवेश किया।

उसने इस तरह अचानक चले जान पर वह थोड़ा-सा अचक्का गया। फिर बात उसकी समझ में आ गई। वह जगत को चुपचाप देखता रहा।

जगत ने बरसाती उतारकर कोयें में डाल दी। छाता फटा पर टिटा दिया। फिर वह बठकर बूटा के तस्म खोलने लगा। "मैंने देखा, अभी आप जमे हैं। सोचा, दान करता चलूँ।" उसने मुसकराते हुए कहा।

" "

जिस पुस्तक का पाठ चल रहा है ? उसने ओवरकोट की जेब से 'ब्लक नाइट' की निप निकालकर मेज पर रख दी। 'आचमनी तो आपके पास होगी ही' उसकी नजरें इधर-उधर गिलास ढूँढ़ रही थी। हाँडा क कीना में सफेद साग इकट्ठी हो गई था। धुल्लुले गाल लटक आये थे। चु धी-चु धी आँखें रोशनी में डब डब रही थी और गरदन ढीली हो रही थी।

इसमें क्या है ? उसने उठकर तिपाई से गिलास उठा लिया 'साँझ ? क्या करेंगे ?' उसने खड़े-खड़े दूध दरवाजे के बाहर फेंक दिया। फिर दरमीना से कुर्सी पर बैठकर गिलास में शराब डालने लगा।

अजीब-सी पसोपास में पड़ गया वह। क्या करे ? गायद बहिन आ जाय या वह जगत से चले जान को कह या खुद बाहर निकल जाय ?

कहिये, कसी चल रही है ? जगत ने पूछा। वह घट भरता और फिर होठों पर जीभ फिराने लगता।

ठीक हूँ।

यह ठीक-थीक क्या होता है जी ?

इस पर वह कोई जबाब न देकर मुसकराया।

'चलगी' जगत ने गिलास की ओर इशारा किया।

मैं नहीं सेता। वह समझ रहा था कि ज्यादा कुछ भी कहना किजूल है।

'बाहर क्या दल रह हो ? बाईं आन वाली है क्या ?' उसने बाहर झाँका

'ओह उधर से' उसने नीकरा के नखाटर की तरफ इशारा किया— वह छोकरी काविले-सारीफ है।"

भाई साहब ! उसके चेहर पर हल्का-सा आवेग उभरा।

भाई साहब भाई साहब क्या ? क्या मैं झूठ बोल रहा हूँ ? बीवी भी

नहीं गराब भी नहीं फिर भाई साहब क्या ? और नहा क्या हूँ यूँ काहकिट बिद पारमल्फ ? बोली ? नहीं तो ? मैं झूठ नहा बोलता। सब सच कहता हूँ। नहीं कहता ? वाली ? मैं झूठा ? उसने घूरकर देखा 'बोली ?'

" "

'तुम झूठे हो' उसने मेज पर जोर से मुक्का मारा। 'तुमने अपने दादा

जान से क्या सीखा ? उनके कितने नाजायज बच्चे हुए जवानी में ? तुम्हें पता है ? वह उठकर खड़ा हो गया, "आज आराम से पेंशन उठा रहे हैं और हुक्का गुड़गुड़ा रहे हैं। और साल, हमें उपदेश देते हैं।" वह बाहर की ओर देखते हुए फिर गिलास भरने लगा।

"आई लव यू रीयली क्या तुम्हें यकीन नहीं आता ?" वह अपना चेहरा एकदम पास ले आया, "बट यू हैव इनहेरिटेड नॉथिंग फ्रॉम योर फॉर फादर । मैंने कम-से-कम पांच, 'उसने पाँचा उँगलियाँ खोलकर दिखायी, नही पांच दजन पहाड़ी छोकड़ियों को फारेस्ट डिपार्टमेंट में यही तो आराम है । बट पिटी फार यू , यू हैव इनहेरिटेड नॉथिंग तुम क्या तुम दोगले नहीं हो ?" वह फिर उठकर खड़ा हो गया "हो हा हो हजार बार हो यू आर ए बास्टर्ड यू हैव इनहेरिटेड नॉथिंग आई से ।" उसने शराब की बातल जोर से मेज पर दे मारी। बोतल टूट गई और मेज पर बहती हुई शराब फर्श पर पल गई।

शोर सुनकर बेबी आ गई और यह सब देखकर रग रग गई। जगत उसी तरह चिल्लाये जा रहा था, "तुम इस दुनिया में रहने के काबिल नहीं हो। चित्रा ने तुम्हें गाली क्यों नहीं मार दी दोगले बास्टर्ड साले रामकृष्णवचनामृत का पाठ कर रहे हैं" बेबी उस पकड़कर कमरे के बाहर ले गई। आवाज से उसकी बीबी बाहर निकल आई थी।

"इह सँभालो भाभी !" बेबी ने कहा।

प्लेटफार्म के बाहर तेज वर्षा और तूफानी हवा का दौर फिर शुरू हो गया था। टिन की शीट पर बूँदों की आवाज इतनी तेज होती कि कुछ भी सुनायी नहीं पड़ता। इक्के-दुक्के मुसाफिर कपाटमट में बैठे शीशे के पीछे से मूर्तियों की तरह लगते। सारी गाड़ी एकदम मुर्दा-सी लगती। बाहर दूसरे प्लेटफार्म के पार टनेल में मालगाड़ी के दो-तीन डिब्बे अनवरत भीग रहे थे और ओवर ब्रिज के लौहकाल पर बीछार का तेज-तेज स्वर सुनायी पड़ रहा था। काले काले लबादे पहने दो एक टिकट चेकर और गाड़ गाड़ी खुलने का इन्तज़ार कर रहे थे।

उस रात वाली घटना के दूसरे ही दिन सुबह जगत चला गया था। बेबी और सुबोध उसे छोड़ने गये थे। जाने के पहले उससे कोई बात नहीं हो पाई। विनय के मन में एक धार आया कि वह चलकर वह दे 'माई साहब, रात नशे में कही हुई बातों को मन में न लाइयेगा।' लेकिन यह तो जगत की कहना चाहिए था। क्या हुआ वह उम्र में बड़ा है तो। लेकिन ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। जाते वक्त उसने बच्चे सगाव आँखा से बँगले की ओर ताक रहे थे। वह कमरे में जड़ बना बैठ रहा। फिर उसके दूसरे दिन सुबोध न भी जाने का प्रोग्राम चुपके-चुपके बना लिया। सामान पक करने के बाद उसने बेबी से कहलवाया था। न कहने पर भी वह छोटे माई को

छोड़ने स्टेसन चला गया था। स्टेसन पर मुबोध ने उससे हाथ ॥ बिना कुछ कहे एक लिफाफा पकड़ा लिया था। उसने बीबी-बच्चा बिलकुल दूगरे मिरे पर बठ हुए थे और दूगरी ओर स प्लेटफॉर्म की देग रहे थे। मुबोध लिफाफे में पास बठा हुआ चुपचाप प्लेटफॉर्म की भीड़ ताक रहा था। जिनसे कभी छोटे भाई की देगता और कभी उससे दिये हुए लिफाफे की। गाड़ी चल पड़ी तो मुबोध उस एक भावहीन नमस्ते की थी। उस ओर से उसकी बीबी के जुड़े हुए हाथ निस रह थे। फिर उससे बड़े लड़के की आवाज सुन पड़ी पाचाजो टा टा टा टा टा टा !' फिर बच्चा जैसे अपने कतब्य से मुक्ति पाकर फौरन दूगरी आगे स छूटते हुए प्लेटफॉर्म की दखने लगा था। लौटते था फिर भी वह राहल महगूस कर रहा था। लिफाफे में जरूर मुबोध का कोई सलाह मरा गत हागा। क्या लिफाफा हागा उसने। क्या जगत में हागड क बारे में। या शमी लोमा द्वारा लिये गये किसी निणय की सूचना होगी? अथवा धिन्ना के बारे में?

लिफाफे से उतरकर वह सीधे बीबी के कमरे में गया था। लिफाफा पकड़ान हुए उसने कहा मुबोध ने दिया है। तुम खोलकर देखो, मैं अभी आया।

क्या है? खोलकर उसने पूछा।

'बदतमीज बहो का।' बहिन के मुँह से निकला और उसने लिफाफा पकड़ा दिया।

उसने निकालकर देखा। अन्तर १२५ रुपये का एक बैगरर चक था, उसने नाम।

'तुमने उसने मुँह पर क्या नहीं दे मारा?

मैंने समझा था कोई रत होगा।'

और आज जब बहिन न भी जाने की इच्छा व्यक्त की तो वह सन्न रह गया। उसका सपाल था, बहिन एकाध महीन रहेगी। लेकिन उसने कुछ नहीं कहा। सामान बँध गया तो उसने कहा क्या आज ही जाना जरूरी है बीबी कितनी खराब बात है। बाहर साय-साय हवा चल रही थी।

'सुवेश की पढाई का हज हो रहा है। आज एक हफ्ते से ऊपर हो गया उसकी ग रहाजिरी की।

इस पर वह कुछ नहीं बोला था।

और घर पर भी तो कोई नहीं है। नौकरो के भरोसे कब तक छोड़ रत? बहिन ने जस फिर सफाई दी।

बहिन के हाथ लिडकी से बाहर लटके हुए थे। उसके भी हाथों पर उसी तरह मोटी-मोटी नसे निकल आई थी—उसने लक्ष्य किया। उसके चेहरे के अंदर एक गहरी उदासी थी जो सहसा सारी वक्त में खुलकर सामन आ जाती थी। अथवा वह हमेशा अपने को मुलाये रखती।

“इतनी बारिश म बने लौटोगे तुम ?” उसने कहा ।

‘चला जाऊंगा । दो बज तक घर पहुँच जाऊंगा ।’ उसने घड़ी देखी—एक-पतीस ।

गाड़ी छुलन म दस मिनट बाकी थे । बेबी पप्पू का सुलान लगी तो वह प्लेट-फॉम पर टहलता हुआ थोड़ी दूर निकल गया । हवा से बारिश की बौछार अदर तक चली जाती । दीवारों और खम्भों पर लगे हुए पोस्टरों के चेहरे और इमारतें भी जसे ठिठुर रही थी । एक पोस्टर या ठिठुर रहा था—“नियोजित परिवार ? मुन्न का आधार ।” फिर बिजिट इंडिया के नाम पर साची का स्तूप, खजुराहो की पक्षिणिया, शिमले की बर्फीली चोटियाँ, पुरी का समुद्र-तट और केरल के खजुरा के झुरमुट ठिठुर रहे थे । सदर फाटक के ऊपर एक बहुत बड़ा ज्योतिषी और हस्तरेखाविद् इन शब्दों को मुट्ठियाँ म जकड़ हुए बाप रहा था “थी मिह । भारतवर्ष के महान हस्तरेखा के जानकार । अपने भूत बतमान और भविष्य का कच्चा चिट्ठा खुलवाइये ।”

‘बिन्नू !’ बहिन ने जार से आवाज लगायी ।

गाढ़ लगातार हरी रोगनी पीछे की ओर हिला रहा था ।

वह खिडकी के पास आकर खड़ा हो गया ।

तुमसे एक बात कहनी थी । बहिन ने अगल-बगल रहस्यात्मक ढंग से देखा । वह सिफ़ उपचाप बहिन के चेहरे की देखता रहा ।

‘चित्रा अब,’ वह पफफ़ पड़ी ।

गाड़ी छूटन वाली थी । बहिन ने जल्दी से आसू पाछ लिये । वह बस ही खड़ा था ।

‘कहते तो मही हैं कि आत्महत्या की थी लेकिन ’

ऊपर से नीचे तक उसका सारा बदन सुन्न पड़ गया । गाड़ी हल्के-हल्के सरक रही थी । बहिन ने खिडकी पर से उसका हाथ परे ठेल दिया । वह उसे देखती हुई रोती जा रही थी और वह अपनी जगह पर खड़ा उसे देख रहा था । फिर जसे वह होण में आया कि बहिन का विदा देनी चाहिए । उसके हाथ ऊपर उठे ता बहिन के चेहरे पर एक हैसी की रेखा झिलमिला आई, फिर उसने हाथ उठा दिये । क्षण भर म ही ट्रैन बारिश की सफ़द आग म गुम हो गई ।

सूफानी हवा सड़क के पड़ा की मरोड़ रही थी । बारिश म कही कुछ भी साफ नजर नहीं आ रहा था । चेहरे पर तेज बौछार छोटी-छोटी कबड्डियों की तरह चुमती हुई किसी भी तरह बचाव करना मुश्किल था । सामने गामा-स्टड के शोड में चार पाँच पिल्ले एक-दूसरे में गुँथे हुए मीग रहे थे और क्विया रहे थे । कही कोई सवारी नहीं दीव रही थी । सड़क पर सिंधियों के होटल बंद हो गये थे । बरसाती के बावजूद भी गले स पानी अदर की ओर रिस रहा था जसे कटार की तेज धार धीरे धीरे अदर सरक रही हो । सड़क पर पानी की धार बह रही थी और नालिया में गल-गल करता

हुआ वर्षा जल सारी आवाजा को समेटे ले रहा था।

आँखा के सामने वही सुझौल-सी परछाईं उभर आइ और फिर एक निल तिलाहट भूँजी, जिम्मे स्वर के अनुपम स्वर वटुछा उस जड कर देता।

पति-पत्नी को एक दूसरे की सारी सच्चाइयाँ जान लेनी चाहिए। चित्रा ने पहली ही रात को कहा था।

"अच्छा, बड़ा समझदार हो तुम।"

'मैं मच रह रही हूँ।' उसने अपनी बात जोर देकर दुहरायी थी।

लेकिन उसके पास ऐसी पिजूल की बातों के लिए धन नहीं था। बाँहों में भर कर उसने उसे पास खींच लिया था। बोला, 'माई, मरी सच्चाई यही है कि यूनिवर्सिटी की परीक्षा पास की। फिर नोकरी कर ली और अब तुम्हारे पास सेटा हूँ।'

'हुँह, जाइये।' चित्रा ने कहा था, 'मैं यह नहीं मानती। हर आदमी और हर औरत के जीवन में कोई-न-कोई आता ही है।'

"जल्द जसे कि हम-तुम एक दूसरे के जीवन में आये हैं।"

"मरा मतलब है—विवाहित जीवन के पहले।"

'कोई जरूरी नहीं है।'

"क्या? क्या सम्भव नहीं है?"

'हाणा।'

'नहा,' चित्रा ने उसका चेहरा दोनों हाथों से डेल लिया—'पहले मनाइये, तब।'

'मैंने कह दिया न, भरे साथ ऐसा कुछ नहीं हुआ।' वह चिड़-भा गया था।

'लेकिन भरे साथ' वह क्षण भर को रुकी फिर मुसकरायी—'मेरे साथ तो हुआ है।'

उस पर उसने मुरझा पत्नी की देखा जस वह मजाक उम पर मारी पड़ रहा हो।

हाँ सच। 'उसने भीत प्रश्न को ताकत हुए चित्रा ने जसे जवाब दिया। थोड़ी दूर तक वह चुप पड़ा रहा। फिर उठकर बैठ गया। फिर प्रश्नों की एक झड़ी-मी लग गई—'तो क्या तुम?' 'तो क्या तुम्हारे साथ?' 'ता क्या तुमने?' और उमर हर प्रश्न पर चित्रा स्वीकारात्मक फिर हिलती जा रही थी।

अब? 'अन्त में चित्रा ने पूछा था।

बट उठकर बाहर चला गया था। वह रात ऐसी नहीं थी। उस रात शून्य चाँदनी लिपि थी।

उमने बिल्लाकर बहिन में पूछना चाहा था "आपमहय्या" 'कब? कहाँ? कते?' सजिन सभी गारहा उस भयावनी, अ भेरी रात में गुप्त हो गई थी।

वर्षा में कई-कई स्वर सुनाई पड़ रहे थे। कभी एक-दूसरे में घुसे हुए, फिर

कमी एकदम अलग साफ-साफ । "बी विल्ली बिकी रस थू द टाउन । अप स्टेयस ए ड डाउन स्टेयस इन द नाइट गाउन ।" और फिर जैसे बारिश की लय बार-बार उठनी और गिरती । फिर एक विराम । फिर दिस पिग सेड, बी बी बी, आई वाट फाइंड माई बे होम ।" फिर "तुम दोगले हो । यू हैव इनहेरिटेड नरिंग उसने तुम्हें गोली क्या नहीं मार दी । फिर एक तेज चीखती हुई आवाज—'बिन्नु'—माँ की, पापा की, सुबोध जगत, दहा या बहिन की । कितनी बेमानी ! और फिर तेज वर्षा के साथ सनसनाती धोछार-भरी हुवा

गुलकी बन्नो

'एँ भर बलमुँहें !' अक्स्मात् घेघा बुआ ने कूड़ा फकन के लिए दरवाजा खोला और चौतरे पर बैठ मिरवा को गाते हुए दरवाज़े कहा, 'तौर पट स फानागिराफ उलियान बा का, जोन भिनमार गवा कि तान तोड लाग ? राम जान, रात क कसन एकरा दीदा लागत है ।' मार डर के कि कही घेघा बुआ मांग कूड़ा उमी के सिर पर न फेंक दें, मिरवा थोड़ा खिसक गया और उपाही घेघा बुआ अंदर गई कि फिर चौतरे की सीढ़ी पर बैठ पर झुलाते हुए मिरवा ने उलटा-सुरटा गाना शुरू किया 'तुम बछ याद बलते अम, छनम तेली कछन । मिरवा की आवाज सुनकर जाने कहीं से शबरी कुतिया भी बान-पूछ झटकारते आ गई और नीचे सड़क पर बैठकर मिरवा का गाना बिलकुल उसी अंदाज़ में सुनने लगी जस हिज मास्टस बायस के रिवाइंड पर तस्वीर बनी होती है ।

अभी सारी गली में सन्नाटा था । सबसे पहले मिरवा (असली नाम मिहिरलाल) जागता था और जाख मलते मलते घेघा बुआ के चौतरे पर आ बैठता था । उसके बाद शबरी कुतिया फिर मिरवा की छोटी बहन मटकी आर उसके बाद एक एक कर गली के तमाम बच्चे—बाबेवाली का लड़का मवा, डाइवर साहब की लड़की निमल, मनीजर साहब के मुन्ता बाबू—ममी आ जटत थे । जब स गुलकी ने घेघा बुआ के चौतरे पर तरवारिया की दुकान रखी थी तब स यह जमावड़ा वहाँ होन लगा था । उसके पहल बच्चे हकीमजी के चौतरे पर खलत थे । घूप निकलत निकलत गुलकी सट्टी से तरवारिया खरीदकर अपनी कुबड़ी पीठ पर लादे डडा डेकती आती और अपनी दुकान फला देती । मूली, नीबू, कद्दू, लोकी घियाबण्डा कभी-कभी सस्ते फल । मिरवा और मटकी जानकी उस्ताद के बच्चे थे जो एक समयकर रोग में गल-गलकर मरे थे और दोनों बच्चे भी विकलांग विक्षिप्त आर रोगग्रस्त पदा हुए थे । सिवा शबरी कुतिया के और कोई उनके पास नहीं बैठता था और सिवा गुलकी के कोई उन्हें अपनी दहरी या दरान पर चढ़ने नहीं देता था ।

आज भी गुलकी को आत देखकर सबसे पहले मिरवा गाना छोड़कर बोला, छलाम गुलकी । और मटकी अपन बड़ी हुई तिल्लीवाने पेट पर से सिसकता हुआ चिया समालत हुए बाली एक ठा मूली द देव । ए गुलकी ! गुलकी पता नहीं

किस बात से खीझी हुई थी कि उमन मटकी को पिडक दिया और अपनी दूबान लगाने लगी। शबरी भी पाम गई कि गुलकी न डडा उठाया। दूबान लगाकर गुलकी अपनी कुबडी पीठ दुहराकर बठ गई और जाने किसे बुडबुटाकर गालियाँ देने लगी। मटकी एक क्षण चुपचाप खड़ी रही फिर उसने रट लगाना शुरू किया— 'एक मूरी। ए गुलकी। एक' गुलकी ने फिर झिडका ता चुप हो गई और जलम हटकर लोलुप नत्रो से सफ़द घुली हुई मूलिया को देखने लगी। इस बार वह बोली नहीं। चुपचाप उन मूलिया की ओर हाथ बढ़ाया ही था कि गुलकी चीखी 'हाथ हटाओ। धूना मत। काठिन कही की। कही खान-पाने की चीज देखो कि जोक की तरह चिपक गई चल उधर।' मटकी पहले तो पीछे हटी पर फिर उसकी तप्या ऐसी अदम्य हो गई कि उसने हाथ बढ़ाकर एक मूली खींची। गुलकी का मुँह तमतमा उठा और उसने बास की खपच्ची उठाकर उसके हाथ पर घट से मारी। मूली नीचे जा गिरी और हाथ हाथ हाथ। कर दाना हाथ झटकते हुए मटकी पाँव पटक-पटककर रोने लगी। "जावो अपन घर रोओ। हमारी दूबान पर मरने को गली भर के बच्चे हैं।" गुलकी चीखी— 'दूबान लके हम बिपता मोल ल लिया। छन मर पूजा मजन म भी कचरघाँव मची रहती है। अदर से घेधा बुआ न स्वर म मिलाया। खासा ह्यामा मभ गया कि इतने म शबरी भी खड़ी हो गई और लगी उदात्त स्वर म झूँकने लेफट राइट। लपट राइट।' चौराह पर तीन चार बच्चा का जुलूस चला आ रहा था। आगे-आगे दर्जा व म पढने वाले मुन्ना बाबू नीम की सटी का झण्डे की तरह धामे जुलूस का नेतृत्व कर रहे थे, पीछे थे मेवा और निमल। जुलूस आकर दूबान के सामने रुक गया। गुलकी सतक हो गई। दुश्मन की ताकत बढ़ गई थी।

मटकी मिमकते सिसकते बोली हमके गुलकी मारिस है। हाथ। हाथ। हमके नरिया मे ठकेल दिहिस। अरे बाप र।" निमल, मेवा मुन्ना मर पास आकर उसकी चार देखने लगे। फिर मुन्ना न घकेलकर सबको पीछे हटा लिया और मटकी लेकर तन कर खड़े हो गए, "किसन मारा है इमे।"

हम मारा है। कुबडी गुलकी ने बड़े कष्ट से खड़े होकर कहा का करोगे? हम मारीगे? मारगे क्यों नहीं? मुन्ना बाबू ने अफ़डकर कहा। गुलकी इसका जवाब देती कि बच्चे पास धिर आए। मटकी न जीम निकालकर मुँह बिराया मेवा न पीछे जाकर कहा, 'ए कुबडी ए कुबडी अपना कुबड लिखाओ। जोर गव मुट्ठी धूल उसकी पीठ पर छोड़कर मागा। गुलकी का मुँह तमतमा आया और मँधे गले स कराहते हुए उसने पता नहीं, क्या कहा। किन्तु उसके चेहर पर भय की छाया बहुत गहरी हो गई थी। बच्चे सब एक एक मुट्ठी धूल लेकर शार मचाते हुए दौड़े कि अवस्मात् घेधा बुआ का स्वर मुनायी पडा, 'ए मुन्ना बाबू जात ही कि अवहिन बहिनजी का बुलवाय के दुइ चार वनटी दिलवाई।' 'जाते ता है।' मुन्ना न अकडते हुए कहा ए मिरवा,

बिगुल बजाआ।" मिरवा ने दोना हाथ मुँह पर रखकर कहा—धुतु धुतु घू। जुलूस चल पड़ा और बप्तान ने नारा लगाया—

अपन देस म अपना राज ।

गुलबी की दुकान वार्डकाट ।

नारा लगाता हुआ जुलूस गली में मुड़ गया। कुबडी ने आँसु पाछे तरकारी पर से धूल झाड़ी और साग पर पानी के छीट देन लगी।

गुलबी की उम्र ज्यादा नहीं थी यही हृदय-हृदय पच्चीस छप्पीस। पर चेहरे पर झुरियाँ आन लगी थी और बमर के पास वह इम तरह दोहरी हा गई थी जिस अस्सी बप की बुढ़िया हो। बच्चों ने जब पहली बार उसे मुहल्ले में देखा तो उन्हें साज्जुब भी हुआ और थोड़ा मय भी। वहाँ से आयी? कैसे आ गई? पहले वहाँ थी? इसका उन्हें कुछ अनुमान नहीं था। निमल ने जरूर अपनी माँ का उसने पिता डाइवर से रात को नहते हुए सुना, यह मुसीबत और खड़ी हो गई। मरद ने निवाल दिया तो हम थोड़े ही यह ढोल गले बाँधेंगे। बाप अलग हम लोगों का रुपया खा गया। सुना चल बसा तो वही मकान हम लोग न देखल कर लें तो मरद को छोड़कर चली आई। खबरदार, जो चामी दी तुमने।"

'क्या छोटेपन की बात करती हो। रुपया उसके बाप ने से लिया तो क्या हम उसका मकान मार लेंगे? चामी हमन दे दी है। दस-पाँच दिन का नाज-पानी भेज दो उसके यहाँ।

'हाँ-हाँ सारा घर उठा के भेज देव। सुन रही हो घषा बुआ?

'तो का भवा बहू, अरे निमल के बाबू से तो एकरे बाप की दाँत काटी रही। घषा बुआ की आवाज आयी— बेचारी बाप की अकेली सन्तान रही। ऐही के बियाह में मदियामेट हुइ गया। पर ऐसे कसाई के हाथ में दिहिस कि पाँच बरस माँ बूबड़ निकर आवा।'

"साला यहाँ जावे ता हटर से खबर घू मैं। डाइवर साहब बोले—'पाँच बरस बाद बाल-बच्चा हुआ। अब मरा हुआ बच्चा पड़ा हुआ तो उसमें इसका क्या कसूर। साले ने सीढ़ी से धकेल दिया। जिंदगी मर के लिए हड़डी खराब हा गई न। अब कैसे गुजारा हो इसका?"

'बेटवा, एको दुकान मुलवाय देव। हमरा चौतरा साली पड़ा है। यही रुपया हुइ रुपया किरावा दे देवा कर दिन भर अपना सौदा लगाय ल। हम का मना करित है। एसा बड़ा चौतरा मुहल्लेवाल्न के काम न आई तो का हम छाती पर धल जाव। पर हाँ, मुला रुपया दे देवा कर।'

दूसरे दिन यह सनसनीखेज खबर बच्चों में फल गई। वैसे तो हुकीमजी का चमूतरा बड़ा था, पर वह बच्चा था, उस पर छाजन नहीं थी। बुआ का चौतरा रम्बा

था, उस पर पत्थर जड़े थे। लकड़ी के सम्भे थे। उस पर टोन छापी थी। कई खेलों की सुविधा थी। खम्भों के पीछे किलकिल-कांटी की लकड़ी खींची जा सकती थी। एक टाग से उचक-उचककर बच्चे चिबिड़ड़ी खेल सकते थे। पत्थर पर लकड़ी का पीड़ा रखकर नीचे से मुड़ा हुआ तार धुमाकर रेलगाड़ी चला सकते थे। जय गुलकी ने अपनी दूकान के लिए चबूतरे के खम्भों में बाँस बांधे तो बच्चा को लगा कि उनके साम्राज्य में किसी अनात शत्रु ने आकर किलेबंदी कर ली है। वे सहमे हुए दूर से कुबड़ी गुलकी को देखा करते थे। निमल ही उसकी एकमात्र सबाददाता थी और निमल का एकमात्र विश्वस्त मूत्र भी उसकी मा। उससे जो सुना था उसके आधार पर निमल ने सबको बताया था कि वह खोर है। इसका बाप सौ रुपया चुराकर भाग गया। यह भी उसने घर का सारा रुपया चुराने आयी है। “रुपया चुरायेगी तो यह भी मर जायेगी।” मुन्ना ने कहा, “भगवान सबको दण्ड देता है।” निमल बोली, “समुराल में भी रुपया चुराये होगी।” मेवा बाला, “जरे कुबड़ थोड़े हैं, ओही रुपया बाँधे है पीठ पर। मनसेधू का रुपया है।” “सचमुच ?” निमल ने अविश्वास से कहा। “और नहीं क्या ! कुबड़ थोड़े हैं, हैं तो दिखाव !” मुन्ना द्वारा उल्लेखित होकर मेवा पूछने ही जा रहा था कि देखा साबुन वाली सत्ती बड़ी बात कर रही है गुलकी से—कह रही थी “अच्छा किया तुमने ! मेहनत से दूकान करो। अब कभी धूकने भी न जाना उसके यहाँ। हरामजादा दूसरी औरत कर ले, चाहे दम और कर ले। सबका खून उसी के मत्थे चढ़ेगा। यहाँ कभी आव तो बहलाना मुझसे। इसी चाकू से दोनों आँखें निकाल लूँगी।”

बच्चे डरकर पीछे हट गए। चलते चलते सत्ती बोली—“कभी रुपये-पैसे की जरूरत हो तो बताना बहिन।”

कुछ दिन बच्चे डरे रहे। पर अकस्मात् उन्हें यह सूझा कि सत्ती को यह कुबड़ी डराने के लिए बुलाती है। इसने उनके गुस्से में भी काम किया। पर कर क्या सकते थे। अन्त में उन्होंने एक तरीका ईजाद किया। वे एक बुढ़िया का खेल खेलते थे। उसको उन्होंने सशोधित किया। मटकी को लम्बजूस देने का लालच देकर कुबड़ी बनाया गया। वह उसी तरह पीठ दोहरी करके चलने लगी। बच्चा ने सवाल-जवाब शुरू किये—

“कुबड़ी-कुबड़ी का हेराना ?”

“सुई हिरानी !”

“सूई ल के का करब ?”

“क्या सीब !”

“क्या सी के का करब ?”

“लकड़ी लाब !”

“लकड़ी लाय के का करब ?”

“भात पकड़ब !”

“भात पनाय के का करव ?

“मान साव !

“भात के बत्ते लात गाव ?”

और इसके पहले कि कुबड़ी बनी हुई मटकी कुछ कह सके, वे उस जार से लात मारते और मटकी मुँह के बल गिर पड़ती। उसकी कोहनिया और घुटने छिल जाते। आँखों में आँसू आ जाते और हाठ दबाकर वह रगई राखती। बच्चे गुनी में चिल्लाते, “मार डाला कुबड़ी को मार डाला कुबड़ा का !” गुलका यह सब देखती और मुँह कर रूँती।

एक दिन जब इसी प्रकार मटका को कुबड़ी बनाकर गुलकी की दुकान के सामने ले गए तो उसने पहले मटकी जबाब दे, उन्हां अनचित्ते में उसे इतनी जोर से धक्का दिया कि वह कुहनी भी न टक सकी और सीधे मुँह के बल गिरी। माक, हाठ और मोह खून में लथपथ हो गए। वह हाय ! हाय ! कर इस बुरी तरह घीयों कि लड़के ‘कुबड़ी मर गई !’ चिल्लाते हुए भी सहम गए और हतप्रभ हो गए। अकस्मात् उन्हां देखा कि गुलकी उठी। व जान छाड़कर भागे। पर गुलका उठकर आयी, मटकी का गोद में लेकर पानी से उसका मुँह धोने लगी और घाती से मुँह पाछने लगी। बच्चों ने पता नहीं क्या समझा कि वह मटकी को मार रही है या क्या कर रही है कि वे अकस्मात् उस पर टूट पड़े। गुलकी की धीस सुनकर मुहल्ले के लोग आये तो उन्हां देखा कि गुलकी के बाल बिखरे हैं नाँव से खून बह रहा है, अघउपारी खूनदे के तीख पड़ी है, और सारी तरकारी सड़क पर बिखरा है। धधा बुआ ने उस उठामा घाता ठोक की। और बिगड कर बोली ओकात रस्ती मर न, और तहा पीवा मर ! आपन बलत दल के चुप न रहा जात। काहे लडवन के मुँह लगत ही ? लोका ने पूछा ता कुछ नहीं बोली। उसे उस पाला मार गया हो। उसने चुपचाप अपनी दुकान डीक की और दाँत से खून पाछा, कुल्ला किया और बठ गई।

उसके बाद अपन उस वृत्त से बच्चे उसे रस सहम गए थे। बहुत दिन तक व गान्त रहे। आज जब मेवा न उसकी पीठ पर घूट फेंकी तो जस उस खून चढ़ गया पर फिर न जान वह क्या मोचकर चुप रह गई और जस नारा लगाता हुआ जुलूम गली में मुड गया ता उसने आँसू पछि पीठ पर से घूट झाड़ी और साग पर पानी छिड़कन रंगी। लडक का हैं गल्ली के राछम हैं।” मेवा बुआ बोली। ‘अरे उन्हें काहे कहो बुआ। हमारा भाग ही मोटा है। गुलकी न गहरी सोत रगर बना।

२

जस बार जा झाड़ी लगा ता पाँच दिन तक लगातार मूरज व दधान नहीं हुए। बच्च सब पर म क द थ और गुलकी बमी दुकान लगाती थी, बमी नहीं। राम राम करत छठवें दिन तीसर पहर पांडी बंद हुई। बच्च हकीमजी के चौतर पर जमा हो गए।

मेवा बिलबोटी बीन लाया था और निमल ने टपकी हुई निमकीडिया बीन कर एक दूकान लगा ली थी और गुलकी की तरह आवाज लगा रही थी—“ले सीरा, जालू भूरी घिया पण्डा ।” थोड़ी देर में काफी गिन्तु ग्राहक दूकान पर जुट गए । अक्स्मात् गारगुल को चीरता हुआ बुआ के चौतरे से गीत का स्वर उठा । बच्चों ने घूमकर दवा-मिरवा और मटकी गुलकी की दूकान पर बैठे हैं । मटकी सीरा खा रही है और मिरवा पवरी का मिर अपनी गोद में रखते बिल्कुल उसकी आखा में आँखें डालकर गा रहा है ।

सुरत मेवा गया और पना लगा कर लाया कि गुलकी ने दोनों को एक एक अघना दिया है और दोनों मिलकर पवरी कुतिया के कीड़े निकाल रहे हैं । चौतर पर हलचल मच गई और मुना ने कहा, “निमल ! मिरवा मटकी को एक भी निमकीडी मत देना । रहे उसी कुबडी के पास ।” “हा जी !” निमल ने आत्म चमका कर गोल मुँह करके कहा, ‘हमार अम्मा कहत रही उह छुपौ न । न साय खायौ, न खैलौ । उह बडी बुरी बीमारी है ।’ “आक धू !” मुना ने उनकी ओर देखकर उबकाई जसा मुँह बनाकर धूक दिया ।

गुलकी बठी-बठी सब समझ रही थी और जमे इस निरधक घणा में उसे कुछ रस आने लगा था । उसने मिरवा से कहा, ‘तुम दोनों मिल के माओ ता एक अघना और दें । खूब जोर से !’ दोनों माई-बहन ने गाना गुरू किया—

“माल कताली मल जाना, पल अकिया किछी से ।”

अक्स्मात् फटाक से दरवाजा खुला और एक लोटा पानी दोनों के ऊपर फेंकती हुई घेघा बुआ गरजी— दुर कलमुँह ! अबहिन बित्तो भर के नाही ना और पतुरियन के गाना गाव लगे । न बहिन का खयाल न विटिया का । और ए कुबडी, हम तुहूँ से बढ देखत हैं कि हम चकलाखाना खोल के बरे अपना चौतरा नही दिया रहा । हुँह ! चली हुँआ से भुजरा कराव ।’

गुलकी ने पानी उभर छिटकाते हुए कहा— ‘बुआ, बच्चे हैं । गा रह हैं । कौन बसूर हो गया !’

‘ए हाँ ! बच्चे हैं । तुहूँ तो दूध पियत बच्ची ही । कह दिया कि जवान न लड़ापौ हम से, हाँ ! हम बहूने बुरी हैं । एक तो पाच महीने से किरावा नाही दियो और हियाँ दुनिया भर के अ धे कोणी बटुरे रहत हैं । खलौ उठावौ अपनी दूकान हियाँ से । कल से न देखी हियाँ तुम्हें । राम ! राम ! सब अधरम की सन्तान राच्छस पण भये हैं मुहल्ले में । घरतीयो नाही फाटत कि मर बिलाय जायें ।’

गुलकी सन्न रह गई । उसने किराया सचमुच पाँच महीने से नहीं दिया था । बित्री ही नहीं थी । मुहल्ले में कोई उससे कुछ लेता ही नहीं था पर इसने लिए बुआ उसे निवाल दगी— ऐसी उसे आगा नहीं थी । वसे ही महीने में बीस दिन वह भूखी मोती थी । घाती में दस दस पबन्द थे । मकान गिर चुका था । एक दलान

म घोड़ी-सी जगह में वह सा जानी थी। पर दूकान तो वहाँ रखी नहीं जा सकती। उमने चाहा कि वह बुआ के पर पकड़ ले, मिश्रत कर ले। पर बुआ ने जितनी जोर में दरवाजा खोला था उतनी ही जोर से बन्द कर दिया। जब स चौमामा आया था पुरवाई बही थी उमकी पीठ में भयानक पीडा उठती थी। उसके पाँव काँपते थे। सटटी में उस पर उपार बुरी तरह चढ़ गया था। पर अब होगा क्या 'वह मारे ताम्र क रोने लगी।

इतने में कुछ गटपट हुई और उसने घुटना से मुह उठाकर देखा कि मौवा पावर मटकी में एक ताजा फूट निकाल लिया है और मरभुखी की तरह उसे ह्वर ह्वर खाती जा रही है। एक क्षण वह उसके फूलने पकवसे पेट को दस्तकी रहती, फिर ह्याल भाते ही कि फूट पूरे दम पस का है, वह उबल पड़ी और सडासड तीन-चार लपक्की मारते हुए बोली, 'बोट्टो ! बुत्तिपा ! तोरे बदल में कीडा पड !' मटकी के हाथ से फूल गिर पडा पर वह गाली में से फूट कर टुकड़ उठाते हुए भागी। न रोई, न चीखी क्योंकि मुँह में भी फूट मरा था। मिरवा हक्का-बक्का इस घटना को देख रहा था कि गुलकी उसी पर बरस पड़ी। सह-सह उसने मिरवा को मारता धुलू किया—“भाग महाँ से हरामजादे ! मिरवा दद से तिलमिला उठा—“हमला पछा देव तो जाई ! देहन है पसा, टहर सो ! सह ! सह ! रोता हुआ मिरवा चौतरे की ओर भागा।

निमल की दूकान पर सनाटा छाया था। सब चुप उसी ओर देख रहे थे। मिरवा ने आकर कुबड़ी की लिकायल मुन्ना से की। मुन्ना चुप रहा। फिर मेवा की भार घूमकर बोला, 'मेवा बता दो इसे। मेवा पहलू हिचकिचाया, फिर बड़ी मूलायमपित से बोला मिरवा, तुम्ह बीमारी हुई है न ! तो हम लोग अब तुम्ह नहीं छुएंगे। साथ नहीं खिलायेंगे। तुम उधर बठ जाओ।

“हम बिमाल हैं मुन्ना ?”

‘मुन्ना कुछ पिछला—हाँ ‘हम छुआ मत। निमकौड़ी खरीदना हो ता उधर बठ जाओ हम दूर से पक देंगे समझे !’ मिरवा ममस गया, सिर हिलाया और अलग जाकर बठ गया। मेवा ने निमकौड़ी उसके पास रख दी और वह चान मूल पर पकी निमकौड़ी का बीजा निकालकर छीलने लगा।

इतने में ऊपर से घषा बुआ की आवाज आयी ‘ए मुन्ना ! तनी तू लोग परे हो जाओ ! अवहिन पानी गिरी ऊपर मे !’ बच्चा ने ऊपर देखा। तिछते पर घषा बुआ कडाटा मार पानी में छप छप करती घूम रही थी। बूडे से तिछत की नाली बंद थी और पानी मरा था। जिवर बुआ खड़ी थी उसके ठीक नीचे गुलकी का सोदा था। बच्चे वहाँ से दूर थे पर गुलकी का सुनाने के लिए बात बच्चा से कही गई थी। गुलकी कराहती हुई उठी। बूबड़ की बजह से वह तनकर तिछते की आग दस मी नहा सकती

थी। उसन घरती की ओर देखकर ऊपर बूआ से कहा, “इधर की नाली काहे खाल रही हो ? उधर की खोलो न ।”

“काहे उधर की खोली ! उधर हमार चौका है कि न ।”

“इधर हमारा सौदा लगा है ।”

“ए है ?” बूआ हाथ चमकाकर बोली “सौदा लगा है रानी साहब का । किराया देय के दाईं हियाव फाटत है और टराय के दाईं नटई में गामा पहिलवान का जोर तो देखौ ! सौदा लगा है तो हम का करी ! नारी तो इहै खुली ?”

‘खाली तो देखे ।’ अकस्मात् गुलकी ने तड़पकर कहा, आज तक किसी न उसका वह स्वर नहीं सुना था—“पाच महीने का दस रुपया नहीं दिया बेसक, पर हमारे घर की धनी निवाल के बसन्तू के हाथ किसने बचा ? तुमने ! पच्छिम ओर का दरवाजा चिरवा के किसन जलवाया ? तुमने । हम गरीब है । हमारा बाप नहीं है । सारा मुहल्ला हमें मिलकर मार डाले ।”

“हमें चारी लगाती है । अरे कल की पदा हुई ।’ बूआ मार गुस्से के बड़ी बोली बोलने लगी थी ।

बच्चे चुप खड़े थे । वे कुछ-कुछ सहमे हुए थे । कुबड़ी का यह रूप उन्होंने कभी न देखा था, न सोचा था ।

‘हाँ ! हाँ ! हाँ ! तुमन, डाइवर चाचा ने, चाची न, सबन मिलके हमारा मकान उजाड़ा है । अब हमारी दूकान बहाय दव । देखेंगे हम भी । निरखल के भी भगवान् हैं ।’

“ले ! ले ! ले ! भगवान् है तो ले ।” और बूआ न पागलों की तरह दौड़कर नाली में जमा बूड़ा लकड़ी से ठेल दिया । छ इंच माटी गदे पानी की धार घड घड करती हुई उसकी दूकान पर गिरन लगी । तरोइयाँ पहले नाली में गिरी, फिर भूली, खीरे साग अदरक उछल-उछलकर दूर जा गिरे । गुलकी आँख फाड़े पागल-सी देखती रही और फिर दीवार पर सिर पटककर हृदयविदारक स्वर में डकराकर रा पड़ी अरे मार बाबू—हमें कहाँ छोड़ गए—अर मोरी माई ! पदा हाते ही हमें क्यों नहीं मार डाला ! अरे घरती मया हमें काहे नहीं लील लती ।’

सिर खोले बाल बिबेरे, छाती कूट-कूटकर वह रो रही थी और तिछसे का पिछले नौ दिन का जमा पानी घड घड घड घड गिर रहा था ।

बच्चे चुप खड़े थे । अब तक तो जो हो रहा था उनकी समझ में आ रहा था । पर आज यह क्या हो गया, यह उनकी समझ में नहीं आ सका । पर वे कुछ बाले नहीं । सिफ भटकी उधर गई और नाली में बहता हुआ एक मोटा हरा खीरा निकालन लगी कि मुन्ना ने डाँटा, “खबरदार ! जो कुछ चुराया ।” भटकी पीछ हट गई । वे सब किसी अप्रत्याशित मय, सवेदना या आश्चर्य से जूट-बटुरकर खड हो गए । सिफ मिरवा अलग

मिर बुकाये सड़ा था। झींसी फिर पढ़ने लगी थी और बं एक एक कर अपने घर चले गए।

दूसरा दिन बाहर खाली था। दूकान का बास उगड़वाकर बुआ ने नांद में गाड़कर उस पर तुरड़ की लतर चला दी थी। उस दिन बच्चे आए पर उनकी हिम्मत उस चोतर पर जान की नहीं हुई। जस वहाँ कोई मर गया हो। बिल्कुल मुनसान चोतरा था और फिर तो ऐसी झड़ी लगी कि बच्चा का निकलना बंद। चौथे या पाचवें दिन रात का मयानक वर्षा तो हो ही रही थी पर बादल भी ऐसे गरज रहे थे कि मुन्ना अपनी घाट से उठकर अपनी माँ के पास घुस गया। बिजली चमकते ही जस कमरा रोशनी से नाच नाच उठता था। छत पर बूँदों की फर-फर कुछ धीमी हुई थोड़ी हवा भी चली और पड़ा का हरहर सुनाई पड़ा कि इतने में घड़ घड़ धम्म की मयानक आवाज हुई। माँ भी चौंक पड़ी। पर उठी नहीं। मुन्ना जाँखें खाले ओंछेरे में ताकन लगा। सहसा लगा मुहल्ले में कुछ लोग बातचीत कर रह हैं। घेंघा बुआ की आवाज सुनाई पड़ी—'फिसका मकान गिरा है रे।' 'गुल्की का?'—'किसी का दूरागत उत्तर आया। "अरे बाप रे! दब गई क्या? नहीं आज तो मेवा की माँ के यहाँ सोयी है।' मुन्ना जेठा था और उसके ऊपर ओंछेरे में यह सबाल जवाब इधर से उधर और उधर से इधर आ जा रहे थे। वह फिर काँप उठा था के पास घुस गया और सोते-सोते उसने साफ मुन्ना—'बुबड़ी फिर उसी तरह रा रही है गला फाड़ कर रो रही है।' कौन जान मुन्ना ने ही आँगन में बैठकर रो रही हो। नाद में वह स्वर कमो दूर कभी पास जाता हुआ ऐसा लग रहा है जैसे बुबड़ी मुहल्ले के हर आँगन में जाकर रो रही हो पर कोई सुन नहीं रहा सिवा मुन्ना के।

३

बच्चा के मन में कोई बात तना गहरी लकीर नहीं बनाती कि उधर से उनका ध्यान हटे ही नहीं। सामने गुल्की थी तो वह एक समस्या थी पर उसकी दूकान बंद गई फिर वह जाकर साबुन वाली सस्ती के गलियाने में मोने लगी और गे चार घर से माँग-जाँचकर रान लगी, उस गली में दिखती ही नहीं थी। बच्चे भी दूसरे कामों में व्यस्त हो गए। अब जाड आ रहे थे ता उनका जमावडा सुबह न हाँकर तीसर पहर होना था। जमा होने के बाद जलूस निकलता था और जिम जोशीले नार से गली पूज उठती थी वह था—'घेंघा बुआ का बाट हो।' पिछल दिना म्युनिसपलिट्री का बुताब हुआ था और उसी में बच्चा ने यह नारा सीखा था। वस कभी-कभी बच्चा में दा पाटिया भी हाती थी पर दाना का घेंघा बुआ से अच्छा उम्मीदवार कोई नहीं मिलता था अर दोना ही गला फाड़ फाड़कर उनके ही लिए बाट माँगती था।

उस दिन जब घेंघा बुआ ने घम का बाँध टूट गया और नई-नई गालियों से विभूषित अपनी पयम एल्कान-स्पीच देने जा ही चौतरे पर अवतरित हुई कि वह

डाकिया आता हुआ दिखायी पड़ा। वह अचबचाकर रव गई। डाकिये के हाथ में एक पोस्टकाड था और गुलकी का दूँड रहा था। बुआ न लपककर पोस्टकाड लिया, एक सांस में पढ़ गई। उनकी जाँखें मारे अचरज के फल गई, जीर डाकिये का यह बताकर कि गुलकी सती साबुन वाली के आमार में रहती है, वे झट में दौड़ी-दौड़ी निमल की माँ डाइवर की पत्नी के यहाँ गयी बड़ी देर तक दोनों में सलाह मतवरा होता रहा और अन्त में बुआ आइ और उम्हान मवा का भेजा— 'जा गुलकी को बुलाय ला।'

पर जब मेवा लौटा तो उसके साथ गुलकी नहीं बरन् सती साबुन वाली थी और सदा की भौंति इस समय भी उसकी कमर से वह काले बट का चाकू लटक रहा था, जिससे वह साबुन की टिकरी काटकर दूकानदारा का दती थी। उसने आते ही भौट सिवाइकर बुआ का दन्ना और कड़े स्वर में बोली— 'क्या बुलाया है गुलकी का ? तुम्हारा दस रु० किराया बाकी था तुमने १५ का मीदा उजाड़ लिया। अब क्या काम है ? जरे। राम। राम। क्या किराया बढ़ा। अदर जाओ, अदर आओ। बुआ के स्वर में असाधारण मुलामियन थी। सती के अदर जाते ही बुआ में फटाक से किवाड़ बंद कर लिये। बच्चा का कौतूहल बहुत बढ़ गया था। बुआ के चौंके में एक मचपरी थी। सब बच्चे वहाँ पहुँच और आँख लगाकर बनपटिया पर दोनों हथेलियाँ रखकर घण्टी वाला वाइसकोप देखन की मुद्रा में खड़े हो गए।

अदर सती गरज रही थी— 'बुलाया है तो बुलान दो। क्यों जाये गुलकी ? जब बड़ा ब्याल आया है। इसलिए कि उसकी रखल को बच्चा हुआ है तो जाके गुलकी पाड़ू-बुआ कर, खाना बनाव, बच्चा खिलाव, जीर वह मरद का बच्चा गुलकी की आँख के जागे रखल के साथ गुलछरें उड़ाव।'

निमल की माँ बोली— 'अरे बिटिया। पर गुजर तो अपने आदमी के साथ करगी न। जब उसकी पत्नी जायी है तो गुलकी का जाना चाहिए। और मरद तो मरद। एक रखल छाड़ दुः दुः रखल रख ल ता औरत उस छोड़ देगी। राम। राम।

'तहीं छोड़ देगी तो जाय के लात खायेगी ?' सती बाली।

'अरे बेटा।' बुआ वाली— भगवान रह न। तीन मथुरापुरी में कुब्जा दासी के लात मारिन तो ओकर कबा सीधा हूइ गया। पनी तो भगवान है बिटिया। ओका जाय देव।

'हाँ-हाँ, बड़ी हितू न बनिय। उसके आदमी से जाय लाग मुफ्त में गुलकी का मवान पटकना चाहती है। मैं सब समझती हूँ।''

निमल की मा का चेहरा जद पढ़ गया। पर बुआ ने ऐसी कच्ची गाली नहीं खली थी। व उपटकर बोली— सवरदार, जा कच्ची जवान निकाल्यो। तुम्हारा चल्तिर बोन न जानता। ओही छोकरा मानिक।'

'जवान खीच लेंगी।' सती गला फाड़कर चीखी 'जा आगे एक हम्फ

रहा।" और उसका हाथ अपने बाजू पर गया—

‘अरे ! अरे ! अरे !’ बुआ सहमकर दग बंदम पीछे हट गई — ‘तो का खुः करवो का ? कतल करवो का ?’ —सती जते आपी थी वते ही चली गई ।

मीनरे दिन बच्चा ने तय किया कि हारी बाबू व गुल पर चलकर बरें पकड़ी जायें । उन त्तिना उनका जहर घात रहना है । बच्चे उन्हें पकड़कर उनका छोटा-सा बाला दब निवाल लेते और फिर डोरी म बांधकर उन्हें उठाते हुए घूमते । मेवा निमल और मुद्रा एक एक कर उड़ाने हुए जब गली म पहुँचे तो वहाँ दग्गा बुआ के चोंतरे पर टीन की कुर्मी डाले कोई आत्मी बठा है । उसकी अजब गल थी । कान पर धडे-बडे बाल मिचमिची आँतें, मोछा और तेल स चुचुआते हुए बाल । कमीज और घाती पर पुराना बदरग घूट । मटवी हाथ पलाये वह गरी है — ‘एक डबल द देव । ए द देव ना ।’ मुद्रा को देखकर मटवी ताली बजा-बजाकर कहने लगी—“गुलकी का मनसेपू लावा है । ए मुद्रा बाबू ! ई कुबडी का मनसेपू है ।” फिर उधर मूढ़कर—“एक डबल द देव ।” तीना बच्चे बौतूहू से दब गए । दगने म निमल की माँ एक गिलास म चाय भर कर लाइ । गीर उसे दते-दते निमल के हाथ म बरें देखकर उसे डाँटने लगी । बरें छुटाकर निमल को पास बुलाया और बोली— ‘बेटा, इ हमारी निमला है । ए निमल जीजाजी हैं हाथ जोडो ।’ बेटा गुलकी हमरी जात बिरादरी की नहीं है तो का हुआ, हमरे लिए जसे निमल वसे गुलकी । अरे निमल के बाबू और गुलकी व बाप की दाँत-काटी रही । एक मवान बचा है उनकी चिहारी और का ।’ एक गहरी साँस लेकर निमल की माँ ने कहा ।

अरे, ता का उह कोई इकार है । बुआ आ गई थी, “अरे १०० तुम दब जिये रहो चलो ३०० और द देव । अपने नाम कराय लेव ।’

‘५०० से कम नहीं होगा । उम आदमी का मुँह खुला एक वाक्य निक्कला और मुँह फिर बंद हो गया ।

‘नवा । नवा । ए बेटा दामाद हो, ५०० कहवो तो का निमल की माँ को इन्वार है ।’

अकस्मान वह आदमी उठकर खड़ा हो गया । आगे-आगे सती चली आ रही थी पीछे-पीछे गुलकी । सती चोंतरे के नीचे मड़ी हा गई । बच्चे दूर हट गए । गुलकी ने सिर उठाकर देखा और अचकचाकर सिर पर पल्ला डालकर माथे तक खान लिया । सती दो एक क्षण उसकी ओर एकटक देखती रही और फिर गरज कर बोली—‘ यही कसाई है । गुलकी आगे बढ़कर मार दो चपेटा इसके मुँह पर । खबरदार, जो कोई बोला ।’ बुआ चट से देहरी के अंदर हो गई निमल की माँ की जसे धिगधी बेंच गई और वह आदमी हड़बड़ा कर पीछे हटने लगा ।

‘बढ़ती क्या नहीं गुलकी ! बड़ा आमा वहाँ से विदा कराने ।’

गुलकी आगे बढ़ी, सब सन्न थे। सीढ़ी चढ़ी, उस आदमी के चेहरे पर हवाइयाँ उड़ने लगी। गुलकी चढ़ते चढ़ते रुकी, सत्ती की ओर देखा, ठिठकी, अकस्मात् लपकी और फिर उस आदमी के पाव पर गिर के पफक पफक कर रोने लगी—“हाय, हमें काहे को छोड़ दियो ! तुम्हारे सिवा हमारा लोक-परलोक और बौन है ? अरे, हमारे मर पर कौन चुल्लू मर पानी चलाई ”

सत्ती का चेहरा स्याह पड़ गया। उसने बड़ी हिंकारत से गुलकी की ओर देखा और गुस्से में धूँक निगलते हुए कहा, “बुटिया !” और तेजी से चली गई। निमल की माँ और बुआ गुलकी के सिर पर हाथ फेर-फेर कर रह रही थी—“मत रो बिटिया ! मत रो ! सीता मइया भी तो बनबास भोगिन रहा। उठो गुलकी बेटा ! धोती बदल लेव, कधी चोटी करो। पति के सामने ऐसे आना असंगुन होता है ! चली !”

गुलकी आसू पाछती-पाछती निमल की माँ के घर चली। बच्चे पीछे पीछे चले तो बुआ ने डाँटा—“ए चलो एहर, हुँवा लड्डू बट रहा है का !”

दूसरे दिन निमल के बाबू (डाइवर साहब) गुलकी और जीजा दिन भर कच हरी में रहे। गम को लौटे तो निमल की मा ने पूछा, “पक्का कागज लिख गया ?” “हा-हा रे, हाकिम के सामने लिख गया”, फिर जरा निकट आकर फुमफुमाकर बोले, “मट्टी के मोल भवान मिला है। अब कल दोनों को बिदा करो !”

“अरे, पहले १०० लाओ ! बुआ का हिस्सा भी तो देना है !” निमल की माँ उदास स्वर में बोली, ‘बड़ी चट है। बुडिया गाड़ गाड़ के रख रही है मर के साँप होयगी !’

४

सुबह निमल की मा के यहाँ मकान खरीदने की कथा थी। दाख, घटा घड़ियाली बेलें का पत्ता, पजीरी पचामत का आयोजन देख कर मुत्ता के अलावा सब बच्चे इकट्ठे थे। निमल की मा और निमल के बाबू पीछे पर बैठे थे, गुलकी एक पीली धोती पहने, माथे तक धूँ घट काढे सुपारी काट हरी थी और बच्चे झाँक कर देख रहे थे। मेवा ने पास पहुँचकर कहा “ए गुलकी, ए गुलकी जीजाजी के साथ जाओगी क्या ?” कुबड़ी ने झोंपकर कहा, “पत रे ! ठिठोली करता है !” और लज्जा भरी जो मुस्कान किसी भी तरफ़ी के चेहरे पर मनमोहक लाली बनकर फल जाती, वह उसके मुरियोदार, बडोल, नीरस चेहरे पर विचित्र रूप से बीभत्स लगन लगी। उसके काले पपड़ीदार हाठ सिकुड़ गए, आँखा के कोने मिचमिचा उठे और अत्यन्त कुरुचिपूर्ण ढंग से उसने पल्ले से सिर हँक लिया और पीठ सीधी कर जैसे नुवड छिपाने का प्रयास करने लगी। मेवा पास ही बैठ गया। कुबड़ी ने पहले इधर उधर देखा, फिर फुसफुसाकर मेवा से कहा, ‘क्यों रे ! जीजाजी कैसे रुने तुम्हें ?’ मेवा ने असमजस में या सकोच में पड़कर कोई जवाब नहीं दिया तो उसे अपने को समझाने हुए गुलकी बोली, ‘कुछ भी होय। है तो अपना

आदमी ! हारे-भाग कोई और काम आवेगा ? औरत को दवाय बं रखना ही चाहिए ।” फिर थोड़ी देर चुप रहकर बोली, “मेवा भइया, सत्ती हमसे नाराज है । अपनी सगी बहिन क्या करेगी जो सत्ती न किया हमारे लिए । ये चाची और बुआ तो सब मतलब के साथी है, हम क्या जानत नहीं ? पर भइया अब जो कहो कि हम सत्ती के कहने से अपन मरद को छोड़ दें सो नहीं हो सकता ।” इतन में किसी का छोटा-सा बच्चा घुटना के बल चलते चलते मेवा के पास आकर बैठ गया । गुलकी क्षण भर उसे देखती रही फिर बोली ‘पति से हमने अपराध किया तो भगवान् ने बच्चा छिना लिया, अब भगवान् हमें छिमा कर डेंगे ।’ फिर कुछ क्षण के लिए चुप हो गई, ‘छमा करेगे सो दूसरी सत्तान दगे । क्या नहीं देंगे ? तुम्हारे जीजाजी को भगवान् बनाये रखे । छोड़ तो हमी मे है । फिर सन्तान होगी तब तो सौत का राज नहीं चलेगा ।’

इतन में गुलकी ने देखा कि दरवाजे पर उसका आदमी खड़ा बुआ से कुछ बातें कर रहा है । गुलकी ने तुरन्त पल्ले से सिर हँका और लजा कर उधर पीठ कर ली । बोली, “राम ! राम ! कितने दुवरा गए हैं । हमारे बिना छाने-पीने का कौन ध्यान रखता ! अरे सौत तो अपने मतलब की होगी । ले भइया मेवा जा, दो बीड़ा पान दे आ जीजा को ।’ फिर उसके मुँह पर वही लाज की धीमरस मुद्रा आयी “तुझे कसम है बताना मत किसन गिया है ।

मेवा पान लेकर गया पर वहाँ किसी ने उस पर ध्यान ही नहीं दिया । वह आदमी बुआ से कह रहा था, ‘इसे ले तो जा रहे हैं पर इतना कहे देते हैं, आप भी समझा दें उसे—कि रहना हो तो दासी बनकर रहे । न दूध की, न पूत की हमारे कौन काम की पर हाँ औरतिया की सेवा करे, उसका बच्चा गिलावे शादू-बुहाक करे तो दो रोटी साथ पड़ी रह । पर कभी उससे जवान लड़ाई तो खर नहीं । हमारा हाथ बड़ा जालिम है । एक बार बूबड़ निकला अगली बार परान ही निकलेगा ।

क्या नहीं बेटा ! क्या नहीं ! बुआ बोली और उन्होंने मेवा के हाथ से पान लेकर अपन मुँह में दवा लिये ।

करीब ३ बजे कच्चा लान के लिए निमल की माँ ने मेवा का भजा । कच्चा की भोड़भाड़ से उसका ‘मूँड़ पिरान’ लगा था अतः अकेली गुलकी सारी तयारी कर रही थी । मटकी बोलने में मटकी भी । मिरवा और सबरी बाहर गुमगुम बटे प । निमल का माँ ने बुआ को बुलवाकर पूछा कि बिना बिनाई में क्या करना होगा, तो बुआ मुँह बिगाड़कर बोली ‘अरे कोई बात बिरादरी की है का ? एक लाटा में पानी भरके इबन्नी-दुअन्नी उनार बं परजा-पराज को द दिया बस । और फिर बुआ पाप की बिपारी में लग गई ।

कच्चा आते ही उस सबरी पागल-सी इधर-उधर दौड़ने लगी । उस जान कने ब्यापार हो गया कि टुकरी जा रही है सग ब गिर । मेवा ने अपन छोटे-छोटे हाथ

से बड़ी-बड़ी गठरियाँ रखी, भटकी और मिरवा चुपचाप आकर इक्के के पास खड़े हो गए। सिर झुकाये पत्थर-सी चुप गुलकी निकली। आगे आगे हाथ में पानी का भरा लोटा लिये निमल थी। वह आदमी जाकर इक्के पर बैठ गया। 'अब जल्दी करो।' उसने भारी गले से कहा। गुलकी आगे बढ़ी, फिर रुकी और उसन टेंट से दो अघने निकाले, 'ले मिरवा, ले भटकी।' भटकी, जो हमेशा हाथ फलाये रहती थी, इस समय जाने कसा सकोच उसे आ गया कि वह हाथ नीचे कर दीवार से सटकर खड़ी हो गई और सिर हिलाकर बोली, 'नहीं।', 'नहीं बेटा। ले लो।' गुलकी ने पुनःकार कर कहा। मिरवा ने पैसे ले लिये और मिरवा बोला, "छलाम गुलकी। ए आदमी छलाम।"

"अब क्या गाड़ी छोड़नी है।" वह फिर भारी गले से बोला।

'ठहरो बेटा वही ऐसे दामाद की विदाई होती है।' सहसा एक बिलकुल अजनबी किंतु अत्यन्त मोटा स्वर सुनाई पड़ा। बच्चों ने अचरज से देखा, मुन्ना की माँ चली आ रही है। "हम तो मुन्ना का आसरा देख रहे थे कि स्कूल से आ जाए, उसे नाश्ता करा लें तो आये, पर इक्का आ गया तो हमने समझा अब तू चली। अरे! निमल की माँ, वही ऐसे बेटे की विदा होती है। आया जरा रोली घोली जल्दी से, चावल लाओ, और सेंदुर भी ले आना निमल बेटा। तुम दगा उतर आओ इक्के से।"

निमल की माँ का चेहरा स्याह पड़ गया था। बोली—'जितना हमस बन पड़ा किया। किसी को दौलत का घमण्ड धोड़े ही दिखाना था।' 'नहीं बहन! तुमने तो किया, पर मुहल्ले की बिटिया तो सारे मुहल्ले की बिटिया होती है। हमारा तो पज था। अरे, मा-बाप नहीं हैं तो मुहल्ला तो है। आओ बेटा।' और उन्होंने टीका करके बीचल के नीचे छिपाये हुए कुछ कपड़े और नारियल उसकी गोद में डालकर उसे चिपका लिया। गुलकी जो अभी तक पत्थर-सी चुप थी, सहसा फूट पड़ी। उसे पहली बार लगा जैसे वह माँके से जा रही है। मायके से अपनी माँ को छोड़कर छोटे-छोटे भाई-बहनों को छोड़कर और वह अपने कवच फटे हुए गले से विविध स्वर से रो पड़ी।

"ले! अब चुप हो जा? तारा भाई भी आ गया।" व बोली। मुन्ना बस्ता लटकाये स्कूल से चला आ रहा था। कुबड़ी को अपनी माँ के कंधे पर सिर रखकर राते देखकर वह बिलकुल हतप्रभ-मा खड़ा हो गया—'आओ बेटा! गुलकी जा रही है न आज? दीदी है न? बड़ी बहन है। चल, पाँव छू ले? आ इधर?' माँ ने फिर कहा। मुन्ना और कुबड़ी के पाँव छुए? क्या? क्या? पर माँ की बात। एक क्षण में उसके मन में जैसे एक पूरा पहिया घूम गया और वह गुलकी की ओर बढ़ा। गुलकी ने दौड़कर उसे चिपका लिया और फूट पड़ी—'हाथ मरे मझ्या! अब हम जा रहे हैं! अब किससे लड़ोगे मुन्ना मझ्या? अरे मेरे बीरन, अब किससे लगेगे?' मुन्ना

को लगा जैसे उसकी छोटी छोटी पसलियां में एक बहुत बड़ा-सा आँसू जमा हो गया जो अब छलकन ही वाला है। इतने में उस आदमी ने फिर आवाज दी और गुलकी कराह कर मुन्ना की माँ का सहारा लेकर इसके पर बैठ गई। इक्का छड़-छड़ कर चल पड़ा। मुन्ना की माँ मुड़ी कि बुआ ने क्या किया—‘एक आध गाना भी बिदाई का गाये जाओ बहन ! गुलकी बानो समुद्राऊ जा रही है ?’ मुन्ना की माँ ने कुछ जवाब नहीं दिया मुन्ना से बोली—‘जल्दी घर आना बेटा। नास्ता रखा है !’

पर पागल मिरबा ने, जो बम्ब पर पाव लटकाये बठा था जान क्या सोचा कि वह सचमच गला फाड़कर गाने लगा—“बन्नो डाले दुपट्टे का पल्ला, मुहल्ले से चली गई राम !” यह उस मुहल्ले में हर लड़की की बिदा पर गाया जाता था। बुआ ने धुड़का तब भी वह चुप नहीं हुआ, उलटें मटकी बोली—“काहे न गावें गुलकी ने पैसा लिया है !” और उसने भी सुर मिलाया—‘बन्नो तली गई राम ! बन्नो तली गई राम !’

मुन्ना चुपचाप सड़ा रहा। मटकी डरते-डरत आयी—‘मुन्ना बाबू ! कुचड़ी ने अधन्ना दिया है, ले लें ?’

‘ले लें ! बड़ी मुन्निल से मुन्ना ने कहा और उसकी आँखों में दो बड़े-बड़े आँसू डबडबा आये। उन्हा आँसुआ की झिलमिली में कोशिश करके मुन्ना ने जाते हुए इसके की ओर देखा। गुलकी आँसू पाछते हुए, पदों उठाकर, मुड़ मुड़कर देख रही थी। मोड़ पर एक धक्के से इक्का मुड़ा और फिर अदृश्य हो गया।

सिर्फ झबरी सड़क तक इसके के साथ गयी और फिर लौट आयी।

लन्दन की एक रात

मैं दूसरी बार वहाँ गया था। पहली रात देर से पहुँचा था। जाने से पहले ही सारा काम बँट चुका था। मैं फिर भी अनिश्चित-सा गेट के बाहर खड़ा था। सोच रहा था, शायद आखिरी क्षण उन्हे किसी आदमी की ज़रूरत पड़ेगी और वे मुझे बुला लेंगे। देर तक घड़घड़ाती मशीनों के भीतर भाड़े की बोटला का स्वर सुनाई दे रहा था। हमने से जिन्हें काम मिल गया था, वे जल्दी-जल्दी अपने सूट उतारकर काम के कपड़े पहन रहे थे।

बाहर दालान में बोटलें थी—फ्रीकी चांदनी में चमकती हुई, एक के ऊपर दूसरी—मिलसिल्लवार फक्टी की दीवार से सटी हुई। दूर से देखने पर लगता था जैसे काँच के किसी लम्बे टील पर बहुत-सी बिल्लियाँ एक-दूसरे का गला पकड़े बठी हों।

मैं खड़ा रहा। फिर कुछ देर बाद एक अँग्रेज सज्जन मेरे पास आये—तुम अभी तक खड़े हो? मैंने कहा न, आज कुछ भी नहीं है।—उसने अपना हाथ मेरे कंधे पर रख दिया।

—नहीं, मैं सिर्फ देख रहा था—मैंन धीरे से उसका हाथ अपने कंधे से अलग कर दिया।

—कल पाँच मिनट पहले आ जाना। अगर कुछ लोग कल नहीं आयें, तो तुम्हें ले लिया जाएगा। गुड नाइट।—और वह चला गया।

यह दूसरी रात थी। ट्यूब-स्टेशन की सीढ़ियाँ चढ़कर ऊपर आया तो देखा कल की चांदनी आज पूरी तरह मिखरकर फली है। दूर मिल की बिमनिया के बीच लन्दन का धूमिल आवागमन सिमट आया था।

मुझे दुसरा रास्ता टटोलना पड़ा। मैं उन सड़का पर दुबारा चलने लगा, जिन पर कल चला था, जो अब परिचित थी, किन्तु चांदनी में अजीब-सी अज्ञानी दिखाई दे रही थी।

किन्तु नाम एकटन से जरा आगे चलकर मेरे पाँव छुद-ब-छुद ठिठक गए। सोचा था, आज मैं जल्दी आ गया हूँ और गेट पर मेरे अलावा कोई दूसरा नहीं होगा। किन्तु मेरा अनुमान सही न था। वहाँ पहले से ही बीस-पच्चीस बेरोज़गार युवकों की भीड़ जमा थी। अँग्रेज लड़के, कुछ छात्र, जो देखने में बर्मी जान पड़ते थे, दक्षिणी

अपीना और वेस्ट इण्डोन् के मीछो—सब अलग-अलग गुच्छा में गड़ थे । गदरी भाँगे गेट पर टिकी थी । कुछ के बहुर जाने-बहुरो मगन थे । उह सायन बल रात रेगा था । उन सबकी आँखें मग्न पर उठ आई, सामोना और तनी हुई । मुझे लगा जस उग सामोनी में एक अजीब गा भय उमर आया है, मेरे प्रति उताव नहीं खिना उग अज्ञात नियति व प्रति क्रिमका निगम अगले वन स्थला में होने वाला था ।

मैं भी उनके मग्न एक कोने में गड़ा रहा—उनमें डरता हुआ फिर भी उमर बेधा हुआ ।

पौने दो के करीब भनेजर हमार पास आये । मुझे तनिक निराशा हुई । वह बल माल गाजन नहीं थे, जिहान मेरे कपड़े पर हाथ रमा था । उनके हाथ में बागड का एक पुतला था । हम सब उनका पास गिरक आये—निश्चयापर के उन मूक, निरीह जन्तुओं की भाँति, जो कुछ भी पाने व लालच से भय चान्ति गति में साँगपा व पास घिमटते आते हैं । एक क्षण के लिए उन्होंने हम देखा । हमारे मुँह, नंगे, मावमान चेहर उह अजीब-स मयावह लगे हमें ब्याक्ति उतरान अपनी आँखें जल्दी ही बागड पर झुका ली और तेजो से एक व बाद एक नाम पढ़ने लगे ।

वे सब लोग छोट लिए गए, जिहाने पिछली रात काम किया था । उनके अलावा सिर्फ तीन और लड़का वी चुना गया—दो लावारिस-स दीगने बाते अग्रेंड युवक और एक दक्षिणी अफीका का विद्यार्थी जो सबसे आगे रहता था और बार-बार मुँहवर भनेजर के बाना में कुछ फुसफुसा देता था ।

—आज कतना ही—उन्होंने सहानुभूतिपूर्ण भाव से हमारी आर देखा—आप लोग बल आइय सायद कुछ आदमिया की जरूरत पड़ेगी ।

मीड में से तीन चार युवकों ने आगे बढ़कर उनसे बहस करने की कोशिश की किंतु उन्होंने बहुत असह्य भाव से अपने हाथ हिला दिए और मुस्कराती आँखों से हमारी आर दसते हुए भीतर चल गये ।

हमारी प्रतीक्षा का अन्त आ पहुँचा है इसे जानते हुए भी हममें से कोई उस पर विश्वास नहीं कर सका । भनजर के जान व बाद भी हम में से कोई अपनी जगह से नहीं हिला । रणता था, जस पिछल तीन दिनटों में जो-कुछ भी घटा-बढ़ा है, वह अभी अपूर्ण है एक ऐसा अवास्तविक तथ्य जिसका गायद हमसे कोई वास्ता नहीं अभी कुछ ऐसा है, जो बाकी है जो प्रतीक्षा के बाद भी अपने दरवाजे खुले रखता है हममें से बहुत से ऐसे थे जो ट्यूब में तीन या चार गिरलिय का टिकट लेकर लान्त व मुद्गर बाना में यहाँ आये थे । हम सबके हाथा में एक एक थला था, जिसमें हमने रात की ड्यूटी के बपड़े और खाने का सामान बाँध रखा था । हममें से किसी के लिए भी यह विश्वास करना कठिन था कि हमें अगली ट्यूब से वापस लौट जाना होगा । पाइप से निकलता गुनगुना पानी चाँदनी में झिलमिलाने कीचड़ के गढ़ यहाँ

ढील डोठ अंधेरे में किसी भी अजनबी को काफी भयावह लग सकता था।

हम धीरे धीरे कदम बढ़ाते हुए माथ एकटन के पुल पार आ गए थे। लंदन की इतनी इतनी बस हमारे पास में गुजर गई। अगस्त महीने के पीले-करारे पत्ता का रस्ता देर तक बस में पीछे भागता रहा।

सीसरा व्यक्ति, नीग्रो युवक, अब भी काफी उदास था और चुपचाप सड़क पर आगे मुकाए चल रहा था।

—लंदन में बस से हो?—दानीवाले युवक ने (बाद में जिसने अपना नाम बिली बताया था) नीग्रो के कंधे पर हाथ रखकर पूछा।

वह चुप रहा।

—कहाँ से आये हो?

—दक्षिणी अफ्रीका से यहाँ पढ़ता हूँ।

वह गायब बात को यही उत्तर करना चाहता था। उसने जेब से सिगरेट का पकेट निकाला और हम दोनों के आगे कर दिया। हमने धन्यवाद देकर आँसों मोड़ ली। यह उसकी आखिरी सिगरेट थी और अपनी भूखी लालसा के आसपास हममें इतनी गिड़हाई बाकी थी कि उस सेन से इन्कार कर दें। किन्तु यह गिड़हाई अधिक देर तक नहीं चल सकी। कुछ देर बाद हम सीना उस सिगरेट की बारी-बारी से पी रहे थे।

सामन लन्दन की रात थी—बोम्बिल गैदली घाट। वह शहर का एक उजाड़ कोना था और सड़क खाली थी। खाली लेकिन बीरान नहीं। पत्ता की गरमगहट पुराने मकानों की बासी गंध—लगता था, जमे बीच में हम अनेक निष्प्राण बीजा का ठसते हुए आगे बढ़ रहे हैं—हालाँकि बीच में हवा और सपना-वास्तव के दायरा के अभाव में कुछ भी नहीं था।

—तुम कहाँ जाओगे?

—बादेन स्ट्रीट—उसने कहा—पिछले दो दिनों से आ रहा हूँ। अब तक पाँच पाँच पाँच आन-आने में गंज हा गया। इतने पत्ता से तो मैं टैनिंग मशीन आ सकता था।

उस समय टैनिंग मशीने का चर्चा बारी विचित्र जान पड़ी—उसने चेहरे से भ्रम हाता था कि पिछले कई दिनों में उस घर-घर भ्रमने को भी नहीं मिला है।

—मरे दामन का काम मिल गया है—नीग्रो छात्र ने तनिक उम्मांगपूर्वक कहा—हम दोनों गांधी रहने हैं। बस गांधी बंद मुझे कुछ गिरमिग उपहार दे सकना।

—इस हिम—एक ही इज्जत—बिना में अजाब मोझे स्वर में कहा—मैं तो बस बिना हाथ में नहीं आऊँगा। फ्लाज कम टयारा! मनेकर का नकल उगा रहा हूँ उसने मुझे निहाल किया—तुमारा दि इग्ज! तुम बस जाओगे?—उसने पट्टी बार मरी बार उमंग हाकर पूछा।

—गांधी आऊँगा—मैंने जान-बूझकर उस कुछ अस्पष्ट विज्ञान के लिए कहा।

उसके इस समय 'कल' की बात करने से मुझे काफी अफसोस हुआ था ।

—सासे कितना त्त हैं ?

—डाई पाउण्ड—नीग्रो छात्र ने कहा ।

—हर सुबह ?

—हाँ, हर सुबह । आधी रात के समय चाय और सेण्डविच भी देते हैं—मेरा दोस्त बता रहा था । बल में और वह सग आये थे, उसे से लिया गया, मैं रह गया ।

—नीग्रो था ?

—नहीं, वह बर्मी है ।

—और आप ?—बिली ने सदिग्ध भाव से मेरी ओर देखा, जैसे अपनी नजरा से मुझे तौल रहा हो—आप क्या जापानी हैं ?

मैंन सिर हिला दिया । इतनी-सी बात पर उसका प्रतिवाद करना मुझे निरवक जान पड़ा ।

कुछ देर तक हम चुपचाप ट्यूब स्टेशन की ओर चलते रहे । जब कभी गरम हवा का झोका आता, हम सिहर जाते । तब हमारी भूख अपने सब पबंद तोड़कर उभड़ जाती । लगता, जैसे हवा लम्प-पोस्ट के पीले, मद्धिम आलोक को तोड़ जाती हो, तोड़कर अपने सग बहा ले जाती हो

—गरमी काफी है पिछले पाँच साल से ऐसी गरमी नहीं देखी ।

—पिछले पाच साल से रुदन में ही ?

—शायद उपादा तब से कई काम कर चुका हूँ । अब उपादा नहीं रहूँगा ।

—क्या वापस घर जाओगे ?—बिली ने पूछा ।

—घर ?—नीग्रो छात्र, आज के स्वर में एक सूना-सा खोबलापन उभर आया मानो घर' शब्द बहुत विचित्र हो, जैसे उसने पहली बार उसे सुना हो मैं चाहता था यही रहूँ । लेकिन वे हम चाहते नहीं ।

—वे आह !—बिली ने कहा ।

वे अनायास हमन चारों ओर देखा । कोई भी न था हालाँकि वे हर जगह हर समय हमारे सग थे । हमारे बाहर उतने ही, जितने भीतर

—तुम यही थे, जब जारिंग हिल में फसाद हुआ !—बिली के सफेद दाँत धमक उठे ।

—नहीं, तब मैं रुदन नहीं आया था ।

—मैं वही रहता हूँ । तीन दिन तक एक अँग्रेज लड़की के घर छिपा रहा । जब वे एक-एक नीग्रो की चुनकर लिच कर रह थे, मैं उस सफेद 'ह्वोर' के सग मोठा रहा । उसने सोचा था, मैं उसे चाहता हूँ लेकिन मैंने उस उसके बाद देखा तक नहीं । उसे नहीं मालूम, मैं बदला ले रहा था उसकी सफेद चमड़ी के सग और उसने हाथ

से इशारा किया—अश्लील उतना नहीं जितना जुगुप्सामय ।

दूर कारखानों के धुएँ के पर ट्यूब-स्टेशन की बत्तियाँ चमक रही थीं । लगता था, जैसे घरती का कोई टुकड़ा अचानक बीच में से फट गया हो और उसके नीचे से हीरा की चमकमाती झालर ऊपर निकल आई हो ।

—तुम यहाँ पड़ते हो ?

—हाँ लेकिन गरमिया की छुट्टिया में काम करता हूँ । पहले डास के लिए जाता था ।—जाज ने कहा । उसका स्वर भी काफी उदास था, जैसे काम न मिलने का दुःख अभी पूरी तरह न मिटा हो ।

—काटीनण्ट म क्या नहा जाते, यार ?—बिली ने कहा—मेरा एक हास्त जमनी गया है, वहा नौकरियों की कमी नहीं है । सुना है, वहा लड़कियाँ काले रंग के पीछे भागती हैं—सिफ इशारा करने की दर है ।

—शायद पिछली लड़ाई की वजह से—जाज ने कहा—कुछ साल पहले मेरे फादर वहाँ गये थे । कहते थे वही आदमी नजर नहीं आता । हर तरफ औरतें

—ओह, हाऊ आई बिग फार एनदर बार एनदर एण्ड देन एनदर ?—बिली ने कहा ।

जाज ने आश्चर्य से बिली की ओर देखा, फिर मेरी ओर । वह शायद कुछ कहना चाहता था, किन्तु फिर कुछ सोचकर उसने सिफ सिर हिला दिया । कहा कुछ भी नहीं ।

और शायद यह ठीक था । छन्द की उस खामोश गरम रात में 'बार बहुत दूर की चीज लगती थी—अथहीन और हास्यास्पद । उस पर बहस करना बर्बाद भी मानी नहा रसता था । हुआ भी नहीं । हम बहुत जल्द बिली की बात को भूल गए । उसके बाद हम देर तक अलग-अलग देगा की लड़कियाँ के बारे में बातें करते रह । लगता था, जैसे पुरानी मूल के भीतर से एकाएक नई मूल जाग गई हो ।

मैं स्पेन जाना चाहता था । उधर की लड़कियाँ 'आह' 'पगन' लेकिन साला ने बीमा नहा लिया । अपना दंग की कुँवारियाँ की बर्जिनियों का उन्हें बहुत मयाल है । स्पेन बिली ने जस कुछ बहुत पुरानी राग बुरद गी हा ।

—तुम गय हा ?

—मैं जाना चाहता था—बहुत पहले ।

—सिबिल बार म ?

—तब मैं बहुत छात्र था ।

—सिबिल बार हमारा देगा म शायद और जान अचानक बुप हा गया । उसने पु घराने बाला पर पसीन की बूँदें चमक रहा था ।

—आई डाउट साइड सिबिल बार—बिली ने कहा ।

हमारी बात फिर वही आ अटकी थी—बगाटेल की उस गाली की तरह जो चारा ओर घूम फिरकर एक ही छेद में आ फँसती है। हमारा उससे कोई वास्ता नहीं था। वह लन्दन की बहुत खामोश और गरम रात थी और बार बहुत दूर की चीज लगती थी।

रास्त में दाईं ओर एक पुरानी टबन से हँसी और संगीत का मित्रजुला स्वर बह आता था। टबन के पीछे गली गली के अँधेरे कोने में दो छायाएँ—एक दूसरे से लिपटी हुई—बार-बार हिल उठती थी। ऊपर उठी हुई स्कट के नीचे एक सुडौल नगी टांग रह रहकर काँप जाती थी और फिर टटोलते हुए बिहल हाथों के नीचे भिच जाती थी।

—चलो, कुछ बियर पी जाए। बिना कुछ पिये मैं ठीक स सा नहीं सकता—
विली ने कहा।

मुझे हल्की-सी दुविधा हुई। मेरी जेब में आखिरी दो शिलिंग पड़े थे, जो मैंने ट्यूब के लिए बचा रखे थे। जाज का हाल ज्यादा बेहतर नहीं दिखाई दिया। विली के प्रस्ताव की मुना अनमुना निग यह अँधेरे में सीटी बजा रहा था।

विली शायद समझ गया। जाज के कंधे पर हाथ रखकर उसने कहा—फिर की कोई बात नहीं। यहाँ के लोग मुझे जानते हैं—एक जमाने में मैं यहाँ अक्सर आता था।

जाज का उपेक्षा भाव जवानक मिट गया, एक अजीब बचकानी-सी छुशी चेहरे पर फल गई।

—मैं थोड़ी-सी जिन लूँगा। आगा है, कल मेरा मित्र कुछ शिलिंग उधार दे सकेगा।

हमारे पाँव पब की ओर मुड़ गए।

दरवाजा खोलते ही आवाजों के एक गरम उफनते रेतें न हम अपने में समेट लिया—घुएँ में धुँसती, उलझती, एक-दूसरी को छीलती आवाजें, जो वही निस्तार न पाकर गँदले, उबलते पानी की तरह एक ही गढ़े में इकट्ठा होती गई थी। रोगनी थी, मडिम, घुएँ के घेरे में घिरी, जिसमें किसी एक चेहरे को पहचानना, उसे दूसरे से अलग कर पाना असम्भव था।

नीचे बेसमेंट था, कुछ सीढ़ियाँ उतरकर। कमी-कमार नाचते हुए जोड़ों की छायाएँ जीने पर गिर जाती थी। कमी बेडोल और लम्बी, कमी इतनी छोटी कि लगता जैसे पारदर्शी जल-तले मछलियाँ ऊपर उठती हो और दूसरे क्षण ही डूब जाती हों।

हम कोने की मेज के इद गिर्द बैठ गए। विली कुछ देर बाद बियर की तीन बोतलें और गिलास ले आया। हम पीने लगे।

—पहले मैं यहाँ काम करता था। कुछ महीने रहा, फिर मन उब गया। इस पब का मालिक इटालियन है। बुरा नहीं है, लेकिन डरता बहुत है। इस तरफ आम तो तुमसे मिलवाऊँगा—विली ने कहा।

—काफी टिप मिलता होगा ?

अंशेज ज्यादा नहीं दत । बहुत हुआ तो एक छ पेनी । लेकिन काण्टीनेण्ट से जा टूरिस्ट आते हैं, उनकी बात दूसरी है । दिल उनका खुला होता है, सविन बेवकूफ व भी होते हैं ।

—युंके अब कोई भी काम मिल जाए मैं कर लूंगा—जाज ने कहा ।

भीतर की गांठा-बीच बियर न रास्ता बनाया है—जहाँ पहले बंद सीक्का था, अब वहाँ फड़फड़ाते पत्त हैं—उड़ने को आतुर ।

मैं अब ज्यादा दिन यहाँ नहीं रहूँगा—विली ने कहा—मेरा दोस्त जमनी मे है । हा सका तो एक दिन वहाँ जाऊँगा—विली ने गिलास खरम कर दिया । फिर उसे मेज पर उलटा कर दिया, एक भी बुद नहीं गिरी । बियर की क्षाम ग्राही पर छितर आई थी, जसे रेत के कण हूँ—गीते और सफेद ।

मैं जमनी को नहीं सहन कर सकता—जाज ने फिर कहा ।

—देयर इज, रियल लाइफ ! हर जाने पर जवान स्त्रियाँ खड़ी रहती हैं ?
—विली ने कहा

—मैं जमनी को सहन नहीं कर सकता—जाज ने कहा ।

मैं हसने लगा ।

जाज न मरी और पेला । उसकी आँखें बहुत निरीह-सी हो आई थी ।

—सब लोग एक जस ही हैं—विली ने कहा ।

—सविन के लोग जाज न इगारा किया—बाहर का ओर दरवाजे के बाहर, जहाँ महज अंधेरा था ।

—व लोग भी तुम सिफ डरते हो—विली ने कहा ।

एक पल के लिए जाज का हाथ, जो गिलास पर टिका था मिहर गया ।

—यू आर ए राटर—जाज ने कहा ।

उसके स्वर में कुछ रहा होगा कि विली का चेहरा अचानक पीला पड़ गया ।

—जहाँ, मैं काफी बुरा आदमी हूँ । इस स्पष्ट को दुबारा मुह पर कभी न लाना ।

—आह ! सचमुच ?—जाज की आवाज काँप रही थी, जस वह हवा में स्पष्टी रस्सी पर चल रही हो और नीच गड़गड़ा हो, जहाँ वह कभी भी पिमल सक्ती है—ग्रेस यू आर ए राटर !

विली गिलास लेकर अचानक सड़ा हो गया जस यह कोई क्षण हो और नियम व अनुगार उस सड़ा होना ही हो ।

—एक बार फिर कहा—उसका गिलास जाज के सिर के पास सरक आया था । काँप पर बिजली बियर का फेन रागना में चमक रहा था ।

जाज की अघमूर्दी आँखें उस पर उठ आई—यस, यू आर ए राटर जाल राइट ।

गिलास-तले उसका भिर हिल रहा था । आदमी का सिर पूरे घड से अलग होकर केवल अपनी धुरी पर इस तरह काप सकता है, यह मुझे काफी हास्यान्यद-सा लगा ।

विली ने गहरे विस्मय से उसकी ओर देखा और फिर हँसने लगा—शायद तुम ठीक हो मे दि, आई एम—बह फिर अपनी कुरमी पर बठ गया ।

हमन ज्यादा नहीं पी थी—सिफ किसी ने हमारे इद गिद एक भयावह-सा फटा डाल दिया था, जिसे छूते ही खून बहने लगता था ।

कुछ देर बाद पब का मालिक हमारी मेज के पास आकर खड़ा हो गया । गोल मटोल देह, किन्तु काफी सुगठित, रंग काफी पीला । छोटे-से माथे पर तेल से मीगे, स्याह घुँघराते बाल झुक आए थे ।

—और चाहिए ?—उसने मुस्कराते हुए विली की ओर देखा ।

—अभी है बाद मे—विली ने कहा । उसके स्वर मे पहले सा तनाव नहीं था, हालांकि तिरस्कार का स्पष्ट हमसे छिपा नहीं रह सका—ये मेरे दोस्त हैं ।

इटालियन ने हमारी ओर देखा, कि तु उसकी माखो मे कोई उत्सुकता नहीं जगी ।

—विली हमारे यहाँ काम करता था—उसने गब से विली की ओर देखा, माना उस हम लोग विली की तुलना में काफी तुच्छ जान पड़ रहे थे ।

—बाफी देर से हो ?—उसने पूछा ।

जाज चुप रहा (ईश्वर भला करे, उसका सिर अब नहीं काँप रहा था) । मैं खाली गिलास से खेल रहा था, मेर हाथ रुक गए ।

—सिफ कुछ दिन मैंन कहा ।

—इज्जिट फाइन ?

—इट इज फाइन—मैंन कहा ।

—कोई काम ?—वह मेरे कमीज के कालर को देख रहा था । न जान कितने देशों की धूल उस पर जमा थी ।

—अभी कुछ नहीं

—विली को काम मिल सकता है, लेकिन यह एक जगह टिकता नहीं—उसने विली की ओर देखा, कुछ प्यार से, कुछ उलाहने से ।

—मैं तुम्हारे यहाँ रह सकता था । सिफ तुम विली ने कहा ।

इटालियन का चेहरा अचानक धुब्ध-सा हो आया—तुम जानते हो उसने कहा ।

—आह—विली न कहा—तुम सब लोग एक जैसे ही हो ।

—बहुत गरमी है—जाज न कहा ।

—तुम जानते हो इटालियन ने बहुत आग्रह से कहा ।

—न मैं कुछ भी नहीं जानता। मैं सिर्फ इतना जानता हूँ कि मैं अभी दाम बरूँगा—विली ने अपनी कुरमी पीछे ठेल दी और उठ गया हुआ।

किंतु इटालियन ने क्षण्टकर उस बच्चा से पकड़ लिया। उसकी आँखें सहसा आश्रान्त-भी हो उठी। विली की लम्बी पतली देह के सम्मुख उसका ठिगना गेंदनुमा शरीर गवाग्व बहुत दयनीय-सा दीसने लगा।

—बिगो ! तुम जानते हो यहाँ पर

विली ने धक्का देकर हाटके से अपना बच्चा छुड़ा लिया। उसकी पीठ हमारी मेज के सहारे टिक गई। जाज ने बिबर की मोलत को हाथा से पकड़ लिया। एक क्षण के लिए लगा, जैसे हम किसी जहाज के डगमगाते डक पर बैठे ह।

आरकेस्ट्रा घुसू होते ही पब के अलग-अलग कोना-ब-लडके-लडकियों के जोड़े बेसमष्ट की सीड़ियों पर उतरने लगे थे।

इटालियन न पीछे मुड़कर भी नहीं देखा। वह सिर्फ हवा में साब रहा था।

विली बही भी नहीं था।

उसका खाली गिलास हमारी मेज पर रखा था। जाज न बाँतल से हाथ उठा लिया। उसकी ट्पेली के पसीने की पूरी छाप काँच पर एक सफेद धाब की तरह अंकित हो गई थी।

इटालियन ने हमारी ओर दया। लगा, जैसे वह हमें पहचान न पा रहा हो। फिर अलग भाव से दोनों हाथ फला लिए थे।

—पागल है है नहीं ?

हम चुप रहे। उस समय वहाँ कुछ था जिसका हमसे कुछ सम्बन्ध नहीं था जिसकी भूलन छाया चुपचाप हमारे बीच आसिमी थी। वह भारी-थके कदमों से काउण्टर की ओर मुड़ गया।

बहुत गरमी है—जाज ने कहा—तुम्हारे पास कितने पैसे हैं ?

—बिगो ?—मुझे अचानक खीझ-सी हो आई सब पर।

—डड गिलिंग मेरे पास है। इसमें लागर आ सकती है ?—उसने पूछा।

मैं विली के खाली गिलास को देख रहा था। कहाँ हो सकता है ?

भद्विभ रोशनी के नीचे ज़तो और सडिलो की सटखटाहट, इद विद टूटती, वे शक्ल आवाजों का सलाब फल गया था, जिसके एक छोर पर हम थे—एक मेज जाज, लागर के दो गिलास। सब-कुछ बसा ही था जसा हमने पहले-पहल देखा था।

मिफ अब एक कुरमी खाली थी।

—पायद वह नाराज था मैं अपने को रोक नहीं सका—जाज ने कहा।

—तुमने उसे कुछ भी नहीं कहा ?

—मैं अपने को रोक नहीं सकता—उसने मेज पर पड़ा मेरा हाथ ओर से पकड़

लिया। मरी अँगुलिया उसकी हथेलियों-तले चिपचिपाने लगी।

—तुम्हें नहीं मालूम मुझे बार्क्सिंग का बहुत शौक है। जब मैं पहले पहल लन्दन आया था और बेकार नहीं था तो मैं हर रोज बार्क्सिंग के लिए जाता था। लेकिन मैं आज तक एक बार भी नहीं जीत सका हूँ। सुनते हो, एक बार भी नहीं। मुझमें एक अजीब तनाव-सा फलने लगा है। मैं प्रतीक्षा करता हूँ कुछ लम्हा तक, कि दूसरा आदमी मुझे हिट करे और जब वह नहीं करता तो मेरा खून छीलने लगता है। मैं आने वाले खतर का मुँह नहीं जोह सकता। ठीक मौका आन से पहले ही मैं अघाघुघ दौट पड़ता हूँ हालांकि मैं जानता हूँ, यह गलत है कि लड़ना इस तरह नहीं हाता। और इसीलिए मैं घर से भागकर यहाँ आ गया हूँ—मैं अपन पिता की तरह प्रतीक्षा नहीं कर सकता।

—और वह तुम्हारे पिता किसकी प्रतीक्षा कर रहे हैं ?

—मुझे नहीं मालूम मुझे राजनीति में कोई दिलचस्पी नहीं है। उसका माया लागर के गिलास के पीछे छिप गया।

मैंने अपना हाथ धीरे से छड़ा लिया वह पसीन में भीगा था। मैं उसे अपन पास ले आया, जैसे वह कोई पालतू चीज हो—अँगुलियों से मुँचा हुआ एक सफ़ेद मांस का लोथ, उसके ऊपर भूर बाल, बहुत-से बाल, जो उसके स्पर्श से अभी तक दबे थे। और मैंने सोचा, हम सबकुछ कितनी कम बार अपने हाथों का इस तरह देखा है, जैसे वे हैं, जैसे वे असल में हैं और तब भ्रम हाता है कि जो चीज उनकी पकड़ में आएगी वह हमारी नहीं हो सकती।

—जानते हो, मैंने बिली को राटर क्या कहा ?

—इट इज नॉथिंग—मैं उसके चेहरे को सीधी आँखों से नहीं देख पा रहा था।

—क्याकि असल में मैं खुद एक हूँ। मैं अभी तुमसे कहा था कि मैं अपन पिता की बहुत ब्रदर करता हूँ (हालांकि यह उसने मुझे कभी नहीं कहा था) तुम उन्हें नहीं जानते। वह जीवित भी हैं या नहीं मुझे नहीं मालूम। वे उनका पीछे थे।

—व कौन ?

—वे एक बहुत ही ठंडा आतक साप की कुण्डली-सा उसकी आँखा में बठ गया था।

तुमने कभी नहीं देखा—उसने मेरे हाथ को अपनी हथलियों में बहुत ही सख्ती से जकड़ लिया। उसके बाले चहरे पर सिर्फ सफ़ेद दाँत नजर आ रहे थे—एक कान से दूसरे कान तक खिंचे हुए—और मैं समझ नहीं सका कि वह हँस रहा है या सिर्फ एक भूले धाग में उसके दाँत खुद-ब-खुद खुले रह गए हैं।

—मैं यहाँ सुरक्षित हूँ एण्ड फॉर दट आई हट हिम, आई हट हिम लाइक हेल।

हम चुपचाप पीते रहे। भरे आगे घड़ी की डायल थी जिस मैंने पहली बार देखा था। मैं सोचता हूँ मुझ एक सिगरेट पीना चाहिए मुझे लगता है मैंने लम्बी मुद्दत से सिगरेट नहीं पी।

—तुम क्या सोचते हो?—उसके स्वर में बच्चा का सा आग्रह था।

—कुछ भी तो नहीं।

—यदि तुम मेरी जगह होते, तो क्या करते?

—तुम्हारी जगह पर?—मैं हँसन लगा। मुझे आज तक यह भी नहीं मालूम कि मुझे अपनी जगह पर क्या करना चाहिए।

—लेकिन तुमने अवश्य निणय कर लिया होगा अपना देश छोड़ने से पहले?

—शायद बचने के लिए।

—किससे बचने के लिए?

—अपने देश के लोगो से शायद और चीजा से भी जो अब मुझे याद नहीं।

और तब उस क्षण मुझे लगा की ज्यादा पीना शायद सम्भव नहीं होगा। मुद्दह से कुछ भी नहीं खाया था। खाली अतड्डिया की लागर भिगी गई थी। एक नीली-हरी सी धुंध वही भीतर रास्ता टटोलती हुई हर उस खिड़की के आगे जमा हो गई थी जहाँ से मैं बाहर दल सकता था। वहाँ घड़ी की डायल थी— बहुत सफेद हवा में डोलते एक बहुत पुराने मुरदे की मानिद, जो न जाने कब से मेरे सग घिसट रहा था

तुम हँस क्यों रहे हो?

मुझे यह जानकर काफी आश्चर्य हुआ कि मैं हँस रहा हूँ और जब मैंने जान लिया कि मैं हँस रहा हूँ तो फिर अपने को रोकना बेमानी-सा लगा।

—क्या बात है?

—कुछ नहीं, कुछ याद आ गया था—मैंने टालते हुए कहा। याद मुझे कुछ भी नहीं आया था।

—क्या याद आ गया था?—वह मुझ पर झुन आया जैसे अभी गले पर लटन जाणगा—बताओ क्या याद आ गया था?

—जानते हो तीन दिन पहले मैं जेल जाने वाला था। मैं बाल-बाल बच गया।

असह्य दबाव तले कोई भी चीज याद की जा सकती है और मुझे सबमुच तीन दिन पहल की एक अजीब घटना याद हो आई।

हाँ सबमुच मैं बाल-बाल बच गया (मुझे इस तरह के मुहावरे बहुत पसंद हैं, और मैं उन्हें मोक-बेमोके दुहराता रहता हूँ)।

—जानत हो लन्दन में मैं अपन एक दोस्त के घर ठहरा हूँ। पिछल कुछ दिना से उसकी गल फ़ैड फ़िनलड से उसका सग रहन आई थी। कमरा एक ही था, इसलिए

मैं बाहर रहता था। मैं दिन भर म्यूजियम की लाइब्रेरी में रहता और रात को सान के लिए यूस्टेण्ड स्टेशन चला जाता था। हर रोज नियत समय पर मेरा मित्र मुझे कुछ शिल्लिंग दे जाता था। उस शाम किसी कारणवश वह मेरे पास नहीं जा सका। मेरे पास सिर्फ दस पेनी बचे थे। दिन भर म्यूजियम में बड़े मूख का कुछ पता नहीं चला लेकिन रात होते-होते मैं अपने को नहीं रोक सका। उस समय तब किंग्स त्रास के सस्ते रेस्तरा बन्द हो चुके थे और वस म बैठ कर शहर के 'सेण्टर' में जाने की सामर्थ्य नहीं थी। मैं काफी देर तक वारेन स्ट्रीट स्टेशन के इद गिद बद्दहवास-सा घूमता रहा। आखिर में एक ग्रीक रेस्तरा दिखाई दिया, जो ऊपर से काफी सस्ता दिखाई देता था। आलू के चिप्स और टोस्ट का आर्डर देकर मैं भीतर बैठ गया। तुम जानते हो ये चीजें सबसे सस्ती होती हैं—ज यादा से-ज यादा आठ पेनी। मैं काफी निश्चित था। कुछ दर बाद अनायास मेरी निगाह सामने दीवार पर जा पड़ी प्राइम लिस्ट पर जिसे शुरू में घबराहट के कारण मैं नहीं देख सका था। टोस्ट और चिप्स के दाम डेढ़ शिल्लिंग थे और मेरे पास दस पेनी से आधी पेनी भी ज यादा नहीं। फिर जानते हो, मैंने क्या किया? मैं एकदम खड़ा हो गया (इस तरह और मैं जाज के सम्मुख खड़ा हो गया) और जोर से चिल्लाया, गुड ईवनिंग? अरे, बाहर कैसे खड़े हो? (और मैं सचमुच चिल्ला रहा था—जाज के मुँह पर) होटल का मालिक उत्सुकता से मेरी ओर देख रहा था। मेरे एक दोस्त बाहर खड़े हैं उनसे मिलकर अभी जाता हूँ। टोस्ट और चिप्स की प्लेट मेज पर छोड़कर मैं आगे बढ़ा, दरवाजे की तरफ बिल्कुल सधे कदमों से इस तरह (और मैं सचमुच चल रहा था—मेजा के बीच) और दरवाजा पार करते ही तुम जानते हो, मैंने फिर मुड़कर नहीं देखा (मैं फिर मुड़कर जाज के पास आ गया था लागर का एक लम्बा घूँट पीकर मैं बैठ गया था) मैं बहुत देर तक भागता रहा था।

—और वह तुम्हारे पीछे था?

—नहीं? हँसी की बात तो यही है कि वह मर पीछे नहीं था और फिर भी मैं एक अँधेरी गली से दूसरी अँधेरी गली में भागता रहा था और देखो मरी जब म दस पेनी बच गए थे, हालांकि मेरी भूख बिल्कुल मिट गई थी।

—तुम भी खूब हो!—जाज ने हँसते हुए कहा।

मुझे काफी खुशी हुई कि वह हँस रहा है। मेरा मित्र और उसकी प्रेमिका भी इसी तरह हँसने लगे थे, जब दूसरे दिन मैंने उन्हें यह घटना सुनाई थी। हालांकि मुझे हमेशा आश्चर्य होता है कि लोग, विशेषकर वे लोग जिन पर ऐसी घटनाएँ बीतती हैं बाद में किस तरह आसानी से उन्हें हल्का-सा रग दे देते हैं। क्याकि देखो, उम घड़ी में, बिल्कुल उस घड़ी में, जब घटना सचमुच घट रही होती है आदमी कितना बद्द हवास-सा हो जाता है, बगलों से ठड़ा पसीना टपकता हुआ कमीज से चिपक जाता है और भीतर विह्वल-सी कातरता भर आती है बावजूद हमारी उम्र के बावजूद हमारे

अनुमन के। मैं तो जानता हूँ कि उस रात जब मैं दस पेनी जैव म दवाकर अ घेरी राख पर भाग रहा था, तो बाई बार-बार मुझसे कह रहा था—यू पविंग फूल, यू ईडिपट यू

—तुम भी कमाल हो !—जाज ने कहा। जब उसने तीसरी बार यही बात कही, तो मुझसे नहीं बठा गया। आँखा के आगे घड़ी का डायल फिर घूमने लगा और मैं टायलेंट की तरफ बढ़ गया। टायलेंट नीचे बेगमेण्ट के था। मैं जल्दी-जल्दी सीढ़ियाँ उतरने लगा। मुझे डर था, वही सीढ़ियाँ पर कुछ न हो जाए। मैं मुँह पर हाथ रख लिया और बहुत रहस्यमय ढंग से मुस्कराने लगा।

हुआ कुछ भी नहीं—न सीढ़ियों पर, न बाग बगिच में, जिस पर मैं देर तक भुका रहा था—इस इन्तजार में कि कुछ बाहर आयेगा। और अज घड़ी की मफेड डायल नहीं घूम रही थी। मैंने पम्प गाल दिया था ताकि मैं निश्चिन्त होकर एक एक चीज याद कर सकूँ और अपनी आवाज न सुन सकूँ (रात की इस घड़ी में मैं यहाँ क्या कर रहा हूँ ? नहीं ऐसा नहीं चल्गा, मुझे सिलसिल से ब्योरेवार हर चीज याद करनी चाहिये—जब यह बहुत महत्वपूर्ण हो, जैसे बाई बड़ा 'सत्य' इस पर निर्भर हो)। 'ब्योरेवार' यह शब्द मुझे जँच गया था और मैं बार-बार इस खान पर फेर रहा था क्योंकि मैं कितनी देर तक चीजाँ को याद करने का बजाय यही दुहराता रहा कि मुझे हर चीज 'बारबार' याद करनी चाहिए।

टायलेंट से बाहर आया, तो पाँव ठिठके-से रह गये। नाचते हुए जोड़ों के भँवर में घिर गया था। लोग धक्का देकर जागे निरन्त्र जात थे और मैं कभी दायें कभी बायें एक कटपुतली की तरह घूम जाता था। जब कभी अपने पाँव जमान का घल करता तो डॉसिंग पल्लो परी-तले सिक्कड़ने लगता और लगता जैसे मैं एक बहुत तबी से घमने लट्ट पर खड़ा हूँ। तभी मुझे अपने कंधों पर एक अजीब-सा बोझ मालूम हुआ।

—तुम यहाँ हो ?—विली की दाढ़ी मेरे माँके को छू रही थी—और जाज ?

—वही है—मैं ऊपर की आर इशारा किया।

जिस लड़की के सग वह नाच रहा था उसका चेहरा उसके सीन तले छिप गया था—सिफ उसके ब्लोण्ड बाल दिखाई दे जाते थे।

—तुम आओगे नहीं ? तुम्हारी लागर मैंने कहा।

—आऊँगा। तुम नाचाग नहीं ?

इस बार लड़की ने चहरा ऊपर उठाया। उसके नंगे कंधों पर पाउडर का हल्का निशान था और उसने सस्ली छोट की समर-स्वर्ण पहन रखी थी। हाँठ पर पसीन की बूँदें थी जो शामद देर तक नाचने का कारण लिपस्टिक का ऊपर छितरा आई थी।

मीड में सड़े रहना असम्भव था। वे मेरे नजदीक ही बहुत धीम कदमा से नाचने लगे थे—एक बहुत लम्बे घेरे के गीतर—कभी विली का सिर मेरे पास सरक आता,

कभी लड़की के इलाफ़ बाँध ।

—कभी है ?—विली न धीरे से उसके बालों को झिझोड़ दिया । वह हँस रही थी ।

—यह बहुत खराब है है न ?—उसने हँसते हुए कहा और पहली बार मुँके लगा, जैसे उसकी आँखें साँती-जागती गुड़िया-सी हैं, जो सिर पीछे होते ही मुँद जाएँगी और सीधा होंते ही खुल जाएँगी ।

—नाचोगे ? मे बि विद हर !—विली न कहा ।

वे दोनों घूम रहे थे बहुत ही हलके स्टेप्स के संग । जब जिसका चेहरा मेरे पास आता, वह मेरे बालों में कुछ कह देता ।

—क्यों हमज़ोली वहाँ बैठे हैं मर जाएँगे मुँके उसके संग देखकर ।—विली ने कहा ।

—तुम नाचोगे नहीं ? मे बि विद मी—लड़की न कहा ।

—वह इटालियन मना करता था—मैंन विली से कहा ।

—मरने दो उसे—विली ने कहा ।

आरकेस्ट्रा की उस घिसी पिटी धुन में जाने कसे मौत्साट के 'लिटलनाइट म्यूजिक की हल्की-सी आहट ऊपर तिर जाती थी—महज आधे मिनट के लिए—और तब मुँके लगता था, जैसे किमी ने मेरी साँस को घागे की तरह अँगुली में लपेटकर खींच लिया हो ।

—जिन पिओगे ? पसे यह दगी—विली ने धीमे स्वर में फुसफुसाते हुए कहा ।

—मे बि विद मी ।—लड़की न वैसे ही उदासीन स्वर में कहा ।

इससे पहले कि मैं कुछ कह पाता, नाचते हुए जोड़ा की भीड़ उन्हें मुँसे बहुत दूर घसीट ले गई । वे अचानक आँखों से ओझल हो गये ।

मेरा सिर अब भी घूम रहा था, किन्तु यह चकराहट बँसी नहीं थी, जमी टायलट जान से पहले । अब इस चकराहट में एक विचित्र-सा हलकापन था, जैसे धुँध की जगह वहाँ सिर्फ छितरे, बरसे हुये बादल हो और असीम खुलापन हो ।

भीड़ के भीतर रास्ता टटोलना सुगम नहीं था । बेसमेण्ट की सीढ़ियों के पास आकर मैं रुक गया । एक अदृश्य इच्छा हुई वही सीढ़ियाँ पर लेट जाने की, सो जाने की ।

—हलो !—मेरा हाथ को किसी ने जकड़ लिया था । पीछे मुड़कर देखा, पव या माल्कि इटालियन सड़ा था । शायद वह दूर से भागकर मेरे पास आया था । हाथों पर कमीज की मुड़ी हुई बाँह लटक आई थी । वह हाफ रहा था, जैसे आस-पास की हवा उसने साँस लेने के लिए बिल्कुल नाकाफी हो ।

—मुनो वह तुम्हारा दोस्त है ?

मैंने कंधे सिकोड़ लिये ।

—क्या तुम उसे यहाँ से नहीं ले जा सकते—मेरा मतलब है, इस जगह में ?

हमारे चारा ओर गायत हुए लोगों का दायरा कभी बहुत तंग हो जाता था।
एकदम फल जाता था। वह व आगे कोई व्यक्ति लाउडस्पीकर को दोनो हाथों से पकड़ कर गाने लगा था।

हम दोना के बीच हमारी निगाहों के अलावा बाई और नहीं था।

—तुम क्यों नहीं वह देते?—मैंने कहा।

—मैं उससे कुछ भी नहीं कह सकता वह मेरी बात कभी नहीं मानेगा।

—लेकिन क्यों वह यहाँ क्या नहीं रह सकता?

—यह जगह उसके लिए ठीक नहीं है—एक अवसर-मी-बातरता उसके स्वर उभर आई—मैं उसे पहले भी कई बार मना कर चुका हूँ।

मेरे मन में फिर इच्छा हुई—वही सीढ़ियों पर सेट जाने की।

—देरिये—मैं कुछ भी नहीं कर सकता। हमारी मुलाकात कुछ घंटे पहले हुई थी आप विश्वास नहीं करते?—एक क्षण के लिये मुझे उसके दयनीय चेहरे से घृणा हुई जैसे मैं किसी गिलगिली-सी चालवा छु लिया हो—मैं उसे ठीक से भी नहीं जानता यह भी नहीं जानता, उसका पूरा नाम क्या है—मैंने कुछ इस तरह कहा, जैसे जिनमें पूरा नाम जानना बहुत महत्वपूर्ण हो, जैसे उसके बिना कुछ भी नहीं हो सकता।

एकाएक उसने मेरे दोनो हाथ पकड़ लिये। वह बिल्कुल मेरे पास सरक आया।

—तुम तुम यही रहोगे?

—हाँ—मैंने सिर हिलाया—जब तक तुम बाहर न फँक दो।

उसकी पकड़ ढीली हो गई। किंतु उसकी आँखें अब भी मुझे टटोल रही थीं मैं सीढ़ियाँ चढ़ने लगा। मुझे बराबर यह लगता रहा कि अब भी उसने मुझे पीछे पकड़ रखा है। वह ईश्वर मैं एक सिगरेट पी सकूँगा। लगता है, मैंने एक मुहूर्त सिगरेट नहीं पी।

जब मैं चक्के खाता और अपनी सामर्थ्य के अनुसार दूसरों को धक्के देता था अपनी नेत्रों के पास पहुँचा, तो आज सब के प्रति तटस्थ होकर सो रहा था। उस सिर मज के बिचारे पर टिका था, उसकी देह कुरसी पर सिकुड़ गई थी, अधमूँदी की आँकड़ों के बीच सफेद पुतलियाँ मली हुई के फाही-सी उभर आई थी। पहले मुझे भ्रम हुआ वह मुझे देख रहा है, जो सच नहीं था। उसने होठों के कोरा पर धूँक वह आया था। धाक की महीन रेखा-सा, सूखा और सफेद, जो मैंने कमाल से सबकी आँखों में बचाव पाछ दिया।

उस रात पहली बार मुझे लगा कि वह उम्र में बहुत छोटा है—हास्यास्पद से छोटा और अनजान।

मेरा यिलास खाली था। मैंने मोड़ी-सी लागर उसके गिलास से अपने गिलास में उड़ेल ली। एक क्षण के लिए लगा, जैसे वह अधमूँदी आँखों से मुझे देखता।

मुस्करा रहा है और उसमे हलका-सा व्यग्य छिपा है। शायद वन रहा है, मैंने सोचा, सो नहीं रहा और मुझे देख रहा है। लेकिन शायद यह भी मेरा भ्रम हो, मैंने सोचा और पीन लगा। फिर मुझे कुछ अवेला-सा लगा। सोचा, अपने मित्र को टेलीफोन कर दूँ हो सकता है, उसकी गल फ्रैंड अब तक चली गई हो और मैं उसके कमरे में सो सकता हूँ। लेकिन यदि वह हुई, तो उसे बुरा लगेगा। इसे उठा दूँ, यह कब तक ऐसे सोता रहेगा, मैंने सोचा। हतनी उम्र में घर से भाग आया है और अब—अब सो रहा है। मुझे एक बहुत पुरानी बात याद हो आई। यूरोप आने से पहले वह घर में आखिरी रात थी। मौ बार-बार उठती थी और पानी पीने के बहाने मुझे देखती थी। अपने घर की छत पर मेरी आखिरी रात थी—वह जुलाई की रात थी और मुझे दूसरे दिन चले जाना था और बाबू मेरे बिस्तर के पास खड़े रहे थे, सोचा था, मैं साँ रहा हूँ मैं सब-कुछ देख सकता था वैसे भी हमारे शहर में जुलाई की रातें बहुत उजली होती थी—आखें मूँद भी लो, तो भी सब-कुछ दीखता था। फिर सहसा दृष्टि हुई कि मैं बाहर चला जाऊँ यह बहुत आसान था। पहले मैं अपनी कुरसी से उठ खड़ा हूँगा, फिर दरवाजा खोलूँगा और बाहर चला आऊँगा जस्ट टु कम आउट यह बड़ी बात है मैंने सोचा उनके मुँह पर धूक फिर बह आया था, हाँसे से बहता हुआ ठुडकी तक, जहाँ नीले काटो से बाल उग आए थे मैं रुमाल से फिर उसका मुँह पोछ देता हूँ।

आवाजें एक बदहवास-सी थीं।

बेसमेण्ट की दीवार पर छायाएँ डोलती जाती हैं—एक भयंकर दुस्वप्न-सी। कुरसिया को खींचने की आवाज, अटपटी-सी हँसी लेकिन है कुछ नहीं। मैं उठता नहीं गिलास में अब भी लागर बची है और मैं उठ नहीं सकता और सब अचानक उस क्षण मुझे अपने में एक अजीब-सी शान्ति महसूस होती है घनी, चिलचिलाती, गरम रेत के अन्तहीन फलाव-सी और मैं उसे पकड़े रहता हूँ।

जस्ट टु कम आउट, जस्ट टु

मैं पूरी शक्ति से आज को निश्चिन्ने लगता हूँ।

वह एकदम हड़बड़ाकर उठ बैठा और विमूढ़ भाव से मुझे देखने लगा—कुछ कुछ उस ट्रेंड जानवर की तरह, जो ऐन मौके पर अपना 'पाठ' मूलकर आस-पास खड़े तमाशबीनों को देखने लगता है। फिर सहसा उसकी आँखें अजीब-सी आतव-भ्रस्त हो आईं।

—बात क्या है ?

—चलो यहाँ से चलना होगा।

—लेकिन क्या अभी ?

वह कुछ भी नहीं जानता। मैं जल्दी में निश्चय नहीं कर पा रहा था कि क्या

उस कुछ भी बताना उचित होगा।

—क्या मैं सो गया था?—उसने पूछा। न जाने मेरे चेहरे पर क्या था कि वह एकाएक शक्ति-सा हो उठा।

—यह शोर कसा है?

उसका चेहरा बिल्कुल बसा हा गया, जब हम सोडा फव्वारी के बाहर अंधेरे में खड़े थे। अब वह घड़ी कितनी दूर लगती है और कितनी अप्रामाणिक?

—हम चलना होगा बाहर।

बाहर रुदन की रात है हमारी प्रतीक्षा करती हुई—हम निगल जाने के लिए आतुर।

—विली कहाँ है? हम उसके बिना नहीं जा सकते।

—वह बह आ नहीं सकता।

पब का दरवाजा खुलता है कुछ लोग हड़बड़ाकर भीतर घुसते हैं।

दे आर देयर द डमड एक बहुत ही मही गाली और आवाजों मक्खिया की मिनमिनाहट की मानिंद अधीन।

—मैं उसका हाथ पकड़ घसीटता हूँ।

—मैं जाऊँगा नहीं

—तुम पागल तो नहीं हो?

—वे कहाँ हैं

—वे—मैं गुस्से में उसे उठा देता हूँ। वह बिल्कुल मेरे सामने लडा है—बताओ, वे कौन?—मैं उनके कंधे हिलाता हूँ और वह

—बोना, वे कौन?

—यू आर डक! उसने कहा और एक झटके से अपने को छुड़ा लिया।

गायन यह सब है मैं सोचा गायद मैंने बहुत पा ली है। इस सवाल से मुझे बहुत सात्वना मिलती है।

—तुम यही रहोगे?

—मैं वहीं भी रहूँ—उमन कहा।

—मुनो—मैं बीच की कुरसी हटान की चेष्टा करता हूँ।

—यू आर डक!—वह पाछे हट गया।

मैं जाने लगा। वह भी सविन मुझसे अलग। लगा उस यह कोई खेल है, जिसमें हा ध्यति आंसा पर पट्टी बांधकर चलने हैं और वे समझते हैं कि वे एक-दूसरे से दूर जा रहे हैं सविन दरबमल व एक-दूसरे से निकट सरबत आते हैं।

दरवाजे की तरफ पहुँचे मर्बे वाली हैं अपजली सिगरेटों के टाँपे, गाली गिलास और बाउने कुरसिया पर रथ शाम के अस्तकार, पग के एक जाने में गिरी हुई

लिपस्टिक की डिब्बी, जिसे हड़बड़ाहट में कोई स्त्री उठाना भूल गई थी और मुझे लगा, जैसे कोई घटना अचानक हुई होगी, बिल्कुल अप्रत्याशित रूप से, और सब लोग बिना किसी तयारी के भागती भीड़ के मेंबर में फँस गए हंगे।

विली कहाँ है ?

और यह इटालियन

आगे सोचना नहीं हुआ। दरवाजा झपाटे में खुला था और मुझे लगा, जैसे एक झटके से जाज मुझसे अलग हो गया है—आखिरी लमहे में (या सबसे गुरु के लमहे में)। मैंने कोणिश की कि उसे अपने से जकड़े रखूँ जसे यह अपन में एक महत्त्वपूर्ण चीज है, किन्तु मेरा सिर सनसनाता हुआ नीचे की तरफ धूम गया। जो हाथ मैंने जाज को पकड़ने के लिए फलाया था वह मुड़ता गया। छत, न यह छत नहीं है सिर्फ राशनी है—एक अजीब दग से झूलता हुआ बल्ब और मेरी बांह मुड़ती गई, (डोण्ट लट देम एक्सेप—एक फूटकारती-सी आवाज फिर वह भी नहीं) और वह एक तख्ते की तरह काँप रही थी और उसे मैं देख सकता था काँपत हुए जसे वह मेरी बांह न हो। कोई कसता जा रहा है आखिरी बिंदु तक और वहाँ पहुँचने से पहले ही टूट जाती है समूची देह में न, यह पीडा नहीं है पीडा की एक भीमा हाती है और उसके परे उसकी पहचान खत्म हो जाती है

आई से लीव हिम एलोन यह क्या इटालियन की आवाज है ? मुझे हलका सा आश्चर्य होता है। मेर ऊपर भुंके हुए चेहरे एक-एक करक उठ रहे हैं, लेकिन मैं उन्हें देख नहीं सकता सिवाय उनकी गरम सामा के, जो गन्ध को बार-बार छू जाती हैं—फिर वह भी नहीं।

—तुम उठ सकते हो ?

मैं अपनी बांह को देखता हूँ वह अब फग पर पड़ी है—आश्चर्य है, वह अब तक मुझसे जुड़ी है।

मैं बठ गया हूँ। फिर अनायास मेरे हाथ गाला पर चले जाते हैं। व गीले हैं व आसू हा सकते हैं इस पर मैं विश्वास नहीं कर मवा—वे बेहूदा दग से खुद-ब-खुद निकल आये थे और मुझे पता नहीं चला था कुछ उम ध्यक्ति की तरह जो सुबह अपने विस्तर को भीला पाता है और विश्वास नहीं कर पाता कि उसने ही

—कुछ फिओ !—इटालियन मेर इद गिद मँडरा रहा है।

—विली कहाँ है ?—मैंने पूछा।

वे उसे भार डाले मैं तुमने क्या कहा था ?—उसका गला अजीब दग से रूँप गया है।

—क्या कहा था ?—मुझ अब कुछ भी याद नहीं आता।

—तुम्हें मानूम है। तुम अगर उम अपन सग से जाते तो कुछ भी नहीं होता।

—कुछ भी नहीं होता स्वेनिन जो हुआ है, इसे कोई रोक सक्ता, यह कोई भी नहीं जानता ।

—अब मैं जाऊँगा—मैंने कहा ।

—वहाँ ?—इटालियन दरवाजे के सामने खड़ा था ।

—कहीं भी बाहर—चारों ओर देखा, आज वही भी नहीं था । मुझ हलकी सी खुशी होती है ।

—बाहर ?—इटालियन को शायद विश्वास नहीं हुआ, वह शायद निश्चय नहीं कर पा रहा था कि किस सीमा तक मैं पी चुका हूँ । किस सीमा तक वह मुझे गम्भीरता से ले सकता है ।

—इस समय नहीं वे बाहर खड़े हैं ।

—सुनो—मैंने बहुत सहज भाव में कहा—मैं कुछ भी नहीं करूँगा । मैं सीधा घर चला जाऊँगा ।

—वसी बात करते हो—इस बार वह एकदम समझ-सा उठा—वे जानते हैं तुम बिली के संग आये हो तुम उनसे बचकर नहीं जा सकते ।

बहस करना व्यर्थ था, वह मानेगा नहीं ।

बाहर एकाएक कालाहल बढ़ गया है । एक क्षण के लिए टैडी सी उमठन मेरी पीठ पर सरकन लगती है—बर्फ के डले की तरह । इस मैं पहचानता हूँ । यह डर है बहुत शुरू का डर अपने में बिलकुल नया—बिलकुल नीरव ।

मुझे लगा, जैसे मैं मुस्करा रहा हूँ ।

—तो तुम मुझे एक छोटी हिस्की दे सकते हो ?

वह कुछ देर तक मुझ घूरता रहा । मैं आगे घिसट आया था । हम दोनों के चेहरे इतने पास थे कि बाहर के शोर के बावजूद मैं उसकी साँस को सुन सकता था ।

—तुम आजोगे नहीं—सदह और अनिश्चय से उसका स्वर एक तनाव में खिंच आया था ।

—मैं पागल नहीं हूँ ।

वह कुछ देर तक छुपचाप मुझे घूरता रहा ।

—तुम्हें यहाँ छोड़कर मैं नहीं जा सकता—उसने कहा ।

एकबारगी जो मैं आया कि मैं उसकी पमीने में लपक गया माल, गदराए चन्दे का अलग-अलग हिस्सा मैं तोड़ हूँ । किन्तु मैं बस ही मुस्कराता रहा ।

—मैं यही रहूँगा तुम्हारे लिए नया ता हिस्की के लिए । तुम मेरा प्यारा भी विश्वास नहीं करते ?

इस बार उसका हाठ एक अत्यन्त गंभीर भाव में फल गया । उस हँसी में एक विषम निरीहता छिपी थी, मानो वह हमें कर कुछ अपन का विश्वास दिला रहा था कि उसने

मुझ पर विश्वास कर लिया है ।

वह काउण्टर की ओर बढ़ा, जहाँ विभिन्न शराबों और वियर की बोतलें रखी थी । वह बार-बार पीछे मुड़कर मेरी ओर देख लेता था ।

मैं खड़ा रहा ।

स्कॉच की बोतल उसन काउण्टर पर रख दी । फिर मेरी ओर देखा जैसे हम दोनों के बीच कोई रहस्यमय समझौता हो ।

हमारा मौन जैसे इन आवाजों से बढ़ा था, जो लहरों की मानिंद उठती थी—एक-दूसरे से उलझी हुई उठती थी, दरवाजे से टकराती थी और फिर अन्तहीन अचकार में बिखर जाती थी ।

वह गिलास घों रहा था । पम्प से बहता पानी और चमकीले गिलास पर फिसलती हुई उसकी एक-एक बूंद—म उन बूंदों को देखता रहा और मुझे बराबर महसूस होता रहा कि म उल्टी कहेगा । म नगे काँच पर बहते पानी को नहीं देख सकता मेरे भीतर एक अजीब-सी फुरफुरी फलने लगती है म आगे बढ़ता हूँ, दरवाजे की तरफ । उसकी पीठ अब भी मेरी तरफ थी पम्प से बहते पानी की आवाज मेरे दिल की घड़कन को ढकती रही और तब उस लमहे अचानक मुझे लगा जैसे अब म चाहूँ तो भी नहीं मुड़ सकता, जैसे खुद मेरा अपनी टांगा पर, अपने पर, कोई नियंत्रण नहीं रहा था जैसे म खुद अपने से मुक्त हूँ ।

और दरवाजा खुल गया दूसरे क्षण मैं बाहर था ।

बाहर अँधेरे में ।

जस्ट टु आउट मने अपने से कहा ।

वह गर्मियों की एक सुली और नरम रात थी एक विराट, बनले जंतु की तरह खामोश जो दिन भर की बकान के बाद अपनी माद म समूची देह फलाकर सो गया हो ।

पसीना सूख रहा था । मने भरपूर साँस ली एक बार 'दो बार' 'हल्का-सा पछतावा होता है 'म हल्की छोड़कर चला आया था इस समय यदि वह मेरी देह के भीतर होता म फिर साँस खींचता हूँ काश, म एक सिगरेट पी सकता । म बड़ी सड़क छाड़कर एक सँकरी लेन म चला आया हूँ । 'अक्सर गलियों के नुक्कड़ पर सिगरेटों की ऑटोमोबाइलें लगी रहती हैं

—हियर हो इज द सन ऑफ ए बिच ।

म रुक जाता हूँ न, यह डर नहीं है । म बहुत धान्त हूँ सिफ एक ठण्डी सी चीज मेरी रीढ़ की हड्डी पर फिसल रही है— एक गिलगिली छिपकली की तरह तटस्थ ।

वे वहाँ थे दीवार से सटी छायाएँ आगे भरकती हैं ।

—होल्ड हिम !—एक फनी-सी पील और मैं अचानक पीछे मुड़ गया हूँ
एक सरसराती-सी हवा मरी बगलों के बीच से निकल जाती है ।

गॉडैम्ब निगर

बेट, जस्ट बट

यह पीछे से आया था—मुझे पता भी नहीं चला कि मेरा सिर पीछे की ओर
मुड़ता गया है एक क्षण और और मैं दो हिस्सा में बट जाऊँगा

काश मैं उससे चेहरे को देख पाता !

हाथ है, जो नम है 'म अपनी वनपटिया में सरसराना सुन सुन सकता था ।
म थोड़ा-सा हिलता हूँ और कुछ आगे की तरफ घिसट जाता हूँ । वह भी मेरे सग
घिसट जाता है—यह कोई अच्य व्यक्ति है, इससे सिवा मेरे हाथ जकड़ रले थे ।

एक क्षण के लिए मुझे गहरा आश्चर्य होता है—यह क्या मेरी देह है, जो इस
तरह धरधरा रही है ?

—यू सिटिंग स्वाइन !

मैं एक झटके से अपने को सीधता हूँ लेकिन मेरे बाल मेरे बाल उससे
हाथा में फँस गए हैं—उसकी नगी ब्राह्म भर मुह के सामने हिलती है और अनायास
म अपने नाँव उसमें गड़ा देता हूँ 'आह, लीव इट बगर ! एक टूटती-सी साँस
वह मुझे हिलाता है एक बार दो बार—और हर बार मैं शराबी मा उसकी गीह पर झूल
जाता हूँ ।

—लीव हिम एलोन, यू सन ऑव ए ह्वार्ट ह्वोर !

क्या यह विली की जाबाब है ? मैं पूरी शक्ति से चीखने की चेष्टा करता हूँ
किंतु सिवाय एक अभावह घुर घुर के मेरे मुँह से कोई भी स्वर नहीं निकल पाता ।

और तब सहसा मुझ लगा, उसकी पकड़ खीनी पड़ गई है मैं अपने को उठा
सकता हूँ । मेरी आँख खुलती है । अँधेरे का एक नीला दरिया मेरे सामने से गुज़र
जाता है और उससे परे लाल, हरे, गुलाबी धब्बे तिरते जाते हैं—मैंने इन्हें कभी देखा
है मुझ पहले कभी दया है, जैसे यह कोई पहचाना-सा दुस्वप्न है जिसे मैं दुहरा रहा
हूँ 'गुरु से अन्त तक ।

मुझसे दा गज के फासले पर वह खड़ा था—गली की दीवार से मटा हुआ ।
एक क्षण के लिए विश्वास नहीं हो सका कि वह विली है, वही व्यक्ति जिसके सग कुछ
देर पहले मैं लागर पो रहा था

किन्तु क्या वह मुझे पहचान सकता है ?

और वह ब्लाड रडकी और जाज क्या व स्मृति के घेर से बाहर कहाँ रात में
डब गए हैं हम यहाँ छोड़कर जो इस क्षण खुद अपने का नहीं पहचान पाते ?

सिफ दा गज और बीच का अँधेरा ।

मीठ, जाचा चेहरा और एक लम्बा युवक जो विली पर झुका है विली की कमीज का कालर हाथ में पकड़कर वह उसे दीवार के पाम घसीट जाता है—खटाक खटाक

वह स्काफ फूल जाता है स्काफ जो उस लम्बे व्यक्ति ने गले में बांध रखा है रगीन—उस पर गुलाब के फूल छपे हैं

गुलाब के फूल जीर सूखे, जा विली के होठों से फिमलता हुआ उसकी 'गोटी' तक बह आया है

एक क्षण के झलमले में सब कुछ उमर आया है आवाजें, परीना लेन की खट्टी-सी गंध और हँसी

और तब वह आया था एक ठिगना-सा व्यक्ति, जो अभी तक मीठ के अँधेरे में छिपा था। उसकी घनी मोँहा के बीच छोटी अस्थिर आँखें चमक रही थी मोँहा के बाल इतने लम्बे और घने होकर उसकी आँखों पर झुक आये थे कि लगता था जैसे उसने अपने चेहरे पर किसी कुत्ते का मोँस्क पहन रखा हो

वह बहुत ही धीमे बंदमो से विली की ओर बढ़ रहा था

—कहाँ गई तुम्हारी डार्लिंग?—उसने घटने से विली की ठुडकी को ऊपर उठा दिया।

—बोलो? कहाँ गई?

हर बार 'कहाँ गई' कहते समय वह विली के मिर को दीवार पर धकेल दता था हर बार विली की देह एक शराबी की तरह झूम जाती थी।

और वे हँस रहे थे

—बैश हिम देयर!—दूसरे ने अपन की ओर इशारा किया। खट-खट सिर के दीवार से टकराने की आवाज। खट-खट मर दिल की पगली ज्वर-ग्रस्त घड़कन। पसीने और खून से लिपटी विली की कमीज और एक अनवरत कमी न खत्म होने-वाली खट-पट और एक मुतली-सी हंसी

—बोलो, कहाँ गई? स्पीक! स्पीक! स्पीक! यू फिल्टी हा-हा-हा खट-खट-खट

स्कॉफ में झूलते हुए रगीन गुलाब के फूल

मुझे अब कुछ भी याद नहीं सच पूछो, तो मुझे यही नहीं मालूम कि मैं स्वयं चित्लाया था या कोई बाहर की चीख सहसा मुझे ज़िपोंड गई थी (नहीं आज भी मैं विश्वास नहीं कर पाता कि वह भयावह चीख मेरे गले से निकली होगी)। मुझे सिर्फ इतना भर लगा था कि मेरी साथ एक अंधे चिमगादड़ की तरह मेरी छाती की दीवार से टकराती हुई बेतहाशा फड़फड़ाने लगी थी और मन एक घबरे से उन दानों हाथों को अपनी गदन से छुड़ा लिया, जिन्होंने अब तक मुझे राक रखा था

गिर दो गज और बीच का अंधेरा ।

मैं चिली की तरफ बढ़ा था । मैं उगम कुछ कहना चाहता हूँ । उसे पूना चाहता हूँ । मुझे लगता है यह बहुत मरकरूण है ।

बीच का अंधेरा—और वे टपट हाथ और सब यह भीना

मेरा तिर उस अदृश्य स्थिति की दुइही से टकराया था, जिनसे मुझे बीच में पकड़ लिया था । दूसरे हाथ ॥ उसी मेरा चेहरा बीच लिया मेरा मुँह उगरी बमोज पर पिरावता गया । आई किस टीन यू हाउ टू रा बाग्डर ॥ जाने क्या, मैं अपनी टांगा का बेंतहंगा, गिरनी के मरीज की तरफ हवा में घुमाने लगा—कुछ नहीं होगा मैंने सोचा यह मुझे छाड़ेगा नहीं और सब मुझे लगा, जते अब मैं रागि गरी से तहूँगा । विन्नु मर गलन का हर दूसरी रात पहली रात की गिरन ॥ जाने की सुझावर ऊपर आती थी और फिर मुझ से पिपक जागी थी और मैं सोचता था, यह आगिरी है, लविन तीसरी रात फिर छटपटा हाथ अपने को दूसरी रात के पिचरे से छुटा लेती थी और मुझे आश्चर्य हुआ कि कोई भी रात बीच रह कर आगिरी नहीं बनना चाहती और सब एक मयकर-गो गुनी ने मुझे अपने में लपट लिया, जते मैं अब तक सिफ इस समझे के लिए जी रहा था और अब यह आ गया है और जाने वाली पहिया में बाईं की ऐसी चीज नहीं होगी, जिसके मानी बही हूँ, जो पहले थे, कोई भी हर पहले जसा हर नहीं होगा मैं भूल गया था कि मैं अकेला हूँ मैं सिफ यह जानता था कि वे मुझे अकेला तही छोड़ेंगे और मैं अब नहीं सपता और उन रात मुझे पहली बार लगा कि अकेला जाना ही काफी नहीं है काफी नहीं है क्योंकि मैं हर जगह हूँ और यह मैं जानता था सिफ यह नहीं जानता था कि एक दिन वे मुझ पकड़लेंगे अब यह पहले जसा आकारहीन नहीं था—यह डर । अब यह ठोस था और गीमिल था—उतना ही बड़ा जितना मैं हूँ—हम दोनों अंधेरे में बहती जानवरों की तरह साँस के रहे थे और मुझे लगा, जस मैं आसिर सब अपनी टांगों का इसी हवा में घुमाता रहूँगा—आह डिमर, हाक पनी इट इज हाक पनी । कोई हँस रहा है—(क्या यह मैं हूँ ?) हँसी जिसकी कोई आवाज नहीं । धूँसे गालियाँ और फिर वही हसी ।

वे मुझे घसीटते ले गए हैं—गली के मान तक ।

मैं उठने की कोशिश करता हूँ और बैठ जाता हूँ । फिर इच्छा होती है सेट जान की । वही सड़क पर । रेविन आँखें बंद करते ही लगता है जस बाईं बीच एक ज्वार की तरह ऊपर उठती है—मेरी टांगा में, छाती में बाहों के जोड़ों में—उठती है और वह जाती है क्या यह पीछा है ? और भूक हल्का सा आश्चर्य होता है कि मैं न जिन्दगी के खतने बरस बिना डाले और कभी इसे नहीं जाना । लगता है मेरी बेतना ने इस पीछा का एक छोर पकड़ लिया है और घिसटती जा रही है कभी सिफ बेतना

रह जाती है पीड़ा से अलग। तब लगता है जैसे मन कुछ खो दिया है। बारिश की शाम है और मैं दुबारा अपने शहर की सड़क पर एक सिरे से दूसरे सिरे तक भाग रहा हूँ। एक छोटा-सा खोखल मेरे सामने खुल गया है और एक उत्कट गयकर-सी आकाशा-मन में जगती है उसमें छिप जाने की। जैसे उसमें छिप जाने से ही सब-कुछ सुलझ जाएगा, सब-कुछ बहुत सहज हो जाएगा। लेकिन यह खोखल नहीं है। यह पीड़ा है, जो बराबर-बराबर से बँट गई है, मेरी देह के विभिन्न अंगों में—बिल्कुल नये किस्म का दर्द, जो अपने में सम्पूर्ण है और जिस आज तक मैंने नहीं पहचाना (हाऊ फनी इट इज हाऊ वण्डरफुल फनी!) बीच-बीच में चेतना का परदा खुल जाता है और मुझे आश्चर्य होता है कि यह मैं हूँ और मुझे सहसा विश्वास नहीं होता कि मैं बाहर आ गया हूँ अपने से बाहर जहाँ मुझे कोई नहीं बचा सकता।

अंधेरे से बाहर—जहाँ वे हैं।

वह शुरू अगस्त की एक रात थी। वे मुझे गली के एक गँदले, खामोश कोने में छोड़ गए थे। कितनी देर तक मैं वहाँ पड़ा रहा, मुझे कुछ भी याद नहीं। बीच-बीच में मेरी आँखें खुल जाती थीं, एक पतली और पारदर्शी धुंध के पीछे लदन का आकाश घिर आता था। फिर आँखें मुँद जाती थीं और मुझे लगता था, जैसे मैं एक धुंध को छोड़कर दूसरी धुंध में सिमट आया हूँ।

कितनी देर ऐसे ही रहा। फिर मैं सतक हो गया। पड़ोस की आवाज़ मेरे पास चली आई थी। बहुत मन्द गति से। मैं ऊँघने लगा था। शायद यह सपना हो। देर तक मालूम नहीं हो सका कि कोई बराबर मेरे कंधों को हिला रहा था।

—बया उ यादा चोट आई है ?

—नहीं उ यादा नहीं आखँ खुल गईं। मेरे ऊपर आज का चेहरा भुका था। लागर की हलकी-सी गंध मुझे छू गई। न जाने क्या, उस गंध के संग एक दूसरी स्मृति उभर आई। मोल्साट के सेरेनाड की एक बहुत पुरानी ट्यून—ट्यून भी नहीं, महज एक टूटी टहनी-सी गिरकन, जिसे कुछ घड़िया पहले पर्व में अचानक पहचाना था।

—तुम यहाँ हो ?

—मुझे मानूँ या वे तुम्हें यहाँ लाए हैं। मैं देख रहा था—उसने कहा—

—विली कहाँ है ?

—सेट हिम गो टु हेल् अगर वह नहीं होता तो कुछ भी नहीं होता।

—बया कुछ नहीं होता ?

अचानक वही सड़क से एक कार गुजर गई। हमारी आँखें चूँधिया गईं। मेरा ध्यान पहली बार अपनी ओर खिंच आया—वमीज़ का कारर ऊपर से फट गया था। पट पर गद, धूल और वियर के घब्वे थे और मुझे लग रहा था कि बदन के पसीने चिपकी मेरी बनियान से एक बाझिल, गीली-गीली-सी ग्राफ निकल रही हो।

—तुम चापल बंधी आये ?

—मैं भीतर आता चाहता था—तुम लोग के पास सचिन तुम जानत हो

—इट इज आल राइट, जान—मैंने उस बीच में ही रोक लिया। मेरे मुँह का स्वाद एकदम बसला-सा हो आया, जस मैं एक क्षण बूझार के बाद उठा होऊँ। पास ही एम्प्लायट का पीला दायरा था। मैंने उसमें बीरा-बीरक धुन लिया—बिलकुल सज्ज जसे पान की पीर हो। यह शून्य है। मुझे बहुत अजीब-सा लगा। मैंने एक बार फिर दूधवा इग बार अपने शून्य का दुबारा देगने का लोभ सबरण न कर ता।

—तुम्हें उपादा थोट ता नहीं आई ?—जान न बूझा। उगद स्वर में एक बंधी बंधी-सी बुझा थी। मुझे वह कुछ अजीब-सी लगी।

मैं चुप रहा और फिर सड़ा हो गया। एक सण सन गली की दीवार में मेरा सिर टिका रहा।

सट-सट-सट

अब भी वह आवाज मरी मरी के बीच फटपटा रही थी।

हम चुपचाप ट्यूब स्टेशन की ओर चलने लगे। मरी देव में अब भी दो गिलिस पड़े थे। अनायास मरी कीपती अगुलियाँ उह सहसा देती थी।

बाहर सड़क पर अगस्त के पत्ते पड़े लदन का धुआँ रात के परे गिरता जा रहा था।

—तुम मरा विदवास नहीं करते तुम समझत हो जान ने जबरदस्ती मरा क्या पकड़ लिया।

सट इज आल राइट—मैंने उसका हाथ कंधे से अलग कर दिया। बाग, वह हम समय मेरे सग न होता।

हम ट्यूब स्टेशन की सीढ़ियाँ उतरने लगे।

प्लेटफार्म उजाड पड़ा था। बेंचो पर इक्के दुक्के आदमी बठ ऊँघ रहे थे। हमारे बिलकुल पास क्षम के आड में एक जोडा दीवार से सटा था। लडकी अपने बाला पर बार-बार हाथ फेरती थी। उसके सामने खडा युवक कुछ दबे स्वर में फुसफुसा रहा था। लडकी बार-बार हँसने लगती थी और फिर चौंकर दोना बार देख लती थी।

टिकट खरीदकर हम पास की खाली बेंच पर बठ गए।

—तुम लदन में ही रहोगे ?

वह चुप रहा। उसकी आँखें वस्तिया के परे अण्डर ग्राउण्ड की मुरग पर धिर थी—अँपेरी सीली। लगता था, मुरग का अंधेरा ऊपर शहर के अंधेरे से बट गया हो। जस गेंदले पानी का ठहरा चहबूँचा हो।

—न जान बिली कहीं चला गया ?

—बिली मैंने उस दसा नहीं—उसने कहा।

—लेकिन तुम बाहर खड़े थे, तुमने अभी कहा था ?

—मैंन कुछ भी नहीं देखा ।

हम फिर चुप हो गए । किंतु उस चुप्पी में एक बोचिल-सा सनाव था, जैसे कोई चीज बार बार हमारे बीच आ जाती हो, और हम बार-बार उसे अलग ठेल देते हों ।

—तुम समझते हो मैं झूठ बोल रहा हूँ ?—उसने कहा ।

मैं दूसरी ओर देखने लगा ।

—तुम कुछ भी समझा, मुझे इसकी कतई परवाह नहीं—उसने कहा ।

—डोण्ट बि सिली—मैंने कहा ।

—तुम मेरा विश्वास नहीं करते—हम बार उसने मेरी ओर देखा—तुम साचते हो मैं भाग गया था उसने होठ काप रहे थे ।

—हैम इट आई से डम इट ।

—उन्होंने मुझे पकड़ा रखा था और मैं तुम्हारे पास

—इट इज आल् राइट, जाज ।

—ओ नो इट इज नाट ऑल राइट !—वह जैसे चीख रहा था ।

पाम की बेंच पर ऊँघता हुआ जादमी उठ बैठा और हमारी ओर देखने लगा ।

—जाज, मुनो—मैंने उसके कंधे पर हाथ रख दिया । बेंच के हत्ये पर उसका चेहरा दोना हाथों के बीच दबा था और बार-बार हिल उठता था ।

—आई वाज अफ ड, टेरिब्ली अफ ड ।

हम दोनों काँप रहे थे ।

—अफ ड

मैं सामने देखता रहा अण्डर शाउण्ड का अँराजस धीरे धीरे हिल रहा हो—एक परदे के मानिंद जो अभी उठ जाएगा । मैं उस क्षण जाज से डरने लगा खुद अपने से डरने लगा । मुझे लगा, जैसे मैं अब कभी उसकी ओर नहीं देख सकूँगा । उस क्षण मैं कोई भयकर चीज कर सकता था—मैं उससे बहुत-कुछ कहना चाहता था, कुछ भी किंतु अब हम दोनों एक सग होते हुए भी अचानक अकेले पड़ गए थे और वह रो रहा था और मैं कुछ भी नहीं कर सकता था । गायद इससे भयकर और कोई चीज नहीं, जब दो व्यक्ति एक सग होत हुए भी यह अनुभव कर लें कि उनमें से कोई भी एक-दूसरे को नहीं बचा सकता, जब यह अनुभव कर लें कि बीती घड़ियाँ की एक भी स्मृति एक भी क्षण उनसे मौजूदा इस गुजरते हुए क्षण के निकट अकेलेपन में हाथ नहीं बँटा सकता साक्षी नहीं हो सकता—

तब हम चौंक गए । दूमरे प्लेटफार्म पर वॉरेन स्ट्रीट जानवाली ट्यूब आ रही थी । जाज को इसी में जाना था । हमारे आस-पास की बेंचों पर ऊँघते हुए लोग सहसा उठ खड़े हुए । ट्यूब की ठंड हेडलाइट में यू एक्शन की अगली सुरंग का अंधेरा जरा

पीछे तिसका गया । सीढ़ियाँ से कुछ साग भागते हुए नीचे प्लेटफार्म पर उतर रहे थे, तानि बरिन स्ट्रीट जान वाली आगिरी ट्यूब को पकड़ सके ।

जाज गड़ा हा गया । उसने एक बार भी मुँह नहीं देखा और दूसरे हाथ भीड़ के साग घट भी ट्यूब की तरफ भागने लगा । ट्यूब में ऑटोमेटिक दरवाजे हाथ भर के लिए गुल और भीड़ को अपने भीतर निगल कर दूसरे हाथ ही बन्द हो गए ।

पहियो की भरभराती लावाज धीरे धीरे मन्द पड़ती गई और फिर सब धुबधुब शान्त हो गया । गुरग के जिस अंधेरे को ट्यूब की हेडलाइट ने पीछे तिसका दिया था, वह फिर वापस लौट आया ।

सिफ प्लेटफार्म की मुली छत के पर दू एक्स्टन की रोशनियाँ अंधेरे में धुपचाप फैलमिलाती रहीं ।

सम्भे की लाइ में युवक न रहा—अगली माड़ी से—और उसे घूम लिया । लड़की की आँखें मुँद गई ।

उसने देखा भी नहीं

और मुँह लगा जैसे मैंने मुहत्त से सिगरेट नहीं पी ।

तीन विदियाँ

गीताली दास अपने को भुरजीवी कहती है। नाम-सुर-ताल आदि के सहारे ही वह इस मंडिर तक पहुँच सकी है। सभी कहते हैं, उसकी साधना सफल हुई है। कितन मोले और बेचारे होने हैं लोग। साधना के सफल-असफल होने की घोषणा करन वाला से वह पूछना चाहती है सफल साधना का कोई मीठा-सा अर्थ। यह ठीक है कि अनेक अ-सांगीतिक वातावरणों का गीताली ने अपन मुंहफले सुर और सुगम गीतों से सगीतमय कर दिया है, कि किसी भी सगीत-समारोह या सांस्कृतिक प्रतिष्ठान के संयोजक आज भी गीताली के नाम पर गीत प्रेमियों को बटोर लेते हैं। किंतु और कितन दिन ? गीताली 'दी' की सफल साधना का क्या हुआ ? गीताली ने अपनी बनी दीनी गीताली की गलतियाँ से लाम उठाया है।

विगुद्ध (?) ठुमरी गायिका गीताली की सफल जिंदगी के महज चौबीस महीना के सामने अपने सुर-जीवन के 'राल' किए हुए—परिपाटी से मुड़े हुए—अ 'ग' का खोलती है धीरे धीरे। नौ वष ? एक सौ आठ महीन कम नहीं।

गीताली आजकल अक्सर अपन मन में उत्पन्न होने वाले सहायक नाद का वि-लेपण करती है। सहायक नाद। जिसको ओवरटोन कहते हैं। नाम कभी अकेला उत्पन्न नहीं होता। उसके साथ-साथ अ 'ग' नादों का भी ज 'म' होता है। उस स्वर का हम मुन पाएँ अथवा नहीं मूल नाद से उत्पन्न होने वाले दन नादा का सहायक नाम कहा जाता है। स्वयं ही ज 'म' लेने के कारण इ 'ह' स्वयंमू स्वर भी कहते हैं। गीताली ने इन्हीं स्वरों की सहायता से मिद्धि और प्रसिद्धि प्राप्त की है। प्रायना के सुर में ह 'र' दम बजती हुई जिंदगी के सुर-ताल की सीमा से कभी बाहर नहीं गई। मीमांसा का विस्तृत अवश्य किया उसने। लेकिन इधर कुछ दिनों में उसका भय हान लगा है। गीत गान समय, मूल होते हुए राग एकाध बार अस्पष्टतर भी हुए हैं।

हूँ-हूँ-हूँ-हूँ-हूँ जीवन हुआ है एक प्रायना ग-गीत की तर-ह।

इस जिंदगी के कुछ अ 'ग' को काट लेती है गीताली, टुकड़-टुकड़े करती है, मसा-डालती है। फिर चूण विचूण क्षणा की सुर-बनिकाओं को सहायक नाद की सहायना से परखती है। डॉट-डॉट-डॉट। गीताली इन नन्ही-नन्ही तीन विदियाँ को आँखों के सामने नूय म उभरने वाली छोटी छोटी तारिकाओं की, अब अच्छी निगाह से देखनी

है, पहचानती है इस युग चित्त को !

गीताली गुरजीवी है, तितु साहित्य-जगत की साधना और प्रगति का भी माहा ज्ञान रखाती है। उसने जीजाजी (जमाय बाबू !) अपा को अवसर की ताव म बठा हुआ, किसी भी दिन प्रसिद्ध ह। जान वाला, प्रच्छन्न आशोचक मानते हैं। टाइम-बोमा ! टाइम-बोमा ! आबू-बोमा ! गरम-गरम आबू चोप प्लेट में सजर जीजाजी के कमरे में गई थी वह। मुदगाना-अदगाना भी साथ थी। दुष्टता भरी हँसी को जल्दा करके गम्भीर होने की चेष्टा करती हुई गीताली ने कहा था—दगिए जमाय बाबू, यह आलु का बोमा यानी बम है ! आबू के घुनों के शल म हरे घने के दाने बन्द हैं। विगुड थी म मज्जित इस अविरफोटक बम के फटने का गहो, जुहाने का अवसर उपस्थित हो रहा है। अब तक, यह भी आबू के रूप म ताव लगाकर बठा था। -

सतान मुदगाना मुँह बनाकर वाली थी—न-न आबू मत कहा। जमाय बाबू तो अवसर पाते ही दूटने वाले हिंस्र प्राणी हो सकते हैं। गिबार सामने आया कि हो-हो हो ! जमाय बाबू भी हसे थे। किन्तु दोदी बुरा मान गई थी। जो भी हो जमाय बाबू की किताब खरीदने की विचित्र आदत से गीताली और उसकी ससिम्य मुदगाना-अदगाना भी खूब लगामानित हुई था। क्या-साहित्य की अच्छी बुरी पोथियाँ पढ़ने को मिल जाती थी।

आधुनिक क्या साहित्य म एक बग डाटवादियो का भी है। डाट डाट डाट ! अब तक उठा नहीं है, तितु प्रश्न किसी भी दिन उठ सकता है कि ऐसी डाटभयो रचनाओं के रचयिताओं के दिमाग म सिर्फ डाट हो डाट तो नहीं ! दिमाग की जगह मछली के असह्य अ डा की थली तो नहीं ! साधारण पाठक अधिकांश ऐसी विदो बूढ़ेदार रचनाओं का भली नजर से नहीं देखत। सारी किताब म, हर पृष्ठ और पंक्ति में यत्र तत्र सरसा के दाने की तरह बिखरी हुई विदियो के बाहुल्य से पाठकों की आँख फिर बिराने लगती हैं ।

गीताली इन विदिया को अलख मुखर जगत की खिडकी समझती है, तीन गोल गाल लाल काँचवाली। अदर प्रकाश होता है। अलख-मुखर जगत का व्यापार शुरू हुआ।

तीन विदिया के सहारे अप्रासंगिक प्रसंगों और असलग्न मुद्दों को रूपायित करने वाले किसी अन्य जगत की हल्की छवि दिखाने-वाले, प्याज के छिलके उतारनेवाले ऐसे किसी शब्द शिल्पी से कमी भेंट हो ता गीताली कहेंगी—मानो या ना मानो, हैं ये सहायक नाद क चिह्न ! पूछेगी, इस ओवरटोन या सहायक नादो की स्रष्टि स्वय ही नहीं होती क्या ? मन की अनगिन खिडकियो से झाँकने वाले चेहरे सुद नहीं बोलते क्या ? बात बोलेगी, नही। राज बोलेगी बात ही। किसी शिल्पी का जबाब गीताली के मन-बन में कौन पाखी रट रहा है !

गीताली को हठात् मिस्त्री हाराधन यत्रकार की याद आई। कई मुखड़ा के उभरने और बिलाने के बाद डाट डाट डाट। फिर मिस्त्री हाराधन यत्रकार का एक तलचित्र लटक गया उसके मन की दीवार पर। न जाने यत्रकारजी कहा हैं। गीताली अपने दोनो हाथों को जोड़कर शून्य में एक नमस्कार करती है।

जिन्दगी के इद गिद शकृत होन वाले सहायक नादों से प्रथम साक्षात् परिचय मिस्त्री हाराधन यत्रकार ने ही करवा दिया था। मिस्त्री नहीं कुछ मानती है हाराधन यत्रकार को। यत्रकारजी के मंत्र-बल से ही गीत-भागल हुई। जानती है खुकी सफल शिकारी होने के लिए आदमी को समी किस्म के शिकारिया से दीक्षा लेनी हाती है, शेर भादू के शिकारिया से लेकर व्याघ्र लुब्धक और सपैरो की भी संगति करनी होती है। यत्रकार कहो मिस्त्री कहो या कारीगर, तुम मेरी नातिन की उम्र की हो। नाना की बात मुनोगी? यत्र के सहारे हा सहायक नादों की पांच हजार आन्दोलन-युक्त ध्वनियों की बारीकिया का उपभोग कर सकोगी। सदा ध्वनित होने वाले जाने-अनजान सुर में तुम्हारे जीवन का प्रत्येक क्षण मुखरित हो उठेगा।

अल्प मुखर जगत में दस वष पूर्व की बात मुखरित हो रही हैं।

सुर मंदिर के मनेजर को बटुवचन कहने को बाध्य हो गई थी गीताली।

शहर की सबसे पुरानी और निमर-न्याय बाजे की दुकान की यह हालत। एक ही सप्ताह में तीन बार तानपूरा ठीक करवाकर ले गई, फिर जैसे का तसा। गीत के बीच में ही साथ छोड़ देता है। रोग क्या है यह बताने वाला कोई विशेषज्ञ नहीं आपके पास? तो सुर मंदिर कहूँ या असुर-मंदिर। मनेजर का मुँह बेबान माइक की तरह गोल खुला रहा। गीताली तानपूरा लेकर सुर मंदिर की सीढ़िया में उतर गई थी, फिर कभी न लौटने की प्रतिज्ञा करती हुई। एक दो-तीन।

—ओ दीदी, सुनेन, सुनेन।—कुछ दूर चलने के बाद, पीछे से पुकार सुनकर गीताली मुड़ी। एक नाटा भूटा, गोल मटोल लडका लुब्धकता हुआ आ रहा है फुटपाथ पर। बौन है यह, किमाकार छोकरा? लडके ने निकट आकर नमस्कार किया—आप गीताली 'दी हैं? हैं न। हैं हे ह हे, तानपूरा क्या सुर मंदिर में समी बाजा का गला इसी तरह घाटा जाता है। जब से मिस्त्री हाराधन यत्रकार सुर-मंदिर को सगम करके निकल गया है, समी असुर ही रह गए हैं। आपने ठीक ही कहा है गीताली 'दी।

गीताली न देखा, लडका अकाल-परिपक्व नहीं, किसी ग्रंथि विकार का गिकार है। बौना नहीं, नाटा और बग र भूँछावाला घुघलू। उसने अपना नाम बताया—घुघलू।

आसाम की ओर कही जम हुआ। मिस्त्री हाराधन यत्रकार के माय गत पंद्रह-बीस वर्षों से है। कलकत्ते में सात-आठ साल, दो-तीन वष इधर-उधर और यहाँ भी करीब पाँच सात साल हुए।

घुघलू ने बताया मिस्त्री हाराधन यत्रकार अब किसीकी दूकान में काम नहीं

करता, अपनी गली से बाहर नहीं आता-जाता नहीं। गली में क्या अपने कमरे से बाहर निकलने की छट्टी नहीं। घुघरू ने कई नये पुराने यन्त्रवादकों के नाम गिनाये जिन्हें जरूरत हाती है मिस्त्री हाराधन यन्त्रकार को खोजकर पहुँचते हैं बलवन्त में लगनरत से काशी से।

गीताली तुरत राजी हो गई। घुघरू ने रिक्शवाले की आवाज दी—ए रिक्शा वाला, मुहल्ला दूधकूप चलेगा ?

मुहल्ला दूधकूप की एक गली में कुछ दूर जाने के बाद घुघरू एक खपरल के घर के पास रुका। बाद किवाड़ी के एक छेद में आँख लगाकर अंदर के वातावरण का अंदाज़ लगा लिया। फिर साँवल हिलाने लगा। अंदर में किन्नी अमृतपुष्पाभा की खनखनाती हुई आवाज बाद किवाड़ों के छेदों से सुनाई पड़ी। अंदर के व्यक्ति को बहुत-से प्रश्नों के उत्तर देकर कुछ संतुष्ट किया घुघरू ने। तब जाकर दरवाजा खुला। लगा, अंदर के किसी व्यक्ति ने अपने कमरे से ही रस्सी खींचकर चटखनी खोल दी। घुघरू अंदर गया। एक कक्का सिडकी सुनाई पड़ी—फिर किसको जूटा लाए कहाँ से ?

घुघरू की दबी आवाज से स्पष्ट था कि वह अनुनय के स्वर में कुछ कह रहा है—मास्टर, ना बलवान ना।—उसके सब किए-कराए पर पानी फिर जाएगा।

बाहर खड़ी गीताली को घुघरू की यह धियियाहट अच्छी नहीं लगी। लेकिन बेसुरे बाजे को लेकर क्या रियाज कर सकेगी ? वह चुप रही। एक कुट्टी आत्मा और विवृत चेहरे-वाल अंधे न दरवाजे से झाँककर पूछा—क्या हुआ ? सुर मंदिरवाला न तेरह ठो बजाम दिया है वाजा का ? छोड़ जाओ, तीन दिन बाद आना। वाह ! हमका ताल तो खूब बहारदार है। यन्त्र का यत्न भी लेती है या ?

गीताली चमत्कृत हुई थी हाराधन यन्त्रकार की बातचीत सुनकर। सधे हुए स्वर में बहार कोई जनक बकगता की सृष्टि कर रही है। वह चुप ही रही। यन्त्रकार न थोड़ी देर तक गीताली की मुद्रा को पढ़ने की चेष्टा की। फिर कहा—क्या बितु-परंतु साच रही है बुकी ? यन्त्रकार का सुर कोमल हुआ—दस मिनट का काम नहीं बेसुर को सुरवान बनाना। आज्ञा अंदर आओ।

हाराधन के कमरे में प्रवेश करके गीताली प्रमत्त हुई थी। दीवारा पर ग्रामोफोन खांड कंपनी द्वारा प्रचारित भारत प्रसिद्ध कलाविष्णु की तस्वीरें लटक रही थी। एकदम प्रगता पत्र अथवा सर्टीफिकेट की तरह की चीजें। फर्श पर विभिन्न बाद्य-यन्त्र गिर रूए थे। रेडियो पर बाद्य-मगीन के कार्यक्रम में सराजवादन हो रहा था। अकस्मात् ? उन्नीसमान सराजवाज अकराम स्वरचित्र गत अचना के बाल प्रस्तुत कर रहा था। यह रहस्य सराज के तारा मंगल और घटाघाति प्रनिध्वनित होता था। हाराधन यन्त्रकार ने अपने छोटे पुराने रेडियो मट की आर उमर में जाकर कहा—सुन रही हो ? मात साज हुए अकराम के तारा मंगल का। अभी तक जम का तम है। यन्त्र का यत्न

माने यंत्र की पूजा ।

हाराधन न सितार सरोद मुखहार, दिलरवा, वीणा आदि के प्रसिद्ध वादका के नाम लिए । गीताली स्वीकार करती है कि पांच मिनट के परिचय में यंत्रकार की बाना पर विश्वास नहीं जमा सकी थी । यंत्रकार ने माप लिया । अपनी अटची से कई नई-पुरानी चिट्ठियाँ निकालकर गीताली के सामने रखते हुए बोला—पढ़ो तो ।

कलकत्ता से भारत प्रसिद्ध (स्वर्गीय) सितारवान्क उस्ताद कादिर हुसैन का आत्मीयता से भरपूर एक खत पांच साल पहले का भाई हाराधन तुम तो सचमुच हाराधन हो गए हमारे लिए । मेरे यंत्र को कुछ हो गया है, फिर जिस तिस के हाथ में देने का साहस नहीं करता । जानना हूँ, तुम कलकत्ते नहीं आओगे । मैं ही आ रहा हूँ तुम्हारे पास ।

रेडियो पर, तब, योगेन्द्र सूरी का वायलिन हमत के राग विस्तार की तयारी कर रहा था । कौन कहता है कि साज बेजान होते हैं ।

गीताली मुग्ध होती गई । छोट-बड़े सुरशिल्पिया और उस्तादों के प्यार प्यारे पत्रों ने, अकराम के अचना के बोल ने योगेन्द्र सूरी की वायलिन ने, धुल्लू की गुरभक्ती ने सभी ने मिलकर गीताली के सामने मिस्री हाराधन यंत्रकार की आत्मा की सच्ची तस्वीर उपस्थित कर दी ।

धुल्लू स्टोव जलाकर चाय की तयारी में व्यस्त था । बीच-बीच में अपने उस्ताद की बाता में टीप के बद की तरह अपनी राय टाक देता—महादेवलालजी तबलिया हीरा हैं, आदमी नहीं । सा माहब तो दाता पीर ही थे पाकेट से मुट्ठी भर नाट निकाल कर परखी देते थे । मुन्तजी सरमिया मुझसे बहुत नाराज है उस दिन से ।

धुल्लू चाय दे गया । चाय की पहली चुस्की लगे के बाद हाराधन यंत्रकार ने कहा—यंत्रकार कहो या कारीगर । बेसुरा नहीं कह सकना कोई ।—यह तो अपने किए का फल भोग रहा हूँ सुकी । बेजान लवड़ी तार तथा मूले चमड़े पर सुर चलाकर जीवन बिताने के सिवा और क्या चारा है जब ? शायित जीवन बिता रहा हूँ । तुम मेरी नातिन की उम्र की हो । विश्वास करोगी, मैं कभी गाना था ? मेरी आवाज सुनकर हिरणा के मुण्ड दोड़े आते थे ।

यंत्रकार ने फिर अपनी अटची के ढक्कन का उठाया । कुछ ढूँढ़ता हुआ बोला—मैं जानता हूँ तुम विश्वास नहीं कर रही हो । खालकर कहना होगा । जीवहपुर स्टेट के राजा जीवत्स नारायण दबज्यू का नाम सुना है ? गिहार के अनुभव पर एक मोटी और मगहूर किताब लिख गए हैं अंग्रेजी में । उसमें खूबना पब्लिक लायब्रेरी में है वह किताब देखना, पृष्ठ बारह, बाईस चालीस और पचपन में भरा डिग्रे है । ग्रूप तस्वीर में मुझे देखकर नहीं पहचान सकता कोई अंग्रेजी । राजा साहब गिहार के अलावा मगीत की भी चर्चा करते थे । उनकी गिहार पार्टी में जेफरी कॅंडाइट ३, ३ बोर रायफल के साथ

सितार की भी आवश्यकता होती। तीन-चार बड़े उस्ताद और दजना शिष्य उनकी ब्यात्री में पलते थे। मेरे गुरुजी पंडित गिबबालब झा जमी दरबार के गायन थे।

गीताली न अपनी घड़ी देखी। धुपलू इस बार एक गिलास में चाय बनाकर ले आया। बोला—इस क्या का सुनाते समय मेरे उस्ताद सम्पत्तिल चाय पीते हैं।

जब से एक गदा कमाल निवाल कर गिलाम में लपेटते हुए यंत्रकार ने गीताली की ओर देखा—सुबो तुमको देर हो जाएगी। फिर किसी दिन सुना दूंगा कि कस हिरणा के झुंड दौड़ने आए थे।

गीताली हँसा थी—आधी कहानी सुनने से आधे मिर में दब जाता है।

—सुनने से या सुनाने से? जो भी हो मैं निश्चित हूँ। सिर-धन से डरें सिर वाले। हम पैट वाल हैं।

गीताली फिर हँसी। जब-जब गीताली हँसती, यंत्रकार की दाहिनी कनपटी के पास की चमड़ी नाचने लगती। भुर्राँदार बिकृत चेहरे पर एक चमचमाहट छा जाती।

—तो सुनो।

उस बार मुझे न कृपा की दृष्टि हाराधन पर भी फरा। गिकार पार्टी में साथ चलने का आदेश दिया। अब, जंगल में भगल मनाने की कितनी कहानियाँ सुनावे हाराधन। लिखन से एक माटी नितान तयार हो सकती है। राजा साहब असली गिकारी थे।

पपाल की तराई के मधुमार जंगल में बिरात-सरदार न चीतला का शिकार करके बिलाया था। तराई के जंगल के बीच घाड़ी-सी खुली जगह, जिसको 'ग्लेड' कहते हैं अंग्रेजों में। चाँदनी जहाँ लम्बे लम्बे गालबूक्षी की कुनगियों पर टेंगी नहीं रहती, ब्यामल मसण पास पर बिछ जाता है। पास ही बहती हुई पहाड़ी नदी जो कल कल-कुलकुल नहीं करती। हवा कुसकुसाकर बात करती है। चाँदनी चत की 'प्रकाश' में एक ठूँठ विस्मित-सा खड़ा है। छाया में वाइ इशारे से कुछ कहता है और सारी तराई में, तराई के जंगल में एक दब मरी पुकार महराने लगी। कामातुरा हिरणी की पुकार। नदी के भीतल जल से प्यास बुझाते हुए चीतलो के भन प्राण में एक-दूसरी प्यास जल उठती है दपदपाकर। हिरणी रह रहकर पुकार उठती है। चाँदनी में नर चीतला के झुंड दिखाई पड़े। हर चीतल की देह के चक्कर स्पष्टतर हो जाते हैं। प्रकाश में खड़ा ठूँठ विस्मय अथवा आवेश से हिलता डुलता है। छाया में फिर कोई इशारा करता है—सिस सिस। फिर चाँदनी में तीरा की चमक सज्ज-सज्ज।

इसके बाद, भुल प्रेमिया की लागा से अपना-अपना नीर खींचकर बिराता के दल नाचने लगे—हा हिरा-हा हिरा-हा हिर र र र।।।

एक मादा चीतल को बचपन से पालकर नकली पुकार पुकारन की बागान्ता शिक्षा दी जाती है। उस्ताद गले के नीचे उँगलियाँ से फुरहरी लगाता रहता है और हिरणी समय-असमय पुकार उठती है।

इस शिकार को देखने के बाद राजा साहब अस्वस्थ हो गये थे। पता नहीं, उन्होंने इस पद्धति से फिर कभी शिकार किया या नहीं, हाराधन के सिर पर इस शिकार का भूत सवार हो गया था, किंतु कामाध चीनला की चीख, कराह, छटपटाहट और दम तोड़ना दमकर उसके अन्दर का किरात आनंद से किलकिला उठा था। संगीत-साधना छोड़कर हाराधन किरात-सरदार के साथ भाग गया।

हर साल चत की चादनी रातों में तीन चार बार यह गिवार होता है। शिक्षिता मादा चीतल के साथ उसके शिक्षक की भी पूजा करते हैं किरातगण। ऐसी हिरणी बहुत कीमती और अलम्य सम्पत्ति समझी जाती है। साल भर तक हिरण के मांस का सुखौता भाग में भूनकर खात समय हर किरात हा हिरा कहकर उसकी स्मरण करता है। उस बार तीनों चारा शिकारा में हाराधन किरातों के साथ रहा। साल भर किरातों के साथ रहकर भी वह मादा चीतल को गिंसा देने का भेद न सीख सका। एक नम्बर पहाड़ के जितने भी पहाड़ी गांव थे उन सभी गांवों के बीच बस एक ही मादा चीतल थी और उसका मालिक ही एक मात्र गुणी। मूलधन हिरणी !

किंतु हाराधन ने इस मूलधन को सस्ता कर दिया अपनी साधना से। मादा चीतल की क्या आवश्यकता ? हाराधन कामातुरा मादा चीतल की तरह पुकार सकता है। किरात-सरदार ने परीक्षा के लिए शिकार का आयोजन किया। चत की चादनी ही क्यों जब चाहो तब गिवार करो। बारह महीने ।

चादनी रात ! रात का अन्तिम पहर ब्राह्मवेला में हाराधन ने पहली पुकार दी थी—अविकल नवल ! चनरागही के पास, बोसी के किनारे की सफेद-हरी भूमि पर दजना चीतल दौड़े आए थे। खच्च-खच्च !

हाराधन की पूजा होन लगी, एक नम्बर पहाड़ में। इलाके की सबसे अधिक मुदरी उसकी सेवा में मगत हुई। किरात-सरदार उसकी जान का दुश्मन हो गया। उस बार भीषण भूकम्प हुआ था—१९३४ जनवरी। भूकम्प के तीसरे दिन सभी किरातों ने स्वीकार कर लिया यह दबी कोप हाराधन के कारण ही हुआ है।

मगवती की वृषा ! नारी की वृषा से उनकी जान बची। मृगचम बगल में दबाए गुरु की सेवा में उपस्थित हुआ। गुरु के सामने राजा साहब के बाग में अपन कठ की कला प्रस्तुत करके एक नई विपदा की सृष्टि कर दी उसने। उस बार चीतल का गिवार देखकर राजा साहब किसी मानसिक रोग के गिवार हो गए थे। बहुत दिनों तक इलाज होने के बाद कुछ स्वस्थ हुए थे कि हाराधन की पुकार मुनाई पड़ी। राजा साहब फिर अस्वस्थ हो गए। पुराने शिकारी थे ! आवाज सुनते ही चीख पड़े—वही वही मादा चीतल, छिन्नी हिरणी, डायन, स्पॉटेड डिपर, चिन्ना ! एक्सप्रेस ५०० रायफल हाथ में लेकर शब्द भेदी निगाना लेकर फायर किया। हाराधन अपनी पुकार के सम पर आ ही रहा था उसके गुरु पंडित शिवबाल्क के कलेजे में एक साफ नोज़ड

एकसपट्टि बूलेट आकर घुस गया। हाराधन ने गुरु गिष्य द्वारा समर्पित मृगचम पर बैठे थे। चीतल के चमड़े पर आज भी सून के दाग हैं। हाराधन भागा। जहाँ जाता, ऐसा ही अपटव घटनाएँ घटने लगी।

बान पर हाथ रखकर हाराधन ने आँखें मूँद ली। बोला—तब स, तभी स, गरु म एक कच्चा घातक खनक पड़ा हो गई। मैंने बाणी को बलवित जो किया था। गुरु बाँधन का काम करने लगा। लविन लेविन !

घुपलू एक पुराना मृगचम ले आया अंदर से। यत्रकार न कहा—यह उस चक्कल युवा मर चीतल की खाल है जो चार चार तीर मीने पर साकर भी मरे पास पहुँच गया था। मरे सामन इमन टाँगें फँक फँक कर जान दी थी। गुरुजी इसी पर बैठे थे, क्षण भर !

हाराधन यत्रकार ने मृगचम को उठाकर श्रद्धापूर्वक सिर से छुवाया। फिर गीताली के सामन रखकर बोला—उस स्वण मृग का क्या नाम था, मारीच ? और मीताजी को उस मृगचम पर बैठने की वासना या हलसा ही क्यों हुई ? रामायण में कही है लिखा हुआ कुछ ? कोई साधना करने के लिए ही, सम्भवतः !

हाराधन यत्रकार ने नेपाल तराई की श्यामल वय भूमि वहाँ की हरी नदी माया की डोरी से अपनी कथा का बाँधत हुए कहा था—सुकी ! नातिन ही बहू का अब नाता मानती हो तो ! अच्छा अच्छा ! बल भी आओगी ? बहुत अच्छा !

दूसरे दिन भी गई, गीताली। यत्रकार न मिलते ही गीताली की हथेली देखने की इच्छा प्रकट की। गीताली ने अपने दादा हाथा की तलहथी फला दी। हू—ऊँ तुम्हारी दीदी मीताली जा कुछ नहीं कर सकी वह तुम्हारे द्वारा सम्भव होगा। निश्चय ! गीताली ने देखा यत्रकार उसकी दीदी के संगीत जीवन की छोटी-बड़ी बातों के अलावा जीवन की छोटी-बड़ी घटनाओं से भी वाकिफ है। यत्रकार न कहा था—नातिन, बुरा मत मानना। तुम्हारी दीदी न उस टमाटर जैसे आदमी से ब्याह करके सब कुछ नष्ट कर दिया। ऐसे खटमल को देना है, जो खून चूसकर लाल-गोल बूँद जसा हो जाता है ? खटमल ही है वह व्यक्ति ! तुम्हारी दीदी का सब कुछ चूस लिया। क्या ? साहित्यिक है ? वह क्या बला है ?

घातकील के बीच में कभी-कभी यत्रकार ऐसी ही उराड़ी-उलटड़ी बातें करन लगते हैं। अपने जमाय बाबू की टमाटर और खटमल से घुलना सुनकर उस जरा भी दुःख नहीं हुआ। उसने सहमति में अपनी गरदन हिलाई—ठीक कहते हैं आप ! बला ही है। दीदी भोग रही हैं। तिल तिलकर मर रही हैं।

मगीत-जगत से दिलचस्पी रखन वाले असमय में विमुक्त हुई मीताली की प्रतिभा के लिए विभिन्न जनों को दोषी मानते हैं। कोई उसके गुरु का दोष बताता है कोई उसके अकाल-मातृत्व की दुहाई देता है, किन्तु मीताली के पति की ओर कोई उँगली तक

नहीं उठाता जबकि दीदी की जिन्दगी में घुन इसी व्यक्ति ने लगाया। 'सुचिबाय', पवित्रता का वहम। जमाय बाबू को 'विशुद्ध' बोलने का मुद्रादोष है। अशुद्ध? विशुद्ध सन्तुचित मुख मुद्राएँ! दीदी अब वायस्म में ही गाती है। हाथ की उँगलियों की ओर तलहथी की चमड़ी हमेशा पानी में रहने के कारण सिकुड़ी रहती है। दिन भर कपड़े धोती है।

घुषलू भी पहचानता है मीताली 'दी' को। बात में फोड़न देते हुए बोला—जिस आसर (महिफल) में मीताली 'दी' का प्रोग्राम होता था, उसमें एकाध बार लाठी जहर चलती थी मोड़ पर। क्या हो गया?

होना क्या! उनके पतिदेव संगीत सुनकर ही मुग्ध हुए थे। संगीत में भी ठुमरी। मीताली 'दी' की ठुमरी में कुछ ऐसी विशेषताएँ थी, जिनके कारण, उन दिना मीताली—ठुमरी नाम की एक नई धारा ही प्रचलित हो गई थी। विवाह के बाद सबकुल ममज्ञ पतिदेव ने प्यार से समझाया—मीताली रानी, ठुमरी ही गाती हो तो विशुद्ध ठुमरी गाओ। पतिदेव की इच्छा। फिर क्या, दीदी धीरे धीरे एक राग विशेष के आश्रय में रियाज करने लगी। लखनऊ और बनारस की ठुमरी बिना किसी मिलावट के सुनान लगी। गुरुजी ने विरोध किया था। उन्होंने मीताली दी के पति को समझाने की चेष्टा की थी—ठुमरी को आचलिक संगीत के प्रभाव न ही अब तब पुष्ट किया है। खयाल की अनुगामिनी भाव नहीं है। देहाती मुर से समन्वित ठुमरी, उस्ताद बड़े।

—बड़े-बड़े उस्तादों की बड़ी-बड़ी बोलियाँ मत सुनाइए पंडितजी! मैं ठुमरी का इतिहास जानता हूँ। सवाल है विशुद्धता का। ठुमरी के नाम पर बरासकर चीजें सिखाने वाला को मैं मगीतज्ञ नहीं मानता।

मीताली 'दी' खड़ी गुरु की फजीहत देखती रही। कुछ बोली नहीं।

अब तक मीताली 'दी' अपनी काफी या खम्माच की ठुमरी में कभी कीतन, कभी भठियाली और कभी पूर्वी का स्पष्ट रंग देती थी। उसकी प्रसिद्धि का एकमात्र रहस्य यही था। मूल राग से आँख मिचौली खेलती हुई छोटी-छोटी, आचलिक रागनियाँ अजाने ही श्रोताओं को मोह लेती। मीताली 'दी' न निदयतापूर्वक उनका परित्याग किया।

क्या सुबह-सुबह बाजूबद खुलि खुलि जाए, खुलि-खुलि जाए मीताली रानी! बद करो भगवान् के लिए। ठुमरी 'बहुरूपी' जिस बेसट हाल में उसकी प्रतिमा का उदय हुआ था, उसी मंच पर अस्त भी हुआ। गीताली कसे झूल सकती है उस रात को। उस दिन गीताली के घर मातम छाया हुआ था। गुरुजी फूट फूटकर रो रहे थे। गर-दोस्तव संगीत-समारोह में मीताली दी अलाप के अंग को पूरा भी नहीं कर पाई थी कि हाल में कुत्ते बिल्ली की बोलियाँ प्रतिध्वनित होने लगी। तरह-तरह की फन्नियाँ—मटेरनिटी सटर में भेजो? कण्डेम्ड माल बढल!

तीन दिन के मूखे-म्यासे-हारे गुरुजी के सामने गीताली ने प्रतिज्ञा की थी। उसी

दिन गीत-प्रत लिया था गीताली ने। सरल-सुगम-सहज-सगीत को स्वतंत्र मर्यादा दिलावेगी। गीताली 'दी' की परित्यक्ता रागिनियों को उदारतापूर्वक आश्रय दिया उसने।

रेडियो से समाचार प्रसारित होने लगा तो गीताली का समय का गान हुआ। वह चुपचाप बैठकर यंत्रकार को काम करते देख रही थी। यंत्रकार अखिं मूँदकर बैठ गया। समाचार सुनते समय वह इसी तरह आसन लगाकर बैठता। विशाल विश्व यंत्र को स्पष्ट करने का सुख अनुभव करता हूँ, समाचार सुनते समय समझो नातिन।

इसके बाद पुपलू ने रेडियो बन्द कर दिया। गीताली के सानपूरे को गोद में लेकर यंत्रकार ने कहा—देखती है, इसमें सिर्फ चार ही तार हैं। किंतु इही चार तारों से सात स्वर उत्पन्न होने हैं। तुम्हारी सीढ़ी ने सहायक नाद की उपेक्षा की। तुम ऐसा न करना। सौमग्य से यंत्र तुम्हारा उत्तम है।

इसके बाद यंत्रकार गीताली के सानपूरे से उत्पन्न गया। 'प' स्वर में बँधे हुए तार से 'म नि रे' ही सहायक नाद के रूप में श्रव्य होगा। 'सा रे ग प क्यों?' और इसी प्रकार तुम अखिल भारतीय सुर-संगम-समारोह में भाग लेने जा रही थीं? राधे राधे!

गीताली को राधेश्याम की याद आई 'राधे गिटारिस्ट! जो प्रतिभा विकसित होने के पहले ही शेष हो जाए, उसने लिए जिसका दुःख नहीं होगा? पंचरंगा पकट और तलवार-बट भूँछें। उन दिनों गीताली के घर बहुत आता-जाता था। गीताली के कई गीतों के माध्यम उसने संगम भी की थी। उस दिन यंत्रकार के यहाँ से लौटी तो राधेश्याम प्रतीक्षा में बैठा हुआ था, न जाने कब से। माँ रामकृष्ण आश्रम में कीर्तन सुनन गई थी। राधेश्याम! राधेश्याम के चेहर को उसने गौर से देखा था। यंत्रकार के कथनानुसार हर बलाकर के मुख मंडल के इद गिद सुर-लहरी कांपती रहती है। सिम्पनी कन्सर्ट के कण्डक्टर मिस्टर रकिन को पहली बार देखते ही हाराधन यंत्रकार ने उसके चेहर के आस पास लहराती हुई सुर-लहरी का देखा था। सी' मा' नर से 'ई' पलट पियानो, हॉन ओबो क्लारिनेट।

राधेश्याम के मुख मंडल के पास असुर लहरियाँ लहरा रही थीं। वह पीकर धुल था। गीताली की चुप्पी का गलत अर्थ लगाकर उसने छलछलती हुई आवाज में कहा था—डा लि! डि डू डि डि डि-डा डि-डा डि डा-आ-आ! गी-ता-ली माई गिटार आ! अकराम के अचना ब बाल गल-घटाध्वनि, धूप-नघ—राधेश्याम की गिटार-पिटार्ई बोली और शराब की गंध। गीताली के सबसे छोट भाई की उम्र का वह राधेश्याम।

इतनी हिम्मत इसकी! गीताली चुपचाप अन्दर चली गई थी।

राधेश्याम से पीछा छुड़ाया, ता जमाय बानू के एक मित्र का आविर्भाव हुआ।

गीतकार था। जीजाजी के शिष्य थे। उन्होंने गीताली की ज़िंदगी के सभी गीतों का ठेका लेन की बात चलाई। कहो तो दिन में पांच मधुर गीतों की रचना करके दिखा दूँ। “तुम गीत गीत की पक्ति-पक्ति में तीन बिदियों-सी बिलखी हो, मजनी ई सजनी-ई, तुम ।

राधेश्याम एकाध फिस्मी धुन को लेकर जी रहा है। जमाय बाबू के गीतकार शिष्य को कोई सजनी मिल गई होगी।

अकेली गीताली ! गीत गूँथती, सुर देती, माती। दस वय से गा रही है। यत्रकार ने एक और बात बताई थी गध ! गीता से गध का परिवेशन कर सको, ऐसी साधना करो !

तीसरे दिन यत्रकार का मूड बदला हुआ था। धुधनू बाहर था। गीताली चुपचाप कमरे के काने में बठ गई। अखिल भारतीय मुर सगम समारोह की अंतिम तिथिया की घोषणा हो चुकी थी। गीताली ने यत्रकार से कहा नाना, आशीर्वाद दीजिए ! निमंत्रण मिला है।

धुधनू एक दोन में धुधनी और कचरी के आया। देखते ही यत्रकार का मूड सुधर गया। अन्दर से गीताली का सानपूरा ले आया धुधनू। बहारदार खोज से निकालकर गीताली की ओर बढ़ा दिया यत्रकार ने ला ! सुधर गया है। सबको सुधार देगा ! इसकी पूजा नहीं तो इज्जत ख़रूर करना !

गीताली ने उँगलियों से तारों को स्पश किया। हाराधन यत्रकार ने इधर-उधर देखकर कहा मेरी एक बात मानोगी ? अपनी उँगलिया छूने होगी ? हा हा ! नातिन को अचरज हो रहा है कि बूढ़े की यह क्या आदत कभी तलह्दी देवना चाहता है, कभी उँगलियाँ छूना चाहता है। हो-हो गीताली की उँगलिया को उसने अपने सिर से छुलाते हुए कहा—मुझे भय था, तुम्हारे नाखून काटने का डग गलत तो नहीं ? उँगलियाँ पकड़ ही हँसकर पूछा था की नातनी ? मने की बाजड़े ? क्यों ? क्या बज रहा है मन में ? क्या कहता है मन ? किस सुर में ?

उस दिन गीताली ने हँसकर जबाब दिया था कहाँ, कोई अजानी रागिनी तो नहीं बजती ! निन्तु आज ? आज वह सुन्ती है स्पष्ट एक ऐसी रागिनी जिसका वह बाँध नहीं पाती। उसका यत्र नहीं हारता, वह हारने लगती है। नहीं है यत्रकार ! है या ?

उस बार अखिल भारतीय मुर सगम-समारोह में सर्वोच्च स्थान प्राप्त करने के बाद ही नाना हाराधन यत्रकार को प्रणाम करन गई थी। मुनकर आवाक हो गई, धुधनू सहित हाराधन यत्रकार फरार है। सुरमाँदरवालों ने औजार-पाती तथा बहुत-सी चीन्हे की खोरी का इल्जाम लगाकर रपट की है। इसके बाद, दस वय हो रहे हैं। नाना, मैं तुमको नानाधन कहूँगी। नानाधन ! तुम अपना मृगचम

नई कहानी प्रकृति और पाठ

मुझे दो। मैं इस पर बैठकर साधना करूँगी। कुरोगी ? कुरोगी ? डरती नहीं ?
 इस अशुभ मृगचम से तुम्हारा कोई अशुभ न हो जाए ! मृगचम की सिर से छुआकर,
 गीताली ने एक ओर रख दिया। इस पर बैठकर उसने साधना की है। चीतल,
 चिन्ना चंदन के चकत्त खून के घब्वे डाट-डाट-डाट !
 दस बप बाद, आज नाना हाराधन यत्रकार को स्मरण करते समय मन इसम
 क पद बियासो का व्यवहार कर रहा है। गीताली अब स्वयं की एक यत्र समझती
 है। किसी अनचीन्हे की उँगलियाँ उसे छू जाती हैं बार-बार। अलख-मुलर-जगत्
 के व्यापार में बाधा पड़ी। तीनों जलती हुई बिंदिया बुझ गई। दरवाजे पर ढाकिया
 पुकारकर बिटियाँ दे गया। कुमारी गीताली दास 'गीत महल'।
 हे देव ! हे देवी यह क्या ? यह सपना तो नहीं ? क्या यह सच है ?
 भारत प्रसिद्ध सितारवादक अकराम का प्रणय निवेदन-भरा पत्र है यह तो ! सख
 घण्टाघरनि धूप-गंध। जचना के बोल। सलित मे। विलम्बित द्रुत। यह कैसे
 सम्भव हुआ ? दस बप से छिपी हुई बात फल कैसे गई। माँ !
 अकराम के सत में स्वर है ! इसकी पंक्तियाँ मनक रही हैं। सख और घण्टा
 घन के बीच अकराम का कण्ठ-स्वर सुनती है गीताली ! बिरसगी तानपूरे का सहारा
 लेती है वह। दोनों हाथों से जकड़कर पकड़ती है। चारों तारों से अकराम का कण्ठ
 स्वर प्रसारित होता है ! गीताली ! गीताली मैं हूँ अकराम। पिछले आठ साल
 से सुन रहा हूँ, सुन रहा हूँ क्यों उपभोग कर रहा हूँ तुम्हारे गीतों की गंध। धान
 कूटती हुई चक्की चलाती हुई, ठोर चराती हुई सुंदरिया की देह की नमकीन गंध
 धान के सतों की पोखर और पाट पर पानी भरती हुई सुन्दरियों के आँचल की
 गंध सुगंध किसी वनफूल की सुरमिमय गीता की गायिका न मेरी प्राण 'क्ति
 तेज कर दी है। मैं गीत-नामा और गीताली गंगा नामक दो गंगा की रचना की
 है। उस दिन किंतु तुमने कज़मी की है या ? ऐसा न करो। मैं तुम्हारे कण्ठ से
 अभी तक अनगाए गीता का अवतरण कराऊँगा। गीत-नामा ! मैं अपना सोमाय्य मम
 भूँगा तुम्हारा साथ
 और यह दूसरी बिट्टी भी बोलता है मनकवाली आवाज ! श्याम हुए जाना
 धन हाराधन ! ओ-ओ नातिन ! गिव प्रमन हुए हैं। आँखें खाली। पिछले
 सप्ताह तुमकी सुनने के बाद ही मेरे घर दौड़ा आया मास्टर ! तुम्हारी नातिन का
 निल छाटा हो रहा है या निल चुरा रही है ? सतिन तुम्हारी बीज की गरमी उमरी
 रगो में उमरी हुई थी। नक्कलान रगा मास्टर ! आज तुम्हारी नातिन बचनार के पेड़
 के नीचे पड़ा भर मधु सकर बटी या गीत की निताब भी थी किंतु 'किंतु' अनेक
 किंतु बोल गया 'कृपण' यह छटपटा रहा है नातिन ! क्यों मन में क्या बज रहा
 है यहार बगन ? स्वयंभू नाम का कृपा है मज ' जाति विचार ? गिन्ती का जाति ?

ग्राम जाति-वादी-सवादी आदि राग को परखने के समय ।

तीसरा खन गूंगा है । पीछले तीन साल से शुभ अवसरों पर कलापूर्ण बाड आँककर भेज रहा है कलाकार । रामकृष्ण आश्रम के वापिकोत्सव में मंडप और वेदी आदि की रचना करके मनहर राय ने समी का मन मोह लिया था । गीताली वेदी के पास घण्टा चुपचाप खड़ी रह गई थी । क्षमा करना मनहर, गीताली चिर ऋणी रहेगी तुम्हारी । तुम चाहते ता गीताली अपना सारा रंग लुटा सकती थी । तुमने उन क्षणों का दुरुपयोग नहीं किया । तीन वर्ष 'तीन शून्य' गुमसुम रहे तुम, सब दिन । कलाकार । गीताली सुरजीवी है । दस वर्ष पूरा हो वह किसी के सुर में बँध चुकी थी । फिर भी, तुम कुछ बोलते आज भी तुम्हारा खत कुछ नहीं बोलता ।

अकराम गलध्वनि कर रहा है । प्यारे मनहर । अकराम । प्यारे अकराम । तुम/ने बड़े गुणी हो । तुमने कैसे जान लिया सब कुछ । गंध ? महाराज, ये तुम्हारी ही कृपा के फल हैं । अचना के बोल सुनते समय मुझ जा धूप की गंध लगी थी । तुम्हीं ने यह गंध परिवेष्टन किया है प्रथम बार । तुम्हारी ही चीज, तुम्हीं को । लो, मैं यत्र हूँ । तुम्हारी हूँ । मुझे बजाओ, बस करो ।

गीताली ने पास पड़े तानपूरे के तारा को छूकर शकृत कर दिया । मूल नाद से नौग्रुत ऊँचाई पर सहायक नाद उत्पन्न हुए ।

तुमने सुना होगा अकराम नानाधन शुधलू बड पाटीं में हान बजाता है तुम समी न सुना । गीताली अकराम के गले में गीतमाला डाल चुकी । 'ग' माइनर का तीव्र सुर 'एफ' मजर का आन-दाल्लाम ।

गीताली ने परमहंस देव की नमस्कार किया । परमहंस देव के कथामृत से ध्वनि निकली—मानुषेर मन जेन सरपेर पुटली । आदमी का मन माना सरसो की पोटली ।

गीताली की आँखा से आँसू झर पड़ । कण्ठ से एक अजानी रागिनी फूट कर निकल पड़ी ।

अलख मुसुर-जगत् में अकराम की पगध्वनि सुन रही है गीताली ।

खून का रिश्ता

साट की पाटी पर बटा चाचा मगलसेन हाथ में घिलम घाम सपने दरा रहा था। उसने देखा कि वह समझिया व घर बठा है और बीरजी की सगाई हो रही है। उसकी पगड़ी पर बेगर के छीटे हैं और हाथ में दूध का गिलास है जिसे वह पूँट पूँट करके पी रहा है। दूध पीते हुए बभी यादाम की गिरी मुँह में आ जाती है कभी रिले की। बाबूजी पास राख समझिया से उसका परिचय करा रहे हैं यह मरा बचाजाद छोटा भाई है, मगलसेन ! समझी मगलसेन के पारा आर धूम रहे हैं। उनमें से एक झुककर बड़े आप्रह से पूछता है, और दूध छाऊँ, चाचाजी ? चांडा-सा और ? अच्छा, सआओ, आधा गिलास, मगलसेन कहता है और तजती से गिलास के तल में से धावर निकाल निकालकर घाटन लगता है

मगलसेन ने जीम का घटसारा लिया और सिर हिलाया। सम्बाहू की कड़वा हट से भरे मुँह में भी मिठास आ गई, मगर स्वप्न भग हो गया। हल्की-सी झुरझुरी मगलसेन के सारे बदन में दौड़ गई और मन सगाई पर आने के लिए ललक उठा। यह स्वप्नो की बात नहीं थी, आज सचमुच भतीजे की सगाई का दिन था। बस थोड़ी देर बाद ही सगे-सम्बन्धी घर आने लगने, नाजा बजना, फिर आये-जाये बाबूजी, पीछे-पीछे मगलसेन और घर के अन्य सम्बन्धी, सभी मटक पर चलते हुए, समझियों के घर जाएंगे।

मगलसेन के लिए साट पर बठना असम्भव हो गया। बदन में खून तो छटाँक भर था, मगर ऐसा उछलन लगा था कि बठने नहीं देता था।

ऐन उसी वक्त कीठरी में सतू आ पहुँचा और साट पर बठकर मगलसेन के हाथ में से बिलम लेते हुए बोला, तुम्हें सगाई पर नहीं ले जाएंगे, चाचा।

चाचा मगलसेन के बदन में सिर से पाँव तक लरजिश हुई। पर वह साँचकर कि सतू बिलबाड कर रहा है, बोला, 'बडो के साथ मजाक नहीं किया करते, वई बाग कहा है। मुझ नहीं ले जाएँगे तो क्या तुम्हें ले जाएंगे ?'

किसी को भी नहीं ले जाएँगे। बीरजी कहते हैं सगाई डलवाने सिर्फ बाबूजी आएंगे, और कोई नहीं जाएगा।

बीरजी आये हैं ?' चाचा मगलसेन के बदन में फिर लरजिश हुई और तिल धक धक करने लगा। सतू घर का पुराना नौकर था, क्या मानूम ठीक ही कहता हो।

“ऊपर चलो, सब लोग खाना खा रहे हैं।” सतू ने चिलम के दो कंग लगाए फिर चिलम को ताक पर रखा और बाहर जाने लगा। दरवाजे के पास पहुँचकर उसने फिर एक बार घूमकर हेँसते हुए कहा। “तुम्हें नहीं से जाएँगे चाचा, लगा लो शत दो-दो रुपये की शत लगती है ?”

“बस, बक-बक नहीं कर जा अपना काम देख।”

ऊपर रसोईघर में सचमुच बहस चल रही थी। सतू न गलत नहीं कहा था। रसोईघर में एक तरफ, बीवार के साथ पीठ लगाए बाबूजी बठे खाना खा रहे थे। चौके के ऐन बीच में बीरजी और मनोरमा, भाई-बहन एक साथ, एक ही घाली में खाना खा रहे थे। माँजी चूल्हे के सामने बठी पराठे सेंक रही थी। माँ बेटे की समझा रही थी, “मही मौजे तुम्ही के होते हैं, बेग। कोई पसे का गूखा नहीं होता। अकेले तुम्हारे पिताजी सगाई डलवाने जाएँगे तो समझी भी इसे अपना अपमान समझगे।”

“मैंने कह दिया माँ, मेरी सगाई सबा रुपये में होगी और केवल बाबूजी सगाई डलवाने जाएँगे। जो मजूर नहीं हो तो अभी से

“बस-बस, आगे कुछ मत कहना।” माँ ने झट टोकते हुए कहा। फिर धुब्ध होकर बोली, “जो तुम्हारे मन में आए करा। आजकल कौन किसी की सुनता है। छोटा-सा परिवार और इसमें भी कमी कोई काम ढग से नहीं हुआ। मुझे तो पहले ही मात्रम था, तुम अपनी बरोगे।”

“अपनी बयो बरेगा, मैं कान खींचकर इसे मनवा लूँगा।” बाबूजी न बेटे की ओर देखते हुए बड़े दुलार से कहा।

पर बीरजी खीझ उठे, “क्या आप खुद नहीं कहा करते थे कि ब्याह शादिया पर पसे बर्बाद नहीं करना चाहिए। अब अपने बेटे की सगाई का बचत आया तो सिद्धान्त ताक पर रख दिए। बस, आप अकेले जाइए और सबा रुपया लेकर सगाई डलवा लाइए।

“बाहू जी, मैं क्यों न जाऊँ ? आजकल बहनें भी जाती हैं।” मनोरमा तिर झटककर बोली, “बीरजी, तुम इस मामले में चुप रहो।”

‘सुनो बेटा, न तुम्हारी बात, न मरी,’ बाबूजी बोले ‘केवल पाँच या सात सन्बधी लेकर जाएँगे। कहोगे सा बाजा भी नहीं हामा। वहाँ उनस कुछ भाँगेंगे भी नहीं। जो समझी टीक समझ द दें, हम कुछ नहीं बोलेंगे।’

इस पर बीरजी तुनककर कुछ कहन जा ही रहे थे, जब सीढ़िया पर मगलसेन के कदमों की आवाज आई।

“अच्छा, अभी मगलसेन स कोई बात नहीं करना। खाना खा ला, फिर बातें होती रहगी।” माँजी न कहा।

पचास बरस की उम्र के मगलसेन व बदन के सभी चूल ढीले पड़ गए थे। जब चलता तो उचक उचककर हिचकोले खाना हुआ और जब सीढ़ियाँ चढ़ता तो पाँव

धमीटमर, बार-बार छोटी टक्कारता हुआ। जब भी वह सड़क पर जा रहा होता, मोड़ पर वा साइबिल वाला दूकानदार हमेशा भगनसेन से मजाक करने कहता, आओ, भगलसेनजी, पेच क्या है ?" और जवाब में भगलसेन हमेशा उसे छोड़ी दिमाकर कहता, अपने से बड़ो के साथ मजाक नहीं किया करते। तुम अपनी हैसियत तो देख ।"

भगलसेन को अपनी हैसियत पर बड़ा नाज था। किसी जमाने में फौज में रह चुका था, इस कारण अब भी सिर पर गायत्री पगड़ी पहनता था। लाठी रंग सरकारी रंग है, पटवारी से लेकर बड़े-बड़े इंसपेक्टर तक सभी गायत्री पगड़ी पहनते हैं। इस पर ऊँचा खानदान और गहर के धनीमानी भाई के घर में रहना, गेंठता नहीं तो क्या करते ?

दहलीज पर पहुँचकर भगलसेन ने अदर साँवा। लिचड़ी मूँछें सस्ता तम्बाकू पीत रहने के कारण पीली हो रही थी। धनी भाँहो के नीचे दाईं आँख कुछ ज्यादा झुली हुई और बाईं आँख कुछ ज्यादा सिबुड़ी हुई थी। सामन के तीन दाँत गायब थे।

"मौजाईजी, आप रोटियाँ सेंक रही हैं ? नौकरा के होते हुए ।"

"आओ भगलसेनजी आओ खरा देखा तो यहाँ कौन बैठा है ।"

"नमस्ते, चाचाजी ।" बीरजी ने बड़े बड़े कहा।

"उठकर चाचाजी को पालागन करो, बटा, तुम्ह इतनी भी अवल नहीं है ।"

बाबूजी ने बेटे को सिठककर कहा।

बीरजी उठ खड़े हुए और मुकनर चाचाजी को पालागन किया। चाचाजी सँप गए।

बोले में बड़ा सँतू जो नल के पास बरगन मलने लगा था, कंधे के पास मुँह छिपाए हँसने लगा।

"जीते रहो, बड़ी उम्र हो ।" भगलसेन ने कहा और बीरजी के निर पर इस गम्भीरता से हाथ फेरा कि बीरजी के बाल बिखर गए।

मनोरमा खिलखिलाकर हँसने लगी।

सगाई वाले दिन बीरजी खुद आ गए हैं। बाह-बाह ।"

"बठ जा, बठ जा, भगलसेन, बहुत बातें नहीं करते," बाबूजी बोले।

आप मेरी जगह पर बठ जाइए चाचाजी, मैं दूसरी चटाई ले लूँगा।

बीरजी ने कहा।

"दो मिनट राठा रहेगा तो भगलसेन का टाँगें नहीं टूट जाएँगी ।" बाबूजी बोले, "यह खुद भी चटाई पकड़ सकता है। आओ भगलसेन जरा टाँगें हिलाओ और अपने लिए चटाई उठा लाओ।"

भाँजी ने दाँत तल हाठ दबाया और धूर धूरकर बाबूजी की ओर देखने लगी, नौकरों के सामने तो भगलसेन के साथ इस तरह खड़ा से नहीं बालना चाहिए। बाखिर तो खून का रिपता है, कुछ लिहाज करना चाहिए।"

भगलसेन छज्ज पर से चटाई उठाने लगा। दरवाजे के पास पहुँचकर, नौकर

की पीठ के पीछे से गुजरने लगा, तो सतू न हँसकर कहा, “वहा नहीं है, चाचाजी मैं देता हूँ, ठहरो। एक ही वरतन रह गया है, मलकर उठता हूँ।”

सतू निश्चित बठा, कंधों के बीच मिर झुकाए वरतन मलता रहा।

मनारमा घुटनों के ऊपर अपनी ठुडकी रखे, दोनों हाथा से अपने परा की उँगलिया मलती हुई, कोई वार्ता सुनाने लगी, ‘दूकानदारा की टाँगें कितनी छोटी होती है, भया, क्या तुमने कभी देखा है?’ अपन माई की ओर कनकियों से देखकर हँसती हुई बोली ‘जितनी देर वे गद्दी पर बठे रहें, ठीक लगते हैं, पर जब उठें तो सहसा छोटे हो जाते हैं, इतनी छोटी-छोटी टाँगें। आज मैं एक दूकान पर सूटकेस लेने गई।”

“उठो सतू, चटाई ला दो। हर वरत का मजाक अच्छा नहीं होता।” चाचा मगलसेन सतू से आग्रह करने लगा।

वहा खड़े क्या कर रहे हो, मगलसेन? चलो इधर आओ। उठ सतू चटाई ले आ, सुनता नहीं तू? इसे कोई बात कहो तो बान में देवा जाता है।” मा बोली।

सतू की पीठ पर चाबुक पड़ी। उसी वक्त उठा और जाकर चटाई ले आया। माँजी ने चूल्हे के पास दीवार के साथ रखी दो थालियों में से एक थाली उठाकर मगलसेन के सामने रख दी। मले कुमाल से हाथ पाछते हुए मगलसेन चटाई पर बठ गया। थाली में आज तीन भाजिया रखी थी चपातिया खूब गरम-गरम थी।

सहसा बाबूजी ने मगलसेन से पूछा, “आज रामदास के पास गये थे? किराया दिया उसने या नहीं?”

मगलसेन झुंझी में था। उसी तरह चहककर बोला, “बाबूजी, वह अफीमची कभी घर पर मिलता है कभी नहीं। आज घर पर था ही नहीं।”

“एक थप्पड़ मैं तेरे मुँह पर लगाऊँगा, तुमने क्या मुझे बच्चा समझ रखा है?”

रसोईघर में सहसा सज़ाटा छा गया। मा न होठ भींच लिए। मगलसेन की पुलकन सिहरन में बदल गई। उसका दायाँ गाल हिलने-सा लगा जिस चपत पड़ने पर सचमुच झिलने लगता है।

“छ महीने का किराया उस पर चढ़ गया है, तू करवा क्या रहता है?”

तुक्कड़ में बठे सतू के भी हाथ वरतनों की मलते मलत खं गए। माई वहिन पक्ष की आर देखने लगे। हाथ बेचारा, मनोरमा न मन-ही मन कहाँ और अपने परा की उँगलिया की ओर देखने लगी। वीरजी का खून खौल उठा। चाचाजी गरीब हैं न, इमीलिए इन्हें इतना दुत्कारा जाता है

“और पराठा ढालूँ, मगलसेनजी?” माँ ने पूछा। मगलसेन का कौर अभी मले में ही अटका हुआ था। दोनों हाथा से थाली का ढँकते हुए हड़बड़ाकर बोला, ‘नहीं भोजाईजी, बस जी!’

“जब मेरे यहाँ रहते यह हाल है तो जब मैं कभी बाहर जाऊँगा तो क्या हाल

हागा ? मैं चाहता हूँ, तू कुछ सीग जाए और किराण का सारा काम सँभाल ले । मगर छ महीने तुझे यहाँ आए हो गण, घूने कुछ नहीं सीखा ।”

इस वाक्य को सुनकर मंगलसन के सिर लहू म पाड़ी-नी हराएत आई ।

“मैं आज ही किराया ले आऊँगा, बाबूजी ! न देगा तो जाएगा कहाँ ? मेरा भी नाम मंगलसन है !”

“मुझे कभी बाहर जाना पड़ा तो तुम्हीं का काम सँभालना है । नीकर कभी किसी को कामकाज नहा रिलालते । जमीन जायदाद का काम करना हो तो सुस्ती से काम नहीं चलता । कुछ हिम्मत से काम लिया करो ।”

मंगलसेन के यदन में भुरभुरी हुई । दिल में ऐसा ठूलस उठा कि जी चाहा पगडी उतारकर बाबूजी के बदमा पर रख दे । हुमककर बोला, “चिन्ता न करो जी, मेरे होते यहाँ बिड़ी फडक जाए तो कहना ? डर किस बात का ? मैं लाम देखी है बाबूजी ! बसरे की लडाईं में मम्ताम रस्किन था हमारा । कहने लगा दत्ता मंगलसन, हमारी शराब की बोतल लारी में रह गई है । वह हमें चाहिए । उधर मनीमगन चल रही थी । मैंने कहा अभी लो साहब ! और अनेले मैं यहाँ से बोतल निकाल लाया । ऐसी क्या बात है”

मंगलसेन फिर चहकने लगा । मनोरमा मुसकराई और वनखियो से अपने माई की आर देखकर घीमे से बोली, “चाचाजी की दुम फिर हिलने लगी !”

मंगलसेन खाना खा चुका था । उठते हुए हँसकर बोला, “तो चार बज चलने न सगाई डलवाने ?”

“तू जा अपना काम देग जा जबरत हुई तो तुम्हें बुला लेंगे । बाबूजी वाले ।

चाचा मंगलसेन का लिल घट-से रह गया । सत्तु शायद ठीक ही कहता था मुझे नहीं ले चलने । उसे रलाई-सी आ गई, मगर फिर चुपचाप उठ खड़ा हुआ बाहर जाकर फूँते पहने, छडी उठाई और भूखता हुआ सीढ़िया की ओर जाने लगा ।

बीरजी का बेहसा शेष और लज्जा से समतमा उठा । मनोरमा को डर लगा कि दान और विगडेगी बीरजी वही बाबूजी से न उलझ बैठें । माजी को भी बुरा लगा । घीमे से कहने लगी, “देखो जी, नीकरा के सामन मंगलसेन की इज्जत-आबरू का कुछ तो समाल रखा करो । आखिर तो खून का रिश्ता है । कुछ तो मुह मुलाहिजा रखना चाहिए । दिन भर आपका काम करता है ।”

‘मैंने उसे क्या कहा है’, बाबूजी ने हराए हावर पूछा ।

‘मा रुवाई के साथ नहीं बोलते । वह क्या सोचना होगा ? इस तरह बेजाबरूई किसी की नहा करनी चाहिए ।’

क्या बक रही हो ? मैंने उसे क्या कहा है ? बाबूजी वाले । फिर सहसा बीरजी की ओर घुमकर बहने लगे, ‘अब तू बोल, माई, क्या कहता है ? कोई भी काम

ढग से करने देगा या नहीं ?”

“मैंने कह दिया, पिताजी, आप अकेले जाइए और मवा रूपा लेकर सगाई डलवा लाइए।”

रसोईघर में चुप्पी छा गई। इस समस्या का कोई हल नज़र नहीं आ रहा था। वीरजी टस-स-मस नहीं हो रहे थे।

सहसा बाबूजी ने गिर पर से पगड़ी उतारी और सिर आगे की मुकावर बोले, ‘कुछ तो इन सफेद बालों का खयाल कर। क्या हमें रुम्बा करता है?’

वीरजी घुस्से में थे। चाचा मगलसेन गरीब हैं इसीलिए उसके साथ ऐसा बुरा व्यवहार किया जाता है। यह बात उसे खल रही थी। मगर अब बाबूजी ने पगड़ी उतार कर अपने सफेद बालों की दुहाई दी तो सहम गया। फिर भी माहस करके बोला, “यदि आप अकेले नहीं जाना चाहते तो चाचाजी को साथ ले जाइए। बस दो जन चले जाएँ।”

“कौन-से चाचा को?” माजी ने पूछा।

“चाचा मगलसेन को।”

कोन में बड़े सतू ने भी हुरान होकर सिंग उठाया। मा पट से बोली “हाय हाय बेटा, गुम-शुम बोलो। अपने रईम माइयों को छाड़कर इस मरदूद को साथ ले जाएँ? सारा शहर घू-घू करेगा।”

माजी, अभी तो आप कह रही थी, खून का रिश्ता है। किधर गया खून का रिश्ता? चाचाजी गरीब हैं इसीलिए?”

‘मैं कब कहती हूँ, यह न जाएँ। यह भी जाएँ, लेकिन और सम्बन्धी भी तो जाएँ। अपने धनी-मानी सम्बन्धियों को छोड़ दें और इस बहुलूपिए का साथ ल जायें, क्या यह अच्छा लगेगा?’

“तो फिर बाबूजी अकेले जाएँ।” वीरजी परेगान हो उठे। ‘मैंन जो कहना था कह दिया। अब जो तुम्हारे मन में आये करो, मेरा इससे कोई वास्ता नहीं।’ और उठकर रसोईघर में बाहर चले गए।

बैट के यो उठ जान से रसोईघर में चुप्पी छा गई। माँ और बाप दोनों का मन खिन्न हो उठा। ऐसा गुम दिन ही बेटा घर पर आये और यो तक्रार होन लगे। माँ का दिल टूक-टूक हान लगा। उधर बाबूजी का शोध बढ़ रहा था। उनका जी चाहता था कह दें, जा फिर मैं भी नहीं जाऊँगा। भेज दे जिसको भेजना चाहता है। मगर यह बयत शगडे को लम्बा करने का न था।

सबसे पहल माँ ने हार मानी, “क्या बुरा कहता है। आजकल के लडके माँ-बाप के हज़ारों रुपये लुटा देने हैं। इसके विचार तो कितने ऊँचे हैं। यह तो सवा रुपये में सगाई करना चाहता है। तुम मगलसेन को ही अपने साथ ल जाओ। अकेले जाने से तो अच्छा है।”

बाबूजी बड़बड़ाये, बहुत बाल मगर आखिर चुप हो गये । बच्चों के आगे किस माँ-बाप की चलती है ? और चुपचाप उठ कर अपने कमर में जाने लगे ।

“जा सत्तू मगलसेन को कह, तैयार हो जाए ।” माँजी न कहा ।

मनोरमा चहक उठी और भागी हुई बीरजी का बताने चली गई कि बाबूजी मान गये हैं ।

मगलसेन को जब मालूम हुआ कि अकेला वही बाबूजी के साथ जायेगा तो कितनी ही देर तक वह बोठरी में उचकता और चक्कर लगाता रहा । बदन का छटाक भर खून फिर उछलने लगा । जो चाहता कि सत्तू से उसी वक्त गत के दो रुपये रतवा ल । क्या न हो आखिर युद्धस बड़ा सम्बन्धी है भी वीन, मुझे नहीं ल जाए गे तो किसे ल जाएँगे । मैं और बाबूजी ही उस घर में बस्ता घर्ता हैं और वीन है ? जितना ही अधिक वह इस बात पर साचता, उसना ही अधिक उस अपने बड़प्पन पर विश्वास होने लगता । आखिर उसने वीन में रत्ता टू का का खाला और बपड बदलने लगा ।

घटा भर बाद जब मगलसेन तयार होकर आँगन में आया, तो माँजी का दिल बठ गया—यह मूगन लेकर समझिया के घर जाएगा ? मगलसेन के सिर पर लाकड़ी पगड़ी नीचे मली कमीज के ऊपर लाकड़ी फौजी कोट, जिसके धागे निकल रहे थे और नीचे घाटीदार पाजामा और मोटे मोटे काँचे बूट । माँ को र्नाई आ गई । पर यह अब सार रोने का नहीं था । अपनी र्नाई को दबानी हुई वह आगे बढ़ आई ।

मनोरमा जा मार्ग की अल्मारी में से एक धला पाजामा निकाल ला । फिर बाबूजी के कमर की आर मुह बरक बोनी सुनते हों जो अपनी एक पगड़ा हमर भेज देना । मगलसेन के पास ढग की पगड़ी नहीं है ।

मगलसेन का बयाकल्प होने लगा । मनोरमा पाजामा ल आई । सत्तू यूँ पालिंग करने लगा । आँगन के ऐन बीचोबीच एक कुरसी पर मगलसेन का बिठा दिया गया और परिवार के लोग उसके आसपास भाग-झोंड करने लगे । क्या मैं मनोरमा की दा सहजियाँ भी आ पहुँची था । मगलसेन पहले से भी छात्र लग रहा था । मगल सिर, दाना हाथ धुत्ता व बीच जाड़े व आगे की आर भुक्कर बठा था । बार-बार उस रामाँव हो रहा था ।

मगलसेन का स्वप्न सचमुच साकार हो उठा । समझिया न घर में उसका वह आचमन टूर् कि दखते बनता था । मगलसेन जाराम कुरसी पर बठा था और पाँच एक आन्नी सग पगा झल रहा था । समझिया आगे-पीछ हाथ बाँधे घूम रत थ । एक आन्नी न सचमुच मुक्कर बड़ बापट में क्या और दूध लाऊ चावाना ? दादा-मा और ?

और जवान ॥ मगलसेन न क्या नै आधा गिलास ल आत्रा ।

समझिया न घर की ठेका मंत्र पत्र था कि मगलसेन दग रह गया और उसका सिर हवा में तरने लगा । आवाज ऊँची बरक बाँटा र्नाई कुछ पड़ी जिया था है

या नहीं ? हमारा बेटा तो एम० ए० पास है ।”

“जी, आपकी दया स लडकी ने इसी साल बी० ए० पास किया है ।

मंगलसेन ने छड़ी से फश को ठकौरा, फिर सिर हिलाकर बोला, ‘ घर का काम-धंधा भी कुछ जानती है या सारा वक्त किताबों ही पढ़ती रहती है ?’

“जी, थोड़ा-बहुत जानती है ।”

‘ थोड़ा-बहुत क्या ?’

आखिर सगाई डलवान का वक्त आया । समझी बादामां स भर जितन ही थाल लाकर बाबूजी और मंगलसेन के सामन रखने लगे । बाबूजी ने हाथ बाध दिए ‘ मैं तो केवल एक रुपया और चार आने लू या । मरा इन चीजों में विश्वास नहीं है । हमें अब रानी लम्मा को बदलना चाहिए । आप सलामत रह, आपका सवा रुपया भी मेरे लिए सवा राय के बराबर है ।

‘ आपको किस चीज की कमी है, लालाजी । पर हमारा दिल रखन के लिए ही कुछ स्वीकार कर लीजिए ।’

बाबूजी मुसकराए, ‘नहीं महाराज, आप मुझ मजबूर न कर । यह उसूल की बात है । मैं तो सवा ही रुपया लेकर जाऊंगा । आपका मिताग बुराद रह । आपकी बेटी हमारे घर आएगी तो साक्षात् लक्ष्मी विराजगी ।

मंगलसेन के लिए चुप रहना असम्भव हो रहा था । हुमककर बोला, एक बार कह जो दिया जी कि हम सवा रुपया ही लेंगे । आप बार बार क्या करते हैं ?

बेटी के पिता हंस दिए और पास खड़े जपन किमी सम्बन्धी के कान म बोले, “लडके के चाचा हैं दूर के । घर म टिक हुए हैं । लालाजी न आसरा द रखा है ।

आखिर समझी अंदर से एक थाल ले आए जिम पर लाल रंग का रानी लम्मा बिछा था और बाबूजी के सामने रख दिया । बाबूजी न लम्मा उठाया, तो नीच चाँदी के थाल म चाँदी की तीन चमकम करती बटोरियां रखी थीं, एक म कमर, दूसरी मे राँगला घागा, तीसरी मे एक चमकता चाँदी का रुपया और चमकती चबनी । इसके अलावा तीन बटोरियां म तीन छोटे छोट चाँदी के चम्मक रखे थे ।

आपन आखिर अपनी ही बात की ’ बाबूजी न हंसकर कहा ‘ मैं तो केवल सवा रुपया लेने आया था ’ मगर थाल स्वीकार कर लिया और मन-ही-मन बटोरियो, थाल और चम्मचा का मूल्य आँकने लगे ।

मोरमा और उसकी महलियां छज्जे पर सही थी जब दोना भाई सटक पर आते दिखाई दिए । मंगलसेन व कचे पत्र थाल था लाल रंग व लम्मा म देका हुआ जोर आगे-आगे बाबूजी चले आ रहे थे ।

वीरजी अब भी अपन कमरे म थे और पत्र पर उर किमी नावल के पन्ना म अपन मन को लगाने का विफल प्रयास कर रहे थे । उनका माया धवा हुआ था मगर

हृदय धूमिल भावनाओं ने उद्बेलित होने लगा था। क्या प्रमा मेरे लिए भी कोई सदा भेजेगी? सदा रुपये में सगाई डलवान के बारे में वह क्या सोचती होगी? मन-ही मन तो जरूर मेरे आदर्शों को सराहती होगी। मैंने एक गरीब आदमी को अपनी सगाई डलवान के लिए भजा। इससे अधिक प्रत्यक्ष प्रमाण मेरे आदर्शों का क्या हो सकता है?

लाल लाल बघाइयाँ, भोजाईजी! घर में कदम रखते ही मंगलसेन ने आवाज लगाई।

मनोरमा और उसकी सहेलियाँ भागती हुई जगले पर आ गईं। बाबूजी गम्भीर मुद्रा बनाए, आँगन में आए और छड़ी बान में रखकर अपने कमरे में चले गए।

मनोरमा भागती हुई नीचे गई और झपटकर घाल खाचा मंगलसेन के हाथ में छीन लिया।

कसी पगली है! दो मिनट इंतजार नहीं कर सकती।

‘बाहू जी, बाहू!’ मनोरमा ने हसकर कहा, ‘बाबूजी की पगड़ी पहन ली तो बाबूजी ही बन बैठे हैं!’ लाइए मुझे दीजिए। आपका काम पूरा हो गया।’

माँजी की दोनों बहनें जो उस बीच आ गई थी, माँजी से गले मिल मिलकर बघाई देने लगी। आवाज सुनकर बीरजी भी जगले पर आ खड़े हुए और नीचे आँगन का दृश्य देखने लगे। घाल पर रखे लाल कमाल को देखते ही उनका रोम रोम पुलकित हो उठा। सहसा ही वह समुराल की चीखों से गहरा लगाव महसूस करने लगे। इस कमाल को जरूर प्रमा ने अपने हाथ में छुआ होगा। उनका जी जाहा कि कमाल की हाथ में लेकर घूम लें। इस भेंट को देखकर उनका मन प्रमा से मिलने के लिए बेताब होने लगा।

माँजी ने घाल पर से कमाल उठाया। चमकती बटोरियाँ, चमकता घाल बीच में रखे चम्मच। बीरजी को महसूस हुआ जैसे प्रमा ने अपने गोरे-गोरे हाथों से इन चीजों को बरीने से सजाकर रखा होगा।

‘पानी दिलाओ सतू, खाचा मंगलसेन ने आँगन में कुर्सी पर बैठते हुए टॉग के ऊपर टॉग रखकर, सतू की आवाज लगाई।

इतने में माँजी की आवाज आई ‘तीन बटोरियाँ और दो चम्मच? यह क्या हिमाक हुआ? क्या तीन चम्मच नहीं लिये समझिया न?’ फिर बाबूजी ने कमरे की ओर मुँह करके बोली ‘अजी मुनत हो!’ तुम भी कम हो आज क दिन माँ कोई अंदर जा बट्ठा है?

क्या है?’ बाबूजी ने अन्तर में ही पूछा।

कुछ बताओ तो सही, समझिया न क्या कुछ दिया है?

बस, घाल में जो कुछ है वही लिया। तर बटे ने बना जा कर लिया था।’

“क्या तीन कटोरिया थी और दो चम्मच थे ?”

“नहीं तो, चम्मच भी तीन थे ।”

‘चम्मच तो यहाँ सिर्फ दो रखे हैं ।’

“नहीं-नहीं, ध्यान से देखो जरूर तीन होंगे । मगलसेन से पूछो, वही थाल उठाकर लाया था ।”

मगलसेनजी, तीसरा चम्मच कहा है ?”

मगलसेन सत्तू को सगाई का ब्योरा दे रहा था—समझी हमारे सामने हाथ बाधे यो खड़े थे, जसे नौकर हो । लम्की बड़ी सुशील है, बड़ी सलीके वाली बी० ए० पास है, सीता पिरोना भी जानती है ”

‘मगलसेनजी, तीसरा चम्मच कहाँ है ?

‘कौन-सा चम्मच ? वही थाल में होगा ।’ मगलसेन न लापरवाही से जवाब दिया ।

“थाल में तो नहीं है ।”

‘तो उन्होंने दो ही चम्मच दिए होंगे । बाबूजी न थाल लिया था ।’

“हमें बेवकूफ बना रहे हो मगलसेनजी, तुम्हारे भाई कह रहे हैं, तीन चम्मच थे ।”

इतने में बाबूजी की गरज सुनाई दी, ‘इसीलिए मेरे साथ गये थे कि चम्मच गवाँ जाओगे ? कुछ नहीं तो पाँच-पाँच रुपए का एक एक चम्मच होगा ।’

मगलसेन ने उसी लापरवाही से कुर्सी पर से उठकर कहा, ‘मैं अभी जाकर पूछ आता हूँ’ । इसमें क्या है ? हो सकता है, उन्होंने दो ही चम्मच रखे होंगे ।’

“वहाँ कहाँ जाओगे ? बताओ चम्मच कहाँ है ? मारा बकन ता थाल पर बमाल रखा रहा ।”

‘बाबूजी, थाल तो आपने लिया था, आपने चम्मच गिन नहीं थे ?’

‘मेरे साथ चालाकी करता है ? बदजात ? बता तीसरा चम्मच कहाँ है ?”

माजी चम्मच खा जान पर विचलित हो उठी थी । बहना की ओर घूमकर वाली “गिनी-बुनी तो समझियो न चीजें दी हैं, उनमें से भी अगर कुछ खो जाए ता बुरा तो बाहिर लगता ही है ।”

“बसा ठीठ आदमी है, मुन रहा है और कुछ बालना नहीं ।” बाबूजी न गरज कर कहा ।

चम्मच खो जाने पर अचानक बीरजी को बेहद गुस्सा आ गया । प्रभा न चम्मच भेजा और वह उन तक पहुँचा ही नहीं । प्रभा के प्रेम की पहली निशानी ही खा गई । बीरजी सहसा आवेग में आ गए । बीरजी ने आवेग में देखा न ताब मगलसेन के पास जाकर उसे दानो कणों से पकड़कर झिझाड़ दिया ।

"आपकी इमोलिए भेजा था कि आप चीजें गेंवा आए ?"

सामी चुप हो गये। सबता-सा छा गया। बीरजी गिन्न-से महगूस करने लगे कि मुझमें यह क्या झूल हो गई और झोंपर बापस जाने लगे।

'तुम बीच में मत पडा, बेटा ! अगर चम्मच खो गया है तो तुम्हारी बला से ! सबका घम अपने-अपन साथ है। एक चम्मच से कोई अमीर नहीं बन जाएगा !'

जेब ता दरा इसकी ! ' बाबूजी न गरजकर कहा।

मोसियाँ झोंप गईं और पीछे हट गईं। पर मनोरमा से न रहा गया। क्षद आगे बढ़कर वह जेब देखने लगी। रसोईघर की दहलीज पर सतू हाथ में पानी का गिलास उठाए ख गया और मगलसेन की ओर देखने लगा। चाचा मगलसेन लडा कमी एक का मुह दल रहा था बभी दूसरे का। वह कुछ कहना चाहता था, मगर मुँह से एक शब्द भी नहीं निकल रहा था।

एक जेब में से मला-सा हमाल निकला, फिर बीडिया की गड्डी माचिस, छोटा सा पतिल का टुकडा।

"हम जेब में तो नहीं है।' मनोरमा बोली और दूसरी जेब देखने लगी। मनोरमा एक एक चीज निकालती और अपनी सहलिया को दिखा दिताकर हसती।

दाई जेब में कुछ खनका। मनोरमा चिल्ला उठी 'कुछ खनका है, इसी जेब में है, घोर पकडा गया ! तुमने भुना मालती ?'

जेब में टूटा हुआ चाकू रखा था, जो चाबिया के गुच्छे में लगकर रानका था।

"छोड दो, मनोरमा ! जाने दो सबका घम अपने-अपने साथ है। आपसे चम्मच अच्छा नहीं है मगलसेनजी, लेकिन यह सगाई की चीज थी।

मगलसेन की साम फूलन लगी और टाँगें काँपने लगी, लेकिन मुँह से एक शब्द भी नहीं निकल पा रहा था।

'दाना कान खोकर सुन ले, मगलसेन ! बाबूजी ने गरजकर कहा, 'मैं तेरे से पाँच रुपये चम्मच के ले लूँगा, इसमें मैं कोई लिहाज नहीं करूँगा।'

मगलसेन लडे लडे गिर पडा।

बधाई, वहनजी ! ' नीचे आँगन में स तीन चार स्त्रिया की आवाज़ एक साथ आ गई।

मगलसेन गिरा भी अजीब ढंग से। घम्म से जमीन पर जो पडा तो जकड़ू हो गया और पगड़ी उतर कर गले में आ गई। मनोरमा अपनी हँसी रोके न रोक सकी।

'देखो जो कुछ तो खयाल करा। गली मुहल्ला सुनता होगा। इतना रखाई से भी कोई बोलता है !' माँजी न कहा फिर पचराकर सतू से वहन लगी, "इधर माओ मन्तू और इन्ह छज्जे पर लिटा आओ।

बीरजी फिर खिन्न-सा अनुभव करत हुए अपन कमर में चस गए। मैं न जल्द

माजी की मुझे बीच में नहीं पड़ना चाहिए था। इन्होंने चम्मच वहाँ डुबाया होगा, जहर वही गिर गया होगा।

बाद्री नीचे अपने कमरे में चले गए। सीधे ही घर में टालक बजने की आवाज आने लगी। मनोरमा और उसकी सहेलियाँ आगन में कालीन बिछवाकर बैठ गईं। टालक की आवाज सुनकर पड़ोसिनें घर में बघाई देने आने लगीं।

एन उसी वक्त यलीवाले दरवाजे के पास एक लड़का आ खड़ा हुआ। मकोच वहाँ वह निश्चय नहीं कर पा रहा था कि जबर जाए या वहीं खड़ा रहे। मनोरमा ने देखते ही पहचान लिया कि प्रभा का भाई, वीरजी का साला है। मागी हुई उसके पास जा पड़ोसी और शराब से उसके सिर पर हाथ फेरने लगी।

आजा, बेटाजी अन्दर आजा, तुम यहाँ पड़ास में रहते हो न ?

"नहीं, मैं प्रभा का भाई हूँ।"

"मिठाई खाओगे ? मनोरमा ने फिर शराब से कहा और हँसने लगी।

लड़का सकुचा गया।

'नहीं, मैं तो यह दान आया हूँ' उसने कहा और जैकेट की जेब में से एक चम्मच निकाला और मनोरमा के हाथ में देकर उही कदमों वापस लौट गया।

'हाय, चम्मच मिला गया। माजी चम्मच मिला गया।'

पर माजी सम्बन्धितों से घिरी खड़ी थी। मनोरमा रुक गई और माँ से नज़र मिलाने की कोशिश करते हुए, हाथ ऊँचा करके चम्मच हिलाने लगी। चम्मच को कभी नाक पर रखती, कभी हवा में हिलाती, कभी ऊँचा फेंककर हाथ में पकड़ती, मगर माजी कुछ समझ ही नहीं रही थी।

छज्जे पर सतू ने मगलसन को खाट पर लिटाया और मुँह पर पानी का छीटा देत हुए बोला, 'तुम शीत जौत गए। बस तनखाह मिलन पर दो रुपये नकद तुम्हारी हथेली पर रख दूँगा।'

एक और ज़िंदगी

और उस एक क्षण के लिए प्रकाश व हृदय की घड़बड़ जसे रही रही। कितना विचित्र था वह क्षण—आवाज से टूटकर गिरे हुए नशा जसा। कोहरे के वक़्त में एक लकीर-सी खींचकर वह क्षण सहसा व्यतीत हो गया।

कोहरे में तो गुज़रकर जाती हुई आकृतियों को उसने एक बार फिर ध्यान से देखा। क्या यह सम्भव था कि व्यक्ति की आँखें 'म हृद तक' उसे धारित दें? तो जो कुछ वह देख रहा था, वह यथार्थ ही नहीं था?

कुछ ही क्षण पहले जब वह कमरे से निकलकर बालकनी पर आया था, तो क्या उसने कल्पना में भी यह सोचा था कि आकाश के ओर-छोर तक फैल हुए कोहरे में गहरे पानी की निचली सतह पर तरती हुई मछलियों जसी जो आकृतियाँ नज़र आ रही हैं उनमें कहीं व दा आकृतियाँ भी होंगी? मंदिर वाली सड़क से आत हुए दो कुहरीले रंगों पर जब उसकी नज़र पड़ी थी तब भी क्या उसके मन में कहा ऐसा अनुमान जागा था? फिर भी न जान क्या उस लग रहा था जैसे बहुत समय से, बल्कि कई दिनों से वह उनके वहाँ से गुज़रने की प्रतीक्षा कर रहा हो जैसे कि उन्हें देखने के लिए ही वह कमरे से निकलकर बालकनी पर आया हो और उहाँ को ढूँढ़ती हुई उसकी आँखें मन्दिर वाली सड़क की तरफ मुड़ी हो।—यहाँ तक कि उस धानी आँबल और नीली नेकर के रंग भी जैसे उसके पहचाने हुए हो और कोहरे के विस्तार में वह उन दो रंगों को ही खोज रहा हो। वस उन आकृतियों के बालकनी के नीचे पहुँचने तक उसने उन्हें पहचाना नहीं था। परन्तु एक क्षण में सहसा वे आकृतियाँ इस तरह उसके सामने स्पष्ट हो उठी थीं जैसे जड़ता के क्षण में अवचेतन की गहराई में दूबा हुआ कोई विचार एकाएक चेतना की सतह पर कौंध गया हो।

नीली नेकर वाली आकृति घूमकर पीछे की तरफ देख रही थी। क्या उस भी कोहर में किसी की साज थी? और किसकी? प्रकाश का मन हुआ कि उस आवाज़ दे दे, मगर उसका गले से शब्द नहीं निकले। कोहरे का समुद्र अपनी गंभीरता में खामोश था मगर उसे उसकी अपनी खामोशी एक ऐसे तूफान की तरह लग रही थी जो हवा में मिलने से अपने अंदर ही घुमड़कर रह गया हो। नहीं तो क्या वह 'तना ही असमय' था कि उसने गलत एक शब्द भी न निकल सके?

वह बालकनी से हटकर कमरे में आ गया। वहाँ आते ही अपने अस्त-व्यस्त सामान पर नज़र पड़ी, तो शरीर में निराशा की एक सिहरन दौड़ गई। क्या यही वह जिंदगी थी जिसके लिए उसने ? परंतु उस लगा कि उसके पास कुछ भी सोचने के लिए समय नहीं है। उसने जल्दी-जल्दी कुछ चीजों को उठाया और रख दिया जस कि कोई चीज ढूँढ़ रहा हो जो उसे मिल न रही हो। अचानक खूँटी पर लटकती हुई पतलून पर नज़र पड़ी, तो उसने बाज़ामा उतारकर जल्दी से उसे पहन लिया। फिर पल भर खोया-सा खड़ा रहा। उसे समझ नहीं आ रहा था कि वह क्या चाहता है। क्या वह उन दोनों के पीछे जाना चाहता था ? या बालकनी पर खड़ा होकर पहले की तरह उहाँ देखते रहना ही चाहता था ?

अचानक उसका हाथ भेड़ पर रखे हुए ताने पर पड़ गया, तो उसने उसे उठा लिया। जल्दी से दरवाज़ा बंद करके वह जीने से उतरने लगा। जीने पर आकर पता चला कि फूटा नहीं पहना। वह पल भर के लिए ठिठककर खड़ा रहा मगर लौटकर नहीं गया। नीचे सड़क पर पहुँचते ही पाव कीचड़ में लयपथ हो गए। दूर देखा—वे दोनों आकृतियाँ घोड़ों के अड्ड के पास पहुँच चुकी थी। वह जल्दी-जल्दी चलने लगा। पास से गुज़रते हुए एक घोड़े वाले से उसने कहा कि वह आगे जाकर नीली नेकर वाले बच्चे को रोक ले—उससे कहे कि कोई उससे मिलने के लिए पीछे आ रहा है। घोड़े वाला घोड़ा दौड़ाता हुआ गया मगर उन दोनों के पास न रुककर उनसे आगे निकल गया। वहाँ जाकर उसने न जाने किसे उसका सदा द दिया।

जल्दी-जल्दी चलते हुए भी प्रकाश का लग रहा था जैसे वह बहुत आहिस्ता चल रहा हो, जैसे उसके धुटने जकड़ गए हों और रास्ता बहुत बहुत लम्बा हो गया हो। उसका मन इस आशा से बेचन था कि उसके पाम पहुँचने तक व लोग घोड़ों पर सवार होकर वहाँ से चल न दें और जिस दूरी को वह नापना चाहता था, वह ज्या की ल्यो न बनी रहे। मगर ज्या-ज्या फासला कम हो रहा था, उसका कम होना भी उसे भवर रहा था। क्या वह जान-बूझकर अपन को एक ऐसी स्थिति की ओर नहीं ले जा रहा था जिससे उसे अपने को बचाना चाहिए था ?

उन लोगों ने घोड़े नहीं लिए थे। अब वह उनसे तीन-चार गज दूर रह गया, तो सहसा उसके कदम रुक गए। तो क्या सचमुच अब उसे उस स्थिति का सामना करना ही था ?

'पागी !' इससे पहले कि यह निश्चय कर पाता अनायास उसके मुँह से निकल गया।

बच्चे की बड़ी-बड़ी आँखें अचानक उसकी तरफ़ धूम गई—साथ ही उसकी माँ की आँखें भी। मोहरे में अचानक कई-कई बिजलियाँ कौंध गईं। प्रकाश गो-एक कदम और आगे बढ़ गया। बच्चा विस्मित आँखों से उसकी तरफ़ देखता हुआ अपनी माँ के

साथ सट गया ।

'पताग, इधर जा भरे पाग', प्रवाग ने हाथ से घुटनी धजाता हुआ कहा, जैसे कि यह हर रोज की एक साधारण घटना हो और बच्चा अभी कुछ मिनट पहले ही उमने पाग में अपनी माँ के पास गया हो ।

बच्चा ने माँ की तरफ देगा । वह अपनी आँखें हठाकर दूसरी तरफ देग रही थी । बच्चा और भी उससे साथ सट गया और उसकी आँखें विरमय के साथ-साथ एक गदगद से घमन उठी ।

प्रवाग का यहाँ गडगड उल्लस हो रही थी । उसका रुका था कि कुछ बच्चा कर उस दूरा का नापने के सिवा उससे पास कोई चारा नहीं है । वह लम्ब-लम्ब डग मरकर बच्चे के पास पहुँचा और उस उमने बाँहा से उठा लिया । बच्चे ने एक बार फिर बारबार उससे हाथा से छूने की चट्टा की, परन्तु दूसरे ही क्षण अपनी छोटी-छोटी बाँह उससे गल में डालकर वह उससे लिपट गया । प्रवाग उस लिए हुए थोड़ा एक तरफ की हट आया ।

'तूने पापा का पट्टवाना नहीं था क्या ?'

पताना ता', बच्चा बाँह उससे गल में डालकर झूलने लगा ।

'तो तू झट से पापा के पास आया क्या नहीं ?'

'नहीं आया, कहकर बच्चे ने उसे चूम लिया ।

तू आज ही यहाँ आया है ?'

नहीं, तल आया ता ।'

'रहेगा या आज ही लौट जाएगा ?'

अभी तीन घण्टा दिन लहूँदा ।'

ता पापा के पास मिलने आएगा न ?'

'आऊँगा ।'

प्रवाग ने एक बार उसे अच्छी तरह अपने साथ सटाकर चूम लिया तो बच्चा चिल्लाकर उसके माथे आँखों और गालों को जगह जगह चूमने लगा ।

'कसा बच्चा है !' पास खड़े एक कश्मीरी मजदूर ने सिर हिलाते हुए कहा ।

'तुम कहाँ लहते हो ?' बच्चा बाँह उसकी गरदन में डाले हुए जैसे उसे अच्छी तरह देखने के लिए थोड़ा पीछे की हट गया ।

यहाँ ।' प्रवाग ने दूर अपने कमरे की बालकनी की तरफ इशारा किया । 'तू कब तक यहाँ आएगा ?'

अभी ऊपल जाकल दूद पिऊँदा, उछक बाद तुमाले पाछ आऊँदा ।' बच्चे ने एक बार अपनी माँ की तरफ देखा और उसकी बाँहों से निकलने के लिए मचलने लगा ।

'मैं कहाँ बालकनी में कुरसी डालकर बठा रहूँगा और तेरा इंतजार करूँगा

बच्चा बाहा से उतरकर अपनी मा की तरफ भाग गया तो प्रकाश ने पीछे से कहा । क्षण भर के लिए उसकी आँखें बच्चे की मा से मिल गईं परन्तु दूसरे ही क्षण दोनों दूसरी-दूसरी तरफ देखने लगे । बच्चा जाकर मा की टांगों से लिपट गया तो वह कोहरे के पार देवदारा की धुँधली रेखाओं को देखती हुई उससे बोली, “तुझे दूध पीकर आज खिलनमग नहा चलना है क्या ?”

‘नहीं’ बच्चे ने उसकी टांगों के सहारे उछलते हुए सपाट जवाब दिया, “मैं दूध पीतल पापा से पाछ जाऊँदा ।”

तीन दिन तीन रातों से आकाश घिरा हुआ था । कोहरा धीरे धीरे जتنا घना हो गया था कि बालकनी से आगे कोई रूप, कोई रंग नजर नहीं आता था—आकाश की पारदर्शिता पर जैसे गाँगा सफेदा पात दिया गया था । ज्या-ज्यों समय बीत रहा था कोहरा और घना होता जा रहा था । कुरसी पर बैठे हुए किसी किसी क्षण महसूस होने लगता था जैसे वह बालकनी पहाड़ियाँ से घिरे हुए खुले विस्तार में न होकर अन्तरिक्ष के किसी रहस्यमय प्रदेश में बनी हो—नीचे और ऊपर केवल आकाश ही आकाश हा जिसके अतल में बालकनी की सत्ता एक अपन-आपमें पूर्ण और स्वतंत्र लोक की तरह हो ।

उसकी आँखें इस तरह एकटक सामने की तरफ देख रही थीं—जैसे आकाश में और कोहर में उसे कोई अर्थ ढूँढना हो—अपनी बालकनी के बहा होने के रहस्य को जानना हो ।

हवा से कोहर के बादल कई-कई रूप लेकर इधर-से-उधर भटक रहे थे—अपनी गहराई में फलत और सिमटत हुए वे अपनी याह नहीं पा रहे थे । बीच में कहीं कहीं देवदारों की फुनगियाँ एक हरी लकीर की तरह निकली हुई थीं—कोहरे के आकाश पर लिखी गई एक अस्त-व्यस्त लिपि जैसी । देखते-देखते वह लकीर भी गुप्त हो जाती थी—कोहरे का हाथ उसे रहने देना नहीं चाहता था । लकीर को मिटत देखकर स्नायुओं में एक तनाव-सा आ रहा था—जैसे किसी भी तरह वह उस लकीर का मिटन से बचा लेना चाहता हो । परन्तु जब एक बार लकीर मिटकर बाहर नहीं निकली तो उमन सिर पीछे को झाल ज़िया और खुद भी कोहरे में कोहरा होकर पड़ रहा ।

अतीत के कोहरे में कहीं वह एक दिन भी था जो चार बरस बीत जाने पर भी आज तक बीत नहीं सना था ।

बच्चे की पहली घपगाँठ थी उम्र दिन—वही उनके जीवन की सबसे बड़ी गाँठ बन गई थी ।

विवाह के कुछ महीने बाद स ही पति-पत्नी अलग-अलग रहने लगे थे । विवाह के साथ जो सूत्र फुटना चाहिये था, वह चुन नहीं सका था । दोनों अलग-अलग जगह काम करते थे और अपना-अपना स्वतंत्र तानाबाना बुनकर जी रहे थे । गवाचार के

नाते साल छ महीने मे बन्नी एक् बार मिल लिया करते थे । वह लोकाचार ही इस बच्चे को ससार मे ले आया था ।

बीना समझती थी कि इस तरह जान बूझकर उसे फँसा दिया गया है । प्रकाश सोचता था कि अनजान मे ही उससे एक् अपराध हो गया है । परन्तु जन्म के पाँचवें मा छठे रोज बच्चे की हालत सहसा बहुत खराब हो गई, तो वह अपने कमरे मे अकेला बठा हवा मे बच्चे के आकार को देखता हुआ कहता रहा था, ' देख, तुझे जीना है । तू इस तरह नहीं जा सकता । सुन रहा है ? तुझे जीना है । हर हालत मे जीना है । मैं तुझे जाने नहीं दूँगा । समझा ? "

साल भर से बच्चा माँ के पास ही रह रहा था । बीच मे बच्चे की दादी सात महीने उसके पास रह आई थी ।

पहली वर्षगांठ पर बीना ने लिखा था कि वह बच्चे का लेकर अपने पिता के यहाँ लखनऊ जा रही है । वही पर बच्चे के जन्मदिन की पार्टी करेगी ।

प्रकाश ने उसे तार दिया था कि वह भी उस दिन लखनऊ आएगा । अपने एक मित्र के यहाँ हजरतगंज मे ठहरेगा । अच्छा होगा कि पार्टी वही पर की जाए । लखनऊ के कुछ मित्रो को भी उसने सूचित कर दिया था कि उसके बच्चे की वर्षगांठ के अवसर पर वे उसके साथ चाय पीने के लिए आएँ ।

उसने सोचा था कि बीना उसे स्टेशन पर मिल जाएगी, परन्तु वह नहीं मिली । हजरतगंज पहुँचकर महा घो घुक्ने के बाद उसने बीना के पास सदेश भेजा कि वह वहाँ पहुँच गया है, कुछ लोग साढ़े चार-पाच बजे चाय पर आएँगे इसलिए वह उस समय तक बच्चे को लेकर अवश्य वहाँ पहुँच जाए । परन्तु पाच बजे, छ बजे सात बजे गए बीना बच्चे को लेकर नहीं आई । दूसरी बार सन्देश भेजने पर पता चला कि वहाँ उन लोगो की पार्टी चल रही है । बीना ने कहला भेजा कि बच्चा आठ बजे तक खाली नहीं होगा, इसलिए वह उस समय उसे लेकर नहीं आ सकती । प्रकाश ने अपने मित्रो को चाय पिलाकर बिदा कर दिया । बच्चे के लिए खरीदे हुए उपहार बीना के पिता के यहाँ भेज दिए । साथ मे यह सन्देश भी भेजा कि बच्चा जब भी खाली हो, उसे थोड़ी देर के लिए उसके पास भेज दिया जाए ।

परन्तु आठ के बाद नौ बजे, दस बजे बारह बजे गए पर बीना ने तो बच्चे को लेकर ही आई और न ही उसने उसे किसी और के साथ भेजा ।

प्रकाश रात भर सोया नहीं । उसके दिमाग को जस कोई छनी से छीलता रहा । मुबह उसने फिर बीना के पास सन्देश भेजा । इस बार बीना बच्चे को लेकर आ गई । उसने बताया कि रात का पार्टी दर तक चलती रही, इसलिए उसका आना सम्भव नहीं था—अगर वास्तव मे उस बच्चे से ध्यान था, तो उसका मतलब था कि वह अपने उपहार लेकर छुट उनके यहाँ पार्टी में आ जाता ।

उस दिन सुबह से आरम्भ हुई बात आधी रात तक चलती रही। प्रकाश बार बार कहता रहा, “बीना, मैं इस बच्चे का पिता हूँ। पिता होने के नाते मुझे यह अधिकार तो है ही कि मैं बच्चे को अपने पास बुला सकूँ।”

परन्तु बीना का उत्तर था “आपने पास पिता का िल होता, तो क्या आप पार्टी में न आते? आप मुझसे पूछें, तो मैं तो कहूँगी कि यह एक आकस्मिक घटना ही है कि आप हमने पिता हैं।”

“बीना!” वह फटी फटी आवाज से उसके चेहरे की तरफ़ दबता रह गया।
“तुम बताओ, तुम चाहती क्या हा?”

“कुछ भी नहीं। मैं आपसे क्या चाहूँगी?”

“तुमने सोचा है कि इस बच्चे के भविष्य का क्या होगा?”

“जब हम अपने ही भविष्य के बारे में नहीं सोच सकते तो इसके भविष्य के बारे में क्या सोचेंगे?”

“क्या तुम यह पसन्द करोगी कि बच्चे को मुझे सीप दा और खुद स्वतंत्र हो जाओ?”

“बच्चे को आपको सीप दूँ?” बीना के स्वर में विवृण्णा गहरी हो गई। “इतनी मूल मैं नहीं हूँ।”

“तो क्या तुम यही चाहती हो कि उसका निर्णय करने के लिये अदालत में आया जाए?”

“आप अदालत में जाना चाहें ता मुझे उसमें भी एतराज नहीं है। ज़रूरत होने पर मैं सुप्रीमकोर्ट तक लड़ूँगी। आपका बच्चे पर कोई अधिकार नहीं है।”

“बच्चे को पिता से ज्यादा मा की ज़रूरत होनी है,” कई दिन कई सप्ताह वह मन ही मन सघष करता रहा। ‘जहाँ उसे दानो न मिल सकते हैं वहाँ उसे माँ तो मिलनी चाहिए ही। अच्छा है तुम बच्चे की बात मूल जाओ और नये सिरे से अपनी ज़िंदगी बनाने की कोशिश करो।’

“भगार!”

‘फिज़ूल की हज़्जत में कुछ नहीं रखा है। बच्चे बच्चे ता होते ही रहते हैं। तुम सम्बन्ध विच्छेद करके फिर से ब्याह कर लो, ता घर में बच्चे ही बच्चे हो जाएँगे। समझ लेना कि इस एक बच्चे के साथ कोई दुष्घटना हो गई थी।’

सोचन सोचन में दिन, सप्ताह और महीने निबलत गए। क्या सचमुच इंसान पहले की ज़िंदगी को मिटाकर नये सिरे में ज़िंदगी आरम्भ कर सकता है? क्या सचमुच ज़िंदगी के कुछ वर्षों को एक दुःस्वप्न की तरह भूलन का प्रयत्न किया जा सकता है? बहुत-से इंसान हैं जिनकी ज़िंदगी वही न वही किसी न किसी दोराहे से गलत दिशा की ओर भटक जाती है। क्या यही उचित नहीं कि इंसान उस रास्ते को बदल

कर अपनी गलती सुधार ले ? आखिर इंसान को जीने के लिए एक ही जीवन ता मिलता है—वही प्रयोग के लिए और वही जीने के लिये। तो क्या इन्सान एक प्रयोग की असफलता को जीवन की असफलता मान ले ?

कोट में बागज पर हस्ताक्षर करते समय छत के पखे से टक्करावर एक चिड़िया का बच्चा नीचे आ गिरा।

“हाय-हाय चिड़िया मर गई”, किसी ने कहा।

‘मरी नहीं अभी जिंदा है’, कोई और बोला।

‘चिड़िया नहीं है, चिड़िया का बच्चा है’, किसी तीसरे ने कहा।

“नहीं, चिड़िया है।”

‘नहीं, चिड़िया का बच्चा है।’

“इसे उठाकर बाहर हवा में छोड़ दो।”

“नहीं, यही पड़ा रहने दो। बाहर इसे कोई बिल्ली खा जायगी।”

“यह यहाँ आया किस तरह ?”

“जाने किस तरह ? रोशनदान के रास्ते आ गया होगा।

‘बेचारा कस तड़प रहा है।’

“शुक्र है पक्ष ने इसे काट ही नहीं दिया।

“काट दिया होता तो बल्कि अच्छा था। अब इस तरह बेचारा क्या जाएगा ?”

तब तक पक्षि-पक्षी दोनों ने बागज पर हस्ताक्षर कर दिए थे। बच्चा उस समय कोट के अहाते में कीबा के पीछे भागता हुआ किलकारियाँ मार रहा था। वहाँ धूल उड़ रही थी और चारों तरफ मटिमाली-सी धूप फली थी।

फिर वही दिन, सप्ताह और महीने !

अढ़ाई साल गुजर जान पर भी प्रकाश फिर से जिन्गी आरम्भ करने का निश्चय नहीं कर पाया था। उस अरस में बच्चा तीन बार उससे मिलन के लिए आया था। वह नौकर के साथ आता था और गिन मर रहकर अंधेरा हान पर लोट जाता था। पहली बार वह उससे ‘गरमाठा’ रहा था मगर बाद में उससे हिल मिल गया था। प्रकाश बच्चे की तकर घूमने जाता था उसे आइसक्रीम खिलाना था, मिलोने से दना था। बच्चा जाने के समय हठ करता था अबी नहा जाऊँदा। दूध पीनल जाऊँदा। पाना पातल जाऊँदा।”

जब बच्चा इस तरह की बात कहता था, तो उसने अन्तर सहमा कोई चीज मुलम उठनी थी। उसका मन होता था कि, नौकर को सिद्धकर वापस मेर दे और बच्चे को हमसा-हमेगा के लिए अपन पास रख ले। जब नौकर बच्चे से कहता था, “बाबा, धलो अब दर हो रही है”, तो प्रकाश का गरीर एक हवांग आयेन से काँपने लगता और बहुत कठिनता से वह अपने को संभाल पाता। आखिरी बार बच्चा रात के

नौ बजे तक रुका रह गया, तो एक अपरिचित व्यक्ति उसे लेन के लिए बग आया था।

बच्चा उस समय उसकी गोदी में बठा खाना खा रहा था।

“देखिए, अब बच्चे को भेज दीजिए, इसे बहुत दर्द हो गई है” अजनबी ने आवर कहा।

— “आप देख रहे हैं बच्चा खाना खा रहा है”, उसका मन हुआ कि मुक्का मार कर उस आदमी के दात तोड़ दे।

“हा, हा, आप खाना खिला दीजिए”, अजनबी ने उदारता के साथ कहा, “मैं नीचे इन्तज़ार कर रहा हूँ।”

गुस्से के मारे प्रकाश के हाथ इस तरह कांपन लगे कि उसके लिए बच्चे को खाना खिलाना असम्भव हो गया।

जब नीकर बच्चे को लेकर चला गया, तो उसने देखा कि बच्चे की टोपी वही पर रह गई है। वह टोपी लिए हुए भागकर नीचे पहुँचा, तो देखा कि नीकर और अजनबी के अलावा बच्चे के साथ कोई और भी है—उसकी माँ। वे लोग चालीस-पचास गज आगे पहुँच गए थे। उसने नीकर का आवाज़ दी, तो चारों ने मुड़कर एकसाथ उसकी तरफ देखा। नीकर टोपी लेने के लिए लौट आया और शेष तीनों आगे चलते रहे।

उस रात वह एक दोस्त की छाती पर सिर रखकर देर तक रोता रहा।

नये सिर से फिर वही सवाल मन में उठन लगा। क्यों वह अपने को इस अतीत से पूरी तरह मुक्त नहीं कर लेता? यदि बसा हुआ घरबार हो, तो अपन आसपास बच्चा की चहल-पहल में वह इस दुःख को मूल नहीं जाएगा? उसने अपन को बच्चे से इसीलिए तो अलग किया था कि अपन जीवन को एक नया मोड़ दे सके—फिर वह इस तरह अकेली जिंदगी की यात्रा किसलिए सह रहा था?

परन्तु नये सिर से जीवन आरम्भ करने की कल्पना में सदा एक आशका मिली रहती थी। वह उस आशका से जितना ही लड़ता था, वह उतनी ही और प्रबल हो उठती थी। जब एक प्रयोग सफल नहीं हुआ तो यह कैसे कहा जा सकता था कि दूसरा प्रयोग सफल होगा ही?

वह पहले की भूल को दोहराना नहीं चाहता था, इसलिए उसकी आशका ने उसे बहुत सतक कर दिया था। वह जिस किसी लड़की का अपनी भावी पत्नी के रूप में देखता, उसीके चेहरे में उसे अपने पहले जीवन की छाया नज़र आन लगती। हालाँकि वह स्पष्ट रूप से इस विषय में कुछ भी सोच नहीं पाता था फिर भी उसे लगता था कि वह एक ऐसी ही लड़की के साथ जीवन बिता सकता है, जो हर दृष्टि से बीना के विपरीत हो। बीना में बहुत अहं था, वह उसके बराबर पत्नी लिखी थी, उससे ज्यादा कमाती थी। उसे अपनी स्वतंत्रता का बहुत मान था और वह समझती थी कि किसी भी परिस्थिति का वह अकेली खूबर मुकाबिला कर सकती है। शारीरिक दृष्टि से भी

धीन-धीन लम्बी ऊंची थी। और उसपर भारी पड़ती थी। मातृचीत भी वह मुले मरदाना ढग से भरती थी। वह अब एक ऐसी लड़की गहता था जा हर तरह से उस पर निभर वरे, जिसकी नमजोरियाँ एक पुरुष के आश्रय की अपेक्षा रखती हैं।

और कुछ ऐसी ही लड़की थी निमला—उसने एक घनिष्ठ मित्र वृष्ण जुनेजा की वहा। उसने दो एक बार उस लड़की को देखा था। बहुत सीधी-सादी भामुम-सी लड़की थी। बात करते हुए उसकी आँखें नीच को झुक जाती थी। साधारण पढ़ी लिखी थी और बहुत साधारण ढग से ही रहती थी। उसे देखकर अनायास मन में सहानुभूति उमड़ आती थी। छत्तीस-सत्ताईस वरस की होकर भी देपन में वह अठारह-उन्नीस से ज्यादा की नहीं लगती थी। वह जुनेजा के घर की कठिनाइयाँ को जानता था। उन कठिनाइयों के कारण ही गायब इतनी उम्र तक उस लड़की का विवाह नहीं हो सका था। उसके साथ निमला के विवाह की बात चलाई गई तो उसके मन में किसी कोने में सोया हुआ पुलक सहसा जाग उठा। उसे सचमुच लगा जैसे उसका धोमा हुआ जीवन उसे वापस मिल रहा हो, जैसे अंदर की एक टूटी हुई कल्पना फिर से आकार ग्रहण कर रही हो। हवा जीर जाकाश में उसे एक और ही आकर्षण लगने लगा। रास्ते में बिक्ती हुई पूजा की बेनिया पहले से वही सुगन्धित प्रतीत होने लगी। निमला ब्याह कर उसके घर में जाई भी नहीं थी कि वह शाम को लौटते हुए उसके लिए बनिप्राँ खरीदकर घर लाने लगा। अपना पहले का घर उसे छोटा लगने लगा, इसलिए उसने एक बड़ा घर ले लिया और उसे सजान के लिए नया-नया सामान खरीद लाया। पास में ज्यादा पैसे नहीं थे इसलिए कुछ ल ठेकर भी उसने निमला के लिए न जाने क्या कुछ बनवा डाला।

निमला हँसती हुई उसके घर में आई—और हसती ही रही।

पहले तो कुछ दिन वह नहीं समझ सका कि वह हसी क्या है। निमला जब कभी बिना बात के हँसना शुरू कर देती और देर तक हसती रहती। वह अवाक होकर उसे देखता रहता। तीस-तीन चार चार साल के बच्चे भी उस तरह आकस्मिक ढग से नहीं हस सकते जैसे वह हँसती थी। कोई व्यक्ति उसने सामने गिर जाता या कोई चीज किसी के हाथ से गिरकर टूट जाती तो उसके लिए अपनी हँसी रोकना अगम्य हो जाता। लगातार दस दस मिनट तक वह हसी से बेहाल हो रहती। वह उसे समझाने की चेष्टा करता कि ऐसी बातों पर नहीं हँसा जाता तो निमला को और भी हँसी छटती। वह उस डाढ़ देता, ता वह उसी तरह आकस्मिक ढग से विस्तर पर लटककर गाय-भर पटकती हुई रान लगती। चिल्ला चिल्लाकर अपनी मरी हुई माँ को पुकारने लगती और अंत में बाल बिखर कर और देवी का रूप धारण करके घर भर को दाव दन लगती। कभी अपने कपड़े फाड़कर इधर-उधर छिपा देती और गहन जूतों के अंदर मगाल देती। कभी अपनी बाँह पर फाड़े की कल्पना करने वह दो-दो दिन उसका द

से कराहती रहती और फिर सहसा स्वस्थ होकर बपड़े घोने लगती और सुबह से शाम तक बपड़े ही घोती रहती ।

जब मन शान्त होता, तो मुँह भोल किये वह अँगूठा नूसने लगती ।

उठते-बठते, खाते-पीते प्रकाश के सामन निमला के तरह तरह के हप आते रहत और उसका मन एक अंग्रे कुएँ में गिरने लगता । रास्ते पर चलते हुए उसके धारों तरफ एक गूँथ-सा घिर आना और वह कई बार भौंचक्का-सा मड़क के किनारे खड़ा होकर सोचने लगता कि वह घर से क्यों आया है और कहा जा रहा है । उसका किसी से भी मिलन और कहीं भी आने जाने को मन न होता । उसका मन जिस गूँथ में भटकता रहता उसमें कई बार उसे एक दच्चे की किङ्कारिया सुनाई देने लगनी और वह बिल्कुल जड़ होकर देर-देर तक एक ही जगह पर खड़ा या बठा रहता । एक बार चलते चलते झाम्मे से टकराकर वह नाली में गिर गया । एक बार बस पर चढ़ने की कोशिश में नीचे गिर जाने से उसके बपड़े पीछे से फट गये और वह इससे बख़्तर दूसरी बस में चढ़कर जागे चल दिया । उसे पता तब चला जब किसीन रास्ते में उससे कहा, 'जेंटलमन, तुम्हें क्या घर जाकर बपड़े बदल नहीं लेने चाहिए ?'

उसे लगता था जैसे वह जी न रहा हो, सिर्फ अदर ही अदर घुट रहा हो । क्या यही वह जिंदगी थी जिसे पाने के लिये उसने बपों तक अपन आप से सघप किया था ?

उसे क्रोध आता कि जुनेजा न उसके साथ इस तरह का विषवासघात क्यों किया ? उस लड़की को किसी मानसिक चिकित्सालय में भेजने की जगह उसका ब्याह क्या कर दिया ? उसने जुनेजा को बस सम्बन्ध में पत्र लिखे, परन्तु उसकी ओर से उसे कोई उत्तर नहीं मिला । उसने जुनेजा को बुला भेजा, तो वह आया भी नहीं । वह स्वयं जुनेजा से मिलन के लिये गया, तो उसे जवाब मिला कि निमला अब उसकी पत्नी है—निमला के मायके के लोग का उस मामले में अब कोई दखल नहीं है ।

और निमला घर में उसी तरह हँसती और रोती रही ।

"तुम मेरे भाई से क्या पूछन के लिये गये थे ?" वह बाल बिलेर कर 'देवी' का रूप धारण किये हुये कहती "तुम बीना की तरह मुझे भी तलाक देना चाहते हो ? किसी तीसरी को घर में लाना चाहते हो ? मगर मैं बीना नहीं हूँ । वह सती नारी नहीं थी । मैं सती नारी हूँ । तुम मुझे छानने की बात भी मन में लाओगे, तो मैं इस घर को जलाकर भस्म कर दूँगी—सारे शहर में मूचाल से आऊँगी । लाऊँ मूचाल ?" और बाँहें फलावर वह कहने लगती, 'आ मूचाल आ आ । मैं सती नारी हूँ, तो इस घर की ईंट से ईंट बजा दे । 'आ, आ, आ ।'

वह उसे गाल मरन की चेष्टा करता तो वह कहती, "तुम मुझसे दूर रहो । मेरे शरीर को हाथ मत लगाओ । मैं मर्ती हूँ । देवी हूँ । साधवी हूँ । तुम मेरा सतीत्व

नष्ट करना चाहते हो ? मुझ सराव करना चाहते हो ? मेरा तुमसे क्या बच हुआ है ? मैं तो अभी तक कबारी हूँ। छोटी-सी मासूम बच्ची हूँ। ससार का कोई भी पुरुष मुझे नहीं छू सकता। मैं आध्यात्मिक जीवन जीती हूँ। मुझे कोई छूकर दबे तो सही।”

और बाल बिलरे हुए इसी तरह बालती हुई कभी वह घर की छत पर पहुँच जाती और कभी बाहर निकलकर घर के आसपास घूमकर काटने लगती। प्रकाश ने दो एक बार होठों पर हाथ रखकर उसका मुँह बंद कर देना चाहा तो वह और भी खोर से चिल्ला उठी, “तुम मेरा मुँह बंद करना चाहते हो ? मेरा गला फोटना चाहते हो ? मुझे मारना चाहते हो ? तुम्हें पता है मैं साक्षात् दबी हूँ ? मेरे चारा भाई मेरे चार चार हैं ! वे तुम्हें नोच-नोचकर खा जाएंगे। उन्हें पता है—उनकी बहन दबी का स्वरूप है। कोई मेरा बुरा चाहेगा तो वे उस उठाकर ले जाएंगे और बाल-कोठरी में बंद कर देंगे। मेरे बड़े भाई ने अभी-अभी नई कार ली है। मैं उसे चिट्ठी लिख हूँ, तो वह अभी कार लेकर आ जाएगा और हाथ पर बाँधकर तुम्हें कार में डालकर ले जाएगा। छ महीने बंद रखगा, फिर छोड़ेगा। तुम्हें पता नहीं बैचारा के चारों चार कितने जालिम हैं ? वे राक्षस हैं राक्षस। आदमी की बोटी-बोटी काट दे और किसी को पता भी न चले। मगर मैं उन्हें नहीं बुलाऊँगी। मैं सती नारी हूँ इसलिए अपने सत्य से ही अपनी रक्षा करूँगी।”

सब प्रयत्ना से हार कर प्रकाश धमा हुआ अपने पढ़ने के कमर में बंद होकर पढ़ जाता, तो आधी रात तक वह साथ के कमरे में उसी तरह बोलती रहती। फिर बोलते-बोलते अचानक चुप कर जाती और थोड़ी देर के बाद उसका दरवाजा खट खटाने लगती।

‘क्या बात है ?’ वह कहता।

इस कमरे में मेरी साँस रुक रही है’ निमला उत्तर देती। ‘दरवाजा खोलो, मुझे अस्पताल जाना है।’

‘इस समय सा जाया, बंद रहता, ‘शुबह तुम जहाँ बहोगी वहाँ रुकलूँगा। मैं कहती हूँ दरवाजा खोलो, मुझे अस्पताल जाना है।’ और वह ज़ोर-जोर से धक्के देकर दरवाजा खटाने लगती।

प्रकाश दरवाजा खोल देता, तो वह हसती हुई उसका सामन आ जाती।

‘तुम्हें हँसी बिम बात की आ रही है ?’ प्रकाश कहता।

‘तुम्हें लगता है मैं हस रहा हूँ ?’ वह आर भी ज़ोर से हसन लगती। ‘यह

हसी नहीं राना है राना।

‘तुम अस्पताल चलना चाहती हो ? क्या ?’

“अभी तुम कह रही थी ।”

“मैं अस्पताल चलने के लिए वहाँ कह रही थी ? म तो कह रही थी कि मुझे कमरे म डर लगता है, म यहाँ तुम्हारे पास सोऊँगी ।”

“देखो निमला, इस समय मेरा मन ठीक नहीं है । तुम थोड़ी देर मे चाहे मेरे आ जाना, मगर इस समय थोड़ी देर के लिए ।”

“म कहती हूँ, म अकेली उस कमरे मे नहीं सो सकती । मेरे जसी मासूम बच्ची कभी अकेली सो सकती है ।”

“तुम मासूम बच्ची नहीं हो, निमला ।”

“तो तुम्हे म बड़ी नजर आती हूँ ? एक छोटी सी बच्ची को बड़ी कहते तुम्हारे को कुछ नहीं होता ? इसलिए कि तुम मुझे अपने पास सुलाना नहीं चाहते ? म यहा से नहीं जाऊँगी । तुम्हे मुझे अपने साथ सुलाना पड़ेगा । म विधवा हूँ अकेली सोऊँगी ? म सुहागिन नारी हूँ । कोई सुहागिन क्या कभी अकेली सोती म माँवरें लेकर तुम्हारे घर मे आई हूँ, ऐसे ही उठाकर नहीं लाई गई । देखती हूँ कैसे मुझे उस कमरे मे भेजते हो ?” और वह प्रकाश के पास लोटकर उससे लिपट गी ।

कुछ देर मे जब उसने स्नायु शांत हो चुकते, तो वह लगातार उसे घूमती हुई जाती, “मेरा सुहाग ! मेरा चाँद ! मेरा राजा ! म तुम्हें कभी अपने से अलग रखती हूँ ? तुम मेरे साथ एक सौ छत्तीस बरस की उम्र तक जिओगे । मुझे वह घर ला हुआ ह कि म एक सौ छत्तीस बरस की उम्र तक सुहागिन रहूँगी । जिसकी भी उसे शादी होती, वह एक सौ छत्तीस बरस की उम्र तक जीता । तुम देख लेना मेरी त सच्ची निकलती ह या नहीं । म सती नारी हूँ और सती नारी के मुँह से निकली बात कभी झूठी नहीं हो सकती ।”

“तुम सुबह मेरे साथ अस्पताल चलेगी ?” प्रकाश कहता ।

“क्या, मुझे क्या हुआ है जो मैं अस्पताल जाऊँगी ? मुझे तो आज तक सिर-इ भी नहीं हुआ । मैं अस्पताल क्यों जाऊँ ?”

एक दिन प्रकाश उसके लिए कई एक किताबें खरीद लाया । उसने सोचा था कि शायद पढ़ने से निमला के मन को एक दिशा मिल जाए और वह धीरे-धीरे अपने मन के अँधेरे से बाहर निकलने लगे । मगर निमला ने उन किताबों को देखा, तो मुँह बचनाकर एक तरफ हटा दिया ।

“ये किताबें मैं तुम्हारे पढ़ने के लिए लाया हूँ”, प्रकाश ने कहा ।

“मेरे पढ़ने के लिए ?” निमला आश्चर्य के साथ बोली । “मैं इन किताबों को लेकर क्या कहूँगी ? मैं तो मार्क्सवाद, मनोविज्ञान और सभी कुछ चौदह साल की उम्र मे पढ़ लिया था । अब इतनी बड़ी होकर मैं ये किताबें पढ़ने लगूँगी ?

और उसने पास से उठकर ओझूठा चूसती हुई वह कमरे से बाहर चली गई ।
‘पापा !’

कोहरे के बादलों में भटका हुआ मन सहसा बालकनी पर लौट आया । खिलन मग को जाने वाली सड़क पर बहुत-से लोग घोड़े दौड़ाते जा रहे थे—एक धुंधले चित्र की बुझी-बुझी आकृतियों जैसे । वसी ही बुझी-बुझी आकृतियाँ क्लब से बाजार की तरफ भा रही थी । बाईं ओर बष से ढकी हुई पहाड़ी की एक चोटी कोहरे में बाहर निकल आई थी और जाने कियर से आती हुई सूर्य की किरण ने उसे दीप्त कर दिया था । कोहरे में भटके हुए कुछ पक्षी उड़ते हुए उस चाटी के सामन आ गए, तो सहसा उनके पक्ष सुनहरे हो उठे—मगर अगले ही क्षण वे फिर धुंधलके में खो गए ।

प्रकाश कुरसी से उठ खड़ा हुआ झाँककर नीचे सड़क की तरफ देखन लगा । क्या वह आवाज पलाश की नहीं थी ? परन्तु सड़क पर दूर दूर तक ऐसी कोई आकृति दिखाई नहीं दे रही थी जिसे उसकी आँख उस बच्चे के रूप में पहचान सके । आँवा-ही-आँवा ट्रिस्ट होटल के गेट तक जाकर वह लौट आया और गले पर हाथ रखकर उसे निराशा की चुमन को रोके हुए फिर कुरसी पर बैठ गया । दस व बाद ग्यारह, बारह और फिर एक भी बज गया था और बच्चा नही आया था । क्या बच्चे के पहले जन्मदिन की घटना आज फिर दोहराई जानी थी ? मुट्ठियाँ बंद किए उन पर माथा रखकर वह बालकनी पर झुक गया ।

‘पापा !’

उसने चौंकर सिर उठाया । वही कोहरा और वही धुंधली सुनसान सड़क । दूर घोड़ा की टाप और घीमी घाल से उस तरफ को आता हुआ एक करमीरी मजदूर ! क्या वह आवाज उसे अपने कानों के पदों के अंदर से ही सुनाई दे रही थी ?

तभी उन पदों के अंदर दो नहे परो की आवाज भी श्रुत हुई और उसकी बाहों के बहुत पास ही बच्चे का स्वर क्लब उठा ‘पापा !’ साथ ही दो नही-नही बाहों उसके गले से लिपट गई और बच्चे के झटके माल उसके हाँठ से गूँ गए ।

प्रकाश ने एक बार बच्चे के शरीर को सिर से पर तक छूँकर देख लिया कि यह आकाश भी उसकी कल्पना का स्वप्न हो नहीं है । विश्वास हो जाने पर कि बच्चा सब कुछ उसकी गोदी में है, उसने उसका माथे और आँवा को बसकर चुम लिया ।

ता मैं जाऊँ पलाश ? एक झूली हुई मगर परिचित आवाज ने प्रकाश का फिर चौंका दिया । उसने घूमकर पीछे देखा । कमरे के दरवाजे के बाहर बीना दाईं ओर न जाने किस चीज पर आँखें गड़ाए खड़ी थी ।

‘आप ? आ आइए आप ।’ कहता हुआ बच्चे का बाँहा में लिए प्रकाश अस्त व्यस्त-ता कुरमी से उठ खड़ा हुआ ।

नही मैं जा रही हूँ, बीना ने फिर भी उसकी तरफ नहीं देखा । ‘मुझे इनका

बता दीजिए कि बच्चा कब तक लौटकर आएगा ?'

"आप जब वहाँ तभी भेज दूँगा।" प्रकाश बालकनी की दहलीज लांघकर कमरे में आ गया।

"चार बजे इसे दूध पीना होना है।"

"तो चार बजे तक मैं इसे वहाँ पहुँचा दूँगा।"

'इसने हल्का सा स्वेटर ही पहन रखा है। दूसरे पुलोवर की ज़रूरत तो नहीं पड़ेगी ?'

"आप दे दीजिए। ज़रूरत पड़ेगी तो मैं इसे पहना दूँगा।"

बीना ने दहलीज के उस तरफ से ही पुलावर उसकी तरफ बढ़ा दिया। उसने पुलोवर लेकर उसे शाल की तरह बच्चे को ओढ़ा दिया। "आप" उसने बीना से कहना चाहा कि वह अंदर आ जाए, मगर उससे कहा नहीं गया। बीना धुपचाप जीने की तरफ चल दी। प्रकाश कमरे से निकल आया। जीन में बीना ने फिर कहा, "देखिए इसे आइसक्रीम मत खिलाइएगा। इसका गला बहुत जल्द खराब हो जाता है।"

"अच्छा।"

बीना पल भर खड़ी रही। शायद उसे और भी कुछ कहना था। मगर फिर बिना कुछ कहे वह नीचे उतर गई। बच्चा प्रकाश की गाँदी में उछलता हुआ हाथ हिलाता रहा, "ममी, टा टा। टा टा।" प्रकाश उसे लिए बालकनी पर लौट आया, तो वह उसके गले में बाहु डालकर बोला, 'पापा मैं आइस क्रीम ज़रूर खाऊँगा।'

'हा, हा, बेटे।' प्रकाश उसकी पीठ पर हाथ फेरने लगा। "जो तेरे मन में आए, सो खाना। हा ?"

और कुछ देर के लिए वह अपने को, बालकनी को और यहाँ तक कि बच्चे को भी भूला हुआ आकाश को देखता रहा।

कोहर का पड़ा घीरे घीरे उठन लगा तो मीना में फले हुए हरियाली के रंग मच की घुँघली रेखाएँ सहसा स्पष्ट हो उठी।

वे दोनों गालफ़ ग्राउंड पार करके क्लब की तरफ जा रहे थे। चलते हुए बच्चे ने पूछा, 'पापा, आदमी के दो दागें क्या होती हैं ? चार क्यों नहीं होती ?'

प्रकाश ने चौंकर उसकी तरफ देखा और कहा 'अरे।'

"क्या पापा," बच्चा बोला 'तुमने अरे क्यों कहा है ?'

'तू इतना साफ बाल सबटा है, तो अब तक तुतलाकर क्यों बोल रहा था ?'

प्रकाश ने उसे बाहो में उठाकर एक अभियुक्त की तरह अपने सामने कर लिया। बच्चा खिलखिलाकर हँस पड़ा। प्रकाश को लगा कि यह वसी ही हँसी है जसी कभी वह स्वयं हसा करता था। बच्चे के चेहरे की रेखाया से भी उस अपने बचपन के चेहरा की याद आने लगी। उसे लगा जैसे एकाएक उसका तीस बरस पहले का चेहरा उसके सामने

आ गया हो और वह स्वयं उस चेहरे के सामने एक अमिषुक्त की तरह खड़ा हो ।

“ममी तो ऐसे ही अच्छा लड़ता है,” बच्चे ने कहा ।

‘क्यों ?’

‘मेले तो नहीं पता । तुम ममी से पूछ लेना ।’

‘तेरी ममी तेरे को जोर से हसने से भी मना करती है ?’ प्रकाश की वे दिन याद आ रहे थे जब उसके खिलखिलाकर हँसने पर बीना नाना पर हाथ रख लिया करती थी ।

बच्चे की माँहें उसकी गरदन के पास बस गई । “हाँ”, वह बोला । “ममी तहती है अच्छे बच्चे जोल छे नहा हँछते ।”

प्रकाश ने उस माँहा से उत्तर दिया । बच्चा उसकी उँगली पकड़े हुए घास पर चलन लगा । ‘त्या पापा’, उसने पूछा । “अच्छे बच्चे जोल छे त्यो नही हँछते ?”

‘हसते हैं बटे ।’ प्रकाश ने उसके सिर को सहलाते हुए कहा । सब अच्छे बच्चे जोर से हसते हैं ।’

‘तो ममी मेले तो त्यो छोटती है ?’

‘नहीं रोकती बटे । अब वह तुम्हें नहीं रोकेगी । और तू तुलनाकर नहा, ठीक से बोला कर । तेरी ममी तुम्हें इससे लिए भी मना नहीं करेगी । मैं उससे कह दूँगा ।’

‘तो तुमने पहले ममी से त्यो नही कहा ।’

“ऐसे नहीं, बट कि तुमने पहले ममी से क्यों नहा कहा ।’

बच्चा फिर हँस दिया । ‘तो तुमने पहले ममी से क्यों नहीं कहा ?’

पहले मुझे याद नहीं रहा । अब याद से कह दूँगा ।

कुछ देर दोनों चुप चलते रहे । फिर बच्चे ने पूछा, पापा, तुम मेरे जनम दिन की पार्टी में क्यों नहीं आए ? ममी कहती थी तुम विलायत गए हुए थे ।’

“हाँ बटे, मैं विलायत गया हुआ था ।”

तो पापा अब तुम फिर से विलायत नहीं जाना ।’

“क्यों ?”

“मेरे को अच्छा नहीं लगता । विलायत जाकर तुम्हारी गबल थीर हो गई है ।’

प्रकाश एक हसी-सी हँसी हँसा और बोला ‘कसी हो गई है गबल ?’

पता नहा कसी हो गई है । पहले दूसरी तरह की थी, अब दूसरी तरह की है ।

“दूसरी तरह की कसे ?”

‘पता नहीं पहले तुम्हारे बाल काले-काले थे । अब सफेद-सफेद हो गए हैं ।’

‘तू इतने दिन मेरे पास नहीं आया इसीलिए मेरे बाल सफेद हो गए हैं ।’

बच्चा इतने धार से हँसा कि उससे कम्म लडखड़ा गए । “अरे पापा, तुम ।

विलायत गए हुए थे', उसने कहा। 'मैं तुम्हारे पास कैसे आता? मैं क्या अकला विलायत जा सकता हूँ?'"

'क्या नहीं जा सकता? तू इतना बड़ा तो है।'

"मैं सचमुच बड़ा हूँ न पापा?" बच्चा ताली उठाता हुआ बोला। "तुम यह बात भी यमी से कह देना। वह बड़ो है मैं अभी बहुत छोटा हूँ। मैं छोटा नहीं हूँ न पापा?"

'नहीं, तू छोटा कहा है? कहकर प्रकाश मदान में दौड़ने लगा। तू भागकर मुझे पकड़।'

बच्चा अपनी छोटी-छोटी टाँगें पटकता हुआ दौड़ने लगा। प्रकाश को फिर अपने बचपन की एक बात याद हो आई। तब उस दौड़ते देखकर एक बार किसी ने कहा था, अरे, यह बच्चा कैसे टाँगें पटक-पटककर दौड़ता है। इसे ठीक से चलना नहीं आता है क्या?

बच्चे की उँगली पकड़े हुए प्रकाश क्लब के बाराम में दाखिल हुआ तो बारामन अदुल्ला उसे देखने ही दूर से मुस्कराया। "साहब के लिए नो वातल वियर उमन पास खड़े बंदे में कहा। साहब आज अपने एक महमान के साथ आया है।'

"बच्चे के लिए एक गिलास पानी दे दो" प्रकाश ने काठ दर के पास पहुँचकर कहा। 'इसे प्यास लगी है।'

"खाली पानी?" अदुल्ला बच्चे के गालों को प्यार से सहलाने लगा। और सब दोस्ता को तो साहब वियर पिलाता है और इस बेंचारे को खाली पानी?" और ठंडे पानी की बोतल छोलकर वह गिलास में पानी डालने लगा। अब वह गिलास बच्चे के मुँह के पास ले गया, तो बच्चे ने वह उसके हाथों से ले लिया। "मैं अपने-आप पिऊँगा" उसने कहा। "मैं छोटा थोड़े ही हूँ? मैं तो बड़ा हूँ।

अच्छा तू बड़ा है?" अदुल्ला हँसा। 'तब तो तुम्हें पानी देकर मैं न गलती की। बड़े लोगो को तो मैं वियर पिलाता हूँ।'

"वियर क्या होता है? बच्चे ने मुँह से गिलास हटाकर पूछा।

'वियर होता नहीं, होती है।' अदुल्ला ने झुककर उसे चूम लिया। तुम्हें पिलाऊँ क्या?"

नहीं' कहकर बच्चे ने अपनी बाँहिं प्रकाश की तरफ फला दी। प्रकाश उस लेकर डायोनी की तरफ चला, तो अदुल्ला भी उन दोनों के साथ-साथ बाहर चला गया। किमका बच्चा है, साहब?" उसने धीमे स्वर में पूछा।

मेरा लड़का है', कहकर प्रकाश बच्चे को साड़ी से उतारने लगा।

अदुल्ला हँस दिया। 'साहब बहुत खुशाल आदमी है' उसने कहा।

"क्यों?"

अबुल्ला हँसता हुआ सिर हिलाते लगा। 'आपका भी जवाब नहीं है।'

प्रवाण मुस्ती में कुछ कहने को हुआ मगर अपने को रोक्कर बच्चे को लिए हुए भागे चल दिया। अबुल्ला ब्याड़ी में रखा हुआ पीछे से सिर हिलाता रहा। बराबर मुहम्मद अदर से निकलकर आया, तो वह फिर तालतिलावर हँस दिया।

"क्या बात है? अवेला राधा गया कैसे हँस रहा है? शेर मुहम्मद ने पूछा।

"साहब का भी जवाब नहीं है", अबुल्ला किसी तरह हसी पर बाध पाकर बोला

"किस साहब का जवाब नहीं है?"

"उस साहब का", अबुल्ला ने प्रवाण की तरफ इशारा किया। 'उस दिन बोलता था कि इसने अभी इसी गाल घादी को है और आज बोलता है कि यह पाँच साल का बाबा इसका लड़का है। जब आया था, तो अवेला था और आज इसने लड़का भी हो गया।' प्रवाण ने एक बार घूमकर सीसी नजर से उसकी तरफ देखा लिया। अबुल्ला एक बार फिर गिलगिला उठा। 'ऐसा खुदाल आदमी मैंने आज तक नहीं देखा।'

"पापा, पास हरी क्या होती है? लाल क्या नहीं होती?" बच्चे से निकलकर प्रवाण ने बच्चे को एक पाहा बिराये पर ले दिया था। तिनैनमग को जानेवाली पग ढड़ी पर वह खुद उमने साथ-साथ पदल चल रहा था। पास के रेसमी बिल्डार पर बोहरे का आकाश इस तरह भुका हुआ था जैसे वासना का उम्राद उस फिर से फिर मान के लिए प्रेरित कर रहा हो। बच्चा जलुन आँसो से आसपास की पहाड़ियाँ को और बीच में बहकर जाती हुई पानी की पतली धार को देख रहा था। अभी कुछ क्षणों के लिए वह अपने को भ्रमा रहता, फिर किसी अज्ञात भाव से प्रेरित होकर काठा पर उछलने लगता।

"हर चीज का अपना रंग होता है", प्रवाण ने बच्चे की एक जाँघ को हाथ से दबाए हुए कहा और कुछ देर के लिए स्वयं भी हरियाली के विस्तार में खोया रहा।

'हर चीज का अपना रंग क्यों होता है?'

'यह कुदरत की बात है बेटे, कुदरत ने हर चीज का अपना रंग बना दिया है।'

"कुदरत क्या जानी है?"

प्रवाण ने मुककर उसकी जाँघ का चूम लिया। "कुदरत यह होती है", उमने हँसकर कहा। जाँघ पर गुदगुदी होने से बच्चा भी हँसने लगा।

"तुम झूठ बोलते हो", उसने कहा।

क्यों?

तुमको इसका पता ही नहीं है।"

"अच्छा, मुझे पता नहीं है तो तू बता पास का रंग हरा क्या होता है?"

"पास मिट्टी के अदर से पदा होती है, इसलिए इसका रंग हरा होता है।"

“अच्छा ? तुम्हें इसका क्या पता चल गया ?”

बच्चा उछलता हुआ लुगाम को ज़टकने लगा। “मेरे को ममीन बताया था।”

प्रकाश के होठों पर एक विवृत-सी मुस्कराहट आ गई, जिसे उसने किसी तरह दबा लिया। उसे लगा जैसे आज भी उसके और बीना के बीच में एक द्वंद्व चल रहा हो और बीना उस द्वंद्व में उसपर भारी पड़ने की चेष्टा कर रही हो। “तेरी ममी ने तुम्हें और क्या क्या बताया है ?” वह बच्चे को थपथपाकर बोला, “वह भी बताया है कि आदमी के दो टांगें क्यों होनी हैं और चार क्यों नहीं ?”

“हां। ममी कहती थी कि आदमी के दो टांगें इसलिए होती हैं कि वह आधा जमीन पर चलता है और आधा आसमान में।”

अच्छा !” प्रकाश के होठों पर हँसी और मन में उदासी की रेखा फल गई। “तुम्हें इसका नहीं पता था”, उसने कहा।

“तुमको तो कुछ भी पता नहीं है, पापा !” बच्चा बोला। “इतने बड़े होकर भी पता नहीं है।”

घास बर्फ और आकाश के रंग दिन में कई-कई बार बदल जाते थे। बदलते हुए रंगों के साथ मन भी और से और होन लगता था। सुबह उठते ही प्रकाश बच्चे के आने की प्रतीक्षा करने लगता। बार-बार वह बालकनी पर चला जाता और ट्रिस्ट होटल की तरफ आखें किए देर-देर तक खड़ा रहता। नाश्ता करने या खाना खाने के लिए भी वह वहाँ से नहीं हटना चाहता था। उसे डर लगता था कि बच्चा इस बीच आकर लौट न जाए। तीन दिन में उसे साथ लिए हुए वह कितनी ही बार धूमने के लिए गया था, उसके घोड़े के पीछे-पीछे दौड़ा था और उसके साथ घास पर लोटता रहा था। कभी एक दोस्त की तरह वह उसके साथ खिलखिलाकर हँसता, कभी एक नीकर की तरह उसके हार आदेश का पालन करता। बच्चा जान बूझकर रास्ते के कीचड़ में अपने पाँव लथपथ कर लेता और फिर होंठ बिसारकर कहता, “पापा, पाव धो दो।” वह उसे उठाए हुए इधर उधर पानी डूँढ़ता फिरता। बच्चे को वह जिस कोण से भी देखता, उसी कोण से उसकी तस्वीर से लेना चाहता। जब बच्चा थक जाता और लौटकर अपनी ममी के पास जाने का हठ करने लगता तो वह उसे तरह-तरह के प्रलोभन देकर अपने पास रोक रखना चाहता। एक बार उसने बच्चे को अपनी माँ के माथे दूर से आते देखा था और उसे साथ लाने के लिए उतरकर नीच चला गया था। जब वह पास पहुँचा, तो बच्चा दौड़कर उसकी तरफ आने की बजाय माँ के साथ फोटोग्राफर की दूकान के अंदर चला गया। वह कुछ देर सड़क पर रुका रहा, फिर यह सोचकर ऊपर चला आया कि फोटोग्राफर की दूकान से खाली होकर बच्चा अपने-आप ऊपर आ जाएगा। मगर बालकनी पर सड़े-खड़े उसने देखा कि बच्चा दूकान से निकलकर उस तरफ आने की बजाय हट के साथ अपनी माँ का हाथ गीचता हुआ उसे वापस ट्रिस्ट होटल की तरफ ले

चला। उसका मन हुआ कि दीडवर जाग और बच्चे का अपने साथ ले जाए, मगर बाई चीख उससे परा गो जकड़े रही और वह चुपचाप वहां खड़ा उसे देखता रहा। नाम तक वह न जाने कितनी बार बापकी पर आया और कितनी कितनी देर तक गड़ा रहा। आखिर उससे नहीं रहा गया, तो उसने नीचे जाकर कुछ चरी गरीदी और बच्चा को देन के महान ट्रिस्ट होटल की तरफ चल लिया। अभी वह ट्रिस्ट होटल में कुछ दूर ही था कि बच्चा अपनी माँ के साथ बाहर जाता दिखाई दिया। मगर उन पर नजर पड़ते ही वह वापस होटल की गलरी में भाग गया।

प्रकाश जहाँ था, वहीं गड़ा रहा। उस समय पहली बार उसकी आँखें बीना से मिली। उस भहसूस हुआ कि बीना का चेहरा पहले से कहीं साँवला हो गया है और उसकी आँखा के नीचे स्याह दायरे-में उमर आए हैं। वह पहले से काफी दुबली भी लग रही थी। कुछ क्षण रुके रहने के बाद प्रकाश आगे चला गया और बैरीवाला लिफाफा बीना की तरफ बढ़ाकर उसने मुद्रक गले से कहा 'यह मैं बच्चे के लिए लाया था।'

बीना ने लिफाफा ल लिया मगर साथ ही उसकी आँखें दूसरी तरफ हट गई। पलाश।' उसने कुछ अस्थिर आवाज में बच्चे को पुकारकर कहा: 'यह ले तेरे पापा तेरे लिए बेरी लाए हैं।'

'मैं नहीं लेता, बच्चे ने गलरी से कहा और भागकर और भी दूर चला गया।

बीना ने एक असह्य दृष्टि बच्चे पर डाली और फिर प्रकाश की तरफ देखकर बोली 'कहता है मैं पापा से नहीं बोझूँगा। वे मुझ रके क्या नहीं चले क्या गए थे।

प्रकाश बीना का उत्तर न देकर गलरी में चला गया और कुछ दूर तक बच्चे का पीछा करके उसे बाहो में उठा लाया। 'मैं तुमसे नहीं बोझूँगा, कभी नहीं बोझूँगा' बच्चा अपने को छुड़ाने की चेष्टा करता हुआ कहता रहा।

'क्यों, ऐसी क्या बात है?' प्रकाश उसे पुचकारने की चेष्टा करने लगा।

'पापा से भी उस तरह नाराज होते हैं क्या?'

'तुमने मेरी तस्वीरें क्या नहीं देखीं?'

'कहाँ था तेरी तस्वीरें? मुझे तो पता ही नहीं था।'

पता क्यों नहीं था? तुम दूकान के बाहर से ही क्यों चले गए थे?'

'अच्छा ला, पहले तेरी तस्वीरें देख, फिर धूमन चलेंगे।'

यह मुझ आपकी दिखाने के लिए ही तस्वीरें लेने गया था', बीना के साथ खड़ी नवयुवती ने कहा। प्रकाश इस बात का भूल ही गया था कि उन दोनों के साथ कोई और भी है।

'तस्वीरें भरे पास थोड़े ही हैं? उसी के पास है।

'मुझ फोटोग्राफर ने नगेटिव ही दिखाए थे पात्रिटिव वह अब इस समय देगा उस नवयुवती ने फिर कहा।

“तो चल, पहले दुकान पर चलकर तेरी तस्वीरें ले लें। हा, देखें ता सही कमी तस्वीरें हैं।” कहकर प्रकाश फाटाग्राफर की दुकान की तरफ चलने लगा।

‘मैं ममी को साथ लेकर जाऊँगा’ बच्चे ने उमकी बाहों में मचलते हुए कहा।

हाँ, हा, तेरी ममी भी साथ जा रही है, प्रकाश ने एक बार निरुपस्थिति से पीछे की तरफ देख लिया और उस किसी अदृश्य व्यक्ति से कहा ‘देखिए आप भी साथ आ जाइए नहीं तो यह रोने लगेगा।’

बीना हाठ दाँतों में दबाए हुए कुछ क्षण आँखें झपकती रही फिर चुपचाप साथ चल दी।

फोटोग्राफर की दुकान में दाखिल होते ही बच्चा प्रकाश की बाँहा से उतर गया और आदेश के स्वर में फोटोग्राफर से बोला “मेरे पापा को मेरी तस्वीरें दिवाओ।” उसके स्वर से कुछ ऐसा भी लगता था जैसे वह अपने पर लगाए गए किसी अभिमाण का उत्तर दे रहा हो। फोटोग्राफर ने तस्वीरें निकालकर मेज पर फला दी तो बच्चा उनमें से एक एक तस्वीर चुनकर प्रकाश को दिखाने लगा। “देखो पापा, यह वही की तस्वीर है न जहाँ से तुमने कहा था कि सारा कश्मीर नज़र आता है ? और यह तस्वीर भी देखो पापा, जो तुमने मेरी घोड़े पर उतारी थी।”

‘दो दिन से बिल्कुल साफ बालने लगा है’, बीना की सहली ने धीरे से कहा। “कहता है पापा ने कहा कि तू बड़ा हो गया है, इसलिए अब तुमला कम न बाला कर।

प्रकाश कुछ न कहकर तस्वीरें देखता रहा। फिर जैसे कुछ याद हो आन से उसने दस रुपये का एक नोट निकालकर फोटोग्राफर को देते हुए कहा, “इसमें से आप अपने पैसे काट लीजिए।”

फोटोग्राफर पल भर असमंजस में उस देखता रहा। फिर बाला, ‘देखिए पस तो अभी आपही के मेरी तरफ निकलते हैं। मैं साहब ने जा बीस रुपये परसा दिए थे उनमें से दो एक रुपये अभी बचते होंगे। कहे, तो हिसाब कर दूँ।’

“नहीं रहने दीजिए, हिसाब फिर हो जाएगा” कहकर प्रकाश ने नाट बापस जेब में रख लिया और बच्चे की उँगली पकड़े हुए दुकान से बाहर निकल आया। कुछ कदम चलते पर उसे पीछे से बीना का स्वर सुनाई दिया, “यह आपने साथ घूमन जा रहा है क्या ?”

‘हाँ !’ प्रकाश ने चौंकर पीछे देख लिया। ‘मैं अभी थोड़ी दूर में इसे वापस छोड़ जाऊँगा।’

‘देखिए, आप से एक बात कहनी थी।’

‘कहिए।’

बीना पल भर सोचती हुई चुप रही। फिर बोली, “इसे ऐसी कोई बात न बनाइएगा जिससे यह।”

प्रकाश को लगा जैसे कोई चीज़ उसके स्नायुओं को चीरती चली गई हो।

उसकी आँखें भुक् गई और उसने धीरे से कहा, "नहीं, मैं ऐसी कोई बात इससे नहीं कहूँगा।" उसे खद हान लगा कि एक दिन पटले जब बच्चा हठ करने कह रहा था कि 'पापा' और 'पिताजी' एक ही व्यक्ति को नहीं कहते—'पापा' पापा को कहते हैं और 'पिताजी' ममी के पापा को कहते हैं—तो वह क्यों उसकी गलतफहमी दूर करने का प्रयत्न करता रहा था ?

वह बच्चे के साथ अकेला बल्ब की सड़क पर चलने लगा तो कुछ दूर जाकर बच्चा सहसा रुक गया। 'तुम कहाँ जा रहे हैं, पापा ?' उसने पूछा।

'पहले बल्ब चले रहे हैं', प्रकाश ने कहा। 'वहाँ से थोड़ा लेकर आगे धूमन जाएँगे।'।

नहीं, मैं वहाँ उस आदमी के पास नहीं जाऊँगा। ' कहकर बच्चा सहसा पीछे की तरफ घल दिया।

"किस आदमी के पास ?"

'वह जो वहाँ पर बल्ब में था। मैं उसके हाथ से पानी भी नहीं पिऊँगा।'

"क्यों ?"

"मुझे वह आदमी अच्छा नहीं लगता।

प्रकाश पल भर बच्चे के चेहरे को देखता रहा, फिर वह भी वापस चल दिया।

"हा, हम उस आदमी के पास नहीं चलेंगे", उसने कहा। 'मुझे भी वह आदमी अच्छा नहीं लगता।'।

बहुत दिनों के बाद उस रात प्रकाश को गहरी नींद आई थी। एक ऐसी विस्मृति सी नींद जिसमें स्वप्न—दु स्वप्न कुछ न हो। उसके लिए लगभग भूली हुई चीज हो चुकी थी। फिर भी जागने पर उसे अपने में एक ताजगी का अनुभव नहीं हुआ—अनुभव हुआ एक खालीपन का ही। उस कि कोई चीज उसके अंदर उफनती रही हो जो गहरी नींद से लेने से भुक् गई हो। रोज की तरह उठकर वह बालकनी पर गया। देखा आकाश साफ है। रात को सोया था तो वर्षा हो रही थी। परंतु इस घुले निखरे हुए आकाश को देखकर आनास तक नहीं होता था कि कभी वहाँ बादलों का अस्तित्व भी था। सामन की पहाड़ियाँ सुबह की धूप में नहाकर बहुत उजली हो उठी थी।

प्रकाश कुछ देर वहाँ खड़ा रहा—थान्तिरहित और विचारहीन। फिर सहसा दूर के छार में उठते हुए बादल की तरह उसे कोई चीज अपन में उमड़ती हुई प्रतीत हुई और उसका मन एक अज्ञात आशका से सिहर गया। तो क्या ?

वह बालकनी से हट आया। पिछली शाम को बच्चे ने बताया था कि उसकी ममी कह रही है कि दिन साफ हुआ, तो सुबह के लोग वहाँ से चले आए थे। रात को जिस तरह वर्षा हो रही थी, उससे सुबह तक आकाश के साफ होने की कोई सम्भावना नहीं लगती थी। इसलिए सोने के समय उमका मन इस ओर से अग्रभग निश्चिंत था।

परन्तु रात रात में आकाश का दृश्यपट बिल्कुल बदल गया था। तो क्या सचमुच आज ही उन लोगों को वहाँ से चले जाना था ?

उसने कमरे के बिखरे हुए सामान को देखा—दो चार इनी गिनी चीजें ही थी। चाहा कि उन्हें सहेज दे। मगर किसी चीज को रखन-उठाने को मन नहीं हुआ। बिस्तर को देखा जिसमें रोज से बहुत कम सलवटें पड़ी थी। लगा जैसे रात की गहरी नींद के लिए वह बिस्तर ही दोषी हो और गहरी नींद ही—बरसते हुए आकाश के साफ हो जाने के लिए ! उसने बिस्तर की चादर को हिला दिया कि उसमें और सलवटें पड़ जाएँ मगर उससे चादर में जो दा एक सलवटें या, वे भी निकल गईं। वह फिर से एक नींद लेने के इरादे से बिस्तर पर लेट गया।

शरीर में थकान बिल्कुल नहीं थी, इसलिए नींद नहीं आई। कुछ देर करवट लेने के बाद वह नहाने घबने के लिए उठ गया। लड़खड़ाते कदमों से सुबह दोपहर की तरफ बढ़ने लगी, तो उसके मन को कुछ सहारा मिलन लगा। वह चाहने लगा कि इसी तरह शाम हो जाए और फिर रात—और बच्चा उससे बिदा लेने के लिए न आए। परन्तु इसी तरह जब दोपहर भी ढलन को आ गई और बच्चा नहीं आया, तो उसके मन में धीरे धीरे एक और ही आशका सिर उठान लगी। वह सोचने लगा कि दिन साफ होने से उसकी ममी कहीं सुबह-सुबह ही तो उसे लेकर वहाँ से नहीं चली गई ?

वह बार-बार बालकनी पर जाता—एक घड़कती हुई आशा और आशका लिए हुए। बार-बार ट्रिस्ट होटल की तरफ जाने वाले रास्त पर नजर डालता और एक अनिश्चित-सी अनुभूति लिए हुए कमरे में लौट आता। उसकी घमनियों में लड़ू का हर कण, मस्तिष्क में चेतना का हर बिन्दु उरकठा से व्याकुल था। उसने कुछ खाया नहीं था, इसलिए भूख भी उसे परेशान कर रही थी। कुछ देर के बाद कमरा बंद करके वह खाना खान चला गया। माटे-मोटे कौर निगलकर उसने किसी तरह दो रोटियाँ गले से उतारी और तुरन्त वापस चल पड़ा। कुछ क्षणा के लिए भी कमरे से बाहर और बालकनी से दूर रहना उसे एक अपराध की तरह लग रहा था। लौटते हुए उसने सोचा कि उसे खुद ट्रिस्ट होटल में जाकर पता कर लेना चाहिए कि वे लोग वहाँ हैं या चले गए हैं। मगर सबक की चढ़ाई चढ़ते हुए उसने दूर से ही देखा—धीना बच्चे के साथ उसकी बालकनी के नीचे खड़ी थी। वह हाँफता हुआ तेज-तेज चलने लगा।

वह पास जा पहुँचा, तो भी बच्चे ने उसकी तरफ नहीं देखा। वह अपनी माँ का हाथ खींचता हुआ किसी बात के लिए हठ कर रहा था। प्रकाश ने उसकी बाँह को हाथ में ले लिया, तो वह उससे बाँह छुड़ान का प्रयत्न करने लगा। “मैं तुम्हारे घर नहीं जाऊँगा”, उसने लगभग चीखकर कहा। प्रकाश अचक्का गया और मूढ़-सा उसकी तरफ देखता रहा।

“क्यों, तू मुझ से नाराज है क्या ?” उसने पूछा।

'ममी मेरे साथ क्या नहा चल्ती?' बच्चा फिर उसी तरह बिल्लाया।

प्रकाश और बीना की आँखें एक दूसरे की तरफ उठन को हुईं मगर पूरी तरह नहीं उठ पाईं। प्रकाश ने बच्चे की बाँह फिर घाम ली और बीना से कहा, "आप भी साथ आ जाइए न।"

"इस आज्ञा क्या हुआ है?" बीना झुंझलाहट के साथ बोली। सुबह सही तग कर रहा है।"

इस वक़्त यह आपके बिना ऊपर नहीं जायगा', प्रकाश ने कहा। आप साथ आ क्या नहीं जाती?"

"चल मैं तुम्हें जीने तक पहुँचा देती हूँ", बीना उसे उत्तर न देकर बच्चे से बोली। ऊपर से जल्दी ही लौट आना। घोड़े वाले कितनी देर से तयार सजे हैं।"

प्रकाश को अपने अन्दर एक नरतर-सा क्षुब्धता महसूस हुआ। मगर जल्द ही उसने अपने को समझ लिया। आप लोग आज ही जा रहे हैं क्या? वह किसी तरह कठिनाई से पूछ सका।

"जी हाँ", बीना दूसरी तरफ़ देखती रही। "जाना तो सुबह-सुबह ही था मगर इसके हठ की वजह से इतनी देर हो गई है। अब भी यह।" और वह बान बोध में ही छोड़कर उसने बच्चे से फिर कहा "तो चल तुम्हें जीने तक पहुँचा दूँ।"

बच्चा प्रकाश के हाथ से बाह छुटाकर कुछ दूर भाग गया। मैं नहीं जाऊँगा उसने कहा।

अच्छा आ जा बीना बोली। मैं तुम्हें जीने के ऊपर तक छोड़ जाऊँगी—उस दिन की तरह।

मैं नहीं जाऊँगा', और बच्चा कुछ कदम और भी दूर चला गया।

आप साथ आ क्यों नहा जाता? यह इस तरह अपना हठ नहीं छोड़ेगा प्रकाश ने कहा। बीना ने आये क्षण के लिए उसकी तरफ़ देखा। उस दृष्टि में आनोश के अतिरिक्त न जान क्या-क्या भाव था। परन्तु आये क्षण में ही वह भाव धुल गया और बीना ने अपने को सहज लिया। उसके चेहरे पर एक तरह की हदता आ गई और उसने बच्चे के पास जाकर उस उठा लिया। "तो चल मैं तेरे साथ चलती हूँ" उसने कहा।

बच्चा का स्त्रीमा भाव एक क्षण में ही बदल गया और उसने हसत हुए अपनी माँ के गले में बाह डाल दी। प्रकाश ने धीरे से कहा आइए और उन दोनों के आगे-आगे चलन लगा।

ऊपर कमरे में पहुँचकर बीना ने बच्चे का नीच उतार दिया और कहा लंबे में जा रही हूँ।"

'नहा' बच्चा ने उगवा हाथ पकड़ लिया। तुम भी यहाँ बठा।

‘बठिए’, प्रकाश ने कुरसी पर पड़ी हुई दो-एक चीजें जल्दी से उठा दी और कुरसी बीना की तरफ बढ़ा दी। बीना कुरसी पर न बठकर चारपाई के कोने पर बठ गई। बच्चे का ध्यान सहसा न जान किस चीज ने खींच लिया। वह उन दोनों को छोड़कर बालकनी में भाग गया और वहां से उच्चकर सड़क की तरफ दौबन लगा।

प्रकाश कुरसी की पीठ पर हाथ रखे जस खड़ा था, वैसे ही खड़ा रहा। बीना चारपाई के कोने पर और भी सिमटकर नीवार की तरफ देखने लगी। सहसा अभावधानी के एक क्षण में उनकी आंखें मिल गईं, तो बीना ने उसे पूरी गति मचय करके कहा ‘कल इसकी जेब में कुछ रुपये मिले थे। आपने रखे थे?’

प्रकाश सहसा ऐसे हो गया जैसे किसी ने उसे पकड़ कर झकझार दिया हो। हाँ, उसने लड़खड़ाते हुए स्वर में कहा। ‘मोचा था कि उनसे यह कोई चीज कोई चीज बनवा लेगा।’

बीना पर चुप रही। फिर बोली ‘क्या चीज बनवानी होगी?’

“कोई भी चीज बनवा दीजिएगा। कोई अच्छा-सा ओवरकोट या।’

कुछ देर फिर चुप्पी रही। फिर बीना बोली, ‘कसा काट बनवाना होगा?’

“कसा भी बनवा दीजिएगा। जसा हमें अच्छा लगे या ‘या जसा आप ठीक समझें।’

‘कोई खास कपड़ा लेना हा, तो बता दीजिए।’

“नहीं खास कोई नहा। कसा भी सँ लीजिएगा।

“कोई पास रंग?’

‘नहीं हाँ अगर नीले रंग का हो तो ज्यादा अच्छा रहेगा।

बच्चा उछलता हुआ बालकनी से लौट आया और बीना का हाथ पकड़ कर बोला ‘अब चलो।’

‘पापा सँ तूने प्यार तो किया ही नहीं और आत ही चल भी न्मि?’ प्रकाश ने उस बाहा में ले लिया। बच्चा ने उसके होठों से होठ मिलाकर एक बार अच्छी तरह उसे चूम लिया और फिर बट से उसकी बाहा से उतरकर माँ से बोला, अब चलो।

बीना चारपाई से उठ खड़ी हुई। बच्चा उसका हाथ पकड़कर उसे बाहर की तरफ खींचने लगा। ‘तला न ममी दल हो लही है वह फिर लुतलाने लगा और बीना का माथ लिए हुए दहलीज पार कर गया।

तू जाकर पापा को चिटठी लिखेगा न?’ प्रकाश ने पीछे में पूछा।

‘लिखूँदा।’ मगर उसने पीछे मुड़कर नहीं देखा। पीछे मुड़कर देखा एक बार बीना न, और जल्दी से आँखें हटा ले। उसकी आँखों के कोरा में अटके हुए आँसू उसके साला पर गढ़ आये थे। ‘तूने पापा को टा-टा नहीं किया। उसने बच्चे के कंधे पर हाथ रखे हुए कहा। आँखा की तरह उसका स्वर भी भीगा हुआ था।

टा-टा पापा !' बच्चे ने बिना पीछे की तरफ देख हाथ हिला लिया और जीने स उतरने लगा । आधे जीन स फिर उसकी आवाज सुनाई दी, "पापा का घल अच्छा नहा है ममी, हमाल वाला घल अच्छा है । पापा के घल म तो कुछ भी छामान ही नहीं है !"

तू तुप करगा कि नहा ? बीना न उस झिडक दिया । ' जो मुह म आता है बालता जाता है । '

' नही तुप करूंगा मही करूंगा तुप " बच्चे का स्वर फिर उभरता हा गया और वह तेज-तेज बदमो से नीचे उतरन लगा । पापा का घल गंदा ! पापा का घल पू । '

रात होते-होते आकाश फिर घिर आया । प्रकाश बल्ब के बारम्बार मे बठा एक के बाद एक बियर की बोतलें टाली करता रहा । बारम्बार अदुल्ला लोगो के लिए रम और व्हिस्की के पेग डालता हुआ बार-बार कनसिया से उसकी तरफ देख लेता था । इतन दिनों म पहली बार वह प्रकाश को इस तरह पीते देख रहा था । ' आज लगता है इस साहब न वही स बहुत माल मारा है उसन एक बार धीम स्वर म शर मुहम्मद स कहा । ' आगे कभी एक बोतल स ज्यादा नहीं पीता और आज बार बार बोतल पीकर भी बस करने का नाम नहीं ल रहा । '

शर मुहम्मद न सिफ मुँह बिचका दिया और अपने काम म लगा रहा । प्रकाश की आख अदुल्ला स मिली ता अदुल्ला मुस्करा दिया । प्रकाश कुछ क्षण इस तरह उसे देखता रहा जैसे वह इसान न होकर एक धुँधला-सा साया हो और अपन सामने का गिलास परे सरकानर उठ खड़ा हुआ । काउंटर के पास जाकर उसन दस-दस के दो नोट निकालकर अदुल्ला स सामन रख लिए । अदुल्ला बाकी पैसे गिनता हुआ खुशामदी स्वर म बोला आज साहब बहुत खुश नजर आता है ।

अच्छा ? ' प्रकाश इस तरह उस देखता रहा जैसे उसके देखते देखते वह साया धुँधला हाकर बादल म गुम होता जा रहा हो । जब वह चलन की हुआ तो अदुल्ला न पट्टे सलाम किया और फिर पूछ लिया क्या साहब वह कौन था उस दिन आपक साथ ? किसका लडका था वह ?

प्रकाश की लगा जस वह साया अब बिल्कुल गुम हो गया हो और उसक सामन सिफ बादल ही बादल घिरा रह गया हा । उसन जैसे दूर बादल क गम म दसन की चप्टा करते हुए कहा कौन लडका ?

अदुल्ला पल भर क लिए मौचका सा हो रहा फिर सहसा खिलखिलाकर हँस पडा । तब तो मैं नैर मुहम्मद स ठीक ही कहा था वह वाला ।

क्या कहा था ?

कि हमारा साहब सबायत का बादशाह है । जब चाहे जिसक लडका का अपना

लडका बना ले और जब चाहे 'यहाँ गुलमग मे ता यह सब चलता है' आप जसा ही हमारा एक और साहब है "

प्रकाश को लगा कि बादल बीच स पट गया है और चीलो की कई-एक पत्तियाँ उस दर्रे मे से हाकर दूर दूर उठी जा रही हैं—वह चाह रहा है कि दर्रा किसी तरह भर जाए, जिसमे वे पत्तियाँ आखो से ओझल हो जाएँ, मगर दर्रे का मुहाना और-और बड़ा होता जा रहा है। उसके गले से एक अस्पष्ट-सी आवाज निकल पड़ी और वह अब्दुल्ला की तरफ से आखें हटाकर चुपचाप वहाँ जा चल दिया।

"बस एक बाजी और !" अपनी आवाज की मूर्ख प्रकाश का स्वयं बहुत अस्वामानिक लगी। उसके साथियो ने हल्का-सा विरोध किया मगर पत्ते एक बार फिर बैठने लगे।

काढ़-रूम तब तक लगभग खाली हो चुका था। कुछ देर पहले तक वहाँ काफी चहल-पहल थी—नाजुक हाथो से पत्तो की नाजुक चालें चल रही थी और गीशो के नाजुक गिलास खड़े और उठाये जा रहे थे। मगर अब आमपास चार चार खाली कुतियो स घिरी हुई चौकोर मेजें बहुत अकेली और उदास लग रही थी। पालिश की चमक के बावजूद उनमे एक वीरानगी आ गई थी। सामने की गीवार मे बुखारी की आग भी अब की ठण्डी पड़ चुकी थी। जाली के उस तरफ कुछ बुझे-अधबुझे अगारे ही रह गये थे—मर्दों से ठिठुरकर स्याह पड़ते और राख में गुम होते हुए।

उसने पत्ते उठा लिए। हर बार की तरह इस बार भी सब बमेल पत्ते थे—ऐसी बाजी कि आदमी फेंककर अलग हो जाए। मगर उसी के अनुरोध से पत्ते बैठे थे इसलिए वह उन्हें फेंक नहीं सकता था। उसन नीचे से पत्ता उठाया तो वह और भी बमेल था। हाथ से कोई भी पत्ता चलकर वह उन पत्ता का मेल बठान का प्रयत्न करने लगा।

बाहर मूसलाधार वर्षा हो रही थी—पिछली रात जसी बपा हुई थी उसमे भी तेज। खिडकी के शीशा से टकराती हुई बूँद बार-बार एक चुनौती लिए हुए आती थी परंतु सहसा बेवस होकर नीचे की दुल्ह जाती थी। उन बहती हुई धारा को देखकर लगता था जैसे कई एक चेहर खिडकी के साथ सटकर अंदर झाँक रहे हों और लगातार रो रहे हों। किसी क्षण हवा से किवाड़ हिल जात था तो वे चेहर जसे हिचकियाँ लन लगते थे। हिचकियाँ बंद होने पर वे गुस्मे से धूरन लगते। उन चेहरों के पीछे अंधेरा छटपटाता हुआ दम तोड़ रहा था।

"डिक्लेयर !" प्रकाश चौंक गया। उसक हाथ में पत्ते अभी अभी उठी तरह थे—इस बार भी उसे फुल हैंड ही देना था। पत्ते फेंककर उसन पीछे टक् लगा ली और फिर खिडकी से सटे हुए चेहरो का देखन लगा।

तुम बहुत ही शुगानिस्मत हो प्रकाश, सबमुच हम मे सबसे शुगानिस्मत आदमी तुम्ही

दूध और दवा

बात बहुत छोटी सी है, नाबुक और लचीली, पर मौका पाते ही सिर तान लेती है। कोई काम शुरू करने साने या पल भर को आराम में पहुँचे लगता है कुछ देर इस प्यारी बात के साथ रहना कितना अच्छा है ! वैसे मुझे काम करना, करते रहना और करत करत उसी में खा जाना प्रिय है। "सी की बात भी मैं लोग से करता हूँ और दूसरों से यही चाहता भी हूँ पर यह सब तभी होता है, जब मेरे चारों ओर लोग होते हैं। ऐसा नहीं कि लोगो में मेरे बीबी बच्चे शामिल नहीं हैं। कभी कभी मुझे ऐसा लगता है, जैसे मैं किसी भीड़ में खड़ा हूँ और असाध्य ध्वनियाँ मेरे कानों के परदे को छेदने लगती हैं। मैं मागकर अपने कमरे में घुस जाना चाहता हूँ, पर उसकी बड़ी बही, आँसुओं में डूबी हुई आँखें मैं क्या करूँ इनका ? देखते ही, अब मुझे भी दूध के लिये ज़िद करती है ! ऐसा नहीं कि बात मेरे मन में गहरे तक नहीं उतरती, मैं तो मुन्नी को स्कूल जाने के लिये एक छोटी मोटर खरीदना चाहता हूँ। हल्के गुलाबी रंग के फ़ाक में लड़ खड़ाती दौड़ती मुन्नी को देखने की मेरी कसी विचित्र लालसा है, जो कभी पूरी होती ही नहीं दिखायी देती !

सुबह सुबह विस्तर से उठन ही वह जोर जोर से चीखने लगती है जब उसकी माँ से सूजी आँख और भी सूजी हाँती हैं। कई बार मन में डाक्टर की बात उठती है, डर लगता है वही मुन्नी की माँ की पतली लम्बी किशती-सी आँखा का पुराना छेद फिर न खुल जाये और सवेरे-सवेरे डूबन उतरान की मर्मांतक पीडा में मुझे लिखना-पढ़ना छोड़कर सड़क का चक्कर काटना पड़े ! मैं चुपचाप एक निश्चय करके कमरे में घला जाता हूँ पहले डाक्टर का दन्तजाम करवा ही उससे चचा करूँगा। पर फिर वही नन्ही-सी बात ! तुम्हें साजन लगता हूँ तुम जो "स कड़ी जमीन की चुपन से पलभर को उठाकर मुझ एक मुनहल झिलमिलात लोव में खींच ले जाती हो तुम्हारे मीन के बीच मुलायम उज्ज्वल देह माग में मुँह डालकर पलभर को सँभलना कितना अच्छा लगता है मुझ ! "गपद तुम्हें याद होगा बाल मकड़ी के जाले की तरह तनने लगती है सजिन घटो और घटो आँख बन्द रखने पर भी गिज़ार काई नहा फसता और मैं बीबिया और मजदूरों के बारे में सोचन लगता हूँ आखिर इन दोनों की हरदम गिज़ायत क्या रहती है ? क्या इन दाना के मीन में खार पाना का इतना विनाश समुद्र

फफाया रहता है मृत्यु की आखिरी कराह की तरह इस समुद्र की लहरें चीखती हैं, पर किसी खोखले थाप की तरह मिथ्या बनकर बिखर जाती हैं। मैं इन विनाशकारी लहरों को दुनिया को निगल जाते देखने के लिये व्याकुल हो उठता हूँ, पर हलकी-सी मुस्क राहट या वह भी नहीं ता बस मुलायम कलाईयो की पकड़ और उस समय कुछ भी और न सुनने की बात जान भी दा। कमर के नीचे नगी, खुली मैं इस असा मयिक मृत्यु से घबचना चाहता हूँ, पर कोई चारा नहीं। मुन्नी की माँ के जीने का यही सहारा है और मेरे पास उन मृत्यु की घाटियों के सूनेपन को दूर करन का यही उपाय। वह विश्वास नहीं करती, पर मैं सच कहता हूँ कि मुझे इतना बहुत अच्छा लगता है। इसलिए मैं समझ नहीं पाता कि स्त्रिया और भजदूर मालिका को क्यों ओढ़े हुये हैं, महज इतनी-सी बात क लिये, या मुन्नी की आँखों के माडे की दवा या उसके दूध के लिये।

ये प्रश्न उसके साथ नहीं उठते, क्या आखिर ? क्या उसे बच्चे नहीं हो सकते या वे दूध पीन वाले बच्चे नहीं होंगे ? धीरे धीरे यह 'क्यों' घुँघलाता है, पानी सिर्फ एक बूँद, स्याही, जाने कसी फलकर एक झील, भूरी आँखों की तरह, वह भी सतही उपली अछूता, कच्चा, नुकीला फूल, आसमान में उड़नवाली लरजती पतंग की लम्बी पूँछ किसी बैंगले के फटे, पुराने परदे मुस्क में बदलमनी और भूख के मित्र जिहे नौकरी के लिय पत्र लिखे हैं, जो चाहे तो मैं भी उही की तरह का लूँ, बेएतबार और ऊँचे दरजे की नौकरी देनवाला मुलाजिम लेकिन वह नौकरी से चिढती है—तुम नौकरी करोगे ? फिर तो माटर बगले और मुख की अनेक कोटिया हैं। मेरे लिये जगह कहा होगी ? मैं गरीब बाप की बेटी हूँ।—अजीब बात है, तुम भूख में जी सकती हो, लेकिन वह तो कहती है कि उसके सीने में एक भयकर ज्वालाभुली दवा पडा है, जो कभी भी नहीं भडकेगा, मुन्नी की माँ यह भी जानती है। पर क्यों नहीं भडकेगा क्या उसके लावा से मेरा घर-आँगन नहीं पट जाएगा ? इसलिए न कि मैं लिखूँगा और लिखने से पस मिलेंगे और पस उसे ठंडा करते रहेंगे। वह यही तो कहती है कि पसा दिल को ठंडा और शरीर का गरम रखन की अद्भुत दवा है—गरीब दुनिया का सबसे अच्छा इन्सान है, गरीब लडकी की मुहब्बत दुनिया की सबसे पवित्र मिधि।—कभी कभी वह स्कूल-बीचर की तरह बोलती है ! आखिर यह सब और है ही क्या ?

मुन्नी जब जमी थी ता उसके लिये मैंने एक झूला खरीदा था, बहुत-सारे पकड़ बन थे और उस दूध में स्नुकोज और शहद दी जाती थी फ्रेंच सीलेगी मेरी बेटी, मैं चाहता हूँ वह पेन्टर बन सिफ तीस रुपये तो लगते हैं उसके दूध के। तीस में ऐसा क्या रखा है ? साल ही मर बाद रनरू आया तो कितना उत्साह था। कोई बात नहीं, दोना के लिये एक गाड़ी होगी, दाना का बेटे जाएँगे लेकिन यह क्या फिजूल की बातें हैं, बेओर-छोर की। मैं झटके से उठ बठता हूँ और लिखने की कापी के मसौदे

कई बार जलट पुलटकर देखने लगता हूँ। कई अच्छी चीजें लिख बिना पत्नी रह गयी हैं। पर वही समय उन्हें उठाया तो नहीं जा सकता। मामूली स्तर पर बान बनाने से मुझे चिढ़ है लेकिन सहसा मुझे मकड़ी के नहे तार की स्मृति फिर हो आती है और मैं विस्तर छोड़कर उठ खड़ा होता हूँ वहीं जाता फिर न सतने लगे 'मुन्नी की मौं ऐसे ही समय आ जाती है, 'कहीं बाहर जा रहे हो क्या?' एक तख्त क्षणिक दिमाग में बज उठती है, पर मैं उस पर तुरन्त हाथ रख देता हूँ। कोई कठवी चीज निगलता हूँ, हाँ कोई काम है क्या ?'

'नहीं तो, ऐसा ही पूछ लिया। अभी साँ घूप बहुत तेज है कुछ छक्कर जाते !''

और यह वह ही क्या सकती है ? यकी भी तो है, बहद ! रतन ने मांगी दोपहरा परेशान किया है। चौका-बरतन सामान की समाल-सहेज, बपडो की सफ़ाई, अभी तो उसे पिलाकर मुलाया है। 'लाउज के बटन खुले ही हैं।

'मुन्नी भी तो रही है क्या ?'

"नही, सब जग रहे हैं।" वह उाती हुई हँसी को दबाती है चेहरे पर खून की पत्ती सी छलक हाती है और फिर क्षण ही मर में मृतक धीरे धीरे गाड़ी हान लगती है। वह दरवाजा छोड़कर कमरे में आती है आज मुन्नी की आँखों में बरत दद है। चेहरा सुख हो गया है। अभी-अभी तो सिर में तेल डालकर बहुत देर तक सहलाती रही हूँ तब जाकर मायी है।

वह चारपाई पर बठ जाती है। मैं पास आकर कहता हूँ ग्लाउज के बटन तो ठीक कर लो तुम्हे अब ठीक ढग से बॉडी पहनना चाहिए।

वह बटन बंद करत करतें बोलने श्यती है अब इसका मुण्य की कल्पना मरे पास मही है न ही तुम्हारे मन में है और अगर है, तो नहीं होनी चाहिए।' उसका बदन गम होने लगता है मेर सीने में एक बंद ज्वालाभुली है, जो कभी नहीं भडकेगा यह मैं जानती हूँ ऐसी ही बातचीत के घरातल पर बन् ज्वालाभुली तक पहुँचती है। और मुझ ऐसी ही मन भी बातचीत से डर लगता है। मैं ई धन नहीं डालता और वह उठ खड़ा होती है। कहा उस कोई दद रेंग गया हा। मैं चाहता हूँ जाते जान उससे कुछ कहकर जाऊँ पर ऐसे समय कुछ कहने का मतलब है कुछ सुनने का सम्भावना।

गामद जिस तरह उस मात्रूम है कि मैं बट्टी जाता हूँ उसी तरह मुझे भी मात्रूम है कि मैं बट्टी नहीं जा रहा हूँ पर जा रहा हूँ, यन् ठीक है।

मेर घर के सामन एक चौडा नाला है और उसके पर बंटोली झाडी का एक बड़ा-मा गुम्बद। मैंने कभी उसम एक सरगो न जाडे का घुमते देखा था। बस मैं पल-भर की पिछली बात को भूल जाता हूँ पर उसे आज भी नहा भूला। घर से निकलता हूँ, तो पल भर खबर ऊपर खबर दम लता हूँ। स्कूल से लड़कियाँ को

है, मोलगरी की पत्तियाँ दम साधे हैं, मुकटिप्टन की लम्बी शागें मर गयी हैं और बम्बों के पार्श्व की चेपास की उजली जमीन घिसी हुई, निर्जीव हड्डियों की तरह चमक रही है। मैं चाहता हूँ, हवा फिर मोल-मोल चानर सावर ऊपर उठे और फिर वही साल भर पुराना सब-कुछ आज घट जाये मोलगरी की पत्तियाँ मुकटिप्टन की डाली, पार्श्व की जमीन और भरे साथ

मैं पक्कर टूक-टूक हो रहा हूँ। पलमर वही बठना चाहता हूँ और कुछ नर सब बाहर का ही दराना चाहता हूँ जस कोई मकान का दरवाजा लगाकर बराम-मे आ जाये। लेकिन अब बहुत देर हो गयी है, लोन्ने में काफी समय लगेगा लगता है, वह घर से टिपल गयी पायी क्या नहीं निकल पायी? उस निकलना चाहिये था। उठो लोहे की जूनियाँ पत्नवर बाँटो को चुपलते हुए आना चाहिये था, लेकिन वह कहती है, "मैं खून से लम्पक हाना चाहती हूँ मैं उन सार दागों को अपने शरीर पर मुत्तर रखना चाहती हूँ मैं सारे पापों की मवाद घोर गन्दगी को लोगों को दिखाना चाहती हूँ। देखो, सत्य यह है, तुम्हारी सच्चाइयाँ की तस्वीर यह है। तुमने घर को इसलिये स्वयं बना रखा है कि तुम्हारी बीबी तुम्हारी बमाई राती है और एक सरीदे हुये दास से भी बदतर ढंग से तुम्हारी सेवा करती है। तुम्हें अगर यह पता लग जाये कि वह तुम्हें नहीं किसी और को चाहती है तो तुम हवा में नजर आते हो, क्योंकि तुम्हें अपने से ज्यादा अपने पसा पर भरोसा है। यही एक पुरानी टक्करी है तुम्हारे पाम।" "एक नन्हा सा आक्मीजन बलून हवा में उड़ता चला जाता है उसमें तुम बठी हो गरदन दब करने लगती है देखते-देखते, लेकिन तुम किसी मायाविनी की तरह पीछे से हँसती हुई गाव में बठ जाती हो "मुझे प्यार करो मेरे जान का समय हो गया मैं चाहती हूँ इसकी याद बनी रह जाय।" पर मुन्नी का बलून तो मेरे कमरे की निचली ही छत में अटका रह जाता है। वह पर पटकन लगती है "पापा! उतालो इसे। देखा यह छत चला लड़ी है मेला गुब्बाला तुम्हो ने छिपाया है।

'मैं कैसे पहुँचूँ इतनी ऊँचाई तक ?

"अच्छा मुझ कपे पल उठाओ।

'फिर भी तो नहीं पहुँचोगी।'

'कुछी पल मले हो जाओ।'

उसकी माँ बिगड़ती हुई आती है, यह क्या तमाशा है। अभी तो आँख ही पई है अब हाथ-पाँव भी तोड़कर बठागी?"

मैं चुपचाप सदा हूँ और वह मुन्नी के उतरने का इन्तजार करती है। लेकिन यह सा आक्मीजन ही निकल गयी गुब्बार से। 'मुन्नी। मुन्नी।'

'अब उसे जाने भी दा।' और हाँ कल रात कुछ लिख रहे थे, वे बागज कहाँ गये ?

मुन्नी की दवा और दूध बुपके से मन में कुछ कापता है—मैं ऐसी ही नहीं-नहीं बातों को लेकर परेशान होता हूँ ।

० ०

उसका स्वर कानों में बज उठता है “आखिर इसमें क्या ऐसा रखा है, जो तुम्हें विचलित कर देता है ? मैं रूकी नहीं, कुछ कहा नहीं, तो क्या आसमान फट पड़ा ? मैं पूछती हूँ कि मुन्नी के दूध और दवाइयों का क्या हुआ ? तुम कुछ लिखकर मुझ देनेवाले पन ?”

और इनने ही समय में यह कुछ धीमी-सी हो गयी है । मैं खुप जोर रह गया ।

क्या सोच रहे हो ? मैंने तो समझा कोई कहानी लिख रहे थे । आज किसी का देकर कुछ रुपये लाते तो अच्छा था । कल दो रुपये का सामान मंगाया था, आज मर और चलगा ।”

इस नन्हू-से अक्सर तो सम्भल गया हूँ, इसलिए बात बनने में दर नही लगती, “वह तो पत्र था । तुम्हें गोदावरी में लिखा था कि कितनी भिजवा दो, यहाँ प्रकाशक को लिखा कि उसे भेज दें । अरे रूकी, देखो, वह क्या है ?”

“कही ?

“रुकी तो ! अरे, यह तो वहाँ तिल है !” अंग्रुलिया काप जाती हैं । चेहरे पर चुनबुनाहट की तरह कुछ बहुत नन्हू-नन्हू उग आता है, एक अजीब-सी खुशी की लहर—

“हटा भी, खिड़की खुली है !”

मेरे सीने में एक ज्वालाभुली है, जो कभी नहीं भड़केगा, यह मैं जानती हूँ ।

मैं समझ नही पाता कि स्त्रिया और मजदूर मालिका को क्यों ओढ़ हुए हैं, महज इतनी-सी बात के लिये या मुन्नी की आँखों के मँडरे की दवा या उसके दूध के लिए ।

तीसरा आदमी

पाजामे को माटकर उसमें क्लिप लगाते हुये सतीश बोला 'तुमने तो सारा कमरा ही अस्त-व्यस्त कर दिया है, वही बठने तक बीता जगह नहीं है। तुम ठीक-ठाक करो, तब तक मैं जरा बाहर ही घूम आता हूँ।'

हाथ में साइड लिये लिये ही शकुन ने उसे भरपूर नज़रो से देखा 'देख रही हूँ तुम्हें आलोकजी का आना अच्छा नहीं लग रहा है।' आवाज़ में हल्की-सी तल्लीनी जिसे मौहो पर पड़े बल ने और भी स्पष्ट कर दिया था।

"मुझे ? मैंने तो ऐसा कुछ नहीं कहा।" और उसने या ही स्टण्ड के सहारे खड़ी साइकिल के पहिल पर पार से पर मारा, ता पीछे का पहिया खोर से घन्ना उठा।

सब-कुछ कहा नहीं जाता है कुछ 'बात होती है, जो शब्दों के बिना भी शब्दों से उदासा स्पष्ट होती है। फिर मैं कोई बच्ची नहीं, तुम्हारी हर बात को खूब समझती हूँ।' और वह जोर जोर से साइड मार-भारकर दरी की धूल झाड़ने लगी।

एक क्षण की सर्तीश की समझ में ही नहीं आया कि वह क्या कहे, क्या करे ? बड़ी कातर सी नज़रों से उसने शकुन को देखा और फिर साइकिल डेल्टा हुआ सींगियाँ उतर कर सड़क पर आ गया।

बाहर आकर एकाएक उसे लगने लगा जैसे आलोक का आना उसे सचमुच ही अच्छा नहीं लग रहा है। दो दिन से मन पर जा हल्की सी खिन्नता छापी हुई है, वह वही अच्छा न लगना ही तो है। वह शायद इस भावना को नाम नहीं दे पा रहा था शकुन ने दे दिया।

शकुन के मन में बड़ा उत्साह है। बल से हाँ लगी हुई है सारा घर ठीक करन में। और बल से उस बड़ा अपसास भी हाँ रहा है कि क्यों नहीं उसने बड़ा घर लेने की बात मान ली ? अब इस एक कमरे की हाँ बड़ा बनाने के चक्कर में उसने न जान कितना फालतू सामान हटा दिया है। अपने घर को बिल्कुल नया रूप नया जीवन देने पर तुली हुई है जैसे।

नया रूप, नया जीवन ? कमरे के लिये य शब्द कितने बेतुके हैं ! उस इन शब्दों का खयाल ही क्या आया ? उस खुद लगने लगा कि बहुत भीतर वहाँ कुछ हा

रहा है, जो उसे एबनॉमल बनाता जा रहा है। तभी तो उसने कुछ नहीं कहा फिर भी शकुन भाप गयी।

उसने देखा, वह गुक्ला के घर के सामने आ गया है। चलते समय उसने कुछ भी नहीं सोचा था कि वह वहाँ जायेगा। इस घर में बैठने की जगह नहीं थी। सो चल पड़ा था। कुछ देर गुक्ला के यहीं बैठ ले। उसने पर जमीन पर टिका दिये पर दो मिनट तक वह तय नहीं कर पाया कि वह गुक्ला के यहाँ जाये या आगे बढ़ जाये। नहीं, उसे वही नहीं बठना है। वह इस समय एकान्त में बैठकर अपने मन में ही भावेगा जो कुछ भी अनिश्चित अस्वामाधिक वहा है उसे जाने समझेगा। शायद इससे उसकी मानसिक स्थिति कुछ सुधरेगी। वरना यदि वह बल भी इसी तरह ऊटपटांग व्यवहार करने लगा, तो कितनी भद्दी बात होगी। फिर यह आनेवाला व्यक्ति लेखक ठहरा जरूर बड़ी पनी नजर होगी उसकी।

उसने साइकिल आनासागर की ओर मोड़ दी। बजरंग-गढ़ पर चढ़ती भीड़ को देख कर उसे खयाल आया, आज जरूर मंगलवार ही हाना चाहिये। होना क्या चाहिये, है ही। तो वह क्या भूलने भी लगा है? क्या होता जा रहा है उसे?

सारी बारहदरी पार करके वह उसके अंतिम मिरे पर आ गया। साइकिल में उसने ताला डाला और तालाब की ओर मुँह करके बैठ गया। सामने पानी में छोटी छोटी लहर उठ बिखर रही थी। एक लहर उठकर आगे बढ़ती, पर किनारे तक आने से पहले ही दूसरी लहर घक्के से उसे बिखेर देती। वह कुछ देर लहरों का यह खेल ही देखता रहा।

कल आलोकजी जा रहे हैं। आलोकजी—जिन्हें वह जानता नहीं, जिन्हें उसने कभी देखा नहीं। वह शकुन के परिचित हैं और उसी के निमन्त्रण पर आ भी रहे हैं। शकुन ने उसे भी पत्र लिखन के लिये कहा था, दो दिन तक वह तय ही नहीं कर पाया था कि लिखे या नहीं। फिर शकुन एकाएक बिगड़ पड़ी थी, तो उसने उसी समय एक पोस्टकार्ड लिख दिया था, और अब वह आ रहे हैं। वो देखो ता बड़ी साधारण-सी बात है, फिर भी उस लगता है कि वही कुछ है जवश्यक।

आलोकजी बड़े लेखक हैं। शकुन से ही उसने उनके बढप्पन की बात सुनी है। बड आदमी हैं तो व्यस्त भी जरूर रहते होंगे फिर आना स्वीकार कैसे कर लिया? शकुन से भी तो कोई विशेष परिचय नहीं। चार महीने पहले वह दो दिन के लिये जयपुर गयी थी अपने भाई साहब के पास, वही शायद मिलने की कुछ समय के लिये। उसके बाद पत्र आते-जाते हैं। कभी-कभी किताबों के पासल भी। शकुन की मज पर आलोक की कई पुस्तकें जम गयी हैं, जिन्हें वह हमेशा पढ़ती-सराहती रहती है।

पर शकुन कुछ ज्यादा ही उत्साहित है। उत्साह क्या, आवेग में आयी हुई है। शायद इसीलिये कि वही उन्हें जानती भी है और कोई बडा आदमी आता है तो थोडा

उगाह-आवग आ ही जाता है ।

उस याद आया शकुन को इस घर में तीसरे आत्मी की उपस्थिति असाध्य हो जाती थी । कमरा एवं ही था और जब कोई भी आ जाता, तो उनमें जाने के लिए अलग जगह नहीं रह जाता और मान समय शकुन से अलगाव नहीं रहा जाता । जिस साल शकुन बी० ए० की तयारी कर रही थी, तो उसने गाँव से माँ का बुल्बा लिया था । पर माँ समाल लेंगी, तुम पढ़ने में लगी रहो, घरना यह दूसरी महत्तव तुम्हें भार दगी ! कितना काम तुमका करना पड़ता है, सब मैं तुम्हारे लिये पर शकुन रोता रहती थी क्या बेकार की बात करता है ? तुम मुझसे चौगुना काम करवा लो, पर रात को तुम्हारी सोह नहीं छोड़ सकती । वही बात ही सारी घरना मिट जाती है, अगले दिन के दिन ताजगी आ जाती है । और सतीश ने बड़े ढंग से माँ को वापस गाँव भेज दिया था ।

एक बार उसका एक बड़ा पुराना मित्र आकर टिक् गया था । शकुन गिद्धता की सीमा लाँघकर उसका गाँव पंग आयी । सतीश को उस बार तो गुस्ता भी आ गया था, पर शकुन की यह दुबलता भीतर-ही भीतर उसे बड़ा पुलकित भी करती रहती ।

मैं बी० टी० करने नौकरी कर लूँ सब तुम दो कमरे का मकान ले बना और जिसका चाहो बुलाना । या भी जब तो किसी तीसरे आदमी को बुलायेंगे ही आसिर सब तक टालेंगे । और वह लजा पड़ी थी ।

जिस दिन बी० टी० का रिजल्ट निकला था, वह और शकुन बेहद प्रसन्न थे और उस दिन पहली बार वे किसी तीसरे आत्मी को खान के लिए मनुहार करते रहे थे । तीन साल अपने का जन्म किया अब और नहीं अब और नहीं ।

वे प्रतीक्षा करते और फिर नये सिर से निराश हो जाते । जुलाई में शकुन को हायर सेकेंडरी स्कूल में नौकरी मिल गई । दो-तीन महीने अपने नये काम के बीच वह कुछ मूली रहो । पर मनाश न देया कि धीरे धीरे यह निराशा उसके भीतर ही भीतर कुछ ताड़ती मराडती चर रही है ।

‘अरे भाई खान पर आओ न, मैं बठा हूँ ।’

तुम का लो मुझ बाज खाना नहीं है ।’

क्या बात है सबीयत तो ठीक है न ?’ सतीश ने भीतर लेटी शकुन को दुलारने हुए पूछा ।

हाँ हाँ ठीक है । मैंने जत रखा है ।

जत ! सतीश जोर में हस पड़ा । यह जत तुम कब से रखने लगी हो ?

अब से मंगल का रखा करूँगी । हनुमानजी का जत रखना चाहिए । तुम चाहें मजाक उड़ा लो मैं तो मानती हूँ ।

सतीश एकाएक सिन्न हो आया था । वह अकेला ही खाने बठा तो उससे खाना

नहीं गया। उस रात उसकी छाती पर सिर रखकर गकुन बहुत-बहुत रोयी थी 'मेरा मन नहीं लगता, मुझे बड़ा अकेला-अकेला लगता है।'

सतीश इस बात से दुःखी नहीं, शकुन के दुःख से जरूर दुःखी था, पर कुछ भी उसकी समझ में नहीं जाता कि वह क्या करे? और एक दिन गकुन ने कहा "सुनो आज मैं डाक्टर के पास गयी थी।"

"क्या?" बड़े आश्चर्य से उसने पूछा।

"इधर कुछ दिनों में मुझे अपनी तबीयत ठीक नहीं लग रही थी, साचा दिक्का है।"

'मुझे तो तुमने अपनी तबीयत के बारे में कुछ नहीं बताया?' कुछ अविश्वास से उसने पूछा। शकुन या अकेली डाक्टर के पास चली जाय कुछ नयी बात थी।

'बताने जसा कुछ होता तो बता देती, बस था ही खरा भारीपन-सा लगता था।'

'क्या बताया डाक्टर ने?' डाक्टर की बात सुनते ही उसका मन जान कसा-कसा होन लगा था, पर अब आशा की एक हल्की-सी लहर दौड़ गयी। क्या गकुन कोई खबर सुनाने वाली है?

'कोई खास बात नहीं।' बड़ा उदास स्वर था शकुन का। नहीं, कुछ हान जसी कोई बात नहीं है।

'उसने तुम्हें बुलाया है।' शकुन फिर बोली।

'क्यों?' और वह गौर से शकुन को देखने लगा। गकुन भी शायद उसकी नजरों का सामना करना नहीं चाहती थी मुँह किताब में ही मग्राये रही।

"क्या हुआ है, एक बार चले जाओ तो।" हिम्मत बटोरकर शकुन ने कहा।

सतीश को लगा शकुन वा या अकेल डाक्टर के पास जाना, उसे भी जान के लिए कहना जस भीतर-ही भीतर कुछ घुनता जा रहा है। उसका मन हुआ, कोई तीखी-सी बात कह दे, पर कही न गयी। कहा केवल इतना ही 'मुझे क्या हुआ है जो डाक्टर के पास जाऊँगा, मुझ में नहीं जाना है।' और वह प्रतीक्षा करने लगा कि शकुन विरोध करे या ज़िद करे, तो फिर वह कुछ सुनाये। शकुन ने कुछ नहीं कहा। कहती क्यों नहीं है साफ-साफ।

"तो शकुन, उसे भीतर-ही भीतर उससे कुछ सुलगन लगा। सामन लेटी शकुन उसे बड़ी अपरिचित और परायी-सी लगने लगी। यही वह गकुन है जिसे उसने अपने प्राणों से भी ज्यादा प्यार किया है जिसे उसकी बाधा का सहारा लिए बिना जीव नहीं आती। वही शकुन उस पर सदा रह करती है। उसे वह बिना कुछ बोले बाहर चला गया था। उसे सारी बात पर कभी गुस्सा आता, तो कभी दुःख होता पर भीतर-ही भीतर एक हल्का-सा भय भी अनजान ही उसका मन में समाता जा रहा था।

और उस दिन के बाद उसे घर की छत के नीचे बिना बाल बिना कटे बहुत

नई कहानी प्रकृति और पाठ

कुछ घट गया था। शकुन के भीतर कहीं कुछ मर गया था। जिस रात की प्रतीक्षा में पहले वह सारा दिन वाटता था, बिना थन फाइलो से जूमता रहता था उसी रात स अब वह डरने लगा।

उसके बाद जब भी दो कमरे का घर छूने की बात आती, बड़े बुझे-से स्वर में "गुन कहती 'क्या करना है बड़े घर का ? दो जनों के लिए यह कमरा ही काफी है।' हाँ स्वामी का पार्टीशन अवश्य लग गया था और बाबायग सोने और बठने के दो कमरे बना दिये गये थे। 'गुन बहुत कजूस हो चली थी। जब-तब कहती 'कौन लम्बी चौड़ी आमदनी है। इसी में स रख करना है इसी में स बचाकर भी रखना है। बढ़ाये में चार पस हाँगे तो यही सहारा दोगे करना यहाँ कौन "और सतीश का मन होता था कि वस ब सिर-पर की वनवास करने के लिए वह 'गुन की जीम छोच ल पर भीतर ही भीतर दिन प्रति दिन बढन वाला वह मय उस कुछ भी नहीं कहने देता। क्या कहे वह ?

और सबसे बड़ा परिवर्तन हुआ था कि सारा 'गरीर सतीश की बाँहों में छोड़कर भी शकुन वहीं और रहती थी। चाड़ी दर बाद ही वह उसकी बाँहों में स छूँकर करवट लेकर सो जाती सुक नींद आ रही है।" और अपमानित-आहत सतीश करवटें लेता रहता और निश्चय करता कि वह शकुन को बिना बताये कल ही डाक्टर के पास जायेगा और अपने को दिला आयेगा। यह झूठा लीछन वह क्या अपने ऊपर ले ? पर सबेरा आता तो पना नहीं उसे क्या होता कि डाक्टर क यहाँ जाने की उसकी हिम्मत तभी पडती। मन के किसी कोन में छिपा हुआ वह मय फलता जाता और उसके सारे निश्चय ढिग जात। वह साइकिल मोड़ लेता और सीधा आफिस ही पहुँच जाता।

समाय और दृढ़ सं ग्रस्त 'गुन के दुःख से दुःखी और एक अजान आसका से वस्त सतीश बस एक ही बात महसूस करता कि शकुन उससे दूर होती जा रही है— उसके शरीर में भी आर मन में भी। कोई तीसरा प्राणी उनके बीच आ जाता तो ब कितन पास आ जाते। उसके अभाव में उनकी अनुपस्थिति में दिनों दिन वे दूर दूर हो होते जा रहे हैं।

पर कोई तीसरा प्राणी नहीं आया। हाँ खाना बनाने के लिए एक बुढ़िया माजी की सतीश ने जिद करके रख लिया। तब तक उस बड़े अभाव की पूर्ति नहीं हो जाती वह शकुन के लिए सामर्थ्य मर दूसरी सुख-सुविधाएँ जुटा देना चाहता था। एकाएक पण्टों की आवाज के बीच वज्रग गढ़ की आरती का स्वर चारों ओर फल गया। सतीश भी स्वर में स्वर मिलाकर गाने लगा। वह कई बार मगल को शकुन के साथ वज्रग मड़ आया है उस पूरी आरती याद है। शकुन ने कमरा ठीक कर लिया होगा अब चलना चाहिए। उस एकाएक एक

पछतावा हान लगा कि वह यही क्या आया ? उसे भी शकुन के साथ कमरा ठीक करवाना चाहिए था । वह भी उतने ही उत्साह से काम करता, तो शकुन कितनी प्रसन्न होती ! वह क्या वहीं भी, कभी भी शकुन को प्रसन्न नहीं रख सकेगा ?

पर वह क्या करे ? उसे आज सचमुच कुछ अच्छा नहीं लग रहा है । आज क्या, उसे पिछले तीन चार महीना से कुछ भी तो अच्छा नहीं लग रहा । हा, शकुन जरूर कुछ प्रसन्न रहने लगी है । लगता है जैसे उसने इस स्थिति को अपनी नियति मान लिया है । पर क्या ? दो घप का समय थोड़ा ऐसी अवधि तो नहीं है कि आदमी या हताश हो जाये । उसके पास ऐसे लोगों की एक लम्बी लिस्ट है जिनके विवाह के पाँच पाच सात सान साल बाद बच्चे हुए । पर शकुन तो जैसे कुछ भी सुनने मानने को तयार ही नहीं है । उसकी इस जिद के लिए क्या किया जाय ?

जिद ! क्या सचमुच यह जिद बिल्कुल ही आधारहीन है ? और यदि है ही तो क्यों नहीं वही उसे प्रमाणित करके उस इस त्रास से मुक्ति दे देता ? पर क्या हुआ है उसे जो वह डाक्टर के पास जाये ? वह बिल्कुल नामल आदमी है । ऐसा कुछ भी होता तो क्या उसे पता नहीं लगता । क्या तीन साल तक शकुन का पता नहीं लगता ? उसने कभी कुछ महसूस नहीं किया, ता फिर यह शका उसके मन में आयी ही क्यों ?

पर वह एक बार चला ही क्या नहीं जाता ? नहीं, वह शकुन की इस भूठी और बतुकी जिद के सामने अपने को या अपमानित नहीं होने देगा, पर हर बार ही वही बहुत भीतर से एक प्रश्न-मा उठता—क्या वह सचमुच शकुन की जिद के कारण ही जिद किये बैठा है, और वही कुछ नहीं है ? किसी जाशका ने तो उसे नहीं रोक रखा है और यही आशका धीरे धीरे मन में गाठ बनाती चल रही थी । उसका खुद अपने पर से जैसे विश्वास उठने लगा था । उसे स्वयं शकुन का सदेह कभी-कभी सच लगने लगता था । एक अपराध भावना मन में घर करने लगी थी ।

और तब उसने सोचा था कि शकुन को प्रसन्न करने के लिए वह सब कुछ करेगा । किसी भी कीमत पर वह उस प्रसन्न रहेगा पर बिना कुछ किये ही वह प्रसन्न रहने लगी तो उसे लगन लगा कि वह कीमत उससे चुकायी नहीं जा रही है बहुत भारी पड़ रही है ।

उसने स्वयं आलोक के पत्र पढ़े हैं । उनमें उसे वही कुछ ऐसा नहीं लगा, जिसमें वह आहत अनुभव करे । पर हमेशा उम्र लगता है कि लिखे हुए शब्दों से परे भी कुछ है अदृश करना इन शब्दों में आगिर ऐसा है ही क्या जो शकुन या प्रसन्न रहती है ?

घर लौटने की बात फिर उसके मन में आयी । आठ-दस आचारा से लागा को छाड़कर मल आदमिया की भीड़ में चुकी थी । हवा में ठण्डक बढ़ती जा रही थी । सतीश ने सड़े होकर बड़ अलसाये भाव से एव जोर की अँगड़ाई ली । सामने पानी के फल विस्तार में अभी छोटी छोटी लहरें उठ बिखर रही थी । तीन तरफ पहाटिया से घिरा

यह तालाब और जटती गिरती ये लहरें ।

सादी के बाद अस्तर घट शकुन को सचर यहाँ आया करता था । शकुन तब फ़्लटर पास थी । ये घटकर आगे की याजना बनाया करत थ और एक सौ दस रुपये में पूरा महीना काटने का बजट भी । उसे यात्र आया, यही शकुन ने उसे अपने पहले प्रेम प्रसंग की बात की सुनायी थी और बताया था कि वह उसे बेवक़्त उमरी पल्लवों की ही चूमा करता था और उस ज़िन् पर लौटते समय वह रास्ते भर यही गोचता रहा था कि वह अब कभी शकुन की पलक चूम या नहीं ? नहीं वह कभी उसकी पलक नहीं चूमेगा करना उसे अवश्य ही अपने उस प्रेमी की यात्र आयेगी और वह नहीं चाहता, चाहता क्या शायद बदस्त नहीं कर सकता कि शकुन उगवे सिया किसी और की जान सोचे । पर जाकर उसने पूछा भी था 'अब भी तुम्हें कभी अपने उस प्रेमी की याद आती है ?'

शकुन हसी थी 'दसा औरत यानि किसी से प्रेम करती है, तो उसकी बात ज़बान पर भी नहीं लाती । बात ज़बान पर आ गयी तो समझ लो प्यार मर गया । वे सब तो निरे बचपने की बातें थी ।' और उसने सतीश के सीन पर सिर रखकर आँखें मूँद ली थी ।

एकाएक सतीश का याद आया— आलोक का पत्र आया था । शकुन पत्र पढ़ती जा रही थी और एक प्यारी-सी मुस्कान उसके चेहरे पर खिलती जा रही थी ।

'ऐसा क्या लिख भेजा है लेखकजी ने बड़ी मुस्कराहट फूट रही है ?'

कुछ नहीं यो ही ।'

रात को फिर उसने आलोक का प्रसंग छेड़ा था तो शकुन एक तरह से झटका सी उठी थी 'नया बात है देखती हूँ आलोकजी से परिचय मेरा है पर छाये के आप पर रहते हैं । यह उत्तर उसे मातर तक चौर गया था ।

तो ? सतीश को लगा जस कोहरे से चारा ओर का वातावरण बड़ा बांझिल बांझिल हो चला है । सामने का पानी एकाएक यो स्थिर हो गया मानो उसमें कोई चेतना ही न रह गयी हो ।

अब यही से चल ही दना चाहिये । साइकिल पर बैठते ही ठण्डी हवा का एह सास तो हुआ, पर लगा वह हल्का या अधिक सहज स्वाभाविक होकर नहीं लौट रहा है । घर का सचमुच नया रूप मिल चुका था ।

०

'मैं बहुत थका गयी हूँ । कहकर शकुन नरबट लेकर सो गयी । पता नहीं सा गयी थी या सोने का बहाना करके पड़ी थी । नहीं सा ही गयी है शायद । उसने शकुन के चहरे की ओर झुककर ज़रा गौर से देखा । शकन के लक्षण दिखायी दे रहे थे । शकन का यो सोता देखकर ढेर-सा लाड उसका मन में उमड़ आया । भीतर-ही भीतर

उमड़ती एंटती अपराध भावना और ज्यादा गहरा गयी। मन का भय विश्वास का रूप लेकर गहरे उतरने लगा। सचमुच ही उसके भीतर बही कुछ है अवश्य। शकुन वं साथ आया ही हो रहा है। उसे कोई अधिकार नहीं। शकुन पर इस तरह सदेह करने का या आरोप लगाने का।

औरत की यह कितनी स्वाभाविक इच्छा होती है कि वह माँ बने। मान ला, यह बात प्रमाणित हो जाये कि वह कभी शकुन का माँ नहीं बना सकती है तो ? जान क्या विचार उसके मन में आया कि वह भीतर तक सिहर गया। फिर वह अपने को जैसे तोलने लगा। क्या वह शकुन की इस इच्छा को पूरी करने में सहायक हो सकता है ? क्या वह अपना इस दुबलता के मामलें घुटने टवकर ऐसी तटस्थ उदारता ला सकता है कि वह जस भी हो अपनी इच्छा पूरी कर ले ? मान ला कभी ऐसा कुछ हो जाय, तो क्या वह उस बच्चे का स्वीकार कर सकेगा ? नहीं गायद शकुन की पलक की तरह वह उस बच्चे का भी कभी नहीं छू सकेगा। जहाँ पर हमारे की छाप है उसे स्वीकार करना उमक लिए अमम्भव है। किसी का बच्चा

उसने झपटकर टेबिल लम्प का स्विच दबा दिया। कमरे में एक क्षण का धुप अँधेरा छा गया, यहाँ तक कि पास लटी शकुन की आकृति भी अँधेरे में डूब कर रह गयी।

धीरे धीरे फिर सब चीजें अपना रूप लेने लगीं। दण भर को जा सब-कुछ डूब गया था फिर निक्कायी देने लगा स्पष्ट, और अधिक स्पष्ट। सतीश को बड़ी तसल्ली मिली। वह अपने कमर में ही है और अँधेरे में भी सब कुछ देख सकता है पहचान सकता है। वही कुछ नहीं बदला है वह भी कभी आधारहीन और निरयक बाता को बना चढ़ाकर व्यथ हो भयभीत होता रहता है।

बाह फलाकर उसने शकुन को अपने पास खींचकर जार से भाचना चाहा। शकुन ने हल्का-सा विरोध किया “छोडो बड़ी गरमी लग रही है।”

फरवरी का महीना बीत ही गया था। सर्दी चाहे न हो, पर गर्मी का ता नाम भी नहीं था। कम्बल ओढ़कर ही सोने थे। उसे जून की वह बात याद आयी। एक दिन ऐसी ही भयकर गर्मी से चिपचिपाते हुए शकुन को उसने अलग कर दिया था, ता दूसरे ही दिन अपनी बचत के सारे पैसे सामने रखकर उसने कहा था “आज ही एक टेबिल पन खरीदकर लाओ। तुम तो जानते ही हो कि मुझ और वह बड़ी तिरछी नजरा से देखकर हँस पड़ी थी।

उनके घर टेबिल पन ऐसे ही आया था।

०

तांगा चला तो सतीश का मन गहरे अवसाद में डूबने लगा। स्टेशन आते समय मन में विनाश उत्साह और प्रसन्नता चाहे न रही हो, पर ऐसी खिन्नता भी नहीं थी

यह तालाब और उठती विगरती ये लहरें !

राही के बाद अस्सर यह 'शुन को सचर मही आया करता था । 'शुन तब प्ण्टर पास थी । ये बटवर आये की योजना बनाया करते थे और एक सौ दस रुपये में पूरा महीना काटने का बजट भी । उसे मा' आया, यही 'शुन ने उस अपने पहले प्रेम प्रसंग की बात भी सुनायी थी और बताया था कि यह कसे पकल उमकी पलकों को ही चूमा करता था और उस दिन घर लौटते समय वह रास्त भर मही सोचता रहा था कि वह अब कभी 'शुन की पलक चूम या नहीं ? नहीं, वह कभी उमकी पलकें नहीं चूमगा, करना उसे अवश्य ही अपने उस प्रेमी की या' आयगी और वह नहीं चाहता, चाहता क्या 'नायद बदलन नही कर गवता कि 'शुन उमके निवा किसी और की मान सोचे । घर आकर उसने पूछा भी था 'अब भी तुम्हें कभी अपने उस प्रेमी की याद आती है ?'

'शुन हसी थी 'दरसे औरत म' किसी स प्रेम करती है तो उसकी मान जवान पर भी नहीं लाती । बात जवान पर आ गयी तो समझ लो प्यार भर गया । वे सब तो निरे बचपने की बातें थी ।' और उसने सतीश के सामने पर सिर रखकर आँखें मूँद ली थी ।

एकाएक सतीश का याद आया - आलोक का पत्र आया था । 'शुन पत्र पढ़ती जा रही थी और एक प्यारी-सी मुस्मान उसने चेहरे पर खिलती जा रही थी ।

ऐसा क्या लिख भेजा है सेवकजी ने बड़ी मुस्कराहट फूट रही है ?'

'कुछ नहीं यो ही ।

रात की फिर उसने आलोक का प्रसंग छड़ा था तो 'शुन एक तरह से झटका सी उठी थी 'क्या बात है देगती हूँ आलोकजी स परिषय मेरा है पर छाये के आप पर रहते हैं ।' यह उत्तर उसे भीतर तक चीर गया था ।

तो ? सतीश को लगा उस कोहर स चारा ओर का दातावरण बड़ा बोझिल बोझिल हो चला है । सामने का पानी एकाएक थो स्थिर हो गया मानो उसमें कोई बेतना हीन रह गयी हो ।

अब यहाँ से चल हो दना चाहिये । साइकिल पर बैठते ही टण्डी हवा का एह सास ताँ हुआ, पर लगा वह हल्का या अधिक् सहज-स्वाभाविक होकर नहीं लौट रहा है ।

घर को सचमुच नया रूप मिल चुका था ।

०

'मैं बहुत थक गयी हूँ । कहकर 'शुन बरबट लेकर सो गयी । पता नहीं सा गया थी या सोन का बहाना करने पड़ी थी । नहीं सो ही गयी है 'नायद । उसने 'शुन के चहरे की ओर झुककर जरा गौर स दखा । यकाल के लक्षण दिखायी दे रहे थे ।

शुन का यो सोता दबकर दर-सा लाट जगमग मन में उमड़ आया । भीतर-ही भीतर

उमडती एंठती अपराध भावना और जयादा गहरा गयी। मन का भय विद्वान का रूप लेकर गहरे उतरने लगा। सचमुच ही उसके भीतर कहा कुछ है अवश्य। गनुन के साथ अयाय ही हो रहा है। उसे कोई अधिकार नहीं, गनुन पर इस तरह सन्नेह करने का या आरोप लगान का।

औरत की यह वितनी स्वाभाविक चूँटा हाँती है कि वह भी बने। मान ला यह बात प्रमाणित हो जाये कि वह कभी गनुन का भाँ नहीं बना सकता है, तो ? जान बसा विचार उसने मन में आया कि वह भीतर तक सिहर गया। फिर वह अपन को जस तोलन लगा। क्या वह शकुन की इस इच्छा का पूरी करने में सहायक हो सकता है ? क्या वह अपना इस दुर्लसा के सामने घुटन टक्कर ऐसी तटस्थ उदागता ला सकता है कि वह जस भी हो अपनी चूँटा पूरी कर ले ? मान ला कभी ऐसा कुछ हो जाय, तो क्या वह उस बच्चे का म्बीवार कर सकेगा ? नहीं गायद गनुन की पल्लवा की तरह वह उस बच्चे का भी कभी नहीं छू सकेगा। जहाँ पर दूसरे की छाप है उसे स्वीकार करना उसक लिए असम्भव है। किसी का बच्चा

उसने पपटकर टविल लम्प का स्विच दबा दिया। कमर में एक क्षण का घुप अघेरा छा गया यहाँ तक कि पास लटी गनुन की आकृति भी अँधेरे में डूब कर रह गयी।

धीरे धीरे फिर सब चीजें अपना रूप लन लगी। क्षण भर का जा सब कुछ डूब गया था फिर दिखायी दन लगा स्पष्ट, और जयिक स्पष्ट। सतीश को बड़ी तसल्ली मिली। वह अपने कमर में ही है और अँधेरे में भी सब कुछ देख सकता है, पहचान सकता है। कहीं कुछ नहीं बदला है वह भी कभी आधारहीन और निरर्थक बाता का बना चढ़ाकर व्यय हो भयभीत होता रहता है।

बाह फलाकर उसने गनुन का अपन पास साँचकर जार में भाषना चाहा। शकुन ने हल्का-सा विरोध किया "छोडो, बड़ी गरमी लग रही है।"

फरवरी का महीना बीत ही गया था। सर्दी चाहे न हो पर गर्मी का ता नाम भी नहीं था। कम्बल ओलकर ही साते थे। उस जून की वह बात याद आयी। एक दिन ऐसे ही मयकर गर्मी में चिपचिपाते हुए गनुन का उमन अलग कर दिया था, तो दूसरे ही दिन अपनी बचत के सारे पस सामने रखकर उमन कहा था 'आज ही एक टविल पन खरीदकर लाओ। तुम तो जानते ही हो कि मुझ' और वह बच्चे तिरछी नजर से देखकर हँस पड़ी थी।

उसके घर टविल पन ऐसे ही आया था।

०

तांगा चला ता सतीश का मन गहरे अवसाद में डूबन लगा। स्टेशन आते समय मन में बिनेप उत्साह और प्रसन्नता चाहे न रही हो पर ऐसी निश्चिन्ता भी नहीं थी,

हूवे हूवे का यह अहसास भी गही था। पर अब ? अब उसकी नज़र पास बैठे आलोक के सीने की खोई हुई मही बेंधमर रह गयी और मन वहीं गहरे झुन लगा।

‘कसा घटर है अजमेर ?’

‘आप खुद ही देख लीजिये, दो चार दिन तो ठहरियेगा ही ?’

“अरे नहीं साहब, आज रात को ही वापस लौट जाना है। शकुनजी का इतना आग्रह था, फिर आपका माह मिला तो लगा माना हा पड़गा।”

एक भोग-नाहट। ऐसी सुख व्यवहार का जन्म किसी रहस्य का तो हा ही नहीं सपता। यह व्यर्थ ही बठा बठा कुछ रहा है। यह उनका अपना हा हीन भाव है और कुछ नहीं।

पर इसकी ये स्वस्थ झुजाएँ उनपर उमरी मछलियाँ इसका तो सभी कुछ बहुत स्वस्थ होगा।

सवेर पता नहीं क्या एकाएक शकुन ने अपना इरादा ही बदल दिया था ‘मैं स्टेशन नहीं जाऊँगी, तुम्हीं जाकर ले आओ।’

कहीं थोड़ा आश्चर्य और सतुष्ट सा होते हुए भी उसने कहा था “अरे बाह ! यह भी कोई बात हुई मला ? इतना आग्रह करने बुझाया है और अब लेन नहीं जाओगी ? शिष्टता भी तो कोई चीज़ होती है आखिर !’

“तुम तो पहुँच ही जाओगी। घर से कोई भा जाय, क्या फक पड़ता है ?” सतीश ने गौर से शकुन को देखा। क्या सचमुच शकुन उसे और अपने का एक ही समझती है ? कितने सहज भाव से उसने कह दिया कि कोई भी चला जाये, क्या फक पड़ता है, और एक यह है कि दो दिन से पता नहीं क्या-क्या सोच रहा है। उसके मन का तनाव एकाएक ही ढीला हो गया फिर भी उसने कहा था ‘मैं तो पहचानता भी नहीं, चलना तुमको भी चाहिए।’

“तस्वीर तो तुमने भी देखी है पहचान ही लोगे।

‘छर पहचान तो लूँगा ही।’ और उसे लगा वह तस्वीर न भी देखता, तो भी पहचान लेता, और स्टेशन क्या हज़ारा की भीड़ में भी वह आलोक को पहचान सक्ता है।

शकुन मुस्करायी थी। उस समय तो सतीश नहा भीप सवा, पर अब उस लगने लगा कि शकुन की उस मुस्कराहट में कहीं बड़ा तीखा व्यंग्य लिपटा हुआ था।

“विचित्र सयाग है पहली बार आया था तो शकुनजी से मुलाकात हुई थी, इस बार आया तो उनके घर आना पड़ा।’ आलोक हँसा।

यह सारी बात इतने सहज ढंग से बसे कर लेता है ? इस क्या नहीं मालूम कि शकुन का निमंत्रण पर या चले जान से मैं, शकुन का पति, कुछ गलत अर्थ भी तो लगा सकता हूँ। पर ऐसी बात का बोध तभी होता है जब आदमी के अपने मन में पाप

हो। नहा नहीं, यह सब मेरा भ्रम है। वही भी तो कुछ नहीं है। आलोक से कर आते ही शकुन न भी तो सब कुछ बता दिया था। सब कुछ तो ठीक है। कही कुछ है तो उसके अपन भीतर ही है। छि मन के सशय न उसकी आत्मा कितना दुबल बना दिया है।

आलोक शकुन का ही नहीं, उसका भी मेहमान है। शकुन कोई उससे जल है नहीं, वह जबरदस्ती हाँ इस जलगाव का पदा कर रहा है जोर व्यथ ही कष्ट प है। कुछ होता तो शकुन उसे या अपने स्नान मेजती ?

पर आत ही उसन आलोक की जटची स्वय उठा ली। आलोक न हल विरोध भी किया, पर बह नहीं माना। आखिर आगे उन जो ॥ का मेहमान है। बरामदे मे ही शकुन प्रतीक्षा म गयी थी उह देखकर दोनों सीढ़ियाँ उतर कर पर आ गयी।

“देखो सही आदमी का ही लाया हूँ न ?” तीना हँस पड़ और उसन अब वह ऐसे ही व्यवहार करेगा। बहुत ही सद्ग और स्वाभाविक ढंग से। मन एक ही हल्का हा आया।

तीनों भीतर घुसे, तो सजा हुआ कमरा उसे स्वय बड़ा अच्छा लगा। इस घर का मालिक तो वही है। शकुन कुछ औपचारिक-भी बातें कर पूछ रही थी वह मन-ही मन साच रहा था ‘आज वह सबका खूब हँसायेगा। ऐसे ऐसे चुटकुल सु कि बस। लेकिन वह चाहे न हो पर मूड म आ जाये, तो लोगों को ऐसी बर्तिया कर सकता है कि एक बार मिलने के बाद लोग उसे आसानी से भूल नहीं सकत।’ शकुन वह आलोक के सामने कतई महसूस नहीं होने देगा कि उसका पति मात्र एक बल्ब बूदम और डल। कितन दिन हो गये हैं उसे हस और हँसाये।

आलोक दीवार पर लगी उन लोग की तस्वीर को देख रहा है, जो विवाह के बाद ही लिखवायी थी।

‘यह क्या बहुत पुरानी है इसम तो बड़े थग और स्माट लग रहे हैं, लोग !’ सतीश को लगा, यह रिमाक उसन केवल शकुन के लिए दिया है, उसे। यो ही औपचारिकता के नाते शामिल कर लिया है। और एकाएक उसने शकुन के देखा सो पहली बार इस बात पर ध्यान गया कि बड़े पल से उसने अपने उन स को पूरी तरह उमारा है, जहाँ-जहाँ स वह मुँदर लगती है। पर इसमे क्या बहुत ही स्वाभाविक है। उसे ऐसी छानि छोटी बातों का ध्यान भी क्या आता

“शकुन, अब तुम गरम चाय पिलाओ तो आलोकजी की यकान भी उत पाओ साजगी और गरमाहट भी आये।’ अपने स्वर की स्वाभाविकता उस अच्युती लगी।

“मैं सिगरेट पी नूँ ?” हाँको म सिगरेट दबाते हुए आलोक न अनुमति

‘मुझे तो अभी भी जमे विश्वास ही नहीं हो रहा है कि आप वही हमारे घर आयेंगे भी, कि आप आ गये हैं।’ बड़े गम्भीरतः भोलेपन में धुन बाला।

‘ला कमल कर लिया। सारीर सामने बैठकर भी यदि विश्वास न दिला गऊँ तब तो मामला बड़ा मुश्किल है। आलोक जोर से हसा।

‘मैं गजमुन शिखरी गुन हूँ कि आपने मेरा निमन्त्रण स्वीकार कर लिया।’

‘मैं तो इस बात में गुन हूँ कि तुमने किसी को निमन्त्रण दिया तो। आलोचन आपका सायद विश्वास नहीं होगा। आप पहले आत्मी हैं जिसने आने पर धुन या गुन हा रही है। करना धुन को इस घर में सीमरे आत्मी की उपस्थिति तब बरताना नहीं होती।’

‘बलिये बेकार धननाम मत कीजिए। ठुनकर धुन बाली।’ दलिये आलोचनजी घर में नाम पर धुन यह एक बमरा है हम लोग के पास। यह पार्टीगत भी बड़-नाम म लगा है। पहल तो यह भी नहीं था। कोई भी जा जाता तो समय में ही नहीं आता कि नहीं हम सोर-बठें वहाँ उसे मुलाए बिठाए। फिर मुझ एकांत और प्राइवसी पता है अब चाहे कोई कुछ भी कह स।’

एकांत की प्राइवसी। क्या आलोक इन गानों के अर्थ नहीं समझता?

‘तब तो मेरे आने से भी आपको बच्य हुआ होगा। वैसे मैं तो आज रात को ही चला जाऊँगा।’

धनू। ‘धीरे से ही बात काटते हुए धुन बोली। कसी बातें करते हैं आप भी! आपको आने से बच्य। यह तो हमारा सीमावर्त्य है। हाँ आपका जरूर कुछ कष्ट हा सकता है। पर हमारी खातिर उस भी सहिये।’ फिर एकाएक पूछा ‘क्या आप आज ही चले जायेंगे?’

बिलकुल। हर हालत में। बल मकर मझ चला ही जाना है।

बुद्धिया नौकरानी चाम ल आयी। सतीश ने देखा टूटे बड़े करीन से सजाया गयी है। गजन गायद पहले ही सब-कुछ कर आयी थी। धुन के मुँह से बार-बार हम-हम गद मुनकर सतीश का आत्म विश्वास जस बढ़ सा रहा था। धुन ने और ठहरन के लिए एक बार भी नहीं कहा। आलोक भी ठहरने को म्यग्र नहीं। सभी कुछ तो बड़ा नामल है। नहीं लुच्छता से जम गाने में देहा को बह पाछ देगा।

चाम चलती रही। धुन वही आत्मोपता मरी मनुहार से आलोक को मिला रही है। आज उस अपना घर बलक के घर से छाटे अफमर के घर के रूप में बदला हुआ लग रहा है। एक नामी लखन उससे घर में बठा हुआ है उसकी पत्नी सजी सवरी, बलक की साठा पठन सबका सब कर रही है और इस घर और उस स्त्री के स्वामी वह है, केवल वह। इधर उधर की गपराप चलती रही। आलोक गुन मिजाज हसमुख और धुले स्वभाव का व्यक्ति है। अभिमान या बड़प्पन का बोध तब नहीं। धुन साम नहीं।

बाल रही केवल सुन रही है। वैसे बोलना उसे ही सबसे ज्यादा चाहिए। जो भी हो, जातिर वह है तो उसी का मेहमान।

“तुम जरा तरकारी ले आओ।”

“पहले नहा लूँ।”

“नहीं, नहाना बाद में, पहले तरकारी ले आओ।” अधिकार भरे स्वर में आदेश देती-सी शकुन बोली। और सतीश का जगा जम अब वह थोड़ा एकांत चाहती है प्राइवेटसी।

हवा उल्टी थी या पना नहीं बयो साइकिल बड़ी भारी चल रही थी और सतीश को पूरा जोर लगाकर पड़िल मारने पड़ रहे थे।

वह लौटा तो शकुन और जालोक आमने सामने बैठे बात कर रहे थे। दाना के बीघ सिगरेट का हल्का-सा घुआ छाया हुआ था। उस देखते ही शकुन ने अपना बात अचूरी छोड़ दी। न मात्रूम सा खिचाव भी उसे शकुन के चहरे पर दिखायी दिया।

ले आये?” जया-के त्या बठे बठे ही उमन पूछा। उठकर उसने थला तक नहीं लिया।

“अब तुम नहा ला। तरकारी उधर भाजी को ही दे देना।

हा हाँ देखिए आप लोग अपन कटीन में किसी तरह की गडबड न करियेगा। आप आफिम कितने बजे आते हैं?”

‘दस पर पहुँचना होता है, सारे ना के बाद निकल जाता हूँ।’ सतीश ने किसी तरह शब्दों को टेलकर जवाब दिया।

और तुम?”

पंद्रह मिनट में ही स्थिति तुम पर आ गयी? नहीं गायद बहुत पहले में ही यह स्थिति चल रही थी।

मैंने तो आज छुट्टी ले ली है। एक दिन के लिए आप आये हैं, सारा दिन स्कूल में गुजार दूँगी तो आपसे बात क्या करेंगे?”

करेंगे। तो क्या शकुन मुमस भी छुट्टी लेन के लिए कहेगी? यदि कहा तो क्या वह ले लेगा? लेनी चाहिए उसे?

नहीं बहू-बचन का प्रयोग तो वह अपन लिए भी कई बार करती है। चाय के समय चुप क्या बठी थी? करती न उस समय बात। और जालोक अगली गडबड करन की बात क्यों नहीं करना? कुछ दूर पहले तक तो छुट्टी की कोई बात भी नहीं थी। और उसे लगा कि फिर मंत्र कुंठ गन्त्रडा गया है बाहर भी जोर उसके अपन भीतर भी।

वह नहाकर लोग और पार्गेशन के इधर नि शब्द तयार हान लगा। कान उसके उधर ही लगे हुए थे।

हमारा विशेष परिचय भी नहीं होता, फिर भी कहानी निकालने के लिए हमें लगाव जोड़ना पड़ता है। यो समझिये, एक्टिंग करनी पड़ती है। बड़ा खतरनाक खेल होता है यह। कमी-कमी तो एक् कहानी का दस गुनी कीमत भी बढ़ा करनी पड़ती है।

तभी शकुन आ गयी और सतीश के दिमाग में कुछ कौघते कौघते रह गया।

“आलोकजी आप भी नहा लीजिये। असली थकान तो नहाने से ही जायेगी। मैं गरम पानी रख जायी हूँ।”

“नहा लेंगे, जल्दी क्या पड़ो है। मैं कोई ब्राह्मण तो हूँ नहीं कि नहाकर ही मुँह जूठा करूँगा।”

शकुन हँसी। सतीश को हटका मा अफमोस हुआ कि वह हँस क्या नहीं सका।

‘नहीं, नहा डालिये।’ आलोक की अटची उठाकर सामने टबिल पर रखनी हुई शकुन बोली।

यह अपनत्व भरा अधिकार कहाँ से आ गया? और फिर उसे लगने लगा, कहीं कुछ है जा उसे भावूम नहीं है। जो कुछ जिस रूप में सामने है, मान वही नहीं है। इसके परे कहाँ कुछ और भी है। है

आलोक के जाते ही शकुन ने कहा “कमीज तो नयी पहन लेंते, कितनी मुम रही है यह।”

‘क्या? ठीक है यह। मैं हमेशा ही कमीज तीन दिन पहनता हूँ आज ही एसी कौन-सी खास बात है?’ वह गक़ु का जवाब देना चाहता है कि आलोक उसके लिए कोई विशेष महत्त्व नहीं रखता।

शकुन धुपचाप सतीश का साना लेने चली गयी। रोज की तरह वह उसे बिला रही है पर सतीश को लग रहा है कि शकुन ने हर काम की योजना बना रखी है। सतीश के सामने तो समय बबाद ही होता, सो वह समय नहाने में लगा दिया। इधर सतीश जायेगा जार उधर आलाक तयार।

शकुन ने एक बार भी उससे तो झूठी सन के लिए नहीं कहा, बल्कि शायद वह मन-ही-मन मना रही है कि जल्दी से-जल्दी सतीश वहाँ से चला जाये। इतनी साफ बात है और वह समझ नहीं रहा है।

धीम रंग के अण्डी के कुरत में जैचा-जैचाया आलोक घुसा तो सतीश को अपनी मुसी हुई कमीज अखर गयी। आज उसे कमीज बदल ही लेनी चाहिये थी, शकुन ने ठीक ही कहा था। उसे लगा कलकौं करते करते सबकुछ ही वह डल हो गया है शायद। समय पर उसे कोई बात सूझती ही नहीं, बाद में बेकूपो की तरह अफसास करता रहता है।

“तो आप तो चले?”

“हाँ मैं तो अब चला। शकुन है आपने पास। और उसने देखा शकुन मुग्ध भाव से आलोक को देख रही है।

"लौटियेगा कब ?"

"अब तो साढ़े पाँच पर ही मुलाकात होगी।" गाम को बाहर चलेंगे, और कुछ नहीं तो यहाँ का दोलतबाग और आनासागर ही दम लीजिए। शकुन को तो वह जगह बड़ी प्रिय है। सादो के बाप को कुछ गामे तो हमारी वही बीनी। वहाँ जाते ही शकुन को बस हनीमून का-सा भूँड आ जाता है आज भी। और सतीश हस पड़ा। उसने सोचा बड़ी मार्के की बात यह कहता जा रहा है। आलाव जान ले कि उन दोनों के बड़े मधुर सम्बन्ध हैं, उसके मन में कोई ऐसी-वसी बात हो भी तो निवाल दे। अच्छा साहब चले।" और वह बाहर आ गया। राज की तरह शकुन भी बाहर आयी उसे विदा करने। पर सतीश को इस समय भी शकुन के चहरे पर बड़ी मुग्ध भाव दिखायी दिया जो आलोच को दबते समय उमर आया था। उसे लगा, वह देख अवश्य उसे रही है पर मन में वही आलोच को ही दस रही है।

एक बजे तक वह जसे-तसे अपने को फाटलो में डुबोये रखने का प्रयत्न करता रहा। फिर एवाण्क उसे लगा, अब नहीं ठहरा जायेगा। उसने उसी समय एक स्लिप लिखकर बॉस के कमरे में भेज दी कि उसकी तबीयत ठीक नहीं है सो वह घर आ रहा है और निवल आया।

पर लौटना ठीक होगा ? दोनों यही तो समझेंगे कि मुझे उन लोगो पर सन्देह है। अगर ऐसी कोई बात नहीं हुई तो कितना ओछा समझेंगे वे लोग ? आरमालानि से उसका मन भर आया। पाँच साल के विवाहित जीवन में उसे ऐसी कोई बात याद नहीं जो शकुन के प्रति उसे शकालु बना दे। पिछले दो साल से वह खिन अवश्य रहती, कुछ दूर-दूर भी रहती है उसका कारण तो वह स्वयं जानता है। कितना स्वाभाविक है उसका यो खिन्न रहना। फिर खिन्नता तो दो साल से चल रही है जब कि आलोच से परिचय कुछ चार महीन का है। दोनों बातों को एक साथ जोड़ने की कोई तुक ही नहीं है।

सचमुच यह उसका अपना कामप्लेक्स ही है, जिसे उसने इतना शकालु ओछा और कुछ हद तक कमीना भी बना दिया। अपनी ऐसी हरकत से तो कभी-कभी उस स्वयं भी विश्वास होने लगता है कि उसका मन वही सच ही है। बरना वह सब क्या हो ?

उसे रोज की तरह आफिस में काम करना चाहिए था पर अब ? अब कुछ नहीं। सीधा घर जायेगा और साफ कहेगा कि वह भी छुट्टी लेकर आ गया है। आलोच जी आगिर रोज रोज तो हमारे घर आने से रह। फिर वह उनका धुमाने ले जायेगा। पहले वह उन्हें सोनीबी का मन्दिर दिखा देगा, फिर वे लोग आनासागर पर जाकर बैठ जायेंगे। वही वह अपने लतीफें गुनायेगा। वे सब तो जमी रह हो गये। वह चुन चुनकर लतीफें याद करने लगा। कौन-कौन से लतीफें उसके नाम से प्रसिद्ध हो गये हैं।

गाड़ी का रक्त को दम बजे जाती है। आनासागर से सीधा लेकर वह उसे कॉफी हाउस ले जायेगा। बड़े गहरा के मुकाबल में तो यहाँ का कॉफी-हाउस कुछ भी नहीं

फिर भी कम-से-कम यह तो दिखा ही देगा कि वह सिर्फ बल्क ही नहीं, इस ज़िन्दगी से भी परिचित है। लेखक लोग तो काफी-हाजस म ही बठे रहते हैं। कुछ रुपये ही तो खर्च हगि पर शकुन कितनी प्रसन्न होगी। वह उसके इस आरोप को गलत सिद्ध कर देगा कि उसे आलोक का आना अच्छा नहीं लगा। उसमें अच्छा न लगने की बात ही क्या है भला ?

पर घर आया तो पता नहीं क्यों उसन साइकिल घर से दस कदम दूर ही रख दी। दबे-पाँव सीढ़िया चढ़ा। उसका दिल घबरात लगा था मानो वह किसी दूसरे के घर में चोरी स घुस रहा हो। कुछ दण बरामदे में खड़े रहकर वह आहट लता रहा—शायद कुछ बातचीत की आवाज ही आ रही हो। पर कहीं कुछ नहीं था। दरवाजा बंद था, फिर भी उसने हल्के से धक्का दिया, शायद खुल ही जाये। नहीं दरवाजा भीतर से बंद था। अब ? फिर उसन दरवाजे से जान लगाया। बाहर के कमरे में बठकर बात कर रह होते, तब तो बाहर साफ-साफ आवाज आती। इसका मतलब है, सोनवाले हिस्से में बठे हैं। पर उधर तो शकुन किसी को आने नहीं देती। आलोक शायद 'किसी' की श्रेणी में नहीं आता। तब ?

और एकाएक मन हुआ कि लात मारकर वह दरवाजा तोड़ दे और भीतर दोनों को रगे हाथो पकड़ स। शकुन को बात करनी थी इसलिए तो छुट्टी ली थी। पर बात का तो कोई सिलसिला ही नजर नहीं आता। भीतर क्या हो रहा है आखिर ? कैसे जाने, कहाँ से जाने ?

इस समय घर का दरवाजा रोज ही बन्द रहता है पर रोज शकुन घर पर नहीं रहती है इसलिए। आज इसका भीतर से बंद होना कोई विशेष अर्थ नहीं रखता ? क्या वह लौट जाये ? नहा, वह लौटकर नहीं जायेगा। वह दरवाजा खटखटायेगा और देखगा कि खुलने में कितनी देर लगती है। वह चेहरा देखकर ही भाँप लेगा कि भीतर क्या हो रहा था।

वह फिर एक कदम आगे बढ़ा, दरवाजा खटखटाने के लिये हाथ भी उठाया, पर बस, दरवाजे की धीरे से छूकर रह गया। नहीं, उसे उस तरह अधीर नहीं होना चाहिए। मान लो, कुछ नहीं हुआ तो वह उनकी नजरों में तो गिरेगा-सो गिरेगा अपनी नजरों में कितना गिर जायेगा। एकदम उसे खिडकी का खयाल आया। खिडकी भी भीतर से बंद थी। अच्छा, खिडकी बंद करने की क्या जरूरत थी ? ऐसी मर्दी तो अब रह नहीं गयी। कमरे में हवा आने के लिए यह खिडकी और दरवाजा तो है ही बस, दोनों ही बंद हैं। ता ? उसन सारी खिडकी पर नजर दौड़ायी कहीं थोरे छेद ही हो जहाँ स वह भीतर झाँक सके पर कहीं एक छोटा-सा मुराग तब भी नहीं मिला। फिर उसन दरवाजे को टटोला। कहीं कुछ नहा। उसे पहले इस बात का खयाल क्यों नहीं आया ? एक मुराग ही बरके रख दता।

पर वन गया हम तरह अपराधी महसूस कर रहा है ? यह उसका अपना घर है । इसमें यह जब भी चाहे आ-जा सकता है । आगिर वह अपने घर में ही तो आया है । अपने घर में आना न खोरी है न गुनाह । उसे क्या होता जा रहा है कि वह अरण्य ही करने लगता है ? जैसे ही गजुन दरवाजा खोलेगी, वह देगा कि वह भी आगे गिन की छट्टी लेकर आया है ।

तभी उसने सामने गजुन का चेहरा घम गया । आंगा में मित्रार और भत्सना भरे । माता लो, यह यही वह दे—आगिर आ गये न ? तुम इसके सिवाय और कर ही क्या सकते हो ?

हाथ फिर निर्जीव हो गया ।

कोई तो आवाज आये किसी तरह की । खींचते मन थे यह निश्चय तो बंधे कि भीतर की वास्तविक स्थिति क्या है ?

और उस लगने लगा कि जिस तरह उसने गजुन की पलक चूमना छाड़ दिया था, वस ही अब उसे बांहों में लेना भी छोड़ देना पड़ेगा । गायद धीरे धीरे करके उसे पूरी की पूरी गजुन को ही छोड़ देना पड़ेगा ।

वह सगम में क्या पड़ा हुआ है ? उस जसा बकसूफ आदमी शायद ही दुनिया में हो । सबकुछ आँखा से देखकर ही जाना जाना है ? क्या वह कुछ भी अनुमान करने का माहा नहीं रखता ? गजुन आजकल जिस मन स्थिति में है उसे वह क्या नहीं जानता ? तो क्या गजुन

वह नगरा शुलाब-भाड़ी, आदग नगर—जाने कहाँ कहाँ साइकिल लिये घूमता रहा । उसे बराबर लग रहा था कि कभी बहुत बड़ा घोड़ा उसके साथ किया जा रहा है । उसका मन हो रहा था कि वह सब पर धुक्ता चले ? क्या करे अब वह ? कहाँ जाय ? उसका कोई घर नहीं, कोई अपना नहीं । जिस गजुन को पिछले पाँच साल से वह अपने शरीर के अमिना अंग की तरह प्यार करता आ रहा है वह इस समय किसी और की बाँह में पड़ी मस्ती मार रही होगी और वह है जो बें घरबार होकर या दर दर मटक रहा है ।

और या ही निरुद्ध भटकते भटकते जब वह पूरी तरह लुप्त हो गया तो फिर आनासागर की बागहदरी के उसी कोने पर आकर बैठ गया । उसे लगा, आज उसमें और उन आवाज़ों में घरबार लगेगा मे कोई फल नहीं रह गया है जो रात दिन यहाँ पड़े रहते हैं । वह भी अब यहाँ पड़ा रह गया । उस कोई नौकरी नहीं करनी है, कोई काम नहीं करना है । क्यों है उसका जिसके लिए खून-पसीना एक करे ?

उस सबसे नफरत होने लगी ।

और उसे लगा, वह सबकुछ ही पीछे छोड़ है । कोई मद-बन्धा होता तो दो लाल मारता दरवाजे के और झाड़ा पकड़कर बाहर कर देता गजुन को और दो शायद

मारना उस लफंगे के। उसके सारे अस्तित्व को पूरी तरह मथता हुआ आज यह कि पूरी तरह उसके मन में जम गया कि वह पुरुष नहीं है और उसे लगा यह वह बहुत पहले से ही जान गया था तभी तो कभी उसकी हिम्मत नहीं हुई कि वह डाक्टर को दिखा आये। आज के व्यवहार ने तो पूरी तरह मिट कर दिया। वह है उस पर। यूँ ! उसने सामन पानी में धूक दिया। कोई असली मद वच्चा हो। उसे अपने आप से नफरत होने लगी। ठीक ही तो किया गकुन ने। कौन जोर नामद की पत्नी होकर रहना पसन्द करेगी !

और फिर वह निकाल हावर लेट गया। उसकी आँखों के कोनों से आसू लगे। वह मन ही मन गालिया देने लगा। साला गोह्दा कही का, कहानी लेने है ! शत्रुन ने उसे जप्तर बता दिया हागा। गकुन किम जन्म का घर तुमने मु निकाला है ! उस आदमी के सामने मुझे नगा किया, जिमके सामने मुझे वस्त्रा की ज यादा आवश्यकता थी !

बजरगम की आरती फिर घूँज उठी। ता सात बज गये ? वे जप्तर भले अ बने उसकी राह देख रहे होंगे। अब वह यदि घर चला जाये, तो दोनों क्या करेंगे। शत्रुन लड़ेगी कि इसकी दर क्या कर दी ? दो छपटे से इतज़ार में दठा है। सारा प्रोग्राम गटबड कर देत हैं। मन-ही मन चाह चुन हो रहे होंगे साने, माँ मार रहे होंगे !

जालोक ने तो कहा ही था कि जहाँ हम इनवाल्ड नहीं होते, वहाँ भी कभी अभिनय करना पड़ता है। पर शत्रुन ? वह यह अभिनय कहाँ से सीख ग उसी ने सिखा दिया हागा, अपना जल्न सीधा करन के लिए। यह अभिनय तो स्तरा पर चल रहा है, और गायद गुरु स ही चल रहा है। वही बक्कूफ है, जं सममा नहीं। तभी शत्रुन चार महीन में प्रसन्न रहन लगी थी। बरना याकी ! तो ज्या-की-रया है। यह प्रेम ता चार महीन में पक्क रहा है बरना दो चार घ कोई वियाहित स्त्री एक अजनबी के साथ या कमरा बद करके बठ सकती है ? क्या क्या हुआ हागा आज ? गनुन ने आखिर क्या सोच रखा है क्या है वह ?

और जान कस कस हृदय उसकी आँखा के सामने घूमन लगे। आज य लौटेगा ही नहा। आज सालों को जश ही मनान दा, मेर अपन घर में मेरा ही करने दा। मैं यही पठा रहूँगा। किमका घर और किमकी बीबी ?

उसन हमाल से अपना चेहरा ढँक लिया। यह मुँह किसी का भी दिमान नहीं है।

धीरे धीरे आरती का स्वर गूँथ में डूब गया। केवल आरती के घण्ट रहे—टन् टन् टन्।

पाठी दर बाद सतीस उठा और साइकिल पर बटवर चल पड़ा। उसे लग रहा था कि वह धक्कर धूर धूर हो गया है और भीतर-ही भीतर से इस तरह टूट गया है कि उसका सब-कुछ एकदम जड़ और मुरझा हो गया है। कुछ भी सोचने समझने की शक्ति उसमें नहीं रह गयी, यही तब कि उस में भी नहीं मालूम कि वह कहाँ जा रहा है। पर घड़ी दर बाद वह अपने घर के सामने ही था।

ठीक है वह घर ही जायेगा। यह घर उसका है। जाना ही है तो शकुन जाये जिसे अब उस घर में अच्छा नहीं लगता वह क्या या मुँह छिपाय छिपाये फिरता रहे ?

उसे देताते ही शकुन ने मौह चढाकर कहा 'कमाल कर दिया मुझे तो, भय आ रहे हो ?' उसके स्वर में गिजायत थी।

'हम लोग तो पाँच बज से आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। आलोक का स्वर था। दाना ताले बपट बदल कर जच जचाकर बडे हैं। बड़ी तीखी सी नज़रों से उसने उसे दृष्टा मानो वह रहा हो—क्यों मुझे बेवकूफ बना रहे हो ?'

'कुछ ज़रूरी काम आ गया था। अपराधियों की तरह सतीस के स्वर में क्षमा याचना का पुट क्या आ गया है ? असली अपराधी तो वे हैं।

"जिस दिन घर में कुछ होगा उस दिन ज़रूर तुम्हारे आफिस में भी काम आयेगा। छोड़ आते बल के लिए। वह ज़ेते में आज नहीं ठहर सकता।'

तिरिया चरितर ? कोई कह सकता है इस शकुन को देखकर कि पति के जाते ही वह औरत । 'चाय दो जरा। किसी तरह दाँदा का ठेलकर उसने कहा। पहले उसने सोचा था वह किसी से कुछ बोलेगा नहीं चाय भी नहीं माँगेगा पर फिर लगा क्या नहीं माँगेगा ? जब तक शकुन इस घर में रहेगी उसे पत्नी की तरह उसके हर आदेश का पालन करना पड़ेगा। दरें कर सा दे मना चाय को—अभी बिस्मा देता है वह भी।

हाथ मुँह धाने के लिए वह अन्दर गया तो उसने शकुन को कहते सुना 'बहुत धक जान है आफिस के काम से। गायद सतीस की रसाई की सफाई दे रही है आलोक का।

हाँ, वह धक् जाता है। वह बहुत कमजोर है दुबल बिलकुल दुबल नामद । वह दे सारी दुनिया में डिबोरा पीट दे। वह है जसा है।

उसका मन फिर मुलमल लगा। सदीं ही चली थी फिर भी वह तोलिया लेकर नहान धुम गया। गुस्सल्लान बाहर से उसे शकुन का स्वर सुनाई दिया यह क्या, तुम उस समय नहीं रह हो ठण्ड पानी से ? बीमार पडागे क्या ? सुनो तो 'उसने पूरा नल खाल दिया तो पानी का आवाज में शकुन का स्वर दूब गया। बरन दी बम्बलन का।

एक बार पानी की ठण्डक ने उसे भीतर तक कंपा दिया फिर भी उस नहाना अच्छा लग रहा था। जश्न जस ठण्डी होती जा रही थी।

काफी देर तक पानी के नीचे रहने के बाद उसने नल बंद कर लिया। अपना शरीर पोछकर कुछ देर तक वह यो ही खड़ा रहा फिर खड़ा-खड़ा अपने ही अंगों से बनी बदलील-सी हरकतें करता रहा। पता नहीं, एक विचित्र-सा सताप मिल रहा था उसे यह सब करने में। खोया आत्म विश्वास जैसे लौट रहा था वीन कह सकती है माना कि वह ?

फिर एकाएक उसका अपना ही मन ग्लानि और वितृष्णा में भर उठा। यह सब क्या होता जा रहा है उस ? इन लोगों के साथ-साथ वह क्यों अपना निमाग खराब करता जा रहा है ? नहीं जैसे भी होगा वह अपने को सयत्त करेगा।

उसने भाषा वह बड़े स्वामाविक ढंग से चाय पियेगा और उसमें भी अधिक स्वामाविक स्वर में कहेगा— देखिये, मुझे सब कुछ मालूम है। बंद दरवाजे ऐसी बातों को छिपाकर नहीं रख सकते। आप लोग ऐक्टिंग करने में बहुत माहिर होंगे पर मरी आँखें भी कम तेज नहीं। शकुन चाहे तो आपके माथ ही जा सकती है। मुझमें इतनी उलारता है कि मैं अपनी पत्नी की राह में बाधा बनकर खड़ा न हूँ, उसकी इच्छा पूरी करने में सहायक बनूँ।

ये लोग उसक ही घर में नाटक कर रहे हैं क्लाइमैक्स वह कर दे।

वह बाल बनाता जा रहा था और पलंग को देखता जा रहा था। कैसे सोयेगा अब वह इस पलंग पर ?

पर वह बाहर निकला तो उससे कुछ भी नहीं कहा गया। शकुन चाय बनाने लगी तो आलोक ने कहा “हम लोग तो बसे चाय पी चुके हैं पर आपका साथ देने के लिए एक राउण्ड जोर सही।”

‘हाँ-हा ठर’। शाम का सारा प्रोग्राम तो इतना गड़बड़ कर दिया, अब चाय पी-पीकर ही समय काटो।” शकुन के स्वर में हल्का सा आग्रह था। चाय पी चुके है यह तो बता दिया और क्या-क्या कर चुके है यह क्यों नहीं बताते ? बताने जैसी बात हो तब न। फिर उसे लगा वही क्या नहीं पूछ लेता कि कहीं दिन भर क्या किया ? बड़ा स्वामाविक प्रश्न है पर मारी स्थिति स्वामाविक नहीं है इसलिए इन्हें यही लगेगा कि मैं शक कर रहा हूँ। और मान लो इस प्रश्न का एकाएक दोनों का कोई जवाब ही नहीं सूझे और खिसियाये-से दोनों एक दूसरे का मुँह ही देखने रह जायें, तब वह क्या करेगा ?

तभी शकुन उठी और भीतर से स्वेटर लाकर देनी हुई बोली लो, अब कम से-कम यह तो पहन लो। रात का ठण्ड पानी से नहाये हो अपनी जिद के आगे तुम किसी की बात सुनते भी हो कभी ?

न चाहते हुए भी उसने स्वेटर पहन लिया। चांचले दिखा रही है।

आठ तो बजने वाल हैं, चलने चलाने का तो यहाँ कोई सिलसिला ही नबर

गही जा रहा। दिा भर मे जरूर ही प्रोग्राम बदल गया होगा। वही म भर भरकर शत्रु ने एक दिन और टहरने के लिए ता तयार कर ही लिया होगा। बल फिर उस आफिस भग दिया जायगा और अभी उसे माहूम पड जायगा कि आलोक आज टहर रहा है, और वह नुदता रहेगा। दिसाने के लिए भी वह गाय गुग नही हो सकेगा। क्या दिसावा कर वह? कौन साली उस कहानी लिखनी है।

‘अब तुम जरा बठा मैं खाना दस आऊ।’

हाँ, मरे साथ बैठने में क्या रखा है?

शत्रुनजी तो काफी एन्जल्लिजेट है।

हाँ बहवाआ बचू! मुझे खूब बहवाओ! या क्या नहीं कहत कि शत्रुनजी काफी बबगूफ समझ रहा है उस।

बता रही थी कि शादी होकर आइ तो बस या ही थी आपन ही बह रवि भी पक्ष की और सुविधाएँ भी दी।

‘सुनिश्च गबुन उधर से बुला रही है। सतीश उठकर चला गया।

‘देखो अब जालोजजी को स्टेशन छोड़न तुम ही चले जाना। मुझ घर ठीक करता है, और कापिया देखती हैं। दो दिन से इस चक्कर में कुछ किया नहीं बल मारे नम्बर दन है।’

सतीश ऐस दसने लगा जिस कुछ समझन की चष्टा कर रहा हो।

आलोकजी आज जा रह हैं क्या?’

कमाज करते हो तुम भी! सबरे ही बात हो गयी थी।

नहीं मैंने सोचा गायद तुमने आग्रह करके रोक लिया होगा। कुछ आश्चर्य होते हुए उसने कहा।

अरे बाबा आ गय सो ही बड़ी बात है। अब उह जरूरी काम है ता क्या करें?’

‘ता स्टेशन ता तुम भी चला कम-स-कम।

‘देखो सारे बरतन बिखरे पडे हैं खाना सत्तम होते ही पहल इह जमाऊंगी। माजी ता खिलाकर चली जाएगी बाकी सब ता मुझ ही करना पडेगा। छोटा घर है, जरा-सा बिखर जाता है ता दिक्कत लगन लगती है। मुझे यो ही बिखरा घर पसंद नहीं। उसके बाद कापिया भी तो देखनी है।’

‘पर

‘देखा, मैंने इसीलिए तुम्हें इधर बुलाकर कह लिया है करना वही तुम जिद करने लगाने तो मना करना बड़ा महा लगेगा। कुछ कहना मत, हाँ।’

सतीश और गबुन साथ-साथ ही बाहर आये। सतीश को बात में भा उयादा अच्छा लग रहा था, इस तरह भीतर बुलाकर शत्रुन का उससे कुछ कहना। आलोक

आये हैं तो क्या हुआ, उनका अपना भी तो कोई जीवन है। वाई ऐसी बात भी तो हा ही सकती है, जो भीतर बुलाकर ही कही जाये।

तो आलोक आ रहा है ? शकुन फिर अपनी घर गृहस्थी और स्कूल की बातों में डूबने लगी है।

खान बठे तो शकुन ने उसकी पाली में दो-तीन अतिरिक्त चीजें रखते हुए कहा "तुम सबेरे आफिस गये थे तब तब तो बनी नहीं थी, तुम अब खा लो।"

गाजर का हलवा था, मटर की कचौड़ी थी।

"कुछ तो आप भी लीजिए आलोकजी।" शकुन मनुहार कर रही थी।

"माफ़ करो बाबा ! स्वस्थ जरूर कुछ ज्यादा हूँ, पर खाता ज्यादा नहीं हूँ। सबेरे का खाना ही अभी तो हजम नहीं हुआ।"

'ऐमा तो आपन सबेरे भी कुछ नहीं खाया। मैंने तो अपन हाथा से सब बनाया है।

तो दिन-भर इसन खाना बनाया ? कहीं ऐसा तो नहीं कि यह बेचारी बठकर उधर खाना बना रही हो और ये महाशय यहा दीवान पर सेंटकर सिगरेट फूँक रहे हो। आवाज आती कहीं से ? पर फिर दरवाजा बंद क्या था ? हो सकता है नींद आ गयी हो, इसलिए दरवाजा बंद कर दिया हो। कमरा सड़क पर ही तो पड़ता है। वे भी तो हतवार को जब दोपहर में सोने हैं तो बंद करके ही सोत हैं। तो यह सब क्या उसका अपना ही बुता हुआ जाल है, जिसमें फँसकर वह दिन भर से छटपटा रहा है ? उसन गौर से शकुन को देखा। उसके अंग प्रत्यंग को वह धूर धूरकर देखन लगा। कहीं कोई छाप है। कोई लक्षण ? काई लाल-नीला दाग ?

शकुन चिला ज्यादा रही थी, खा कम रही थी। पर बस सब कुछ बड़ा स्वाभाविक था ?

'आप आज शाम को आ जाते तो आलोकजी को थोड़ा घुमा फिरा ही देत। सारे दिन घर में रखकर बार कर दिया। सोच रहे होंगे, कहीं आ फँसे।'

'बाहू धोर तो मैं तनिक भी गहा हुआ। बढिया खाना खाया, डटकर गप्पें मारी। हाँ, सतीशजी के साथ ज्यादा बठन का मौका नहीं मिला। और आपका बड़ा प्रिय अनासागर नहीं देखा। सो वह अबकी बार आऊँगा तब जरूर देखूँगा।

फिर कुछ 'अट' से बजा सतीश के दिमाग में। तो क्या फिर खान का प्राग्राम भी बन चुका है ? क्या है यह सब, उस कुछ भी तो समय में नहीं आ रहा ? उस अपनी ही समझ पर बुरी तरह खीझ आने लगी। गरीर में तो उसने कुछ गरब है ही पर लगता है दिमाग में और भी ज्यादा गड़बड़ी है।

'अब आप ताँशा ले आइये शायद अब शकुन जस्टी से आलोक को विदा करके अपने काम से लग जाना चाहती है। या कहीं ऐसा तो नहीं कि उसे भेजकर विना की

आलोक ने भी स्वीकार किया कि शकुन इंटेलिजेण्ट है वह उसके सकेत को अवश्य ही समझ लेगी। और एकाएक लगा जैसे सवेरे से जिस असह्य बोझ के नीचे वह तिलमिला रहा था जिस ममातक पीड़ा से छटपटा रहा था, वह सब एकाएक समाप्त हो गया है।

गाड़ी चली तो वड़े मशीनी ढंग से वह हाथ हिलाता रहा। उसने भी चलते समय शकुन वाली बात दोहरा दी "सपरिवार आइये कभी।"

आलोक आया और चला गया, और कही कुछ नहीं हुआ। वह घर लौटेगा तो देखेगा कि शकुन उसी व्यस्तता और लगाव से अपना घर ठीक कर रही होगी।

यदि उसका काम पूरा नहीं हुआ होगा तो वह कहेगा, 'जाओ तुम आराम करा, बहुत थक गयी होगी सवेरे से, लाओ मैं जमा देता हूँ सारे बतन बतन।' वह उसकी कापिया भी दिखवा देगा। वह जरूर विरोध करेगी, 'तुम भी ता आफिस में थककर आये हो, मैं कर लूँगी, तुम आराम करो।'।

आज वह शकुन को बहुत प्यार करेगा। कितना दिन हा गये उसे बड़ी आरम्भियता से प्यार किये। उसकी अपनी ही दुबलता ने पता नहीं बसे यह भ्रम उसके मन में पनप कर दिया था कि उन दोनों के बीच में उसे कोई है पर कही कोई नहीं है, शकुन आज भी उसी की है, उसनी ही जितनी दो साल पहले थी।

मैं कितना धीरे धीरे चल रहा हूँ। शकुन अकेली होगी। साइकिल न लाकर भूल ही की। उसने अपनी घाल बदा दी।

घर पहुँचा तो देखा—खान के बतन अभी भी टेबिल पर ज्यो-कै-र्यो पड़े थे, कापिया का बण्डल भी दीवान के नीचे जैसे का तसा बँधा पड़ा था। उधर जाकर देखा—शकुन पलंग पर लेटी हुई आलोक का नया उप-यास पढ़ने में मूबी हुई है। आहट पाकर एकदम चौंक-सी उठी 'कौन ?'

"मैं हूँ।"

'ओह तुम ? मैं तो डर गयी थी।' और किताब को तकिये के नीचे सरकाती हुई वह उठकर बठ गयी।

भूमि गोडसे ने जिस दिन गांधीजी की हत्या की, उसके तीसरे राज के एक छोटे से समाचार ने देर तक—या कहूँ आज तक—मेरा ध्यान बाँधे रखा जिला के कस्बे के दरोगा अताउल्ला खा ने गोली मारकर आत्महत्या कर ली। उसका खयाल था कि गांधीजी को सजा देन का यह एक सिर्फ उसे ही था। कहते हैं कि बंद बप बाद ही दरोगा को रिटायर हुना था

“श्री एन० किशोर वर्मा

जनरल मनेजर,

बिजारिया इण्डस्ट्रीज ग्रुप लिमिटेड

टय पलोर ”

फ़सती फ़सती पता एकदम सही था। पलटकर देखा लिफाफा जहाँ चिपका था, वहाँ मला हो गया था। हाथ में पेपर-नाइफ़ लिए ही ऊपर रोशनी की तरफ़ उठाया बिघर से पाया जाये कि खत न फूटे। अन्दर वही जगह खाली नहीं थी। कुछ तम करे करे कि टेलीफोन बजा और काई चीज़ करण्ट की तरह तड़पकर खून में दीरा लगा गयी। पते के ऊपर लाल स्याही से लिख ‘पसनल’ पर निगाहे टिकाये, हाथ का पेपर नाइफ़ डम पर आधा रख दिया। वह खुद भी जब पान सनी जीम से लिफाफे का गाँद गोला किया करता था तो चिपकाने पर लाल धारी उमर आती थी हालाँकि लीना को कभी भी उसकी यह हरकत। लीना का बाप कहता गवार।

वही टेलीफोन है क्या ?

आपरटर ने बताया कि दिल्ली की टू न-लाइन मिल गयी है। अनजान ही एक दराज जरा-सा खालकर जुता टिकाया और रिवायिंग चेयर पर पीछे झुक लेकर हेल्मेट ग्राबिंग मिस्टर वटन का साम जब बात की तो दिल घड़ घड़ कर रहा था। घबराहट की तो यह मोचकर जीत लिया कि हूँ ऐसा आदिर क्या बात है। बड़े बड़े गवर्नर-नायसरायो से दाक्षित जब ऐस रोव स बातें कर सकता था ता वह क्या नहीं कर सकता ? मान लिया जाज मक्फेरी-वटन इन-कारपोरेशन बोस्टन, का गवर्निंग डायरेक्टर छाटा-मोटा आदमी नहीं होता रेविन खा ता नहीं जायेगा। या इस समय उसकी बात का दुहरा महत्त्व है। बारह बराह स्पय का प्लान्ट बठमा—साफ़े म। पिछले

साल सेटजी अमरीबा गये थे, तभी इस सांके की बात का बीज पड़ा था। लेकिन इस बार हो सक्ता है उसे बटन के साथ ही जाना पड़े—अपनी कम्पनी की ओर से या । उसके सामने फिर एक बहुत बड़ा चांस आ गया है।

ऊपर से वह किसी तरह 'या-या, राइट राइट' बट यू सी मिस्टर बटन 'के साथ अपनी बात करता रहा, लेकिन टाई की नॉट टटोलती उसकी उंगलियाँ कापती रही। छ मिनट बाद जब उसने 'मो काइण्ड आफ यू' कहकर लाइन काटी तो माथे पर भाप जम आयी थी, लेकिन चेहरे पर सन्तोष था। 'चस्सी ! चस्सी ! पीछे कुरसी की पीठ पर लटके बोट की जेब से रुमाल निकालकर मुँह पर फेरा एक थूँट पानी पिया। दीक्षित साहब अपने को लाय ख़ुदा लगाते रहे इस आदमी से बातें करें तो नानी याद आ जाये।

पिछले हफ्ते बटन बल्कत्ता आये थे। लीग आफ कामस की' मीटिंगें, दुनिया भर के कॉन्फेरेन्स डिनस का इतजाम उसने ही तो किया था। बीच-बीच में व्यावसायिक बातें भी होती रही। उस खुराट, सेज और अनुमती व्यवसायी के सामने उसी धय और स्तर से टिके रहना सचमुच कम कौशल और काफ़िडेन्स की बात नहीं थी, हर क्षण नवस हो जाने का खतरा रहता। सही है कि सारे आदेश सेठों के थे और वह उनका नौकर था, लेकिन एकाध मीटिंग-पार्टी में उपस्थित हो जाने के अलावा उन्होंने किया क्या ? और मोटे मोटे नफे-नुक़सान, 'ले लो, बेच दो के अलावा उन्हें पता क्या कि आज की व्यावसायिक दुनिया है कहाँ, कसी है ? नीम की माटी दातुन रोचते हुए 'विश्वमिन' पड़ लेना और बात है, और क्षिप्राचार की बारीकियाँ, उठने-बठने के तौर-तरीकों की समझना दूसरी बात। देसी आदमी शायद आपके पसो के रोब में आ भी जायें, लेकिन ऐसा व्यक्ति आपके पसे का क्या गिनगा, जो सात समुंदर पार से आपके यहाँ आकर करोड़ों रुपये लगा रहा है ? किशोर जानना है, अगर वह साझा हो गया तो बही इसमें उसका बहुत बड़ा हाथ हागा और हो सक्ता है उस नयी फ़म में उस ही सबसे महत्वपूर्ण पद सम्भालना हो। बटन के साथ मामला न भी पड़े, तो भी सेठजी को इससे ज़्यादा योग्य और विश्वस्त आदमी कहा मिलेगा ? और मान लो अगर अगर ?

उसका मन एक नय सपने से थरथरा उठा। जब वह बटन को फबट्टी की साइट दिखाने ले गया था, तो बहुत-सी बात करने का मौका मिला था—व्यक्तिगत और व्यावसायिक दोनों। मम आफ जबर कलीग्ग रिप्रीटेडली एडवाइस्ड अस, हॅल नॉट टु हैव ऐनी सच अण्डर्टूकिंग—आइ मीन—इन-कालेबोरेगन विद इन्वियन विज़नस फोक। दे आर नाट सपा ड टु बी फेयर माइण्डेड, बटन न हँमते हुए कहा था स्पगली योर हॅल आफ मारवारीज हम लाम मशीनें भेज सकते हैं, इजीनियस और आर्कीटेक्ट भेज सकते हैं, इ हॅ विज़नस-ऐचिवस तो नहीं मिखा सकते, सारा एंटीटयूड ता नहीं बदल सकते। पसा हम भी कमाते हैं, और इनसे चौगुना कमाते हैं, बट नॉट दट फ़िन्ली वे।

पसा बमाना बहुत बड़ी कला है, लेकिन खच करना उससे बड़ी कला बी हामर ए मन और पायर ए मन—बरेबट, बट बी पे द प्राइस इन ईदर बेमज। मच करने के नाम पर ये लोग सिफ घस रिश्कत दना जानते हैं। नयोकिमण्टली द आर स्टिल पटो ट्रेडस एण्ड ग्रांसस डिवाइड आफ कल्चर आर एज्युकेशन (जसका अपने-आप उसने मन में अनुवाद हुआ डण्डीमार) इण्डस्ट्री और इण्डस्ट्रियल कल्चर क्या हाती है इसका अभी इह क ख म भी नहीं आता। हम तो चाहते हैं इह कुछ दिना अपन यही रसदार कुछ इ टेलिजेण्ट बिस्म क लोगा को आधुनिक व्यवस्था के तरीके और व्यापार व्यवस्था सिखायें। आप लोगा की सरकारी नीति जाड़े आती है, करना हम तो किसी भी मनुष्यो की जरूरत नहीं है फिर भी मैं व्यक्तिगत रूप से चाहता हूँ कि तुम एक बार आवर हम लोगा के काम का आडिया तो लो

बटन ने ये सारी बातें उस बहुत विचार से लेकर मजाक का पुट मिलाकर, दास्ती का वास्ता देते हुए टुकड़ो टुकड़ा में बही थी लेकिन बिगोर को सारा खया पसन्द नहा आया था—जसे माना दान कर रहा हो। इस तरह की भीतरी और बाहरी प्रतिनिधियों के दायजूद वह उनके बीच छिपे आगम को भी समझ रहा था। फिर जब बटन ने कहा हम टाप रिस्पीसिबल पोस्टस के लिए ऐसे आम्पिया की जरूरत पड़ेगी, जो काम के हमारे तौर-तरीके को भी जानते ह। गार्डि लान्क यू (तुम्हारे जसे नौजवान) 'तब तो कुछ सम्मान की नहा ही रह गया

कतलिए जब उसने दिली के पान के बाद ही आवरटर में एटलस ट्रांसम मांग कर मुबह की प्लान्ट से जसे भा हा निल्ली का रिबट मांगा तो बहुत कुछ कषाट रहा था कुछ गलत कर रहा है और उसी कषाट का दवान के लिए उसने पोन पर सत्र टरी को आग दिया रामन, किसी को पोरन एल्लम भेज दो। पान पर बात हो गयी है। किसी नाम में हा मुबह की प्लान्ट से एक टिक्ट 'उपर से जा रगे, लगा दना।

दीर्घा की ऐसी-कम-नमी उसने परम तृप्ति के भाव में गहरी सांस पेंकर शरीर झीला छाट दिया। सामान के दस्तों की गरिब से जाम की नाक भरा कर हवा साची—छसी परमी। माथ ही सयाल आया, उमरा कम हरबन का किसी ने दग-गुन को नहीं लिया? धैर्य में कोई नहा था पीछे में आती एयर-कन्डाक्टर की बमालूम-मी आवाज को टोक-टोक-मई दोबारा वाली छत के जालीदार बटाव में जलने निपोंन टपून्ना के ओर मज पर रस तीन टैमीफान, टैबल-लैण्ड बल्बडर टू मभी बन्ना गाफ के कम बार उमरा और भी जोगन छया छगी किया और बच्चा जभी अपनी न्तानी पर मुस्करा पडा। कम मुस्कराया के माथ हा भीतर का कषाट गुल गयी—कुछ नहीं जो बाहर मजहरी बटन मन-कोरपारन की नौकरा दग ग्टागिदे की नौरस में हर हालत में आधी रूनी यही क्या है? जब तक मज के हाथों में नाचा तब तक टीक है।

जहाँ जरा भी अपना कुछ दिखाना चाहो वही और दूसरी कम्पनिया के जनरल मनेजरो के मुकामल पसे बहुत कम किसीको बताओ, तो गम आये ये एयरकण्डीशण्ड चम्बर सत्रेटरी दा बरे, फनिशड फलट, टाइवर गाडी और दो सौ आदमिया का स्टाफ ता जो भी यहा होता, उसे ही मिलता मुझे तो वही ढाई हजार और साल म बीसेक हजार ऊपर से देते है लेकिन बटन म कससे दुगुना मिलेगा, तभी जान की बात सोची जायेगी नहीं तो मगर दृष्टना ही मिले, तब भी चले जाना चाहिए । बहुत बड़ी बात तो यह कि बटन साला हमेशा यही हिन्दुस्तान म थोड़े ही बठा रहेगा सेठ की तरह मिर पर फिर अमेरिकन फम की बात ही अलग है

और इस तरह का धम सकट उसे हर बार मौवरी बदलते हुए जाया है लेकिन हर बार कबोट पहले से कम तीखी होती गयी है नहीं वह किसी को धोखा नहीं दे रहा उसे तो सिफ एक आदमी को दिखा देना है ऐसा अवमर बार बार नहीं जाता और अब वह किसी भी अवसर का छोड़ना एपोज नहीं कर सकता । उसकी आखा म लम्बे जहाज की तरह सरकती घानदार गाडी तरती चली गयी (लार्प और टाइम मे उसने कई बार उन्हें छाटा है) जिस सटैस्ट-मॉडल का अमेरिकन गाडी मे बैठकर किशोर घूमा करेगा, वह सेठ रामजीदास बिजारिया को दो साल बाद मिल पायेगी

उत्तेजना की भुरभुरी जब उससे नहीं सही गयी तो वह कुरसी को अपन पीछे घूमता छोड़कर, पटके से उठकर खड़ा हो गया फॉर टाप रिस्पॉन्सिवल पोस्ट गाई लाइव यू गाई लायव यू मन हुआ कि जूते की एडी पर एक चक्फेरी लगा जाये और सीटी बजान लगे लेकिन तभी उसे किसी का ध्यान आ गया, जो उत्तेजना के ऐसे आवेश को कभी भी या नहीं प्रकट हान दे सकता था । वह पीछवाली वनीगियन चित्र चीचवर शीगे के पार देखता रहा दस मजिल की ऊँचाई स हर चीज का सिल्लौन जसा लगना अब उसे चकित नहीं करता पतली दरार जमी सड़को मे काली भूरी गाडिया कीड़े मक्काडो की तरह लगती हैं सड़क पर राइटस विल्डिंग चाहे तितनी ऊँची हा, लेकिन यहा से जमीन स जरा-सी ही उठी लगती है जिसकी बजरी बिछी चौड़ी छत पर हजारों गमलो को दजना मजदूर इधर स उधर रख रह हैं पूरा बगीचा लगा रखा है बटन वाला मामला हो जाये ता ■-सात हजार आदमी ता अपनी कम्पनी म भी हाने उसके पीचे । तब वह अपन प्रगने म खूब बड़ा बगीचा लगा दगा और नियम से बागबानी किया करेगा साला पट निक्कलन लगा है इस कम करना हागा—गाइ लायव यू—उस जसे टाप आदमी की पसनेलिट्टी स्माट होनी चाहिए

और उसकी उँगली अचानक नाक के नीचे वाले मस्से पर चली गयी वह उसे टटोलता रहा बहुत बार कटवा दिया है, हर बार बढ़ जाता है, डाक्टर बनर्जी कहते हैं, हज बया है ' उसे क्या पता कि चेहर पर यह क्या लगता है लाट म आकर लीना इसे दो उँगलियो म दबाकर पूछती थी, 'इमें दद नहीं होता ? तुम्हारी पसने

लिटी में बस यही '

अचानक उसे 'पसनल' वाले लिफाफे का समाल हो आया। मेज से उसे उठाकर वह फिर वही आ-बड़ा हुआ। नाइफ वहीं छूट गया था, इसलिए जेब से गुच्छा निकाल एक पतली-सी चाबी से होशियारी से खोला, खत निकाला और फटा लिफाफा मसल कर बाहर फेंक दिया। चार तह बिया हुआ मोटा-सा कागज था और बिना किसी सम्बोधन के अंग्रेजी में एक लाइन घसीट दी गयी थी 'वाण्ट बी फारगेट द पास्ट ! नीचे 'लीना बिगोर' और खत के एकदम नीचे, 'डिपार्टमेण्ट आफ इ गलिश सेण्ट मेरी गार्म कालेज' और तब शहर का नाम। उसने निहायत निम्नस्व रहकर समझा—'क्या हम अतीत को भूल नहीं सकते ? कागज को उल्टा पल्टा आर कुछ नहीं वह जो ही चुपचाप बाहर देखता, खोया खोया खटा रहा आठ साल में यह पहला पत्र है।

पीछे खट-खट हुई। मेज पर बहुत से टाइप किये कागज पेपर बेट से दबाकर रामन लौट रहा था। बिगोर को घूमते देख रहा। बिगोर ने मेज के पास आकर खड़े होकर ताज़े टाइप किये हुए अक्षरों पर निगाहे टिकाये पूछा "यह क्या है ?"

'रोजस-नील वाले कागज हैं, लेंच के पहल मंगे हैं।' रामन ने बताया तब तक बिगोर न खुद भी पढ़ लिया था। रोजस एण्ड नील, सोलिसिटेस से लच से पहले एपाइण्टमेण्ट था। फरी एलाय बागो ने अभी तक रुपया नहीं दिया। मसल था हजार रुपये रोज का इण्टरेस्ट कौन दे ? बक बिजारिया इण्डस्ट्रीज से मागतो था लेकिन जब ऐलायवालो न पेमेण्ट ही नहीं किया तो इण्टरेस्ट भी उन्हां के जिम्मे जायेगा 'सारी चीज उससे दिमाग में झटके से आ गयी 'ओ हा, भरे तो दिमाग से ही उत्तर गया था ।' और वह कागजों का गौर से देखता रामन द्वारा बुमान्तर सीधी की गयी बुरसी पर बैठ गया। घड़ी देखी एक घण्टा है। सार कागज इसी बीच तयार हो जाने हैं

'क्या ?' उस ही रामन ने नीचे पड़ा कागज उठाकर बहुत धीरे-से मेज पर रखा, बिगोर चौंकिर पूछ बठा। असल में वह भूल ही गया था कि रामन अभी तक वहीं है। कागज पर निगाह गयी—अरे लीनावाला खत है। गायद तिसककर नीचे गिर गया था। रामन न पढ़ तो नहीं लिया ? फौरन बाला 'तुम चलो रोजस नाउ के यहाँ निपिंग ब्लेस वाले कागजों का भी समाल रखना और जब रामन ने दरवाजा खोला, तो कुछ सोचते हुए धीरे से कहा 'और मुनो ' फिर बड़े सबण्ड याद करता रहा कि उसे रामन से क्या बात कहनी थी 'हो वा एटलस में मेज दिया किसी का ?

'जी "

बिना रामन का जवाब मुन माटे फेम का चप्पा नाक पर चपाकर हाथ में कुला कलम लिए वह टाइप किये हुए अक्षरों को गौर से पढ़ पढ़कर दस्तखत करने लगा था अब जानती है न कि मुझे चार साढ़े चार हजार महीना पड़ता है वा'ण्ट बी फारगेट द पास्ट अब तो भूलने की बात आसानी हो

टू-टू — टेलीफोन बजा, उसने बिना उधर देख ही हाथ बढ़ाकर टटोलते हुए घोमा उठाया "किंगोर "

"साढ़े पाँच पर आ रहे हो न ?" ब्राउन इश्वारन्त का गग था ।

"बहा ?" किंगोर सचमुच भूल गया था ।

"प्रिसेस, और कहाँ !" गग झुँझला उठा "अजब आदमी हाँ

"यार आज तो बहुत ही फैंमा हूँ "

"तेरा हमें तो यही रोना होता है।" गग झुँझला उठा "अच्छा यार तू जारल मनेजर हुआ ! हमने मिसेज लालचदानी को भी बुला लिया है "

"आई एम अण्डर-स्टा पड जानता है मारवाडा कसन है यह । क्या कहें अपनी चिटिटया तब देखने की पुरसत नहीं मिलती ।" उसे सीना के खत का ध्यान आ-गया 'अच्छा, पू डाण्ट माइण्ड मैं जरा लेट हो जाऊँगा "

'ओऽ यस, गग खुग हो गया "तुमसे यार एक सलाह करनी थी । मिसेज लालचदानी की बहनवाला ही चक्कर है । तुमसे कहा था अपने दफ्तर में रख ले— ऑपरेटर-कम रिसेप्शनिस्ट

"मुझे और पिटवा ! सचमुच की लडकी की बात दूर है जानता है यहाँ लडकी की तस्वीर तक नहीं लगती । फिर जसो बनी बहन है, बसी ही छाटी भी होगी ।" उसने मजाक तो कर दिया लेकिन खयाल आया, मान लो ऑपरेटर टप कर रहा हो ? जनरल मनेजर साहब उसे इस गग का तू तू करके बात करना भी पसंद नहीं है । लेकिन आज कुछ कह भी नहीं सकता । पुराना दोस्त है जब उसे कुल जमा छ सौ रुपय मिलते थे तब का । इसलिए वह खुद गा से बहुत ही इज्जत न बात करता है, लेकिन बम्ब ख्त हिण्ट ही नहीं लेता कही दीक्षित साहब के सामन । अचानक कोन पर उसकी आवाज कड़ी और सख्त हो गयी और वह सामन वाले कागजों को पढता हुआ हाँ हूँ व सम्पिप्त उत्तर देता रहा । गग को लालचदानी को लेकर कही जाना था इसलिए किंगार की गाड़ी को जहरत थी । दा घाट के लिए । उस खयाल भी नहीं कि जब उसने कहा 'यह सब तो शाम को मुझे लेकिन जाइ का ण्ट बिलीव मुझे बिदबास नहीं हाता कि उस जमा जिद्दी औरत ऐसा लिखेगी '

'कोन ? कोन ? गग चौककर बोला कोन ऐसा लिखेगी ?

अचानक निशोर न जीम काट ली । पीरन वाला सारी यह एक साहब यहाँ बठ है । उनकी बात का जवाब द रहा था । अच्छा तो शाम का मिल रहे हैं ' और उसन सट फान रख दिया । शजब हा गया न ! क्या बात मुँह से निकल गयी ? एकदम सामन बठे साहब की बात न मूयती तो ? यही प्रत्युत्पन्न मनि ही तो उस यहाँ ले आ सकी है कोई दूसरा होता तो हाथ पाँव पूल जात च्स्ती ! च्स्ती ! उसने दराज खोलकर पाइप निकाला, कागजा पर निगाहें टिकाये-टिकाये ही तम्बाकू मरो

और दाँता में दबाकर जलाने लगा यह पाइप उसे बटन ने लिया था। तभी बरे ने आकर धीरे से एक चिट सामने रख दी

"भेज दो।" बरा चला गया, तो खयाल आया कि जनरल मनेजर को एकदम किसी को नहीं बुलाना चाहिए—लगेगा भीतर गाली बठा था। चिट पर नाम के जाने 'जयन्त और विजयनस के सामने 'बाई एपाइण्टमेण्ट' लिखा था। इसका ता' उसे खयाल ही नहीं कि आज का समय दिया था। चिट रखी तो रामन का पैपरबेट से दबाया गया छत सामने था, 'वाण्ट बी फारगेट द पास्ट?' जल्दी से मोड़कर पीछे लटके कोट की जेब में डाल लिया—हर बार सामने पड़ जाता है

"गुड मॉनिंग, सर" डरते डरते से एक नवयुवक ने इस तरह प्रवेश किया, मानो खेत गुरु हो जान के बाद किसी ने सिनेमा हॉल में बंदम रखा हो, टटालत हुए। पाइप दूध गया था, उस पर जली माफिस झुलाये तीन चार बार सास खींचते-खींचते किशोर ने धीरे से सिर हिलाकर नमस्कार की स्वीकृति दी और एक हाथ से बटन का इशारा किया।

"जी, बी फर्नीचर वाले कोटेज" लाया हूँ", सिर झुकाकर ब्रीकनेस से बागज निकालते निकालते जयन्त बोला। वह आफिस के फर्नीचर के डिजाइन, नक्शे और दाम बताता रहा। गेहूँ आ दुबला सा नवयुवक हैण्डरूम की टाई, टरिलीन की आसमानी कमीज काली पतलून। पाइप के बस लगाता हुआ किशोर कभी उसने पीलापन लिए हुए सवार बाला को देखता और कभी चाहिये हाथ में पड़ी रोहे की अँगूठी को, जिसमें नंग की जगह स्विक्स का चेहरा बना हुआ था। परसा किशोर का जयन्त अपनी पत्नी के साथ यू मार्नेट में मिल गया था। मरे शरीर की मुदर हँस-मूल युवती थी। जयन्त के हाथ में पकड़ के और माला के पास पस। परिचय हुआ। उसे जयन्त का साफ सुपरा शिष्ट और-तरीका गुरु से ही पसंद है। माला के परिचय के बाद ही लगा, जैसे जयन्त से उसे स्नेह भी हो। पता नहा कम उसे भ्रम हो गया कि माला को बढमिण्टन खलना पसंद है और उसे श्रीम खाने का शौक है।

जयन्त के बड़े हुए हाथ से बागज लेकर लापरवाही से पूछा 'हाउ इज योर मिसेज ?

'फाइन, थक्यु' जयन्त ने पिन-युशन से पिन खींच कर दा बागज पिन किये और सामने सरका दिया "एक स्कूल में पढ़ाती हैं—म्यूजिक।'

"क्या, माडन रिगेडेटस तुम्हें ठीक पस नहीं दते क्या ? उसे खुद आश्चर्य हुआ कि वह यह सब क्यों पूछ रहा है।

"लेकिन आफिस दु-आफिस चक्कर लगान का काम उसे पसंद नहीं है।' बचा नक जयन्त की आँखों में एक चमक आयी 'आपक यहाँ कभी कोई जगह हो तो "

किशोर को एकदम काम और समय का साथ ही समाल आया। दस्तखत करने से

पहले काने में कुछ लिखता हुआ बोला "जबूर।" फिर सोचने लगा बटनवाली कम्पनी में जयन्त को लिया जा सकता है। उसे जयन्त पसन्द भी है। जबूर तो पढ़गी ही "आई लाइव यू, तुम्हारी मिसेज बहुत अच्छी गाती है क्या?" जान क्या, उसके मन में आया कि कभी जयन्त की पत्नी का एम बहुत खूबसूरत रा-सिल्क की साड़ी में देगा।

'जी हाँ' जयन्त ने गद्गन होकर कहा "आपका एक बार हम लोग बुला लेंगे। दो एक बार रेडियो पर भी प्रोग्राम हुआ है।"

"इज स्ट गी हट यू?" जब तक वह सचेत हुआ, वाक्य उसके मुँह से निकल चुका था। उसने जल्दी से मुँह पाइप से दबा एक कश खींचकर कहा 'आई मीन, यार वक तुम ये फर्नीचर और दूसरी चीज़ों के एस्टीमेट देते फिरते हो उन्हें बुरा तो लगता ही होगा?'।

'जी जी, मैं बताया न, बहुत पसन्द तो नहीं है। बात यह है जी, उसके घर वाले जरा से अच्छे खाते-पीने लाग हैं, सो उस कहीं मेरे काम से सजावट हाता है। लेकिन जयन्त का चेहरा देखकर ही किशोर को लग गया कि बात समझी नहीं है। उसे आश्चर्य और भयभीत होत रह कि कस वह बात उसके मुँह से निकल गयी? क्या हो गया उसे? जयन्त की बातों के जवाब में हाँ-हाँ करके उसने जल्दी से दस्तखत किये, फिर झटके से बरें की घण्टी बजा कर उठत हुए बोला माफ करना जयन्त, उस वकन जल्दी न हूँ। मुझे लच से पहले ही रोजस-नील के यहाँ जाना है। और बिना उत्तर की राह देव दोना कंधा पर काट चढाते हुए बरें को आदेश दिया "गिलाबन, रामन से कह दो, कागज लेकर नाचे गाड़ी में चलेगा। जयन्त, तुम दत्ता बाबू से मिलकर उन्हें ही सारी बातें समझा जाना।" पाइप ऐश-टो में झाड़कर कोट की जेब में रखा, ता तह किये कागज से हाथ का स्प्रे हुआ काण्ट वी फारगेट द पास्ट? डबल्ट योर बाइफ हेट यू आई मीन योर वक? बीबी तुमसे भरा मतलब तुम्हारे काम से घणा नहीं करती? आई लाइव यू बड़े बाबू क चम्बर तक आते-आते यही वाक्य उसके कानों में गूँजते रहे बड़े बाबू यानी रामजीदास के भाई बहेयालाल बिजानिया मैनेजिंग-डायरेक्टर

रामन डाइर के पास बठा था। पीछे वह अकेला बठा-बठा पाइप पीता रहा। चौराहों की लाल रोगनी ने जब रोका, ता अचानक कुछ शब्द आ-गया हो इस तरह कहा "रामन, मकफरी बटन वाली फाइल आत ही एक्कदम तयार कर देनी है। शाम को लोकल टायरेक्टेस की मीटिंग है। घर पर बोल देना, शायद कुछ देर हो जाये और हाँ, ब्राउनवाले गग साहब को मना कर देना कि मैं शायद आ नहीं पाऊँगा।" फिर डाइर को आदेश दिया 'गाड़ी पाँच बजे गग साहब का चाहिए। सात, साढ़े-सात तक यही आ जाना, हम थोड़ा रुकना होगा।' वह जानता है मिसेज गग, मानी

घपों में रात दिन लगातार वह अपने-आपको इस बात के लिए ही तयार करती रही हो—इस एक लाइन को लिखने के लिए। और क्या इस एक लाइन को कुछ या-ही-से ढग से लिखकर वह कहीं अपना ही पत्र डा तो भारी रखना नहीं चाहती? लेकिन उसका पहल करके पत्र लिखने के धरातल तक 'उतर आना ही क्या और क्या वह स्वयं इसी की आगवा भरी प्रत्यागा नहीं कर रहा था?

ऐसा नहीं है कि खुद विघोर के मन में हर दिन कम-से-कम एक बार यह बात में आती है कि बहुत हुआ, अब वह लीना को लिख दे, लेकिन हर रोज किसी न उसका हाथ पकड़ लिया—या कहो, जिसने उसका हाथ पकड़ा हुआ था, उसकी शक्ति का वह प्रतिरोध करता रहा। 'ओल्ड मन एण्ड द सो फिल्लम का एक दृश्य इन आठ घपों में हजारों ही बार उसके सामने आया। सराबूर होने में 'बूना मेज पर काहमी टिकावे किसी से पजा लडा रहा है—पजा नहीं, दोनों ने एक दूसरे की हथेली को अपनी पकड़ में ले रक्खा है और दोनों ताकत आजमा रहे हैं कि कब कौन, किसने हाथ को मोड़ कर मेज पर मुका दे। ताकत में अधिक यह खेल घय का है। एक सीमा पर आकर शक्ति ख जाती है और घयपूर्वक दूसरे की हिम्मत टूट जाने की प्रतीक्षा चल्ती रहती है। कभी कभी उसे लगता है दूसरा हाथ लीना का है, लेकिन अक्सर प्रतिरोध के रूप में, जिसका हाथ वह महसूस करता रहा है, उस व्यक्ति का सिर्फ नाम सामने है, चेहरा आज स्पष्ट याद नहीं आता। अनक चेहरों में वह इतना धुल मिल गया है कि लगता है उस तरह का कोई चेहरा कभी था ही नहीं। और यह सघष निरन्तर उम निराकार चेहरे वाले व्यक्ति से चल रहा है। दांत भीचे सास राके शोना प्रतीभा कर रहे हैं कि पहले किसकी नसें ढीली पड़ती हैं

लीना से वह आठ घपों से नहीं मिला और अब तो इस स्थिति को स्वीकार कर चुका है कि आगे मिलन की आवश्यकता भी नहीं है। लेकिन ताकत आजमाती पसीने से पसीजी एक स हत हडली का स्पन् एक पल को उसकी चेतना से ओझल नहीं हुआ। मुबह शायद उसे खुशी ही हुई थी—एक निदय खुशी कि 'खट' की आवाज के साथ उसने लीना के हाथ को मेज पर मुक हुए पाया ^३ फिर लगा, वह हाथ लीना का नहीं एक दूसरा स हत हाथ है।

मुबह की निष्करण क्रूर प्रमत्तता का सुख साक्ष तक धीरे धीरे अनुजाने ही एक अजीब अवसा में बदलता चला गया था और वह अचेतन की एक आवेगमयी इच्छा से लड़ता रहा कि मुबह दिल्ली न जाकर, 'लेन से सीधे 'लीना के पास जाये और उस हारी पकी जजर, पराजिता का बाँहा से उठा ले 'लीना, मरी लीना मुझे माफ कर दो।' कसी हो गयी होगी इन आठ घपों में लीना? जब वे अलग हुए थे तो वह छब्बीस की थी, आज चौतीस की होगी। काले केशों में सफेद धारिया उभर आयी होगी चेहरे पर उम्र का पक्का झलकन लगा होगा और गरीर फल या सूखकर वह

निमला भामी ऐसी महिला है, जिन्हें देखकर श्रद्धा होती है— हताशा व अनेक क्षणों में उन्होंने ही विश्व को जिसरने और टूटने से बचाया है। लेकिन जाने क्या चीज है, जो उसके भीतर सन्तुष्ट होती है और वह जो योग को स्पर्श-दानों के साथ धूमने को गाड़ी दे देता है उसे उसमें कुछ भी अनुचित नहीं लगता। लेकिन आज माता विश्व तृप्ति हुई उसने रामन से मजान करना चाहा। इस उल्टे मीरे टाश्म से तो तुम्हारी पत्नी खासी घोर हो जाती होगी, हो सकता है उस बेचारी ने आज कोई प्रोग्राम बना रखा हो। वह जब से डायरी निकालकर कुछ देखता रहा, 'तुम्हारी पत्नी को देर से जाने पर शक नहीं होता?' उस लगा उस उसमें यह वाक्य मजान में रामन से वह दिया हो। लेकिन कहा नहीं था सिर्फ सोचकर रह गया था क्योंकि प्रतीक्षा के बाद भी रामन की ओर से कोई जवाब नहीं आया। ऐसा मजान तो वह कभी कर ही नहीं सकता। तम्बाकू भरने के लिए पाउच को दोनों जेबा में देखा तो लगा, मुबह से जिस चीज को वह टाले जा रहा है वह जूते की कील की तरह और बाहर निकल आयी है अधिक गहराई में छूटती है।

बलब के मोच से जब विश्व की बगड घमकर बाहर निकली, तो 'हाइट-नेबिल के पांच छ पग नमो में तर रहे थे।' सबक तनी हुई डोरी की तरह हवा से दरदराती लगती थी। लेक के बीच से गुजरते हुए एक अंधेरी सी जगह में अचानक गाड़ी ठिठक गयी। स्टीयरिंग को दोनों हाथों से पकड़े देर तक वह यो ही 'यू-सा' देखता रहा, फिर झटके से चाबी खींची बाहर आया और फटाक से दरवाजा बंद करके एक बच पर आ बठा। लगातार कोई चीज कानों में सन सन गूँज रही थी— ठीक वसी ही आवाज जसी रेल की सुनसान पटरियों के किनारे खड़े टेलीग्राफ व खम्भों में गूँजती है। वह महसूस करता रहा— मुबह से ही एक सवाल उसके आस पास में डरा रहा है लीना ने आठ साल बाद उसे क्यों लिखा? मुबह जब उसे लीना का छत मिला था, तो आयास पूर्वक उसने कुछ नहीं सोचा था— कुछ भी नहीं। एक तल्ल मुस्वान से सिर्फ उस लान को पढ़ लिया था क्या हम लोग अतीत को भुल नहीं सकते? अतीत? कौन-सा अतीत? अतीत को अपने साथ रखना अब उसका अभ्यास नहीं रह गया है इसलिए कोई प्रतिधिया नहीं हुई थी। बस मन में एक बात आयी थी कि आज मैं किमी लायक हो गया हूँ। इसलिए न? आठ साल बाद किम अतीत को भूलने की बात लीना करती है? इन पिछले आठ क्यों बाला अतीत या वह जो इनस पहले बीता था? और अभी तरह की कोई चीज लगातार बही घुम रही है, इस मह जरूर महसूस करता रहा। इस समय लगा, घुमड़त हुए उस निराकार ने प्राय स्पष्ट प्रश्न का एक रूप ले लिया है। आखिर उसने क्यों लिखा? उस जिद्दी दम्भी उदर, स्वाभिमानिनी औरत ने कितनी मुश्किल से अपने को यह पत्र लिखने के लिए तयार किया होगा यह सिर्फ विश्व ही महसूस कर सकता है। हो सकता है, इन पिछले आठ

वर्षों में रात दिन लगातार वह अपने-आपको इस बात के लिए ही तयार करती रही हो—वस एक लाइन को लिखने के लिए। और क्या इस एक लाइन को कुछ मो-ही-मे ढग से लिखकर वह कही अपना ही पलड़ा तो भारी रखना नहीं चाहती ? लेकिन उसका पहल करके, पत्र लिखने के घरानल तक 'उत्तर' जाना ही क्या और क्या वह म्वय इसी की आगवा मरो प्रत्यागा नहीं कर रहा था ?

ऐसा नहीं है कि खुद विश्वोर के मन में हर दिन कम-से-कम एक बार यह बात न आती हो कि बहुत हुआ, अब वह लीना को लिख दे, लेकिन हर रोज किसी ने उसका हाथ पकड़ लिया—या पट्टो, जिसने उसका हाथ पकड़ा हुआ था, उसकी दाहि का वह प्रतिरोध करता रहा। ओल्ड मन एण्ड द सी फिल्म का एक दृश्य इन आठ वर्षों में हजारों ही बार उसके सामने आया। शराबखाने में 'बूढ़ा मेज पर कोहनी टिकावे किसी से पजा लड़ा रहा है—पजा नहीं दोनों ने एक दूसरे की हथेली को अपनी पकड़ में ले रक्खा है और दोनों ताकत आजमा रहे हैं कि कब कौन, किसके हाथ को मोड़ कर मेज पर फुका दे। ताकत में अधिक् यह खेल धय का है। एक सीमा पर आकर शक्ति रुक जानी है और धयपूर्वक दूसरे की हिम्मत टूट जाने की प्रतीक्षा चलती रहती है। कभी-कभी उसे लगता है दूसरा हाथ लीना का है, लेकिन अकसर प्रतिरोध के रूप में, जिसका हाथ वह महसूस करता रहा है, उस ब्यक्ति का सिर्फ नाम सामने है, चेहरा आज स्पष्ट याद नहीं आता। अनक चेहरो में वह इतना धुल मिल गया है कि लगता है उस तरह का कोई चेहरा कभी था ही नहीं। और यह सधय निरन्तर उस निराकार चेहरे वाले ब्यक्ति से चल रहा है। दात मोचे, सास रोके दोनों प्रतीक्षा कर रहे हैं कि पहले किसकी नसें ढीली पड़ती है

लीना से वह आठ वर्षों से नहीं मिला और अब तो इस स्थिति को स्वीकार कर चुका है कि आगे मिलन की आवश्यकता भी नहीं है। लेकिन ताकत आजमाती पमीने में पसीजी एक सरत हृदयी का स्पष्ट एक पल को उसकी चेतना से जोमल नहीं हुआ। मुबह गायद उसे सुशी ही हुई थी—एक निदय सुशी कि 'खट्' की आवाज के माय उसने लीना के हाथ का मेज पर मुक हुए पाया है फिर लगा, वह हाथ लीना का नहीं एक दूसरा सरत हाथ है।

मुबह की निष्करण क्रूर प्रसन्नता का मुख सँझ तक धीरे धीरे अतजाये ही एक अजीब अवसाद में बदलता चला गया था और वह अचेतन की एक आवेगमयी इच्छा में लडता रहा कि मुबह दिल्ली न जाकर, प्लेन से सीधे लीना के पास जाये और उस हारी थकी, जजर, पराजिता का बाँहा से उठा ले 'लीना, मेरी लीना मुझे माफ कर दो।' कसी हो गयी होगी इन आठ वर्षों में लीना ? जब वे अलग हुए थे तब वह छन्वीस की थी आज चौतीस की होगी। काले केशों में सफेद धारिया उमर आयी होगी, चेहरे पर उम्र का पकाव झलकने लगा होगा और गरीर फूट या सूखकर वह

नहीं रह गया होगा, जिसे वह 'अ ग अ ग साचे मे डला' कहा करता था। नहीं, अब उस हारी पक्की, टूटी प्रौढ़ा का सामना करने का साहस भी वो किशोर में नहीं है। अपराध आरापती निगाहा से वह कैसे दो चार हो सकेगा? सचमुच, बेचारी बही बहुत मजबूर ही हो उठी होगी, वरना कस उसे यह पग लिख पाती?

देर तक आँसू किशोर के गालों पर दुल्कते रहे। सेव के पार किनार किनार रेल गुजर रही थी और उसकी रोगनियाँ पानी के नीचे मुनहरी जाँत जसी सरबनी जा रही थी। क्या व लोग सच ही दुर्भाग्य बनकर एक दूसरे की जिन्दगी में आये थे?

लेकिन सीमाग्य किसे कहते हैं उसे जिन्दगी में पहली बार किशोर ने उसी दिन जाना था जिस दिन लीना का हाथ अपने हाथ में लेकर कहा, लीना तुम एक बार अपने मुँह से कह दो कहो लीना! दसो, मेरे पास तुम्हें दन का एक प्यार भरे दिल के सिवा कुछ भी नहीं है मुँह से लीना ने सिर्फ इतना ही कहा तब कुछ गम्दा में कहकर ही बताया जाता है किशोर? किशोर का विश्वास नहीं हुआ था। लगा, जमे ससार की हर चीज अवास्तविक अनरीयत हो उठी हो। यूनिवर्सिटी के लड़के सुना-सुनाकर आपस में कहते, "स कहते हैं छप्पर फाड़कर दना। जिन्दगी साले की टपूनों करते फ्रीगिप और स्काउटरिंग के लिए इस मेम्बर से उता मम्बर के यहाँ चक्कर लगाते बीनी और आज दस ल। क्या अब डकर अमिस्टण्ट-कमिशनर का दामाद होन जा रहा है।

'लकिन अट, हाथी बाँध तो रह हा उस खिलाओगे क्या?

'हाथी नहीं हथिनी। सफद हथिनी। जो जतना बड़ा जानवर देगा वह दो चार ग ने क लत भी दगा हो। अमिस्टण्ट-कमिशनर ननकमटकता कहते किस हैं कुछ पता है?'

यानी किशोर साहब वहाँ भत पर जाकर ही मड़िया डाल दन?

भत पर? और या जा कमिशनर साहब के तान-तीन बुल डाय बठ है ता माना लिजा क भाई। जमाईजी का बा छातिर करेग कि सीपे पर जाकर ही।

और जा है सा है पर यार, काँगा मूड। नाटक तयार करके पड़ने क पाटनर द पापन हैं ममन कुछ? तुम जिन्हा मर बठ-बठ लाल स्याता स जितावा पर निगान लगान रहना कोई छमिया पूछन नहा आदमी। पाटुराय का मिर बराही में और पाँचा पा म। कॉलेज-लाय ए-जाय करनी है ता आदमी का बरहिए एक मूब मूरत-मी बरहो म नोटम तयार करके अलग रंग ल।

'मगर हासिंग यं हुआ कम? बाप मान की भाँगे है कि बटन? उग जिन्हा नहा है कि जा बुद सार निन टपून्न करे न जिमक सिर पर छन हा और न तल पग, का क्या घिनादगा बिगिया को?

जिरिया-दूठ मि-भाइ जिरिया-दूठ। कीटिया बिना साद दिद मरपा-दू टिय

पडी रह, तो योगे, बाप बेचारा क्या करे ?'

'अरे जनाव, करे क्यों नहीं ? मद बच्चा हो, तो हण्टरो से वो टुकाई करे कि सारा रोमांस फाल्सा हो जाये । और इन मजदूरों माहुर को तो वो चुटकियों में उड़ा दे कटवा के वहा दे राता रात । क्या मजाल, जो किसी को मुराग लग जाय जरा भी ! हिम्मत होनी चाहिए मिस्टर, हिम्मत ।'

हिम्मत तो माईजान, किशोर की भानगी पड़ेगी ।

'नानसेस ! उमकी तो आज भी हिम्मत उस बाउण्ड्री में घुसने की नहीं होती ।

वो तो हमारी मोना लिजा ही सब कर रही है

'हाय मोना, तेरी यह दुदसा !'

एन फिकरा और कहवा के बीच किशोर मले ही अपने को हीरो के रूप में देखने लगा हो, लेकिन यह सच है कि लीना की दत्ता और साहस के आगे वही वह अपने को बहुत छोटा और नमित महसूस करता था । और इसमें भी झूठ नहो कि शादी हो चुकने के बाद वाले दिन तब असिस्टेंट-कमिशनर दीप्ति के बंगले के फाटक का 'विवेयर आफ डाग' के ऊपरवाला कुण्डा खोलते उसका दिल धड धड करने लगता था । अल्सेशियन कुत्ता के डर से नहीं, लीना के भादयों के डर से भी नहीं, बल्कि दीक्षित साहब की नजरो के डर से । खून को जमा देने वाली उन ठण्डी निगाहा के सामने पडकर वापस आ-सकने कायक क्षिति भी उसमें रह जायेगी या नहीं ? आज तो लगता है, जो कुछ उन दिनों हुआ किशोर उस सबका मान तटस्थ देखता था । शादी दीप्ति साहब के यहाँ नहीं हुई थी कोट में । इसके पहले और बाद ट्रेजेडी और फास दो नाटक हुए थे यानी शादी से पहले मार डालने, उस लफंगे को वही का न रखन और पांच दिन भूखे रहन, कमरे में बंद करके सड़ने देने का नाटक हुआ, जिसके अन्तिम अक्षर में एक दिन किशोर ने लीना को अल्ट्रामोड अपनी कोठरी के दरवाजे पर खड पाया—बदहवास, माली हाथ । 'अपन घर रहने आयी हूँ । कितनी मुश्किल हुई है निक्ली ! मैं कि बस ! अब कोई हमारा क्या कर सकता है ? कानूनन हम लोग पति-पत्नी हैं ।' फिर किस तरह साइड-म-आओ के अंदाज में सब दिखावा करना पडा, किस तरह मसूरी के एक हाटल में डबल बड कम का इन्तजाम करके उहोन दो टैन टिकट किशोर को दिये और स्टेज पर जब अपनी बेटी को बिदा किया, तो सम्झी के मुम्बोटे का मोम पिघल आया था । उनकी आखों में नमी तर आई लेकिन एक तनाव बना रहा और उदासीनता का अभिनय करता किशोर गदन अकड़ये अपने और दूसरा को विश्वास दिलाता रहा—यंग की दीवारें आखिर मनुष्यों की भावनाओं को कितने दिनों और कुचलेंगी ? आदमी ही तो है जो इतिहास को बनाता और बदलता है । प्रतिष्ठा—धन की, जाति की पोजीशन की प्रतिष्ठा—हम लोग के भाग्य की निर्णायक क्या हो ? लेकिन ये सारे घिसे पिटे धाक्य वातावरण से ध्याप्त अपमान के डर से उस अछूता नहीं रख पाते थे ।

पापा ने कुछ गद्दी दिया—ने की बात भी गद्दी थी और जिगोर उठा। उम्माद भी गद्दी कर रहा था लेकिन स्टेशन पर यह मोटा आवागमन भी टूट गया। एंट प्रॉम की घड़ी व पाग जय हरी शब्दी हिली, तो उड़ाने लीस के हाथ में एक बन्द रिवाज रस दिया, 'इस यात्रा में दगना।' गाड़ी चली तो बिगार का रंग सि दीर्घत साहब न तो उससे हाथ मिलाना चाहते हैं, गीत। वे या ही सादे-मोद स त तत चहुरा किए एक ओर साइ रहे और उगसे गद्दी, लीना स उगद उगद बालते रहे। स्टेशन-प्रवेश का दिव्या एक हाथ स दूसरे हाथ की यात्रा में मानगिन उत्तजना प्रकट करता रहा। गाढा बली, लिगाया गुला—लीना के नाम पोष हजार का एवाउण्ट पेची चक्का था। पहली चीज बिगार के दिमाग में टकरावी, गिफ पांच हजार !' फिर लगा, यह पांच हजार रुपयों का गद्दी पांच हजार अविवासों का चक्का है जिस आदमी व गाथ गुम जा रही हो, उसके साथ कभी भूरी भरने लगी, तो इन रुपया स काम चला लता। बिगार का चेहरा पत्तर लीना समझाती रही पापा बंधु बट्टर गिद्धातवादी आदमी है। वे कहते हैं कि भूटे दिलाव और रुपये की बरवादी से क्या पायदा ? जो रुपया दना है वह सीधे ही क्या न दे दिया जाये ? बजाय इसके कि वे हम कोई उलटी-सीधी चीज द देत और हम पसंद न आती, क्या यह उपादा अच्छा नहीं है कि हम अपनी उन्नत की चीज सरीद लें ? वह कुछ नहीं माल। अपन जुगाम का बार बार हमाल में साफ कर करके रसत और स्टेट एक्सप्र स का दिन हाथ में लपर बास करते दीक्षित साहब की आर्ति ही उसके सामने घूमती रही। ग्यारह बारह साल हो गये, उस आदृति की रेलाने अब बलग-बलग लोगों व चेहरों में समा गयी है और उसे ज्या-का-ज्यो याद कर लना भी उसके लिए सम्भव नहीं रह गया है। लेकिन उस दिन बाला प्रभाव आग भी दिमाग से नहीं जाता। मुँह की आर बढ़ता सिरस्ट बाल हाथ, और साँवले हाँठों का उसे पकड़ने के लिए उदग्र हो आता—बाई फोवल चक्षु से बाज जसी तज आँखों का झकना—सुप्रीम काफिडेंस और हर चीज की आरपार भेदकर उस जान बड़े हान का दम्भ—सब मित्रकर एक ऊँचाई पर सडे हिकारत से नीचे देखते व्यक्ति की ललकारती मणिमा—मन ही मन दाँत भीचकर किशोर ने सोचा साला गवल से ही टोडी बच्चा लगता है। हमारी सरकार ने इन लोगों को रिटायर क्यों नहीं किया ?' फिर एकदूसरा शब्द दिमाग में आया ग्युरोक टस !

हवा ठण्डी थी। खाना खाकर दोनों बाहर निकल गये और कुल्हो माल पार करके रिक्शा स्टण्ड के सामने ही दीवार पर, जरा एक ओर हटकर बैठ गये थे। अंधेर में जगमगाती बत्तियों की आधी तिरछी मालाने टूट टूटकर नीचे ऊबड़ खाबड़ अंधेर में चली गई थी कि त्रैंग के गुच्छे के बाद, वस वही वही बत्तिया सड़क का आभास देती थी। नीचे बहुत दूर हल्के उजास की देखकर लगता था वहाँ देहरादून है।

कमी कमी में सोचता हूँ लीना तीन दिनों से घुमड़ती बात का विशार शब्द

देन की कोशिश कर रहा था ' वही हम लोगो से कुछ गलत तो नहीं हो गया ' वह 'डाइनेरी-चौकवाले' मण्डप को देखता रहा। लीना की उस सारी दृढ़ता ने उस डरा दिया था। जो लड़की अपन दबंग बाप की फिक्र न करे, वह सचमुच डरने लायक ही है।

काले शाल को एकबार खाल कर सारे कपड़े डेकते हुए लीना सामन दखती बोली "देखा किशोर मैं बच्ची नहीं हूँ। मैं जल्दी निणाय नहीं लेती और जब एक बार निणाय ले लेनी हूँ, तो उस पर टिकन की कोशिश करती हूँ। पापा का भी जानती हूँ और तुम्हें भी समझती हूँ। सब जाना वृजत हुए पूरे हास-हवास में भी तुम्हारे साथ कोट गयी थी। और सब कहूँ, मैं इसे भी पापा की महरबानी ही समझती हूँ—उन्होंने तना किया। मैं तो तुम्हारे यहाँ जब पहुँची थी तो इस सबका मोह छोड़कर पहुँची थी। जानती थी यह सब नहीं होगा "

'नहीं होता तो ज्यादा अच्छा था।' गहरी साँस लेकर उमन धीरे से कहा। लीना के स्वर की यह दृढ़ निणयात्मकता उसे अपन-आपकी विरोधी लगती है और अचानक उस दीक्षित साहब की वह मुद्रा याद हो आयी जो उसे महसूस कराती थी—मानो वह जमीन पर रेंगने वाला बौद्ध हो।

खर, जो हुआ सो हुआ, पापा को माफ कर दा। दखो, उनका सोचन का दुनिया को देखने सुनने का चलने चलान का अपना एक तरीका है। शायद उसे अब वे बतल भी नहीं सकते। कम से कम तुम उनका इसी बात का लिहाज करदो कि मैं उनकी एकलौती लड़की हूँ—मादया में सबसे बड़ी। मेरी गादी के सचमुच गौर से ही करना चाहत थी। लीना का गला भर्रा आया "यही जरा-भी अटक इस समय जा गई है वरना हम जानत हैं पापा का मन में तुम्हारे लिए कितनी इच्छा है। बहुत बार उन्होंने कहा है—किनार ईमानदार और मेहनती लड़का है। उसे दयाता हूँ तो मुझे अपने लिये याद आ जात है।' और वह विस्तार से बताती रही "पापा खुद सत्पमई भास्मी हैं। चाचा ताऊआ न तो हरी झण्डी दिखा दी थी। खुद पड़े, छाटे माई बहना को पढाया। मादया का नौकरी दिलाई, बहिन की गादी की। आज जो कुछ है, सिर्फ अपन बूत पर है। आप क सघष का वे नहीं समझेंगे, तो कौन समझेगा? खुद उन्होंने क्या कम तन-जीफ दखी हैं? इसलिए जानत हैं अभाव क्या होता है। गायद यही बजह है कि हम लागा की कभी किसी इच्छा को अधूरा नहीं रखा। आधी रात का उठकर अगर हम लागो न कहा—पापा, ट्राइसिकिल लेंगे तो आदमी दूबान मुलवाकर ट्राइसिकिल लाया है। कहते थे—मेरी इच्छाएँ अगर अधूरी रह गयी हैं, तो मैं अपन बच्चा का मन क्या मानूँ?"

लीना का यह बहाव किशोर को किनार पर अनमोचा भड़का छोट जाता है और तुम आया भी हो तो एक ऐसे आदमी के साथ, जिसने खुद कभी खिदगी न मन्हा जाना कि इच्छाएँ पूरी होना किस कहते हैं। भया को अस्सी-सी रुपये मिलत हैं।

यच्चे है ये-न, तो मामी है—जिह्वा ने मुझे माँ की तरह पाला है। माँ बाप का प्यार देने तो गिर भया भी ही पाया है। इसलिए अभी अभी सोचता हूँ कि दोरती तब हम लोगों के सम्बन्ध ठीक थे लेकिन आगे "

'फिर यही बात ! देगो कोई भी लड़की जब ऐसे नियम ऐ-नती है किनोर, तो मूय आगा-गीटा सोच लेती है। मुझ अभी तरह की जिदगी जीन की आन्त है।" उसने किनोर का हाथ अपन हाथ में ले लिया 'आज तो तुम्हारी लाचररगिण पवरी है न इसलिए एक आधार है। यह न भी हाँकी तब भी मैं आगे का नियम कर ही लिया था। अब हम दोनों के गुग दुग अलग वहाँ रह गये हैं ? अरे, मैं तो यद्दी हूँ, इस साल मैं फागल बिये लेनी हूँ फिर निश्चित हावर पी पच० डी० कर डालो। ये टपूगन और नोटग तो तुम बढ ही कर दो। मैं भी कोई छोटी मोटी नौबरी ले लूँगी। फिर यद्दी ही लाड और सारवना स उसवे बच्चे पर बाँह रखकर बोली "छोनी तो जिदगी है या ही बीत जायगी।"

आज भी याद है किनार को लगा था कि लीना के मुँह से अपनी बात नहा फिस्में और हमानी किताबें बोल रही थी। यदी रखकर जब मैं लाय उठे तो लीना न इस तरह दिलासा दिया जस बच्चे को समझा रहो हो 'दस्ता, हम लोग ट्रेन में सफर करते हैं। बहुत तकलीफ, असुविधाएँ अपमान और बर्माजगी हाती है। लेकिन याना पूरी करने के बाद कोई भी उर याद नहीं रखता। पारा न गलत किया या सही, अब तो हमारी जिदगी अपनी और स्वतन्त्र जिदगी है। पारा उसमें वहाँ आते हैं ?

हाँ, पापा उम्भ वहाँ जात हैं। न होगा तो आगे उनस कोई सम्बन्ध नहीं रखने। उस दिन सुनसान भाल पर विशोर न लीना को कमर स अपने पास सींच लिया। तुम बहुत समझदार हो लीना पता नहीं मुझे क्या हो जाता है कमी-जमी। ये छोटी छोटी बात बहुत महत्वपूर्ण लगने लगती है। इसी तरह भटकाव में मुझ सहारा देती रहना 'मन में सोचा लीना जिस वग और जिन लोगो में रहती है, निणम दस्ता और स्पष्ट चिन्तन उन लोगो की बहुत बड़ी विशेषता है, क्योंकि परिस्थितियो पर उनका नियन्त्रण होता है।

छोटी छोटी बातों के महत्वपूर्ण लगने का सिलसिला शुरू कहा हुआ था—यह ता स्पष्ट याद नहीं लेकिन वह सत्य वहाँ नहीं हुआ—सत्य हुआ विशोर और लीना को अलग करावे एक नये सिलसिले की शुरूआत करने आज लीना का आशय उसी अतीत से है क्या ? उसने पाइप निकाल लिया, सुलगाया और सिरे से पकड़ कर पीना रहा।

कुछ घटनाएँ अभी भी गुलाब नहीं भूलती और आज भी किसी लड़की को टेनिस खेलते देखकर किसी पार्टी में होटल में छुरी-काँटे उठाते रखते याद आ जाती हैं दीप्ति साहव की ओर से शादी का दिनर था—उनके लान में ही। छुरी-काँट स

को देर तक अपने हाथ व धूल बपड़ो पर दसरी करना उस अभी तक याद है, इसलिए दसरी करने के परिश्रम को भी जानता है। वह उस पुरत पाजामे को यो ही सिरहाने रखा छोड़कर वही से बोर्ड गढ़े बपड़े निवाल लेता—बया है, कहाँ कोन धन पड़े रह गरीर पर ही रहे—सोना ही ता है। लीना बिदाती 'तुम्ह गन् बपड़े पहनने का रास गोक है। उसे लगता बह रही हो—साफ बपड़े पहनन की आदत नहा है न ?

इष्टर-पू के लिए जाना था। लीना ने उसकी अटची—मिस्तर तयार किये। अपनी बत्त की चौकार टोचरी म दो प्लास्टिक की प्लेटें, गिलास लील्या नपकिन केले-सन्तरे परमादि रख दिये। गुसलपान से निबलकर गीम वाला को झटके-से जाड़ते छोड़ उड़ाते हुए विगोर ने पूछा 'जरे भई, ये सब क्या है ?' लीना व्यस्त भाव से सामान लगाती रही 'कुछ नहीं, रास्ते की तयारी है। पापा की तयारी मैं ही करती थी।' विशार ने मुलायम स्वर म बहा 'क्यों ये सब बेकार महनत कर रही हो ? रास्त म मेरा मन ही नहीं होता कुछ खान पीन को। फिर थक-बलास म आनमी खुद ही बठ जाये, तना बाफ़ी है। ये ताम शाम जितना कम हो, उतना अच्छा है। बेकार दूध-टाट जाये।' फिर जब बाँधी अदर रखकर लौटा, तो उसली बात कही 'इसके लिए एक कुली अलग से करना होगा। अटची बिस्तर का क्या है—लिये और हाथ मे लटका लिये।' लीना का हाथ रुक गया। उसने गौर से विगोर को देखा और उसके आगे बाई फोवल चरम से ज्ञानती दीक्षित साहब की आँखें आ गयी

लीना को शोक था घर म अच्छे परदे हा और उस लगता पुरानी साडियो के परदे क्या बुरे हैं ? घर म नये टी सट की जरूरत थी। भट मे मिस टी सट दीक्षित साहब के साथ ही—उस गहर म छट गये थे और वह वहाँ जाना नहीं चाहता था। तय हुआ शाम का साथ चलग। लेकिन वह खुद ही कॉलेज से बाजार चला गया और जब आया तो सेक्ण्ड हैंड का टी सट साइकल की डोलची मे था। किसी बेमायूम सी घटख या टैक पन को बौन गौर से देखता है ? बीज तो आपे दामो म आ गयी। लीना ने देखा, ता नाक भी सिकाड़ ली 'क्या उठा लाए।' अगले दिन वह खुद जाकर नया सट उठा ला। बोली "तुम्हारे पसे नहीं खच किये हैं। अपने पसा से लायो हूँ"। अपन पसा को लेकर उसने मुँह तक कोई बात आयी भी—तभी कोई आ गया।

यह सब तो चला बिना बोले, लेकिन एक दिन जब रेस्तराँ से निकल तो बोलने का लिहाज भी टूट गया। शायद उसे इतना बुरा न लगता, लेकिन साथ म था विगोर का एक सहकारी—अंग्रेजी विभाग का मेहता। लीना का फानल था, इसलिए मदद करने अवसर मेहता आ-जाता था। शाम को प्राय साथ ही प्रोग्राम बनता। कम से कम चाय साथ ही पीते थे। जब तक विशार पस निवाले—निवाले कि मेहता ने झटके स पस निबालकर दस का नोट थाली मे फेंक दिया। टिप के चार आन छोड़े और बाहर आते हुए बोला 'मैं समयता हूँ इन बेचारा को जरूर कुछ-न-कुछ छोड़ना चाहिए।

य हाटल वाल इहें देते ही क्या है ? मारा गुजारा तो टिप्प पर ही चलता है नका '

"हमारे ये टिप देने में सभसे ज्यादा तबलीफ पात हैं," लीना हँसकर बोली
"बहुत दिल बड़ा करवे छाडा, ता एक आना छो दिया ?"

'हम पूछते हैं, यो पसा फॅवन से पायदा ?" उसने बचाव पक्ष की दलील दी
'एक तो दो पसे की चीज के चार आन दो—फिर यह टक्का ! मैं कहता हूँ कि यह
टिपवाजी विदेशी मन्तना बड़ा सिर-दद हो गया है कि लोग परेगान हैं। दरवाजा खोला
है टिप दीजिये, लि पट से लाये हैं, टिप दीजिये, टक्की का भाडा दिया है, टिप दीजिये,
होटल के बारे में आपकी डाक लाकर दी है टिप चाहिए ! टिप न हुई साली मुसीबत
हो गई ! हम तो पस सब को डिस्करेज करना चाहिए । भई चीजा के दाम आप का
पसे और बढ़ा दीजिये—लेकिन टिप के नाम पर यह जेवनतराई तो बन्द कीजिये
मैं ता इसके एकदम खिलाफ हूँ ।" वह लीना से बहस के अंदाज में थोल्ता रहा ।

"छर, अच्छा या बुरा, सम्य समाज का एक तरीका बन गया है ।' लीना न
बताया ।

'अच्छा सम्य समाज है ! एक पूरे बग का बलशिश और टिप्प पर पालना गुलामी
है । किंगार को गुस्सा आ गया ।

"ऐसा न करें, तो ये लोग भी तो ठीक से सब नहीं करते—कोई सुनेगा ही
नहीं '

"यानी जिसके पास टिप देने का फालतू पसे न हो, उसे यहाँ आने का हक
नहीं है ?' उसे न खाने पीने का हक है, न अच्छी जगह उठने-वठन का !" उसकी
बात में कड़वाहट आ गयी "बिल के पस हो न हो, लेकिन टिप जरूर हो ।"

इस पसनल बयों बनाते हो किशोर ?" लीना ने निरुपम कं डग पर कहा
बहरहाल, आपकी बात ठीक भी हो, फिर भी मैंने देखा है कि पसा आपसे छूटता नहीं
है ।" लीना ने मेहता के बड़े हुए हाथ से पान लेकर मुँह भर लिया ।

किशोर की आँखों में आगे 'बिबेयर आफ डाग' का फाटक घूम गया धोला
"लीनाजी, मुझे मिलते हैं दो सी रुपये—तो भी जाज । और आपको रहने की आदत है
उस माहील में जहाँ हजार रुपये तनका और डेढ़ हजार की ऊपरी आमदनी होती है—वे
लोग पाँच रुपये के बिल पर एक रुपया टिप दे सकते हैं

उस दिन लीना की आँखों में आँसू आ गये थे, और घर आकर तो कूट कूटकर
रोन लगी—रात भर रोती रही और किशोर डर बच्चे की तरह माफी मागता रहा ।

अबकर उसे दया भी आती थी । लीना सब्जी नाटती या झाड़ू लगाती, सफाई
करती, कपड़े धोती, तो किशोर का मन एक अजीब करुणा से भर भर जाता । बेचारी
लाड-प्यार, नाज नखरो से पली रुढ़की कहीं आ गई ! तब वह आगे-आगे सारे काम कर
देता । वह कपड़े भीमे छाडकर जाती तो धोकर सुखा देता वह ब्रश करती तब तक खुद

स्टोव जलाकर चाय बना देता। यह गाना बनाती तो नहान से पहले कमरे झाड़ देता। लीना बितावे सोल पट रही होती, और वह चुपके से बरतन मल डालता। हालाँकि यह चीज उसे और भी दुमती कि लीना जान गयी है, फिर भी न-जानन का बहाना करने बठी पड़ रही है। रेनिन दरबार अनदगा करना मुश्किल ही जाता ता लडता, और यह कहता "दखो लीना मुझे तो यह सब करने की आदत है। गुरु ॥ बिया है। मामी बीमार या बाहर होती थी, तो सब कुछ करता था। रेनिन तुमने तो रसाई म झाँककर भी गही देखा होगा।' उमड़ा गला रुध जाता 'तुम क्या सोचती होगी लीना। वहाँ' लीना गहरी साँस लेकर पिछक देती।

जब यह सब सयरकर बाहर निकलती तो बिगार उसे देखता रह जाता—हेयर स्टाइल, मचिंग सेस, हर चीज का चुगाव और स्तर—सभी में कुछ ऐसी नफासत और आभि जाय्य रहता कि लगता वह बिगोर से बहुत दूर चली गयी है—अप्राप्य और दुल्म हो उठी है। उसे अपना आप बहुत ही छोटा और अचिचन महसूस होने लगता—बहुत ही मानो अनधिकारी गर और अजनबी बनकर उसे टगा-सा दस्तता रह जाता। उस क्षण उसे लीना के शोदय और सोन्य-बाध पर गब मिथित सन्तोष ज्वर होता लेकिन पीछे कही रीढ़ के भीतर आवाजित भय सुरसुताया करता—मचमुच वह लीना के लायक नहीं है? वहाँ वह, और वहाँ लीना। जरूर लीना भी तो अपने-आपको और उसे देखकर बनी-बनी सोचती ही होगी कि वह कहीं गलत कर बठी है जाने कसे उसे यह विश्वास हो गया था कि अब लीना को उसके साथ आन का अपसोस होने लगा है। इधर वह अधिक मुस्त और उदास रहने लगी है। वहाँ इस समय वह किसी क्षानदार गाड़ी में बठी घूमने जा रही होती और वहाँ अब बार-बार घूँप में कमाल से गले-बनपटिया का पसीना पोछती, धूल घबकड़ में रिक्श में लदी, पहिये स साड़ी बचाती चली जा रही है। साथ लगे इस बुद्धू, चुगद घुने मनहूस और कजूस (या गरीब) को दस्तकर क्या हर क्षण धक्कते दिल से यही नहीं मानती होगी कि हाय राम, इस वक्त कोई जान पहचान का न मित्र जाये। हालाँकि वह खुद भी बहुत खयाल रखती थी कि जब किसी उसका साथ हा। तो सबसे अच्छे कपडा में हो। मगर उसके पास अच्छे कपडे थे वहाँ?

दबो, कल एक जठाड कंग हो गया आई० ए० सी० का विस्काउण्ट था। अलवार पड़ते पड़ते उसने मेहता और लीना को सुनाया। अवसर जब वे लीना बटते ली बिगोर को लगता जस उसके पास बात करने का कोई विषय ही नहीं। अपनी इस कमजोरी को छिपाने के लिए वह कुछ उठाकर पढ़ने लगता—हालाँकि एकाध बार लीना ने बताया भी कि यह बदतमीजी है।

'क्या था?' लीना स्टोव के पास थी, जस कम सुनती हो, इस तरह कान पर जोर देकर पूछा। वस भी स्टोव की आवाज रसोई में गूँज रही थी। उसने डरते-डरते मेहता का देखा कि वहाँ सुन ता नहीं लिया।

“इण्डियन एयर-लाइन्स का विमान” था । विशोर ने दाहराया । वह और मेहता आगम में मूढ़ा पर बैठे थे । लीना रमोई में पास ही चाय बना रही थी ।

‘विस्काउण्ट नहीं, प्रोफेसर साहब वाइकाउण्ट बोलो ।’ लीना ने हस कर कहा तो फिर वही बाई फोक्सल शीशें और सुच्छता का अहसास कराती दा उपेक्षा मरी आखें उसे तिलमिलाना छोड़ गयी ।

“अरे हा हा, आप का वेण्ट में पड़ी हैं । जरा स्पॉलिंग तो देखो ।” विशोर ज़िद करता रहा ।

‘मेहता साहब जरा दूहे बतलाइए ” वह वहीं से वाली ।

मेहता अचक्का उठा । समा भागने के लहजे में कहा ‘प्रोफेसर साहब, है तो वाइकाउण्ट ही ।’

अरे इन ऑफ़ीसों का कोई एक उच्चारण है ?’ विशोर भड़क उठा “ऑफ़ीस और अमेरिकनो की बात छान दीजिए । इ गलण्ड में लुद हजारों शब्दों के उच्चारण तय नहीं हैं । एक ऑफ़ीस बोलता है डिस्क्शन दूसरा कहेगा डायरक्शन । एक कहेगा ऑफ़िन दूसरा बालेगा-आफ़िन । लिखा है ल्यूटिनेंट स्कीइंग—पड़ रहे हैं, लफ़्टिनेंट स्कीइंग । स्पॉलिंग है जी ए—ओ एल—बोला जा रहा है जेल । आई हेट दिस लम्बेज जो सिर्फ कावेण्ट के बच्चा की बपौनी हो, यानी गरीब आदमी की पहुँच से बाहर हो—द लम्बेज आफ़ इम्पीरियलिस्टिक एण्ड क्यूरोस टस ।’ और इस शब्द के बाद आते ही उसे लगा, जैसे वह मेहता और लीना को नहीं इन दोनों के पीछे कहीं छिपे खड़े दीक्षित साहब का यह सब सुना रहा है । ‘साले हमारी ख़्वाब को कहेंगे बर्ना क्युलर । जानते हैं बर्नाक्युलर माने क्या होता है ? बर्नाक्युलर मीन्स द लम्बेज ऑफ़ रोमन स्लेज जम जमातर के गुलामों की ख़्वाब ।”

उसके गुस्से पर लीना जोर से हँस पड़ी । लेकिन इस पर इतना गुस्सा होने की क्या जरूरत है ? अपनी गलती मान लीजिए न, और नाराज होकर भी वही भाषा बोल रहे हैं जिस पर नाराज हैं । वह हटथी टिकाकर हँसती रही ।

‘गटाप ।’ जाने उसे क्या हुआ कि जोर से उसने अखबार ज़मीन पर पटक कर छटके से उठ खड़ा हुआ । ठीक है, हम कॉन्वेण्ट में नहीं पढ़ें हैं । हमारे उच्चारण ख़राब सही, लेकिन इसी का वेण्ट न तुम्हारा दिमाग़ ख़राब कर दिया है ।” और वह मेहता का स्तब्ध छोड़कर बाहर चला आया—आतं हुए कह आया, ‘मैं गरीब आदमी हूँ लीना लेकिन मेरी अपनी इज्जत है ।’

बाद में अपनी उत्तेजना पर उसे अफ़मोस होना रहा । तीन चार दिन के तनाव रान धोने के बाद उसने खुद लीना से माफी मागी कि गलती उसकी थी, न मालूम उसे क्या हो गया था

क्या हो गया था नहीं, क्या होता चला जा रहा था—ममझ में नहीं आता था ।

उसे जैसे लीना से, उसके सामने पड़ने से डर लगने लगा था। लीना की एक खास तरह की हँस या चिढ़ी मुद्रा है, जिसके सामने वह नवस हो जाता है और या तो कुछ ऊल जलूल वह बठता है या उससे ऐसा ही कुछ हो जाता है। उसे हमेशा खतरा रहता है कि न मालूम किसी मजाक या गम्भीरता में वह क्या-कुछ कह दे और लीना का चेहरा सावले गम्भीर चेहरे में बदल जाये और वहाँ बाई फोकल चरमा उमर उठे।

वह अपनी थोसिस के सिलसिले में रोज साझ को यूनिवर्सिटी लाइब्रेरी जाता था, और लीना इम्तहानों की तयारी करती थी। प्रीवियस में जट्टावन प्रतिशत मम्बर थे और अगर इस बार तयारी ठीक हो जाये तो कमी पूरी करके फस्ट-क्लास लाया जा सकता था। इसलिए नियमित रूप से भेड़ता की मोटर साइकिल दरवाजे पर पाँच बजे आ खड़ी हाती थी। तीनों साथ चाय पीते। उस क्षण लीना सबसे अधिक प्रसन्न रहती। वस प्रायः यह उसकी शिकायत रहती थी कि न तो हम किसी कं यहाँ जाते हैं न किसी को चाय पर बुलाते हैं। तब उस खयाल हुआ था कि सचमुच उसका परिचय कितने कम लोगों से है—ऐसे लोगों से, जिनके साथ सम्पर्क रखने में लीना को प्रसन्नता हो। इसलिए वह अक्सर ही चुप रहता और खयाल रखता कि कहीं चाय से मुड़-मुड़ का आवाज न हो या वह दाता के पीछे जीम लगाकर अपनी प्रिय चस्ती चस्ती। न कर बैठे। जाने क बाद एक दिन यह परम तुष्ट भाव से या ही दाता से जीम लगाकर सास खींच रहा था जिससे आवाज होती थी। लीना खा रही थी। अचानक बोली, 'फार गाइस सेव यह मत करो—मुँह उलटी हो जायगी।' और तब से जब भी वह ऐसी आवाज निकालता कि लीना का यह वाक्य उसकी चस्ती चस्ती की थोच से ही रोक लेता वह और भेड़ता कपड़ा की बातें करने, फिल्मों की बात करते दिल्ली और बम्बई की होटलों की बातें करते—ड्राइविंग और पाटिया के दिलचस्प रिस्ते गुनात मिसेज किंगार आपन रेस आफ रॉचीपुर दखा है? भुनाउ सयासीवाले बिरस पर रेस बिमा है। और वह फिल्मा की कहानियाँ गुनात लगता। लीना उल्लुन मुग्घनासे मुनती रहती या कभी लीना मुनासी मुन श्रीम खान का गीन जरा ज्यादा हा था फ्रूट श्रीम श्रीम-जली आदमश्रीम पता नहा एक दिन पापा का क्या गुस्ता—दस सेर श्रीम उठा लाये।

दस सेर! मन्ना अथाह आश्चर्य ज़िंसाता माई मांग!

'हाँ-हाँ दस सेर! लाना उल्हाह से बतानी बहुत थे—आ भरकर माला। एक बार मूब नीयत भर लो, तो नामल हा जाआग। यह पापा का मिद्धात था। — या— उन जिना दा घाडा की बास्की चार घाडा की बास्की आनी थी—और पापा ने घर भर की घादों उसी मिद्ध की बनवा गी थी।

वह ता बड़ा कामना मिल्क हुआ करता था। भेड़ता प्रणता से बन्ना। रपद की ता पापा ने कभी बिता ही नहीं की। मममल के परल मन्ना मन्ना

के गलीचे हैं उनके पास । आप सोचिए उन दिनों के दो हजार ।" उस समय वह किशोर की उपस्थिति भूल जाती । फस्ट क्लास से नीचे कमी सफर नहीं किया । और पापा मिगार पीने हैं—आप सोचिए अंग्रेज क्लबटर कहा करते थे—'मि० दीक्षित, आपके यहा जो सिगार मिलता है—वह हम इंग्लण्ड में नसीब नहीं है ।' घर के हर आदमी पर एक बरा तो आज भी है । पाच दस रुपया का तो हिसाब ही नहीं मागते ।

'कमाल है ।' वं भाव से मेहता सुनता रहता । वह खुद अच्छे परिवार का था और तनखा के अलावा सो दा सौ घर से मगाकर खूब बर देता था । वह तो यहा सिर्फ इतना का वक्त काट रहा था, वस्तुतः उस तो आगे पढ़ने के लिए इंग्लण्ड जाना था । माफ मुयरा स्माट मा नोजवान मुलायम घन बिना तेल के बालों का गुच्छा सामन भुका रहता और कमी वो या कमी टाई में वह सचमुच प्रभावशाली लगता था । अपन मस्से पर डँगली रखे अक्सर किशोर उसे देखता । साक्ष को प्रायः वह सफेद पण्ट कमीज में आता । आगन में ही नट लगाकर वेडमिण्टन कोट काढ़ लिया जाता—और घण्टा डेट घण्टा दोनों खेलते । मेरे यहा बेकार पड़ा था ' कहकर उमा बल्से और शटल-क्वॉस का पूरा डिब्बा लाकर रख दिया था—तब पड़ाइ होती थी । एक बार उमके आते ही लीना ने वाक्य अचूरा छोड़ दिया 'इह मिलता ही क्या है ?'

और इस सबमें किशोर सचमुच अपने को फालतू ही पाता था । न उसे किसी ने दस सेर त्रीम लाकर दा थी और न टास्की की बड गीटम उसने देखी थी—उसके पास कमीज-कुरते तक सिरक के नहीं रह पड़े ! उसे लगता—अगर मेहता लीना का क्लास फलो होता तो ? वह ये सारी बातें सुनता और दांत पीसता—शेखी यह बग मिफ शेखी पर ज़िन्दा रहता है । एक की बात सुनकर प्रतीभा करता है, दग्वे अब दूसरा पक्ष कौन सी शेखी इसके जयाब में खोजकर लाता है । मेहता के सजे हुए खलने के दम और साडी का फल्ला नमर में खासकर बार बार झुंडा खालकर बसते हुए लीना का व्यस्त भाव से खेलना देखता, तो बचोट तीखी हो जाती—कही-कुछ गलत हो गया है । फिर किताब उठाकर चुपचाप बाहर चल देता और 'आईने-अकबरी' के अनुवाद में पढ़ने की कोशिश करता कि अकबर के प्रिय खेल क्या-क्या थे । उसे बार-बार के दिन याद आते रहते जब बी० ए० में वह लीना का हिस्ट्री का पेपर तयार कराता था और लीना मुग्ध भाव से बरा में होठ खालकर उस एकटक सुनती रहती थी । मन होता था बात आधी छाड़कर उन हाठों को धीरे से चूम ल । कालेज की मोना लिज्जा पनहपुर सीकरी में खड़ी नूरजहाँ बन जाती ! मेहता के मुँह में बड़ले को भी तो ठीक उमी तरह सुनती होगी—और मेहता तो किशोर से हर हालत में आगे है । औरत का मन एक बार अगर आ सक्ता है, तो ! खुद उमके पीछे भी तो वह पागल ही हो उठी थी । कमी भूल सकता है वह लीना के चेहर के उस भाव को जब मेहता ने कहा था, 'मिसेज किशोर आपकी अग्रणी तो सचमुच कमाल की है—मन होता है घण्टो सुनता रहें' कुछ भी

कहिए साहब, कावेष्ट की बान ही जोर है । जो उन स्कूल में एक बार पढ़ लेता है जिंदगी भर उसकी छाव बनी रहती है ।' और तब एक सरत चेहरा, सावल हाठो में दबा स्टेट ऐक्मप्रेस से निकलता हुआ किशोर के मन मस्तिष्क पर छा गया । किशोर डरता था और किसी भी तरह कहने की हिम्मत नहीं जुटा पाता था— गेट आउट आफ माई हाउस यू स्काउण्टल ।

लीना का जन्म दिन था । वह बठा-बठा काच के गिलास में ब्रेड पिस रहा था । लीना नहीं धोकर साड़ी लपेटे निकली थी । गीले बालों को सिर पर पावती की तरह बांध लिया था । भीगी साड़ी को डारी पर फलाती हुई बोली अभी प्रांक्मर महता पाम पोड के सिलसिले में दिल्ली गये थे । कहते थे एक डाक्टर है, जो शर्तिया मस्सा दूर कर देता है ।

"बीस बार तो दूर करा लिया यार । लोग कहत हैं छोड़े का बाल बाँधो— फिर नहीं हाता लेकिन हर बार आ जाता है । इसीलिए मूछे रखनी पड़ती हैं वह अप्सोस से बोला ।

"एक बार दिखा देने में क्या हज है ? लीना ने स्नेह से कहा जब वे छुट जाकर डाक्टर से मिले हैं इतनी परेशानी उठायी है तो एक बार यह भी कर देनी और पता है हमारे लिए जन्म दिन पर क्या लाये हैं ?

क्या ?" उसने हाथ रोककर उत्सुक प्रश्न-मुद्रा में उभर देता ।

लीना अदर से एक डिब्बा उठा लायी । बाबू शेर की रा मिल्क साड़ी थी । लीना बता रही थी 'मिल्ली में तो आजकल ब्रेज है रा मिल्क' ।"

किशोर की हिम्मत छूट कर बपड़ा देने में का नहा पड़ रही थी । मूछे गले से गन्ध छलकर कहा यह तो बड़ी कीमती हागी । सो मचा-तो में कम क्या होगा दाम ।

दाम तो नहीं बताय लेकिन हाँ कसब कम क्या हागी । एक ग्लाउज-बीस भी है । उस्ताद और आह्लाद से लीना ने माड़ी के नीचे रखे ग्लाउज-बीस को लीव लिया । हमार पास तो मच अच्छी माड़ी भी नहीं रह गयी कोई । बड़ी गानी के बगल की चार में पड़ी हैं ।

कम ? किशोर ने मोलेपन में पूछा माठा-ग्लाउज ही न्थि है ? और कपड़ नहीं न्थि ?

लीना जमो मचा धो बमो ही रह गयी । बड़ी मुश्किल सिर्फ स्नाना ही पूछा क्या मतलब ?

किशोर ने कोई जवाब नहीं दिया और डिब्बा एक बार निगमनकर ग्लाउज पिनन मगा । तभी उसके कंधों का छूँकर करीब-नरारा चीन्हा आवाज में स्नाना ने पूछा मैं पूछा हूँ मतलब बनाया ?

मल्ल-म किशोर ने उभर मुह धुमाया और दुपट्टी ऊँची आवाज में पूछा

‘मारोगी मुझे ? लो मागे नहीं बताता मतलब ? कर लो जो तुम्हारा मन हा। मुझे भी बाप का चपरासी समझ लिया है, जा छुड़किया मे आ जायेगा ? अच्छा हूँ ? मुझे दिखायी नहीं दता ? हूँ मुझे मिलता ही क्या है ’

लीना का स्वर गिर गया। वह न चीखी, न चिल्लाई। बहुत सम्त जावाज म वाली “देखो किशोर आज स—बल्कि इसी सण से हम लोग साथ नहीं रहने। मैं भी सोच रही थी कि अब तुमसे बात कर ही ली जाये। न तुम अपने हो। वहरें। तुम सिर्फ इन्फिरियारिटी काम्प्लक्स के मारे हुए हो। इसलिए तुम्हें मेरी हर बात वह नहीं लगती, जो होती है। उससे पीछे और-और बातें दीखती हैं। मैं समझती थी कि मनस, बातचीत उठन-बठने के तौर-तरीके और व्यवहार ऐसी चीजें हैं जिन्हें बहुत जल्दी बदला जा सकता है। सीखा और भुलाया जा सकता है। लेकिन इस काम्प्लक्स का ता कोई इलाज ही नहीं तुम्हें मेरे हँसने-बोलने चालने-मचने खली और दिखावा लगता है।”

हा हा, मैं जाहिल हूँ, बेवकूफ हूँ।” झटके से किशोर उठा और पूरी ताकत से काँच के गिलास को जमीन पर पटककर बकता रहा। साहब की बच्ची कहती हैं हमें इन्फिरियारिटी काम्प्लक्स है। हम बातचीत उठन बठने के मनस नहीं हैं। हम कन्जूस और बदजवान हैं। बड़े बाप की बटी और मिठ-बाली तो आप है। या ता जो मन म आये, तो करने दो। या ये सब मुनो जिन्दगी तबाह करके रख दो। भाई मामी के पास नहीं गये। मा-बाप की तरफ उद्धान लिखाया-पढ़ाया और गाढ़ा के बाद से उहे पैसे की मदद नहीं कर सके। अपने लिए एक कमाल नहीं लिया। कुछ बचे, तो लें। दिन रात कॉलेज में मेहनत करो, थोसिस के बहाने न्यूशन करन जाओ और यहाँ दिल में मरी है। कोठी बँगला, नौकर चाकर बाप की नवाबी।”

देखो किशोर, पापा को

“बीस बार कहूँगा। रोक तू मुझे रोक। नबलची बन्दर कही क। साले अंग्रेजा की नइल कर-करवे, उनकें जूत चाट चाटकर आज साहब बन गये हैं। हा-हा हा साहब ! दस सर श्रीम लाये थे बोस्की की चादरें दा दो हजार के गलीचे।

पता नहीं क्या-क्या बकता-बकता वह बाहर चला गया और मारे दिन अपन आपसे बातें करता सड़को पर भटकता रहा। दिन छिपे के बाद जब डरता डरता आया तो दरवाजे पर ताला था और लीना चली गयी थी।

वह ‘पास्ट’—अतात आठ साल पहल का है। दूसरा अतीत है आठ साल का यह काल—पानी अगले साल उसके खुद बलकत्ता चमे आन के बाद बीता हुआ समय। उसका एक विद्यार्थी बहुत बड़ी जगह घर-जमाई बनकर आया था, और उसने किशोर को पार-सौ का स्टाट दिया था। यह इस अतीत का प्रारम्भ है।

‘सारा खेल रुपये का है और अब रुपया कमना है’ उसने निश्चय लिया और

भूत की तरह रुपये के पीछे लग गया—भूल गया क्या कोई लीना है कही कोई दीक्षित साहब हैं और कही कोई अतीत है। एक नौकरी पर पाँच टिकाकर दूसरी का सौदा होना रहा पहला तल्ला दूसरा तल्ला और एक दिन लिफ्ट उम दमवें तल्ले के इस घम्वर में ले आयी जिसने दरवाजे पर लिखा था, 'जनरल मनेजर'

मगर नहीं, सम्पक लीना और दीक्षित साहब से न रहा हो, और उसने दो साल पता न लगाया हो कि लीना कहीं है—भूला वह दोनों में से एक को मी नहीं था। आज तो उसे लगता है, लीना नाम का एक परदा था—जिसके हटते ही उसने अपने-आपको दीक्षित साहब के रुख रु गडे पाया। परदा कहना भी गलत होगा वह सिर्फ एक मेज का तरता थी और उस पर बोहनियाँ टिकाकर वह और दीक्षित साहब पजा लडा रहे थे—अपनी-अपनी शक्ति आजमा रहे थे। जिस दिन उसने जाना कि लीना ने लक्कर शिप ले ली है उस दिन उसे सचमुच बहुत सतोष हुआ। 'चस्मी ! चस्मी !' की अमि व्यक्त के साथ उसने महसूस किया कि अपराध का बोझ उसकी छाती से दूर हो गया है। दूसरे तरीके से उसने यह सदेश भी भिजवा दिया कि लीना चाहे तो किसी के साथ—चाहे तो मेहता के साथ ही—नटिल हो जाये उसे कोई आपत्ति नहीं होगी। वह चाहेगी तो कानूनन भी मरसक सब कुछ करने को सयार है उसे लीना हैं कोई शिक्वायत कोई द्वेष नहीं है। बाद में सुना, मेहता इ ग्लण्ड से ही किमी को ले आया है

वहरहाल, इस निश्चय के साथ ही उसे लगा कि वह लीना को भुला सकने में सफल हो गया है। सभी से गलत निष्पत्ति हो जाते हैं—पूरे होश हवास में सारा आगा पीछा सोचने के बावजूद। हम लोग एक दूसरे के लायक नहीं थे। यो अक्सर ही उठते बैठते खाते पीते लीना के साथ वाले दिना की तस्वीरें निमाग में कौंधती थी—और आज यह आक सकना उसके लिए असम्भव हो गया है कि कितनी घटनाएँ और बात वास्तव में हुई थी और कितनी उसकी अपनी कल्पना की उपज हैं। उनकी असलियत में उसे खुद भी विश्वास नहीं है और उसने यह तो मान ही लिया है कि उन दिनों जिस अस्वामाधिक मानसिक तनाव और दबाव में वह शुबर रहा था उसके रहते हुए बातों को सही परिप्रेक्ष्य में ले सकना सचमुच उसके लिए असम्भव था। साथ ही वह उस बात का भी अच्छी तरह ज्ञानता था कि लीना मर जायेगी आत्महत्या कर लेगी। लेकिन न तो किसी के साथ सटिल होगी न उसके सामने मुकेशी भुक्ता पछताना समझौता करना उसके मून में ही नहीं है। एक तो वह खुद इतनी निष्पक्ष दृढ़ और फिर उसके अपसारी-वग के सत्कार जो व्यक्ति को तोड़ देते हैं बिसराकर चूर चूर कर देते हैं लेकिन भुक्ने नहीं देते उसकी रंग रंग में सिंगरेटी से काले-पडे हाठ और बार्ड फोकल चरमे से झाकती काली घुर्राट आँखें तरती है

किसी ने बताया था कि दीक्षित साहब हाट फेल हो जान स चल बस है। न

उसे अफसोस हुआ, न खुशी। वे रहे न रहें—उसकी दुनिया में कोई पक्का नहीं पड़ता। हा वह प्रतीक्षा जरूर कहीं मन में उन दिनों करता रहा कि उनकी मृत्यु की सूचना तो कम-से कम उम्रे मिलेगी ही। लेकिन कोई सूचना नहीं दी गयी। 'स्टेट्समन' के पर्सनल कॉलम में उनके न रहने की सूचना को जरूर पक्का कर लिया। लीना ने मसूरी में हैबमन्स के सामने चलते हुए कहा था (उसे अभी भी वह जगह याद है) हमारी अपनी स्वतंत्र जिंदगी है। पापा उसमें नहीं जाते हैं। लेकिन वह एक झूठ था—बहुत बड़ा और यथार्थता दायक झूठ क्योंकि जिस दिन उन्होंने लीना को स्टेशन पर विदा किया था पांच हजार के साथ बंद लिफाफे में बठकर वे मुद किशोर की जिंदगी में भी घुस आये थे और अनचाहे महमान की तरह उसके अस्तित्व पर हावी हो गये थे—जिनसे सान जम में वह जाने को नहीं कह सकता था और जिनकी उपस्थिति उसकी नस-नस को तड़काये दे रही थी।

हा जिस दिन लीना नाम का परदा बीच से हटा या उमने जाना कि लीना सिर्फ मेज का सल्ला थी और वे दोनों उस पर अपनी-अपनी कुहनियाँ टिकाये शक्ति आजमा रहे थे उसी दिन महसूस किया कि उसकी असली लड़ाई दीक्षित साहब से है।

वह मनजर हुआ, तो पहली बात उसके मन में उभरी—दीक्षित साहब अब तो कमिश्नर होकर रिटायर हो गये होंगे। इनकम टक्स के मामलों में तो उनका कोई जवाब ही नहीं है। सरकारी आदमी रहे हैं—बीस ताल्लुकात होंगे और सारी भीतरी पोलें उन्हें पता होगी। सेठ से कहकर क्यों न उन्हें यहाँ बुलवा लिया जाये, उसके नीचे काम करने और बेग्यर में आन से पहले खट-खट करके कहा करेंगे 'मे आई कम इन सर?' वह बठा-बठा डाकी फाइल के कागजों पर दस्तखत करता रहेगा और वे अदब से एक ओर खड़े रहेंगे। वह भारी आवाज में कहेगा, 'मिस्टर दीक्षित आपने वह जुपीटर-प्लार्डबुड का एनुअल स्टेटमेंट तयार नहीं कराया? उस परसा जाना है। उसकी ही वजह से नये परमिट बहुत ढिले हो रहे हैं—।' और कल्पना में मेज के पास खड़े दीक्षित साहब से यह सब कहकर उसे आत्मिक प्रमत्तता हुई। तभी गवा हुई—उनके सामने वह यह सब कुछ कह पायेगा? उस समय न उसका स्वर टुकलायेगा, न जबान रुक-रुकाने लगेगी? असम्भव। वे बात जसी तब निगारहें—वह चेहरे की अभेद्य भाव—हीनता उस सचका सामना वह कभी भी नहीं कर पायेगा यहाँ आकर वे जिंदगी-भर कोई काम न करें—वह उनके सामने कभी भी जवान नहीं खोल मनेगा। चौथे-पाँचवें क्लास में जिन मिमियन साहब से उसने बेन खाये हैं, उन्हें आज भी चाहे सवासो रुपये ही मिलते हों, उनके सामने उसकी आँख नहीं उठ सकती। वह भय अब उसकी प्रकृति बन गया है।

उसे याद है चुपके-से पीछे वाली बरामदे के पास वाली सिड़की के नीचे वह

माइविल गड़ी भरता और बिना जूता की आवाज किये लीना की पगल चला जाता। बाहर निकलता, तब तब दीक्षित साहब आ गये होते—या तो बीच वाले कमरे में चाय पी रह होत या बाहर जलसिगियन कुत्ते को लिए लान में घटल बदमी कर रह हात मापी को तरह-तगह के आदेश दे रह होते। चोर की तरह वह बरामदा छतरता—बड़ी निगाह न पड़ जाय उस बुला न लें। साइकिल लेकर ऐसा हड़बड़ाता हुआ निकलता, माना व भी पीछे पीछ आ रह हो। बाहर सड़क पर आकर गुली सॉम लेता और फिर इस तरह घटवता जस पानी की रस घाट सतह के नीचे दबा जा रहा हो। वे देख लेते तो बुला भी लेते किशोर घट कस हो? हा चाय पी ला। उनके सामने रहना कितना बघटकर अनुभव था। व बहुत ही कम बोलते थे सिगार को होंठों में धुमाकर पपोलत हुए कुछ सांगते रहने बार-बार माचिस जलाने रहने—लेकिन व दो क्षण उसके लिए हजार स्मृतियों में बठन से ज्यादा दुस्सह हो उठत। जो टीक हू। वहुने मे उस चक्कर आ-जाता, हकलाहट बढ़ जाती और पिढलिया तक पसीना तर आता। दीक्षित साहब ने कभी उससे कुछ नहा कहा आज लगता है कुछ न कहना उनका ब्रूफ रिजव रहना नहा उस बात बरन लामक न समझना था। उनका अपसरी दरवाजा बाहर का रीव और घर का—लीना तक का—मय कुछ इस तरह उसकी चेतना पर छा-गया था कि वह मजबूर हो उठता था।

दूसरी द्वारा सौंपा गया मय व्यक्तियों के लिए कितना घातक और प्राणात्क हो सकता है, यह बात तक स चाह समझ में न आती हो, लेकिन खुद किशोर जानता है, उसकी सारी शक्तियाँ इन आठ वर्षों में सिर्फ उसी मय से लड़ने में लगी रही हैं। नौकरियाँ बदलना, सासारिक दृष्टि में सफल हात चले जाना तो सिर्फ उस मय के सामने बार बार पराजित होकर नय नये हृदयारो से लड़ने जसा रहा है। ईसपके मेंढक की तरह वह मानो इन एक से एक ठ की जगहों पर खड हो होकर हर बार अपने-आपस सवाल करता क्या बल जतना बड़ा था? क्या अभी भी वह दीक्षित साहब से डरता है? क्या अभी भी वह उनसे छोटो है? तब उसे खयाल आता कि व ता जान कब व गुजर चुक है।

बड़ी-बड़ी पार्टियाँ में वह कुल्ला से घुरी काँटों का इस्तमाल करता भीमती शराब पीता, कोई पुर मजाक बात कहता या रस्तराजों में पाव पाँच दस रस रूपया की टिप छोड़ता बयरा चपरासिया व सलाम जता तो वही बाई फोक्स घर में स मौकता दो आँखें—आँखें नही, आँखा का निराकार अहसास हाता और उह वह चुनौती देकर दिखाता रहता—तुमने कभी पट्टह रूपया की टिप छोड़ी है? मन का गहगई में उस लगता ही नही था कि व नही हैं। और ऐस मौकों पर वह टीक वही मुद्रा धारण करन की कोशिश करता जो उसके हिमाव में दीक्षित साहब ऐस मौकों पर धारण कर सकत थे—वही सचत लापरवाही हजामत बनात समय घण्टा वह अपने चहरे का जल्ग-

साइकिल खड़ी करता और बिना जूतों की आवाज बिये लीना की पगने घंग जाता। बाहर निकलता तब तब दीक्षित साहब आ गये होते—या तो बीच बाल कमर में धाय पी रह होते या बाहर अलसगियन कुर्सी को लिए लान में चहल बंदमी कर रहे हात माली को तरह-तरह के आदेश दे रह हात। चार की तरह वह बरामदा उतरता—वही निगाह न पड़ जाय उसे बुला न ले। साइकिल लेकर ऐसा हड़बड़ाता हुआ निकलता माना ये भी पीछे पीछे आ रहे हो। बाहर सड़क पर आकर गुली राग लेता और फिर उस तरह झटकता जस पानी की दम घाट सतह के नीचे दबा जा रहा हो वे देख लेते ता बुला भी लेते किशोर बट कस हो? लो, धाय पी ला। 'उनके सामने रहना कितना कष्टकर अनुभव था। वे बहुत ही कम बोलते थे सिगार की होठा में धुमाकर पपोलत हुए कुछ साबते रहने बार-बार माचिस जलाते रहते—लेकिन वे दो दण उसक लिए हजार म्मतांगी में बठने से ज्यादा दुस्तद हो उठते। जी ठीक हूँ। कहने में उसे चक्कर आ-जाता हकलाहट बढ़ जाती और पिढलिया तक पसीना तर आता। दीक्षित साहब न कभी उसस कुछ नहा कहा आज लगता है कुछ न कहना उनका बहुत रिजब रहना नहीं, उस घात करन लायक न समयना था। उनका अपसरी दबदबा बाहर का रोव और घर का—लीना तक का—मय कुछ इस तरह उसकी घेतना पर छा गया था कि वह मजबूर हो उठता था

दूसरों द्वारा सौंपा गया मय व्यक्तियों के लिए कितना घातक और प्राणातक हो सकता है, यह बात तक से चाहे समय में न आती हो, लेकिन खुद किशोर जानता है, उसकी सारी शक्तियाँ इन आठ वर्षों में सिर्फ उसी मय से लड़ने में लगी रही हैं नौकरियों बदलना सासारिक दृष्टि में सफल होते चले जाना सो सिर्फ उस मय के सामने बार बार पराजित होकर नय नय हृदयमारा से लड़ने जाता रहा है ईसप के मडक की तरह वह मानो इन एक से एक ऊँची जगहों पर सडे हो होकर हर बार अपने-आपस सवाल करता क्या बल इतना बड़ा था? क्या अभी भी वह दीक्षित साहब से डरता है? क्या अभी भी वह उनस छाटा है? तब उस खयाल आता कि क्या ता जान क्या क गुजर चुके है

बड़ी-बड़ी पार्टियां में वह कुलता से सुरी काँटा का इस्तेमाल करता कामतों शराबें पीता, कोई पूर मजाक बात कहता, या रेस्तराँओं में पाच पाँच, दस दस रुपया की टिप छाड़ता, बयरा चपरासिया न सलाम लेता तो कही बाई फोबल चरम स झकिला दो आँखें—आँसे नहीं आँता का निराकार अहसास हाता और उह वह चुनौती देकर दिखाता रहता—तुमने कभी पदरह रुपया की टिप छोड़ी है? मन की महारई में उस लगता ही नहीं था कि क्या नहीं है। और ऐस मौकों पर वह ठीक वही मुग्य धारण करन की कोशिश करता जा उसके हिमाव से दीक्षित साहब ऐस मौका पर धारण कर सकत थे—वही सन्नेत लापरवाह हजामत बनात समय धण्टो वह अपने चेहर का बलग-

अलग कोणा से देखता—विधर से वह दीर्घित साहब जना रौंरीला लगता है उसने चेहरा अधिक रौंरीला करन के लिए मोठे फ्रेम का चश्मा भी ले लिया था जिसे वह अटके से उतारना जीर लगाता था

हाल एण्डसन स हज़ार रुपये का नया सूट बनकर आया तो पहनने से पहले उसने मन-ही मन कहा, 'तुमन देखा भी है ऐसा सूट ? पहना तो मुँह से निकला 'आखें फटी रह जायेंगी !' लज्जत बरदी म जब डान्बर अदब से लपककर नार का दरवाजा खोलता, तो वह किमी से नि शब्द कहता 'अभी तक उसी हिल्मन को धकेलते होगे !' किमी कमचारी की गलती पर उसे माफ करने को मन होता तभी ध्यान आता, 'बे' उस समय क्या रक्या दिखान ? और तभी भारी सख्त आवाज उसके गने से निकलती तो-नो, मिस्टर सेम ! मैं पूछता हूँ, ऐसा हुआ ही क्या ? आप जानते हैं, मैं गलती किसी भी हालत में बरदास्त नहीं कर सकता ' उसे लगता, वही इस बात को वह भी सुन रहा है और आवाज की मरती बढ़ जाती किमी बहुत जल्द्री काम से बोई छुट्टी माँगता तो ऐप्लीकेशन स्वीकार करते वक्त उसे सिगरेट बाल होठों का खयाल हा आता और हाथ रक जाता

शुरू से ही एक अजीब विडिये मरी घणा भर गयी थी उस, नौकरी चाहने वाला के प्रति—ऐसे प्रायना पत्र वह बिना पढ़े फाड़ देता और कोई मामने ही पड़ जाये, तो बेमुरवती स कह देता, भूले मर रहे हो, तो यहा क्या करन को रुके हो ? अपने घर क्या नहीं जाते ? कोई जल्द्री है जि कलकता रहकर नौकरी करो ? कलक्टर के दामाद हो, जो थोड़ म काम नहीं चलता ? मैंन कहा न यहा कोई जगह नहीं है। नहीं सुना ?' और बात पूरी होन से पहले ही बाहर खड़े बरे के सिर पर घण्टी घनघना उठती वह होता तो ठीक यही व्यवहार करता—मैं तो चुप हूँ, 'उमने तो इतनी देर में घणके देकर निकलवा लिया होता। उसे फुरसत थी इतना सब बकवास सुनने की ? इण्टरपू म जान बूझकर जाड़े ढेके प्रश्न पूछकर प्रार्थी को नवस कर दन में उसे अद्भुत त्रूर सतोष मिगता ऐसे लोगो को तो बरदास्त कर सकना ही उमके लिए मुश्किल था जो हकालत हैं, बात ठीक स नहा कर पाते, पमीने-पसीन से आते हैं, मसले हुए बिना इस्त्री के, सम्ते स बपड़े पहनकर आते हैं और बाइक पर बिस्काउण्ट बोलते हैं—वहाँ उमे थपों पहले का किशोर दिया देता है—वहाँ वह उसे बिल्कुल बिल्कुल नहीं दगना चाहता म किशोर को घरलेत तरे का कोई हक नहा है। ऐसी परीक्षा म असफल हर प्रार्थी उसे फिजूल फाँट देता वह तरह लगता था।

सिगरेट पीते-पीते अचानक उसे खयाल सरे सरे वह जब बहुत चिन्ता-मग्न होता तो आधी पी हुई, सिगरेट को ही देता था। हाट उसका हाथ ने बग पी हुई सिगरेट को ऐस-उ म मरोडे में भी खासा खयाल आता—ये बारह पैसे कमी बहुत कामनी थे। कनीति-उ-ने सो रुपये देने की बात आती और

उसे ध्यान आता कि 'उत्त' रुपये की चिन्ता ही नहीं थी, ता वह छटके-स रुपये लिखकर दस्तपत्र कर देता—'बह' उससे 'किस बात में बम है ?' अचानक जब वह पड़ होकर बाने करता तो सिगरेट का टिप्पणी उभी तरह उसका हाथ में खलता, जस लीना को रिदा करते समय 'उत्ते' करते देगा था। स्टेट-ऐक्मप्रस के सिवा कोई सिगरेट खान पर जाती ही नहीं थी। जब उसने पहले की उधकाकर इबार करना सीखा था तो अन्तर उस दो बात साथ याद जाती थी—जिस फिल्म में या व्यक्ति को उसने इस तरह की उधकाकर इबार करते देगा था, उसकी कभी मूबमूरत नकल की है, दूसरी यह कि 'तुम' ता अभी भी फिर हिलाकर इबार करते होगे—मोल्दवा सदी का तरीका। कीमती रेशम का डू सिंग गाउन पहनकर मिगार होठों में धुमा धुमाकर पपोलते हुए, जब वह विचार मगन बालकनी में खड़ा होता तो कई क्षण उसे भ्रम हा जाता मानो 'वह' खुद दरवाजे पर ही ठिठका खड़ा है या डाइग्लूम में प्रतीत कर रहा है और यह धमन वाला व्यक्ति स्वयं नहीं—दीक्षित है। समता कमे आम विश्वास और रोच से वह चहल कदमी कर रहा है—जसे एरिस्टोफेसी उसके स्न की बूंद बूंद में धुल गई है—ऐसी धान से भला 'वह' क्या लाकर भमेगा। कभी किसी कमजोर क्षण में अपने आपसे एक सवाल करता—उस दीक्षित का का भूत तो नहीं आता ? गायद इस ही भूत आना कहते हैं ? फिर अपने को पिडक देता भूत भूत

तुम्हरे बाप न भी कभी यह अज्ञात देखा ?' बाइग फ़ोन में कदम रखते ही पहला वाक्य मन में आया। किसी दूकान के सामने से गुजरते हुए कभी किमा चीज को खरीदने की जरूरत महसूस होती थी एक कदम उधर बढ़ाता भी—सभी प्यान जाता वह इस दूकान में कदम रखना अपनी बेज्जती समझता—और वह उल्ट पाव लौट जाता। डाइवर को नोट देकर भजता। किसी भी व्यक्ति को देखकर पहला प्रश्न मन में उठता—जिसे वह किसी न किसी तरह से पूछ ही लता—'किस कितना मिलना होगा ?' वह जादमी की कीमत उसको मिलने वाले पस से लगाता। ज्यादा पस मिलने वाले के प्रति अपने लापरवाह व्यंग्यार का उस सचमुच जफास होता।

सिनेमाओं में मगजीना में जासपास की दुनिया में वह ध्यान से देखता सुनता कि ऊंची पास्ट और पोजीशन वाले लोग कैसे बोलते हैं कैसे हसते हैं किस समय उनके चेहर पर क्या भाव रहता है कस खड हात हैं और काम तथा आराम के समय उनके क्या क्या पोज रहते हैं। और जब उन्हें विव्याज सरलता से नकल कर लेता तो सुनाता सुना साहब बहादुर के नये अपसरो के उठने बैठने, बोलने चालने के ढंग हैं। तुम सोहलवी सदी के अग्रजों की नकल करके अपने को बड़ा भाइन लगाते हो। नीचे वाले कहते बस बड़ा सस्त है। ता मन में कोई कठ उठता देखा उसे कहते हैं अपसरी। उस गाँव में तुम राजा बन बैठे हैं। यहाँ आओ तो आनन्द का भाव पता चले। फिर सताप से उसका चहुरा खिल उठता, द रिम्पकट आइ बमाण्ड वाज यद

एन अनरीय गइज्ड ड्रीम फॉर यू *★

जब कभी वह घबरा जाना, या परेसानियो से बेचन हो उठता और उमक घुटन जवाब दे जात, तब वह 'उसके' उस सुप्रीम-वार्डनेस का ध्यान करता, और सचमुच ही मन ॥ एक उत्साह और शक्ति भर उठती। चेतना में कभी प्रसन्न-मुख का विस्मय दण भी आता—कसी अजीब बात है ! मैं 'उसी के' हथियारों से उससे लड़ रहा हूँ सफलतापूर्वक लड़ रहा हूँ

इस प्रकार एक अनवरत, अधोपित युद्ध था, जो हर पल अस्तित्व के रेशे रेशे में चल रहा था और उस की उपस्थिति ही उसकी जीवनी शक्ति का पर्याय बन गयी थी, जो घोंद पर चढ़े उदित सवार की तरह ऐडें मारती थी, कोचती थी—और यह सब उसके लिए सास लेन जसा स्वाभाविक हो उठा था

लेक से उठकर किंगोर गाड़ी के पास आया तो उसका सिर घूम रहा था अयमनस्क भाव से दरवाजे के हैण्डिल वाली चाबी का सूराल टटोलता रहा फिर इजन स्टार्ट करके देर तक यो ही बठा बाहर देखता रहा अत्यन्त तटस्थ, निर्वेद जसे ऊँचाई पर खड़े होकर नीचे घाटी में पड़े घायल, पस्त मिपाही को देखकर मन में कण्ठ उमड़ आयी है। उसकी आँखें फिर सजल हो आयी—दो दुष्ट पशुशक्तियों के बीच लीना एक निरीह लड़की लीना—पिस गयी !

'क्या हम जतीत का भुला नहीं सकते ?' मिशोर को लगा, यह लीना न माफी नहीं मांगी—पहली बार दीक्षित साहब के वास्तव में मर जान की खबर दी है ता सब ही तात्काल आजमाता दूसरा हाथ लीना का नहीं था ? लीना तो सिर्फ मेज का एक सक्ता थी—वह दूसरा हाथ 'उसका' था बेचारा ! उसे पहली बार लगा—महाराणा प्रताप के टूट जाने की खबर से अकबर को कसा लगा होगा एक थीर प्रतिद्वंद्वी की पराजय पर कसा लगता है

प्लट पर आकर उसने सबसे पहले रामन का फोन किया "रामन, सुबह बटन को फोन करना है दिल्ली मैं शायद नहीं जा-पाऊँगा। तबीयत अच्छी नहीं है फिर बातें तो सारी अंतिम रूप से बड़े बाबू को ही तप करनी हैं—मैं सुबह उनसे बातें कर दूँगा '

फिर मानो अपने को जस-जस उठाकर उसने पलंग पर डाल दिया। फेफड़ों में गहरी साँस लेकर धीरे धीरे छोड़ी, तो मटसूस हुआ, वह बहुत-बहुत थक गया है तीस पतीस की उम्र तक आल्मी में उत्साह होता है और हर नया जगह उसे ललकार कर बुलाती है चालीस-बयालीस तक थकान शक्तियाँ की चूस डालती है ऐसे झीले तन और मन से अब खिदगी का डरों बदलना नये तिरों से नयी जिम्मेदारियों को ओढ़ना और फिर आखिर उस अब जम्हरत भी क्या है ? 'वह' अब रह ही कहा गया जो

* मेरा जो रोब है, वह तुम्हें सपने में भी नसीब नहीं था ।

सेलर

उस दिन शीशे में भुँह देखते समय अनायास ही जब उसकी नजर अपनी आँखों पर पड़ी तो लगा, जैसे कुछ खो सा गया हो। कब खोया, यह पता उसे नहीं चल सका, क्योंकि पिछली बार शीशे में जब उसने अपनी आँखें देखी थी, यह कोशिश करने पर भी उसे याद नहीं आया। कुछ देर तक उसी प्रकार एक हाथ में क्षीशा लिये वह अनिश्चित, उदासीन भाव से देखता रहा—छुली-छुली, गूँथ-सी आँखें जैसे दो दरवाज़े अपने आप खुल गये हो जिनके बीच से दूर दूर तक फला उजाड़ दिखायी देता है।

और उस दिन, इसबार की उस सुबह, कम्पनी बाग में यदि कोई उसे देखता तो उसकी आँखें उस पर एक ऐसी अमिट छाप छोड़ जाता, जो किसी अदृश्य छायी की भाँति उससे चिपटी रहती।

परन्तु उस दिन कम्पनी बाग में लोग नहीं थे। अकेले उसने सुरक्षित महसूस किया। दो घास के हिस्सों के बीच बनी पगडंडी पर लाल बजरी उसके पदों के नीचे चर-चर करती रही। सूरज की तिरछी किरणें यूकलिप्टस के लम्बे पेड़ों के ऊपरी भाग पर धमक रही थी। और फूल थे लाल हरे पीले। दो चार के अति रक्त अथवा फूलों के नाम उसे मावूम नहीं थे, न कभी इसकी आवश्यकता उसने महसूस की। उस सुबह हवा ठंडी थी।

उस याद आया कि प्रातः शीश में उसने देखा था कि आँखा में से कुछ गिर गया है या उही में कुछ खो गया हो। परन्तु उसने चिंता नहीं की।

फिर सुबह की ताजी हवा में वह सब भूल गया। उसके बाल हवा में उड़ने लगे, रस्सी के खुले सिरे की भाँति। काल बालों में जब पहली बार उसने कुछ सफेद बाल दले थे, तब भी एक हाथ में क्षीशा पकड़े वह घनी उदासीनता के घेरे में सिमट गया था। अब उनसे अभ्यस्त हो गया है। आँखा से भी अभ्यस्त हो जायगा।

लगभग एक ही मास तो हुआ, ठीक से उसे याद नहीं आया, जब ससुर ने अपने कमर में बुलाकर छोटी-सी भूमिका के बाद कहा था कि अपने और अपने पुत्र के खर्च के जो सी रुपये वह हर महीने देता है वह इस बढ़ती हुई महंगाई में पर्याप्त नहीं हैं। अपने व्यय का सत्य साबित करने के लिए उन्होंने आटा, दाल धी, चावल आदि का नाम बनलाय थे। फिर बिजली पानी महरी और उसका कमरा और उसकी मुकी

हुई आँखें देखकर दबे स्वर में उन्होंने यह भी कहा था कि उसका पुत्र बड़ा होता जा रहा है, जिससे उसकी खुराक भी बढ़ती जाती है। उसे चुप देखकर वे आत्मीयता भरे स्वर में कहने लगे, 'मैं अकेला होता तो कोई बात नहीं थी। तुम्हारे साले भी अब बड़ हो गये हैं, उनकी सत्तान फल रही है और अपनी कमाई में से वे किसी दूसरे को खिजाना नहीं चाहते। और आजकल तो अपने खून के रिश्ता तक को कोई नहीं पूछता। फिर बेटा' एक क्षण रुककर कहा था, "अलग भवान लेकर रहते तो क्या सौ रुपया में गुजारा होता? फिर यहाँ सब तरह के आराम हैं, अपन घर की तरह तो सब कुछ है। तुम्हारी सास तुम्हारे बेटे से जितना प्रेम करती है इतना उसे किसी पोते से भी नहीं है और यह बात बहुतों की आँखों में खटकती है। तुमसे कुछ छिपा तो नहीं है।

और वह निरीह भाव से सब कुछ सुनता रहा, मानो वह सब किसी अन्य व्यक्ति के विषय में कहा जा रहा हो। फिर अपने कमरे में वापस लौट आया था।

मुन्नू न होता तो वह वही एक कमरा बिराये पर लेकर अपना अलग ठिकाना कर लेता। मुन्नू को लेकर अकेले कैसे रहेगा? अलग न रहने का उसके पास यह सबसे बड़ा धास्न था। फिर अला रहकर अन्य चिन्ताएँ उसे घेर लेंगी—खाने की, घर-गृहस्थी की देखभाल। ससुर की बात में उस विश्वास नहीं था। वे सब मिलकर उसे लूटना चाहते हैं उसे सीधा-सादा समझकर उसका फायदा उठा रहे हैं। नहीं वह सौ से अधिक नष्ट देगा।

अचानक अपने सामने बेंच पर एक लडके को बैठ पड़ते देखकर वह चौंक-सा गया। उसे लगा, जस वह धीरी करता हुआ पकड़ लिया गया है। यदि वह उस लडके को दूर से ही देख लेता तो चुपचाप पीछे मुड़ जाता या दायें-बायें निकल जाता। वह लडके को कुछ क्षण तक झुके पड़ते देखता रहा और धीरे धीरे उसके पास बच पर बैठन की उसकी इच्छा जोर पकड़ती गई। वह दबे-भाव बच के दूसरे कोन पर जा बठा। लडके ने उस पर एक दृष्टि डाली और कुछ देर तक उस देखता रहा, मानो इस प्रकार का आदमी वह पहली बार देख रहा हो। फिर अपनी पुस्तक पर झुक गया। लडके का अपनी तरफ देखते वक्त वह मुस्कराया, परंतु कोई उत्तर न पाकर वह सीधा कुछ दूर पर बिछरे ऐतिहासिक खड्करो को देखने लगा।

उसकी पत्नी जीवित होती तो दूसरी बात थी। अब उसका वहाँ रहना सबका अखरने लगा है। उसके ससुर का पिचका हुआ बिना दातो का चेहरा उसके सामने आ गया। उसे थोड़ी घबराहट-सी महसूस होने लगी। वे फिर तकाजा करने और उसे याद दिलावेंगे। उसके बड़े साले की पत्नी प्रायः कंकण स्वर में कहती सुनायी देती कि उससे इतनी रोटियाँ सेंकी नहीं जाती। और जब उसकी सास उससे धीम स्वर में कहती कि नीचे दामाद मुन रहा है, तो उसकी आवाज और भीतेज हो जाती "शुभ किसी का डर नहीं है। सच्ची बातें कहने में हिचकूँ, ऐसी औरत मैं नहीं हूँ।" और वह नीचे

अपनी कोठरी में बठा सत्र सुनता था। कोठरी के बाहर दालान के ऊपर लगे जाल में से ऊपर की सब बातें सुनायी देती थी।

“माफ कीजिये” पास बैठे छात्र ने पूछा, ‘आपको मात्रूम है कि सूर्यग्रहण और चन्द्रग्रहण पढ़ने के क्या कारण हैं?’

वह चौंक सा गया। कुछ देर तक फटी फटी आँखों से वह छात्र की ओर देखता रहा, जिसकी आँखों में हँसी छिपी हुई थी। सूर्यग्रहण चन्द्रग्रहण उसके दिमाग में दा शूय बड़ी तेजी से पुडपुड लगाने लगे, माँगे एक दूसरे का पीछा कर रहे हो।

“आपने भूगोल तो पढ़ा ही होगा?” छात्र ने पूछा। फिर क्षण भर तक उसके चेहरे को देखने के बाद कहने लगा, “अच्छा यह बताइये कि वह कौन-सा देश है, जहाँ छ महीने रात और छ महीने दिन रहता है?” फिर अपनी ओर ताकते देखकर छात्र के हाँठों पर एक हँसी सी फल गई। छात्र को अब विश्वास हो गया कि वह मट्रिक्स पास भी नहीं है।

वह उसी प्रकार चुप बठा रहा जैसे इंटरम्यु के वक्त किसी प्रश्न का उत्तर न दे सकने पर नीकरी का उम्मीदवार प्रश्न पूछने वाले की ओर देखना है, ऐसा ही उसने सोचा। छात्र के चेहरे पर एक निश्चित सी हँसी थी। आँखों में अँधेरी रात के तारे जसी क्षिप्तमिल करती हुई चमक था और प्रातः शीश में जब उसने अपनी आँखें देखी थी

मैं मट्रिक्स की परीक्षा दे रहा हूँ” वह हाथ में दबी पुस्तक बंद करके बोला मैं सेलर बन जाऊँगा परीक्षा के बाद, जिससे दुनिया भर की सर कर सकूँ। मुझे घमने का बहुत शौक है और सेलर बनकर मैं बिना पैसे के सारी दुनिया का चक्कर लगा सकता हूँ। अच्छा क्या आप कभी जहाज में बैठें हैं?” छान उरसाह-मरे स्वर में कह रहा था। पहली बार उसे ऐसा व्यक्ति मिला था, जो अपना मुँह खोलें बिना, दिलचस्पी के साथ उसकी बात सुन रहा था।

अचानक उसने अनुभव किया कि छात्र को देखते समय उसकी आँखों के सामने मुन्न का चेहरा ही घूमता रहा। उसे भी मुन्न को किसी स्कूल में दाखिल करा देना चाहिए। घर में रहता है तो उसे खाली देखकर सब छोटा पाटे काम कराते रहते हैं—कभी हल्वाई की दुकान से दही लाना, कभी उसके समुद्र का हुक्का भरना, छोटे साले की रोती लड़की को गोद में लेकर धुप कराना वह अपनी कोठरी में बठा मुन्न को दिये हुए आदेश सुनता रहता है विरोध में कभी कुछ नहीं कह सकता।

मुन्न उससे डरता है। उसकी कोठरी में कभी पाव रखा हो, उसे याद नहीं। जब ऊपर का कोई सन्देश देने उसे काठरी में आना ही पड़ता, तो दहलीज पर ही खड़े खड़े जल्दी से कह देता, बड़ी माफी कहती हैं कि आटा पिसवा लाइये” या, “आचार के लिए दस सेर कच्चे आम मण्डी से ले आइय” और फिर वह ऊपर भाग जाता।

उसे अंदर बुलाने की इच्छा कई बार उसके मन में आती, लेकिन बात कभी होठा के बाहर नहीं निकली। उसे देखकर लगता है, जैसे भीतर छाया कोहरा अपने आप फटा जा रहा हो। किसी बच्चे से जगड़ा हा जान पर मार भी उसे हा पड़ती है और वह उसके रोने की आवाज सुना करता है, परंतु शिवायत करने कभी मुन्न उसके पास नहीं आता। एक बार सब्जी खरीदकर जब वह थला ऊपर देने गया तो दूसरे बच्चों में मुन्न को न देखकर उसे कुछ चिंता सी हुई, परंतु किसी स उसके विषय में पूछने का साहस नहा हुआ। यह सोचकर कि वह शायद छत पर खेल रहा हो वह सीढ़ियाँ चढ़कर ऊपर आ गया। जेपेरे में उसे एक कोने में मुन्न के मिसकने की आवाज सुनायी दी। उसे देखकर मुन्न का रोना तुरंत बंद हो गया और उसने अपना चेहरा छुटभों में छिपा लिया।

“क्या हुआ मुन्न ?” उसने धीरे से पूछा, “क्या किसी ने पीटा है ?” उससे अधिक नहीं कहा गया। हिचक हो रही थी। विश्रवते हुए उसने मुन्न के सिर पर बहुत प्यार से हाथ फरा, परंतु वह और सिंकुड गया जस उसकी सहानुभूति की आवश्यकता न हो। मुन्न के बड़े बड़े रुके, उलझे वाल उसकी उँगलियों में फस गये। उसे लगा, जैसे मुन्न के बाल बटे दो तीन महीने बीत चुके हा, उसकी कमीज कथा पर पटी हुई थी, निकर पर मल और धल की मोटी तह जम गई थी। गंगा का खुरदरा मांस उसे सूखा चमड़ा जान पड़ा। और वे दोनों जितनी ही देर तक रात के जेपेरे में उसी प्रकार बठे रह और अनेक धुंधली धुंधली परछाईया उसके चारों ओर घूमती रही। लग रहा था जैसे वह पहली बार अपने बटे का स्पश कर रहा हो, मानो अभी उसका जन्म हुआ हो।

‘अफ्रीका के जंगलों में बहुत भयानक खेर और गड़ लडते हुए दिखायी दते हैं ऐसा मैं अपनी एक किताब में पढ़ा था। अच्छा, आपन कभी समुद्र देखा है ? मैं नही देखा। लेकिन जब सेलर बन जाऊंगा, तब तो समुद्र में ही रात दिन रहना पड़ेगा। इसी से मुझे रज नही होता कि कभी समुद्र नही देखा।”

छात्र को बेंच के दूसरे सिरे पर बठे देखकर उसे आश्चर्य हुआ। सुबह की हल्की हल्की धूप उन तक पहुँच गई। पेडा की लम्बी कतार के नीचे उसे फूल दिखायी दे रहे थे—लाल, हरे, पीले लेकिन फूलों के नाम उसे मालूम नही। उन्हें आखिर देख लेना ही पर्याप्त था।

पढ़ाई में मेरा मन ही नहीं लगता। और पढ़कर हाया भी क्या ? मेरे बड़े भाई न बी० ए० पास किया, लेकिन कही नौकरी नही मिली, सो रुपये तक की नौकरी नही मिली और आखिर में वह घर से भाग गया,” छात्र कह रहा था। “और पिताजी का मेरा सेलर बनना पसंद नही है। अगर उन्होंने विरोध किया तो मैं भी घर से भाग जाऊंगा। अपनी किताबें बेचकर मुझे बम्बई तक के टिकट के पैसे मिल सकते हैं। मैंने

एक सनिट्रेंड रिताबा ने बुकसेलर से बात भी कर रखी है और वह मान गया है। अच्छा आप तो बम्बई गये होंगे? वहाँ तो सकड़ो जहाज बंदरगाह पर आते जाते रहते हैं, क्या मुझे किसी में भी काम नहीं मिलेगा? मिलेगा क्यों नहीं?"

छात्र की आँखा में समुद्र की गहराई उमर आई थी। उसकी आँखें भी उतनी गहरी रही हामी? उसे लग रहा था जैसे उस छात्र के साथ वह भी जहाज में बठकर यात्रा कर रहा हो, चारों ओर नीले समुद्र की ऊँची ऊँची लहरें हैं, जिनके बीच में जहाज आगे बढ़ा जा रहा है।

उसकी पत्नी भी कहती थी कि मुन्नु को खूब पढ़ाओगे। अपना खर्च कम करके उसे किसी प्रकार की तगती नहीं होने देंगे। फिर आगा भरो मुद्रा में उसकी ओर देखती हुई कहती, 'और तुम्हारी भी तो तरक्की होती जायेगी। जिंदगी भर तक काई तो ही नहीं मिलते रहने।' और वह हँसते हुए उसका साथ देता था। वह आज होता तो देखती कि उसके स्वप्न किस प्रकार साकार हो रहे हैं। इतबार की छट्टी में घर पर आराम न करके वह बाग की सर कर रहा है, एक बेंच पर बठा एक छात्र से बातें कर रहा है।

उसकी सास को वास्तव में मुन्नु से स्नेह है। कभी-कभी अपनी छोटी-सी जमा पूँजी में से वे उसके लिए कोई कपड़ा बनवा देती कभी मेले में से कोई तिलौना घरीद लाती। परन्तु यह स्नेह उनकी बहुतों को अखरता था, जिसके मय से वे कभी प्रकट रूप से मुन्नु पर अपना प्रेम जाहिर नहीं करती थी। एक दिन मुन्नु को लेकर ही घर में झगडा हो गया और दोनों यहूदों ने सास को जली-कटी सुनायी। सात दिन भर रोती रही और घाम को उसके वापस लौटने पर उसकी कोठरी में आकर कहने लगी, बेटा, घर के हाल चाल तुमसे छिपे नहीं हैं। बल्क ऐसा आ गया है कि सगे रिश्तेदार भी पराये बन गए हैं। फिर बहूएँ पराये घरों से आता हैं, जो अपनी समुदाय के पुराने रिश्ता वा निमा नहीं पाती। तुम तो अब घर के जमाई हो।" धोती क बाने से वे अपनी आँखें पोछने लगी। शायद जमाई के नाम से उन्हें अपनी बटी की याद आ गई थी हमारा लिए झूब मरने का दिन है कि जमाई अपने खान-पीन का खर्च खुद देना है और यहूदों को तुम्हारी दो रोटियाँ सँकनी भी खतरती हैं।" और दबे स्वर में उहाने भी यह मुझाव दिया कि वह अपना अलग ठिकाना ढूँढ, यही बेहतर होगा। मुन्नु को जब तक वह और बड़ा नहीं हो जाता तब तक साल-दो साल के लिए वे अपने पास रख रहेंगी। एक बार वह अलग हो जायेगा या घर में सबको उसका सी रुपये का अभाव जरूरता।

और उस रात बितनी देर तक अपनी चारपाई पर लेटा वह करवटें बदलता रहा था। अपनी पत्नी का चेहरा बार-बार उसकी आँखा के सामने घूम जाता। उसकी मृत्यु न होती तो शायद इस समस्या का सामना उसे नहीं करना पड़ता। उसने निश्चय किया कि वह अगले दिन ही नये मकान की तगती करेगा। यही भी तो एक कोठरी ही उसके

पास है, जहाँ दिन में भी बत्ती जलाय बिना कुछ दिवायी नहीं देता और यदि रात को आने के बाद बत्ती उसकी बत्ती जलती रहे, तो ससुर ऊपर जाकर पर लड़े होकर सीधे उससे न बहकर आम ऐलान करते हैं कि घर की सब बस्तियां तुरंत बुझा दी जायें, नहीं तो जिस कमरे की बत्ती जलेगी, उसका तार वे काट देंगे। कोठरी के पास नाली बहती है, जहाँ ऊपर से बहुत गंद दुग्ध फलाना है। जब उस बंदू का वह जम्प्ट हो चुका है। लेकिन पहले पहल जब अपनी पत्नी की मृत्यु के बाद उसे ऊपर वाला कमरा खाली करके नीचे आना पड़ा था, तो कोठरी की सीलन और नाली की बंदू उसे असहनीय-भी लगती थी। ऐसी कोठरी दस-पंद्रह रुपये में उसे वही भी मिल सकती है। परन्तु सुबह होने-हाते उसका निश्चय दीला पड़ गया और कुछ दिनों बाद वह अपने डरावे को पूर्णरूप से भूल गया। जिंदगी फिर नियमित रूप से बहने लगी।

अपने दूसरे विवाह का विचार उसके दिमाग में न आया हो, ऐसी बात नहीं। परन्तु अपने घर में कोई है नहीं और ससुराल वाले उसके दूसरे विवाह की बात क्यों सोचेंगे। परन्तु एक दिन तबीअत भारी होने के कारण आधी छुट्टी लेकर जब वह गिन में ही लौट आया था, तो घर में किसी का उसके आने की खबर नहीं लगी थी। तब उसने सुना था, घर के काम से निवृत्त होकर उसके साला की स्त्रियाँ परस्पर बातें कर रही थी। बड़ी वह रही थी जमाई बाबू का कहीं फिर ब्याह हो जाये तो वे अपनी नई ससुराल जाकर बस जायेंगे और उन्हें छुट्टी मिल जायेगी। कोठरी खाली होगी तो बच्चों को पढ़ने का कमरा मिल जायेगा। दोनों जोर जोर से हँसन लगी थी, लेकिन छोटी ने कहा कि कोठरी खाली होने पर बच्चा को नहीं मिलेगी, ससुर बिराये पर उठाकर बिराया अपनी गाठ में दबावेंगे। सिर में दद होने पर भी वह कितनी ही देर तक इसी विषय पर सोचता रहा था।

अनायास ही सामने बड़े छात्र पर नजर पड़ी, तो वह पुस्तक पर मुका हुआ पड़ रहा था। कुछ देर तक वह छात्र को बड़े गौर से देखता रहा। होठा के ऊपर हल्के-हल्के मूँछों के बाल उगने लगे थे, चहरे पर कोई बड़ी मलिन छाया नहीं थी। पूरी जिंदगी सपाट मदान की भाँति उसके सामने फली हुई है, जिसके नये-नये अनुभव पान की आशा उसके मन में हिलोरें लेती हागी। रात को सोता होगा तो दुनिया भर के सपने देखता होगा—नौ और गड की लड़ाई वह देगा जहाँ छ महीने रात और ॥ महीने दिन रहता है जंगल, पहाड़, समुद्र खण भर को उसे लगा, जैसे मुन्न ही बड़ा होकर उसके सामने बटा हो। वह भी तो इसी प्रकार स्वप्न देखता होगा। और उसकी पत्नी भी ऐसे ही स्वप्न देखती थी। उस नींद में बत्ती सपन दिखायी नहीं देते। कोठरी भी की ता असफल रहा।

वह बैच स उठने लगा तो उसने छात्र की ओर एक आत्मीयता भरी मुस्कराहट से देखा। वह अनुभव करन लगा था, मानो उन दोनों का पुराना परिचय हो और छात्र

न उसे अपने मन की बातें बतलाई थी जो केवल अभिन्न मित्रों से ही कही जाती हैं, व रहस्य, जिह केवल वे दो ही जानते थे। परन्तु उसकी आवाज सुनकर छात्र ने क्षण भर के लिए अपनी आँखें ऊपर उठाकर उसकी ओर इस प्रकार देखा, मानो उसे पहचानन की कोशिश कर रहा हो। फिर उसकी चिन्ता न कर वह अपनी पुस्तक पढ़ने में मग्न हो गया। वह धीरे धीरे आगे बढ़ गया। उसने अनुभव किया, जैसे उसकी आँखों में वही रिवतता समा गई हो जो उमन प्रातः धीरे में देखी थी।

उसने एक बार फिर यूकलिप्टस के पेड़ों की कतार को देखा, जिन पर पूरा रूप से अब धूप फल गई थी। आज रविवार है, वह कम्पनी बाग में घूम रहा है और क्यारियो में फूल लगे हैं—लाल हरे, पीले जो सदा उसके लिए अपरिचित ही बने रहेंगे, जसा बच पर बठा वह छात्र है। चारों ओर गहरा सन्नाटा है।

और घर में शोरगुल हो रहा होगा। दोनों साले आज घर पर ही रहेंगे और यदि दोनों में से एक की ससुर से झड़प भी हो जाए तो आश्चर्य नहीं। बच्चा की भी स्कूल की छुट्टी है, जापस में लड़ेंगे और वही मुन्ना बीच में फँस गया तो वही पीटा जायेगा। ऐसा ही उसने देखा है। घर में रहते हुए भी रोते हुए अपने पुत्र को वह सात्वता के दो शब्द नहीं कह पाता। उसे लगा कि यदि वह घर वापस लौटकर न भी जाये तो कोई उसकी अनुपस्थिति महसूस नहीं करेगा। भोजन के समय उसकी प्रतीक्षा नहीं होती, भहरी उसकी थाली लगाकर उसकी कोठरी में ही दे जाती है, उसे और रोटी या सब्जी की आवश्यकता भी पडे तो वह माग नहीं सकता।

और ससुर कहते थे कि उसका सच सी में अधिक है, मुन्ना के बड़े होने के साथ उसकी खुराक भी बढ़ती जा रही है। परन्तु उस दिन जब छत पर उसने मुन्ना को देखा था, तो सूखी टहनियों जैसे उसके हाथ पांव देखकर उसका बड़ा सा सिर बहुत बेडोल जान पड़ा था। और यह भी उसने ससुर या शायद बड़े साले को कहते सुना था कि उसकी काठरी के आसानी से चालीस रुपये किराये क आ सकते हैं।

उसकी पत्नी के गहने भी ससुर के पास धरे हैं। विवाह के बाद जब वह महा धाकर रहने लगा था, तो पत्नी ने गहन अपन पिता के पास रखवा दिए थे, जब आवश्यकता पड़ती तो मागकर पहन लेती। और उसकी मृत्यु के बाद भी वे वही पडे रहे। एक बार उसकी चर्चा चली तो ससुर ने बिना किसी शिक्षक के कहा कि मुन्ना की गादी होन पर उसकी बहू को वे गहने दे दिय जायेंगे। उसने हा—ना कुछ नहीं की। परन्तु एक दिन अपन छोटे साले की पत्नी को वही नेक्ल्स पहने देखा था, जो उसकी पत्नी पहना करती थी। तब त्रोध आन पर भी वह चुप ही रह गया था। अलग मकान लगा तो ससुर से गहने भी माग लेगा, परन्तु मन में वही आँखा थी कि वह अब उसे मिलग नहीं।

घूमते घूमते उसे लगा जैसे वह नितन ही बोलन अपन सिर पर लाद चला जा

रहा हो। एक एक करके वे बढ़त ही जान हैं, कम नहीं कर पाता।

बाग के एक कोने में स्थित वह किसी खंडहर के सामन पहुँच गया। शायद किसी का मकबरा था। ऊपर बुर्जों पर बचे हुए नीले पत्थरों के टुकड़े धूप की किरणों में चमक रहे थे। वह कुछ देर तक खड़ा दूर से खंडहर की काली दीवारों और दीवारों के सूरालों को देखता रहा।

अचानक बेंच पर बैठे छान का चेहरा उसे याद आया तो अपन भीतर किसी के फड़फड़ाने का स्वर गुनायी दिया और वह बिना हिंसे डूले अपनी सास रोकें मुनता रहा, जैसे भीतर धनी गहरी माई को कोई मर रहा हो।

अब मुन्न को खुद ही पढ़ाया करूँगा। शाम को घर लौटने के बाद रोज़ दो घण्टे पढ़ाया करूँगा। एक दो साल बाद किसी स्कूल में चौथी या पाँचवीं में भरती हो सकता है। उससे छाटी उम्र के बच्चे स्कूल जाते हैं और वह घर में बठा रहता है।

इस विचार से उसके पाँच अपने आप घर की ओर बढ़ गये। रास्ते में एक दूकान से उसने एक प्राइमर, एक स्लैट और पेंसिल और एक कापी खरीदी। फिर कुछ सोच कर दूकानदार से उस सामान को अच्छी तरह एक जखबार के कागज में लपेट देने के लिए कहा जिससे कोई देख न सके। उसे सान के बाद सपन दिखायी नहीं देते लेकिन कभी कभी जागृत हुए, चारपाई पर लेटे लेटे सूनी छत पर या दफ्तर में कुरसी पर बैठे हुए अपनी फाइलों में उस मोतिया-जसी, झिलमिल करती हुई बूँदें दिखायी देती और वह उन्हें सब तक देखता रहता, जब तक वे धीरे धीरे धुँधली होती हुई उसकी आँखों से ओझल न हो जाती।

अपनी कोठरी में चुपचाप चारपाई पर बठा वह प्राइमर के पन्नों को धीरे-धीरे सहला रहा है, मानो वहाँ से ऐसी मूल्यवान् वस्तु उसने न देखी हो। दिन में अन्धेरा होने पर भी वह बत्ती नहीं जलाता, उसे सब दिखायी देता है। ऊपर शोर हो रहा है बच्चा का, उसके सालों की स्त्रियों का और रसोई से खाने की सुगंध आ रही है।

सभी अपने ससुर की कोठरी की ओर आते देखकर उसका कलेजा धक् से रह गया। वे कभी यहाँ आये हों उसे याद नहीं। उसने तुरंत प्राइमर को कम्बल के नीचे छिपा दिया। उनके साथ एक जय व्यक्ति भी है और उसे लगा जैसे उसने उस व्यक्ति को पहले कभी देखा हो। फिर पास आने पर पता चला कि सुबह गोशे में जो अपना चेहरा दिखायी दिया था, उससे वह व्यक्ति बहुत मिलता-जुलता है। उसकी आँखों का देखकर अनुभव किया, जैसे उनमें स भी कुछ गिर गया है। दोनों की कोठरी की देहरी पर खड़े देखकर वह चारपाई से उठ खड़ा हुआ। परन्तु उसके ससुर ने उस पर एक नज़र तक नहीं डाली। उन्होंने कमरे की बत्ती जलाकर उस व्यक्ति से कहा, "यही कमरा है। पुताई होने के बाद इसका रंग निखर आयेगा। मेरे पास जितने ही आदमी

इसे बिराये पर लेने आये, लेकिन किसी अनजाने आदमी को बस दे दूँ ? घर में औरों हैं । आपको वकील साहब ने भेजा है और वह मेरे घनिष्ठ मित्रों में हैं, इसलिए उन पर श्रद्धा रखने आपको देने पर राजी हुआ हूँ ।" उस व्यक्ति को चुप देख कर वे फिर कहने लगे "यम इलान में खाली कमरा मिलना असम्भव है । फिर यहाँ सब बातें आराम है । वचनरी डाखाना, चौक, मंडी सब कुछ बहुत करीब पड़ते हैं । दस पाँच मिनट में पदल ही सब जगह पहुँचा जा सकता है, रिक्शों के पैसे बचेंगे ।"

उसे लगा जैसे वह व्यक्ति कमरे को न देखकर उसकी ओर घूरे जा रहा है । उसने अपनी आँखें ऊपर नहीं उठाई । उसे लग रहा था कि उससे जोखिम मिलते ही वह व्यक्ति उसका गला दमोच लेगा । भय से उसका शरीर पसीन में डूब गया ।

उस व्यक्ति ने वह कमरा लेना स्वीकार कर लिया । समुद्र के किनारे केहरे पर हँसी फल गई । अगले सप्ताह तक वह अपना सामान ले आयेगा और सब तक कमरे की पुताई हो जायेगी यह समुद्र ने वायदा दिया । जाने से पूर्व उस व्यक्ति ने फिर उसकी ओर ध्यान से देखा । परन्तु वह अपना सिर झुकाये ही रहा । सास तक लेना उसे दूसरे काम पड़ रहा था ।

उसके चले जाने पर भी वह खड़ा ही रहा । चारपाई पर बैठने की उसकी हिम्मत नहीं पड़ी । जैसे उसके बैठने ही समुद्र या वह व्यक्ति आकर उसे उठा देंगे ।

उस दिन दोपहर के बाद कोठरी खाली कर देनी पड़ी । ऊपर छत पर टीन से ढका एक गोदाम सा था जहाँ घर का बकरा का सामान पड़ा रहता था । बरसात में यहाँ चारपाईयाँ बिस्तरे रखे जाते थे । दोनों साला ने मिलकर उसके गिरे सामान को तरतीब से एक कोने में लगा दिया और खाली स्थान पर महरी के झाड़ू लगा देने के बाद उसकी चारपाई बिछा दी उसका बक्स और दूसरा सामान एक कोने में रख दिया । वह कुछ नहीं बोला, जरा सी भी आनाकानी नहीं की । सबके नीचे चले जाने पर वह चारपाई पर बैठ गया, जहाँ से दूर दूर तक फला केवल आकाश ही दिखायी देता है । उसके और आकाश के बीच और कुछ नहीं है, यह सोचकर उसे अजीब-सा लगा । कुछ देर बाद उसे प्रसन्नता ही हुई । उत्साह में उसने अपने बक्स से प्राइमर स्लेट और कापी निकाली और उह बिस्ती ही देर तक देखता रहा स्लेट पर दबी मेढ़ी रेखाएँ खिंची रहती ।

अच्छा मुन्नु तुम बड़े होकर क्या बनोगे ?" वह पास बैठ मुन्नु की बड़ी बड़ी खुली आँखों में डूबकर पूछता है ।

परन्तु मुन्नु की आँखें खुली ही रहती हैं । जस ककर फेंकन पर भी तालाब के पानी में कोई हलचल नहीं ।

'तुम पढ़-लिखकर कुछ तो बनोगे न ? ऐसे ही तो नहीं रहोगे ?' वह खीझ कर कहता है 'कोई डॉक्टर बनता है काइ वकील, कोई व्यापारी कोई सेलर '

और यह सोचकर कि गायद मुन्नु को सेलर का मतलब मालूम न हो, वह उसकी व्याख्या करने लगता है 'सलर जहाज में बठकर बिना पसा खच किये दुनिया-भर का चक्कर लगाता है। जिस बंदरगाह पर जहाज रुकता है वह अंदर जाकर शहर घूम आता है। नये-नये लाग दूकाना म नई-नई चीजें वहां गर और गड़े की झाई वही दिन में भी रात होती है और कही रात में भी सूरज चमकता रहता है। बहुत ऊँचे-ऊँचे धूप से ढके पहाड़, घने जंगल, और मीली तन पला समुद्र वह सब देखता है। तुम भी क्या सेलर बनोगे, मुन्नु ?'

मुन्नु आश्चर्य से उसकी ओर देख जा रहा है। क्षण-भर का उसे लगा था, जैसे उसकी बातें सुनकर मुन्नु के हाठ बिस्मय और चौतूहल से गुल रह गये हो उसका दिल बहुत जोर से धड़कने लगा हो और उसकी आंखों में मोतिया जसी चमक आ गई हो, जसा वह स्वयं यह सब सोचते हुए अनुभव करता है और जमी मुद्रा उसने बहुत पहले एक इतवार की सुबह बेंच पर बैठे हुए छान के मुख पर देखी थी। परंतु मुन्नु ने बाहर भीतर ऐसी स्थिरता है, मानो दुनिया की बड़ी से-बड़ी घटना भी उसके भीतर जलकर राख हो जायेगी। क्यों नहीं मुन्नु भी उस छान की भांति उसे उत्साहित स्वर में बतलाना कि वह बड़ा होकर क्या बनने का स्वप्न देख रहा है ?

"मट्रिक पास करने के बाद तुम्हें बम्बई भेज दूंगा। बम्बई तक के टिकट के लिए मेर पास रुपये हैं। वहां सकड़ो जहाज रोज जाते जाते हैं। किसी-न किसी में तुम्हें जरूर काम मिल जायेगा। और जब तू बहुत बड़ा सेजर बन जायेगा, तब मैं भी एक बार तेरे साथ चूँगा। हम दोनों इकट्ठे दुनिया भर की मर करगे। मैं ऐसी रात कभी नहीं देखी, जब सूरज चमकता रहता है जहां कभी अंधेरा नहीं होता। उसके स्वर में व सब चाही-अनचाही इच्छाएं भर आई, सावुन में धुने पानी से निकले उन बुलबुला की भांति जिन्हें यचपन में वह दूर-दूर तक उड़ाया करता था।

मुन्नु को अपने सामने चुप बैठे देखकर उसे आश्चर्य हुआ। वह ता समझ रहा था कि मुन्नु अब तक सलर बनकर जहाज में घूम रहा होगा। भयभीत मुद्रा में उसे अपनी ओर ताकते हुए देखकर उसे शोध आ गया, 'बोलता क्या नहीं ? क्या बड़ा होकर भी ऐसा गंवार बना रहेगा ?'

उसका स्वर सुनकर मुन्नु की आंखें पल भर की मुँद सी जाती हैं, हाठ फड़कन लगत है और वह रोने लगता है। डर से उसने अपना चेहरा घुटनों के भीतर छिपा लिया।

"बस रोना ही सीखा है अब तक तूने ?" उसका शोध बढ़ता जा रहा है। वह मुन्नु के कान पकड़कर उसका सिर ऊपर उठाने की कोशिश करता है लेकिन मुन्नु अपनी पूर्ण शक्ति के साथ सिर झुकाये ही रोता रहता है। उसके आसू बहुत तेजी से घुटनों के नीचे बहते हुए उसकी सूखी टांगों पर टेढ़ी मेढ़ी लकीरें खींच रहे हैं।

अमानक मुन्नु के कात लोहक बर अन्ध हा गया। उमरे राने की आवाज छउ पर कोई गारा न पावर ऊपर उगी गई। और एक मादूमनी मामा का बुढ़ापे के गाग पिगरी हुई उमरे पारा आर पत गई। वह मुन्नु की आंखा में उतर मरिया न रग न आवाज की लग रहा है, माता मनु पहाड़, जगत गाग रहा है।

मुन्नु का राग भीरे भीर कम हार गताटे म गा गया। उमरी पाली-गली टांगे और टांगे पर चमकी हुई नीली मंगे और उन ऊपर घरा उमरा बहा-गा बहोल गिर, जिनके उमरे के बड़े हुए का के बाल उत्राह भरती न। ज्ञान गगा-न जान पड़े है। और ये दोन एक दूसरे न बग दूर बिगनी ही नेर तक उगी प्रचार सात बडे रहे।

गहमा मुन्ना पर गिर देर मुन्नु की आंखा को दगा। उम लगा जसे गिरी ने पहाड़ की चोटी ने उत नीचे बरेल गिया हो। जगरे के साथ मुन्नु के पास पहुँच कर उमरी उतना भरत अपने दादा हाथा से ऊपर उठाया और मुन्नु की मुली, बिना जप बती हुई आंखा का बहुत करीब स देगा और कुछ दर तक दगा रहा। मुन्नु की आंखा में भी जसे कुछ लो गया है जगा कि उम इतवार को शीत न अपनी आंखा को देत कर उसने महसूस किया था। मुन्नु की मुली-मुली, दूय ली आँखें, जस कोई बंद न बाबा पुल गया है जिसके बीच में दूर-दूर तक यह शाय सबता है। भीतर क्या है हम जानने के भय में उसने अपनी आँखें बंद कर ली।

कुछ बच्चे कुछ माँएँ

इन्दौर में एक ही ऐसा काफी हाउस है जहाँ गरमी के दिना में बाहर लान में कुरसिया बिठा दी जाती हैं क्योंकि दोपहरिया उमसीली होती हैं और मन बाहर की आर हाँ दीहता है। ऐसे में किसी होटल की एक से एक लगी कुरसी पर जा बठो या एक दो के साथ कबिन में जा घुमो तो दम घुटने लगता है। लाख रूम एयर कंडीशन हो, या चारों दिशाओं में चार पेडस्टल चल रहे हों पर बाहर का बठना बाहर का बठना ही है। वने में रहता भी जान द है। ओवरड्रिज से आने लोग ओवरड्रिज को आते लोग आस पास के खिले फूलों की खुशबू में जग बठता हूँ वहीं ता बाहर वाली कुरसी पर बठा ही रहता हूँ। भया इन्दौर नये नये आय और हम उनके परिवार सहित घूमने निकले तो मैं घूम-घुमाकर उहे अपनी मनचीली जमह हा ले आया। बाहर लान में दो ही टेबल थे, एक चार कुरसियों वाला दूसरा तीन वाला। हमन चार कुरसियों वाला टेबल समाला। हम थे भी चार—भया मामी, तान बरस का मुन्ना और मैं। मैं फोस कर रहा था कि मन्नासी प्रिपेरेशन खायें—डोसा, उपमा या रवा। भया कुछ भी खान का नयार थे पर मामी हर बात को नकार रही थी। होने-हात यह हुआ कि सारा मेनू पढ़ डाला गया और मैं था कि बाहर सड़क पर कभी देखी किसी स्कट वाली लड़की की पेटी की कसावट में उलझ गया था। भया न बाय को फिर से पानी का आडर दिया और मामी मुन्ना की खुल गई बटन लगान लगी। बाय जब तीसरी बार टेबल से आ लगा तो फिर सलाहें शुरू हुईं।

‘कुछ नहीं तो आरेंज से लें।’

‘नहीं जी, शरबत लेकर क्या करेंगे?’

‘तो कोल्ड काफी पीयें।’

‘काफी तो गरम ही अच्छी लगती है।’

‘तो बाय, चार हॉट काफी।’

‘भरे, पर यह मुन्ना ता काफी छूता भी नहा, और मुन्ने भी काफी अच्छा नहीं लगनी।’

‘ता पहले क्या नहा कहा! बाय ए बाय आडर बेंसल!’

‘कहाँ मुश्किल में पड़ते हा तुम तो चार चाय मगवा लो।’

"यही ठीक है !"

"पार पाय बाँध !"

बाप आकर ले गया । वह पानी पार है कि मैंने बोली हाउस में बाप का आँकर दिया । मैं बोर्ड रईम नहा, पर मामी गया गुड मध्यमर्ग है । उनका रहा सहान, माते ज्योत्स राय यमी ही ।

मोत भग किया मामी ने क्या भी तीनों सात में होटल में आना हुआ ।

भया 'हूँ' कर रह गये तो गुद ही डिगाय लगाए लगा, "अपने मुद्रा से पट्टे आये थे होटर । बचि में बठे थ और मेरी चंदेरी याती साडी पर पाय हुन गई थी । उगये बाग मिररती ॥ गैम प ग वि ' मामी ने बाप यही छाड़ दिया, क्याकि उनकी आँखें लौंग से आ लगी एक गई 'दृष्टि' पर रम गई थी । बोली, "साडी से रंग पार का रंग मग करता है ।"

मुझे उनका यह कहना बड़ा अटपटा लगा । पार जिती और की, साडी की मेच गते हुआ ? साडी का बजाउठ से, ब्लाउज का रिबिन से रिबिन का पप्पल से मेच समझ में आता भी है, और पति के बपटों से या गुद अपनी पार के रंग से मेच का बास की जाये तो वह भी एक पार मानी जा सकती है, पर

पार में से जोड़ी निबली । थीमती जी सुआपसी बपटो पहने थी । हाथ का पल भी उसी रंग का था । पार में बठा तीनव यथ का बाबा नीच उतरा तो देता कि वह भी उसी रंग का सूट पहने है टाई भी बाँधे है । गट डीली होकर इतनी धड़ी हो गई थी लगी कि बालर की मट्टिया को लबा रही थी । साहब समर सूट का पट और दूधिया शाकस्वित का बुश गट पहने घुसट दबाये थ होठो में । प्रसन्न से वे हमारे पास बाल टेबल पर आ गये । उनके पास भी राय गया और थीमती जी ने तीन चाय का आकर दे दिया । वे दोनों अपने बाबा में व्यस्त थे ।

"क्या बाबा, तुम्हारे लिए मोटर खरीद दें ?"

'मोटर क्या अब तो राबेट खरीद देंगे !'

फिर व बाबा ॥ अंगरेजी बोलने लगे । बाबा रटी हुई बातें बाल रहा था 'सी एन्टी कैंट याने बिल्ली डी-ओ जी डाग यान कुत्ता आरेन्टी रेट याने घूहा, एमे एन मेन याने ।'—बाबा मूल गया था । उसकी मम्मी फिर फिर पूछने लगी, "बोलो बाबा क्या हाहा है एम गल सेम गाले ?"

पापा भी लगे पूछने, "बोलो बाबा, बोलो !"

और बाबा था कि कुरसी पर सडा होने को हुआ तो मम्मी ने डाँट दिया, 'डर्टी, कुरसी पर सडे होते हैं कही !'

इधर मुन्ना को मामी ने खुद ही कुरसी पर सडा कर दिया था ले देख, देख उधर ।"

पूछा पूछी में जब उधर मम्मी ने डाँटकर बाबा से पूछा, 'एमे एन मेन याने क्या ?'—तो मुना अपनी मस्ती में उधर देख बोल दिया, 'उल्लू ! —एम एन मेन, मेन यानी उल्लू ।'—दोनों आर हँसी मच गई । भामी जरा बटी, भया ने घणा से पास वाले टेबल के अभिजात बग को देखा और उधर वाली मम्मी ने यह कहते हुए कि एमे एन मेन यानी उल्लू नहीं, आन्मी ! अपन बाबा की हल्के-से चुम्मी ले ली और फिर बाबा ज़िद करने लगा मम्मी का 'बिस लेन के लिए ।

भामी ने मुना को डाटा—'बठना क्यों नहीं कुरसी गद्दी हा रही है ।'—वे झूल गई कि उहोने ही मुना को कुरसी पर खड़ा कर लिया था ।

मैं इस बात को माक कर रहा था कि वे हमारी जोर-जोर हम उनकी ओर जाने वसी नज़रो से देख रहे हैं । भामी जरा से मैं ऊब गई—अभी तक नहीं आयी चाय ?

इतने में बाँय चाय ले आया । उधर मम्मी ने कहा "अरे बाय इतनी जल्दी ले आये चाय ! कही चालू चाय तो नहीं है ?"

बाय दासत्व में मुक गया और भामी को जाने क्या जल्दी पड़ी थी बाला अरे बरा, इतनी देर लगा दी चाय लान में ? इतनी देर में तो सौ आदमिया के लिए चाय बनाकर दे दूँ ।"

फिर भया से बोली, 'याद है ना जी, मिसरजी को देखन वाले आये थे दो दजन लोग, तो पाँच मिनट में सब-कुछ कर दिया था ।"

तभी सामने सक्क से तीनक साल का एक गदा लडका हमारी तरफ जाया । आया और मेरे पट से लगा ता मैं उससे पिछक दिया । तभी लान की मेट्टी से लगी मिनारिन ने भर गले से कहा 'मेरा बच्चा है बाब चाकी ज़िद कर रहा है ।'—बट हाथ में एल्यूमिनियम का गिलास लिये सारी तरफ जपन चेहरे पर लाकर धिपयाने लगी 'दे दो बाबू, एक प्याला चा दे दो ।"

वह गदा बच्चा पासवाली टेबल के नज़दीक पहुँचा ता साहब ने जूता पियाकर कहा, 'टाँग तोड़ दूँगा ।'—पर उस पर कोई असर नहीं पडा । उधर श्रीमतीजी घणा से मुँह बनाकर बोली "हिन्दुस्तान के लोगो में ज़रा भर सम्मता नहीं है, अब यह ता मैं आज ही देगा कि मिसरारी काफी-हाउस में बीस माँगने धुसे चने आते हैं ।

मुझे ता लगता है कि मुआपली खाड़ी वाली न मिनारिन को डाँटा, इतनीलिए भामी को दया आ गई और उहोने आया प्याज चाय उगवे बच्चे के गिलाम ॥ उल्लू दो । बच्चा चाय तबेर अपनी माँ के पास दौड गया ।

'बड़ी दया हा आई आपको उस पर भामी ।"

'क्या माहे की ? इस बतली में चाय ज़यादा थी, तो दे दी । चार पगो की चाय में धम भी हाथ लगे तो क्या बुरा ।"

दूसरे टेबल पर बान चल रही थी 'कुछ लोग बड अजीब होते हैं जी । काफी

होंडा के मामले जाते ही गये। वे बेगली की एक एक बूंद चाय पी जाते हैं, जेने वह चाय गही, शरारत हो।”

“जिसने शरारत की थी हो, वह चाय का लास्ट ड्रॉप पीकर ही मरता है ऐसा है।”

गरे का ऊपर हाठ चाय पर और दाँतें ‘मदाम बावरी’ की पिपापनवाली टाली दराने में स्थित हुई-न हुई कि, जाने क्या हुआ, जो मामी ने मुन्ना को एक चाँटा रसीद कर दिया। बेगारा तिलमिला गया। मैंने उम पाग रोब उपान की बागिंग परत हुए मामी से पूछा, “हुआ क्या?”

‘दरत नहीं, चाय है उबलती हुई और बप से पी रहा है, मध्याह्न मैंने प्लेट में चाय डाल दी तो उसे फिर बप में डाल रहा है। रस्ता है कि नहीं कुप?’—मामी ने फिर हाथ उठाया तो भया ने रोब दिया। वे बोलती गई, ‘प्लेट है जिसलिए कि भद्र, उसमें चाय डालकर टण्डी कर लो और पी लो। वहाँ आया बप से चाय पीनवाला। किसी को देता है तूने अपने घर में बप को जूठा करते?’

मामी बह रही थी कि पास की टेबल पर बाबा चीख उठा। उसकी मम्मी ने बाबा के ज्ञान खींच दिये थे, स्टॉप दिख नासेस।”

बाबा बुरी तरह रो दिया।

“अरे क्या हो गया?” साहब बोले, ‘मैं चुस्की में बिजी हो गया और तुमने इसके ज्ञान क्यों साब दिये? इटम नाट केअर।’

बाबा ने हाथ फिर अपने ध्याले पर पड़े थे कि मम्मी ने फिर डाँटा, “अब अगर फिर ऐसा किया तो बहुत पिटोगे और बार की छत पर बठा दूँगी।”

‘पर क्या हुआ?’ साहब ने बिद्वक पूछा।

“देविमै न जाप ही बाबा को, यह प्लेट में चाय डालकर पी रहा था। यह पढ़ा हुआ तब से अब तक मैंने इसके हाँठों को सौसर नहीं सूँघ दी है। मम्मी तमतमाकर बह रही थी, “बोलो बाबा, बमी तुमने अपने घर में किसी को अपने हाँठों से सौसर (प्लेट) को जूठा करते देखा है, सब बप से ही चाय पीते हैं न?”

बाबा ने हथकड़ी पड़े अपराधी की तरह विवश होकर हमारी भरी और बप से चाय पीने लगा। मम्मी बह रही थी, “एक बार इसने दिल्ली में भी ऐसा किया था। मग बीमेन्स एसोसिएशन की पार्टी थी, इसने सौसर में चाय डाली हो थी कि मैं हाथ पकड़ लिया।”

मम्मी कह रही थी कि महदी के पास खड़ी भिखारिन ने चाय का गिलास नीचे रखा और अपने बच्चों को मुँहको से मारना शुरू कर दिया।

तीन, चार, छह दस बचारा हलक बाँधकर रोजे चीखने लगा। बाय न उधर देखा तो उस डाँटेने पहुँचा “क्या मार रही है बच्चे को?”

बोली बह “अरे ये नासपीटा है ही ऐसाई। जान का जाखिम है मुन्ना। बाबू

न दी चा, तो इस गिलास में लेके पिला रही थी अब केता है कि कप बशी से पीऊँगा ।
—फिर उसे एक भुक्का जमाया, 'मेरी इत्ती उम्मर हा गई मैंनेई कभी कप बशी से ओठ जूठे नहीं किये तो तू कासे चलके आया हे ।"

वह बोलती ही जा रही थी 'बडा आया कप बशी स पीनवाना । कभी तेरे बाप ने कप बशी से पी हे चा ?" बच्चे ने हारकर उम सडे गिलास से होठ लगा लिये ।

मेरे प्याले में चाय ठंडी होनी गई । मैं देख रहा था कि बाबा और मुन्ना और उस गधे बच्चे में कोई फक नहीं । तीनों एक-जैसे हैं । कप और प्लेट और गिलास किसी भी रूप के हो, हैं तो बरतन ही । कप की चाय और प्लेट की चाय और गिलास की चाय का स्वाद एक ही है, पर सुजापखी साड़ीवाली ममी और भरी भामी और वह मिखारिन तीनों नारी हैं, पर एक नहीं हैं क्योंकि तीन अलग-अलग वर्गों की पत्नियाँ हैं वे ।

"इससे तो अच्छा हाता कि कुछ कोल्ड भेंगवा संत । भया ने यह कहकर मुझ चौंका दिया ।

मैंने चाय पीते हुए देखा कि भामी और मेम माह्व और वह मिखारिन जान कसी घणा से एक दूसरी की ओर देख देखकर मुँह बना रही हैं । इतनी देर में वे तीनों बच्चे एक कुत्ते के पिलने से खेलने लग गए थे । वे तीनों एक दूसरे के हाथ पकडे पिलने की पूँछ पर पर रख रहे थे ।

मेरी भामी बाबा की मम्मी और उस मिखारिन ने अपने-अपने बच्चा का इस तरह देखा तो एक साथ गुरावर एक ही वान बोली, "बल इधर मुनता है कि नहीं ?

बेचारे तीनों बच्चे डरे और अपनी अपनी माआ के पास जा गये । ये सब व्यस्त हुए मैंने एक बात और ऐसी कि फुटपाथ पर बठी कुतिया भी गुरावर अपने बच्चे को पास बुला रही थी पर वह पिरला मान ही नहीं रहा था और लौड-लौडकर इन बच्चों के पास आने की जिद कर रहा था ।

नौ साल छोटी पत्नी

कुशल दसै पाँच बस तरह घर में घुसा था जने घर उसका अपना न हो जीर खाँसी आने पर वह गली में जाकर बस तरह जी भरकर खाँस आया था जैसे मदन को नसीहत करने का अवकाश न दन के लिए वह प्राय दुकान के बाहर जाकर खाँसा करता है। फिर उसने सोचा कि वह शायद अपने असामयिक और आकस्मिक आगमन से तृप्ता को चौकाना चाहता है। यह सोचकर वह मुस्करा दिया कि चौकाने के लिए ये छोटा छोटी बातें ही रह गई है।

तृप्ता ने कुशल को देखा तो सच ही चौक गई। उसने कुशल को देखते ही बागडो का वह पुलंदा ट्रक में छिपा दिया जिसे वह दीवार से पीठ टिकाए सिर हिला हिलाकर बड़ी एकाग्रता से पढ़ रही थी। उसके स्वरों के आरोह अवरोह को भी लक्षित किया जा सकता था। उसने हाल ही में धोए हुए बालों का जूड़े के स रूप में इकट्ठा करके अपना सर इस ढंग से टिकाया हुआ था जैसे बालों से तर्क का काम स रही हो। कुशल का देखते ही उसके माथे पर डेर सा पसीना बकूँठा हो गया और वह खड़ी हो गई। उसका बाल खुलकर कंधा पर बिखर गए। उसने कानिश् से लाल रंग का रिबन उठाया और बाल बाधन लगी।

कुशल ने खाट पर बैठकर अपने बूट उतारे और बोला, 'आज मदन दिल्ली गया और मैं उठ आया।'

तृप्ता की कमीज पसीन से देह पर चिपकती जा रही थी और गन्ध स पसाने के कतरे चूकर कालर दोन से ऐसे लटक रहे थे, जैसे मेह के बाद बिजली के तारों पर पानी रेंगता है। उसने कमीज के पल्लू से मुँह पोछा और बोली, 'आज तो बहुत गरमी है।' फिर उसने ट्रक को खाट के नीचे सरकाते हुए कहा, 'मैं तो समझी थी प्रकाश खाना लेने आया होगा आप आज बस समय कैसे आ गए?' फिर उसने कुशल के चहरे की ओर देखते हुए कहा "तबीयत तो ठीक है न?"

कुशल सोचने लगा कि यदि वह तृप्ता के स्थान पर होता तो इस समय कसे आ गए के स्थान पर इस समय कहा से टपक पड़' का प्रयोग करता। तृप्ता को उत्तरोत्तर मुख हात दखकर और ढूँढ़न पर भी न मिलन के अंदाज में इधर उधर घूमते और दृष्टि दोहाते देखकर कुशल ने जेब से माचिस निकालकर तृप्ता की ओर प्रेंकत हुए

कहा, "यह लो।"

तृप्ता ने माचिस ले ली और बोला, "आप कैसे जान गए कि मैं माचिस दूँ रही थी?"

कुशल का मालूम था कि तृप्ता माचिस नहीं दूँ रही थी वल्कि छोटी-सी बात को लेकर परेगान हो रही थी। उसने बवल उसकी घबराहट कम कराने के लिए ही माचिस फेंकी थी। फिर भी उसने कहा, मैं जानता था स्टोव पर तुम्हारी नजर नहीं जाएगी। हालाँकि तुम्हें मान्य है कि माचिस वहीं पड़ी रहनी है।'

तृप्ता ने स्टोव जलाया और चाय का पानी चढ़ा लिया। फिर स्वयं भी कुशल के निकट ही खाट पर आकर बैठ गई और पर हिलान लगी। कुशल ने कहा "पर क्या हिला रहा हा?"

तृप्ता ने पर हिलान बंद कर दिए और पास रखा तालिया उठाकर रगड़-रगड़कर मुँह माफ कराने लगी। पसीना मूख गया था और वह फिर भी तौलिया नहीं उठा रही थी। 'कुशल ने उस आन्वस्त और घात करने के लिए अपन लहजे को भरमक स्वामाधिक बनाते हुए कहा, कहानी लिख रही थी क्या?' उसने तृप्ता की पीठ थप थपात हुए कहा, 'मुझे लगता है कि तुम कहानियाँ लिखी रहो ता बहुत बड़ा लेखिका हो जाओगी।'

तृप्ता कुशल की ओर देखकर मुस्कराते और उसकी बुझाहट पर रगती हुई एक पीटी का उठाकर फेंकते हुए बोली 'गादी के बाद तो कुछ भी नहीं लिखा। वही पुरानी कहानी पढ़ रही थी, जिस सुनकर आपन मरा बहुत मजाक उगाया था।' यह कहकर वह फिर पर हिलान लगी और उपालम्भ की मुद्रा में कुशल की ओर दखन लगी।

कुशल ने महसूस किया कि कई बार बक्कूफ बनाकर उनका मजा नहीं आता जितना बनकर आता है। परंतु जब तृप्ता विलकुल निश्चिन्त हो गई कि कुशल का पूरा येक्कूफ बना चुकी है तो उस यह सब अच्छा नहीं लगा। उसने कहा, 'अजीब बात है टाँगें तो मरी दब कर रही हैं और हिला तुम रहो हो।' फिर उसने कुछ थप थप रहकर कहा 'तृप्ता! जरा मेरी ओर दखा।'

तृप्ता ने तौलिये को ऊपर सरनाकर थोड़ी-सी आस और साँस और तुरन्त मुँह छिपाती हुई बोली, 'आप मुझे डरा क्यों रह रहे हैं?'

"डरा कैसे रहा हूँ?" कुशल को हल्की-सी सुनी हुई। उसने तृप्ता का तौलिया खांचत हुए कहा 'देखो, स्टाव गायल बुझ गया है।'

तृप्ता अतिरिक्त त्वरा से भागकर स्नान की ओर गई जस दूध उबल गया हा और फिर कुशल की ओर पीठ करके स्टोव के निशट्ट ही पट्टे पर बैठ गई।

यद्यपि वायस्म का नरु, जब तक म्यूनिसिपलिटि उसकी रगा के लिए पानी 'या कर सकती है खुला रहता है कुशल को लगा जस टब में पानी गिरने की आवाज

अभी-अभी उमरी है। इससे पहले गली में शोर मचा रहे बच्चा की आवाज भी उसे नहा सुनाई न रही थी। बच्चा का शोर सुनकर वह सहसा मुस्करा दिया। “मदन जय कभी मूड में होता है तो दुकान में आन वाले बस्टमरो को कभी कभी कुशल का हवाला देकर सुनाया करता है कि भारत में तभी धन से सोया जा सकता है।” मदन तजनी को तजनी से बाटकर कुशल को हाथ सट चाय का आडर दन का सबैत करते हुए अपनी बात पूरी करता “जब रात को आप बच्चों की चिल्लाहट को शरीर स्वरूप समझ और प्रातः गली के न ह सुनो के रादन से आप घड़ी के अलार्म का काम लें।”

“तब रात की दोपहर तो कुशल जैसे तरो करके घर में ही बिता लेता है परन्तु इस समय बच्चा की धीमासुती न तो शरीर का काम दे रही थी और न घड़ी के अलार्म का। उसने तृप्ता को सम्बाधित करते हुए पूछा “क्यों तृप्ता, गली के बच्चा के स्कूल कब खुल रहे हैं?”

तृप्ता ने मुस्कराकर पीछे की ओर देखा वह शायद अब तक सैमल बुकी थी या शायद उक्त प्रदन की सम्भा यता से प्रभावित होकर उसने सोच लिया था कि कुशल की हठि इतनी पनी नहीं है जितनी कि वह सम्भ बठी है। स्टोव से केतली उतारते हुए उसने उत्तर दिया “यह तो तहजीबत करने से ही पता चल सकता है।”

उसने कुशल के लिए चाय का प्याला तयार किया और कुशल को पकड़ाते हुए बोली, “आप शायद दना ल मैं सब तक आपके कपड़े प्रस कर दूँ। कसा अच्छा रहे अगर आज पिकचर चल।”

“मेरा जयाल है पिकचर तो हम मदन के लौटने तक नहीं जा सकेंगे। उसे दिल्ली जाना था मैं पसे नहीं मंगे।”

पिकचर जितने पसे मेरे पास है।” तृप्ता ने परो से दूब को छाट के और भी नीचे धकेलते हुए कहा “कल सोम दे गया था।

कुशल की लम्बी नाक चाय के प्याले में घुस गई उसने अंतिम घूट भरने के बाद खाली प्याला तृप्ता के हाथ में धमाते हुए कहा “पहले चाय का एक और कप बाद में कुछ और।”

कुशल कल से ही सोम की चून्ना टाल रहा था। कल जब सोम घर का पता जानने के लिए दुकान पर आया था तो कुशल जान बूझकर सोम के साथ स्वयं नहीं आया था बल्कि उसने दुकान के नीकरो के साथ सोम को घर भिजवा दिया था।

अब सोम आया था तो कुशल एक पत्र टाँप कर रहा था जब वह चला गया तो वह फिर टाइपराइटर पर भुक् गया और टाँप करने लगा, “या तो सोम डरपोक था और तृप्ता भीरु ही था। सोम डरपोक था, सोम डरपोक है सोम डरपोक रहगा। तृप्ता भीरु थी तृप्ता भीरु कुशल ने मदन की ओर देखते हुए कागज निकाला और मज के नीचे करक फाड़कर रही की टोन्नी में फेंक दिया। मदन बुझी धीड़ी मुलगान

मे व्यस्त था ।

शाम को जब वह घर लौटा था तो साम जा चुका था । भोजन के बाद जब तुप्ता तश्तरी में जाम से आई, उसने तब भी नहीं पूछा कि आम कौन लाया है । आमकी छुठकी चूसते हुए तुप्ता ने कहा था, "पाच बज तक सोम आपकी इंतजार करता रहा ।"

कुशल ने इस बात का उत्तर नहीं दिया था और तुप्ता का चाम का आउर देकर नल की ओर चला गया था । "सोम कह रहा था मैं बहुत याद कर रही थी ।" नल से लौटकर कुशल ने देखा, तुप्ता के गालों पर आम का रस लगा था । उसने तुप्ता की बात अनसुनी करते हुए कहा "अब मुँह साफ कर लो । कैसे बच्ची की तरह आम चूसती हो ।"

दूसरा कप पीते ही कुशल भी पसीन में भीगन लगा । उसने बुशराट उतारकर खाट पर रख दी और अपनी छाती के घने बालों में तिरता हुआ पसीना पोछने लगा । बाल बाल के बीच एक सफेद धाल पर उसकी दृष्टि गई तो उसने उ गली पर लपेटकर जब समेत उखाड़ दिया और फिर छाती पर हाथ फेरन लगा ।

तुप्ता ने टैबल घसीटकर कुशल के आगे कर दी और उस पर दोबिंग सेट टिका दिया । कुशल पीछे में अपना चेहरा देसते हुए दाढ़ी पर हाथ फेरने लगा ।

'आप अब शोब बना लें ।' तुप्ता ने कहा और कुशल की उतारी हुई बुशराट का ऐसे पकड़कर बाधभ्रम में ले गई, जैसे चुटिया को दुम से पकड़ा हा ।

कुशल ने ब्लेड रेजर में पिट कर दिया था और मुँह पर साबुन की झाग भी कर ली थी, परंतु उसका शोब बनाना की ओर नहीं हो रहा था । उसे माझूम था कि अगर उसने शोब बना ली तो नहाना भी पड़ेगा और नहाने के लिए वह बिल्कुल तयार नहा था । उसकी पिडलियो में दद हो रहा था और देह का हर जोड़ टूट-गुड रहा था । यह सुबह से हा रहा था और यही कारण था कि वह सुबह भी बिना स्नान किए निकल गया था । इस अद्भुत धकावट और विचित्र दद से कुद हाकर आज प्रात उठते ही उसने तुप्ता से कहा था "क्या कारण है तुम गल से बहुत प्रेम कर रही हो ?"

कुशल की चेहर पर झग-पर झग उत्पन्न करते देखकर तुप्ता ने पूछा कि वह क्या सोच रहा है ?

'यही कि "' कुशल ने रेजर को पानी में गीला करते हुए कहा, 'मैं पहली को एक नयी खाट ले आऊँगा ।'

तुप्ता का सुभाव उड़ा पिजूल लगा, 'मैं तो बहुत कम जगह घेरती हूँ ।'

'कई बातें अभी तुम्हारी समझ में नहीं आ सकती । तुम अभी बच्ची हो ।' कुशल ने शीशे में से तुप्ता की ओर बनगिया से देखते हुए कहा, "कई बार तो तुम्हारे मुँह से दूध की बू भी आती है ।"

तुप्ता कुछ देर अवाक-भी उसकी ओर तावती रही कि

जब वह स्नान करके लौगी तो कुगल तब भी चेहरे पर भाग उत्पन्न कर रहा था। तृप्ता को देखकर उसके भस्तिष्क में किसी छामावानी कवि का पनियाँ तरन लगा, उन्हें पकड़ने के बजाय तृप्ता का चतारनी देन के लहा में बहने लगा कि वह भविष्य में उसे गव बनाने और स्नान करने के लिए कभी न बट। उसकी दृष्टि होगी तो वह छुद स्नान कर लेगा।

इतने में बाहर का दरवाजा टुला और किसी के आने की पदचाप सुनाई दी। तृप्ता ने उत्पन्न बाहर दस्ता और बोली, 'सुम्मी है।'।

सुम्मी नीली जीवा बागी पतली सी तृप्ता की हमउम्र लडकी है। उसने आँगन में आकर कुगल की दस्ता तो जीम निवालकर माग गई।

'सुम्मी बटन खराब लडकी है।' तृप्ता ने कहा।

'लडकियाँ सभी खराब होती हैं।' कुगल ने कहा। वह जानता था, तृप्ता की नजरो में सुम्मी क्या खराब है।

कुगल गव बनाता रहा। तृप्ता कुछ क्षण खबर बोली, 'देखने में कितनी भाली लगती है, पर मुई की लडका के छत आते हैं।'

आईने में कुगल का चेहरा मुस्कराने लगा उसने ठुडकी पर रेजर चलाते हुए कहा 'देखने में तो तुम भी बहुत भाली लगती हो। तृप्ता का पल्ला उज्जत देखकर उसने बात का रस पलटा 'जरा लडकी को लोग बसे ही बदनाम कर दते हैं।

मैं भला उसकी बदनामी क्या करूँगी?' तृप्ता ने बाई में पढ़ती छूडियाँ उँगलियाँ से घुमाते हुए कहा 'मैं खुद देख हूँ इसके पास दान न छत। नासपीटी उनके जवाब भी लिखती है।'

तुम क्या खाक कहानियाँ लिखती होगी। कुगल के मुँह में साबुन चला गया था। उसने तौलिए से हाठ साफ किए और कहा, 'सत लिखने में क्या बुराई है? कहानी लेखिका को कुछ तो उदार होना चाहिए।' कुगल ने अपनी टाँग से टुक को थोड़ा-सा सरका दिया और फिर वह ऐसे पर हिलाने लगा जब टुक संयोग से छू गया हा।

आप कोई और मकान देखिए।' तृप्ता ने कहा 'जी-र खेतन के लिए भी जगह नहीं है। सारी रात टुक मरी पीठ पर चुमता रहता है।

तान से पहल टुक को साट के नीचे स निकाल लिया करो। कुगल ने कहा।

आप गव क्या नहीं बनाते?'

'नेव तो जब बन ही जाएगी। कुगल रार को पानी के गिलास में घुमाता हुआ बोला। जब साबुन उतर गया तो उसने कहा 'सुम्मी तो अभी बिलकुल मामूम है। मुझ समझ में नहीं आता कि तुम उसके बार में उलटी-सीधी बातें क्या साचता रहती हो?'

“आपकी बात का पता नहा होता और ।”

“और क्या । ? खत लिखने में मुझे ता कोई बुराई नजर नहीं आती । कुशल ने जान दूबकर तृप्ता से आस नहीं दिलाई । तृप्ता का सांचते पा उमन कुछ दर न्यकर रहा, ‘खत लिखने के अलावा कुछ करती हो मैं मोच नहीं सकता । तुम इस बात को क्या मूल जाती हो कि जवमर लड़किया डरपोक होनी हैं ।’

“आपकी उसी दिन पता चलगा जब उसके भागन की खबर मिलेगी ।

“अगर सुन्नी ऐसी लड़की है, तो तुम उसके साथ सम्बन्ध क्यों रखे हो ?”

‘मैं तो उसे समझानी रहती हूँ ।’

‘क्या समझाती रहती हो ?’ कुशल के गाल पर एक कट आ गया ।

‘यही कि दान खत लिखता है तो तुम जवाब क्या लिखती हो ?’

कुशल ने तोड़िये स गाल साफ किये । दूसरे ही क्षण खून का एक और कतरा बमबने लगा । तृप्ता भागकर डेटोल में जाई । रई से उसके गाल पर लगात हुए वाली

मैंन उसे यह भी समझाया है कि दान से बहो कि जब तक वह उसके पिछले खत नहीं लौटाएगा वह उससे बात नहीं करेगी ।”

कुशल ने कह रहा लगाया और बोला ‘तुम ऊपर उसे फेंसाओगी ।’

‘फेंसाऊँगी क्या ?’

‘उससे न तो खता को मध्य करते ही बनगा और मँभालकर रहेगी तो किसी वक्त भी राज खुल सकता है । कुशल न कहा ।

तृप्ता डेटोल में गयी रई से कुशल के गाल सहलात हुए बोली, “भाइ म जाए सुन्नी और उसके खत । अगर आप आज पिक्चर नहीं जाएंगे तो मैं आपके लिए कुछ खरीदकर लाऊँगी ।”

“तुम इतना ध्यान क्या कर रही हो तृप्ता ?” कुशल ने तृप्ता की कलाई पकड़ ली और उसी रई को तृप्ता के गाल पर घिसने हुए बोला “पहले तो तुम स्नानी ।”

‘बस-बस । तृप्ता ने बात बीच में ही काटत हुए कहा, बसलाइए आपके लिए क्या लाऊँ ?’

‘मैंने लिए एक साट खरीद लाओ ।” कुशल की पिडलिया में फिर जार का दद होन लगा था ।

तृप्ता उस प्रेम के अतिरक्त में मचल उठी गिनान लगी, नहा साट नहा । एक नई बुगाट, एक आपकी प्रिय पुस्तक, नया दुप बस और ” उमने कुछ सोचने हुए कहा ‘और टाकियाँ लालीपाप ।’

“तुम सिर्फ अपने लिए टाकियाँ, लालीपाप ल आओ ।”

‘नहा मैं सब चीजों से आऊँगी ।’

‘तुम्हारे पास कितने पैसे हैं ?’

“पाच रुपए ।” तृप्ता ने थूक निगलते हुए कहा ।

“पाँच रुपया स तो यह सब कुछ नहीं आएगा, तुम्हारे पास जहर और पस होंगे ।”

“कसम से पतने ही हैं ।” तृप्ता ने कहा, ‘आप सोम से पूछ लें, वह पाच रुपए ही दकर गया था ।’

कुशल शेष बना चुका था परंतु तुरंत नहाना नहीं चाहता था, बाला, ‘मला तुमने सोम से पसे क्या लिये ?’

तृप्ता का चेहरा छीले जालू की तरह हो गया बोला ‘आपने मना किया होता तो कभी भी न लेती ।”

पसे लेन में तो कोई हज़ नहीं था । कुशल ने कहा क्या ताहक उसका खच करवाया जाए ? उस दिन आया तो दुकान पर बहुत से फल भी खेता आया ।” झूठ बोलकर उसे दुखी हुई ।

‘आपने बताया क्यों नहीं ?’

मला इसमें बतान की क्या बात थी ? और फिर तुमने भी नहीं बताया था कि वह पसे भी दे गया है ।’

बता ता दिया है ।’

“खर ! कुशल ने बात समाप्त होते देख टहोका दिया ‘साम तुम्हारा क्या लगता है ?”

बुआ का लडका है । आपको कई बार ता बताया है । उसने चिढ़कर कहा ।

“मैं हर बार भूल जाता हूँ ।” कुशल ने हँसते हुए कहा तुम्हारे ब्याह में सबसे अलग चलम खड़ा जिस ढंग से रा रहा था उससे तो मैंने अनुमान लगाया था कि जरूर मेरा रबीब होगा ।”

‘रबीब के मानी क्या होने हैं । तृप्ता ने तुरन्त पूछा ।

‘रबीबी में बुआ के लडके का रबीब कहते हैं । कुशल ने खाट से उठन हुए कहा जोर कंधे पर तोलिया रखकर बाथरूम में चला गया ।

जब कुशल ने बाथरूम का दरवाजा बन्द किया तो उसने खाट घसीटन की आवाज सुनी । उसने सोचा, अगर वह होता तो गायद टूट घभीटता । कपड़े उतारने में पूव उसने महसूस किया कि स्नान में पूव एक मिगरेट मज़ा दे सकती है वह खुद सिगरेट उठा लाता परंतु जब उसे चार हावा से ताला लगाने की आवाज आई तो उसने खुद जाना उचित नहीं समझा । उसने तृप्ता की आवाज लगाई कि वह एक सिगरेट दे जाण । तृप्ता ने दूसर ही क्षण झराश में सिगरेट और माचिस पकड़ा दी । मिगरेट पकड़ते हुए उसने मन में तृप्ता की प्रति करुणा का भाव उतरन लगा । उस लग रहा था कि वह एक मामूली-सी बात का स्वर माहक ही नहीं हो रहा है और अपन मनोरजन

क लिए तृप्ता को परेशान कर रहा है। और यह मनोरजन का साधन भी अंध के हाथ में बटेर की तरह उसे प्राप्त हो गया था। उस दिन एक पुस्तक ढूँढते-ढूँढते वह तृप्ता क ट्रक की भी छानबीन न करता, तो कदाचित् इससे बचित ही रहता। पुस्तक न मिलने पर उसने महसूस किया था कि ट्रक में वक्त काटन के लिए और बहुत सी सामग्री भरी पड़ी है। ट्रक में कपड़ों के नीचे जो एक साधारण-सा पस पड़ा था उसमें मट्रिकुलेशन का सर्टिफिकेट, तुड़ी मुनी-सी दो एक तस्वीरें, (जिनमें युवक भेष में तृप्ता का एक चित्र भी था) माला से बिखरे हुए कुछ मोती एक मला पिक्चर पोस्टकार्ड और एक सट की लाली सींगी बहुत हिफाजत से रखी हुई थी। मट्रिकुलेशन का सर्टिफिकेट पलकर कुशल गिराल हा गया था। उसे लग रहा था जैसे अनजाने में उससे चूड़ा जिवट हा गया हो। सर्टिफिकेट के हिसाब से तृप्ता की उमर कुशल से नौ साल कम उठनी था। उसने सर्टिफिकेट से तृप्ता के अंक भी न पढ़े थे कि वापस पस में रख दिया। ट्रक में सबसे नीचे जखवार का एक बड़ा कागज पछा था, परंतु साफ पता चलता था कि कागज के नीचे भी कुछ है क्योंकि कागज एक जगह से ऐसा उठा हुआ था जैसे उसके नीचे एक बड़ा भटक छिपाया हुआ हो। कुशल ने बड़ी एहतियात से वह भटक निकाला। कागजों का एक खस्ता पुलिदा था, जिसमें दोनों के खत थे—साम के भी और तृप्ता के भी जो शायद तृप्ता ने चालाकी से वापस ल लिए थे या सोम न शराफत से लौटा दिए थे। खत पढ़ते-पढ़ते कुशल कितनी दूर हसना रहा था। तृप्ता ने वही बातें लिखी थीं जो कभी कभी भावुक होकर उससे भी किया करती है। साम के खत पढ़कर तो वह हँसी से लोटपोट हा गया था। सोम की शवल देखकर तो अनुमान नहीं लगाया जा सकता है कि वह इतना भावुक हो सकता है और स्पलिंग की इतनी गलतियाँ कर सकता है। उस वार जब सोम आया था तो उसने थोड़ी-थोड़ी मूँछें भी बड़ाई हुई थी। कुशल को यह बात बड़ी अजीब लगी कि मूँछ बढाकर भी व्यक्ति भावुक रह सकता है—मूँछावाला भावुक। ऊपर इस बात में कही हूँ मर है जो कुशल का बेतरह हँसी आ रही है।

साम को जब तृप्ता बाजार से लौटी थी, तो उसने कहा था 'तृप्ता, तुम तीस वरम की कब होगी?'

क्यों आप मुझे बूढ़ी देखना चाहते हैं?'

'नहीं, बूढ़ी नहीं, लेकिन बन्ची भी नहीं। काश! तुम तीस साल की होता!'

यह कहकर कुशल हस पड़ा था।

कुशल बायस्म से लौटा तो कमरे का रूप एकदम बदला हुआ था। खाट, जो उससे पूव कमर के ठीक बीच में पड़ी थी, अब दूसरे कमरे में खुलन वाले दरवाजे के साथ टिका दी गई थी और उस पर अगूरी रंग की एक नई झीट बिछी थी। खाट के साथ ही दीवार से लगा तृप्ता का ट्रक पड़ा था, जिसपर उसी के द्वारा काढ़ा हुआ एक

सुन्दर मेजपाश बिछा था और जिसके ऊपर बठी तृप्ता त्रिशिष्ट से कुछ बून रही थी। उसने अपनी फिरोजी आँखा में काजल की गहरी लकीरें खींच ली थी। होठ लिपस्टिक के हल्के-से स्पर्श से किरमिजी हो गए थे।

कुशल ने यह परिवर्तन देखा तो मुस्करा दिया। उसकी मुस्करात देखकर तृप्ता ने कहा 'आप मुस्करा क्या रहे हैं?' यह कहकर तृप्ता त्रिशिष्ट से पीठ खुजलान लगी जिससे उसका गलाउड़ गले के नीचे से गुब्बारे सा पूर आया। कुशल के मन में क्षण भर के लिए यह विचार आया कि वह बाहर का दरवाजा बंद कर आए पर तु स्नान कराने से उसकी पिंडलियों को थोड़ा सा सुकून मिला था जिसे वह कुछ देर कायम रखना चाहता था। उसने सर पर कधी फेरते हुए कहा "तुम कहती हो तो नहीं मुस्कराता।"

आप कुछ सोच रहे हैं। तृप्ता त्रिशिष्ट पर दृष्टि गड़ाकर बोली, क्या सोच रहे हैं?"

कुशल ने सोचने की कोशिश की और कल्पित प्रेमिका का पुराना किस्सा छुड़ दिया "दरअसल मुझे शीला याद आ रही थी। जब मैं हँसता था तो वह भी तुम्हारी तरह टोक देती थी। जब सिगरेट पीता था, वह मुझसे दूर जा बैठती थी। जब कभी उसके घर जाता तो नौकर को भेजकर सिगरेट मँगवा देती। अजीब लडकी थी शीला भी।"

कुशल ने सिगरेट सुल्गाई और खाली पकट नाटकीय अंदाज में दूर फेंक दिया। तृप्ता ने त्रिशिष्ट से आँखें नहीं उठाई। कुशल ने तृप्ता की ललित करने धुँएँ का एक गहरा वादल उसकी आँखों में डाला। उसे आशा थी कि ताड़ी लिपस्टिक पर थोड़ा सा धुआँ जलर जम जाएगा। अपनी बात का उस पर प्रभाव न होने देख उसने बात आगे बढ़ाई कि कैसे वह शीला के साथ पिकनिक पर जाया करता था और।

"बस बस मैं और नहीं सुनूँगी। तृप्ता ने त्रिशिष्ट से आँखें उठाकर कुशल की आँखों में अविश्वासपूर्वक देखते हुए कहा आप मुझे बचकूफ बना रहे हैं।

कुशल ने एक लम्बा कद लिया और बोला अच्छा अब तुम मुझे बचकूफ बनाओ। उस बार उसने नाक से धुआँ मुकन किया। तृप्ता को चुप देखकर उसने कहा, बनाओ भी।"

क्या?"

'यही बचकूफ।' उसने तृप्ता की आँखों में देखते हुए कहा तुम शायद समझना हो कि मैं पहले ही बचकूफ हूँ।

बचकूफ तो आप मुझ बना रहे हैं।' तृप्ता का चेहरा मुन्न हो गया था और बटुता पी जान से उसने रसीसी-सी हाँकर कहा, रसीख के मानी क्या हाँ है?

बुझा का लडका। कुशल ने सिगरेट के टुकड़ों का पार से मसलते हुए कहा, कहानी-लभिका हाँकर हमका भी अब नहीं पता? कुशल का विन्ति था कि अब वह

दाम्पत्य

दोना आमने सामने की कुर्सियाँ पर बठे थे—उर्मिला और राजनाथ मेहता । बीच में चाय की गोल त्रिपाई पड़ी थी । उस पर चाय के खाली प्याले और सिगरेट का डिब्बा पड़ा था । राखदान नहीं था रहना चाहिए था । उर्मिला को भी रहना चाहिए था मगर उर्मिला नहीं थी ।

कितने दिनों तक नहीं थी ?

राजनाथ ज्यादा सोच विचार करत रहने वाले व्यक्ति नहान है । चाहने भी हो तो अवसर नहीं मिलता है । जान सी एस नहीं हो सके । हाथ पसारने पर भी डाक्टर परितोष गोस्वामी की कमिष्ठा बना मुस्मिता गोस्वामी से विवाह नहान कर पाये । यूरोप जाने के लिए कही बज नहीं मिला । पितामह की बनवायी हुई राजस्थानी डिजाइन की आलीशान कोठी बेचनी पड़ी । जियना क किसी रेस्तराँ में बठे बिस्तर पी रहे थे, और अपनी मकान मालकिन की लडकी से भारतीय संगीत के बारे में फ़मान मरी बातें कर रहे थे । सभी नौकर ने तार लिया था—उनकी माँ का देहांत हो चुका था । सोचन को कितनी ही बातें थी लेकिन अवसर कहाँ मिलता है । सेट्रल एज्यू की एक गानगार नयी कोठी में दफ्तर है । नयी एम्बसडर गाड़ी है । क्लारिन्टी में बदन वाल राजनीतिक लीडरों से दोस्ती है । कम्पनी क बोर्ड की बैठक । मैनेजिंग डायरेक्टर से तनमनी । जहरा फाउल । किरानिया की टबला की बतारें । ए स्लोइ डियन स्टनाप्रापर । लगातार टेलिफोन की बज्ज-बुज्ज-बुज्ज । लगातार जनरल मैनेजर का बुलाना । लगातार पार्टियाँ ।

मुँह कर अतीत की आर ग्यन का अवकाश कहाँ मिलता है । सामने क गान में भविष्य तक नहान दख्न मकत । यतमान पर दूमरे क्षण अतीत बन जाता है । और कभी कभी भविष्य बन जाता है ।

उर्मिला कितने दिना तक नहान था ?

कई बार उनके अन्तमन में यह प्रश्न उठता है । किन्तु दूमरे ही भण व सोचन सगे है कि गान को धीमती मल्लाना क यहाँ डिनर पर जाना है, और नीमती मल्लाना बड़ी बानूनी ओरत है और उन्होंने कहा उर्मिला क कहीं शल्लत मवान पूरा किया था ? राजनाथ नहान चाहते कि बीते हुए जिनो के बारे में उनकी पत्नी क बात प्रश्न किया जान ।

वे उत्सुक और उनावले और शकालु स्वभाव के व्यक्ति नहीं हैं। उमिला जा कहती है निनना कहती है, मुन लेन हैं, अनिच्छा नहीं दिखाते और उत्सुकता भी नहीं। रात में अपने-अपने बिस्तरे पर होते हैं। सिरहाने पर हटकी दूधिया रोशनी जलती रहती है। राजनाथ 'इन्कमटक्स' के कागज देख रहे हैं। उमिला झटक से उपन्यास बंद करके कोने की टेबल पर फेंक देती है। उठती है और आगे फला कर पूछती है—मुझ पर नाराज हो ?

नहीं तो !—वे एक बार सिर ऊपर उठाते हैं फिर कागजों में खो जाते हैं। इस 'नहीं तो मे क्या है ? ऊब या अनिच्छा या घणा या क्षमा या कुछ भी नहीं है ? केवल तटस्थता है ? नीचे उतरती है और बाहर गल्लनी पर जा कर सामन के मकाना की बंद खिड़किया देखती रहती है। विचारियों के उस पार पतिया का रस है पतिया का मान-अभिमान है बच्चों की विरकारियाँ हैं, हसी-ठहाके हैं, गारागुल है, गान्ति है मुख शान्ति है।

राजनाथ ने चाय के त्वाली प्याने में मिगरेट का टुकड़ा डाल दिया। उमिला धोली—घर में एक भी रामदान नहीं है, और भी कई चीजें नहीं हैं। कल दोपहर में लौटते वक़्त

तुम क्यों नहीं चली जाती हो ? कल गाड़ी छाड़ जाऊँगा। न्यू मार्केट जा कर खरीद परोख्त कर लेना। मुझ फुरमन कहाँ मिलनी है।—राजनाथ को लगा, जैसे आज ही वे दोनों शादी में 'रजिस्ट्रार' दोपहर से लौट रहे हैं, और जैसे कल ही शाम को घर में दोस्तों की दावत दो जान बानी है। अपने मन में नयापन का यह भाव उन्होंने जान बूझ कर पदा नहीं दिया, कोराग नहीं की। यो ही पिछली सारी घटनाएँ भूल गये, और सामने की घुर्सी पर तन कर बठी हुई उमिला उन्हें बहुत नयी बहुत प्यारी दीखने लगी। यह स्वाभाविक नहीं है। आदमी दुघटनाओं की स्मृति जल्दी नहीं भूलता है चाहता है मगर भूल नहीं पाता है बहुत चाहता है।

राजनाथ मेहता तब तक अपनी कम्पनी के मुख्य बिनी अफसर भी नहीं हुए थे। अपनी कार भी नहीं थी। कम्पनी की कार का इस्तेमाल करते थे। अक्सर और मिहनती थे और ईमानदार थे। श्रेष्ठ इस्टिम के एक जलसे में एक दोस्त ने उमिला खान्ना में परिचय कराया था। वह बचपन बालेज में पढ़ती थी। बहुत कम उम्र और बहुत मुग़ल दीखती थी। पिता किसी विलायती 'फम' में 'पी आर आ' थे। अगल ही महीने राजनाथ और उमिता कम्पनी की कार में उठ कर 'शानी रजिस्ट्रार' में चले गये। राजनाथ ने पत्नी के लिए कामती जूँठड़ी खरीदी। उमिला कितन ही दिनों तक डरता रही गरमाती रही बात बात पर हँसती रही। जीवन का यही चक्र चरता रहा अनन्त काल तक चलता रहता लेकिन

राजनाथ ने कोशिश नहीं की, यो ही पिछली मारी घटनाएँ भूल गये और

उमिला स बोले,— नहा तो ऐसा करेगे। तुम बल मेरे दफ्तर चली आओगी। 'यू भावेंट चलोगे। फिर, कोई 'पिक्चर' देखने चलोगे। रात का खाना उधर ही खा लगे।

उमिला इतना प्यार के लिए प्रस्तुत नहा थी। भयभीत हो गयी। यह राजनाथ उससे कुछ पूछत क्या नहीं? गुस्सा क्या नहीं करत? घर से निकल जाने को क्यों नहा कहते हैं? उमिला एक बार अपनी बिसी सहेली के साथ सिनेमा चली गयी थी ता राजनाथ हफ्ते भर पामल बने रहें थे। विश्वास ही नहीं हुआ था कि साथ में कोई सहेली थी कालेज के दिना का कोई पुरुष मित्र नहीं था। उमिला कितनी रोयी धायी थी। राजनाथ कितनी बार कलब में जाकर हिस्सी भी आयें थे। कितनी बार चीखें थे—उम्मी, तुम्हारी देह से परायी गंध आती है

ब आज क्या नहीं चीखते हैं?

१९५० में उमिला का विवाह हुआ था। पिताजी और माँ ने दिखावे की नाराजगी दिखायी थी फिर खुश हो गये थे। राजनाथ उमिला से दस प्यारह साल बड़ा ही तो क्या हुआ। लडकी ने अपनी पम्पड से शादी की है। अच्छी नौकरी है। यू अलीपुर में कोठी है, मोसायटी में मान-आदर है। १९५२ के सितम्बर में राजनाथ को दफ्तर के काम से जमनी जाना पड़ा। लगभग सात आठ महीने उधर ही रहेंगे। पूरे काटि नेट का दौरा करना होगा। हो सकता है ज्यादा दिन भी लगे। राजनाथ कोशिश करने पर भी परनी को साथ नहीं ले जा सके। उमिला जाकर बरेली भी क्या। ब ता हम देश से उस देश दौड़ते भागते रहेंगे। उमिला अपने पिता के यहाँ भी नहीं गयी। बिराये की कोठी में ही अकेली पड़ी रही एकदम अकेली। और, एकदम स्वाधीन। एक नौकर एक आधा और चार सौ रुपये बिराये की कोठी। कभी-कभी राजनाथ का कोई दोस्त फोन से हाल चाल पूछ लेता था। कभी कभी उमिला अपनी मा के पास चली जाती थी। कभी कभी कोई सहेली। कभी कोई फिल्म। कभी 'विएटर' और ज्यादातर जासूसी उप-यास और फिल्मी परचे और रेडियो और पडोस के बच्चा से खलते रहना। बसे हर हफ्ते राजनाथ के पत्र आते रहते थे। लम्बे लम्बे उवा देने वाले प्यार और प्यार की बाता से भरे पत्र। उमिला एक बार में समूचा पत्र पढ़ भी नहीं पाती थी। पढ़ जाती थी नाराज हो जाती थी। इतना प्यार है, तो अकेले गये ही क्यों? और जल्दी लौट या नहीं आते हैं?

एक दिन श्यामली आयी। राजनाथ के एक दास्त की बहन है, बिधवा है। पति वायु सेना में था। कश्मीर मार्च पर विमान दुर्घटना में मारा गया। श्यामली बड़ी प्यारी है और हर रात सेराज ड में 'डिनर' लेती है। आजाद तबीयत की है। हँसी मजाब पसन्द करती है। बगला फिल्मों में काम करना चाहती है। दो एक निर्माताओं से बात-चीत चल रही है। बड़े ही ढंग से कपड़े पहनती है। उमिला को 'यामली पसंद नहीं है क्योंकि श्यामली पत्नी नहीं है माँ नहीं है बहन नहीं है सिर्फ 'यामली' है।

विधवा भी नहीं है। मगर, श्यामली को उमिला बहुत पसन्द है क्योंकि कभी-कभी श्यामली अपना 'बस' अपने घर में ही मूल आती है, और उमिला बीस-तीस रुपया के लिए कभी इन्कार नहीं कर पाती है। और भी कई बातें हैं, औरताना बान !

श्यामली आयी। 'रेडियोग्राम' खोल दिया गया और बयरा काफी दे गया। श्यामली कमरे में धूम-धूमकर नाचती-खलती रही। वित्तार्थे फन्दान तस्वीरें अन्वयम जलमारी सादियाँ राजनाथ द्वारा जीती गयी ट्राफियाँ बपगाठ पर उमिला को मिली हुई सेंटें श्रृंगारदान जाईने बायलिन।

श्यामली धूम धूमकर कमरे की हर चीज उलटती-पलटती रही। रेडियोग्राम से उमरते हुए गीत के स्वर में स्वर मिलाकर गाती रही। हँसती रही। उमिला के गले में बाँहें डालती रही। फिर चक गयी, और काफी पीन लगी, और बोली—अगर मेहना वहाँ से कोई मम साहब ले आएँ तो ?

उमिला को उसे जोगो का धक्का लगा। लेकिन वह सुरत ही मेंमल गयी और राजनाथ के पत्रों की छास-छास पत्रितियाँ दिमाग में दुहराने लगी, फिर हँसती हुई बोली—तो क्या ? मैं भी किसी सेठमाह्व के साथ बिलापत धूमन चली जाऊँगी।

श्यामली एक फिल्म निमाता के साथ तीन चार महीने लल्लन रह आयी थी। उमिला ने इसी बात की ओर इशारा किया था। श्यामली को मजाक बुरा नहीं लगा। उसने कहा—तुममें यह हिम्मत कहाँ है रानी !

फिर पता नहीं किस जलमारी के किस दरार में श्यामली का पुरानी ब्र डी की अठारह औंस वाली बड़ी बोतल मिल गयी। भोपहर का बक्का था। सारी खिडकियाँ बंद थी 'एयरकंडिशनर' की घन् घन् घन् हल्की आवाज शुरू रही थी। फिर भी, श्यामली के हाथ में अठारह औंस की बोतल देखकर उमिला उससे से भर गयी। बड़े होला ब बड़े जलसो ॥ भी वह शराब नहीं पीनी है, तो एक पेग भी नहीं। पोट या 'साइडर' तक नहीं। विश्वविद्यालय में भी तो एक बार हुगली पर नाथ की सर करन गयी थी। तीन चार सहेलियाँ थी। खाने का सामान एक चीनी रेस्तरा से लिया गया था। एक अनुभव की लडकी हिलस्की के दो पाई ट' ल आयी थी। उसके पहले या उसके बाद उमिला ने शराब कभी छुई तक नहीं। देखते ही डर लगन लगता था। नाथ पर आया 'पेग' पी कर ही वह पागल हो गयी थी हुगली में कूँने लगी थी। मा जान गयी थी कि उम्मी कही से शराब पी कर आयी है। पिताजी महीनो नाराज रह थे

बकत देवकत के लिए ही राजनाथ ने ब्र डी की बालू घर में रखी थी। मरिया में ब्र डी की एक बूँद अमृत का काम करती है। मगर अमस्त-मितम्बर के बलवत्ते की इस गर्मी में, श्यामली ने नीकर को बुलाया और कहा—म सेर बप ले आओ। सोडे की दो-तीन बोतलें भी लाना। नहीं साडा नहीं कोकाकाला लाओगे।

बातल खाली हुई तो अधेरा फल चुका था। उमिला दम चार श्यामली का बना

चुकी थी, कि यह अकेला घर उसे काट खाता है। नीकर स भी डरती रहती है। पास्त मन से भी। श्यामली सौ बार उर्मिला को कह चुकी थी, कि वह कितनी बड़ी फिल्म अभिनत्री क्यों न हो जाए, उर्मिला का नहीं भूलेगी। आज का दिन नहीं भूलेगी। आज की रात

दोनों सुर म सुर मिला कर आज की रात की खुशिया के बार म एक बगला गीत गान लगी। फिर, श्यामली ने कहा—चलो, चौरंगी चलत हैं। टिकाज म बठकर खाना खाएंगे, और बबरे देखेंगे। आज की रात मैं तुम्हारी काठी पर हा रह जाऊंगी। तुम्ह अकेली नहीं रहने दूंगी, उदास नहा रहन दूंगी।

पूर आठ साल धीत चुके हैं। मगर, टिकाज की वह रात उर्मिला की जाँजा म आज तक धु धली नहीं हुई है। कभी धुँधली नहीं होगी। उर्मिला उस रात की घटनाएँ और रात के बाद सबड़ा राता की घटनाएँ अपन पति को सुनाना चाहती है। पूरा वास्तान सब-सब कह देना चाहती है। चाहती है कि उसका पाप म उसका अपराध म, उसकी पीड़ा म उसके पदचाताप म, उसके चले जान म और उसकी वापसी म राज नाथ हिस्ता बटाए। मगर राजनाथ न अतीत पर लाठे का दरवाजा डाल दिया है दरवाजा बंद कर दिया है। कुछ नही पूछत हैं सिफ कहत है—“यू माफेंट चलन। फिल्म देखो। प्रिंस जाज घाट क सामन गाड़ी लगा देंगे और हुगला म नहाता हुई चाँदनी और स्टीमर की कतारें देखते रहेंगे।

राजनाथ मेहता का यही स्वभाव है। जो वस्तु स्वाकारत है उस पर किसी दिन शक नहीं करता। जिस एक बार दोस्त बना लेते हैं उससे कभी हाथ नही साँपते। एक ही मिगरेट पीते हैं। एक ही दरखी स बपड़ सिलात हैं। एक ही बल्ब क सन्तरप है। और जब उर्मिला नहा थी, तो वह कभी खयाल भी नही आया किती दूसरी स्त्री स बात भी की जाए। दफनर जात रह और फागला म माँग्या म शयरा म दरना बडा म सोये रहे। कभी-कभी कहा और जाने रह।

दमदम हवाई अड्ड पर उतर द ता द पार क लाग आद थ। उर्मिला नहीं आयी थी। राजनाथ न पत्र द्वारा खान का तारीफ सूचित कर दी था। तार भी दिया था मगर उर्मिला नहा आयी थी। उर्मिला नहा थी। नीकर घर क सामान गुरा क भाग गया था। सिफ आया थी, और राजनाथ का दसकर रोन लगा था। घोड़ी कुछ मा नहा मिफ रानी रही थी। राजनाथ न कुछ पूछा मा नहा राना पत्न करन का कहा। और काफी बना खान का कहा। आया बगालिन घरवासी था। जवान थी फिर भी ईमानदार थी। उर्मिला चली गया और चाँदा का टी-शर्ट और पैज ही कई अगवाव बाँध कर नीकर चला गया फिर भी क नही गया। गाँव क लोटे जाने का कसूरदार करता रही। गाँव आ गये तो रान भीगन लगा।

दुसर दिन राजनाथ दफनर गये। वह बरा क सकर जनरल मनत्र तब

का मायूम था, नि महुता साहब की पत्नी उनके परोप म घर छाडकर भाग गयी है । मनजिग डाइरेक्टर' न बुला कर कहा—मुझे आपम पूरी सहायुभूति है मिस्टर मन्ता । आप धीरज से काम लीजिए ।

राजनाथ की पत्नी हुई आंखा म आग की लपटें पदा हान लगा । व गुस्म म आ गये । बोले—महानुभूति की मुझे जरूरत नहा है, अग्रवाल साहब । मिसेज महुता को यही की गर्मी बदाम्न नहीं हुई हागी । किसी हिलस्गान पर हागी । चली आएंगी ।

भगर, अपनी बात पर उहे स्वय ही विस्वास नहीं हा रहा था । व जानत थ उमिला लोट आन व लिए नहीं गयी है । फिर भी वे लालबाजार पुलिस स्टेशन गय और रपट गिया आये । अबबारो म सगिप्न इतिहार भी दे दिया—उम्मी, मैं आ गया हूँ । तुम जहाँ भी हो चली आजा । रुपया की जरूरत हो ता लिया ।

रोज डाक का इन्तजार करत रह । पायद कहा से उमिला का कोई पत्र आ जाए । कोई समाचार मित्र जाए । राजनाथ महुता न बल्ब जाना छोड दिया । लोग सम्बेन्ना प्रकट करत थे—बिचारा महुता । पता नहीं, बीबी किस आबारे के साथ भाग गयी है ।

पाटिया म जाना बन्द कर दिया । एक्दम अबल हा गय । दान और इतिनाम की बड़ी-बड़ा किताब पडन की आदत डाल ली । बटॉड रसेल विल ड्यूरेन और टायनबी म लो गय । और उमिला वापस नहीं आयी । साल भर बीत गया । नो साल बीत गय । बइ साल बीत गय ।

तब, एक दिन श्यामली आयी । कोई औरत राजनाथ क घर म नहा आनी थी । उमिला क वक्त म आती थी । उमिला के बाद ता राजनाथ किसी दोस्त का भी नहा बुलाते थ । व्यथ म उमिला की चर्चा छिड जाएगी । व्यथ म मनस्ताप बनेगा । भगर श्यामली धायी । बोली—मैं जानती हूँ आप किसी का आना पसन्द नहीं करत हैं । भाइ साहब न मुझे बताया था । भगर, मुझे आना ही पडा । मुझे आपम एक मदद चाहिए । नहा ता मैं मुसीबत म पड जाऊँगी

इन छह-सात वर्षों क भीतर श्यामली ने दो एक फिल्मा म अभिनय भी किया था । गयर डिडिया इटरनेगल म 'होस्टस' भी रह चुकी थी । आटपेपर पर औरता का एक साप्ताहिक पत्र भा निकाला था । बीमे की एकेसी भी की थी । किसी आदमी म गान्दी भी की थी और तलाक भी ले लिया था । फिर भी श्यामली बड़ी श्यामली थी । खूबसूरत तदुस्त बातूनी हरदम खुग रहने वाली, हर वाक्य मे अंग्रेजी क चार गल्ल बोलन वाली, आधुनिक परम आधुनिक । राजनाथ ने किसी दिन भी उस गह नहीं दी थी । श्यामली की कोई बात उन्हें पसन्द नहीं थी । क्याकि श्यामली स्त्री नहा थी पाक्स्ट्रीट का कोई गानदार रेस्तरा थी ।

क्या मदद चाहिए ?—राजनाथ ने पूछा । व रूसो का कंफेण्ड पढ़ रह थ और सनिवार की शाम काट रह थ । श्यामली उन्हें फ्रासीसी राजपरिवार की महिला

जसी लगी। बातों में वही घमड़। रूप में वही आभिजात्य आकषण। और चरित्र में वही सस्तापन। श्यामली जैसे तयार होकर आयी थी। मुस्कराती हुई बोली—मैं कुछ कम पढ़ गयी हूँ। पाँच सौ रुपये की सस्ती खरबत है। रुपये नहीं मिलने से बड़ी बेइज्जत हो जाएगी। मैं जानती हूँ पाँच सौ रुपये कम नहीं होते हैं। गायद मैं कभी वापस भी नहीं कर पाऊँगी। मगर आप चाहे तो मदद कर सकते हैं। आपके लिए बड़ी बात नहीं है।

श्यामली की साँसों में आडीकोलन का, और हिलस्की की मिली जुली गंध आ रही थी। उसकी आँखें रह रहकर चमक उठती थी। वह लगातार मुस्कराती जा रही थी। राजनाथ ने उमिला के जान के बाद कभी एक घूँट भी शराब नहीं पी थी। इच्छा हुई थी और वे मावुका भी थे। मगर उहोन्तय कर लिया था मावुकता में बहकर जिदगी बरबाद नहीं करेंगे। उमिला चली गयी, तो मैं दुःख में पायल क्या हो जाऊँ? जो मेरा अपराध नहीं है, उसके लिए सजा क्यों भुगतूँ? शराब नहीं पीऊँगा। औरता के पास नहीं जाऊँगा। ऐसा कोई काम नहीं करूँगा जो भूलने के लिए अपन-आप को भूलने के लिए लोग बिया करते हैं। मैं दुःख भूलना नहीं चाहता हूँ। मैं उमिला को, और उसके चले जान को भूलना नहीं चाहता हूँ।

राजनाथ उमिला को बहुत प्यार करता था। उस प्यार में यौवन की चञ्चलता नहीं थी, वामनाओं की अस्थिरता नहीं थी। शांति थी और समुद्र जसी गहराई थी पृथ्वी जसी विशालता थी। उमिला थी, तब यह अगाध शांति नहीं थी। उमिला चली गयी है, तब प्यार की यह महानता पदाहु है। अभाव ने राजनाथ के प्रेम को शांत और उदार कर दिया है। उह दुःख नहीं है, घणा नहीं है, क्रोध नहीं है, प्रतिहिमा नहीं है सिर्फ है आशा कि शायद उम्मी लौट आएगी। आशा है कि उम्मी मरी नहीं है, और वापस आ जाएगी। राजनाथ की मृत्यु से पहले वापस आ जाएगी।

मगर श्यामली की साँसों से हिलस्की की तेज गंध आ रही थी। मगर उमिला को गये हुए सात-आठ साल बीत गये हैं। मगर, राजनाथ ने न कभी शराब पी थी न कभी किसी औरत के साथ कार में घूमे थे न होटल में शाम गुजारी थी न रात में बहुत देर से घर वापस आये थे। श्यामली मरी-पूरी औरत थी। कितनी उन्नत कुछ पता नहीं चलता है। भाटी हो गयी है। फूले हुए गोश्त की बहतायत दह पर है। हसती है तो पूरा शरीर हिलने लगता है। ग्लाउज बड़े कायदे से चलती है। अब भी लगता है, किसी फिल्म में आधुनिक गकुत्तला का अभिनय करके जा रही है। अब भी लगता है श्यामली पाँच सौ रुपये मांग रही है तो गर्ल नहीं माँग रही है जयाना भी नहीं। रुपये हा तो दना ही चाहिए।

राजनाथ ने पुकारा—गंगा, एक ग्लास प्याला दे जाओ। पाट में काफी है। पानी का ग्लास भी लाओगी।

श्यामली की समझ में आ गया, मेहता की तटस्थता का वफा पिघल रहा है। अपनी विजय पर वह खुश हुई। मेहता श्यामली से अच्छी तरह परिचित नहीं है। जो लोग परिचित हैं वे अब श्यामली के लिए काफी नहीं मँगाते हैं। अपने घर में नहीं मँगाते हैं। किराये पर कमरे लगाने वाले होटलों की बात और है। वहाँ का उजाला भी अँधेरे के बराबर होता है। और अँधेरे में कौन किसे पहचानता है? लोग खुद को भी नहीं पहचान पाते हैं। जाकृति बदल जाती है। स्वर बदल जाता है। उद्देश्य बदल जाता है।

गंगा प्याला लेकर आयी और काफी बनाने लगी। एक घंटा उसने श्यामली का देखा फिर सिर नीचे झुका लिया। श्यामली की तरफ दुबारा देखने का उसे साहस नहीं हुआ। राजनाथ यह बातें समझ नहीं सके। श्यामली समझ गयी और आतंकित हो गयी। गंगा ने प्याला श्यामली के पास टेबल पर रख दिया, और तभी से बाहर निकल गयी। गंगा अब तक नहीं झुली है। एक छन के लिए भी नहीं झुली है। एक-दूसरे के गले में हाथ डालकर उमिला और श्यामली कमरे से बाहर निकली थी, और बिना कुछ बोले सीढ़ियाँ उतर गयी थी।

काफी पीन के बाद श्यामली ने पूछा—बल्कि मेहता साहब कहीं घूमन चला जाए। महा बड़े बड़े क्या करेंगे? आप इतने उदास क्या होखते हैं? जरा हसिए-बोलिए, मैं पत्थर की मूर्त नहीं हूँ, जवान औरत हूँ। जवान नहीं भी हूँ तो बूढ़ी नहीं हो गयी हूँ।

और श्यामली की भरपूर खिलखिलाहट डाढ़ गरूम की दीवारों में टकराने लगी। वह बड़ ही इत्मीनान से मौफे पर अघड़ेगी थी। कोई फिज नहीं कोई सगय नहीं, कोई भय नहीं। जैसे बरसों से वन इसी घर में रहती आयी है। शाम बीन रही है, और पति-पत्नी अब सर का जाएँगे। बाजार में हल्की फुल्की चीजें खरीदेंगे खिड़कियाँ के लिए हाथ करेके के पते, तिपाई पर काने में रखने के लिए कोई फूलदान, कोई गिल्लीना, कोई लाउञ्च-सीस।

यहाँ अच्छा नहीं लगता, श्यामली। चला बगल के कमरे में चला यानी महा कमरा गए गरूम है गंगा जाती जाती रहती है यानी बगल का कमरा मेरा मतलब है मैं—राजनाथ मेहता ने एक ही माँ में मगर बीच-बीच में एक-दूसरे इतना कहता किया। फिर गम से लाल हो गया। जैसे स्नूज में पड़ने वाला कोई लडकी पड़ोस की लडकी का गिनमा चलन का अनुरोध कर रहा हो। वह डालन के बाद उन्हें खुद ही आश्चर्य हुआ इतना साहम वे कस कर मक। आश्चर्य हुआ, और घणा हान लगी। अपन ऊपर और श्यामली पर।

ता इसमें गरमान की क्या बात है? मैं आपका खुश दम समझती हूँ, मेहता साहब। मैं आपकी नास्त हूँ। चल्कि बेडरूम में ही चल कर बैठ। हम दाना वच्च

नहीं है, जो करगे, अपनी मर्जी से करगे,—श्यामली मुस्बुराती हुई सोफा उठी, और राजनाथ के पास आकर खड़ी हो गयी। श्यामली लम्बी चौड़ी औरत है। मजबूत है। उसका सहारा लिया जा सकता है। मगर अपन प्रस्ताव की प्रतिश्रिया, और श्यामली के उत्तर की प्रतिश्रिया राजनाथ मेहता पर और ही डग से हुई। मैं दुःख दद म हू इसीलिए श्यामली की बांहों में डूबना चाहता हूँ। श्यामली मेरा दुःख दद समझती है, वसीलिए मेरी बांहों में डूबना चाहती है। नहीं, मुझे कोई दुःख नहीं है। किसी भी बात का दद नहीं है। शिफा शाम हो रही है और श्यामली पाँच सी रुपये ले आयी है, और मैं ह्विस्की की गंध से और शाम के हल्के अँपेरे से पागल हो रहा हूँ। मैं पागल नहीं ॥

बहुत सोच समझ कर, और बहुत स्थिर धाँदों में राजनाथ मेहता ने श्यामली से कहा—तुम बाजार औरत हो। मैं तुम्हारी दोस्त नहीं चाहता हूँ। पाँच सी रुपये तुम्हें चाहिए। मैं चेक दे देता हूँ। चेक लेकर चली जाओ। फिर कभी मेरे पास नहीं आओगी। मुझ पर अपनी ही दया करना।

श्यामली हतप्रभ नहीं हुई। जोधित भी नहीं हुई। चुपचाप वापस लौटकर साफ पर बठ गयी। चुपचाप मेहता की ओर देखती रही। राजनाथ मेहता ने 'हैगर पर टगे कोट की जेब से 'चेक बुक' निकाला। सपे हुए हाथ से लिखा—मिस 'श्यामली तालुके' वार। और पाँच सी का चेक बाटकर श्यामली की तरफ बढ़ा दिया। श्यामली का ध्यान चेक की तरफ नहीं था। वह सिर मुकाये कई बात सोच रही थी। चेक लेकर उठ खड़ी हुई। चेक पस में डालकर जा लगी। दरवाजा के बाहर चली गयी। फिर वापस आ कर कुछ हुए स्वर में बोली—मिस्टर मेहता उमिला बाजार औरत है। किसी भी रात आप उससे कुछ गतिंग होटल में मिल सकते हैं। आप बहुत अच्छे आदमी हैं। शायद अब तक उमिला के लौट आने की प्रतीक्षा कर रहे हैं। प्रतीक्षा मत कीजिए। आप भी बाजार आदमी बन जायें। जीने का जोर चुन रहने का यही एक तरीका रह गया है। हर मद हर औरत बाजार है। त्रिकाण्ड है। जो नहीं है, वह आपकी ही तरह धुल धुलकर मरता रहता है। मैं मरना नहीं चाहती इसीलिए बाजार हूँ। आप मरना चाहते हैं इसीलिए बाजार नहीं हैं। मिस्टर मेहता, होश में आइए।

श्यामली के जाने के बाद, बहुत देर तक राजनाथ वही उसी स्थिति में चुपचाप बठे रहे। फिर नीचे उतरे। गंगा से बोले—मरना गम रखना। मैं बट भर में वापस आ जाऊँगा। सो नहीं जाओगी।

'गराज स एम्बेसडर निकाल कर चौड़ी सड़क पर आ गया। रेलवे पार्सिंग पार किया। दुर्गापुर पुल के उस पार पट्टाल पम्प पर चले। पेट्रोल का मीटर चमक लगा। पम्प का एग्लोइडियम मेकनिक आकर बोला—गुडनाइट, मिस्टर मेहता मा लट ?

प्रदन में स्वाभाविकता भी है व्यर्थ भी है। रात के सात आठ बजें होंगे, जयाना

दर नहीं हुई है। मगर मेहता ता इतनी देर भी बाहर नहीं रहते हैं। दफ्तर स ज्यादा तर सीपे पर चले आते हैं। फिर निक्लते नहीं। मेहता ने ऊनर दिया— 'मर्मविग स्पगल'। ऐड, इट इज नाट सो लट, जागन !

जासन काफी अरसे से इसी पेद्राल-मम्प पर है। पहले उमिला और राजनाथ साथ ही आते थे। पेद्रोल का हिगाव उमिला ही रखनी थी। उन दिना हिलमन गाडी थी। फिर राजनाथ यूरोप चल गये, और उमिला भी वहीं चली गयी। तब स राजनाथ अकेले आत है। जासन उमिला से बहुत बातें करता था। अपन घर परिवार की बातें। हेंसी मजाक करता था। राजनाथ अक्के आन लगे थे ता उसने एक बार पूछा था। राज नाथ ने उत्तर दिया था—'नी लपट भी। वह मुझे छोडकर चली गयी है। कहां चली गयी है ? स्वग ? या कहीं और पर वसान चली गयी है ? राजनाथ का उत्तर सुनकर जासन ने सीम पर भास बनाया था, और चुप हा गया था। इनके बाद उसने उमिला के बारे म कभी कोई सवाल नहीं किया। कोई सवाल नहीं। सहानुभूति तक प्रकट नहीं की। मगर, जासन का देखते ही राजनाथ को उमिला की याद आती है। जासन क सात बच्चे है यह सुनकर एक बार उमिला हेंसन लगी थी। जान्सन न हसी मे साथ देते हुए कहा था— 'मिसेज मेहता आइ विल प्रे टु गारु, यू युड हैव डबल दन भी।' जान्सन प्रायना करेगा कि उमिला को चौदह बच्चे हो। उमिला को, यानी राजनाथ मेहता को।

राजनाथ ने गाडी स्टार्ट की बढमान रोड पर चल आये। नेशनल लाइब्रेरी। जूलाजिकल गाडन। रिसर्कोम। बिक्टोरिया ममोरियल। मदान म पति-पत्नियों के जोडे घूम रह है। बच्चे आइसक्रीम कागने को घेर खडे है। एक जादमी सिर पर सकडा बलून उडाता जा रहा है। एक बच्चा अपनी कार के फुटरोड पर खडा, लगातार हान बजा रहा है। बूढ़ी मद्रामिन नौकरानियां छोट छोट बच्चा के पीछ भाग रही है। कई पजाबी परिवार चाट वाले के पास रक हैं। और जहा जंपेरा है जहां पेडा के साथ है जहां एकांत है वहां सस्त कपडो और सस्ते चेहरो वाली बाजार औरतें खडी है चहल-कदमी कर रही हैं पुलिस से डरती हुई, उगाले से डरता हुई, हर चीज म डरती हुई इन्तजार कर रही है, किसी का भी इन्तजार !

उमिला बाजारु औरत है। राजनाथ मेहता न जोरा म ब्रेक दबायो, और किल्ल बिलक करती हुई, गाडी उछल कर रक गयी। वे चुपचाप गाडी म बठे रह। एक ओरत कोई मद्दा गाना गुनगुनाती हुई उनक पास स गुजरी, मगर कोई इशारा नहीं पाकर, गाडी म आकर बठ नहीं गयी। उमिला बाजारु औरत है, और चु गकिंग हाटल म रहती है। शादी से बहुत पहले दोन्तान लास्ता क साथ राजनाथ एक बार चु गकिंग गय थ। चाइनीज होटल है, रेजिडेणियल। दस रुपये म बारह घटो क क्रिए एक कमरा मिलता है। चाइनीज पोहे मे लकर, अमगीकी बारवान शराब तक मिलती है।

जयादातर जहाजी छाकरे यहाँ आते ह। साथ औरतें लाते हैं। वसे, बु गकिंग म भी आरतें रहती हैं। देसी आरतें, बर्मीज और चाइनीज औरत। दार्जिलिंग की पहाडितें। ए ग्लोइ डियन। राजनाथ महता बु गकिंग गये थे, और वहाँ का वातावरण, वहा क लोगो का देखकर ही वापस जा गये थ। रम्ने का साहस नहीं हुआ था। उर्मिला वहा रहती है। क्या रहती है ?

दो म्पये टिप पाकर, एक बूझा मुसलमान बरा उहं चौदह नम्बर के पलट म ल गया। बोला, दो बर्मी औरतें हैं, और एक हिंदुस्तानी औरत है। हिंदुस्तानी का नाम है उर्मिला। आप शायन उसी क पास जाना चाहत हैं। बहुत शरीफ औरत है। बर्मी किसी ग्राहक से झगडा-तकदार नहीं करती है। जो मिलता है ले लेती है। शराब तक उसको हराम है। एकदम गाय है बिचारी। कही जानी भानी नहीं। महा पडी रहनी है। मजहबदी खयाल की औरत है

दोनों बर्मीज औरतें ड सिय टबल क सामन खली मकअप' बना रहा था। उर्मिला पत्रग के किनारे पाव मोड़कर बठी थी। ग्लाउज पीस पर फूल घना रही थी। केश बाब करवा लिये थे। गरीर पर कोई गहना नहा था। थोड़ी दुबली हा गयी थी, मगर चहुरा एकदम वसा ही था। आखो म वहा सरन्ना। बही अबोध शिशु जसी निरीहता। पहली नजर मे तो उसन पहचाना ही नहा कि राजनाथ है। पहचान कर पलग से नीचे उतर आयी। ग्लाउज का कपडा हाया म ही पडा रहा। आख जमीन पर कुकी रही। एक बर्मीज ने राजनाथ से पूछा,—किसको मांगता है ? उमा का ?

राजनाथ ने उसका सवाल नहीं मुना। सीधे उर्मिला की आला म देखत हुए बान—यहा से चलो उर्मिला।

उर्मिला न हाथ का कपडा पलग पर डाल दिया, और राजनाथ क साथ कमरे स बाहर चली आयी। मीनिया उतर कर मडक पर चली आयी। एम्बेसडर की पिछली सीट पर बहोश सी लेट गयी। रायी नहा चीखी नहा एक श म भी बाली नहीं। राज नाथ पागल की तरह तेजी से गाड़ी चलाते रहे जस साई उनका पीछा कर रहा हा। पिछली सीट पर साथी हुई बाजारु औरत का उनस छीन ले जाना चाहता हो। गाडी बहुत तअ्र माग रही था और पिछल सान वजों का समय बहुत पीछ छूटा जा रहा था। घुराप से लीप्न क बाद, राजनाथ महता एक तिन के लिए भी रुकत स बाहर नहा गये थ। एक रात भी उ हान उस कमर स बाहर नहा बितायी थी, जिसम उर्मिला और व साते थे। फोशिल नई औरत न की थी। राजनाथ की नौकरी और राजनाथ का बक एकाउंट और राजनाथ की कार लम्बकर कई जारत उनक साथ गाम और रात और जिदगी काटना चाहती था। उर्मिला की एक मौसरी बहन थी। राजनाथ क द पत्र म एक विशिचयन स्टनाग्रापर थी। और, नद दास्त थ आ राजनाथ का अपन मवान क खाली कमरा की जिदगी स बाहर निकाल कर गहर क गारागुल

और धूम घडावे में खींच लाना चाहते हैं। राजनाथ वहाँ नहीं गये। वन्नी नहीं गयी। 'बेडरूम में 'हैगर' पर उमिला का स्लीपिंग सूट' टंगा रहा। 'स्टडी टबल पर उमिला की बड़ी-नी तस्वीर पड़ी रही। अलमारियों में उमिला की साड़ियाँ और नृत्य गार का सामान, जोर छिट-पुट गहन।

गाड़ी का 'हान' सुनते ही, गंगा दरवाजा खोलकर बाहर आयी। मुन्नी से आश्चर्य से, भय में चीख पड़ी। राजनाथ न नीचे उतर कर पिछली सीट का दरवाजा खोला। उमिला सँभल कर नीचे उतरी और बिना छन भर भी झिझके, अपने घर की सीड़ियाँ चढ़ने लगी। गाड़ी गराज में रखकर राजनाथ ऊपर आय तो उमिला उसी सोफे पर बठी हुई थी, जिस पर कुछ ही घंटा पहले द्यामली बठी थी। द्यामली बाजारू जोरत है। उमिला बाजारू जोरत है। हर औरत बाजारू औरत है और हर मंद बाजारू मंद है। मन्द और औरत में क्या भेद है? उमिला और राजनाथ में क्या भेद है? द्यामली में और ?

सारे मंद और सारी औरत जानवर हैं। यह दुनिया जानवरों की दुनिया है। माहिर जिस आदम की बात करता है, सरासर भूठ है। धम जिस स्वर्ग की बातें कहता है, सरासर भूठ है। चारों ओर नरक ही नरक है। बुर्गिंग होटल का नरक। सत्य कुछ नहीं है। सुन्दर कुछ नहीं है। शान्ति कहीं नहीं है। यह सब सिर्फ कित्ताबों में है। धर्म और दशन, और साहित्य और कविता की कित्ताबों में। और, नाटकों में। फिरोज के पन्नों पर। जहाँ अगाध वाटिका में रह कर भी सीताएँ स्वर्ण का तरह पवित्र वापस लौट आती हैं। जहाँ जगल में रह कर गङ्गा तला वापस लौट आता है। मयती वापस लौट आती है। पवित्र अकलवित, स्वच्छ, सुन्दर—य सारे विशेषण भूठ हैं। जानवरों की इस दुनिया में इन निरर्थक गङ्गा की आवश्यकता नहीं है। जीवन सुख नहीं है। जीवन का नाटक मुखान्त नहीं है, 'कामडी नहीं है। भयानक टर्जनी है। भयावह जगल है और घना अंधकार है।

जा कोई लेखक मुख और शान्ति और प्यार और परिवार की कल्पनिया लिखता है वह मिथ्यावादी है। परिवार कहाँ है? परिवार क्या है? आदमा प्यार करता है। और अपनी पसंद की औरत से गाड़ी रचाता है। और रुपये पस इकट्ठा करता है। और मूबसूरत और जानाकारी बच्चे पैदा करता है। आर कम्मीर में और हिल स्टेशन में छुट्टियाँ बिताता है। यह सब भूठ है। ऐसी कहानियाँ भूठ हैं। जानवर एक दूसरे का प्यार नहीं करते हैं। सिर्फ गोस्त ने टुकड़े को प्यार करत है। चाहे वह गोस्त का टुकड़ा उनके बच्चे का कलजा हो क्या न हो। वास्तविक जीवन कहानी नहीं है, नाटक नहीं है, कामडी नहीं है। वास्तविक जीवन 'यामली है। जा किसी भी चक्कड़ वाल मन्द के 'बेडरूम में सा सक्ता है। वास्तविक जीवन उमिला है।

और सड़कों पर, गलियों में बिस्तरों पर कित्ताबों में, फूलदानों पर उमिला का

रक्त के छीटे हैं। उमिला के रक्त से सारी धरती दागदार है। सारा आकाश दागदार है। हम सभी लोग राक्षस हैं, और उमिला का खून पीने के सिवा हमारे पास जीने का कोई तरीका नहीं है। हम चाहे कितनी भी सीता गकुन्तला सावित्री दमयन्ती, सुकन्या मन्थलासा की रचना क्यों न करें, उमिला और श्यामली और विक्टोरिया ममोरियल के साथ मेहर गाम गढी औरता के बिना हमारा जगत् कानून चल नहीं सकता है। आज तक नहीं चल सका है। हम वन जीवन की हिंसा और रक्तपात से एक कदम भी आगे नहीं आ सके हैं।

हम नींद में सोय हुए गहरा पर हज्जारों हवाई जहाजों से बेमबारी करत हैं। हम बच्चा और औरता से भरी हुई नावें पानी में डुबो दत हैं। हम उन जंगली जानवरों से बेहतर कस हैं जो निरीह और निर्दोष पशुओं पर हमला करने में जरा भी क्षमाता नहीं है। हम अपने बच्चा को चारी करना सिखाते हैं हम अपनी बीविया को धर्यागृहा में छोड़ आते हैं हम अपने पडासिया के घरों में लिन ग्लासे डाका डालत है। हम अपने आधुनिक पुरखों से सम्य और गरवृत कस हैं जो नर-मांस खात थे और वन दवताओं के सामने पराजित पशुओं की बलि दत थे और मंत्रियों का सामाजिक सपत्ति मानत थे ? हम आत्मी कस हैं ?

और सभ्यता क्या है ? सस्कृति क्या है ? सामाजिक जीवन का मीन क्या है ? हम किस मुँह से अपने घम और दगन और विनाम और साहित्य की प्रशंसा करत हैं ? क्या कित्ताया में लिख दन भर से सत्य की स्थापना हो जाती है ? वास्तविक जीवा में सत्य कहाँ है ? सत्य कहाँ है और गिव और सुन्दर कहाँ है ? सत्य भूठ है सत्य है सिर्फ उमिला

सामन साँचे पर आँसू मूँद उमिला पत्ता थी और राजनय का सारा शिक्षा यन्त्र समाप्त हो गया। सारा आतक समाप्त हो गया। सारा अतन्द्र समाप्त हो गया। व बीच कमरे में लान के स्तम्भ का तन्त्र गड़गड़ गया और बाहर गड़गड़ा गया सवाल—मममाहृय का जदर ॥ जाआ। ननका तबीयन टीक नहा है। कण्ड कण्डवा दा और हाथ मुँह घुंटा दा। फिर जाना लगाआ

उमिला अपने आप उठ खड़ा हुई और सहमा हुई आँखा में अपने पति का, मान आठ माँ के बाँट मित्र रूप पति का स्मरण हुई गया के पास पात्र पत्ता गयी।

राजनाथ और उमिला ने साथ साथ माना साया। उमिला एक एक और दन दन कर ला रही दा। बहुत धीरे धीरे पराठ के टुकड़े नाहना उस पर सँका हाथना दाँव के प्यान में डबाना और हल-हल खवाना था। जस पराठ का टुकड़ा नंग फयर का टुकड़ा हा। हाथ पान के बाँट वह मूँद के पास आ कर लड़ा हा गया। राजनाथ कुर्मी पर बैठे हा थे और मिगरेट पॉर रथ थे। ग्लान धाम स्वर में कला—अब जा कर गो जाआ। रंगा ने बिदलर रंगा लिया हाता। मैं दाद रथ बाँट माऊ हा। एक ग्लेन

तयार करना है।

उर्मिला खेल-कूद में थके हुए छोटे बच्चे की तरह, विस्तर पर जा कर लेट गयी। यही मेरा कमरा है। दीवारों पर वही पुरानी तस्वीरें हैं। गोदरेज की जलमारी उसी जगह पर है। 'रक' पर उसी तरह कितानें रखी हैं। वायलिन उसी तरह टंगा है। मसहरी भी शायद, वही है। सिफ कलेडर बदल गया है। १९५३ के बाद एक बड़ा-सा अनराल, और फिर, एकदम १९६१ आ गया है। सिफ कलेडर बदल गया है, राजनाथ वही हैं, एकदम वही है। अल्पभाषी और थके थके हुए, उदास उदास पति की तरह नहीं, पिता की तरह दीखते हुए। कनपटियो पर बाल सफेद हान लगे हैं। चश्मे का फ्रेम मोटा हो गया है। आवाज पहले से भारी हो गयी है। और, पहले की सी नहीं रह गयी है। गुस्सा नहीं रह गया है। क्या राजनाथ बूढ़े हो गये हैं? शबल मूरत से तो कमजोर नहीं दीखते हैं। मगर, गुस्सा क्या नहीं करते हैं? क्यों नहीं पूछते हैं कि मैं तु गकिंग में कब से थी क्यों थी? क्या नहीं पूछते हैं कि मैं घर से बाहर कदम क्यों रखा इतन बरस कहा कहा रही, किसके किसके साथ रटी, कसे रही?

मेरे हाथ पाथ क्यों नहीं बाट डालते हैं? मर गले में रस्ती बांध कर छत से टांग क्यों नहीं देते हैं? राजनाथ इतन शांत क्या है? उर्मिला को नींद आ जाए, यह स्वाभाविक नहीं था। मगर, अपने कमरे में, अपने बिस्तर पर, अपनी मसहरी में आते ही वह सो गयी। गहरी नींद में सो गयी। बहुत दूर बाद राजनाथ आये। मसहरी में आख लगा कर देखा, उर्मिला सो रही है। अपने बिस्तर पर नहीं गयी। बापम डाइगनूम में जाकर सोफे पर लेट गये और सारी रात रूसा के कॉफेन्स पन्ते रहे। उर्मिला आ गयी है। उर्मिला अपने बिस्तर पर सोयी हुई है।

पूरा एक हफ्ता बीत गया। राजनाथ घर से दफतर और दफतर से घर आते रहें। किसी को बताया तक नहीं कि उनकी पत्नी वापस आ गयी है। उर्मिला धीरे धीरे स्वस्थ होने लगी थी। चेहरे पर पुरानी चमक लौट आयी थी। सिफ आत्मविश्वास नहीं लौटा था। हरदम डरी डरी रहती थी। मगर, राजनाथ के मन में कुछ नहीं था। वे तु गकिंग होटल तक को भ्रम चुके थे। यह विस्मृति उठोड़ जान बूझ कर पदा नहीं की थी। कोनिंग नहीं थी थी। यो ही पिछली सारी घटनाएँ भूल गये, और सामन की कुरसी पर तन कर बठी हुई उर्मिला उन्हें बहुत नहीं, बहुत प्यारी दीखने लगी। यह स्वाभाविक नहीं है। मगर, जीवन में अधिकतर अस्वाभाविक बातें ही होती हैं। जमादा-तर ऐसा ही होता है, जिसका कोई कारण नहीं होता, कोई भूवाभास नहीं होता कोई भ्रम नहीं होता है।

राजनाथ असाधारण व्यक्ति नहीं हैं। मामा-य मनुष्यों की तरह ही दुबल हैं और ईर्ष्यालु हैं, और अपने उपर दूसरों द्वारा किये गये प्रत्येक अन्याय अत्याचार का प्रतिशोध लेना चाहते हैं। शक्ति से बुद्धि से, नहीं ता छल छद्म से ही बदला लेना

चाहते हैं। समाज की विवृतियाँ, युग की कुरूपताएँ उर्मिला को उनसे छीन ले गया थी। समाज ने उनका छोटा-सा परिवार उजाड़ दिया था। समाज ने, या उर्मिला ने बात एक ही है। वे उर्मिला को वापस ले आये हैं। उर्मिला बिस्तर पर बेसुध सोयी है। उर्मिला मनोयोग से खाता पका रही है। उर्मिला सामने बठी मुकह की चाय पी रही है। उर्मिला गाड़ी में साथ बठी दुगली तर कर आती हुई ठंडी हवा का मजा ले रही है। और, राजनाथ प्रतिशोध ले रहे हैं। समाज को दिखा रहे हैं, कि उन्होंने फिर से अपना आशियाना बसा लिया है। उर्मिला से प्रतिशोध ले रहे हैं, कि फिर से उनकी सुख-शांति उनकी निदिच्छता, उनका आराम उन्हें वापस मिल गया है। समाज पराजित है। उर्मिला मयभीत है। राजनाथ मेहता कहते हैं—उम्मी तुम्हारे छोट छोट बेश मुझे पसन्द नहीं हैं। दो चार महीने में बेश बड़े हो जाएँ ता जूड़ा बाँधा करोगी।

और ऐसी ही बातें कह कर मुस्कराते हैं। उम्मी भी मुस्कराने की कोशिश करती है। सफल नहीं होती है। सिर मुका ऐंती है और बाहर जा कर बालकनी पर खड़ी हो जाती है। उसकी द्विविधा का अन्त नहीं है। उसकी अशांति की सीमा नहीं है।

उस दिन शाम को राजनाथ दफ्तर से जल्दी लौट आये, और चाय पीने के बाद उर्मिला के साथ 'यू मार्केट' निकल गये। कई चीजें खरीदनी थी। खरीद करो इतने बाद, कालिटी में आ गये। उर्मिला को ग्री एन-वन आइसक्रीम बहुत पसन्द है। राजनाथ अब तक भूले नहीं थे। अपने लिए उन्होंने 'एस्प्रेसो' मँगवायी। तब एतने सान और शीतल वातावरण में उर्मिला का धीरज टूट गया। रस्तरों में बहुत थोड़ा सलोग वे। उर्मिला ने पति का हाथ पकड़ लिया, और लगभग सिसकती हुई बोली—तुमने मुझे माफ़ कस कर किया? तुम एतने उदार क्या हो? मुझे अपना प्यार क्या करने हो?

अपना बीबी से बीम प्यार नहीं करता है? और गलती तो सभी हाँकता है!

उर्मिला यहाँ जिलगी है। उसमें पाँच-सात साल का बच्चा बीमन रहता है। उम्मी माँगते मत बनो। देना। आत्मश्रीम पिघलती जा रही है—राजनाथ ने हाथ मुड़ाते हुए कहा। दूर बैठ हुए लोग उनकी तरफ ध्यान लगाये। उर्मिला गान हाँ गयी। सौमन्य गयी। पुष्पाप धम्मक हाँ उठा-उठा कर आत्मश्रीम गानी रही।

ध्यामली उठे टक्का पर अपने एक पोस्टर के पर लगवाया था। ताता रिती रिन्म का निर्माता या निर्देशक था। अब ता उगका नाम था धर्मरा तब उर्मिला का था नहा। उमन मोहर का रज कर हाटल में खाना मगवाया था। शराब या आयो थी। उमन उर्मिला से कहा था कि उर्मिला तुमिया मर का सारी अमिनत्रिया ग गया मुह मुरा और वह चाहे तो उस गलिजाबय गेलर और मरलिन मुनगा क मुहाबल में बहा कर सकता है। और, उर्मिला ने कहा था कि वह मरलिन मुनगा या मुनिना गन मुह भा बन जाना चाहती है। और एतना बड़ कर बड़ मुर्मी से नाव फिर गया था और एतना पर गलातार उ करन गला थी और बहा हा गया थी। अब एत बहा

रही थी, पता नहीं। रात में दो-तीन बजे नींद खुली थी तो कमरे में अँपेरा था, और वह उस निर्माता या निर्देशक की बाँहों में लिपटी सो रही थी। उसे विश्वास नहीं हुआ था। वह आतंकित हो कर चीखने लगी थी, और दुबारा बेहोश हो गयी थी, बेहोश हो गयी थी और मर गयी थी।

उर्मिला मर गयी, और दूसरे दिन उसे अपने घर लौट आने का साहस नहा हुआ। वह नहीं लौटी। वह कहाँ लौटती? क्या लेकर लौटती? किस साक़्त से लौटती?

राजनाथ न कहा—क्या सोच रही हो? सोचने से बेकार सिरदब होता है। बला नाइट गी' में फिल्म देखेंगे।

नहीं रुक जाओ। मैं तुम से एक बात कहना चाहती हूँ। जिस रात उस होटल से आयी उसी रात से कहना चाहती हूँ। मगर, तुम मौका नहीं देत हो। आज कहूँगी ही। मेरी बात सुन लो। फिर जो कहोगे, वही करूँगी—उर्मिला सीधी तन कर बैठ गयी। जैसे वह फाँसी के तख्ते पर जा रही हो। चेहरा कड़ा हो गया। आँखें राजनाथ के चेहरे पर टिक गयी। जो कहना चाहती थी, उसे व्यक्त करने के लिए उसे शब्द नहा मिल रहे थे। साहस नहीं हा रहा था। इन छह मास दिना में, भय और आतंक की स्थिति में भी जीवन का जो रस, जो गान्ति, जो तृप्ति जा सुरक्षा उसे मिली थी वह छान देना नहीं चाहती थी। राजनाथ पर उसे धड़ा थी, विश्वास था। मगर साहस नहा हा रहा था। मगर आज वह डालना ही होगा। और कोई उपाय नहीं है।

उर्मिला का कंठ सूखने लगा। उसने सूखे हुए होठों पर जीभ फिरायी। फिर बोलने लगी—मैं तुमसे छिपाना नहीं चाहती हूँ। चाह तुम मुझे उम्मी होटल में वापस क्या नहीं दे आओ। मैं एक भी बात नहीं छिपाऊँगी।

नहीं कहने से भी कोई फ़क नहा पड़ेगा। मैं पिछली बातें जानना नहीं चाहता हूँ। तुम वापस आ गयी हो, और हम ने एक नयी जिन्दगी शुरू की है। वापस लौटने में मेरा या तुम्हारा, किसी का लाम नहीं है—राजनाथ न कहना चाहता, लेकिन, वह नहा सके। पता नहा, उर्मिला क्या कहना चाहती है। हो सकता है, उर्मिला बीमार हा। हा सकता है, उर्मिला ने किसी गुहे गोहूद से ग़ादी कर ला हा। हो सकता है उर्मिला पर होटल वाले का कब्ज़ हो। हो सकता है कुछ भी हो सकता है।

मैं अकेली नहीं हूँ। मेरी एक पाँच साल की बच्ची ह। मर साथ नहीं रहता है। जब तीन साल की हो गयी ता मैंने उसे लॉरेटो बॉवट में भरती कर दिया। क्या बोडिंग हाउस में मेड्रन' के पास रहती है। मैं हर महीने फाँस के रूप में भेज देती हूँ। वह जब पेट में थी, तो मैंने उसे मार डालने की कोशिश भी की थी। वह मरी नहा। मैं खुद भी मर जाना चाहती थी। मर नहीं सकी। मुझे साहस नहा हो सका। बड़ बर साल भर की बच्ची को गोद में छिपाये बालीगज थोल व विनारे-विनारे घूमती रही। पानी में बूदन का साहस नहीं हुआ। उसका नाम मैंने रखवा था दीणा। मगर,

चली जाऊंगी

राजनाथ मुस्कराने हुए बोल—अब बार नहीं पतती हो ? तुम्हारे आन की दूसरी ही रात लालबाजार पुलिस की स्पेशल गाँव न चुर्गकिंग पर घावा किया । मनेजर जोर सारे बर जेल मे हैं । तुम्हागे व बर्मीज महलियाँ भी पकड़ी गयी हैं । होटल पर ताला बंद है जोर पुलिस का पहरा है । लालबाजार का 'चीफ इन्स्पेक्टर' मरा सहायी है, तुम्ह पता नही है ?

और, राजनाथ हमन लगे । ठहाके लगाकर हँसन लगे । लोग जी उठत हैं हाश मे जा जात है ध्यार करन लगते है तमी इस तरह हँसते है ।

उर्मिला गाडी मे जाकर बठ गयी । राजनाथ ने बहुत दिनों के बाद सिगार जलायी और लाभर सबयु लर रोड पर तेजी से गाडी चलन लगी । उर्मिला न पूछा—
दुघर कहा जा रह हा ? हम लागी का घर ता उल्टे रास्ते पर है ?

लगेट। व बोर्डिंग हाउस जा रहा हूँ । तुम जाना नही चाहती हो ? राजनाथ का यह उत्तर सुनकर उर्मिला दर तक ऊपर जाकाश की ओर चाँद-तारो की ओर देखती रही । फिर, पफक पफक कर रोने लगी । उर्मिला के रोने का अन्त नहा है । मगर, राजनाथ चाहत हैं कि उर्मिला का रोना देर तक न रहे रोने से तबीयत हल्की और साफ हा जाती है । और, राजनाथ माव रह हैं कि साहित्य की हर 'कमिडी' की तरह, हर सुखात नाट्य की तरह यह वास्तविक जीवन भी पत मे किसी-न किसी तरह बूब-सूरत फूलो और पौवा और चिडिया के कलरव से मरा चमन बन ही जाता है । आप ही आप बन जाता है, या आत्मी परिस्थितियो से समझौता करके अपनापा करक चमन बना लेता है—बात एक ही है । आदमी आगिर आदमी है जानवर तो नही है ।

एक बुतशिकन का जन्म

डॉक्टर धूम्र कमेटी के सामने मोला बहुत नयस महसूस कर रहा था। चारा तरफ से सवालो की बौछार हो रही थी 'तुम्हें स्पोर्ट्स में दिग्गजपनी है? कौनसी सोसाइटी के मम्बर बनोगे? म्यूजिक का शौक है?' काले रंग के मोटे फ्रम का चश्मा लगाये एक गालनधारी प्राफेसर मोला के जवाबो को नाट करत जा रहे थे। कालेज का प्रोस्पेक्टस पढ़ कर मोला इतना प्रभावित हुआ था कि उसने तय किया कि वह हर काम में हिस्सा लेगा।

जब रोल काल के बाद ही सारी क्लास का छट्टी द दी गई तो मोला को एहसास हुआ कि अब वह आजाद है, कॉलेज स्टूडेंट है। हाई स्कूल की तरह अब हर छोटी-मीमात पर उसकी बेइज्जती नहीं की जायेगी वह अपनी मरजी से क्लासें अटेंड करेगा।

मोला बड़ी बेचनी से इंतजार कर रहा था कि चश्मवान प्राफेसर उसे बुलायेंगे। वह हर रोज उह नमस्ते करता था लेकिन शामद प्राफेसर साहब उसे पहचानने नहीं थे। पांद्रह दिनों के बाद भी जब बुलावा न आया तो मोला खुद स्टाफ रूम में गया। प्राफेसर साहब ने कहा कि वे बहुत बिजी हैं स्टूडेंट्स से मिफ रिसेस में मिलते हैं। रिसेस में भागूम हुआ कि वे लंच खा रहे हैं और लंच के बाद पंद्रह मिनट तक आराम करते हैं। मोला का उनसे मिलन का कोई मौका न मिला।

कालेज में एक पुराने क्रान्तिकारी भाषण देन आय थे। उन्होंने अपनी जिन्दगी के कई बरस जल में बिनाये थे। उन्होंने अपनी जवानी के कई निस्से सुनाये जब विधार्थी छिपकर बम बनाते थे परचे छापते थे जुलूस निकालते थे और मगतसिंह की तरह हसत हसते अपन को देश पर योछावर कर दते थे।

तये भारत के जीववानो को भी उन्ही के चरण चिन्हो पर चलना चाहिये। माला के दिल में देशभक्ति का जाग उभर आया। उसने तय किया कि वह भी मगतसिंह की तरह अपन का देश पर योछावर कर दया।

लेकिन अब जमाना बदल चुका है। हम सत्य और अहिंसा के माग पर चरना चाहिये देश के निर्माण कार्या में हिस्सा लेना चाहिये भाषणकता न बना।

मोला न सहूर का कुता पात्रामा सित्रवा लिया उसने तीन और लटका के साथ मित्रकर एक कमरा बिराय पर ले रखा था। नगान के लिये वे म्यूजिसमपन्गी के नल पर

जाते थे और एक ढाँचे में खाना खाने थे। भाला ने जब अपने गैस्त्रो से वार्तिककारी दल और देशभक्ति की चर्चा की तो वे भाला पर हमलें लगे 'तुम गिर बुद्ध हो। जब क्रिस्मत में बलकी या रोड इन्सपेक्टर लियी है तो इन बातों के चक्कर में क्या पड़ते हो?' (रोड इन्सपेक्टर वे उन बेकार नौजवानों को कहते थे जो नौकरी की तलाश में सड़क पर जूते चटखाते फिरते हैं) लेकिन अग्रजी की क्लास में जब 'मरी महत्वाकांक्षाएँ क्या हैं' निबंध लिखने के लिये दिया गया था तो उन्होंने लड़कों में लिखा था कि वे मनोवैज्ञानिक और कलाकार बनना चाहते हैं। क्लास का जन्म एक ही बार मिलता है, उसमें कुछ कर लिखना चाहिये। उस झूठ से भोला ने मन का बहुत घाट पहुँचा। लड़कों ने समझाया 'निबंध में तो ऐसी ही बातें लिखी जाती हैं।'

भोला को बचपन से ही कविता लिखन का शौक था। लेकिन जबसे एक मास्टर ने उसके कान उमैठकर कहा था "तुलसीदास का बच्चा! खबरदार जो क्लास में ऐसी हरकत की।" तो भोला ने कविता गुनगुनाना बन्द कर दिया था। लेकिन कॉलेज की आजाद जिंदगी में उसका सात्स फिर पनप आया था। उसने अपनी सारी किताबों और कानियों पर सुंदर अक्षरों में अपना नाम के आगे रिकन उपनाम जोड़ दिया था, क्या कि हर कवि का उपनाम होना जरूरी होता है। जब डा० भूपेन्द्र के नाम में नोटिस बोर्ड पर नोटिस लगा—जिमम विद्यार्थियों से कॉलेज की पत्रिका के लिये 'उदकृष्ट साहित्यिक' रचनाओं की माँग की गई थी तो भाला ने अपनी कविताओं की कापी पर नई जिल्द चढ़वा ली और वह डा० भूपेन्द्र से मिलने गया। डॉक्टर साहब पत्रिकाओं में लेख लिखते थे, रेडियो पर उनकी वार्ताएँ अक्सर प्रसारित होती थीं। लेकिन जब से भोला कॉलेज में आया था डॉक्टर साहब ने एक बार भी क्लास नहीं ली थी। वे युनिवर्सिटी के कविता ओहदा के लिये इल्जाम लड़ रहे थे। उन्होंने बड़े स्नेह से भोला का बठाया लेकिन कविताओं की कापी देखते ही उनका स्वर बदल गया "देखता हूँ तुम्हें भी कविता की बीमारी लग गई है। हमारा देश में कवियों की संख्या कम है क्या?" उन्होंने भाला का राय दी कि वह अभी तो चार साल अध्ययन कर 'तुम्हारी उम्र में तो सबसे उपयुक्त पढ़ डालेंगे फिर डॉक्टर साहब ने अपने विद्यार्थी जीवन के कई दिलचस्प किस्से सुनाये और अचानक घड़ी पर नज़र डालकर गाल—' जे मुझे तो एक अपाइटमेंट पर पहुँचना है। भई तुम अपना शब्द महार बनावो।

भोला ने एक फाइल खरीदी और उसे एक शब्द बदलने के लिये रात्र लक्ष्मणरी में जान लगा। राजनार्ति साहित्य कला क'सकड़ा शब्द उसने लाल स्याहा में नाट किया। अनवर लखनो के उद्घरण उसे मुह जवानी याद हो गये ट्यूटोरियल मॉडिंग में एक बार जब भोला ने गाँव कुछ उद्घरण सुनाये तो सभी लड़के चिल्लाकर हँस पड़े और उन्होंने भोला का नाम "बोरनाथ" लिख दिया क्योंकि उस मॉडिंग में सिर्फ फिल्मी गान ही गाय जाते थे।

एक बार भाला अंग्रेजी के हेड आफ दी डिपार्टमेंट से एक शब्द का अर्थ पूछने गया। उन्होंने पूछा "यह शब्द तुमने कहा क्या?" जब भोला ने एक मशहूर अंग्रेजी उपन्यास का नाम लिया तो प्रोफेसर साहब ने कहा "जितना वक्त तुम नावल पढ़ने में बर्बाद करते हो, वही अगर कोस की किताब में लगाओ तो तुम्हारी इंग्लिश सुधर जाये। चेंबल डिक्शनरी देखी है?"

'नहीं।'

"तो लाइब्रेरी में जाकर देखो। मैं डिक्शनरी तो नहीं हूँ।"

जब भोला स्टाफ रूम से निकल रहा था तो उसे प्रोफेसर साहब का रिमाक सुनायी दिया 'भाला कैंक है। दिमाग का कोई स्नू डीला है। हर वक्त आकर बोर करता है' भोला के दिल के भीतर कोई चीज उसे दूट गई।

कालज की लाइब्रेरी में कूतावासों की सचित्र पत्रिकाएँ और बुलेटिन आते थे। भोला तस्वीरों में देखता लड़के लड़कियाँ मिलकर सड़कें बना रहे हैं काटो और हवाई जहाजों के माडल तयार कर रहे हैं उनके चेहरों पर स्वास्थ्य की दीप्ति है। भोला की कल्पना में एक तस्वीर ने जम लिया—उसके कपड़े पसीने से तर हैं। वह द्रुवधर चला रहा है, इमारतें बना रहा है। उसके कपड़े भस्म हो गये हैं लेकिन मन उजला होता जा रहा है। उसके मन में आया कि वह पढ़ाई छोड़कर माखड़ा नागल बना जाये जहाँ नये हिन्दुस्तान का जन्म हो रहा है। गाँधीजी के एक इंगारे पर भी तो लाखों नौजवानों ने पढ़ाई छोड़ दी थी। वह चाहता था वह भी किसी के इंगार पर अपनी कुरबानी दे सके। उसके भीतर का नौजवान कुछ कर दिखाने के लिये मचल रहा था। वह अपने से बड़ी किसी चीज में अपनी सारी ताकत लगा देना चाहता था।

एक उत्साह में उसने सांगल ग्रुप में नाम लिखाया। एक बार उनका ग्रुप गाँव की एक सड़क बनाया के लिये गया था। कुत्तल के स्पग में भोला की प्यासी आत्मा तृप्ति महसूस कर रही थी लेकिन फोटाग्राफरों के पट्टे धन ही छात्रों को आग्न मिला कि वे बस में जाकर बैठ जाएँ। सांगल का बहुत बुरा लगा। उसने अपने दो पात्रों से कहा क्या न हम लोग इस बार गरमा की एंट्रिया में जाकर विमानों की मर्याद करें? हम बजर जमीना की ताड़ सवत हैं पम्पें बाट सवत हैं बाबा को पढ़ा सकते हैं

जरा देखा हम गम्बहिरता का। तुममें भला विमान मर्याद मोगा है? विमानों को गहरी बाबुआ की मन्द नग चाहिये। वे अपनी मर्याद मुक्त कर लेंगे। दो पात्र आज बेहतर चिन्ते हुए थे क्योंकि इस बार अफगान और अनाथा के साथ उनकी तस्वीर नहीं निची थी।

गरीब छात्रों के पण्ड के लिये बना जमा करना था। भोला अपने कुछ माधिया के साथ एक महीने तक कलिय के गेट पर बैठकर कृत्यात्मिका करता रहा। जब उस पर पत्रिका बमत 'हलो राजकुमार! तुम्हारी नरगिनी कौन है?' पत्रिका भी

एक-दूसरे को कोहनी मार कर हँस पड़ती और कहती "हम मनवाले पालिश वाले" भोला सोचता, क्या वह सिर्फ "सो ऑफ" करने के लिए यह सब कर रहा है? क्या सभी काम दिखावे के लिये किये जाते हैं?

स्कूल में तो छुट्टियों के लिये टीचर बहुत काम देने थे, लेकिन कॉलेज और स्कूल में बहुत फक होता है। छुट्टी से पहले प्रोफेसरों ने कहा, छुट्टियों में सब छात्र आराम करें और खूब दूँ जाय करें। किसी पहाड़ पर जायें या साइकिजो पर जाकर आगरा, फतहपुर सीकरी देख आयें। योह्न में तो छात्र साइकिजो पर दूर-दूर का सफर करते हैं। आराम की कल्पना से ही भोजा की रूढ़ काप रही थी। वह तीन महीने की लम्बी छुट्टियाँ की नीरसता की कल्पना कर रहा था।

भोला के पिता किसी दूसरे प्रांत में काम करते थे। हर महीने मनी ग्राडर भेजने के साथ उनका परिवार से कोई खास सम्बन्ध नहीं था। भोजा को छुट्टियों के दिन पहाड़ मायूम होन लगे। माँ उसे पढ़न-लिखने नहीं देती थी और दूध में बादाम डालकर पेली थी। क्योंकि उसके ब्याल में बेटा कालेज में दिमागी कसरत करना करता थक गया था। भोला सुबह हलवाई की दुकान पर जाकर अवज्जर पड़ता और रेडियो सुनता। लाइब्रेरी में इस बार कोई किताब नहीं मिली थी क्योंकि छुट्टियों की तनक्वाह बचाने के लिये लाइब्रेरियन को छुट्टियाँ से पहले ही निकाल दिया गया था। रोज अखबारों और रेडियो के जरिये देश के नेता नौजवानों से मेहनत करने की अपील करते थे। भोला ने सोचा वह भीषा नताजो से ही पूछना कि वह किस तरह देश की मदद करे। एक बार उसने पंडित नेहरू को खत लिखा कि वह आराम को हराम समझना है। चचा नेहरू उस दश में काम के लिये जहाँ भी भजेंगे वह नपार है। फिर उसने सोचा चचा नेहरू व्यस्त रहते हैं। उसने खत फाड़ दिया। भोला अरने शहर के एम पी के पास गया जो देश का कायों में बड़ चढ़ कर हिस्सा लेने थे। उन्होंने भोजा को मनाह दी कि वह सबसे पहले अपना चरित्र निमाण करे। इससे देश का निमाण खुद-ब-बुद हो जायेगा। ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करे तबके चार बजे उठकर नहाये, चाय और सिगरेट से बचे लेकिन भोला को अपन सवाल का जवाब न मिला। उसकी समझ में नहीं आता था कि वह अपन मन की बात किससे कहें, उस लगा कि उनमें और उसके जैसे लाखों छात्रों में किसी को भी दिलचस्पी नहीं। समाज उन्हें बर्मास और आवारा समझता है। जब वे किराय पर मकान चाहते हैं तो लोग उन्हें सदिग्ध नज़रों में देखते हैं और यह कहकर फौरन दरवाजे बंद कर देते हैं 'हमारे घर में बहू-बेटियाँ हैं। हम कालेज के छात्रों को मकान नहीं दे सकते।' उन्हें देखकर सिनमा हाल में प्रोफेसर अपनी बीवियों का लेकर अगली इतारों में चले जाते थे जैसे किसी छूत की बीमारी का डर हो। जब भोला छत पर पत्ते बैठता था तो आसपास के सभी घरों की सिडकियाँ तटक से बंद हो जाती थी। बी. ए. में पहुँच कर भोला एकदम सामान्य हो गया। उसके

मन में उत्साह और आशाओं की बजाय अपने आसपास के वातावरण में प्रति क्षम और ग्लानि आ गई थी, उसके दोस्त कहते थे कि वह धुँगा बन गया है। दरअसल वह समझदार बनता जा रहा था। वह देखता था कि शहर ने सभी जल्दो में छोटे से-छोटा अपसर भी—यहाँ तक कि उसके बच्चा को भी सबसे आगे सोफो पर बठाया जाता था। कॉलेज की पार्टियों में भी प्रोफेसर पीछे बैठते थे और इस तरह सहमे हुए बैठे रहते थे जस अनाधिकार आफिसर क्लब में घुस आये हों या उनसे टेबल मनेज का इम्तहान हो रहा हो। मोला का बेहद गुस्सा आता था। कान्फेरेन्स के मौके पर कॉलेज में 'मला' लगता था। पुलिस का इत्तफाक रहता था और कारो की बतारें लग जाती थी। बड़े-बड़े आदमी टाँप की हुई लम्बी स्पीच पढ़ते थे। सोफो वाली बतार पर बैठे लोग जब सारियाँ बजात थे तो उनकी ग्लेखा-देखी पडाल के सभी लोग सारियाँ बजाने लगते थे। मोला न दखा हर दीक्षान्त भाषण में एक ही शब्द होता था 'चाहिये। विद्यार्थियों का चाहिये अध्यापकों को चाहिये। चाहिये चाहिये। मोला को इस शब्द से दिली नफरत हो गई थी। एक भाषण में तो यह शब्द पूरे बासठ बार इस्तेमाल हुआ था। श्रोताओं में भी कोई उरसाह नहीं था। लोग सोफा पर आखे झुँदकर बैठे थे। लड़के धूप के चरम लगाकर लड़कियों को तार रह थे।

मोला ने सोचा वह नातिकारी या दश भक्त बनने की बजाय विदेश जाकर पढ़ेगा और लौटकर खूब पसा बमायगा। उसने कई विदेशी युनिवर्सिटियों के दाखिले के फार्म भी भगवा लिये थे। जब वह एक फार्म पर दस्तखत कराने के लिये इकनोमिक्स के प्रोफेसर के पास गया तो प्रोफेसर ने कहा विदेश जाकर क्या करोगे? लौट कर तुम्हारी प्रस्ट्रेशन और भी बढ़ जायेगी। इससे अच्छा है कि शाम को टाइप शोट हैण्ड सीखो। प्रोफेसर साहब खुद सात बरस विदेश रहकर आये थे और तमाम विदेशी डिग्रियों के बावजूद कॉलेज में पुराने श्रेष्ठ पर काम कर रहे थे। व जहाँ भी एप्लाइ करते थे उनसे कम योग्यता वाले किसी सिफारिशी आदमी की नियुक्ति हो जाती थी। 'इन्तिहार तो लोगों को उल्लू बनाने के लिये और उनसे पैसे बटोरने के लिये निकाले जाते हैं।'

अगर मदन आकर उसे निराशा की दलाल से न निकालता तो मोला ज़रूर पागल हो जाता।

मदन ने उसके कंधे थपथपा कर कहा था, मरी जान, चला तुम्हें 'लाइफ लिखाऊ। मदन उसे कॉलेज के रस्तों में ला गया वे लोग तिनभर एक या दो पीरियड अटक करत थे बाकी वक्त रेस्तरां में बैठकर गप्प हाँकते थे, मदन के स्कूटर पर सर करते थे या जामूसी नावल पढ़ते थे। मदन ने उस क्लास से खिसकन का, लड़कियाँ पर रिमाक कसन का आट सिखाया। उन लोगों ने सब प्राफ सरो के नाम रख छोड़े थे और वे अपनी सांकेतिक भाषा में बान करते थे। मोला का यह दमकर ताज़ुब हुआ कि प्रोफेसरों की

अपने बलासूरुम की सिटवियो के शीशे तोड़न के लिये पहला पत्थर माला ने उठाया। टूटते हुए शीशों की आवाज से उसे अजब विस्म की तृप्ति मिल रही थी। प्रिंसिपल राह्य चित्ला रहे थे “तुम लोग जगली हो गये हो क्या ?”

मोला के मन में कोई बह रहा था। हाँ मैं जगली हा गया हूँ। अगर मुझे निमाण न करने दिया गया तो मैं ध्वस करूँगा उसे याद आया, बचपन में जब वह बागज पर मनपसन्द तस्वीर नहीं बना पाता था तो फागज को नोचकर फेंक देता था।

विन्दा महाराज

सवेरा हुआ। सफेद घूप की एक पतली खीर आँगन की पश्चिमी दीवार पर फल गई। कई दिना से बीमार विन्दा महाराज ने इस चटख घूप को देखा। अपने ही आगन में, रोज रोज चमकने वाली यह घूप न जाने कसी नवीन मात्राम होती थी। साफ घुली धोती की तरह लटकती हुई इस घूप को देखकर विन्दा महाराज को लगा कि अब वह ठीक हो गया है। मच्छरा से मरे, भीगी भीगी दीवारों वाले घर में चार पाई पर लेटे लेटे विन्दा महाराज का मन बिल्कुल हूबने लगा था, बतख की तरह उजली घूप को देखकर उसे बड़ी राहत मिली। उसने हाथ स हाथ छूआ, सिर का छूकर मोचा कि आज बेगानी लगने वाली यह देह उमी की है। यदि वह चाहे तो इसे अपनी इच्छा से घुमा फिरा, उठा-बठा सकता है।

चारपाई से उठते ही विन्दा महाराज दीवार में चिपके हुए आईने के टुकड़ के पास पड़ा हुआ।

‘अरी मया।’ चिह्नकर पीछे हटा। जितना अजीब रूप है! हाथ भर के लम्ब-लम्ब बाल पसीने और तेल से लटिया गये हैं। सिर पर बीघा-बीघ उसकी माँग का वृत्रिम सिन्दूर ऐसा उदास मात्राम होता है जैसे जेठ के दिनों में मर हुए इन्द्रगोप के कीड़ों की पात हो। मूँह दाढ़ी के बाल भीगी बिस्ली की छाती के भभरे रायों की तरह खड़े हो गये हैं। उसकी नाक में पीतल की लबग थी। आँखों के पास कजराह उतर आयी थी। भरी हुई हड्डियों के कारण गाल चूसे हुए आम की तरह लगते थे। अपन इस विचित्र रूप को देखकर विन्दा महाराज के ओठों पर बेमानी हँसी छा गयी और उसकी आँख विरूपता के आभास से बदरग लगने लगी।

विंसी तरह दाढ़ी-मूँह के बालों को साफ कर जब वह फिर आँगन की शकल में आया तो आईने में उसका चेहरा लम्बोतरा मादूम हुआ। कान बकरी के गले की निरपेक्ष ललाची की तरह भूलते नजर आये, जिनमें चाँदी की नाखूनो बालियाँ पन्नी के चन्द्रमा की तरह मादूम होती। उसी राख से काजल की डिबिया उठायी कोटरों में पसी आँखा को आजकल, उँगली से बची बालिख से सिर पर डिठौना बना दिया। पपड़ी होठ, पके मोद की तरह सूखे लगते थे, सो भँसली उँगली से रोरी छूकर उन्हें रगड़न लगा। एक बादामी रंग की पुरानी साड़ी पहनकर जब वह फिर आईने के सामने

आया तो जाने क्या चीज कर हँस पड़ा।

विन्दा महाराज टाट का एक टुकड़ा बिछाकर जब अपने मकान के सामने बसूतरे पर बैठा तो एक पटरियाँ चढ़ आया था। नौ घंटे पहले गाँव की सभी प्रमुख महिलाएँ वहाँ नौ लौ जलाएँ बाल-बछरावों की घंटियाँ की टुन टुन, परवाहों की हट हट, निसाना की दोट डुप और बसराव का बाल बारा धुन की आसुर घंटियाँ बजकर सँभलती थीं। पर इस बात तो अजीब सन्नाटा चारा तरफ छाया था। मूल मकान लगे ही बड़ी बौर-बौर करत निकल जान। बनिया-ब्यागारी लोग-मुमुक्षु शरीरने के लिए लड़क-बालों का टट्टुआ पर घोरबान अनाज लिए बाजार जान लगते, तो कुछ मुट्ठ-साट हो जाती, गहा तो फिर यही दमघोट सन्नाटा। विन्दा महाराज का यह सब भ्रम बुरा मानस हुआ। कहीं वह मन बहलाने का इरादा तो बाहर आया था और वहाँ यह गुना गुना चोराहा। न एक आत्म जात दिगायी पड़ता, न कोई विडिया का पूत। वह मुँह लटकाय बैठा था।

उहै ई तो बिंदारानी है पक्क की आदम बिनगारी की तरह दो ओरों दिगायी पड़ी। विन्दा महाराज ऊपर से जता गुना और नीचे से गुना-मुना ऊपर ताकन लगा कि पताये का नयन की तरह अगल-अगल ताक-साँक करता घुरबिनवा सामने आकर महाराज के रूप का एकटक निहारन लगा। विन्दा महाराज उसका एकटक अपनी ओर घूरते दल बिगड़ा, इस तरह क्या देखता है जो हम क्या कोई रङ्गी-मुड़ी हैं ऐं। मुचकुचवा जसी मौल पाइकर मत दसा कर। विन्दा महाराज ने डिठोने की छूँकर देखा तो वह जमह पर मौजूद था। घुरबिनवा घाटा और आग बढ़ आया और अपने बाल-बाल दोनों हाथों को घुटने पर टिकाकर थोड़ा मुककर घूरने लगा जैसे फोटो-ग्राफर काले पपड़े में हाथ डालकर लस ठीक कर रहा हो।

विन्दा महाराज न आँचल ठीक किया। झोंते हुए मुस्कराया। लौब की पस अजीब हरकत से यह कुछ घबड़ाने भी लगा। घुरबिनवा बस ही दल रहा था।

अबे तुम्हें हवा तो नहीं लग गयी बाई बतास तो नहो चला ? अरे अभाग हम तरह क्या तापता है रे ! बाप रे बाईगाले की तरह घूमते हुए इससे बढ़र को देखो न !

घुरबिनवा धक्कर खड़ा हो गया। रूप देखन की घ्यास मुझ चुकी भी शायद वह धीरे धीरे सिसकता हुआ विन्दा महाराज का पास पहुँचा।

'विन्दो रानी' यह भुनभुनाया 'हम तुमसे परेम करते हैं।' विन्दा महाराज सिलबिलाकर हस पड़ा 'अरे वाह रे छाकरे माह ! तू मुझको परेम करता है, परम ही ही ही ही ही हों।' घुरबिनवा तब तक विन्दा महाराज का टाट के एक कोने पर आसन जमा चुका था और इसी के हिलचोलों के साथ बाल की लहरी में काँपती हुई बालियों की एकटक देख रहा था। न जाने विन्दा महाराज को क्या सपना आया कि

वह तमककर उठा और घुरविनवा का हाथ पकड़कर ज्ञात हुए चित्लाया, 'भाग बे हरामजादा । इसका दीदा न देखो । दुनिया भर का रोघट पोतकर देह म सटा जाता है, चमार सियार की जात हूँ, कसा जमाना आ गया है, बड़े-छोटे का कोई विचार नहीं ।' घुरविनवा खिसककर नीचे खड़ा हुआ, फिर एक क्षण घूरता रहा सहसा मिलखिलाकर बोला— 'हम क्या दीपू मिसिर से खराब हैं विन्दा रानी ।' और फुर-से गली की ओर भागा क्योंकि विन्दा महाराज बन्-सा बेला हाथ में उठाए क्रोध के मारे कांपने लगा था ।

थोड़ी दूर बाद घुरविनवा गली के मोड़ के पास पक्क स पीठ अड़ाये बठा दिसाई दिया । विन्दा महाराज ने एक बार इनची में देखा—बाला शरीर, गन्दा कुर्ता और छाटा-सा कद पर दारारतो का बिनाल अम्बार मन के भीतर । जाने क्यों विन्दा महाराज की आँखें अचानक मीली हो गयी । घुरविनवा मुँह फुलाये बठा था । उसे विश्वास था कि रोज की तरह आज फिर विन्दा महाराज उसे पास बुलायगा, पुचकारेगा और फिर गली के लड़कों के साथ खेलने की सलाह दब-भीतर चला जायेगा । किन्तु जान आज विन्दा महाराज को क्या हो गया है, वह तो बालता ही नहीं । घुरविनवा बड़ी देर तक भास लगाये बठा रहा, किन्तु महाराज जब न उठा तो वह भुनभुनाया हिजड़ा साला और घणा स महाराज को घूरते हुए एक ओर चल दिया ।

विन्दा महाराज एक क्षण इधर-उधर दखना रहा उसके पीले लबातरे चेहर पर पक्के की दीवार की काली छाया नाच रही थी । कितनी उपास, नीरस थी वह छाया जो चन्ते हुए मूरज के साथ अपनी सारी अवान्तर लड़ाई समेटकर छोटी और गाढ़ी होती जा रही थी—केन्द्रित । दुनिया के सारे नाते रिक्त केवल पुरण और स्त्री में है विपरीत लिंगों का आकर्षण एक कंदायने की तमाम वस्तुएं दूसरे में उमी प्रकार सबद्ध । विन्दा महाराज का दुनिया में कोई रिन्ता नहीं, हो भी कैसे, न ता वह मर है न औरन । धत-उपवास, क्या-पुराण के उत्सवा में नाच गान स उपजी कमाई को राख बनाकर उस क्या मिलता—पीडा जलन । प्रसाद लन तक क लिंग भी तो वही आने जिह्म मोठी चीखा स कभी भेंट न हानी । मन की ऊपग मतह पर इनकी बात-चीन निकटता की एक लहर जगा देती, क द की परिधि बढ़ती बढ़ती जानी और एक लहर की उठान गिरकर खा अमृच्य रेखा में, बल्लकर लीन हो जाती ।

मैं तुमसे परेम करता हूँ, विन्दा रानी घुरविनवा न आज भ्रम पर गान मारा था । विन्दा महाराज एक क्षण क लिंग बिलकुल व्यथित की तरह ताकता रह गया । सहसा उस विश्वास भी न हुआ कि चमार क उम गन्त म लड़के ने यह बात जानकर कही है ।

तब विन्दा महाराज का 'विन्दिया कहलाना उ याता अन्ठा लगता था । पनला-सा गरीर, छरहरी देह, लाल रंग का नूनर और बूटदार छोट की अधबहियाँ । विन्दिमा क

तिर की भगवती बिनी मूरज की ज्योति पर चक्कर की तरह जल उठी। बलाई में लाल-लाल चूड़ियाँ गिरने लगे-लगे बाल दाबुँहो दा पाटियाँ म गुँथ हाँ, जो उमकी छाती पर गेंदे के बदन हुए वृत्तिम उमार पर मूलती रहता। बिनिया चलती ला गाँव की गलियाँ म हंगी, ठिठाई और मोठी दुर्गियाँ गिराह बाँधनर चलन लगता। गरीर का ओसात स ज यादा स्त्रण डग स लटकात हुए जब बिनिया दुनरती ता मत्र म पर लटकाय झूझा तय की मृछा के बाल परपराने लगते। बिदा महराज का साथ उसने धवरे भाई का दस-बारह साल का लडका करीमा डोलक स्वर चलता। लडका बड़ा गीग और दुग्मिजाज था। बिदा महराज उस प्राणा से ज्यादा मानता। बाईं तनिक छद्द दता या कुछ वह देता तो वह करीमा के लिए झगड़ने लगे को तयार रहता। उस दिन ठाकुर के घर गमजात बच्च की बरही थी। गाँव भर की लडकियाँ बूझी औरतें बिदा महराज का नाथ देखन झकटठी हुई। तासा मजमा था। एक-से-एक चुल्लुलाती औरतें और उनका बीच बिदा महराज। करीमा के तिर पर पाँचगडी लाल साड़ी की पगडी बाँधी थी और बमर म डोलक, जिस वह चलते नाचरी गत पर बजा लेता था। बिदा महराज परो में घुँघर बाँध नर लडा हुआ ता लडकियाँ की आँखा म मूलर फूलन लगे, बूझी औरतें अपनी हँसी छिपाने के लिए होठों पर आँचल रखने लगी, मुँहजोर तीवरानियो न बिदा रानी को आँचल के गेंद छिपा लेने की मलाह दे ही दी। बिदा महराज इन मजाको का उत्तर अत्यन्त खुल और अश्लील मजाको से दता जाता। सब हँह जाती, कौन बिससे बहे। बिदा महराज का गला पुरुष-कठ की तरह मोटा था, पर सघा। वह गा रहा था

मोरी घानी चुनरिया इतर गम क

घनि वारी उमरिया नइहर तरसे।

करीमा न डोलक सँभाली। कबूतर की तरह घुटक कर पीछे से बोला कइसे तरसे राजा। लडकियाँ म खिलखिलाहट छा गयी। जोर का ठहाका लगा, बूझियाँ लोट पोह होन लगी। बिदा महराज के घुँघरजा की छमक और पगडी वाले करीमा के ठेंगे ने समा बाँध दिमा था। ठाकुर के आँगन म इस विचित्र सयोग ने नये रस की सृष्टि कर दी। बिदा महराज ने अन्तिम पतिया गायी

कलियाँ मैं चुन चुन सज आयाया

मोरा सूतने माला विदेस तरसे ।

डोलक चलते पर बज रही थी। एक विचित्र तरंग सिसकारियाँ, छनछनाहट बीच-बीच मे हथेली के जोर से घुम घुम की आवाज निकालते हुए करीमा की घुटक कइसे बाबु कइसे राजा' गोरे, पीले रंग लाल होने लगते। हँसी से हृत्कम्प के कारण आँचल तक धिरकने लगते बिदा महराज सौंदर्य को इस जाग्रत अवस्था की सपने की तरह देखता रहता। हँसता, नकल करता, डबता, उतराता मानुष होता किन्तु वितना

भल्लूना, कितना निलिप्त ! उस दिन ठकुरानी न छह गजी मोरपखी विनारी वाली पीली साड़ी भर सूप नाखूनी सजीरे के चावल और चादी का एक रुपया नेग म देकर विंदा महाराज का 'खोईछा' (आचल) भर दिया था ।

शाम को घर लौटते समय गली में दीपू मिसिर मिल गये थे । घुटन तक काछेदार घोती, मोटिया की अधबहियाँ, और सिर पर जापे इच के मूइनुमा बडबडाते बाल । दीपू मिसिर को लघी लगाने की आदत थी । छोटा हा या बडा, लडका हो या जवान यदि कोई आदमी दीपू मिसिर को मिलता, तो उसे पणाम व जागीर्वाद न देकर वे पास पहुँचते और उसका हाथ पकड़ कर पूछते, 'का गोइया मजे मे हो न ।' और चटाक बगली खीचकर उसके पर में लघी मार दते । आदमी हाशियार रहा तो सँभल गया नहीं तो लडखडा कर चारो खाने चित्त गिरने वाले को जरूरत समझ कर वही सम्हालते और ठहाके मार कर कहते रहते, बाब्यास, गाबाग । भर मिट्टी के झर जिओ, जिओ क्या हाथ दिखाया है तूने गोइया !' गोइयाँ उनकी ओर हक्का बक्का हो कर ताकते रह जाते । गली में भीड़ लग जाती और तब मुस्कराते हुए चुपचाप किसी से बिना कुछ कहे गोइयाँ को अपनी राह चल देना ही मौजू जान पड़ता ।

विंदा महाराज अपनी चूनर सम्हाले पीठ पर डोलक लटकाए, बमर को हवा में लचकाता बल-प बल खाता चला जा रहा था कि मिसिर ने देख लिया । धबुतरे से दूद कर सामने आ गये । दाना हाथ फला कर भागू की तरह कूट-कूट कर वह उसका रास्ता रोकने लगे । वह बायें ठुनुक कर चलता था मिसिर बायें उछलते, दाहिनी ओर मुड़ता तो मिसिर दूदकर दाहिनी ओर जाते ।

'दखो मिसिर', वह नजाकत से बोला हमको छेड़ो ना ।

दीपू मिसिर 'हो हा' कर हसे—अरी बाह रे, मेरी छप्पन छूरी, ऐसे ही चली जाआगी और उहाने चटाक से उसकी कलाई पकड़ ली ।

'हाथ री मया' विंदा महाराज डर से खींचता हुआ गिडगिड़ाया, 'मेरी कलाई मुरक जायेगी, मिसिर छोड़ दो ना ।

तो क्या हुआ विंदो रानी' मिसिर भी स्वर का अनुकरण करते हुए बोले हम दवाई करेग ना । तब तक दीपू मिसिर न हाथ पकड़ कर बगली खाची और चटाक विंदा महाराज के पर में लघी मार दी । महाराज तो बिल्कुल अनजाना था लडखडा कर डोलक समेत मुँह के बर गिरने को हुआ । बगीमा जार से खाने लगा, पर दीपू मिसिर ने बीच में ही सम्हाल लिया और वे आदत के मुताबिक हो हो करते हुए उसे 'अरो बध्यर व गिताव से विमृषित किये जा रहे थे ।

विंदा महाराज याडा रूट हुआ था मिसिर बान, 'अरी बाह रे विंदो रानी मैंने ता समझा कि तुम जरूर मजबूत होगी और फिर मिसिर बाजिदअली शाह का पुराना विस्सा मुनाने लगे । बाले, एक बार बाजिदअली शाह के मंत्री ने सलाह दी—

हज़ूर, एक जिंदा की पलटन तैयार की जाये और फिरगी से मिठा लिया जाये। मजा भा जायगा। कितने मजबूत हाने हंगे ये लोग, न औरत न मर' लटका पग करना होता नहीं, देह मरी-की-मरी रह जाती है नवाब मान गया। पाँच हजार जनगों की पलटन तैयार हुई। शाम पर भेज लिया गया। उधर से जंग पग पग गालियाँ छूनी तो बत बहादुरो की पलटन बंदूक पक पक कर 'हमनीम का मतलब रे मया' बहने हुए जो गयी तो फिर मुठ कर देगा भी नहीं।' थोता गण मिमिर व निस्तो पर मूख रेंदकी तरह सड़गड़ाने लगे थे। बिदा महराज को जाने को देर हो रही थी, 'अच्छा, अच्छा हुआ, बड़े विदमान हो' यह बोला 'हम पर जाने की जल्दी है, लागो एक ठो बीड़ी पिलाओ'।

'ए' बीड़ी का नाम सुनकर मिसिर चौंके—'पहिले चुम्मा गलबटोत्रल' फिर पाकिट से बीड़ी निकाल कर बोले, 'एक बीड़ी मे क्या है रानी तुम्हारे लिए तो बलेजा हाजिर है, बाकी हाँ' कभी-कभी हम भी याद कर लिया करा। बिदा महराज ने बीड़ी ले ली और जलापर पीन लगा। धुएँ को अपने हाँडो से ढकेलते हुए वह तिरछी भांगो से एक्कड़ मिसिर को देखता रहा। धुएँ की मुँजलक उसके पतले लाल होठों के साथ बहुत सुन्दर लगती। सहसा मिसिर की हाथ जोड़कर बोला, 'अच्छा मिसिरजी पालागा।'।

'जिओ बाबू जिओ?' मिसिर बोले। बिन्दा महराज छमकते हुए जाने लगा और व उसकी ओर देखते मुस्कराते रहे।

नीचे सूरज की दोपहरी किरण नीम की पतियों में उलझन लगी थी। बिदा महराज उसी प्रकार अपने सपनों की भूतभुलया में खोया निश्चेष्ट बठा था। हरी पतियाँ से छन छन कर आती हुई धूप छाही रोगनी उसके पीले चेहरे पर काँप रही थी। आँखों की काजिमा पर काली छाया, सूखे होठों पर पीला प्रकाश—अस्थिर चित्त की डोलती रागिनी की यह छुका छिपी। यही जीवन है बिदा महराज का। प्यार उसकी आत्मा की व्यास थी, किन्तु परिणामहीन प्रेम की श्रुता वह समझ नहीं पाता। जरा-सं आकषण से चित्त बचल हो जाता। मनोरजन को प्रेम समझा तो नशा छा गया, हाथ फला कर बटोरना चाहा तो हथेलियाँ टकरा गयी। प्रेम शब्द उसके लिए केवल गद्द था, निर्जीव शब्द रुढ़ अर्थ।

'हिजडा उस दिन बाप के कहे शब्दों को करीमा दोहराने लगा, मैं तेरे साथ बोहदा नहीं बनूँगा।' बिदा महराज आहत अभिमान का बाज़ उठाया खड़ा था। उसकी अपलक आँखें जड़ित शीश की तरह गतिहीन, धूमिल। उस विश्वास करते हाँठा कि ये शब्द करीमा के हैं। बड़ा स्नह संचित था मन में, जो आँखों में उतर आया।

मैं तुम्हें बोहदा बनाता हूँ बे हुरामी। उसने चटाक छ एक पण्ड करीमा के गाल पर जड़ दिया और खुद ही रोने लगा।

उसी दिन लड झगड कर उसके भाई न घर से निवाल दिया । या ही कौन उसका अपना, जो परा मे रेशमी बेडिया डालकर रोक रखता । माँ-बाप एक प्राण हीन शरीर उपजा कर चले गये । मद होता तो बीबी-बच्चे होते, पुरुषत्व का शासन होता स्त्री भी होता तो किसी पुरुष का सहारा मिलता, बच्चा की किलकारियाँ स आत्मा व कण-कण तृप्त हो जात । विंदा महाराज न डोलक उठाये और प्यासी आँखों से अपन ही शरीर की देखता गाव स बाहर हो गया । वह सोने ठाकुरों के इस गाव म चला आया था । उसे उम्मीद थी कि नाच गा कर, भीख माग कर जिंदगी के गेव दिन गुजार देगा ।

विंदा महाराज को इस नये गाव म आये तीन चार महीन ही बीत थे कि गाव के एक छोर स दूसरे छोर तक उसकी मुहब्बत की कहानी फल गयी । चौराहे पर गलियों व माड पर पनघट और कुआँ की जगह पर सबत्र दीपू मिमिर और विंदा हिजडे की मुहब्बत की चर्चा होने लगी । विंदा महाराज सुनता तो खुशी के भारे उसके चेहरे पर ताविया लाली छा जाती । कभी गम से गदन भुकाकर सोघन लग जाता— क्या सचमुच ऐसा संभव है । क्या उससे भी कोई मुहब्बत कर सकता है । फिर वह खुद ही इस प्रव र्णा के बोध को बरहमी से फेंक कर हँसने लगता । हाँ वह मुहब्बत करता था, सीधा, निश्चल प्यार, किंतु दीपू मिमिर से नहीं उनके दा-दाई वध के छोटे से बच्चे से जो दिन भर दीपू मिमिर की अँगुली पकड कर रबड के सफेद गुडडे की तरह डुगुर डुगुर घूमता रहता ।

एक दिन शाम के बख्त दीपू मिमिर जब इधर से निकल तो विंदा महाराज व लडहर के पास खडे हो गये । विंदा महाराज लडके को खुश करने क लिए तरह तरह की मुद्राण बनाता रहा कभी भेंडे की तरह प्या-प्या करता, कभी सियार की तरह हुआ हुआ । लडका तालियाँ पीट-पीट कर हँसता रहा । सहसा दीपू मिमिर की ओर मुड़कर बोला 'दादू जी दूआ टमाटर की तरह साल पतले होठ 'पू करन की शकल म सिमिट कर गोल हुए फिर हँसी म बिखर गये 'बूआ । विंदा महाराज ने लडके की छाती से चिपका लिया मिमिर को यह सब अच्छा नहीं मानूम हुआ पर कुछ बोले नहा । अभी हाल मे उनकी बहन मायके आयी थी । मुन्ना को हटाने-बहलाने क लिए वह भी ऐसे ही मुँह बनाती, हाथ हिलाती । न जाने क्या साम्य मिला मुन्ना को कि वह विंदा महाराज का बूआ बडू बठा । इस विचित्र मयोजन स विंदा महाराज का रेतिला मन अनुरित हान लगा । वह बाहर जाता तो लडके व लिए बत्तास रख दिया, मिठाई, कुछ-न-कुछ खर खर लाता । मिमिर भुनभुनाने लडके को घूर घूर कर कुछ न लेने का इगारा करते, किंतु लडका नहीं मानता और विंदा महाराज का ममत्व इतना बेगवान होता कि मिमिर के इगारों का लगर उमड़ जाता ।

नीमकी डालियाँ मजरिया न मुवासित हो जाती, पीली-पीली निक्कारियों स

चबूतरा भर जाता विन्दा महाराज के मन में एक अजीब निस्म की सुरमुरी होने लगती। वह सुबह से शाम तक आँगन में खड़े दीपों में गिर के जाने का इंतजार करता रहता, उसकी इस बेगुनी पर लौंडियाँ व्यग्न करती, कुछ नौजवान छोकरे भी चिढ़ाने के लिए सीढ़ियाँ बजाते गुजर जाते, किन्तु विन्दा महाराज पर इसका कोई असर न होता। कई दिनों से मुन्ना न आया, महाराज के मन की पीड़ा छिपाये नहीं छिपती। शाम को भालूम हुआ कि मुन्ना बीमार है। महाराज के चेहरे पर गाम उतर आयी। वह चुपचाप गाँव से बाहर निकल कर कालीजी के मन्दिर तक गया और उसने चौकट के सिरे पटक दिया। जिंदगी में पहली बार उसे कोई इच्छा लेकर देवता के पास भाना पड़ा था। जवाबुसुम के दाँत फूल, कुछ बत्तासा का प्रसाद लेकर वह लौट आया। कई बार इच्छा हुई कि वह प्रसाद मुन्ना को दे आये, किन्तु न जाने क्या लाज के मारे वह न जा सका। शाम गहरी हो गयी, तो अँधेरे में मन में साहस पैदा किया और वह दबे पाँव लागा की जाँचें बचाता मिसिर के घर की ओर चल पड़ा, दरवाजे पर दस्तक दी।

‘कौन?’

वह कुछ बोल नहीं सका।

दरवाजा खुला। बगल में मिसिर के और सामने मिसराइन खड़ी थी। वे सिंहनी की तरह झूला जाता से उसकी ओर देख रही थी सहसा वे पीछे हटी और खटाक से दरवाजा बंद कर दिया। ‘यह क्या कर रही हो मुन्ना की माँ’ मिसिर ने शायद कुछ और कहा पर मुन्नाई न पड़ा। महाराज कुछ कहने को हुआ किन्तु शब्द जड़ होकर माहृत सांसों में बिखर गये। वह कोलतार पुते काले दरवाजे की ओर मग्न और निराशा से देखता रहा फिर चुपचाप लौट पड़ा। हाथ में जवाबुसुम के लाल फूल मणिधर सप की तरह लहरा रहे थे, वह उह मुट्ठी में दबाये तेजी से चला गया। घर आकर चारपाई पर गिर पड़ा और बहुत देर अँधेरे में घूरता रहा मिसराइन की दाहक आँखों का मन उसकी समझ में कुछ भी न आ सका।

सुबह मुन्ना की मृत्यु हो गयी।

विन्दा महाराज आखें पाडकर पायल की तरह मिसिर के घर की ओर जाते हुए लांगो को देखता, कोई कुछ कहता नहीं, सब शोक मग्न, चुप।

‘हिजडे के साथ का असर है भाई’ सोने जमा लडका सो गया। हवा में सहानुभूति और आनोश के शब्द टकराने लगे।

‘बायन’ औरता की आवाज नागिन की सिसकारी की तरह कापती हुई मुन्नाई बहती लडके को छाती से लगा लिया था।

विन्दा महाराज कलेजे के दर्द को मुट्ठीया में पकड़ने की कोशिश कर रहा था। घर के अँधेरे कोने में बूझों की प्रतिध्वनियाँ उठती, उसके हृदय के भीतर बर्फ का

होका बसकने लगना, वह त्रिपक्षित बाण से बिभे आहत पत्नी की तरह तड़पता रहा । उस लगता कि वह सबमुच डायन है, आत्मभक्षी । उसने ससग म आकर काई सुखी नहीं रह सकता, कोई नहीं ।

विन्दा महाराज उसी चबूतर पर बठा था । उसन तीन्नी साँव ली । सारा शरीर जाड़े से कापन लगा । भयकर बुखार का यह दूसरा दौर था । वह चुपचाप टाट समेट कर आँगने से होता हुआ कमरे मे पट्टेचा और चारपाई पर लेट गया । रजाइ लाच ली । शरीर म दद भरी कंपकंपी, भट्टी के धुँए की तरह दमघोट कमरा, डूबती उतराती आहत आत्मा । ताप बन्ता जा रहा था । सिर फटने लगा । भयकर पीडा से वह कराह उठा ।

‘फिर बुखार आ गया विन्दा चाचा ।’ बटकर चिढ़ाने की गरज से आये हुए घुरबिनवा ने जब कराहन की आवाज सुनी, तो भीतर आ गया ।

ठडी ठडी पतली अँगुलिया सिर पर घूम रही थी । ज्वर से अज्ञात दख शरीर विन्दा महाराज को लगा कि जेठ की तपी रेत मे सावन की फुहारें बरस रही हैं हजारो मँझुए, मरकती पतिया या न अँझुए फूट रहे हैं, सदा की बजर धरती को भेद भेद कर ।

आखें खोलकर विन्दा महाराज ने देखा घुरबिनवा है । मासूम दीतल महाराज की दहकती, तपती छाती उस खीचकर बिपका लेन के लिए तरस उठी । किन्तु जाने क्या सोचकर वह जलती आत्मा स घुरबिनवा की ओर देखत हुए बोला, ‘जबे तू फिर आ गया हरामी ! मैं कहा था न, कि पास मत आइयो और पागल की तरह चिल्लाया, भाग वे भाग, ताकता क्या है, चला जा यहाँ से ।’

घुरबिनवा भय क भारे दो कदम पीछे हट गया और सकपकाया-सा भयाक्रान्त बबी आँखा से विन्दा महाराज को दखता बाहर हो गया ।

महाराज मुस्कराया ‘यथा भरी हूँसी जो ज्वर की पांडा से भुलसकर दुपहरिया के फूल की तरह गिलरने लगी थी ।

कोसी का घटवार

गुमाई का मन फिलम में भी गरी लगा। मिहल की छाँह में चढ़कर वह फिर एक बार घट (पापवती) में अन्दर गया। अभी गण्डर में एक चौपाई से भी अधिक गेहूँ था। गण्डर में हाथ डालकर उसने व्यर्थ ही उल्टा-गुल्टा और चाबी के पाटों के घूँट में फँसे हुए आटे का साइबर एक ढेर बना दिया। बाहर आते-आते उसने फिर एक बार भीड़-भाड़ में हाँककर देखा, जस यह जानना के लिए कि इतनी दूर में बिजली बिगाड़ हो चुकी है, परन्तु अन्दर की मिहलदार में कोई बिजली अन्दर नहीं आया था। रास्ता-बास्ता की ध्वनि के साथ अत्यन्त धीमी गति से ऊपर का पाट चल रहा था। घट का प्रवेग-द्वार बहुत बम ऊँचा था, खूब तीव्र तथा भुवकर घट आदर निकला। सिर के बालों और बाँहों पर आटे की एक हल्की सफेद पतल बठ गई थी।

सभे का सहारा लेकर वह बुदबुदाया, जा, स्ताला! मुबह से अब तक दस पेंसेरी भी नहीं हुआ। सूरज वहाँ का वहाँ चला गया है। बसी अनहोनी बात।'

बात अनहोनी तो है ही। जेठ भीत रहा है। आकाश में वही घादलों का नाम निगान ही नहीं। अब यहाँ अब सब लोगो की मानरोपाई पूरी हो जाती थी पर इस साल नदी नाल सब सूख पड़े हैं। खेता की सिंचाई तो दरकिनार बीज की ब्यारियाँ सूखी जा रही हैं। छोटे नाले-मूलों के किनारे के घट महीना से बन्द हैं। बोसी के किनारे है गुमाई का यह घट। पर इसकी भी चाल ऐसी कि लट्टू, घोड़े की चाल की भाँति होती है।

जवकी के निचले खण्ड में छच्छिर छच्छिर की आवाज के साथ पानी की काटती हुई मयानी चल रही थी। कितनी धीमी आवाज! अच्छे खाते-पीने वालों के घर में दही की मयानी जससे ज्यादा शोर करती है। इसी मयानी का वह शोर होता था कि मादमी का अपनी बात नहीं सुनायी देती और अब तो भल नदी पार कोई बोले तो बात यहाँ सुनाई दे जाय।

छप्प छप्प छप्प पुरानी फौजी पट की घुटनों तक मोड़कर गुमाई पानी की धूल में अन्दर चलने लगा। वही कोई सुरास निवास हो तो बन्द करे। एक बूँद पानी भी बाहर न जाये। बूँद-बूँद की कीमत है इन दिनों। प्रायः आधा फर्लांग चलकर वह बाँध पर पहुँचा। नदी की पूरी चौड़ाई को घेरकर पानी का बहाव घट की धूल की भार मोड़ दिया गया था। किनारे की मिट्टी घास लेकर उसने बाँध में एक-दो स्थान

पर निवास बन्द किया और फिर गूल के किनारे किनारे चलकर घट के पास आ गया।

अन्दर जाकर उसने फिर पाटो के वृत्त में पड़े हुए आटे का बूँद बर ढेरी में मिला दिया। खप्पर में अभी थोड़ा-बहुत गहूँ भेष था। वह उठकर बाहर आया।

दूर रास्ते पर एक आदमी सिर पर पिसान रखे उमकी ओर आ रहा था। गुसाई ने उसकी मुविषा का झगल कर वहीं से आवाज दे दी 'हैं हो' यहाँ लम्बर देर में आयेगा। दो दिन का पिसान अभी जमा है। ऊपर उमेदमिह के घट में देख लो।'

उस व्यक्ति ने मुँहने से पहले एक बार और प्रयत्न किया। स्व ऊँचे स्वर में पुकार कर वह बोला, जरूरी है जी, पढ़ें हमारा लम्बर नहीं लगा योग ?

गुसाई हाँ-हो-हो-हो में मुस्कराया, 'समाल कसा चीखता है जैसे घट की आवाज इतनी हो कि मैं सुन न सकूँ।' कुछ कम ऊँची आवाज में उसने हाथ हिलाकर उत्तर दे दिया 'यहाँ जरूरी का भी नाप रखा है, जी। तुम ऊपर चले जाओ।'

वह आदमी लौट गया।

मिहल की छाँव में बैठकर गुसाई ने लकड़ी के जलते कुँदे की खोदकर बिलम मुलगाई और गुठ गुठ करता धुआँ उड़ाता रहा।

खस्सर खस्सर धक्की का पाट चल रहा था।

किट किट किट किट खप्पर से पान गिराने वाली बिड़िया पाट पर टकता रही थी।

छिच्छिर छिच्छिर की आवाज के साथ मपानी पानी को काट रही थी।

और वही कोई आवाज नहीं। बोसी के बहाने में भी कोई ध्वनि नहीं। रेती पत्थरों के बीच में टखन-टखने तक फला पानी क्या आवाज करेगा। पानी के दम के निकल कर छोट छोट पत्थर भी अपना सिर उठावे आकाश को गिहार रहे थे। दोपहरी ढलने पर भी इतनी ठेज धूप। वही धिरया भी नहीं बोलती। किसी प्राणी का प्रिय अप्रिय स्वर नहीं।

सूखी नदी के किनारे बठा गुसाई मोचने लगा, क्या उस व्यक्ति को लौटा दिया। लौट तो वह जाता ही घट के अंदर टक्क पड़े पिसान के थलो को देखकर। दो चार क्षण की बातचीत का आसरा ही होता।

कभी-कभी गुसाई का यह अवेलापन काटने लगता है। सूखी नदी के किनारे का यह अवेलापन नहीं, जिदगी भर साथ देने के लिए जो अवेलापन उमके द्वार पर धरना देकर बठ गया है वही। जिसे अपना कह सक, ऐसे किसी प्राणी का स्वर उमके लिए नहीं पालतू कुत्ते बिल्ली का स्वर भी नहीं। क्या ठिकाना ऐसा मानिक का जमका घर दार नहीं 'बीबी-बच्चे नहीं, माने-पीने का ठिकाना नहीं।

घुटनों तक उठी हुई पुरानी पोजी पट के मोड़ को गुसाई ने झोला। गूल में चलने का वह हिस्सा थोड़ा भीग गया था। पर उस धर्मी में उसे भीनी पट की वह नीतलता

अच्छी लगी। पट की सलवटी को ठीक करते करते गुसाईं न दुबके की नली से मुँह हटाया। उसके होठों में बाएँ कोन पर हल्की-सी मुसकान उभर आई। बीती बातों की याद गुसाईं सोचने लगा, इसी पट की बदौलत यह अकेलापन उसे मिला है नहीं, याद करन को मन नहीं करता। पुरानी बहुत पुरानी बातें वह भूल गया है, पर हवलदार साहब की पट की बात उसे नहीं भूलती।

ऐसी ही फौजी पट पहनकर हवलदार घरमसिंह आया था। लाठी की धुली, मोकदार, फौजवाली पट। वसी ही पट पहनने की महत्वाकांक्षा लेकर गुमाइ फौज में गया था। पर फौज से लौटा तो पट के साथ साथ जि दगी का अकेलापन भी उसके साथ आ गया।

पट के साथ और भी कितनी ही स्मृतियाँ मुखर हैं। उस बार की छुट्टियों की बात

कौन महीना? हाँ बसाख ही था। सिर पर त्रास खुखरी के कस्ट वाली काली किन्तीनुमा टोपी को तिरछा रखकर, फौजी वर्दी पहने वह पहली बार एनुअल लीव पर घर आया, तो चीड़-वन की आग की तरह खबर इधर उधर फल गई थी। बच्चे बूढ़े सभी उसमें मिलने आये थे। चाचा का गोठ एकदम भर गया था। ठसाठस। बिस्तर की नई एकदम साफ जगमग, लाल नीली धारियों वाली दरी आगन में मिछानी पड़ी थी लोमा को बिठाने के लिए। खूब याद है आगन का गोबर दरी में लग गया था। बच्चे बूढ़े सभी आये थे। सिर्फ चना गुड़ या ललढानी के तम्बाकू का शोभ नहीं था, कल के गर्मले गुसाईं को इस नये रूप में देखन का कीतूहल भी था। पर गुसाईं की आगन उस मीठ में जिसे खोज रही थी, वह वहाँ नहीं थी।

नाले पार के अपने गाँव से भ्रम के कटया की खोजने के बहाने दूसरे दिन लछमा आयी थी। पर गुसाईं उस दिन उससे मिल न सका। गाँव के छाकर ही गुसाईं की जान का बहाल हो गये थे। बूढ़े नरसिंह प्रधान उन दिना ठीक ही कहते थे, आजकल गुसाईं को देखकर सोबनिया का लडका भी अपनी पटी घेर की टोपी का तिरछी पहनन लग गया है। दिन रात दिल्ली के बच्चों की तरह छोकर उसका पीछा लगे रहते थे सिगरट-बीड़ी या गणगण के शोभ में।

एक दिन बड़ी मुश्किल से मौका मिला था उसे। लछमा को पान पत्तल के लिए जंगल जाते देखकर वह छाकरा से काकड़ व गिकार का बहाना बनाकर अचल जंगल का चल दिया था। गाँव की भीमा से बहुत दूर, काफ़्त व पड़ व नीच गुसाईं व घुटन पर सिर रख कर लटी-लगी लछमा काफ़ल खा रही थी। एक गन्नाय गहरे लाल लाल काफ़ल। लल लल में काफ़ल की छोटी गपटी करते गुसाईं न लछमा की मुटठी माच दी थी। टप टप काफ़ल का गाढ़ा लाल रस उसकी पट पर गिर गया था। लछमा ने कहा था इस यहा रस जाना मरी पूरी बाँह की, कुर्ती भ्रम में निकल आदगी। वह

खिलखिलाकर अपनी बात पर स्वयं ही हँस दी थी।

पुरानी बात। क्या कहा था गुसाई ने, याद नहीं पड़ता तारे लिए मसमल की कुर्ती टा डूँगा, मेरी सुवा। या कुछ ऐसा ही।

पर लछमा को मसमल की कुर्ती किसने पहनाई होगी—पहाड़ी पार के रमुवान जो तुरी निसाण लेकर उसे ब्याहने आया था?

‘जिसके आगे-पीछे माई-बहिन नहीं, माई-बाप नहीं, परदेश में बंदूक की नाक पर जान रखने वाले को छोकरी कैसे दे दें हम?’ लछमा के बाप ने कहा था।

उसका मन जानन के लिए गुसाई ने ठेके तिरछे बात चलावाई थी।

उसी साल मँगसिर की एक ठडी, उदास नाम की गुसाई की यूनिट के सिपाही किसनसिंह ने क्वाटर-मास्टर स्टोर के सामन खड़े-खड़े उससे कहा था, हमारे गांव के रामसिंह ने ज़िद की तभी छुट्टियाँ बझानी पड़ी। इस साल उसकी गादी थी। खूब अच्छी औरत मिली है, धार। झकल-सूरत भी खूब है एकदम पटाखा। बड़ी हँसमुख है। तुमने तो देखा ही हागा तुम्हारे गाँव के नजदीक की है। लछमा-लछमा कुछ ऐसा ही नाम है।’

गुसाई को याद नहीं पड़ता, कौन-सा बहाना बनाकर वह किसनसिंह के पाम से चला आया था। रम डे था उस दिन। हमेशा आधा पग लने वाला गुसाई उस दिन दो पग रम लेकर अपनी चारपाई पर पड़ गया था। हवलदार मेजर ने दूसरे दिन पेन्नी करवाई थी—मलेरिया प्रिकाशन न करन के अपराध में। सोचते-साचत गुसाई बुदबुगाया, स्साला एडजुटेंट।’

गुसाई सोचने लगा, उस साल छुट्टिया में घर से बिदा होन से एक दिन पहले वह मौका निकालकर लछमा से मिला था।

गगानाधज्यू की क्रिसमस जसा तुम कहागे, मैं बसा ही करूँगी।’ आँसा में आँसू मर कर लछमा ने कहा था।

वर्षों से वह सोचता है, कभी लछमा से मेट होगी तो वह अवश्य कहेगा कि वह गगानाध का जागर लगा कर प्रायश्चित्त जहर करे। देवी देवताओं की भूटी कसमे खाकर उह नाराज करन से क्या लाभ? जिस पर भी गगानाध का कोप हुआ, वह कभी फल फूल नहीं पाया। पर लछमा से कब मेट होगी यह वह नहा जानता। लटकपन के सगी-साथी नौकरी चाकरी के लिए मदाना में चले गये हैं। गाँव की ओर जान का उसका मन नहा होता। लछमा के बारे में किसी से पूछना उस अच्छा नहीं लगता।

जितने दिन नौकरी रही, वह पलटकर अपन गाँव नहीं आया। एक स्टेशन से दूसरे स्टेशन का वालंटियर ट्रांसपर मेन वाला की लिस्ट में नायक गुसाई सिंह का नाम ऊपर आता रहा—लगातार पाँच साल तक।

दिखाई दे रहा था। स्त्री ने उसे नहीं पहचाना।

उसने दुबारा वे ही गन्ध दोहराये। अब वह भी तब धूप में खोना सिर पर रख हुए गुसाई का उत्तर पाने का आतुर थी। गायद नकारात्मक उत्तर मिलन पर वह उल्ट पाव लौटकर किसी अय चक्की का सहारा लेती।

दूसरी बार के प्रश्न को गुसाई न टाल पाया, उत्तर देना ही पड़ा, "यहाँ पहले ही टीला लगा है, देर तो होगी ही।" उसने दबे-दबे स्वर में कह दिया।

स्त्री ने किसी प्रकार की अनुनय विनय नहीं की। गाम के आटे का प्रबंध करने के लिए वह दूसरी चक्की का सहारा लाने को लौट पड़ी।

गुसाई कमर मुकाबर घट से बाहर निकला। मुश्किल समय स्त्री को एक क्षण देखकर उसका सट्टा विश्वास में बदल गया था। हताश सा वह कुछ क्षण तक उसे जाते हुए देखता रहा और फिर अपने हाथों तथा सिर पर गिर हुए आटे का झाड़कर वह एक-दो कदम आगे बढ़ा। उसके अंदर की किसी अज्ञात शक्ति ने उसे उसे वापस जाती हुई उस स्त्री की बुलान को बाध्य कर दिया। आवाज देकर उसे बुला लेने को उसने मुँह खोला परन्तु आवाज न दे सका। एक भिन्न, एक अममथता थी जो उसका मुँह बन्द कर रही थी। वह स्त्री नहीं तक पहुँच चकी थी। गुसाई के अन्तर में तीव्र उदल-पुलल मच गई। उस बार आश्रय स्तना तीव्र था कि वह स्वयं को नहीं रोक पाया वह मशाली आवाज में उसने पुकारा 'लछमा'।

घबराहट के कारण वह पूरे जोर से आवाज नहीं दे पाया था। स्त्री ने यह आवाज नहीं सुनी। इस बार गुसाई ने स्वस्थ होकर पुन पुकारा 'लछमा'।

लछमा ने पीछे मुड़कर देखा। माथे के म उसे समी इसी नाम से पुकारते थे यह सम्झोपन उसके लिए स्वाभाविक था। परन्तु उस सका गायद यह थी कि चक्की वाला एक बार पिसान स्वीकार न करने पर भी दुबारा उसे बुला रहा है या उस केवल भ्रम हुआ। उसने वहीं से पूछा 'मुझे पुकार रहे हैं जी?'

गुसाई ने समत स्वर में कहा 'हाँ, ले आ हो जायगा।'।

लछमा लज भर स्त्री और फिर घट की ओर लौट आई।

अचानक साक्षात्कार होने का भौका न दान की इच्छा से गुसाई व्यस्तता का प्रणय करता हुआ मिहल की छाँह में चला गया।

लछमा पिसान का थला घट के अंदर रख आई। बाहर निकलकर उसने आँच के जोर में मुँह-भोछा। तेज धूप में चलन के कारण उसका मुँह लाल हो गया था। किसी पेड़ की छाया में विश्राम करने की इच्छा से उसने इधर-उधर देखा। मिहल के पट की छाया में घट की आर पीठ बिये गुसाई बठा हुआ था। निकट स्थान में दाहिम के एक पट की छाँह को छोड़कर अय कोई बठन लायक स्थान नहीं था। वह उसी आर चलने लगी।

गुमाई की उपागता के कारण जल्दी ही होकर ही जमे उगने बिट जाने-आने लगा, गुमाई बाल-बच्चे जो रहे गटवारनी । बड़ा उपागार का काम कर दिया गुमाई । ऊपर के पत्र में भी ग जाते जिन्नी केर म मन्वर मिया ।

अबल गन्धि के प्रति निन्दे मय आभीषयना का गुमाई ने मन-ही मन रिना के रूप में पट्टन किया । हम कारण उगकी मागिक उपन गुप्त कुछ कम है । गुमाई लामा उगकी ओर देने हमस पूष हो उगने बहा ' जा रहें तरे बाल-बच्चे लामा । मायके बब आयी ?

गुमाई ने अन्त में मुमवनी आंभी की राखर मा प्रदन इतने गया स्वर में किया, जैसे वह भी अन्त दम आगिया की तरह लामा के लिए एक साधारण व्यक्ति है ।

दाहिम की छाया में पात-पौल झाड़कर बटत लामा ने शक्ति दृष्टि से गुमाई की ओर दगा । बोनी की मूनी धार भगवान जल-जलावि हाकर बहन लगती, तो भी लामा का इतना आश्चर्य रहा हाता जिना अपन स्थान से बचल पार पन्म की दूरी पर गुमाई को इस रूप में देखने पर हुआ । बिस्मय से आगे पाडकर था उस दम जा रही थी जैसे अब भी उस विश्वास न हो रहा हो कि जो व्यक्ति उसके साम्मुख बठा है वह उसका पूर्व-परिचित गुमाई ही है ।

'तुम ?' जाने लछमा क्या कहना चाहनी थी थाप गद उसने कठ म ही रह गया ।

'हो, पिछले माल पस्टन से लौट आया था बत्त काटने के लिए यह घट लगवा लिया ।' गुमाई ने उसकी जिनामा घात करने के लिए कहा । हाठी पर मुस्मान लाते की उसने अगप-कोणिग की ।

कुछ क्षणों तक दोनों कुछ नहीं बोले । फिर गुसाई ने ही पूछा ' बाल-बच्चे टीक हैं ?'

और जमीन पर टिबाये गरदन हिनाकर सबेते से ही उसने बच्चों की कुशलता की सूचना दे दी । जमीन पर गिरे एक दाहिम के फूल को हाथों में लेकर लछमा उसकी पलुडिया को एक एक कर निकुईस्य साइन लगी और गुसाई पतली सीक लेकर आग की कुरदता रहा ।

घातो का जय बनाये रखने के लिए गुमाई ने पूछा ' तू अभी और कितने दिन मायके ठहरने वाली है ?'

अब लछमा के लिए अपन को रोकना असम्भव हो गया । टप् टप् टप वह सिर नीचा किये आसू गिराने लगी । मिमकिया के साथ-साथ उसके उठते गिरते कया की गुसाई देखता रहा । उस यह नहीं सूझ रहा था कि वह दिन शम्भो में अपनी सन्तुष्टि प्रकट कर ।

इतनी देर बाद सहसा गुसाई का ध्यान लछमा के शरीर की ओर गया । उसने

गल म काला चरेक (गुहाण चिह्न) नहीं था। हतप्रभ सा गुसाईं उसे देखता रहा। अपनी व्यावहारिक अनानता पर उसे बेहद झुंझलाहट हा रही थी।

आज अचानक लछमा से भेंट हो जाने पर वह उन सब बातों को भूल गया, जिन्हें वह कहना चाहता था। इन क्षणों में वह केवल मात्र श्रोता बनकर रह जाना चाहता था। गुसाईं की सहानुभूतिपूर्ण दृष्टि पाकर लछमा आसू पोछती हुई अपना दुखड़ा रोने लगी जिसका भगवान नहीं होता उसका कोई नहीं होना। जेठ-जेठानी से किसी तरह पिंड छुड़ाकर यहाँ भा की बीमारी में आयी थी, वह भी मुझे छोड़कर चली गई। एक अनागा मुझे रात का रह गया है, उमी के लिए जीना पड़ रहा है। नहीं तो पेट पर परधर ढाघकर कहीं डूब मरती जजाल बटता।”

‘यहाँ काका बाकी के साथ रह रही हो?’ गुसाईं ने पूछा।

‘मुश्किल पड़ने पर कोई किसी का नहीं होता, जी। बाबा की जायदान पर उनकी जाखें लगी हैं माघत है कहीं मैं हक न जमा लूँ। मैंने साफ साफ कह दिया मुझे किसी का कुछ लेना दना नहीं। जगलात का लीसा दा ढोकर अपनी गुजर कर लूँगी किसी की आँख का बाटा बनकर नहीं रहूँगी।

गुसाईं ने किसी प्रकार की मौनिक सवेदना नहीं प्रकट की। केवल सहानुभूति पूर्ण दृष्टि से उसे देखता भर रहा। दाडिम के वृक्ष से पीठ टिकाये लछमा घुटने मोड़ कर बठी थी। गुसाईं सांचने लगा प ड्रह मोलह साल किसी की जिंदगी में अंतर लाने के लिए कम नहीं होने, समय का यह अंतराल लछमा के चेहरे पर भी एक छाप छोड़ गया था पर उसे लगा उम छाप के नीचे वह आज भी पड्रह वप पहले की लछमा का देव रहा है।

‘कितनी तेज धूप है इस साल!’ लछमा का स्वर उसके कानों में पड़ा। प्रसंग बदलने के लिए ही उस लछमा ने यह बात जान डूसकर कही हा।

और अचानक उसका ध्यान उम ओर चला गया जहाँ लछमा बठी थी। दाडिम की फली फली अघाँकी डाला स छनकर धूप उसके शरीर पर पड़ रही थी। मूरज की एक पतली किन्न न जाने कब स लछमा के माघे पर गिरी हुई एक लट को मुनहरी रंगिनी में डुबा रही थी। गुसाईं एकटक उस नेमता रहा।

‘दोपहर तो बीत चुकी हागी?’ लछमा न प्रश्न किया तो गुसाईं का ध्यान टूटा हा अब तो दा बजने वाले हागे। उसने कहा ‘उधर धूप लग रही हो ता इधर आ जा छाँव म।’ कहता हुआ गुसाईं एक जमुहाई लेकर अपन स्थान स उठ गया।

‘नहीं यही ठीक है’ कहकर लछमा ने गुसाईं की ओर दखा नेनिन वह अपनी बात कहने के साथ ही दूसरी ओर का देखन लगा था।

घट म कुछ देर पहले डाला हुआ पिमान समाप्ति पर था। नम्बर पर रक्ते हुए पिमान की जगह उसन जाकर जल्दी जल्दी लछमा का अनाज सप्पर में खाली कर दिया।

धारे पीरे चलकर गुसाईं गूल जिनारे तक गया, आगी अँडुली से मर मरकर छसन पागे गया और फिर पाग ही एक बजर घट के अंदर जाकर पीतल और अलूनिधम के कुछ बत्ता लेकर आग के निकट लौट आया।

आसपास पड़ी हुई गुमी लकड़ियाँ वहाँ बटोरकर उसने आग गुलगाया और एक कालिंग गुमी बटलोई में पानी रगड़कर जात-जाते लछमा की ओर धुँह कर वह गया। चाय का टाइम भी हो रहा है। पानी उबल जाय तो पत्ती डाल देना पुडियाँ मचड़ी हैं।"

लछमा ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह उगे मंदी की ओर जान वाली पगडंडी पर जाता हुआ दराती रहो।

सड़क-जिनारे की दुकान से दूध लेकर लौटने लौटते गुसाईं को काफी समय लग गया था। वापस आते पर उसने देखा, एक छ-सात बघ का बच्चा लछमा की देह से सटकर बैठा हुआ है।

बच्चा का परिचय देने की इच्छा में जैसे लछमा ने कहा, 'दूध पीकर की चड़ी मर के लिए भी चैन नहीं मिलता। जान कस पूछता गोब्रता मरी जान साने की यहाँ भी पहुँच गया है।

गुसाईं ने लक्ष्य किया कि बच्चा बार-बार उसकी दृष्टि बचाकर माँ ॥ किसी चीज के लिए शिद कर रहा है। एक बार मुँहासाकर लछमा ने उस शिक्षक दिया, 'बुप रह' अमी लौटकर घर जायेंगे, इतनी-सी देर में मरने क्यों जा रहा है?"

चाय के पानी में दूध डालकर गुसाईं फिर उसी बजर घट में गया। एक घाली में आटा लेकर वह गूल के जिनारे बैठा बैठा उस प्रश्न लगा। मिहल के पेड़ की ओर आते समय उसने साथ में दो एक बत्तन और ल लिये।

लछमा ने बटलोई में दूध पीनी डालकर चाय तयार कर दी थी। एक गिलास, एक अलूनिधम का मग और एक अलूनिधम के बसटिन में गुसाईं ने चाय डालकर आपस में बाँट ली और परबरा से बने बेंडगे बूल्हे के पास बैठकर रोटियाँ बनाने का उपक्रम करने लगा।

हाथ का चाय का गिलास जमीन पर टिकाकर लछमा उठी। आटे की घाली अपनी ओर खिसकाकर उसने स्वयं रोटियाँ पका देने की इच्छा ऐसे स्वर में प्रकट की कि गुसाईं ना न कह सका। वह खन्ना खड़ा उस राटी पकाते हुए देखता रहा। गोल-गाल दिविया-सरीखी रोटियाँ बूल्हे में खिलन लगीं। वहाँ बाद गुसाईं ने ऐसी रोटियाँ देखी थी, जो अनिश्चित आकार की फौजी लगर की चपातियाँ या स्वयं उसके हाथ से बनी बड़ोल रोटियाँ में एवदम भिन्न थी। आटे की लोई बनाने समय लछमा के छोटे छोटे हाथ बड़ी तेजी से घूम रहे थे। बूल्हे में पहुँचे हुए चाँदी के बड़े जब कभी आपस में टकरा जाते तो झन् झन् का एक अत्यंत मधुर स्वर निकलता। चक्की के पाट पर

टकरानेवाली काठ की जिड़िया का स्वर नितना नीरस हो सकता है यह गुसाईं न आज पहली बार अनुभव किया।

किमी काम से वह बजर घट की ओर गया और बड़ी देर तक खाली बतन डिब्बों का उठाता रहता रहा।

वह लौटकर आया तो लछमा राटी बनाकर बरतना को समेट चुकी थी और भब आटे में सने हाथों को घों रही थी।

गुसाईं न बच्चे की ओर देखा। वह दोनों हाथों में चाय का मग घाम टकटकी लगाकर गुसाईं का देखे जा रहा था। लछमा ने आग्रह के स्वर में कहा 'चाय के साथ खानी हा ता खालो। फिर ठंडी हो जायगी।'।

'म तो अपन टैम से ही खाऊंगा। यह तो बच्चे के लिए' स्पष्ट कहने में उसे निमग्न महसूस हो रही थी जैसे बच्चे के सम्बन्ध में चिंतित होने की उसकी बेछाया अनधिकार हो।

'न-न जी' यह तो अभी घर से खाकर ही आ रहा है। म रोटियां बनाकर रख आयी थी', अत्यंत सकोच के साथ लछमा ने आपत्ति प्रकट कर दी।

अ ५, या ही कहती है। कहा खमी थी रोटियां घर में? बच्चे ने रक्षासी आवाज में वास्तविक स्थिति स्पष्ट कर दी। वह ध्यानपूर्वक अपनी माँ और इस अपरिचित व्यक्ति की बात सुन रहा था और गेटियों को देखकर उसका समय ढीला पड़ गया था।

बुप! आगे तरेरकर लछमा ने उसे डाँट दिया। बच्चे के इस कथन के कारण उसकी स्थिति हास्यास्पद हो गई थी, इस कारण लज्जा से उसका मुँह आरक्त हो उठा।

बच्चा है, भूल लग आई होगी, टाँटन से क्या फायदा?" गुसाईं ने बच्चे का पक्ष लेकर दो रोटियाँ उमकी आर बढ़ा दी। परन्तु माँ की अनुमति के बिना उन्हें स्वीकारन का साहस बच्चे को नहीं हो रहा था। वह ललचाई दृष्टि से कमी रोटियों की ओर खमी माँ की ओर देख लेता था।

गुसाईं के बार-बार आग्रह करने पर भी बच्चा रोटियाँ लेने में सकोच करता रहा तो लछमा ने उसे विडक दिया, 'मर' अब ले क्यों नहीं लेता? जहाँ जायगा, वहीं अपन लच्छन दिखायगा।

इससे पहले कि बच्चा रोना शुरू करदे, गुसाईं ने रोटियाँ के ऊपर एक टुकड़ा गुठ का रखकर बच्चे के हाथों में द दिया। मरी मरी आँखा से इस अनोख मित्र को देखकर बच्चा बुपचाप रोटी खाने लगा। और गुसाईं वीतुवपूर्ण दृष्टि में उससे हिलते हुए हाँठों को देखता रहा।

इस छोटे-से प्रसंग के कारण वातावरण में एक तनाव-सा आ गया था जिसे

गुसाई और लछमा दोनों ही अनुभव कर रहे थे ।

स्वयं भी एक रोटी को चाय में डुबाकर खाते खाते गुसाई ने जैसे इस तनाव को कम करने की कोशिश में ही मुस्कराकर कहा 'लोग ठीक ही कहते हैं, औरत के हाथ की बनी रोटियां में स्वाद ही दूसरा होता है ।'

लछमा ने कर्ण दृष्टि से उसकी ओर देखा । गुसाई हां हो कर खोखला हसी हँस रहा था ।

'कुछ साग सब्जी होती, तो बेचारा एक-आधी रोटी और खा लता गुसाई ने बच्चे की ओर देखकर अपनी विवशता प्रकट की ।

ऐसी ही खान-पीने वालों की तक्दीर लेकर पड़ा हुआ होता, तो भरे भाग क्यों पड़ता ? दो दिन से घर में तेल नमक नहीं है । आज थोड़ा पैसे मिल है, आज ले जाऊँगी कुछ सौदा ।'

हाथ से अपनी जेब टटालने हुए गुसाई ने सकाचपूर्ण स्वर में कहा, 'लछमा !'

लछमा ने जिज्ञासा से उसकी ओर देखा । गुसाई ने जेब से एक नोट निकालकर उसकी ओर बढ़ाते हुए कहा 'ले, काम चलाने के लिए यह रख ले, मेरे पास अभी और है । परसा दफ्तर से मनीआडर आया था ।'

नहीं नहीं जी ! काम तो चल ही रहा है । मैं इस मनलब में थोड़े बह रही थी । यह तो बात में बात चली थी तो मैंने कहा कहकर लछमा ने सहायता लेने से इंकार कर लिया ।

गुसाई का लछमा का यह व्यवहार अच्छा नहीं लगा । ऊखी आवाज में वह बोला 'तुम तकलीफ के बत ही आदमी आदमी के काम नहीं आया तो बेकार है । रसाला ! कितना कामयाब कितना फूला हमने इस जिंदगी में । है कोई हिसाब ! पर क्या फायदा ! किसी के काम तो नहीं आया । रसम अहसान की क्या बात है ! पसा मिट्टी है माला ! किसी के काम नहीं आया तो मिट्टी एकदम मिट्टी ।'

परंतु गुसाई ने इस तक के बादझूठ भी लछमा अबी रही, बच्चे के सिर पर हाथ फेरते हुए उसने दागिनब गम्भीरता से कहा, 'गगनाय दाहिने रह तो भले बुरे दिन निभ जाते हैं जी ! घट क्या है घट के खप्पर की तरह जितना डालो कम हो जाय । अपने-पराय प्रेम हम सबाल दें, तो वही बहुत है दिन काटने के लिए ।'

गुसाई ने गौर से लछमा के मुख की ओर देखा । वर्यो पहल उठ हुए ज्वार और तूफान का वहाँ कोई चिह्न थाप नहीं था । अब वह सागर जल सीमाओं में बँधकर शांत हो चुका था ।

रफा लेने के लिए लछमा से अधिक आग्रह करने का उसका साहस नहीं हुआ । पर गहर असंतोष के कारण बुझा बुझा सा वह धीमी चाल से चलकर वहाँ से हट गया । सहमा उसकी चाल तेज हो गई और घट के अंदर जाकर उसने एक बार गति दृष्टि

से बाहर की ओर देखा। लछमा उस ओर पीठ किये बठी थी। उसने जल्दी जल्दी अपने निजी आटे के टीन में दो-ढाई सर के करीब आटा निकालकर लछमा के आटे में मिला दिया और सताप की एक साँस लेकर वह हाथ झाँकता हुआ बाहर आकर बाघ की ओर दखने लगा। ऊपर बाघ पर किसी को धूमते हुए देखकर उसने हाक दी। 'गायद मैत की सिंचाइ के लिए कोई पानी तोटना चाहता था।

बाघ की ओर जान से पहले वह एक बार लछमा के निकट गया। पिमान पिस जान की सूचना उस देखकर वह वापस लौटते हुए फिर ठिठककर खड़ा हो गया। मन की बात कहने में जैसे उसे विचल हो रही हो। अटक-अटककर वह बोला, लछमा !

लछमा ने सिर उठाकर उसकी ओर देखा। गुसाई को चुपचाप अपनी ओर देखते हुए उस मकोच होन लगा। वह न जाने क्या कहना चाहता है, पर गुसाई ने निश्चयते हुए केवल इतना ही कहा, 'कभी चार पसे जुड़ जायें, तो गमनाथ का जागर लगाकर भूल-चूक की माफी माग लेना। भूल-परिवार वालों का देवी देवता के कोप से बच रहना चाहिये।' लछमा की बात सुनने के लिए वह नहीं रुका।

पानी तोड़ने वाले खेतिहर से थगड़ा निपटाकर कुछ देर बाद लौटते हुए उसने देखा, सामन वाले पहाड़ की पगडंडी पर सिर पर आटा लिये लछमा अपने धच्चे के साथ धीरे धीरे चली जा रही थी। वह उर्ल पहाड़ी के माड़ तक पहुँचने तक टकटकी बाधे देखता रहा।

घट के अंदर काठ की चिड़िया अब भी कित कित आवाज कर रही थी, चक्की का पाट खिस्तर बिस्तर चल रहा था और मयानी की पानी काटने की आवाज आ रही थी और कहीं कोई स्वर नहीं सब मुनसान निस्तब्ध ।

दो दुखों का एक सुख

साधा, बरमगनी दिन टारी —

मिरटुला बानी गाड़ी के पथरीटे पर बठी मजोरा कुटकुटा रही थी— काम अनेक बिगड़ बा पत्थो असम करे निनगारा। साधा ।

और गाड़ी की तरह व तल दिनार बठ बरमिया बा लग रहा था कि मिरटुला बानी अपने गल की मिठाम ओर बाना की निगाम स उसनी सारी देह बा मजोर की तरह झनझना ॥ रही है— अ गियन देता जावना तिल म लागी जाग

अपने सौन्दर्य-बाध बा इस सीप्रा स अत्पटाकर बरमिया न सचमुच अपना कण्ठ माल दिया और टीन व मधू म ठ ठ उ गलिया व त्वोर मारन लगा— अ गियन देना जावना दिल म लागी आग रे रामा ! अ गियन

मिरटुला बानी स एव सीप्री ऊपर बठ सूरदास व रीत नन साभेदी बाणा की तरह मिरटुला बानी और बरमिया की ओर घूम गए । बरमिया के कण्ठ व भारी स्वर म उस अपन लिए दु सह व्यग बा बाध हुआ और उसे लगा कि बरमिया व गाने की आवाज सचमुच एक जलत बोयल की तरह उसके बानो म प्रविष्ट हो गई है— अ गियन देता

बाध और जानास से सूरदास का कण्ठ जलन को हो गया । एक बार उसने अपन एकदम लम्बे और तीव्र नाचो की अपनी पिडलियो म चार खोर से घुमाया और फिर घाना हाथो की उ गलिया को हवा म नचाते हुए खुद भी गा उठा— बन मे लागी आग रे रामा बन मे लागी आग । बोरी अ गियन क्या करे जावे कूटे भाग । अ ग अ ग सब गल गए, ऐसी लागी आग । ऐसी लागी आग रे रामा ।

सह्य पार बठे बरमिया को ऐसा लगा अस सूरदास न जलती हुई लकड़ी से उसके कलेजे को दाग दिया हो । मगू के नीचे लगाया हुआ पत्थर उठाकर सूरदास बा सिर फोड़ देने का मन हुआ उसका मगर ठू ठ उ गलियो की पकड़ से पत्थर फिसल पड़ा और पांदा के कारण कुछ देर बरमिया अपनी ही जगह घरघराता रह गया । उसे लगा कि उसकी सारी देह भर की नसा के सिरे खन के दबाव स फूटन फूटने को हो आए है । उसके हाथ-पाँवो की ठू ठ उ गलियाँ ऐसे सनसनाने लगी, अस कई बेर से अनुहुही हाल की ब्याई मस के धन पँथुरा गए हो । सूरदास का कठोर व्यग उसकी नस-नस मे समा

गया था। और उस लग रहा था कि असह्य आघात ने दबाव के कारण उसके हाथ पाँवों की उँगलियाँ फूटकर छितरा जाएँगी। घोर वितृष्णा के साथ करमिया ने अपने हाथ-पाँवों की उँगलियों को दखा—धाड़ा-थोड़ा खून पीछे चूने लगा था।

और करमिया की आत्मा में पानी छलछल गया—हरे, रामजी! इन्हीं गलित अंगों को बेर-बेर दत्तकर बल्जा कोचने को दे रखी हैं ये आत्माँ तूने मुझे? न होती समुद्री ये छिनाल आखा जसी चमडलोच की जोड़ी तो अपना ही कोढ़ अपनी ही आखा से देखन का सन्ताप तो न मागना पड़ता?

उधर सहक पार की सीढ़ी पर बठा सूरदास भी मन ही-मन कुड़ रहा था कि अवेपन से तो क्यों भला। औरता के रूप-सरूप की बात सुन-सुनकर मन एक पलक पान को अकुला उठता है। लगडदीन बाबा कहा करता था—सूरदास एक कविता तुझे सुनाता हूँ। तू बेर-बेर पूछता है कि औरत का रूप-सरूप और तन-बदन क्या होता है? तो बेटे, कविता है कि इन्द्रधनुसतरंगिया इक रंग तिरिया मात। चन्द्रवदनि, मृगलोचनी अहा, चंदौली रात! अहा चंदौली रात प्रिया सया सग सोवे

गाने की तनी बिसनी भी सूख मिठाम उमम बनी रहनी है। लगडदीन बाबा के वित्त का रस सिंगार भी मरते मरते तक बदस्नूर कायम था। सूरदास को जब-जब राह चलती औरता का स्पर्श मिलता है, तब-तब उस ऐसा लगता है कि लगडदीन बाबा के कविता का एक एक अक्षर उसके कले पर खुद रहा है—अहा चंदौली रात प्रिया

मुना है, चंदौली रात में सार समार में उजियाली छा जाती है—सरमो की पिपराई पृष्ठ जमी सुनहरी उजियाली। मगर मरसा की पीली मूठ भी तो सिफ कानों से ही सुती है। यह भी मुना है कि रूप सिंगार वाली तिरिया का अंग-अंग सोनवरन होता है। नाव से हाठा की वृत्ताकार घेर लेने वाली सोन नथुली-जसा। नकपुआ के बीच बीच डाली में भूलत पीतवरन मुग्गे जसी लटकी सोनबुलाकी-जसा। उँगलियों की गाठों को पिपरा देने वाली मोन की अँगूठिया जमा। मगर सोन के आभूषणा का बगन भी सूरदास ने काना से ही मुना है। न तान सोनवरन तिरिया का रूप-सरूप क्या होता होगा! यह जिनासा खाखरी कोटरा में प्रान बिहू जमी खड़ी कर गया था लगडदीन बाबा—आज तक सूरदास की रीते ननो में बजर खण्डहर के द्वारा पर पड़ी साकल-जसी भूल रही है।

इन्द्रधनुष के सात रंगों को मान करन वाला तिरिया का एक रंग—सोनरंग। चंदौली रूप, मोन के आभूषणा का रूप कुछ आभरस दे सकेगा। इसी लटक से सूरदास अचानक पाँव पसारकर राह चलती औरता के पाव छू लेने की चेष्टा करता था, मगर बाद में पता चल गया कि औरतें पाँवों में सोन के जेवर नहीं पहनती हैं। खर सोन के आभूषणा का न सही, सुनहले पाँवों का स्पर्श कभी-कभी मिल जाता है और इस स्पर्श मुख का पान के लिए सूरदास अपने दिव्य को नहीं खनखनाता था। कान साधे, एकाग्र

मिस् होकर सीढ़ियाँ से उतरती गिरती व क्षीयर छमछमान की टाँग लगा रहता था। जग ही पाँवा व जेवर बजने या हाथ की मूँगियाँ लनछाने की ध्वनि मूरंगा के निजट पट्ट पनी थी, 'हरे, राम जी ! एर ठोर पड़ पड़ टाँगें भी टुगिया गई हैं, माई-बाप !' कहते हुए मूरंगा अपनी दाया या बायी टाँग आगे पगार देता था। वभी-वमार कोई औरत लंगटा जाती और उगरी अघी जीगा व बोसती, तो मूरंगास व ऐगा लगता था जस उगा जरते हुए पपाटा पर निमी १ टण्डा बबडा छिन्न दिया हा। औरता के स्पग-गुग और उनकी जाबाज की मिठास स जटपटागर मूरंगास 'हररामजी ! हरे रामजी ! गुनगुनाता रह जाना था। और उगा लम्बे लम्बे नागता वाली उँगलियाँ पाँवा की पिहलिया म घस जाती थी—'गहा चदीली रास प्रिया

कभी-कभी मूरदास का मन होता था कि गग हा सीढ़ी नीचे बठी मिरदुला बानी की आवाज व महार उससे पाग पट्टेच जाए। लगभगीन बाया वभी कभी मिरदुला बानी का रूप-राम्य भी घटान दिया करता था—'गम्भो दीपक बुझे हुए हैं मगर मन्दिर के पलंगा की चमक नहा घटी है।

मिरदुला अब भी मजीरे बजा रही थी—“साधो वरमगती बिन टारी।” कोम अनेक निजट बन फल्पा आ जो

मूरंगास व लिए या ही सारा ससार एक रग था। उस समय तो उस मिरदुला बानी की सीढ़ी और अपनी सीढ़ी व बीच का फासला और भी ज्यादा गग रग और गिफ एक ही आवाज से शूँजता हुआ लगा—साधो वरमगती बिन

वरमिया सडक पार गिद्ध की तरह बठा घूर रहा था। मूरदास को घिसटते घिसटते मिरदुला बानी के पास जात और काँपती हुई उँगलियाँ से उसकी दह को टटो रत हुए देखा ता लछमी पात्र को एक बार पटकते हुए सामन का बोडा। चिपड पट्टियो से बने रहन व घावजूद सडक के तीव नकर पाँवो म भुगत रहे और ठोकर लगन से अगूठा फूट पडा, तो ज डे की जदीं जसा खून मवाद चून लगा। मगर वरमिया तो गुस्से से बेसुध था। तब तक दस बीस तमाशबीन और जुट गए थे। मिरदुला बानी 'हे रामजी यह मूरदास क्या पगला गया ?' चीखती मीठी स उतरकर सडक पर पहुँच गई थी। वरमिया न अपने ठू ठ हाथा से ही मूरदास के मुह पर ठडातड धप्पड घू से जटना शुरू कर दिय और पिच्च पिच्च मुह पर धूकता हुआ, गालियाँ देता चला गया—'क्यों रे रसाले अये ? क्या रे अपनी महतारी के ससम ? क्या रे, तुच्चे लफने ? रसाले तेर लिए सारी दुनिया मे ही अघवार हो रहा है। जाम सडक है। महतारियाँ-बहन आर पार जा रही है। माई-बाद लोग चल फिर रह है। और तू रसाला कातिक के कुत्ते की तरह बेचारी लावारिस बानी पर चढ़ा जा रहा है ? पेशाब कर दूँगा रसाले की आखा के सडके मे। महाराज लोग, भुक्त तो यही लगता है कि यह रसाला बहुत कुछ बना हुआ अघा है। ऊपर वाली सीढ़ी से उतरकर, रसाले ने ठीक बानी की छाती म

हो बस हाथ डाल दिया नहीं तो ! पूरव जनम के पापों से तो स्साला इस जनम में आखों का जवाब दे रहा है । इस जनम में फिर ऐसे ऐसे कुकर्म कर रहा है । सरे बाजार में बानी की आवाज सुट रहा है—अगले जनम में स्साला कोनी हो जाएगा कोडी ।

‘कोनी’ कहते ही करमिया कुछ जचकड़ा गया जोर कुछ नहीं सूझा तो फिर धूकते और धूसे मारन लगा—“सूरदास बनता है स्साला साडो की तरह औरतो के पीछे गत है । जिन महत्कारियों के दाम पुण्य से परवर्ग होनी है उही का टांग गगाता है । इस स्साले के लिए तो सारा जगत अबियारा छहरा । मरी दोपहरी में आम सड़क की सीनिय पर बठा बदरा की तरह गुजाता रहता है । ”

आखें अबी थी, सूरदास करमिया कोनी के बार नहीं बचा पा रहा था । दूसरे आस-पास लोग के छुट जाने के बोध न उसे और भी भयभीत कर दिया था कि कहीं कोई और लोग भी न जुनियाम लें । करमिया की ठूँठ उँगलियों से खून पीन फूटन लगा था मारते मारते, और सूरदास का चेहरा एकदम विकृत हो चुका था । निरपरा सूरदास लट्टू की तरह मिर का चारा ओर घुमाकर करमिया की चोट वचान की चपट कर रहा था और करमिया का अपनी आँखा की जात का भरपूर सुख मिल रहा था । हाथों की उँगलियाँ फूट गई थी, मगर बानी के लिए अदलील गदा के उच्चारण करने और सूरदास का मारने में उस इतना सुख मिल रहा था कि पीडा की अनुभूति ही उसे नहीं हो रही थी ।

तभी मिरदुला बानी आगे बढ़ी । दाईं आँख के सिफ एक कोने से ही उसका ज्योतिर्बिन्दु उभड़ा हुआ था । सूरदास की बुदशा देख देखकर उसका हिया पसीन रह गया । पहले तो बानी डम प्रतीक्षा में रही कि शायद बाहर के कुछ लोग बीच-बचाव करें, मगर लोग तो घिना घिना कर तमांगा देखते जा रहे थे और करमिया कोडी स म ज्योत्न अदलील बात कह रहे थे ।

नहीं रहा गया तो मिरदुला बानी उठी और करमिया को दोनों हाथों से धकेलते हुई बोली ‘अब बस कर र कसाई । ह राम बड़ा निठुर दिया है तेरा नी ।’

भीड में से कोई फुसफुसा उठा ‘काडी बाने की मुहब्बत में यह कोनी बकार है ही अपनी टांग बड़ा रहा है ।’

और करमिया को लगा कि उसकी मारी देह थककर अनाक्त हो चुकी है । सन्क पार लौटत हुए, हाँफना-हाँफना, बीच सड़क में ही बठ गया करमिया । हाथ पाँवों की उँगलियाँ बुरी तरह टुखन लगी थी । करमिया का लग रहा था कि बानी ने विकट बानी का मरम करने वाली जिनगारी, सूरदास के साथ सबदना जताकर उसके कलेजे से घिटव दी है । अमहा पीडा और रूपाँ स मुँह डपिन्धि करमिया रोन लगा—“ह रामजी मु कोडी को ता मोन भी नहा आती ”

गामने से मिरदुला बानी की आवाज आई, "अब धीरे-धीरे मीटर के नीचे घूमने को बंद गया है रे करमिया ! हे राम ! हम निर्मोही को तो न दूसरा भी दिया है, १ अंगूठी पीर ।"

एक बार मिरदुला बानी की ओर घुमा बिजुल्ला के साथ घूमते हुए, करमिया अपनी जगह पर खड़े-खड़े पमा का जिव्वा ममा करने लग गया।

करमिया भूखाने और मिरदुला बानी—तीनों मूनिमिपलिट्टी के दफ्तर के सामने की गड्ढा और गोड़िया पर बैठकर हाथों में हाथ मिलाते थे मगर रहते थे सभी अलग अलग । मिरदुला रानी जगतराम मिहनी की गाँठ में रहती थी । जगतराम मिहनी की घरवाली पुनर पुनी थी । गुन गाँठ के पार पहुँच चुका था । गहरी से तीन घंटे थे । गुन परनीतर की एक दुकान में मजदूरी करना था । बाल बच्चा के ही साथ बानी भी रहती थी । भूखाने पिछले बरस तक लगददीन बाबा के साथ रहता था । लौंडा-लौंडा ही था—बर्तन-तर्तन का । धूप ठण्डा सड़क का अम्पाम हो चुका था, सो सभी कहाँ-कहाँ था—अलग अलग ठीक रात काटता रहता था । करमिया की भील मांगत मांगत ही गीरीत-पच्छीत बरस हो चुक था । बिजुलिया रानी के रुपये पसा का चलन था तब से गांधी महान् महाराज के नये पसा तक के सिक्के उसके पास जमा थे, इमीलिए उस सुरक्षा स्थान की गोज भी रहती थी । पिछले आठ वर्षों से गहर से लगभग डूबे भील दूर बगडानी माहल के पार बने उजाड़ घमगाले की एक कोठरी में करमिया रह रहा था । घमगाला की दो काठरिया के अलावा वहाँ ऊपर घना बिजुल वन था और गहरी घाटियाँ । बीच-बीच में कभी गरीब मुसाफिर या बकरियाँ बचन वाले वहाँ ठहरने को आते थे मगर करमिया अपनी कोठरी में से रात रात भर ऐसी बिजुल बिलकार करता रहता था कि दुबारा वहाँ कोई नहीं आता था । अपनी कोठरी के एक कोने में करमिया ने एक झूटा हुआ कनस्तर गाड़ रखा था, उसी में उसके लछमी पाग के सारे पैसे जमा होते थे । कनस्तर गाड़ने भर को गड्ढा खोदते खोदते करमिया ने कई रातों बिना सोए ही बिता दी थी और कोने से भी ज्यादा उसकी उगलिया उस गड्ढे को खोदने में ही फूटी थी और तब से घाब कभी पुरे ही नहीं ।

भील भाग भागकर जुटाए हुए पसा का सुख ही करमिया के लिए सबसे बड़ा सुख था । कुष्ठ रोग के देह को गलाने वाले दाह सभी से अपने लिए सिर्फ धन—अधिक से-अधिक धन भरी दया—और आत्मीयता भूय जीवन की बिभीपिका के बीच, सिर्फ एक यही सुख छेप था—भील के धन का । और करमिया कभी-कभी सोचता था कि कान ईश्वर ने उसकी छाती ही इननी गहरी दे रखी होती जिसमें पूरा कनस्तर सहेजा जा सकता । करमिया का मन तो करता था कि तब भर ही कनस्तर वाले कोन में साया पड़ा रह मगर भील भागे बिना भी आत्मा रह नहीं सकती थी । कभी कोई आकर उसकी अनुपस्थिति में उसकी कोठरी में न ठहर जाए—यह आशंका उसे घेरे रहती थी ।

इसीलिए अपनी बाठरी में ठीर ठीर टट्टी पशाव करने के अलावा वह गंदे चियड़े और झाड़ पात बिखेर आता था। जब उसे विश्वास हो जाता था कि इतनी गंदगी और बदबू को उसके अलावा और कोई दूसरा सहन नहीं कर सकता तभी वह बाठरी से बाहर निकलता था।

अल्मोड़ा आए करमिया को कुल दस बरस ही हुए थे। इसमें पहले वह बागेश्वर में था। वहाँ एक दनपुरिया बानी से उमन गादी भी कर ली मगर घाड़ ही दिनों बाद वह उसकी जोड़ी जमापूँजी करीब-करीब पूरी हो साथ उठा ले गई। तब स कानियो कोठिनों पर से करमिया का विश्वास उठ गया था क्योंकि अल्मोड़ा के करबले से भाग आई एक कोठिन ने भी उसे या ही छला था। उसका औरत जन्म ही बकार हा नुका है। वह का प्रयेर अ ग गल चुका है, यह पता बहुत दिना बाद चला था करमिया को और तब तब वह कोठिन करमिया की बमाई चौपट करती रही थी। जीम की चटारा थी—हमशा दूध जलबी ही माँगती थी। आविर पाल सुलन को आई ता भाग गई थी। करमिया ने अपना माथा कुटकुटा लिया था—हे राम, तभी तो यह राड पेशाव करते में घोट लाई सुअरी की तरह विलाप करती थी।

अल्मोड़ा आ जाने के बाद स एक अम्मास सध गया था। घरवाली रखने का मोह टूट गया था। मगर पिछले बरस स मिरदुला बानी सामने की सीढ़ी पर बठने लगी है। बेर बेर करमिया का ध्यान उचटता रहा है उसकी सुरीली-सीखी आवाज में—साधो करमगती किन टारी

और जबसे लगडदीन बाबा के उले सूरदास ने मिरदुला बानी के सामने बठना शुरू कर दिया था तब से तो करमिया क लिए एकचित्त होकर भी मागना भीख कठिन हो गया था। भिक्षा में होन वाल घाटे को दखते हुए ता करमिया का मन कहीं दूमरे ठीर जाकर बठने को होता था मगर फिर मिरदुला बानी आला में घूमने लगती थी। करमिया सोचता था कि जब आला का जघा सूरदास ससुरा तक मिरदुला बानी के सामने बठने का माह नही छोड़ पाता है तो ज्योत मरी आला के रहते वह कस मिरदुला बानी का रूप सन्प देखन का सुख छोड़ दे ? अब तो मिरदुला बानी के रूप सन्प स भी उयादा आकषण सूरदास की गतिविवियो पर दीठ रखने का था।

आज घमशाले की तरफ लौटत-लौटत न-आन कितनी गालियाँ सूरदास को दी थी करमिया ने। करमिया को अपना कोढ़ इसी सूरदास के कारण उयादा खलता था। बाजार की सडक और गाडी की सडक पर तियक रखा सी सोढ़िया पर बडी आवत आवत रहती थी। औरता की टोलियाँ उतरती-चढ़ती थी तो सूरदास अपन हाथ-पाँवा से उनकी दह को छूता रहता था। साधने बठा करमिया देख देखकर कुत्ता रहता था। सूरदास की देखा-देखी करमिया न भी सीढ़ियाँ पर बठना गुरू कर दिया था मगर राह चलती औरतें उसक समीप से घिनाती घिनाती एक ओर को कटकर चली जाती

थी। करमिया वर्जित मुरत जसा अपन ठौर पड़ा रह जाता था। सूरदास से कोई नहीं घिनाता था। सूरदास की यही स्थिति करमिया को डाढ़ स थरथरा जाती थी, और वह अपनी ठूँठ उ गलिया को आपस में घिस घिस कर पीर मवाद चुआने लगता था। बाद में दफतर के अफसर ने उसे सीढ़ियाँ पर से हटवा दिया और करवला भेज देने की धमकी दी थी। तब से करमिया सड़क-पार बठा रहता था और सूरदास की हरकतों से कुदता रहता था। कोढ़ से भी ज्यादा यह कुढ़न दुःख दे रही थी, मगर इस दुःख को छोटना भी कठिन था।

आज तो सूरदास की मिरदुला स छेड़खानी और मिरदुला कानी की मूरदास के साथ सहानुभूति ने करमिया के चित्त को एकत्र उद्भ्रात कर लिया था और उसके पाव आगे बढ़ने की जगह पीछे को मुड़ रह थे। सूरदास के पकड़ने के बाद भी मिरदुला कानी उसी का पक्ष ले रही थी, इस तथ्य से करमिया के मन में यह धारणा कील जसी टुक गई थी कि मिरदुला कानी और मूरदास में जास्तीयता का सम्बन्ध ज्यादा आगे तक बढ़ चुका है।

करमिया वापस मुड़ गया। बाजार पहुँचने पर उसे सिर्फ मिरदुला कानी दिखाई दी जो जगत राम मिस्त्री के घर की तरफ जा रही थी। करमिया पीछे पीछे हो लिया। मिरदुला गुनगुनाती जा रही थी और करमिया कुढ़ रहा था कि आखिर काने-कानी की जात एक ठहरी। अपनी अपनी जात का दब हरेक को होता है। करमिया अथा होता तो मिरदुला कानी उसी के साथ रहती—इस कल्पना से करमिया को फिर सूरदास के प्रति इप्या हो आई।

मिरदुला कानी जगत मिस्त्री की गाठ में चली गई, तो सामन की दीवार पर बैठकर करमिया दखता रहा उस। बाहर अधेरा धिरने लगा था मगर बत्ती के उजाले में मिरदुला कानी दिखाई दे रही थी और जगत मिस्त्री के बाल गोपाल भी। बच्चे इजा इजा कहत हुए मिरदुला से लिपट गए तो करमिया की टाँग आश्चर्य के भार से काप गई—अर, यह राँड तो घरवारी बनी हुई है।

इतना तो निश्चित था कि बच्चे मिरदुला कानी के नहीं थे। मिरदुला कानी अभी मुश्किल से बीस इक्कीस माल की थी और बच्चा में सभी सयान सयान ही लग रह थे। इतने में जगत मिस्त्री पहुँच गया, तो उसने पहल मिरदुला की सारी दह को टटोला। पस निकाल लिए। फिर मुह फिरोकर बाला 'तर पीछे-पीछे आज करमिया कोड़ी क्या लगा हुआ था ?

करमिया एकदम दीवार से चिपक गया। मिरदुला कह रहा थी, 'उस निर्मोही कानी का नाम हो जाए। बच्चा सूरदास का बसाद की तरह कूट लिया आज उसने !' आगे करमिया से कुछ सुना नहा गया। बहुत दूर चलने तक तो उम यह मुग्धि भी नहा रही कि आखिर वह कहाँ और किसलिए जा रहा है। एकत्र प्रता मूय-सा चलता

जैसे किसी ने जल भरी रत्ता की गाँठ तोड़ दी हो। रोते रोते ही उसने बताया कि 'नगत' मिस्त्री ने कल रात उसे बुरी तरह जूता और कलछी से पीटा है। कल दिन भर की भिक्षा उसने रामलीला के चने में द दी थी। पूव-जन्म के पापों से ऐसी लाचार योनि मिली थी। इस जन्म में कुछ पुण्य करने से अगला जन्म सुधरने की आशा थी। इससे पहले भी मिरदुला मंदिरों में पसे चढ़ाती रहती थी, मगर कल तो उसने सारे पसे दे डाले थे।

मिरदुला ने बताया कि वह तो जात की ब्राह्मणी है। बुझा हुआ दीपक भी समालंकार रखा जाता है, मगर कानी मिरदुला को न उसके माँ-बाप सम्भाल सके थे, न किसी और ने ही महारा दिया था। फुसला बहलाकर, एक बार मणिहार कलारों का एक झुण्ड मेले में उठा ले गया था और फिर वह अपवित्र बनाकर भले में ही छोड़ गया था। वही स अगत मिस्त्री साथ लगा लाया था। दिन भर भीख मँगवाता था और फिर 'गराब' के नशे में धुत्त होकर पीटता था, सताता था।

मिरदुला रोती चली जा रही थी—'हे राम ! क्या पलीत जन्म दिया मुझ भस्माग्नि का सुमने ? डोमडे के घर पड़ी हुई हूँ। भीख मागती हूँ मगर उस पर भी अपना कोई बन्ध नहीं है।'

करमिया का चित्त भी पसीज उठा। बोला, "अरे मिरदुला अपने झूले कोन्वियों की कोई जात नहीं होती—सब एक जात के भिखारी होते हैं और भिखारी का दुख तो कोई भिखारी समझ सकता है, लली ! तुझ जैसी दुनियाँवासी कानी की ममता इस पापी ससार का सही सलामत लोगों को नहीं हो सकती।

नारी 'हू' के आक्षेप की बरसात बुझी हुई तृष्णा फिर जागती चली गई थी पिछले दिनों मगर मिरदुला कानी की घरवाली के रूप में पा सकने की सम्भावना लगती नहीं थी। आज एक राह सूझ रही थी। मूरदास का सहारा सूझ रहा था। मिरदुला विलाप कर रही थी— आज नहीं आऊँगी रे डोमड तेरे घर की ! इसमें अच्छा तो यही होगा कि 'मगान' घाट का तरफ चली जाऊँगी। वही कहा प्राण त्याग दूँगी। "

करमिया बोला 'प्राण त्यागने से पाप नहीं बटत है लली ! भगले जन्म में फिर और दुःखी भागनी पड़ती है। तू उस बसाई डामड के घर मत जा मगर भरती क्या है मला ? तुझे कौनसी कमी है ऐसी ? तिन-भर में जपन पट भर सज्जया ही क्या तू है ? तुझे तो सिर्फ एक सहारा ऐसा चाहिए जो तुझे दया ममता के साथ अपने साथ रखे। मरा कहना माननी है, तो बेचारे मूरदास का अपने साथ बुला ले। रहने को मर पाम एक बाँठरी अपनी है एक दगल में ग्याली पड़ी है। उसे तुम दोनों का दे दूँगा मैं रहने का। आराम से चिन्तागानी तुजारीगे दोनों। मूरदास भी बेचारा जवान छाकरा है और जान का भी पन्ति हो लगना है। उसने गल में जनेऊ भूलता रहता है। वह बेचारा तर लिए जान दन का भी तयार रहना है।'

मिरदुला थम तो गई थी, मगर करमिया को लगा कि जमी कानी बहुत अस-
मजस में है। बोला, “लली, तू तो मुझे निरमोही समझती है न ? मगर तू क्या जाने
कि तेरी विपदा से मेरा कलेजा कितना फटा है। उस दिन जो मैं सूरदास को पीता
था, वह भी तेरी ही इज्जत के लिए। अब सोचता हूँ कि पचास पचपन की उमर होने
को आ गई। पहली कानी से सत्तान होती, तो आज तब तुम दोनों के बराबर मरे
वाल बच्चे होते। सोचता हूँ, ता तुम दाना पर भगता घनी होती जाती है। न जाने
किस जनम के पापों से यह गत हुई है। उस जनम में एक तुम्हारी जोड़ी का सुख
देने का पुण्य भी मिल जाता तो मुझ अभागे के लिए इतना ही बहुत था।”

और फिर दोनों पौछ मुड़ गए थे।

मिरदुला ने सूरदास की लाठी पकड़ ली थी, “सूरदास रे, हमारे साथ चल।
हम लोग अब एक साथ रहेंगे।

कुछ दिना तक तो करमिया अपनी काठरी में अकेला सोता रहा, मगर फिर
सूरदास और मिरदुला की कोठरी में पहुँच गया, अकेले में तो वह ठण्ड से घर घर
घर घर घोंपने लगती है।”

मिरदुला को अपनी दायाँ आँख के एक कान से थोड़ा सा दिग्याई देता था मगर
साफ-साफ नहीं। करमिया भी उसी के साथ सोण यह उस पसंद नहा था, मगर कोठरी
ही नहा सूरदास की संगति भी करमिया ने ही उस दरखी थी इस अहसान का विरोध
करने की भावना न्य जाती थी। इसने अतिरिक्त मिरदुला अपने कामल स्वभाव के
कारण डरती भी बहुत थी कि करमिया की काठरी छाउबर जान पर न जाने फिर
कही ठौर मिले, न मिले। सूरदास अच्छा ही ठहरा, वह भी लगभग अन्धी ही—फिर
न जान कहाँ-कहाँ भटकना पड़े। सूरदास मिरदुला को बहुत प्यार करता था। एकदम
छीने की तरह छाती से लगाकर सा जाता था और नाखुन से हौले-हौले पिङ्गलियाँ
छुजलाता रहता था। मिरदुला जात्मीयता की, प्यार की दस मिठास से गद्गद हो उठती
थी। सूरदास से विछुड़न की करपना मात्र से उसकी आँखा में आँसू उमड़ने लगत थे।
और सूरदास के साथ-साथ रह सकने के लिए उस करमिया की दी हुई कोठरी से उपादा
सुराति स्थान और कोई सुखता नहा था। दूसरे करमिया की खुली हुई आँखा का भी
सहारा था। इसलिए वितृष्णा और अनिच्छा के बावजूद, करमिया को सहना पड़ता था।

धीरे धीरे करमिया की हरेण इच्छा पूरी हान लगी तो उसका मन यही चाहने
लगा कि अब सूरदास को तो यहाँ से रफा-दफा करवा द और फिर मिरदुला कानी पर
पूरा पूरा अधिचार उसी का रहगा। करमिया अनुभव करता था कि मिरदुला कानी जो उम
महती है, तो सिर्फ विवगता के कारण मगर सूरदास को बहुत चाहती है। और कर
मिया का मन होता था कि कभी सूरदास को जान में मार डाले। मगर यह बोध कि
सूरदास के कारण ही मिरदुला यहाँ टिकी हुई है, उसे दबाता रहता था। परवला वाला

फिर करमिया जरा दब के साथ जोला, "तू तो अभी लौटा ही है, सूरदाम ! यह वाला बच्चा तो मुझसे ही रहा हाया ।"

"मगर पहली घरवाली स तो तुम्हारा काई बच्चा पदा नहीं हुआ था ?" सूरदाम ने सवा की । करमिया तिलमिला उठा—बाने रसाले का दिमाग बड़ा तेज है । बात ऐसी करता है स्साला जसे चिमटे से पकड़कर लोथ खींच रहा हो बात बदलकर बोला, यार सूरदास जाँसा की जोत से बढकर भी दुनिया मे कोइ चीज नहीं है । जब मिरदुला के बालक जनमेगा, ता अहा रे छोटे-छोटे भाऊ के हाथ-पाव भी यार दखने ही लायक होने हैं ! मैं उस गाँव मे बिलाया करूँगा "

'कसे होने हैं भला भाऊ के हाथ-पाव ?'

'फूल—जसे ख्वसूरत । मखन—जसे मुगायम । मगर यार सूरदाम, तूने फूलो की ख्वसूरती भी कहा देवी है ? छोट बच्चा की मुस्कराहट ऐसी होती है जसे गलाई हुई चादी का बटोरा छलछला जाए । मगर तू बच्चे की हँसी भी कहा देभ सकेगा ? हा, बच्चा जब कभी रोएगा तो तू उसका रोना जर सुन सकेगा ।'

'मगर मैं उसे गाँव मे लेकर, हाया से टटाल-टटालकर तो देव सकूँगा ?'

'हट, रसाले । तर नाखून चुर्मेगे तो बच्चे को विप लग जाएगा । और आखें तेरी ठहरी नहीं, कही गिराकर जान से मार रलगा बच्चे को ।'

मैं नाखून बाट दूँगा जीर बटे बठे ही गोद में पकड़ूँगा । फिर तो नहीं गिरेगा बच्चा ? मगर तू उसे अपनी गोद मे लगा, तो क्या तेरा कोट नहीं सरेगा उसे ? अगर बच्चे को काँट हो गया तो फिर उमे करबला वाले उठा ले जाएँगे ।'

करमिया को लगा कि सूरदास न अपने लम्बे नाखूना से उसके काँट स गले अगा की बुरद दिया है । गुस्सा नहीं सहा गया ता करमिया फिर सूरदास को पीटने लगा । इतन मे मिरदुला लौट आइ तो ठहर गया । सूरदास रान लगा । मिरदुला न उमे छापी स लगा लिमा ऐसे ही जो तू निरमाही सूरदास बेचारे को सताएगा, तो हम दोनों तेरी कोठरी छोड़कर चले जाएँगे ।

करमिया बिलिया गया । बोला यह काना मुझसे कहता है कि बच्चे का तेरा बाँट मर जाएगा । करबला मे ना बितन ही कोनिया के बच्चे होत हैं उह क्या नहीं सरला बाँट ? बस काना होन स ता कोनी हाना ही मला ।'

इस बार मिरदुला हँस पड़ी—'अरे, तुम बेगरमा को भी एक बेचनी—जसी हो रही है । अभी ता पाँचवाँ भी नहीं लगा है । अभी मे तुम लोमा को कोँट ग्राज की मूझ रही है । ह रामजी, मेरा बालक तो जाँसा का भी टकटका हाना चाहिए, गाँव का भी साँझ मुपरा ।'

ज्यो-ज्यो मिरदुला के दिन चढ़ते गए उसने गले की मिठास भी बढती गई । सूरदाम भी प्रसन्न था । मिरदुला गाती थी ता सूरदास जस्त की देगची पर ताल दता

रहा था। करमिया भी गाँव की चला जाता था, मगर मिरदुला और गुरदास दोनों उमरी यगुरी भावाय गुप्तर गिलगिला उ। ये तो पुत्र ही जाता था। चाहता था, गुरदास की उमंगिनी परमर में बुटबुटा, मगर मिरदुला के चला जाता था भावता हरेन गुर दरा को दवा ली थी।

गुरदास और मिरदुला भीन माँगते। लोकोये ता करमिया भा मद्रा म उतर आता था। फिर बड़ी रात तक म। वर्षा चला रही थी नि मिरदुला के चला जाता था ता उमरा वाला योगन कम होगा? बच्चा रिग पर उतरगा? कभी कभी करमिया का मत होता था नि अपना कास्तर रिगवर मिरदुला का लपचा ल। मिरदुला चला होता तो पत्न ही साथ साथ चला नि मुझे ता पत्न करमिया से ही रहा है। मगर फिर पत्नी का भी की या आ। भी और करमिया अगन कमस्तर के ऊपर और उमादा कूड का दर लगा आता था। एक दिन करमिया बोला, गुरदास ता आंग में देगता रहा है। बच्चा के नामकरण के मोर पर मैं बटू गा। बाप को ता बच्चा के नाम धरने के नि पोन पर बटोरा ही पड़ता है।

मैं भी ता बट गवता हूँ।' गुरदास बोले उठा था मुझे ता मिरदुला पचटवर बिठा दगा। फिर मैं अपन बटे को गाद म सखर बटा ही रहूँगा।

करमिया फिर लडा को उषनने लगा था नि मिरदुला ने दाना का लठाड लिया तुम बोना की तो वही कहावत है नि दाई का तो पता नहा मिर भिगोकर तयार बठ मुण्डन को।' अर, कमअल बेगरमा! पहल यह ता बसाओ कि बाने-बोदी की भीलाद का नामकरण करा को पण्डित-पुराहित वहाँ से आएगा?'

गुरदास और करमिया कई बार अवल-अवस मिरदुला ता यह भी पूछत रहते थे कि तेरे अदाजे म मिसरा रहा होगा मुताका बच्चा? मिरदुला डाँट देती थी मैं हर बसत कोई चितरगुप्त का राता सोचकर बोड बठी रहती थी?

आगिर एक दिन मिरदुला कानी की दह दुखन लगी तो करमिया गुरदास को अपनी कोठरी में उठा ल गया। बोला अब अपनी मेहतारी को ब्यात हुए देखना चाहता है क्या? आँख फूटी हुई हैं मगर मन की हविष नही फूटी है। तू यहा रह। मैं एक बीमनी दाई को जानता हूँ। उसे बुला लाउगा। मगर पसे तू देगा। देगा कि नही?

तू क्या नही देगा?'

मेरे पास तो फूटी कौड़ी भी नही है। तू तो जानता ही है, मैं बहुत दिना से भीख मागा को बाजार ही नहा जाता हूँ। तरे पास तो जरूर कुछ गाँठा होगा? दाई नहा आएगी तो मिरदुला कानी भी मरगा जोर तेरा बेटा भी मर आएगा।

गुरदास जल्दी जल्दी बोला अच्छा अच्छा। पस मैं दे दू गा। तू बुला ला जा दाई को।'

दाई जाई तो दोनो इसी प्रतीक्षा में चुपचाप बठ रह कि दखें, बच्चा किस पर

उतरता है ? सूरदास से नहीं रहा गया तो बोल उठा, 'आख का काना हुआ, ता मेरा ही बेटा होगा।'

" और हाथ-पाँव मे दाग होये तो मेरा।'

'ऐसा भी ता हो सकता है नि बच्चा आखा का अचा और हाथ पाँवा का कोनी पना हो ?' सूरदास न अपनी कठार धारणा व्यक्त की। इस चार करमिया उससे सहमत हो गया। पास बैठने हुए वाला, 'अगर ऐसा ही बच्चा पदा होगा, तो वह हम दोनो का बेटा होगा। और और फिर चगड की गुजाइश भी नहीं रहेगी।'

इतन में जमुली दाई आई। हँसती हुई बोली, 'लो रे, तुम अपाहिजो की काठरी मे दीपक-जसा जल गया है।'

बच्चे की रोने की आवाज सुनकर सूरदास और करमिया अपनी कोठरी से बाहर निकल ही रहे थे। करमिया न जल्दी से पूछा, क्या जमुली दीदी, बच्चे के हाथ-पाँव कस हैं ?' करमिया सुनना चाहता था कि बच्चे के हाथ-पाँव मे कोड़ के दाग हैं। मगर जमुली न कहा "बच्चा तो हाथ पाँवा का एकदम नीनी जसा चुपडा है।' तो करमिया अपने ही ठौर खड़ा रह गया कि कही सिफ आखा का ही अचा तो पदा नहीं हुआ है ?

सूरदास न पूछा, "बच्चे की आँखें कसी हैं दाई दीदी ?"

दीपक जसी चमचमा रही हैं। बच्चा तो एकदम राजकुमार जसा गोरा-बिड्डा है। जमुली दाई वाली। फिर पसे लेकर चली गई, बडबडानी हुई, पसे की खातिर भी कसे कस पलीत काम करने पन्ते हैं।"

शव यात्रा

केवल एक साट रखन की जगह थी।

कोठरी से बाहर निकलकर सिपाही ने सड़क पर इकट्ठे कुछ लोग से पूछा "इसका कोई बारिस है?" जब उसे कोई जवाब नहीं मिला तो उसने अपन-आपस कहा, 'आखिर इतजाम तो करना ही पड़ेगा।

"हिंदू थी या मुसलमान?"

अपनी साइकिल की सीट पर पीठ टिकाये हुए एक कम उम्र लड़के ने कहा, "रंडी थी।"

'मादूम है।' कास्टबल न डपटते हुए कहा।

"सिपाहीजी सेवा वाला को बंदा। कास्टबल की तरफ बीड़ी का बण्डल बढ़ाते हुए एक और आदमी ने कहा।

'लाश कल से रखी हुई है। कुछ मादूम है। ज्यादा बकत करागे तो पसीज जाएगी। कास्टबल साहब इतजाम जल्दी करो।

बीड़ी का धुआ अपनी नाक से निकालते हुए कास्टबल ने कहा 'आखिर मादूम तो हो इसका बारिस रिस्तेदार भाई भतीजा कोई है? पहले ता रपट लिखानी होगी नहीं सारी कोतवाली में बोम पड़ जाएगा। हरामजादे मुझी को कहेंगे। कुछ मादूम तो हो।' और बीड़ी के कदम सेटा हुआ वह गहरी चिंता में पड़ गया। कुछ लोग सिपाही के पास चुपचाप खड़े थे और कुछ दूर हटकर बातचीत कर रहे थे।

भासपास कुछ छोटा छोटा मकान, कोठरिया और शायडिया थी। सड़क पक्की नहीं थी मगर मुरूम पड़न के कारण रंगीन लगती थी। सारा दिन हवा में इस मुरूम की धूल उड़ती थी और बस्ती कुछ और निजन हो जाती थी।

दो तीन साल से, इमरती ही आखिरी स्त्री थी—जो वहाँ रह रही थी। कई बार रोक टोक कगह के बाद भी गई नहीं। बस्ती के लागा न भी अब उसे स्वीकार कर लिया था। जानते थे, वे उससे लड़ नहीं सकते थे। अधिक स-अधिक वे उससे बात नहीं कर सकते थे और बात करने का कोई प्रसंग भी नहीं था सिवा उन घड़िया के जब वह सँवरकर पान की दुकान पर जा खड़ी होती थी।

मुबह स लकर आधी रात तक फिरमी गान बजाने वाले सिन्धी हिंदू होटल में

भी शाम के समय जब वह अपने लिए गोश्त का खोरवा लेन आती, तब भी अपना वस्त्र जाया नही करती थी। शायद अपन अनुभव स उसने पहचान लिया था यहाँ बठन वाले मु पतखार होत हैं। और मु पतखोरो से उसे जमजात चिढ़ थी। उसने एक छोकर को पसा द रगीन चाक से सुडौल अक्षरा मे अपनी दीवार पर लिखवा रखा था—उधार मुहब्बत की कची है।

“इमरती बाई दुनिया से अलग रही है।” उसके चले जान के बाद पान वाला कहा करता था ‘वह ज्यादा बात नही करती है।’

उसके पास ग्राहक भी थोड़े आते थे। और आखिर के दिना म तो इक्का दुक्का ही कोई आता था। उसके पास आएगा भी कौन !” वह कहता था। ‘न वह गाती है न कूल्हे मटकाती है। आदमी खाली टांगे ही थोड़े चाहता है। बखत बखत की बात है।”

यह कहकर टोके जाने पर कि लोग उसके पास नाच गाना सुनने के लिए नही शरीर के लिए आते हैं वह जवाब देता था, अगर शरीर मे भी ता लोच चाहिए। उसके पास वह अदा नही। इमरती बाई साफ साफ रडी है।”

इस समय भी वह दूकान पर पान लगाता हुआ अपनी बात दुहरा रहा था और कह रहा था, मैं जानता था, यही हाल होगा। मैंन कहा भी था, इमरती बाई, इलाज करा लो। अब भी बच जाओगी। अगर कम्बल त्रिदगी भर सारी दुनिया को बीमारी बाँटती फिरी। अब मरी तो कोई उठाने वाला भी नही। अगर कुछ भी कहो, इमरती बाई साफ-साफ रडी थी। मुझे उसकी बातें मालूम है।

फिर उसन वही बठे बठे पान पर कत्था लगात हुए आवाज दी, “हवलदारजी, मुदा जल्दी उठवा लो। बीमारी से मरा है।’

हवलदार उस समय काँच के गिलास मे मरी गरमागरम चाय फूँक फूँककर पी रहा था। उसकी बात सुनकर वह उसकी जोर मुडा और कुछ कहना चाहा। अगर तमी सामने स म्पुनिसपल्टी की मला ढान वाली मसा गाड़ी गली म घुसती नजर आई।

चाय का एक घूँट लेकर गिलास होटल वाले लडके को थमा गाड़ी की तरफ सपटता हुआ वह बोला ‘क्या नाम है बे तेरा ?’

गाड़ी से उतरते हुए गाड़ीवान न जवाब लिया, ‘बन्सीलाल।’

“कहाँ जा रहा है ?’

‘ड्यूटी पर जा रहा हूँ।’ उसन बेरुखा से जवाब दिया। उसे सिपाहिया स खोप नही था। अगर भीड़ वहाँ उस दिखाई न देती तो वह रक्ता भी नही, गाना गाते हुआ गुजर जाता। इमरती बाई बाहर आये या न आय, र्धर जब भी उसकी ड्यूटी पडती, गुजरता हुआ वह एक बार गीत जरूर छेड़ देता।

“मुन बे बसीलाल,” सिपाही न उस तरेखे हुए कहा, “ड्यूटी बसिल करो। मरघटी जाना होगा।”

“कौन मरा है ?” बसीलाल ने अपना चाबुकनुमा डण्डा गाड़ी में रखते हुए कहा।

‘इमरती बाई।’ मोड़ में से एक ने कहा।

क्या कहा ?” और उसने फिर पूछा, “क्या कहा ?”

“मुद्दा यहाँ से जल्दी उठाओ और ठिकान लगाओ। समझे। मैं चलता हूँ कोतवाली। रफ्त देनी होगी।” सिपाही ने उसका कंधा थपथपाया। फिर जब से एक मछी-बुचली मोटबुक निकाल पसिल से कुछ लिखता हुआ आगे बढ़ गया।

उसने गाड़ी सड़क के किनारे रोक दी थी। जरा दम् ‘कहता हुआ वह अंदर की ओर बढ़ गया। अभी तक वहाँ इफ्टे लोगो में से कोई अंदर नहीं गया था। वह चला, तो उनमें से कुछ उसने साथ हो लिये।

शव चारपाई पर रखा हुआ था। किसी ने उस पर चादर भी नहीं उड़ाई थी।

बसो इस कोठरी में पहली बार आया था और अंदर घुसते हुए उसे हल्की सी कचोट भी हुई।

इमरती को उसने बहुत बार देखा था और उसने मसूना बना रखा था एक न एक दिन कहा जायेगा। गारी गुलाबी देह और बदन, जो इतना चमक चुकने के बाद भी कसा हुआ लगता था।

मगर वह जा कभी नहीं सका। इतने पैसे ही नहीं आए। वह जानता था, इमरती के गाहक भले ही कम आएँ। रफ्त उसका ऊँचा है और वह उससे नीचे नहीं उतरेगी और अगर उतरेगी भी तो उसे क्या पसंद करेगी ? वह अपनी रंग रंग से वाकिफ था। उसे पता था कि वह बदसूरत है और बंद छोटा होने के कारण वह दूसरों की दया और हँसी का पात्र है। इस दया और हँसा से सामना पड़ने पर वह अपना गुस्सा पीकर आगे बढ़ जाता।

ड्यूटी बजाने के बाद गाम को वह सफेद कुरता और महीन धोती पहन मिनेमा घर तक टहलन निकलता और बासुरी पर फिरमी गान बजाकर छोड़ने को जमा कर लेता। बासुरी के कारण उसकी अपनी महफिल है। गई थी।

इमरती का मुँह विलकुल विवृत हो गया था और आँठ कुछ खुले हुए थे। छाती से घोंती उधड़ी हुई थी और जाँघ भी काफी खुली हुई थी। उसका यह रूप देखकर उसे कुछ दुःख हुआ। दर नहा की जा सकती। यह सोचता हुआ वह बढ़ा और घोंती शरीर पर ढक दी।

चारपाई बाहर निकालने की जल्दतर नहीं। उसने अपने-आप कहा। फिर लाग की पायतान में पकड़ उसने कहा जरा मन्त्र कीजिए। एक आदमी ने गरदन और

दूसरे ने पीठ पर सहारा लिया और लाश बाहर निकाल ली गई।

‘जरा रुक!’ उसने फुरती से कहा। ‘यात्रा गाड़ी धीरे-धीरे मुझे ढाने का उसे अभ्यास था, मगर वह पहला मौका था जब उसे अहसास हुआ कि शव को इस तरह गाड़ी गाड़ी में नहीं ले जाया जा सकता।

मस की पीठ पर झण्डे टिकाना हुआ वह गाड़ी पास के बम्बे तक ले गया, नल चालू किया और मज्जा ले लेकर गाड़ी घूम लगा। हथेली से वह पानी गाड़ी के बाहर और भीतर उलीचता, फिर एक भले कपड़े से रगड़ रगड़कर साफ करता। एक बार उच्चकर वह मसे की पीठ पर बैठ गया और अपनी साफ सुधरी गाड़ी को कुछ प्रसन हाकर निहारा। फिर अपने-आप ही ‘जरा और धीरे-धीरे बढ़ता हुआ उत्तरा और छुट गया।

लाश के आसपास दस-बीस लोग खटखटे हो गए थे। गाड़ी बड़ी तेजी से हाकता वह उनकी ओर लाया। ‘जरा हटिए। जरा जमह दीजिए। फिर कुछ हाफता हुआ सा उत्तरा और अपने को जैसे एक बार इकट्ठा कर आवाज लगाई, ‘जरा मदद कीजिए। लाश को सहारा दीजिए।

कुछ लोग आगे बढ़े और लाश फिर पहले की तरह उठाई गई। ‘जरा संभाल के।’

वह गाड़ी पर गया था और लाश रखने की जगह बना रहा था। मगर जगह इतनी नहीं थी कि शव का लिटाया जा सके। उस कुछ परेशानी हुई और कुछ म्युनिसिपल्टी पर गुस्सा आया। इतनी छोटी गाड़ी में ता बच्चे की लाश भी नहीं जा सकती।

‘इस तरह नहीं, इस तरह।’ उसने और दो लाशा की सहायता से शव को गाड़ी में आधा लिटा दिया। कंधे पर की गमछी उतारी और शव के सिरहाने तकिया-सा बनाकर रख दिया। इतना सब कर चुकने के बाद उसे कुछ सतोष-सा हुआ।

गाड़ी पर सबे-ही खड़े एक बार उसने उन सब पर उछलती हुई नजर डाली और अपने का उनसे कुछ ऊँचा अनुभव किया। इसके पहले कि उनमें से कोई उससे कुछ बहे, उसने गाड़ी हॉक दी और खुद कुछ इतमीनन के साथ बैठ गया।

कुछ दूर जाकर मुड़कर उसने पीछे देखा तो मोड़ तितर बितर हो रही थी। एक आदमी बढ़कर इमरती बाइ के घर की साकल लगा रहा था।

उसने गाड़ी और तेज कर दी और ठीक मोड़ पर आकर रुका। उत्तरा और उतरकर देखा वह ठीक तो है। लाश बसी ही आधी लेटी हुई थी। बवल इस आपा धापी में वस्त्र खिसक गया था और सारा शरीर लगभग नंगा हो गया था। एक बार उसकी निगाह उस पर गड़ी। फिर उसे शम-भी आई और उसने फुरती के साथ शरीर को वस्त्र से ढक दिया। फिर पान की दूकान की ओर बढ़ा।

उसकी जेब में सात रुपये थे। तनख्वाह से बचाकर रखे थे। उनसे जो-आ चीजें

उसे लेनी थी, पहिरिस्त उसके दिमाग में कई दिना से थी। रुपये उसने जेब से निकाल कर हाथ में ले लिये, फिर दूकान की ओर बढ़ता हुआ बोला “इनकी रेजगारी दे दो।”

पानवाला उसकी ओर देखकर मुस्कराया। ‘इतनी रेजगारी नहा है।’

मगर उसने अनसुनी करते हुए कहा, “जरा जल्दी करें। वक्त हो रहा है।’

उसने देखा पानवाला ने एक कपड़े के थले से ढेर सारी रेजगारी निकाली और गिनने लगा।

थली हाथ में आत ही उसका हौसला ऊँचा हुआ और वह लपककर बैठ गया।

हाँकते हुए उसने देखा, पानवाला और दो तीन लोग उसे देखकर मुस्करा रहे थे और पानवाला कट्टे की डण्डी हिला हिलाकर उसे मददे इशारे कर रहा था।

उसने मन ही मन में उन्हें गाली दी और कमकर एक डण्डी भस्मे की पीठ पर रसीद किया।

मुहल्ले से बाहर निकलकर उसने फारिंग अनुभव किया। धूप तेज थी और इतने परिश्रम के बाद उसे पसीना आ रहा था। पटरियों पर लोग आ-आ रहे थे और दूकानें लगभग खुल चुकी थी।

वह एक कार पीछे मुड़ा और देखा, लाश किस हालत में है। सब ठीक था। केवल सिरहाना कुछ नीचे खिसक गया था। गाड़ी रोक्कर वह उतरा और सिरहाना उसने फिर ठीक कर दिया।

इधर उधर करने से शायद जब जरा सा हिला तो अचानक वह धरघरा गया। उसके जीवित शरीर को छूने के विचार से उसे कंपकपी-सी हुई और माडियाँ जरा जोर से घटक उठी। वह फिर अपनी जगह पर बैठ गया था और सोच रहा था अगर शरीर पर बन्धिया साड़ी होनी तो कितनी बड़िया होनी! उसने उस कई बार रंग बिरंगी साडियाँ पहन दरवाजे पर खड़े देखा था। रानी रूपमती! हर बार उसे लगता था वह किसी की प्रतीका में खड़ी है गली में पदल घुसते ही उसका दिग घटकता और दरवाजे के सामने से गुजरते हुए तो और भी जोरो से घटकने लगता था। वह बहुत चाहकर भी उसमें नज़रें भी नहीं मिला पाता। नाम से गरदन नीची किये हुए आगे निकल जाता। जब काफी दूर आ जाता तो मुड़कर जरूर उसे देखता और पाना कि वह अब भी वहीं खड़ी है—रानी रूपमती! उसके वहाँ खड़े हान और अपन उधर से गुजरने में एक नाता समझ जोड़ लिया था। एक-एक दिन में उसके पास जरूर जाऊँगा।

उसने गाँव में रमी हुई बली टटाली उस पर प्यार से हाथ फेरा। फिर मुट्ठी भर सिक्के निकाल धर उधर दया और उपर की ओर फेंके। दण-भर दान सड़क पर बरगने हुये पमा की चपपनाहट में दूकाना पर बैठे और पटरिया पर चलते हुए लोग चौंक गए। कुछ छात्र-छोट लड़का और मित्रारिया का दृजूम उस ओर लपका। उसने गाड़ी रोक दी और उन सबको मित्रा पर टूटने और झपटते हुए दमता रहा। जय मारी

सड़क सिक्को से बूढ़र गई, तब उसने थली में हाथ डाल मुट्ठी भर मिक्के और निकाल और फिर ऊपर की ओर फेंके और भरिये हुए कण्ठ से उसने नारा लगाया, "राम-नाम सत्त है।"

'सबकी यही गत्त है।' पमा पर झपटते हुए उन सबने मंगीनी ढग स दुहराया।

उसने मौज में गाड़ी हाक दी। जानवर की पीठ पर दनादन दम-त्रीम ढण्डे लगाये और भागने लगी गाड़ी। और गाड़ी के पीछ पसे बूटने वाला की मीढ।

अगले मोड़ पर उसने भागती हुई गाड़ी एवाणक राकी और चिल्लाया, "राम-नाम सत्त है।"

सबकी यही गत्त है।"

अब तब गाड़ी के आगे और पीछ अचड़ी-न्वासी भीढ हा गई थी, जिसे वह हाक रहा था। कुछ लोगो न गाड़ी पकड ली थी और गाड़ी अचानक ही मानो अरपी म परिणत हो गई थी।

उसके पास-पास चलता हुआ एक मिलारी राम-नाम क गोर म फुसफुमाता हुआ वाला "सेठजी, बाजा कर लो।"

मीतरी बिल्लुलता म उसकी आँखें प्राय बंद थी। अपना सुसाव दुदरात हुए मिल मगे ने कहा 'ले आऊँ सेठजी?'

'ल आओ। मुट्ठी-भर पसे उमन इस बार सड़क के बाई ओर फेंके और पानी के कटाव की तरह भीढ उस आर मुड़कर झपट पड़ी।

एक दूसरा मिलारी इस बीच ढर सारे फूल और कुछ मालाएँ ले आया था। गाड़ी रुकी। वह उतरा और सारे फूल और मालाएँ उमने गव पर बिखरा दी।

"कौन था? उमने सुना। पटरी पर खडे कुछ लोग बात कर रहे थे।

"इमरती बाई।' माला फेंकत हुए खुशी म उमका हाथ कापा।

"इमरती बाई कौन?"

रडी थी।' गुस्से में उसकी नजर उठी।

मगदूर रडी।' उसने गव के साथ उन्हें देखा।

बाजा अब तब आ गया था।

'बजवाऊँ सेठजी?'

बजवाओ।"

वह उचककर फिर अपनी गाड़ी पर बठ गया और बाजा बजने लगा। बाजा के कारण मीढ और जुट गई थी। उमने थली म से पसे निकाल लिये और सड़क पर छोटने और छितरान लगा।

'राम-नाम सत्त है।'

'सबकी यही गत्त है।"

तनी बड़ी मांड दसवर वट समान नहीं पा रहा था वह इसे बस सँभाल ? मगर उसे विश्वास था कि वह समाल सगा । एक बार उसकी दृष्टि हुई, वह इस अरथी की लिंगा मोड़ द और हँसता हुआ ले जाकर टीन मरती के दरवाजे पर राख दे । उसने मन में गुप्तगुप्तो हुई । मगर अपनी गुप्तगुप्ती को छिपाते हुए उमन र पतार सज कर दो । धूप तेज हो गई थी । सारा जिया नम जल्द ही निपटाना होगा । सब कुछ जल निपट जाने और सत्तम हो जान ब न्याय स उस बसक भी हुई इसी तरह चलता रहे । उसन सिर ऊपर उठाया और देता नीजवान और बूढ़ी स्त्रियाँ छता पर निबल आई थी । भीड़ और बाजे स अधिक उस दस रही था । उसन निढर और साफ उह देखा और सुनना चाहा वे क्या कह रही हैं ।

उसन बाजे ब गोर म दो एक गान पकड़े अर कुछ नहीं, बसी महतर है ।" मेहतर गान सुनते ही सब कुछ बिरबिरा हो गया और उसन ऊपर और परो के दरवाजो पर सड़ी स्त्रिया और बच्चा को गुस्से से देता । वह अपना महतर कहा जाना बभी बरदास्त नहा कर पाता था । वह भीरा से साफ रहता था और उसने अपनी जाति के तमाम नययुवको स कह रखा था 'मगर कोई तुम्ह मेहतर कहे तो मला न साफ करो ।' अपने लिए महतर सुनकर उसे कुछ सलाहट हुई । उसन अपने आस पास चलत मित्रारियो स झल्लाकर कहा बाजा जोर से बजवाओ ।

पली टटोलते हुए उसने पाया कि बहुत थोड़े से सिक्के रह गए हैं और उसे समालकर सरचना चाहिए । पसे पकन के बजाय वह अपनी गाढी की टीन की पटरी पर सड़ा हो गया राम नाम सत्त है । राम-नाम सत्त है । शहर के बाहर नदी थी और नदी के दूसरी ओर मरघट । दूर से पुल नजर आता था ।

उसन थोड़े-स पस हाथ में लिये और पूरी ताकत के साथ फेंके ताकि वे दूर-दूर तक बिखर जाएँ । चौधियाकर तितर बितर होती भीड़ को उसन बुग होकर देखा । जब गाढी पुल तक पहुँच गई ता उसन राख दी । मिछारी को बली-सहित पस सीपते हुए उसने कहा वापस ले जाओ । बाजा बंद हो गया और छोकरा और मिछमगो की भीड़ लौटने लगी । केवल तीन-चार राहगीर अब वहाँ सडे थे ।

उसन मुना उनम से एक कह रहा था, मैं कहता हूँ हिली है ।" क्या हिला है ? उनकी आर लपकत हुए उसन कहा । तुम्हारा मुदा । क्या सचमुच हिला है ?" मुदों के ज़िंदा हो जाने की कहानियाँ उसने सुनी थी । उसन सुन रखा था कि कई बार चिता पर से भी मुदें उठ बटते हैं । मरे हुए मादमी

के प्राण वापस आ जाते हैं। यह कैसे होता है, पता नहीं। मगर डॉक्टर तब मानते हैं कि दफनाने के पहले एक बार पूरी देखभाल कर लेनी चाहिए।

वह भागकर उस पर मुका। उसने देखा कि शव कुछ खिसक जरूर गया था। उसका हाथ खुशी और अविश्वास से काप रहा था। उमन चादर के अंदर से शव का हाथ खींचकर बाहर निवाला और गाड़ी पर उंगलिया रख दी। कुछ घटक तो रहा था, बड़ी जोर जोर से। मगर बदन ठण्डा है और नाक के पास हाथ ले जाने में सास नहीं। फिर घडक पया रहा है ?

अपने सीने पर उसने हाथ रखा और पाया कि दिल के दोरे के मरीज की तरह उसका दिल जोर जोर से घडक रहा है, बड़ी जोर जोर से। गाड़ी उमन फिर हाक दी थी और पुल पर से चला जा रहा था। दोना और पानी का बिस्तार था और बिनारो पर रेल के टीले, जिन पर धूप घमघमा रही थी।

मीड में सड़सत पावर वह बिल्कुल अकेला हो गया था और कहीं कोई न था। केवल उसकी गाड़ी का पहिया बोल रहा था।

पुल पार कर उसने गाड़ी ढाल पर उतार दी। मरघट में घुसते हुए माय माय सा लगा।

बिनारे पर एक मुर्दा जल रहा था, जिसकी दुगंध उसकी नाक में घुस गई। गाड़ी उमने ठीक मरघट के चौकीदार के घर के सामने रोकी—बिल्कुल धीरे और सँभालकर।

“कौन माया है ?” चौकीदार ने अपना रजिस्टर खोलने हुए कहा। ‘जलाना है ?’

‘दफनाना है।’

नाम ?’

‘इमरती माई।’

उम्र ?’

बत्तीस साल।’ उसने बेखटके स कहा।

‘पति का नाम ?’ चौकीदार ने अपनी निगाह उठाते हुए सवाल किया।

बसोलाल वाल्मीकि।’ उसने हाथ बटाकर दस्तसत कर दिए।

बाहर आकर, सँभालकर उनमें शव उतारा। घांती उस पर पूरी तरह ढक दी। पावड़ा उठाया और गड्ढा मारन लगा।

समय

क्या समय हुआ है ?" एक मारवाड़ी पगड़ी पूछती है ।

'समय तो सराप ही है' वह कहता है ।

'नहीं घड़ी म ?'

'हाँ जी, घड़ी म कुछ घड़ी में कुछ ।'

मारवाड़ी पगड़ी का चेहरा अपने को अभिव्यक्त न कर पाने की विवशता में एक क्षण के लिए छाटा हुआ जाता है—

"तो हमारा मतलब है, बजा क्या है ?" पगड़ी समझाने की कोशिश करती है ।

बाबा, आप जो कह रहे हैं, वह बजा ही है बरना आपकी क्या ग्लिचमपी कि आप गलत कह ।

पगड़ी उसे धुरती हुई खली जाती है ।

दरअसल जब तुम किसी लड़की के पास खड़े हो या कोई लड़की तुम्हारे पास खड़ी हो तो तुम या तो अतिरिक्त गम्भीर हो जाते हो या फिर अनावश्यक तरह से चुहल पसंद ।

अभी-अभी जवादा प्रसाधन कि एक सम्मानित महिला उसकी ओर दलती हुई सामने से गुजर गई है वह जरा-सा कोण बदलकर पास खड़ी लड़की का दायर होता है, लेकिन वह निश्चिन्ता ऐसा है कि उसमें लड़की को नहीं देखा है अपना कोण भर बैठा है —

मीसम हवा में फनफन भर गया है । पक्ष दूदी चिड़िया की तरह सड़क पर दौड़ते हुए पक्षी, कच्चे फुट पथ पर उतर जाते हैं और वहाँ धीमी जाल में लुढ़कने लगते हैं ।

'पक्षी के टूटने में एक खास गंध होती है ।' वह खुद भी कहता है । और एक खास मंगीत तुम उस खास मंगीत और खास गंध को बखूबी पकड़ सकते हो । वह दर तक उड़ यात्र की सूची हुई लकीरी और चित्रा में एकदम की कोशिश करता रहता है ।

"अच्छा, मान लो, साल के पूरे बारह महीने की हवा गड़गड़ मड़मड़ करके तुम्हारे सामने रख दी जाए और तुमसे कहा जाए कि उसमें से पुरुष पायुन की हवा पहचानो

तो तुम पहचान सकोगे ? गायद तुम न पहचान सको, लेकिन नहीं, तुम उस आसानी से पहचान लो क्योंकि गुरू फागुन की हवा, उन हवाआ में वसी ही होती है जसी लड़कियों के झुण्ड में तुम्हारी अपनी प्रेमिका जो किसी भी कोण से तुम्हारी नज़र छुए तुम उसे पहचान लेते हो। 'वह पास खड़ी लड़की को बनसिया लेना है, उसे बड़ी निराशा होती है फागुन की हवा के बारे में इस तरह सोचना उसे अच्छा नहीं लगता। वह अपने खयाल को तब्दीली देना चाहता है' बिजली के तार सीटिया बजाकर आपस में बात गुरू करते हैं और बीच बीच में हवा-धुप हो जाते हैं। सामन स्कूल बच्चा का एक झुण्ड है वे बच्चे बिल्ला बिल्लाकर आपस में बातें कर रहे हैं, जिन्हें वह समझ नहीं पा रहा है और यह भी तय नहीं कर पा रहा है कि वे आपस में पगड रह हैं या महज बातें कर रहे हैं।

'जी समय आपकी घड़ी में ?'

जमी पगड़ी समय पूछकर चुकी है और अब यह लड़की समय पूछ रही है। समय ही तो पूछ रहा है यह लड़की यही क्या, हर काई समय पूछता है और समय है कि किसा को नहीं पूछता। तुम राज उसके लिए अबबार लेते हो उसके लिए सोच के गिराफ बल्लत हो उसकी मन-मसद तारीख बलेडर में दते हो उसके स्वागत के लिए गिड़किया और दरवाजे खुले छोड़ दते हो औरतें उसके लिए दूध लेती हैं और सिर से नहाती हैं और बच्चे वे धुले कपड़े पहनते हैं। दफतर जाने वाले बाबू उसे धूप और छाया से नापते हैं अस्पताल में मरीज पट्टियाँ बदलवाते हैं लेकिन कोई एक भी उसकी तटस्थता नहीं साँझ पाना। वह है कि सबसे बेखबर चला जाता है और पीछे मुड़कर भी नहीं देखता जबकि लोग कितना प्रयत्न करते हैं

उसने समय के स्वागत में शोक नहीं बनाई है और खुशे में समय पसल कपड़े भी नहीं पहन हैं। वह समय की उपश्रा कर रहा है इस विचार से उसे खुशी महसूस होती है कि वह उन बहुतों से अलग है जो समय के गुलाम हैं उठने-बठने उसकी खुदा में करते हैं और आखिर में धक्कर बीमार पड़ जाते हैं। वह अपनी खुशी बच्चा की तरह ताली बजाकर जाहिर करना चाहता है, इससे पहले दम लेना चाहता है कि पाम खड़ी लड़की भी उसी की तरह खुश हो या नहीं। सोन से किताब मटाल लड़की की नज़रें वह बम आन वागी सड़क पर—जहाँ तक सड़क दिखाई देता है—दौड़ती देखता है। लड़की के चेहरे पर समय को पकड़ पान की व्यग्रता देखकर उस का मन होती है और उसके चेहरे के झुंझा में उस ज़्यादा कुरूप लगने लगते हैं।

तो यह लड़की भी समय के लिये परेशान है ? वह इस वाक्य का मन में छोटे बाल पीत की तरह फलाता है और फिर हथेलियों में उस गूँथ की तरह मोल करके सिपूर कर देता है। वह अनमना हो जाता है और सामन पेडा की टहनिया में अटकी पट्टी पतंगों का देखन लगता है, विध्वता को पाछ फेंकन के लिए वह अपने चेहरे पर

हाथ करने लगता है। बाला की नोकें हथेलियां में चुभनी हुई महसूस करने उसे हल्की राहत मिलती है, उसने निमाग में चला मन पसल बातें आती हैं, वह उन्हे देर तक मोचता रहता है।

वह तय करता है कि उसे अब लडकी की तरफ नहीं देखना है।

बस आने पर वह लडकी से पहल बस में चढ़ जाता है—

खाली जगह पर बैठत हुए, साथ बैठे ऊँघते सज्जन को वह प्रशमा की दृष्टि से देखता है, बचपन में सुनी किसी अफीमखी की कहानी उसे याद आ जाती है। उसे अच्छा लगता है, वह देर तक तरह-तरह के नंगा के बारे में प्रशंसात्मक नज़रिए से सोचता है। उसे याद आता है कि एक बार वह नंगा करके पूरे चौबीस घंटे पड़ा रहा था, आगने पर उसे किसी ने बताया था—जिसने बताया था वह उसे याद नहीं आता—कि एक दिन और एक रात वह बेहोश पड़ा रहा था। तब वह अच्छी तरह हँसा था उसकी आँखों में चमक पड़ा हुई थी, कि उसने सिरहाने एक पूरे दिन और एक पूरी रात बठ कर समय उसकी तीमारदारी करता रहा था और उसने उसकी बिल्कुल परवाह नहीं की थी।

लडकी चमड़े के पीते पकड़े उसके पास खड़ी है। इस बीच वह लगातार दूसरी सीट पर बैठे अघेड़ खल्वाट सिर का देखता रहा है जो हर 'स्टाप' पर बस के रफते ही बड़ी आज़िशी से घड़ी देखता है उसका मन होता है कि तरबूज जैसे चिकने सिर को सस्ती से चपतिया दे और बहे कि वह अपनी बदतमीज हरकत से बाज़ आए। दो तीन 'स्टाप' के बाद उसमें खल्वाट सिर बदलित नहा होता, वह हीठो में बुदबुदाता है 'बेहूदा'। लडकी की तरफ देखकर वह अपना कोण बदलने की गरज से उठ खड़ा होता है। माचिस से रगड़ खाते समय तीली से छिटकते उजाने के कतरे-सी मुस्कराहट बिखेरती हुई लडकी उसकी सीट पर बठ जाती है। उसे भुँसलाहट हाती है, क्योंकि बदले हुए कोण से अब लडकी उसकी नज़र के रास्ते में बराबर आ रही है और छूटते हुए बाज़ारों के नाम पन्ती हुई बेचन हो रही है। सेडीज फस्ट वाला वाक्य और उसका अर्थ उसे कभी अच्छा और सही नहीं लगा लेकिन उसने दूसरे दकियानुस लोगों की तरह ही लडकी का जगह देदी है, उस खुद पर चिढ़ हा आती है, उसने लडकी को जगह क्या दी—आशिर किस रिस्त से ? हो सकता है कि लडकी अगल 'स्टाप' पर उतर जाय या उससे अगले पर और वह वह यही उतर सकता है उतर वह लडकी के साथ भी सकता है और लडकी के उतर जाने के बाद भी वह बस में बठा या खड़ा रह सकता है और वह लडकी जिसके लिए वह खड़े रहने की तकलीफ सह रहा है, ज़िन्दगी में कभी उसकी तकलीफ पूछन नहा आएगी। वह इस तकलीफ को किस खाते में डालेगा ?

'क्या सचमुच तम लडकी को जगह देना चाहते थे ?' वह स्वयं से पूछता है

और खुद को धोखा देना नहीं चाहता।

बस मोड़ पर रुक जाती है, वह सोचता है "क्या मोड़ का सही अर्थ उस पर रुक जाना है ? बस के चलने में तो मोड़ आते हैं या सवते हैं, लेकिन मोड़ पर बस का रुक जाना ?" वह इससे आगे नहीं सोचना चाहता क्योंकि इस बारे में मोचने पर उसके दिमाग में कुछ अच्छे चित्र नहीं बनते।

खड़ी बस के पहियों के नीचे वृक्ष-सिर-छायाएँ कुचली पड़ी हैं। यहाँ लड़की उतर जानी है उसे तब-लीफ़ होनी है। लड़की से उसका परिचय नहीं था, लेकिन बस में बठे और लोगों के मुकाबले यतीर परिचय के उससे पास पूछे गए समय का एक पूरे से आधा वाक्य और एक छोटी-सी मुस्कराहट है। अब वह खुद को एकदम अकेला महसूस करता है, लेकिन उसे इतनी खुशी है कि बस में बठे हुए सभी लोग कहीं न कहीं, किसी न किसी मकसद से जरूर उतरेंगे सबके पीछे उसी समय की चाबुक है, जिसकी वह परवाह तक नहीं करता और वह कहीं भी बिना किसी मकसद के उतर सकता है। ख-वाट सिर की हरकतें उससे बिन्दुल बर्दाश्त नहीं हो पा रही हैं ब उसे अब ज्यादा देर बठने नहीं देंगी।

बस से उतर कर वह देखता है कि लोग पागलों की तरह बिखरे हुए भीड़ में जा रहे हैं। बसों, तांगे, रिक्शे, स्कूटर और कारें बेतहाशा दौड़ी चली जा रही हैं। उसे आश्चर्य होता है कि बिना आपस में टकराए यह दौड़ कैसे रही है ?

वह रेल-पुल पर निकल आता है, टेढ़ी मेढ़ी सड़कें उसे किसी कुरूप अजगर-सी लगती हैं और रेंगती हुई बसें माचिस बीस जसी। खुटम-खुटम चलते आदमी उसे अजब किसिम के धीने नजर आते हैं, वह चाहे तो इस बात पर हस सकता है, वह सोचता है कि उस इस बात पर हमना चाहिए पर न हँसने पर उसे प्रसन्नता होनी है कि चाहते हुए भी वह अपने चाहे हुए पर नहीं हसा है। गाड़ी-ओ अभी कुछ मिनट पहले गई थी, दूर दूर हिलाती रेंगती माँतर की तरह उस लगती है। उसे एक गिजगिजी-सी अनुभूति होनी है, वह पुल से नीचे धूक देता है, फाहे की तरह नीचे जाते हुए धूक का वह दृष्टि से जमीन तक साथ देता है।

वह सोचता है कि उसने समय को मुँह पर धूक दिया है। समय उसका क्या बिगाड़ सकता है समय-वह किसी के माथे पर मस्तिष्क गोथ उछाल सकता है उसे पिछले दिनों हुई एक मृत्यु याद हो आता है समय-वह किसी की स्कूटर से टक्कर करा सकता है उसके जेहन में दुघटना पाए एक मित्र का चेहरा छटपटाते हुए दम तोड़ने लगता है। वह व्ययमनस्क हो आता है। तभी कोई एक उससे समय पूछता हुआ बिना उत्तर की प्रतीक्षा किए तेजी से निकल जाता है वह धीरे से फुसफुसाता है 'जब वह मक है पूछा था तो पूछ कर ही जाता।'।

वह पुल छोड़कर रिहाइगी मकान की तरफ निकल आता है। दोनों तरफ

कतारों में बने हुए मकान उसे दबके जैसे लगते हैं जिनमें सतुष्ट मद औरत कबूतरों की तरह गुटरगूँ कर रहे हैं, वह बुदबुदाता है “स्ताले सब गुलाम ह ?” एक घर से मद-औरत का एक जोड़ा निकल कर उसी बगल से गुजर जाता है वह सोचता है “एक मद जिंदगी भर एक औरत के साथ कैसे रह सकता है और एक औरत एक ही मर्द के साथ कैसे रह सकती है ?” “कमजकम तुम्हें औरतों के बारे में ऐसे नहीं सोचना चाहिये।” वह खुद से कहता है “इस तरह तुम अपने बारे में सोच सकते हो तुम्हें अपने बारे में इसी तरह सोचना चाहिये क्योंकि तुम आदमी हो इसलिये आदमी के बारे में तुम इस तरह ज्यादा सही सोच सकते हो। वह अपने बारे में इस तरह सोचने का फैसला कर लेता है।

हाथ में हाथ दिए एक जोड़ा ट्राजिस्टर” लिए सामन से आ रहा है उनके पीछे पूँछ से भस्त्रियाँ उड़ाती पगुराती भसा का एक झुण्ड है, वह एक तरफ हटकर उन्हें निकल जान देता है उस किसी कवि की एक पंक्ति याद आती है “भसो और ट्राजिस्टरों का नगर” वह इसमें ‘फूली हुई औरत और जोड़ना चाहता है और फिर पंक्ति को इस तरह तर्ताव देना चाहता है भसो, फली हुई औरत और ट्राजिस्टरों का नगर। वह सोचता है कि कविता करके वह समय को ‘किल’ कर सकता है, समय के खिलाफ कविताएँ लिखकर उन्हें प्रचारित करा सकता है। उसे आश्चर्य होता है कि लोग समय के खिलाफ विद्रोह क्यों नहीं कर देते ? उन्हें भसा ■ बठना और सड़का पर चलना छोड़ देना चाहिये। दफतरो और घरों के भेद को मिटाकर दरवाजे बंद रखने चाहिये यात्राओं में उद्देश्य खत्म कर देना चाहिये क्योंकि इससे समय को मदद मिलती है समय का और दूसरी बातों से भी मदद मिलती है—

लोग बाबाई समय की गुलामी से छूटना चाहते हैं ? क्या मुँह से कहता है तो उन्हें सारी घड़ियाँ का मुँह ■ दाखिल कर देना चाहिये। वह गावना है कि वह घड़ियाँ से एक या डेढ़ मुँह भर सकता है उसका ज़िमाग में एक निम्न बनता है किट किट करती घड़ियाँ के चक्कट गार में मुँह पर बाँध डाल घने नाभूना और बल जमी बड़ी-बड़ी आँखें बाला कराहना मुँह खोलकर समय अपना मुँह नीचे रखा है। यह मुँह के मार दौड़ लगाने तक की बात हो सकती है जिनमें हम महसूस करते हैं कि लोग के फिर ज़रूरत से ज्यादा भुक् हुए हैं। उस ज़िमागत की—गायन ध्वनिध्वनि की—एक पंक्ति याद आती है यहाँ तुम समय को नष्ट कराओ तो समय तुम्हें नष्ट करेगा। उस यज्ञ लेखक बड़ा उज्रकण लगता है उस पुराने भसा लेखक बड़े उज्रकण लगते हैं क्योंकि वे सभी इसी तरह का स्वर बोलें कहते हैं। ‘जब समय का तुम नष्ट करोगे तो समय तुम्हें नष्ट करेगा ?’ उस यह तब वना स्वभूत लगता है वह हम कई बार मन में दुहराता है और जितनी बार दुहराता है उतनी ही बार मुँह होता है। वह हम बाबाई के जिन मुँह का गावानी देना चाहता है।

ह, क्योंकि समय की गिलाफत के लिए यह वाक्य ब्यास साबित हो सकता है। उसे इसे कही लिख लेना चाहिये। तेव म कामज न मिलन पर वह इस हथेली पर लिख लेता है। उसे छोटपन के ये दिन याद हो आते हैं, जब परीक्षा में जाते समय, वह दूसरों के वाक्यों को नकल टीपने की गरज में हाथा और हथेलियाँ पर लिख लिया करता था।

पान वाले की दुकान में रेडियो समय बता रहा है। एक हजरत बलाई में बँधी अपनी घड़ी मिला रहे हैं, वह उन से कहना चाहता है "घाय है हजरत आपको इस मिडियाफ्री' के लिये और चिन्कार है मुसको" फिर वह सोचता है कि यदि वह इन हजरत से यह कहेगा तो पहल इनका नाम पूछेगा फिर इस तरह कहेगा 'ए पलाने हजरत आप घाय हैं, इन 'मिडियाफ्री' के लिये और चिन्कार भी आपका ही है।' उसे लगता है कि कलाश्या में येँघी घड़ियों के मालिक बलाई वाले नहीं हैं, बल्कि स्वयं घड़ियाँ उनकी मालिक हैं।

बसों भर भर कर दौड़ता हुआ समय हाँफती और कालिख उगलती सड़को को राद रहा है। यँके बेहरो वाली बाबुओं की दफ्तर से लौटी भीड़ों में समय तेज चलन के लिए परो में कमाचियाँ मार रहा है। बड़ी-बड़ी इमारत खिड़कियों से फँके गये प्याज के छिलके और कूड़े और गटर में लुढ़कते हुए गये पानी की तरह लगातार जादमियाँ का उगल रही हैं जो नीली नसों में बहत हुए खराब खून की तरह रास्तों में पुर गए हैं। उसे अपनी नसों में चुमनी तकलीफ महसूस होती है। पास ही फुम्पाय पर रस निका लने की मशीन में गन्ना लगाया जा रहा है, जो फटन की लगातार आवाज में और पिसत हुए प्रशिया में छँछ हो रहा है छूँछ गाने की दुम उमेठकर मशीन में लगाकर एकदम छूँछ कर लिया गया है और उसे सुवाकर जगान की गरज से एकतरफ रख लिया गया है। उसे रुयाल आता है कि आज दिन भर उसने मिगरेट नहीं पी है वह सिगरट का धुँआँ चारों ओर ऐसे फँके रहा है जिस मज्जमे बाग़ा 'दो जान दा जान दो जान की आवाज के साथ चारों तरफ की भीड़ का सामना करता है। यह सोचकर उसके हाथों पर तल्ल हँसी आ जाती है जिसे वह रुमाल से पाल्ल कर जेब में रख लेता है जहाँ वह दवाइयाँ की टिनिया के साथ गड्ड गड्ड हो जाती है। वह रुम होठा पर जोम फिराता है उसका दाँता के नीचे रेगिस्तान किरकिराता लगता है वह इस रेगिस्तान से निकलना चाहता है लेकिन पद चिन्हों भरा कोई रास्ता उसे नज़र नहीं आता और जा नज़र आता है, वह उस तरफ जाता है जिधर मकसद पसद लोग जाते हैं और वह मकसद पसद लोगों को नापसद करता है क्योंकि मकसद पसद होना समय की गुलामी करना है।

शोध होते हुए

अपना हैण्डबग और सूटकेस रिक्शे से उतारकर मझला घरवे सामन खड़ा हो गया है। रिक्शा जाते हुए झनझना रहा है, फिर भी सजाटे में कोई पक नहीं है। मझला शीघ्रता से घरमें नहीं घुस जाना चाहता। वह रुका है। मकान की सदर दीवारों जब वह पिछली बार आया था तब की बनिस्वत और ज्यादा काली हो गयी हैं। कुछ वर्षों में उनकी पीली पोताई बिलकुल धूमिल पड़ जायेगी। पिछवाड़े के ऊँच पीपल की अलग बाहर निकली डाल पर आधे से कम चाँद है। मझले को अपना घर एक कृत्रिम सेट सरीखा लग रहा है। जैसे वह किसी नकली जगह के सामने अथ खड़ा हुआ है। इस लिए कि सेट का काम पूरा हो चुका, अब वह केवल नष्ट हो जाने के लिए ही बचा है। कुछ ही पल में यह आभास शुभ हो जाता है और मझला सड़क की पटरी से घर की हद में घुस आता है।

लोहे का भूमि पर लटका फाटक खुलने के लिए मुश्किल से घसका है। मझले की आँखों में पिछले वर्षों घर आने के अपने उत्साह और उमंग की तस्वीर नाचने लगती है। वह एक खास ढंग से कालबेल बजाता, जिसमें सगीत पदा करने की हल्की चंचल कोशिश भी घुमार होती। रात साढ़े नौ या दस के आस पास का समय किसी पूरा सूचना का न होना, शनिवार या किसी दूसरी छुट्टी से लगा दिन महीने का पहला पखवारा, लोग मझले की उम्मीद किया करते थे। और मझला आता था। नौकरी के पहले दूसरे बरस तक। फिर दुनिया के सभी लोगों की तरह घर वालों में भी मझले के आने की अवसर की जाने वाली उम्मीद चुक गयी। इधर एक माधूली मुर्दारिस के लिए भी हर उम्मीद की सुखद सयाग में बदल देना सम्भव नहीं रहा।

मझला सोचने लगा कि आखिर वह अपने घर जल्दी-जल्दी अनावश्यक क्यों आता था? क्या इसलिए कि विघटन ने उस अपने घर के प्रति बहुत अधिक मोहासकत कर लिया था? समय की व्यापक गति-सम्पन्न धारा उस हमेशा निरीह करती रही वह थककर लौट जाता रहा। लेकिन मझला अब भी आता है। उसमें उतना उत्साह नहीं रहा परिस्थितियाँ ने उसे पाट दिया है पर भावुकता और मोह का चेहरा बड़ा बेहपा हाता है, उसमें एक इमानी हैसियत का छलावा हमेशा चमकता रहता है।

व्यापक अधिकार पर केवल नक्षत्रों का प्रकाश है। मञ्जला सोच रहा है कि वह घण्टी बजायेगा, तो किसी समय की आशंका में मा लपककर दरवाजा खोलने आ जायेगी। 'आ गये बेटा'—उसकी आँखें चमक उठेंगी। उसकी दोनों बांहें उठेंगी और नीचे चली जायेंगी। जब मणला बहुत बड़ा हो गया है। उसके मध्यमवर्गीय सस्कार जवान बेटे की छाती पर मीचकर प्यार नहीं करने देंगे। यह सब होता रहेगा। वह सामान अन्दर रखेगा। इस बीच पिता अपने कमरे में धके-धके खासिगे। इस वृद्धावस्था में उनका किसी के आगे न झुकने वाला मन और किस तरह से घर जिम्मेदार बेटे को आकर्षित करे? ऊपर के कमरे में फर्श पर कुर्सी के पाव पीछे खिसकेंगे। लकड़ी और सीमेण्ट के फर्श के घर्षण से उत्पन्न एक निहायत सन्निप्त और निरर्थक शोर फलकर समाप्त हो जायेगा। टीनू दो मजिले से धम धम उतरेगा। वह मञ्जले के आगे पीछे दो एक खचकर लगायेगा, अपनी खुशी बाहिर करने के लिए मुस्करायेगा और वापस चला जायेगा। ममा भामी ता बड़े हैं इसलिए उन्हें कमरे से निकलने में दर होती है या फिर वे सुबह ही मिलते हैं। तारा गायद ही जगती मिले।

मञ्जल ने जसा सोचा, बहुत कुछ वंसा ही यत्रवत् हुआ। वह बरामद में कपड़े बदल रहा है। उधर अन्दर मा पुसपुसा रही है। मणल को न्यो कोई खबर नहीं दी। इस बार बिलकुल अचानक आ गया। "एक अस्त-यस्तता से भरी चुप्पी और फिर बुद बुदाता हुआ आदम 'चादर सब चीकट हा गयी हैं। तारा दौड़कर दो एक चादर तो बदल दे कम से कम। फिर लपक कर खुद झल्ली खरिया का उनचन कसने लगती है। मञ्जला एक कमरे से दूसरे कमरे में उनचन बसती हुई माँ तकियों पर धुली खोलियाँ बढ़ाती बहाल तारा छोट सफेद बालो वाली खोपड़ी स फूँसी बढाते पिता निद्रित भया भामी जीर अणु-अणु पर जमी धूल की पतों पर एक 'ग्रिम सुक' डालते हुए गुजर गया। वातावरण एक खास निरत्साह को 'विस्पर कर रहा है। वह कितना बचेगा। आँगन में अधेरा है। गुसलवान का स्विच खराब हो गया है। कई बार खटपट करने के बाद मञ्जल को कुछ नहा सूझा। वह लौटकर मा के पास बैठ गया।

किमी का कुछ सूझ नहीं रहा है जस। क्या बोलें? फिर पिता ही बोले। जम्हाई लेत हुए लगता है आज ता गाडी समय पर ही आयी।' उनके बोलने में नोद मरी है। अम्मा उनचन कस चुकी हैं। वह मुझ स मयस का घूरती हुई बहती हैं। कितने काले हो गये हो तुम? नीतल से भी ज्यादा। जब पढा दूँगे तो गेहूँ आ रग या तेरा।'

मञ्जले को उठना पड गया। उसका विस्तर बिछ जाये, तब तक क लिए मञ्जला बाहर आ गया है। वह जानता है कि बाहर कुछ नहीं है फिर भी आ गया है।

इस बार मणला बहुत दिनों पर आ सका। अन्दर-बाहर दोनों तरफ बहुत सी चीजें जो आसानो में बदल सकती हैं बदल गयी हैं। परिवर्तित स्थितियों ने मञ्जले को

बोमिल कर लिया है। उस कठोर हृदयो को स्वीकार करना पड़ रहा है।

बाबा की कोठरी में लाहा लगड़ कोयला लकड़ी और गोईठा आदि भर दिया गया है। बहुत पुराना एक टुटला हारमोनियम भी वही डला है। क्वाडराना। यही बाबा रामायण पढ़ा करते थे। उनकी रामायण गुलाब गन्ध से भरी रहा करती। वे पत्ता के बीच पूजा के गुलाब दवा दिया करते। यही 'कश्मि लस का एक चावल'—बाबा गणित का अभ्यास कराते। परशियन गल्प के 'याय प्रिय वादशाहा' की रोमाञ्चक कहानियाँ चलती। तब जीवन गात था। कोई घबराहट नहीं था। कभी-कभी मझले से बाबा बुरी तरह खुनसा जाते और न बोलते। कोठरी में बड़-बड़ मूस हो गये थे। मझला दरवाजा जोड़क पता है।

जिधर सहजान केला और कटहल थ उस पिछवाड़े की जमीन भया न अपना मकान बनवान के लिए न ली है। पेडा को कटवा क उहाने अपन नये पुयक जीवन की नींव डालनी शुरू कर दी है। वे पसीने सल्यपय दिन भर मजदूरा की कामचोरी बचाते रहते हैं। द पत्तर से उ होन 'सिक् लीव ले ली है। मामी उनका चाय नाश्ता भी वही पहुं चा दती हैं।

मया ने मझले से पुकार कर पूछा क्या बच जाये ?

कल रात। मझल की छोटी सी सूचना।

अरे मुझे पता ही नहीं चला। चलो अच्छा हुआ। सब ठीक ठाक चल रहा है न ?

'हा सब ठीक ठाक चल रहा है' मझले ने जवाब लिया और बात समाप्त हो गयी।

मझला घूम गया। वगीच में कुछ नहीं बचा। कुछ सूखे अघहरे डण्ठल और पत्तियाँ वाले ढ़े पूर गमने एक पड़ क नीचे चकटठे रख दिय गये हैं। इसके अलावा वही पुराना माँग पपीन और मीठे निम्बू के गटे झाड़। कुछ क्यारियाँ में पोदीना खास कर जमीन का नर कर दिया गया है।

मझले ने दखा एक ही घर में कई घर हो गये हैं। हर व्यक्ति के कमरे में दूसर में अलग एक स्वतन्त्र और पृथक्ता नापित करने वाला स्वभाव है। निजी व्यवस्था की प्रवृत्ति कुछ लागा में छोटे पमान पर अदर ही अदर प्रयत्नशील है। ऊपर वाले अपने कमरे में टीनू ने एक जलमागे में गीन को रखाबिया गिलाम-प्याल और स्टाव भी छाड़ रखा है। उसका नास्त बड़ा चाय पीते हैं। वहाँ कुतिया है, बानला में मनोप्लाण्ट कट माउण्ट पर मन् चित्र और मुन्तर बारफ पेजी कलण्डर। टीनू अपने कमरे कबल अपने कमरे का अच्छा से अच्छा रचना है। दूसरे कमरे की अच्छी चीजें ला ला कर अपना कमरा अच्छा कर सता है।

मामी का कमरा गुददी बाजार है लेकिन निम्न उपयोग में आने वाला सबम

नयी, सुंदर और फशनेबुल चीजें उन्ही के कमरे में हैं। प्रसाधन सामग्रिया की जसी सुगांध भीभी के कमरे में व्याप्त रहती है वसी कही नहीं होती।

बरामदे के पार्टीशन में तारा का स्लीपिंग-रूम स्टडी रूम बन गया है। साफ-सुथरा। उसका अपना एक पुरानी अलमारी को बदलकर बनाया गया वार शेव है। अपना आय रन, अपनी सुराही, यहां तक कि अपने कमरे को साफ करने के लिए एक अलग झाड़ू। उसका कमरा घर का हिस्सा कम, छात्रावास अधिक मानूम होता है। यूनिवर्सिटी जाते समय वह पार्टीशन डोर पर एक छोटा-सा ताला दबा देना नहीं भूलती। दरवाजे के दोनों तरफ उसने पता नहीं कहा से लाकर दो त्रोटिया के पेड गमलो में लगा रखे हैं। उसमें पानी देना तारा को रोज याद रहता है।

माँ पिता के कमरे में कुछ नहीं है। उनके लिए किसी को पुरसत नहीं। स्वयं उन लोगो को भी अपने लिए कुछ आवश्यक लगता है पता नहीं। पिता द्वारा लायी जान वाली या उनके नाम पर आने वाली चीजें गया भीभी टीनू और तारा के बीच बँट जाती हैं। उनके कमरे में सबसे पुराना टूटे हैण्डले वाला मोटा गद्देदार सोफा है वस जिसकी टेपस्ट्री फाटकर बहुत सी स्प्रिंग बाहर चाकने लगी हैं। सड़क पर लटक आयी टाट की सीलिंग से दिन भर मिट्टी झड़ती रहती है। धाम के तिनके, छिपकलिया, गौरम्या के अण्डे और कमी-कमी पूरा का पूरा घोल्ला ही रोगनदान से गुजरन वाली तेज हवा वहाँ गिरा जाती है। दो हमेंगा बिछी रहने वाली झिलगी चारपाइयाँ हैं जिन पर ज्यो का स्यो दीवार को बेतरताब खुटिया के सहारे सुतलिया स मच्छरदानियाँ टाँग दी गयी हैं। दिन भर इन सुतलिया पर मक्खिया की पत्तियाँ आराम करती होती हैं।

तारा जिस दिन युनिवर्सिटी या किसी सहली के घर स विदेशी फ्रूग का बगीचा देखकर आती ह उस दिन अम्मां याबू को सुनाने की गरज से तुनकती रहती ह "पादीना को रखा ह। इतनी जमीन पड़ी ह यह नहीं कि एक माली रखकर बगीचा तयार कर बायें कुछ अच्छा लगे। पता नहीं शुद्ध घी खाकर क्या करेंगे, उसस तो लाग और बीमार रहत हैं।" तारा व अम्मां-याबू भी केवल मुन लेते हैं।

टीनू में पिता के टबुल लम्प का बल्व न जाने कसे धूँज हा गया। धुँधलका बल्व पर पिता को उसके खराब होन का पता चला। माँ न सच्चाई जानत हुए भी मयवश छुपाय रखने की कोशिश की। पिता विगड। कोई नहीं बोला। सब घोरपप हा गय हैं, वे उत्तरोत्तर गरम हो कर चीखन लगे। फिर अम्मां ने साहम किया 'अब जान दो टीनू से खराब हो गया धाम व वक्त रतना चिल्लान स क्या फायदा? पिता अगान्त ही रह, 'हाँ मैं चिल्लाता हूँ मून-पसीना एक करके मैं जो कुछ ज़िन्गा भर जोहता रहा उस मय में आग लगा दो।' व अनरक अपना दुखडा रा रह है, मैं घर छोडकर ही चला जाता हूँ,, फिर जा चाहे करा।

सबका मन बडवा गया है। ऐमा लगता है जैसे मुझे दरवाजे स पिता मचमुच

बाहर दूर चले गये हैं। घर में स्तब्धता छा गयी। मणला निराशा-सा बिना चाय पिये चला गया है। बाहर भी बहुत देर नहीं रह सका, जल्दी ही लौट आया। वातावरण ऐसा है कि खाना खाने की इच्छा उसे बेशर्मी लगती है। वह सो गया। नींद खुलने पर उसे लगा कि वह बहुत तेर से सो रहा है, लेकिन घड़ी में दस ही बजे थे। एक सोयी बेचनी लिये वह उठा। इस घर का क्या होगा, जोर मझला ओसारे में चूल्हे के पास रख खान के टैबुल पर टिक गया। मोट्टू दा की बोटी में ताड़ वृष के पत्ते सड़सड़ा रहे हैं। जब हवा रकी होती है तो ताड़ नहीं खड़खड़ाता, चिमगादड़ वालते हैं। टीनू सच मुच बहुत जोधी और उहण्ड हो गया है। पिता से बसी बसी उग्र बहस करन लगा है। पहले मझला भी ऐसी ही बहस किया करता था। फिर वह बिल्कुल ही चुप रहने लगा। बल टीनू भी चुप हो जायगा। सतत खीझ और जोध की स्थिति में नहीं रहा जा सकता। लेकिन मामी और तारा दोनों को घर से विशेष सरोकार नहीं रहता। जम्मा अकेले गृहस्थी में घुनी जा रही हैं।

चूल्हे की राख की तरफ मझले का ध्यान चला गया। तपी हुई राख बसा रही है। गम राख सूँघते रहने से यक्ष्मा हो जाने का भय बना रहता है। मझले को पता नहीं किसने बताया था। कहीं माँ को भी मझला मान नहीं सका। लेकिन अध विश्वास की प्रबलता और भय उस पर छाया रहा। वह टैबुल पर से हट गया। उसने चूल्हे की राख पौन से बाहर खींच एक जगह एकत्र की और उसे तवे से छाप दिया। मणला भयभीत होकर ऐसा कर रहा था। उसके कलेजे में घबड़ाहट धड़कने लगी। अगल-बगल जूठ वस्तुओं की बिखराव के बीच अंदाज से सँभल कर चलने के बावजूद भी दाहिने पाव से एक गिलास लड़ी और छुककने लगी। अम्मा ने अपने बिस्तर पर पड़े रहकर ही दिल्ली को 'घत्त घऽ ऽ त्त' भगा दिया। मझले को चैन हुई।

मझला अपनी खाट की तरफ लौटा। उसे सुनायी पड़ा अम्मा पिता से कह रही थी 'बलब की बात लेकर टीनू पर तुम बकार ही नाराज हुए। इतना गुस्सा नुबसान करता है। तुम्हारा स्वास्थ्य भी ठीक नहीं।' मणला ठिठक गया। बाबू कहन लगे, "तुम क्या जानो, मेरी छाती में हमेशा हाहाकार मचा रहता है। घर की हालत तुम देखती ही हो। जब भी बाहर निकलता हूँ ऐसा लगता है कि किसी शराब खाने में धुस जाऊँ। पर अदर जाते जाते रह जाते हैं।" फिर चुप्पी छा गयी-किसी ट्रेजडी के बाद की-सी चुप्पी। मझला रका नहीं, बिस्तर पर आ गया। वह सोचता रहा कि अम्मा शराब खाने वाली बाबू की बात से बिल्कुल भयभीत हो गयी होगी। उन्होंने बाबू के हाहाकार को सचमुच बड़ा ददनाक समझा होगा।

तारा की सहेलियाँ आयी हैं। वे खिल खिला उठती हैं और लडकियाँ की तरह फिल्मों पर झाँक झाँक कर रही हैं। तारा उधर ही भूमी हुई है। पिता को यह हद से गुस्सा हुआ लग रहा है। पहले वे मोड़ पर बड़े-बड़े सहते रहे। अब उठ गये हैं। इस

कमरे से उस कमरे, उस कमरे से बरामदे, बरामदे से आँगन और आँगन से वापस माढ़े पर। जब भी माँ को देखते हैं, उनकी आँखें अगार हो जाती हैं और ये साफ-साफ चिल्लान लगती है कि तारा की लापरवाह और ढीठ प्रवृत्तियाँ की समस्त जिम्मेदारी अम्मा के ऊपर है। यहाँ पर मजले के पिता हर दूसरे मध्यवर्गीय पिता मरीब हो लगते हैं।

तारा के कमरे से अनियंत्रित गोर गरावा सार घर में गिँघर रहा है। पिता के बड़े मन के लिए यह उत्साह बड़ा बहुत है। उन्हें यह मंत्र अनुगमन का तान पर रख देना जसा लगता होगा। लकड़ी का पार्टीशन साठण्डफूफ दीवार नहीं है, सतिया आवाजें, ठहाने और बातचीत का जताना हल्ला अभी भी उठता है।

बाबू घूमते रहते हैं। घुप आगन छोड़ रही है।

अम्मा पिता के क्षोभ को समझ रही हैं। फिर भी सरकारी काटने के अपन काम में भी सलग्न रहने की कोशिश करती हैं। हाँकि वे सरकारी काटने में पूरी तरह गामिल नहीं हैं पिता की वजह से डिस्टर्ब है। पिता अपनी बिडचिडाहट को उगलने का मौका ढूँढ रहे हैं। वे इस मनलब से मुनमुना रहे हैं कि माँ उनको तबज्जा न। फिर एक दो तुमला बडबडाकर चले गये। 'खूब भई चार घंटे हो गये घुँछरें उठन हुए। किसी घर में ऐसा नहीं देखा' गोया मचमुच उन्होंने बहुत से घर देख ही हों। दोबारा आकर काफी कुटमुडात और तन-तन बोझते रहे अक्के।

अम्मा बूझिया से भरी अपनी क्लाइयो को बार-बार पटकन, चिमटा, पृक्की और काम में आत दूसरे बासनों को पटकने तथा जड़ों को भीचकर गाँव में घुसने के गढ़े भरने के अलावा मौन है। वह जानती है कि मजला घर में ही है। बड़ी उमर में सब मुन लिया तो साइकिल लेकर चला जायेगा। कम से कम, मजला घर रहूँ तक तक माँ पिता का यह मुनमुनाना कतई पसंद नहीं करती। उधर तांग के बान में कुछ पढ़ गया तो वह अलग खड्कवान लगेगी। ऐसे ही उसे अपनी सहजिया का घर जान में गम लगती है।

तारा की सहजिया अभी और वह माँ की डाँट तथा मासनों पर पिता के मनकने से बच रही है। उसके चलने फिरने में चाप नहीं लगता है और वह माँ से दवे स्वरों में प्यार से बोल रही है। अभी-अभी उसने हाँ पर से मूँच कटान करने के लिए उठाय है। साधारणतया तारा यह काम कभी नहीं करता। मजला उठ आया है। भाभी अपने कमरे से निबल चाय तयार करने के लिए लकड़ी की बजिया तोड़ रही है। टीन स्कूल से लौट बायरम में फिमी गान का पकियाँ खींच रहा है। तारा अब काफी सुरक्षा का अनुभव करती है। 'गाय' बड़ गिर नहीं मनकेंगे लेकिन गाल उनके जरूर फूँड रहेंगे। तारा की आवाज अब बाहर कुछ स्वाभाविक पड़ है। एक अजीब नरन्नी ढंग से सब व्यतीत हो रहे हैं। टांग का अब दृष्टा नरन्नी

सूट बनवाना, फीस देना या मिनेमा जाना होता है तो वह पिता से प्रेमपूर्वक बात भी करता है, और घर का काम भी कर देता है। तारा को ऊन या साड़ी लनी होती है अथवा पिकनिक पर जाना होता है तो माँ से लिपट लिपट कर मधु घोलती है। पिता गुन नहीं हैं, फिर भी टोन्न की आवश्यकताएँ हृद से बाहर पूरी कर रहे हैं अर्न्त निराशा है फिर भी तारा के लिए पिता से सिफारिशें किया करती हैं, लड़ती है।

बिना किसी घरू वातावरण और मिले-जुले मुगद कायनाम व ही मसले की अधिकौश छुट्टियाँ बीत गयी। उसके चाय पीते पीते शाम हो गयी। इस समय मसला किंचित् तरल है। सुबह से ही जिस गाम का इतजार रहता है, उस शाम का आ जाना उसके लिए सुखद है। इसलिए नहीं कि उसकी धामें भव्य होती हैं, बल्कि इसलिए कि शाम के बाद दिन के बीत चुनने का एहसास करना बहुत सरल हो जाता है। दिन जो कि काफी कठिन हैं, और शाम के पहले इतिहीन हो लगते हैं।

पुरातन गिलासों के समझ उसकी लिपि से अनात दशक की जो स्थिति होती है वसी ही मसले की अपन घर के लागा म हा गयी है।

मसला घर से निकलने की तयारी कर रहा है। और मसले के शरीर तथा शरीर की गति विधियों को घर के लोग नाटक की दृष्टि में देखने लगे हैं। उन्हें नाटक को भुगतना भी है, और तटस्थ भी रहना है।

यह तटस्थ रहन की विवशता बड़ी दमघाढ़ है। माँ गुमसुम रहती हैं और पिता चिड़चिड़े। उमग गुम गयी है। पिता से टीनू तक सब अनात परिणाम वाले मविध्य के लिए बन मान की स्थितिया भेल रहे हैं।

मसले का क्या, वह अभी कण्ड पहन कर निकल जायेगा। लेकिन मन तो दूसरो का भी होता है। वे मसोस के रह जाते हैं।

घर की शाम गलेजे की दवाती है। बाहर जीवन मन्द नहीं है। वह विविध और उत्तजित करने वाला है। इसी उत्तेजना के लिए मसले न घर की शाम को त्याग रहा है। छुट्टिया म इधर जान पर घर की गाम का एक धूमिल एहसास उस उन सड़की पर होता है, जिन पर तेजी से दफ्तर के बाबू घर के लिए लौटत हात है। उधर मसला किसी रेस्तराँ या बार में जाहुइ लफ्फाजी करते थूठी दुनिया की अनिवायता का मिर पर गम्भीर अमिनम व साथ लादे अदरुनी तीर पर मागे धबराय और बीमार लोग के ससार में शामिल हो जाता है।

दिन पूरा हो गया। अभी-अभी अध रात्रि की सूचना देन वाले प्रेस के घण्ट बजे हैं। बारह घण्ट काफी दूर तक बा। मसला सोचता है, अच्छा होता य घण्टे बिन्दुल न बजते अथवा जल्नी से बज जात। गायन बजाने वाला अध सुप्तावस्था में है। मसला अभी बाहर हो आकर हडबडी के साथ खाना पचम करने में लगा है। उम दर लग रहा है माँ कुछ बोलने न लगे। माँ का बोलना साधारण बोलना मात्र नहा

होता। धीमे से बोला गया उसका हर वाक्य पक्ष कटे परिदे की बेजान उड़ान चेष्टा मा दर्नीली चीख सा होता है—इस चीख से मझला बचता है। पता नहीं बात ही बात में कब मनका बाध टूट जाये। माँ का क्या, उसकी झाड़ी की बात या मामी की दूमरी घर बसान की प्रवृत्ति की चर्चा ही छेद दें। दम बारह दिन की तो छुट्टी, उस पर वह इतनी ढेर-देर तक घर क्या लौटता है अथवा पिता के बहुत गिरे स्वास्थ्य के बारे में ही। माँ के पास बहुत सी खतरनाक बातें हैं।

मझला सर भुजा यन्त्रवत् खाना खा रहा है। मोचता भी है। पहले दिन उसका भाने पर माँ खीर, सलाद या और दूमरी अच्छी चीजें बनाती हैं। फिर रोज की ही तरह खाना बनते लगता है। मा के अंदर बस इतना ही उत्साह बच गया है। पचास वर्ष की मा अपने बीस वर्ष के मा स्वरूप को समय-ज्वाल में जग चुकी हैं। तीस वर्ष पहले जब मझला पदा हुआ था। पदा करने पोषण करने के बाद अपनी सन्तानों के लिए उसके पास कोई भायत्रम नहीं है। सिवाय इसके कि वह खुद को तिल तिल मारे और भण्डे, टीनू की बहू का एक कठोर स्वप्न उसमें कभी नहीं मरे।

मझले को एकदम से ख्याल आता है कि जब भी वह रात को ढेर से लौटा है, केवल माँ ही उसे जागती मिली है। बाकी लोग अपने-अपने बिस्तरों पर क्षण भर कुतमुनाकर पुन बेखबर सो जाते हैं। टेबुल पर खाना मुँदा रहता है। माँ लाचारी से उस बफ हो गये खाने पर निगाह डाल कर सुस्त हा जाती है। मझला चुटकी में खाना निगल लेता है या खाता ही नहीं टाल जाता है। रोज तकरीबन यही होता है। बिस्तर पर जाने के बाद मझले को तरम खाने की पुरसत मिलती है। वह सोचने और गम करने लगता है कि उसे माँ की आँखों में कभी भी नींद क्यों नहीं मिलती। आँखों में मामो बद की एक गिला उसे अंदर ही अंदर भेदती रहती है। मझले को भी मातुत्व का नाम पर महज यही खौफनाक दरि नमीव है।

बाहर सड़क पर मुहल्ले में गन्त लगाने वाले चौकीदार जमा होकर जोर जोर से हँसी टटठा करने लगे हैं, उनकी चोरी से धी गयी चिलम का गाजा बू मार रहा है। जो लोग सो रहे हैं उनके लिए चौकीदारों की सीटियाँ रात का पूरा भतल्य देती हैं। जागती हुई माँ और मझले के लिए रात एक त्रामद सुखान वाली कहानी है।

मझला टेबुल पर पानी का गिलास ढेन लगता है। यद्यपि वह निश्चित रूप जानता है कि टेबुल पर गिलास नहीं है। माँ उठती है। पानी ला लेती है। फिर बैठ जाती है। उसके लिए मझले में कुछ बोलना जरूरी है।

‘बेटा! टीनू के बारे में क्या सोच रहे? उसका दिमाग खराब होता जा रहा है। देखत नहीं कितना गुस्सा और बदतमीजी करने लगा है। माँ आगिर वाली ही।

मझला गिलास का पानी समाप्त हो जाने के बाद भी गिलास की कोर का मोड़ो से नहीं हटा रहा है। वह मूठमूठ पानी पीने का अभिनय करता हुआ माँ के

प्रतीति का अभाव उत्तर गाज रहा है, या प्रतीति का भूल रहा है। आगिर उम कुछ गुनाहरी, दमलिया मिलान रंगों हुए बहना है, 'तो मैं क्या करूँ?' मंगला जानता है कि यह ऐसा रास्ता बहना तो उसे बचन ही उतारने है। जायेंगी।

दम सरह मंगला का समाधि कर दाग माँ का अछा रहा लगा हुआ। सविन उससे कहा कुछ राह। बम यही साधने लगी कि लगा रंगों मंगला कितना निर्मोहा हो गया है। पहले सबका मंगल करता था, अब अंगना भी नहीं करता।

मंगला का माँ दिवंगी स दगनी आ रही है पर आज्ञासल सबकुछ वह बहुत बड़ा है। मंगला का बचपन उम बचन करता है। बमी-नमी माँ के नंग म एक बचामीय मिडमिडाल्ट भी भर आती है। मंगले ब्याह कर ला। दिगी लगी स कर ला। दिगी सरह कर ला। जेठ बटु स तुम्हारे बहल मया को छीन लिया, फिर भी कर ला। दुनिया म सभी करते हैं। तू अवन साधिया म अरे-ना व जायगा। तुम्हारे पिता मितुल लट गये हैं। अगर हम स कुछ गलती है। गयी हो तो बटा माफ कर दा। माँ की आँखें इसी तरह मोलनी रहती हैं। सविन मंगल ने माँ की बमी नहीं मानी है। बचपन स डिही रहा है। बाप तो बुढ़ापे तक है।

मा अपने सभी बच्चा स डरी रहती है। इन दिना मंगल स और डरने लगी है। पिछली बार जाड के गिना से वह और सहम गयी है जब एक दिन खान के तुरन्त बाद मंगले ने मल मल गाराव की डर सारी बदनूपार उलटी टैनुल पर ही कर दी थी। उन्ही दिना बड भयान भी अपन हिसान किताव का पसला कर लिया था। माँ के मन म मंगले के भविष्य के बारे म काफी डर है। स्त्री के बिना कोई कैसे रह सकता है? भयप्रस्तता उसके स्वभाव म सुमार हो गयी है। अगर मंगला गादी को तयार हो जाये तो भी वह किन्हीं बुरे परिणामों की कल्पना से डरा रहेगी।

देर से होने वाली सुबह की खटर-पटर से मंगला जाग गया है। पिता माँ पर आरोप लगा रहे हैं कि वह लडकी को 'प्रोटेक्ट' करती है नहीं तो क्या मंगल कि लोग आठ बजे तक सोते रहें। मंगला अपनी तरफ किय जाने वाल स संकेत को समझता है। वह बिस्तर पर लोटा हुआ पिता की अप्रत्यक्षता और बायरता सोचने लगता है। वे अपना हर असंतोष आसानी से मा पर धोप देते हैं। सभी कायर हैं, क्योंकि माँ दुबल है।

वह छुद जब कभी, अपने प्रति मा की प्रेम उत्कटता का लाभ उठाता है पिता उस अपनी योग्यता और हाहाकार के भावुक शब्दों से दबोचते हैं। तारा माँ को जन रल नॉलेज से आत्रात करती है। उसके अनुसार मा को नये मनर का नहीं पता। टीनू अपनी उच्छ खल आवाज मे बात-बात पर मा को दलकार जाता है। बडके भया की उँगली पर सम्पत्ति का एक छोटा-सा पहाड है जिसके नीचे मा को धीस के बाव-जूद भी शरण लेनी पडती है। क्योंकि उसकी आक्षा के सामने एक आधार है जिस पर

शेष होत हुए

मे उसे अपने अव्यवस्थित बच्चा को उतारना है, एक मृत्युक्षण तक की दूरी है, जिसे पार करना है। हालाँकि इस पहाड़ पर स भी उम्मीद की विरह डब रही हैं।

माँ बाहर नारियल की झाड़ से पीपल के सूखे पत्ते बटोरन चली गयी हैं। भाभी मुनाने की गरज से मुनमुना रही हैं, “चाय बनायी जाये या खाना।” उस वक़े महारानी यूनिवर्सिटी जायेंगी, उन्हें नौ वक़े खाना चाहिए। यहाँ अभी तीसरा बार बूँह पर चाय का अदहन चला है।”

गलगल मौसी चिड़िया का एक झुण्ड सरता हुआ आया और पुड़ीने की बयारी के पान बठ चिड़िया रहा है। माँ झाड़ से उह होकने लगती है। चिड़िया थोड़ा फासला छोड़ उड़ कर आगे बठ जाती हैं। ये भूने चिड़ियाँ खोख और खूब शोर करने वाली हैं। अम्मा उन्हें उड़ाने को बेताब और परेशान हैं।

मसले को खूब याद है, माँ किसी शिशु को खिलाते स्नान करते हुए जो बहुत सी काव्य पंक्तिया गायी करती थी, उनमें से एक ‘गलगल मौसी आयी हैं पत्ते में गुड़ लायी हैं’, उन्हें बहुत प्रिय थी। फिर भी माँ मानती है कि ‘गलगल बहुत बुरी और मनहूस चिड़िया है।’ गोरग्या घर बसाऊ है तो गलगल घर उजाड़। माँ हाँफ गयी है, लेकिन उसमें चिड़िया के झुण्ड को मनान की हद से बाहर कर दिया, क्योंकि गलगल घर उजाड़ चिड़िया है।

मसला स्निग्ध और अवसादग्रस्त हो गया है। भाभी रसोई में हलाकान हैं। माँ उबर नहीं जा पायेंगी। तारा पड़कू है। भाभी भी अकेली कमे कर? मसला सोचता है कि वह कहाँ बाहर चाय पी सगा। उसकी ताँ बाहर चाय पीने की आदत सी ही पड़ गयी है। लेकिन उसे इसी घर में व्यतीत होना है। वह व्यतीत होना भी कितनी मुश्किल बात हो गयी है।

मसले को कुछ रफ़ा की जरूरत पड़ गयी। उसने माँ से माँग। माँ ने भया से कहा। भया का बचपन दहाड़ने लगा ‘भया करेगा वह इनके रुपये?’ इसी तरह सागरी की आदतें खराब होती जा रही हैं। तसला ठकदार की लड़की से इसक फरमाता है जोर घर में दासनिमता छाँटता है। मेरे पाम रुपये खपये गये हैं। उसी लड़की से भया नहीं लेता? माँ अपना सा भूँह लेकर वापस आ गयी। मसला सोचने लगा कि उसने नाहक कहा। चायद लोगो को अपने सरगार पर इतना अधिक स्तरो नजर आने लगा है कि व. शिवाजी के चले हैं। अम्मा, म. दूया, रदु, फासला, १

हर बार की तरह इस वक़े भी मसले की छुट्टियाँ बड़ी कठिनाई से रेंगी हैं। अम्मा को दिल की तमाम गलबलियाँ व. ए मसले में फिर अवसर नहीं मिला। मसले से उस उम्मीद रहनी है। चायद वह मसली है कि मसले के पास घर की स्थिति को बदल देन वाला कोई मुल्का है। माँ अपनी गलतफहमियों से बदनतीब और दयनीय हो गयी है। गिरती हुई दीवाल को मसला या कोई भी अपनी पीठ से रोकने की

सेब

चलती सड़क के किनारे एक बिगड़ प्रकार का जो एवान्त हाता है, उसमें मन एक लड़की का किसी की प्रतीक्षा करते पाया। उमकी भ्रातृ सड़क के पार किसी की गतिविधि की विद्युत् रही थी और भ्रातृ के साथ बसे हुए छोटे और नुनीली टूटी वाला उसका छोटा सा साबला चेहरा भी इधर से उधर झुनता था। पहले तो मुझ यह बड़ा मजेदार लगा पर अचानक मुझ उसके हाथ में एक छोटा-सा लाल सब लिवाई पड़ गया और मैं एकदम हवा से वही खाना रह गया।

वह एक टूटी फूटी परेम्बुलेटर में सोयी बठी हुई थी जैसे कुर्सी में बैठने हैं और उसके पतले पतले दोनों हाथ घुटनों पर रखे हुए थे। वह कमीज-पजामा पहने थी, कुछ ऐसा छरहरा उसका शरीर था और कुछ ऐसी सड़कायी उसकी उम्र थी कि मैं सोच में पड़ गया कि यह लड़का है या लड़की। लड़की होती तो उस पर दा पतली पतली चोटियाँ बहुत खिलतीं यहाँ वह झबरा थी। पर तुरन्त ही मेरे मन ने मुझ टाका—भला यह भी कोई सोचन की बात है क्योंकि उस बच्ची में कहीं कोई ऐसा बद था जो मुझ फालतू बानें सोचन से रोवता था।

यह बिचकुल स्वाभाविक था कि मैं पास जाकर बड़ी शराफत में पूछना क्या बात है बेटो, तू इतनी घबरायी हुई क्यों है? तब मैं यहाँ नौन छाड़कर चला गया है? पर वह न उतनी घबरायी हुई थी और न उस वहाँ कोई छोड़ कर चला गया है क्योंकि उसके चेहर पर एक गहरी आभा की दृढ़ता थी यद्यपि वह आभा इसी बात की थी कि उसका बाप अभी आ जायेगा। इसलिए मैं पूछा नहीं पर थोड़ा और पास आकर उस देखता रहा। मुझे डर था कि प्रम को हाथ लगाते ही वह रो पड़ेगी लेकिन एक बार मैं हुआ कि उस जरा-सा और पीछे हटा कर फुत्पाय पर बरखूँ डोजल—इतिन वाली भीड़ी बमा की दृष्टान मेरे दिन में बचपन से बठी हुई है पर फिर यह सोचकर रुक गया कि हालाँकि कोई डाइवर कम कुशल होता है कोई जयान और कोई अपनी बीबी को पीता है कोई नहीं, पर ऐसा कोई नहीं होगा जो उस बच्चाकर नहीं निकल जायेगा।

उड़की ने एक बार मुझे धूँआँ से देखा फिर अपने बाप को देखने लगी। वह सड़क पर ज़मीन पर कोई चीज़ ढूँढ़ रहा था। मुझे देखकर वह गायद मन में हँसना चाहती कि आप यहाँ खड़े क्या सब्ज़ी का सुटा रह हैं पर वह बहुत कमजोर थी और उसके पर भाव एक अजीब लक्षण के साथ आते थे जैसे कमजोर व्यक्तियों के आते हैं : इसीलिए उसका चेहरा और सख्त होगया। अब सोचता हूँ कि उमन अपना ध्यान त मुझ पर से हटाकर खोयी हुई चीज़ के मिल जाने पर लगा दिया होगा।

यह स्वाभाविक ही था कि मैं अपनेमानित अनुभव करता कि मैं तो—जसा कि बचपन से मिलाया गया है—कोई जना के प्रति आग्रह होना—उम पर तरम खा रहा और वह मेरी अनदेखी कर रही है परन्तु मुझे इसमें कोई अपमान नहीं मालूम हुआ कि मुझे उसका स्वाभिमान अच्छा लगा। इस बार मन गौर किया तो दिशा कि यह त मल कपड़े पहने थी कमोज के बालर पर मल की लहरदार धारियाँ थी मगर साफ था जैसे उसका बाप उड़की को मुँह धुलाकर बाहर ले गया हो। लगता था घुटकर उसका मुँह और भी निम्न आया है। कमोज पर उमने स्वेटर पहन रक्खा जो छिपक कर उठता था पूरी बांह की कमोज थी कफ के घटन बचावदा लगे हुए और तम बार मन गौर किया तो दिशा कि कलाइयों में बहुत-सी नयी चूड़ियाँ थी।

मने सोचा ससार में कितना कष्ट है। और मैं कर ही क्या सकता हूँ सिवाय वेदना देने के। इस गरीब की यह उड़की बीमार है ऊपर से कुछ पैसे जो अस्पताल की से बचाकर ला रहा होगा उन्हीं से घर का काम चलेगा, यहाँ गिर गये। किसी ने तो टक्कर खा गया होगा। वह तो कहिए कोई चोट नहीं आयी करना बीमार की लावारिस यहाँ पड़ी रहती कोई पूछने भी न आता कि क्या हुआ। मने मचमुच के बाप को वहाँ से आवाज दी 'क्या ढूँढ़ रह हो? क्या खो गया है?

उसने वहीं से जवाब दिया कुछ नहीं, गाड़ी की एक दिवरी गिर गयी है।

उसकी खोज खत्म हो गयी थी। वह बिना दिवरी के इधर चला आया। उसके प मने परेन्सुलेटर के नाचे भाँककर देखा—जहाँ गाड़ी की बाँड़ी और धुरी का जोड़ ता है, जहाँ धुरी हिलती रहती है वहाँ का एक बोस्ट बिना नट के था।

मने सोचा वस! मगर इसे ही काफी अफसोस की बात होनी चाहिए क्योंकि तो गाड़ी वैसे ही ठहरमचर हा रही थी, ऊपर से इस नट के गिर जाने से वह विल-ल ठप हो जायेगी क्या नहावत है वह—गरीबी में आटा गीला—कितना दद है इस हावत में और कितनी सौरी चोट है आटा जरूरत में ज्यादा भीला हागया और अब खया गहिएँ परात लिये बठी है उमे सुखान को आटा नहीं है। यानी आटा है मगर टियाँ नहा पक सकती।

मने अपनी तार्किक चतुराई दिखायी पूछा, "मगर दिवरी गिरी कहाँ थी? या तुमको ठीक मालूम है यही गिरी थी?

लडकी की मरी मरी आवाज आयी गिरी तो यही थी अभी मुझ दिखाई पड़ रही थी, अभी एक माटर आया उस से वह छिटक कर उधर चली गयी ।

मोटर के बुदबुदे पहिय से छोटा-सा गट छिटक कर कहाँ जाता पर वह लडकी अपन स्वास्थ्य से दुखी थी इससे उसका यह भलत अनुमान भले क्षमा कर दिया और सड़क के पार गया उसी जगह मने भी दिवरी का खाजा ।

जब खाली हाथ मं तौट कर आया तो बाप न कही मे एक छोटा-सा तार का टुकड़ा खोज निजाला था और बड़ी दक्षता से बोल्ट को छंद मं बठा रहा था और उम बायन की काशिश कर रहा था । गाडी को उसने जरा-सा हुमासा ता लडकी जान क्या खिसिया गयी, पर जसा कि मेन पहले बताया उसके चेहरे पर भाव बस नहीं आ सकते थे उस तनुरुस्त बच्चा के आते हैं, इसलिए उसने जल्दी से अपन बाप का कंधा पकड़ लिया और नीचे झींकन लगा—जैसे अपना गाडी ठीक करने म मदद देना चाहती हो ।

मने पूछा 'अब कैसे जाओगे ? ऐसे तो यह ठीक न होगी ?

बाप का मुँह दाने भरा था और जबड़ा चौड़ा था । उसन गाडी के नीचे मुँह डाल डाले छुरदरी आवाज म जवाब दिया चल जायेंगे । और लडकी ने कहा 'बेट, तू तनिक उत्तर तो आ ?

बेटी न बाप के बंध पर एक हाथ रक्ता एक से अपने सब को कसकर पकड़े रही और नाचे उतर कर गाडा स कुछ दूर हटकर खड़ी हागई । मं बहुत द्रवित हो उठा । बिचारी बीमार है इस शायद सूझा हागया है—या तपेन्जि इससे कम इस कोई बीमारी होनी ही नहीं चाहिए और वह सडी भी नहा रह पायेगी, कापती रहेगी यही गिर न पड़े । हे भगवान् जल्दी से बाल्ट म तार बंध जाय ।

मगर लडकी सीधी लडी रही । सिफ एक बार उसन नाक सिडकी । बीच बीच म अपने नगे परा का देखकर का सिरोडती रहा और अधीरता से गाडा की धुरी को देखती रही यह तो स्पष्ट था ही कि वह अपन बाप की बारीगरी से बहुत प्रभावित हो उठी है । वह बहुत दुबला थी छडी सी, और सावली थी, एक नये प्रकार का सौन्दर्य उसम था, वह जो फट उठाने म आता है । पर फिर मर मन न मुझे पानू याते सावन से रोद दिया ।

मन पूछा यह बीमार है ?

बाप न लडकी का पुरारा 'आ बेट बठ जा ठीक हो गयी ।

घारे-घारे चलकर अपन डोल पजाम की समन्कर लडकी परम्पुटेटरस चढ़ रही थी, तभी मुझ गाडी क पॅन् म एक धागे सी जिरी पडी निग गयी । मट उम उठाकर मेने बाप का दिया, 'यह कनी है, इसम काम नहीं चलेगा ?

'ओ नहा जा, ये तो बहुत धागे है । वा तो मन बना लिया जा ।

मे अपनी बढावा स परेशान था । फिर मन पूछा 'इसे क्या हुआ है ? ' और

उसके दुखी उत्तर के लिए तयार हो गया। मेन साग था कि जब वह बहगा, साहब मज तो कुछ समझ में नहीं आता किमी के, तो डाक्टर हुक्म का नाम सुभाऊंगा।

बाप हँसकर बोला, जब तो ठीक है यह, इस मोतीभाना हुआ था बहुत दिन हुए, तब मैं कमजोर बहुत हो गया है। सुइयाँ लगती हैं इसे।

माडी चूँ-चूँ करके चलने लगी थी। अब लौंडिया को शरम लगने लगी कि इतनी बड़ी होकर प्रेम में बठी है।

“कहाँ रहते हो?”

‘यही, सरकड़ा बाजार में। और अपनी मासल बाँह उठाकर उसने सरकड़ा बाजार को इंगित किया जो सामन धूप में चमकता खिल रहा था।

मुझ कुछ न सूझा तो पूछा ‘वहाँ से रोज़ यहाँ तक आते हो? तब तो बड़ा तबकीक़ उठाने हो।’

वह हँसा तो नहीं पर कुछ ऐसा मुस्कराया जैसे कह रहा हो कि अपनी करण का श्रेय लेना चाहत हो तो हमारी ज़्यादा क्यों अति-जित कर रहे हो। मने यह भी पूछा था ‘सुइयो में तो बड़ा खर्चा हाता होगा।

जैसे ही उत्तर आया ‘कोई छ-बीस लगवा चुका हूँ, अभी कोई खास फायदा नहीं है। धीरे-धीरे होगा। ३ ६० ६ आ० की एन लगती है।’

अब भी मैं और कुछ पूछना चाहता था क्योंकि मेरा मन कह रहा था कि मेरा काम अभी खत्म नहीं हुआ। मगर मैं यह भी देख रहा था कि उस लड़की की ज़्यादा जितनी सादी थी मामूली थी कोई खास बात थी हाँ नहीं। मैं समझना दे सकता था तो अधिक से अधिक देना चाहता था इसलिए भरे मुँह से निकला “धबराघा नहीं ठीक हो जायगी लड़की। अब सोचता हूँ कि बजाय इसके अगर मैं पूछता, ‘आज कौन सा दिन है तो कोई फ़क़ न पड़ता।

बाप ने मानो मुझे सुना ही नहीं। लड़की ने अपने सब की तस्वीरें दिखा पूछा ‘बप्पा?’ बाप ने बड़े प्यार से मना कर दिया।

बीमार लड़की धीरे से अपने सेब को पकड़ रही। उसने खान के लिए डिश नहीं की। चमकती हुई काली-सफ़ेद चूड़ियों से उसकी कलाईयाँ खूब ढँकी हुई थी। मुट्ठी में वह लाल चिक्का छोट्टा-सा सेब था जो उस बीमार होने के कारण नसीब हो गया था और इस वक्त उसने निहाल शरीर पर खूब खिल रहा था।

मं जल्दी-जल्दी चलकर आगे निकल आया। अब मैं वहीं बिनकुल फाँसू था।

परिशिष्ट

शुद्धि-पत्र

अशुद्ध	पृष्ठ	पक्ति	शुद्ध
काढ नरे	१२	२६	को उनके
तग हस्ती	२२	२१	तग दस्ती
रानी	३८	३३	पुरानी
वनाते	४०	२३	वनते
पाट	४८	२५	पाठ
ये माए ये उच्चे	६१	२५	कुछ बच्चे कुछ माँए
हागी	६५	१	होगी
छोड	६५	२७	छेड
उनें	६६	४	उन
यह	६२	२	यहा
देश	६२	१५	दश
	६३	३३	लिए
घट	६४	१५	घटे
बूझ	६८	१८	बूझे
	१००	६	मे
वध	१०१	५	वथा
मनोरजन	१०१	६	मनारजन
व्यतीन	१०४	१३	व्यतीत
पत्ना	११८	८	पत्नी
हा	१२०	१४	ही
उनरे	२०५	१५	उसके
वचारा	२५२	१४	वे चारा
काई	२८५	५	कोई
ता	२८८	१८	ता
ना	४२५	०	लागे

